पंच परावर्तन

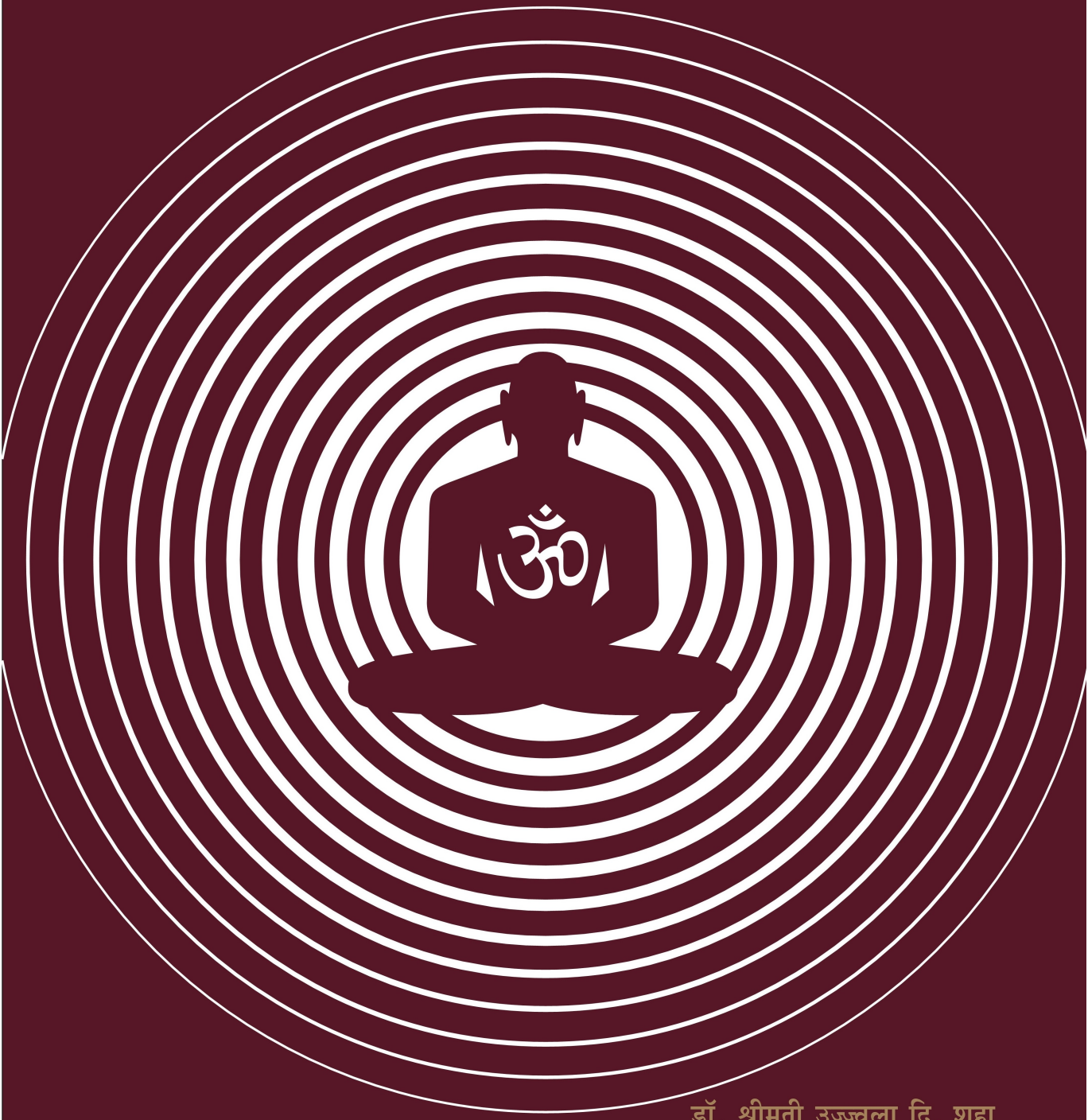

डॉ. श्रीमती उज्ज्वला दि. शहा

पंच परावर्तन

– वक्ता एवं लेखिका –
डॉ. श्रीमती उज्ज्वला दि. शहा
एम.बी.बी.एस., डी.सी.एच., डी.जी.पी.

– संपादक –
पं. दिनेशभाई शहा
एम.ए., एल.एल.बी.

– प्रकाशक –
वीतरागवाणीप्रकाशक
१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुंबई - ४०००२२.
टेलि. : ०२२-२४०७३५८१ / ९७५७३९३६३७

पंच परावर्तन

प्रथम संस्करण वीर शासन जयंती – १४ जुलाई २०२२ १००० प्रत

– प्राप्तिस्थान –

वीतरागवाणीप्रकाशक

१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व),

मुंबई - ४०००२२.

फो. : ०२२-२४०७३५८१ मो. : ९७५७३९३६३७

– हमारे प्रकाशन –

			रु.
१) जैनतत्त्व परिचय	– मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश		१५
२) कारण कार्य रहस्य	– मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश		१५
३) करणानुयोग परिचय	– मराठी, हिन्दी, गुजराती		१५
४) पंचलब्धि	– मराठी, हिन्दी, गुजराती		१५
५) भक्तामरस्तोत्र प्रवचन	– मराठी		१५
६) स्वानुभव	– मराठी		६
७) परमात्मा कसे बनाल!	– मराठी		६
८) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	– हिन्दी		१५०
९) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	– हिन्दी		१५०
१०) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार एवं अर्थसंदृष्टि	– हिन्दी		१००
११) सर्वज्ञप्रणीत जैन भूगोल	– हिन्दी, गुजराती		५०
१२) सर्वज्ञकथित जैन सिद्धान्त (भाग १ और २)	– हिन्दी		२५०
१३) पंच परावर्तन	– हिन्दी		१५०

मूल्य रु. १५०/-

– मनोगत –

करीब दो साल पहले मेरे दिमाग़ में 'अनादि' शब्द के बारे में काफ़ी विचार आते रहे और इस अनादि का भाव भासन होने में 'पंच परावर्तन' का विषय बार बार याद आने लगा, तब मैं सोचने लगी कि इस विषय पर सखोल अभ्यास होने के लिये कोई 'एक' ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। तुरंत मुझे मेरी भाभी डॉ. उज्ज्वलाजी शहा ने इस विषय पर किये हुये प्रवचन याद आये। उन प्रवचनों को पुस्तक का रूप देने की भावना मुझमें जागृत हुयी। तब मैंने उनसे और मेरे भाई पं. दिनेशभाई से मेरा मनोगत व्यक्त किया। खुशी की बात यह हुयी कि उन्होंने मेरी इन बातों में हां भर दी।

मैं यहां डलास मंदिर में प्रौढ़ लोगों की पाठशाला लेती हूं। उन सबको मैंने मेरी भावना प्रकट की। तब इस महान शुभ कार्य में सहकारी होने में काफ़ी व्यक्तियों ने हां कर दी। फिर क्या, स्क्राइब और प्रूफ रीडिंग की तैयारी जोर शोर से शुरू हुयी। अलग-अलग व्यक्तियों को अलग-अलग काम बांटे गये। टेक्नॉलॉजी के काम तीन लोगों को दिये गये, अमित गांधी, क्षितिज शाह, आशिष दोशी। उन्होंने कई बातों में सबको मार्गदर्शन किया। सबका उत्साह बढ़ाना, याद दिलाना, और करेक्शन्स में मदद करने का मैंने बीड़ा उठाया। काम होते गया, कुछ महीनों बाद एहसास हुआ कि यह सब काम कितना वक्त लेवा और कठिन है। फिर भी सबने अपने-अपने हिसाब से मेहनत करके, बार-बार करेक्शन्स करके कच्चा माल तयार किया और भारत में डॉ. उज्ज्वलाजी को भेजा।

भारतवासी निशा शेठ ने सबसे अधिक प्रवचन स्क्राइब किये। रीचा-अनंत पाटनी, अविनाश-संगीता (शिकागो), मंदा मेहता और चारु-अखिल जैन (भारत), फिर डलास से निकेता-पौरांग पारेख, अनिला शाह, रेणु वोरा, रीमा का बेटा कथन गांधी, शीनी, सेजल, तेजीन, अमित-रुचि, दिपौनी, मीता मेहता (दुबई), अवनी, बिमलजी (कॅनडा), चंदा-विकास (शिकागो), शीतल, शर्वरी, मनीषा, सायली, अमिता, किन्नरी, योगांशी इन सबने आखिर तक प्रेम से अपना काम पूरा किया। कुछ लोगों ने शुरुआत तो की लेकिन किसी कारण से वे पूरा साथ नहीं दे सके। इन सबके मैं मन:पूर्वक आभार मानती हूं और इन सबकी मेहनत से इस महान कार्य को पूर्णता देने में जो कुछ मदद हुयी इसमें मैं अपना परम भाग्य समझती हूं।

आगे चलकर इस कार्य को पूर्णता देने में भारत की टीम ने निशा शेठ के मार्गदर्शन में बहुत बड़ी मेहनत की। आखिर में पं. दिनेशभाई शहा ने और सबसे आखिर डॉ. उज्ज्वलाजी शहा ने यह महान, प्रचंड, अमूल्य पुस्तक को पूरा करके, पंच परावर्तन की संपूर्ण और सचोट माहिती का पुस्तकरूप ग्रंथ बन गया। मेरी कामना साकार हुयी।

प्रस्तुत पुस्तक का निर्माण होने में आर्थिक सहयोग हम प्रदान करें ऐसा सुझाव अनिला शाह और निकेता पारेख ने मुझे दिया तब इस मानस में डलासवासियों ने अति उत्साह से साथ दिया।

इसमें सहभागी होनेवाले सभी जीवों को धन्यवाद देने में मेरे शब्द अधूरे पड़ रहे हैं। वर्तमान के और भविष्य में आनेवाले स्वाध्यायियों को इस ग्रंथ का पूरा-पूरा लाभ होगा इस विश्वास के साथ मेरा मनोगत पूरा करती हूं। जय जिनेन्द्र !

स्वाती कलमकर
(डलास, यु.एस.ए.)

– दातार –

पौरांग और निकेता पारेख	**$ १५००**
अनिला और सुरेश शाह	**$ १२००**
स्व. श्री. अशोक छगनलाल दोशी के स्मरणार्थ पुत्र आशिष	**$ ५००**
मयंक और सेजल शाह	**$ ५००**
संदीप और दीपा दोशी	**$ ५००**
शीतल और क्षितिज शाह	**$ ५००**
रुचि और अमित गोधा	**$ ५००**
रीमा और पिनाकीन गांधी	**$ ३००**
अमित और शर्वरी गांधी	**$ २६१**
वोरा फॅमिली	**$ २५०**
स्वाती कलमकर	**$ ५००**

– प्रकाशकीय –

हमारी कोई प्रकाशन संस्था तो नहीं है। मुझे याद है पहली बार हम दो पुस्तकें प्रकाशित करना चाहते थे एक मेरे द्वारा मराठी में अनुवादित 'भक्तामर स्तोत्र प्रवचन' जो गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के गुजराती प्रवचन थे और दूसरी पुस्तक थी मेरी पत्नी डॉ. उज्ज्वला शहा लिखित मराठी 'जैनतत्व परिचय'। हमने अनेक प्रकाशन संस्थाओं, व्यक्तियों को बिनती की, हां अपने खर्चे से करवाना चाहते थे, लेकिन कोई तैयार ही नहीं हुये। इस डीटीपी, प्रूफ रीडिंग, प्रिंटिंग के बारे में मैं बिलकुल कुछ नहीं जानता था। फिर मैंने ठान ली और इस क्षेत्र में कूद पड़ा। इस प्रत्येक कार्य में हमेशा की तरह उज्ज्वला ने मुझे साथ दी है। 'मोक्षमार्गप्रकाशक' पुस्तक के नाम समान हमने 'वीतरागवाणीप्रकाशक' नाम से पुस्तकें प्रकाशित करना शुरू किया।

आप हमारी प्रकाशित पुस्तकों की लिस्ट देखेंगे तो आप को क्या मुझे भी आश्चर्य लगता है। कितने ही पुस्तकों की दस-दस आवृत्ति छप चुकी हैं वह भी हिन्दी, मराठी, गुजराती और इंग्लिश में। दिन प्रति दिन इन पुस्तकों की मांग बढ़ती ही जा रही है और अब तो उज्ज्वला की ५ पुस्तकें तामिल भाषा में और जैन भूगोल पुस्तक कन्नड भाषा में भी छप चुकी हैं। ३-४ साल पहले ही हमने नक्की किया कि अब यह काम समेटना चाहिये। मराठी में छपी सभी पुस्तकें जो हमारे पास हजारों की संख्या में थी उन्हें हमने गांव-गांव में अपने खर्चे से फ्री में बांट दी थी। उज्ज्वला द्वारा लिखित गुजराती में अनुवादित पांच पुस्तकों की प्रत्येकी ३००० प्रतियां यांनी १५००० पुस्तकें बनवाकर मुंबई में पार्ला पंचकल्याणक के अवसर पर वहां स्टॉल लगाकर लोगों को फ्री में वितरीत किये थे और बची हुयी सभी पुस्तकें यहां मुंबई तथा राजकोट, अमदाबाद, चैतन्यधाम आदि अनेक जगह अपने खर्चे से बांट दी थी। हिन्दी में भी सभी ग्रंथों की १०००-१००० प्रतियां छपवाकर उसकी भी फ्री डिस्ट्रिब्यूशन की व्यवस्था दिल्ली के DTDC के श्री. अमितजी जैन के सहयोग से की – वे भी ग्रंथ बट चुके। फिर भी करोना संक्रमण के काल में सुमेरचंद बेलोकर और उनके साथियों ने अपने स्वयं के खर्चे से सारे मराठी ग्रंथ १०००-१००० प्रतियों में हमारे से प्रिंट करवा कर उनकी वितरण व्यवस्था सम्हाली है।

तब अचानक 'पंच परावर्तन' पुस्तक का काम अमेरिका में प्रारंभ किया गया। उसी पद्धति से मेरे द्वारा दो शिबिरों में लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका पर हुये ६० लेक्चर्स

स्क्राइब करके पुस्तक बनाने का हमने सोचा। 'पंच परावर्तन' टाइप करने के लिये मेरी बहन स्वाती के स्वाध्याय ग्रुप के उत्साही लोगों ने स्क्राइब टीम तैयार की। यह काम बहुत ही कठिन और मेहनत का है। उनका वहां काम चल रहा था और यहां हमारा जैन सिद्धान्त का। उन्होंने शुरुआत तो की। छह महीने बाद हमने उनका वह कार्य अपने हाथ में लिया। उज्ज्वला और अमदाबाद की निशा शेठ के गाइडन्स के साथ 'जैन सिद्धान्त' पुस्तक का काम करनेवाले हमारे सर्वोत्तम स्क्राइब, रिव्ह्यूअर्स और प्रूफ रीडर्स पंच परावर्तन के काम में लग गये। रोजाना व्हॉटस् ॲप ग्रुप पर हमारी टीम के टेक्निकल प्रॉब्लेम्स निशा सॉल्व्ह करती थी तो विषय संबंधी प्रश्न, शब्दों के उच्चार, व्याकरण, श्रोताओं ने बोले हुये वाक्य जहां बराबर सुनायी नहीं देते थे ऐसे इन्ऑडिबल्स इन सारी चीजों को उज्ज्वला देखती थी। मेरा तो जानने देखने का काम चलता रहता था।

एक-एक लेक्चर स्क्राइब व प्रूफ रीडिंग के बाद उज्ज्वला कॉम्प्यूटर स्क्रीन पर चेक करके उसके करेक्शन्स के लिये ऑडिओ रेकॉर्डिंग करके निशा को भेजती थी, उनको ठीक करने के बाद फायनल प्रिंट आउट हमें दिया जाता था। यहां से तो हमारा काम शुरू होता था। प्रिंट आउट्स के भी प्रूफ रीडिंग करके हम डीटीपी करने के लिये भेजते थे। उसके बाद उसके ३-३ प्रूफ्स हम दोनों ६-६ बार प्रूफ रीडिंग करते थे। सुबह ४ बजे से लेकर रात के ८-९ बजे तक यही चलता रहा।

शिबिर के दौरान जहां जीवकाण्ड और जैन भूगोल पुस्तकों में से मॅटर पढ़कर सुनाया था, उसको टाइपिंग करते समय बोल्ड लेटर्स में टाईप किया है और श्रोताओं ने जहां-जहां कुछ बोला है उसे तिरछे अक्षरों में यानी इटॅलिक्स में टाइप किया है। इस पुस्तक की टाइपिंग में एक बात हम सुधार नहीं सके। ऋ यह अक्षर ऱ्हस्व चाहिये था लेकिन इस फॉंट में वह है ही नहीं। ऋजुगति, ऋद्धिधारी आदि शब्दों में वह दीर्घ ही टाइप हुआ है। कई महीनों के पश्चात् इसे पुस्तकरूप से प्रस्तुत करते हुये मुझे बहुत ही हर्ष एवं समाधान हो रहा है।

और एक मज़े की बात कहूं, इन पुस्तकों का स्क्राइब वगैरह का काम पूर्ण होने के बाद हमारा डीटीपी का कार्य शुरू हुआ तब हमारी स्क्राइब और प्रूफ रीडर टीम शांति से नहीं बैठी। निशा और टीम ने मिलकर कर्मकांड शिबिर जो दो बार हुये थे उनके ६० लेक्चर्स पर स्क्राइब और प्रूफ रीडिंग का काम शुरू भी किया जो अब समाप्त होने जा रहा है। मैंने कहा अब बस भी करो, इसको प्रिंट नहीं करेंगे तो सबने कहा कोई बात नहीं, यह

तो हमारा स्वाध्याय हो रहा है, उसको पूरा करके हम अपने वेबसाइट पर तो डाल ही सकते हैं। हां, हमारी jainsiddhant.org नाम की वेबसाइट का काम भी निशा शेठ ही देखती है। मेरे और उज्ज्वला के जितने भी देवलाली में शिबिर हुये हैं, जिनके व्हिडिओज् यूट्यूब पर हैं, उन सभी को पुस्तकरूप देने का निशा का मानस है।

हम नहीं चाहते हुये भी यह सारा कार्य होते हुये देखते हैं तब गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के वचन कान में गूंजते हैं कि परद्रव्य का कर्ता तू है ही नहीं। सच है, कोई भी कार्य होता है तो निमित्त सामने हाजिर होता है फिर भी कार्य तो उपादान से ही होता है।

जय जिनेन्द्र!

पं. दिनेशभाई शहा

– VISUAL DVDS –

(Each DVD contains 3 to 5 hrs. lectures)

जैन सिद्धान्त : शिबिर १ और २	१६
गुणस्थान : शिबिर	१०
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड : शिबिर १ और २	१६
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड अर्थसंदृष्टि	१८
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड : शिबिर १ और २	२०
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड अर्थसंदृष्टि	१२
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार : शिबिर १ और २	२२
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार अर्थसंदृष्टि	१६
पंच परावर्तन शिबिर	१२
क्रमबद्धपर्याय	३
आत्मा की ४७ शक्तियाँ	३
सम्यग्दर्शन : शिबिर	१०
ज्ञानमार्गणा – लेश्यामार्गणा : शिबिर	१०
सम्यक्त्वमार्गणा – योगमार्गणा : शिबिर	१०
प्रकृति – बंध, उदय, सत्त्वस्थान : शिबिर	९
क्षपकश्रेणी : शिबिर	१०
बीस प्ररूपणा : शिबिर	१०
पंचलब्धि : शिबिर	१०
आस्रव और पांच भाव : शिबिर (128 GB Pen Drive – 28 Hrs.)	
जैन भूगोल : शिबिर (VCDs)	२०

– मेरी बात –

गत साल मार्च २०२१ में अमेरिका से मेरी ननंद स्वाती कलमकर का फोन आया। देवलाली में मैंने पंच परावर्तन विषय पर ३४ घंटों का जो शिबिर लिया था उसकी व्हिडिओ डिव्हिडी उसने अनेकों बार देखी और उसके स्वाध्यायियों के साथ चर्चा की। उन्हें इस विषय के प्रति इतना अहोभाव आया कि उनके स्वाध्याय ग्रुप ने नक्की किया है कि ये ३४ घंटों के लेक्चर्स सुनते-सुनते वर्ड टू वर्ड टाइप करेंगे। स्वातीबहन चाहती थी कि हम यह पुस्तकरूप से प्रिंट करावे, बाकी उसके खर्चे की जिम्मेदारी भी उनके डलास निवासी स्वाध्याय ग्रुप ने ही लेने की सोची है। वैसे भी कोरोना संक्रमण के काल में हमारा सामूहिक स्वाध्याय बंद था और उनकी टीम पूरा मॅटर टाइप करके देनेवाली थी; हां, हमें पता था कि उसके बाद डी.टी.पी. और प्रूफ रीडिंग की बहुत सारी मेहनत हमें ही करनी पड़ेगी, फिर भी हम दोनों ने – मैंने और मेरे पती दिनेशजी ने – विचार करके हां भर दी।

स्वातीबहन की टीम ने काम प्रारंभ किया। यह स्क्राइब और प्रूफ़ रीडिंग का काम बहुत ही मेहनत का काम-टीडिअस जॉब है। स्वातीबहन को भी आयडिया नहीं थी कि पुस्तक बनाने में कितनी मेहनत, कितनी बारिकाइयां होती हैं, क्योंकि उन्हें तो लगा कि दिनेशभाई-उज्ज्वलाभाभी ने इतने सारे ग्रंथ-इतनी ४-४ भाषाओं में लिखें हैं-अनुवादित किये हैं-प्रकाशित किये हैं, तो वे और एक ग्रंथ जरूर प्रकाशित करेंगे। स्वातीबहन का स्वयं और उनकी टीम का उत्साह बहुत था। उस टीम में बहुत सारे अमेरिका निवासी ही थे, एक-दो जन भारत निवासी भी थे। निशा शेठ मेरी मानस कन्या है जो स्वयं एक समर्पित स्वाध्यायी, सच्ची मुमुक्षु एवं बहुआयामी व्यक्तिमत्व की धारक है। उसने भी उस टीम में सहभाग लिया और स्वयं सीखकर ८ लेक्चर्स स्क्राइब किये।

वहां अमेरिकावालों का काम चल रहा था और यहां हम दोनों ने इसी पद्धति से दिनेशजी के सिद्धान्त प्रवेशिका के ऊपर हुये ६० घंटों के प्रवचनों को पुस्तकरूप देने की सोच ली। मैंने हमारे परिचित शिबिरार्थियों से बात करके इसमें सहयोग करने हेतु जो तैयार थे उनकी निशा के गाइडन्स के नीचे एक टीम तैयार की। उनमें कोई हाऊसवाइफ हैं तो कोई रिटायर्ट पर्सन्स हैं, कोई इंजिनिअर, तो कोई डॉक्टर है, कोई अन्य वर्किंग प्रोफेशनल हैं। दिल्ली, भोपाल, बँगलोर, पुणे, मुंबई, नाशिक आदि अन्य-अन्य शहरों में वे रहते हैं।

उनको निशा ने ट्रेन किया, झूम मीटिंग्ज तथा व्हॉटस् ॲप ग्रुप द्वारे रोज़ाना हम एक दूसरे के संपर्क में रहते थे। बहुत सारे इनऑडिबल्स के बारे में, शब्दों के उच्चारण के बारे में, वाक्यों के बारे में व्हाटस् ॲप ग्रुप पर प्रश्न डालते थे, रोज १-२ घंटे मैं भी उनकी क्वेरीज के उत्तर देती थी। उसके लिये प्रत्येक लेक्चर अनेक बार रिप्ले करके सुनने पड़ते थे।

उनका यह अनुभव पंच परावर्तन पुस्तक के लिये बहुत उपयोगी रहा। अगस्त-सितंबर २०२१ में स्वातीबहन के पीछे लगकर कुछ लेक्चर्स उनसे प्रूफ रीडिंग करवा लिये परंतु देखने पर अभी उस पर और बहुत मेहनत बाकी है ख्याल में आया। तब निशा ने हमारी टीम में से एक्स्पर्ट लोगों को उस काम में जोड़ दिया। अक्टूबर-नवम्बर में हमने पंच परावर्तन के सभी लेक्चर्स की फाइलें स्वातीबहन के टीम लीडर से मांग ली। कितने ही मेंबर्स ने अपना-अपना एक लेक्चर स्क्राइब किया था, कितने ही लेक्चर्स का काम अधूरा था, आगे का रीचेकिंग और प्रूफ रीडिंग का काम भी ढीला पड़ गया था। स्वाभाविक है क्योंकि करनेवाले भले गुजराती, मराठी, हिंदी बोलनेवाले थे परंतु अधिकतर इंग्लिश मिडियमवाले यंगस्टर्स थे, हरेक वर्किंग मेम्बर, घर गृहस्थी, बच्चों की देखभाल, अमेरिका में तो खुद ही सब देखना पड़ता है। उन्होंने जो शुभारंभ किया और इतनी मेहनत से बहुत काम किया वह प्रशंसनीय था ही। स्वातीबहन भी उनसे हो सके उतनी प्रूफ रीडिंग की कोशिश कर रही थी परंतु यह उनके बस की बात नहीं थी और फिर उनके कुछ वैयक्तिक प्राब्लेम्स भी आ गये।

निशा ने और भी छह लेक्चर्स स्क्राइब किये और यहां की 'जैन सिद्धान्त' की टीम के द्वारा सारे ही लेक्चर्स चार-चार जनों से प्रूफ रीडिंग करवा लिये, वह चाहती थी मुझे कम से कम तकलीफ हो। निशा ने जब सभी लेक्चर्स के प्रिंटआउट मुझे दे दिये तब एक-एक लेक्चर आद्योपांत सुनते हुये मैंने चेकिंग की, उसमें आवश्यक सुधार किये तब जाकर हिंदी डीटीपी वाले के पास टाइपिंग के लिये भेजा। अब उसके डिटेल्स में न जाते हुये कहूंगी कि उसने तीन-तीन प्रूफ दिये और हर प्रूफ मैंने और दिनेशजी ने प्रत्येक ने ३-३ बार जांचे। करीबन गत १०-१२ महीनों से हम दोनों इन दो पुस्तकों की प्रूफ रीडिंग और इनके संबंधित अन्य गतिविधियों में ही जुटे हुये हैं। इसी दौरान २६ जनवरी, २०२२ को दिनेशजी को मेजर हार्ट ॲटॅक के कारण हॉस्पिटल में ॲडमिट करना पड़ा, वहां उनकी ॲंजिओप्लास्टी भी की। थोडे ही दिनों में हम फिर जुट गये हमारे पुस्तकों के काम में।

किसी के मन में प्रश्न उठेगा कि पंच परावर्तन पर ये ३४ घंटों के प्रवचन कब और कहां हुये थे? यह बात सभी जानते हैं कि इ.स. २००५ से हम दोनों ने देवलाली में ऐसे शिबिर लेना प्रारंभ किया कि एक ही वक्ता ५ दिन तक प्रति दिन ६-६ घंटे एक ही विषयपर बोले। हमारे अभी तक देवलाली में ऐसे कम से कम २५ शिबिर तो हो चुके हैं। लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका, गुणस्थान तथा करणानुयोग के जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार-क्षपणासार, त्रिलोकसार आदि ग्रंथों पर और उनमें से एक-एक विषयपर ये शिबिर हुये हैं। देश-विदेश से आकर ३००-४०० लोग इन शिबिरों में भाग लेते हैं। पंच परावर्तन विषयपर १ मार्च २०१३ से ६ मार्च २०१३ तक छह दिन में पहले पांच दिन प्रति दिन ६-६ घंटे और अंतिम दिन ४ घंटे ऐसे कुल ३४ घंटे यह शिबिर चला था।

इस शिबिर के लिये तीन ग्रंथों के आधार से यह विषय समझाया गया था। 'जीवकाण्ड भाग १ और भाग २' जो पं. टोडरमलजी द्वारा लिखित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका का मेरे द्वारा किया हुआ हिन्दी अनुवाद है और 'सर्वज्ञप्रणीत जैन भूगोल' जो मेरे शिबिर का पुस्तकरूप है – इन तीन बड़े ग्रंथों की ४००-४०० प्रतियां देवलाली में भेजना, हर शिबिरार्थी को वह समय पर प्राप्त हो इसकी व्यवस्था करना आदि काम हमेशा की तरह दिनेशजी ने समर्थपने सम्हाला था। उनका सभी काम पूर्वनियोजित ही रहता है।

मुझे याद है, शिबिर के दौरान देवलाली के ट्रस्टियों में से एक ट्रस्टी श्री. कांतिभाई मोटाणीजी ने कहा था कि, 'गुरुदेवश्री कानजीस्वामीजी के पश्चात् पहली बार यह दृश्य मैं डॉ. उज्ज्वलाबेन के हर शिबिर में देख रहा हूं कि प्रवचन के १५-२० मिनट पूर्व से वक्ता स्वयं आकर बैठा है और प्रवचन हॉल श्रोताओं से खचाखच भरा है।' यह तो जिनागम की महिमा है। जिनागम में विषयों का जितना सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाये उतना उसमें अधिक आनंद मिलता है। श्रोताओं की जिज्ञासा देखकर वक्ता को भी उत्साह आता है। चारों ही अनुयोग हमारे लिये कार्यकारी हैं। फिर भी लोग मुझसे करणानुयोग के अलग-अलग विषयों पर सूक्ष्म विवेचन चाहते हैं, अधिक विस्तार से समझना चाहते हैं। पंच परावर्तन के इस शिबिर में भी करणानुयोग के अभ्यासू लोग, अनेक विद्वान तो उपस्थित थे ही, परंतु बहुत बड़ी संख्या में ऐसे भी लोग आये थे जो करणानुयोग के बारे में बिलकुल अनभिज्ञ थे। हर शिबिर में ऐसा ही होता है। इसलिये प्राथमिक जानकारी से शुरू करते हुये

हमें गहराई तक पहुंचना पड़ता है। उसीप्रकार अभ्यासुओं के और विद्वानों के प्रश्नों का समाधान भी करना होता है।

हर शिबिर के अंतिम दिन मुंबई के सीमंधर जिनालय का १०-१५ जनों का स्वाध्याय ग्रुप लेकर पं. निलेशभाई शाह आते हैं और आग्रहपूर्वक करणानुयोग के आगामी शिबिर की तारीख और विषय पर चर्चा करके हमारे से हां कहलवा करके ही रहते हैं। मुझे भी लोगों का उत्साह, जिज्ञासा देखकर आनंद आता है। उनके निमित्त से मेरा भी करणानुयोग के अनेक गहन विषयों का गहराई से अध्ययन होता है।

इस शिबिर का विषय वैसे तो बहुत बड़ा था। ग्रंथों में एक ही जगह उसका अधिक विस्तार के साथ वर्णन नहीं है। क्योंकि उसके एक-एक पारिभाषिक शब्दों के और विषयों के लिये हमें जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, त्रिलोकसार आदि अनेक ग्रंथों के अलग-अलग संदर्भ विस्तार से समझने पड़ते हैं। इतना कठिन विषय, रोज छह घंटे और फिर भी अंतिम दिन तक लोगों का उत्साह देखकर हमें भी समाधान होता है। शिबिर के समारोप में सब लोगों ने प्रशंसा की थी। पं. हेमचंदजी जो स्वयं करणानुयोग के विद्वान हैं उन्होंने तो कहा था उज्ज्वलाबहन को मैं 'सिद्धान्ताचार्या' की उपाधि देना चाहता हूं। किसीने कहा था आप जरूर कोई पूर्वभव के संस्कार लेकर आयी हैं। किसीने कहा पं. टोडरमलजी के पश्चात् करणानुयोग का इतना प्रचार-प्रसार और विषय को सरल करके आपने ही समझाया है। मुझे तो ऐसे भी कई लोग मिले जिन्होंने कहा था कि द्रव्यानुयोग के उपदेश के बारे में गुरुदेवश्री कानजीस्वामी को लोग याद करते हैं ऐसा ही कार्य आपने करणानुयोग के बारे में किया है, उसे सरल करके समझाया है, हम आपके ऋणी हैं।

अहो! गुरुदेवश्री कानजीस्वामी तो जाज्वल्यमान सूरज के समान हैं। उनके सामने तो मैं जुगनू के समान हूं। लेकिन लोग कुछ भी कहते हैं। गुरुदेवश्री कानजीस्वामी तो वर्तमान के महान युगपुरुष हुये हैं। गुरुदेवश्री के कारण तो मेरा यह मनुष्यभव सफल हुआ है।

इस पुस्तक के निमित्त से ये सारी बातें याद आ गयी। शिबिर हो या पुस्तक का संपादन, प्रकाशन, प्रूफ रीडिंग आदि हो, सभी कामों में पं. दिनेशजी का योगदान बहुमूल्य है, उनके बिना यह कुछ भी संभव नहीं था और नहीं है। तब गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के

शब्द कानों में गूंजते हैं 'कोण करे?' पंच परावर्तन पुस्तक बननी थी तो अमेरिका से इस कार्य का शुभारंभ-प्रतिष्ठापन हुआ, भारत के विविध शहरों के लोगों ने साथ दिया और यह कार्य संपन्न हुआ-उसका निष्ठापन हुआ।

पंच परावर्तन का स्वरूप समझकर इन पंच परावर्तनों से छूटने का उपाय हम सब शीघ्र में शीघ्र अपनायें इस भावना के साथ विराम लेती हूं।

जय जिनेन्द्र!

डॉ. उज्ज्वला दि. शहा

– Dr. Ujwala Shah's PEN DRIVES –

U1

विषय	कुल घंटे
सात तत्त्व	१२
कारण कार्य रहस्य	२१
निमित्त उपादान-पंच परावर्तन	२४
क्रमबद्धपर्याय	४२
पंच परावर्तन (भोपाल)	२५
सुख यहाँ	१६८
प्रमाद के भेद	४
योग	४
आत्मानुशासन	१३९
आत्मभावना	११५
पंचाध्यायी	२४०
दशलक्षणधर्म (पुणे)	१०
पंचलब्धि	२६
सागार धर्मामृत	५७
अनगार धर्मामृत	१४५
करणानुयोग परिचय	४०
पांच भाव (तत्त्वार्थसूत्रानुसार)	१८
पांच भाव	९
	१०९९

U2

विषय	कुल घंटे
पंचलब्धि – (USA)	२१
जीवकाण्ड (सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका)	३००
कर्मकाण्ड (सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका)	२४५
कर्मकाण्ड शिबिर	३०
लब्धिसार-क्षपणासार (सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका)	१३१
चारित्रमोहोपशमना	२८
त्रिलोकसार	२०१
भावदीपिका	८२
षट्स्थानपतितहानिवृद्धि	७
डेढगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध	११
	१०५९

U3

विषय	कुल घंटे
धवला	१२०३
जयधवला	१३६६
महाधवला	१३०६
	३८७५

U4

विषय	कुल घंटे
नियमसार-कारण कार्य नियम	४७२
पंच परावर्तन (भोपाल)	२५
क्रमबद्धपर्याय (पुणे)	१०
तत्त्वचर्चा (सोनगढ़)	१
	५०८

– Pt. Dineshbhai Shah's PEN DRIVES –

D1

विषय	कुल घंटे
लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका	८२.५
जैनतत्त्व परिचय	४६.५
बालबोध पाठमाला	४३.५
वीतराग विज्ञान पाठमाला	५८.५
तत्त्वज्ञान पाठमाला	६०
जैन सिद्धान्त शिबिर १	३०
जैन सिद्धान्त शिबिर २	३०
छहढाला	४५
कारण कार्य रहस्य	१९
गुणस्थान	५७
बृहद् द्रव्यसंग्रह	९३
मोक्षमार्गप्रकाशक	२६८
पंचास्तिकाय	१९९
योगसार	५४
मिथ्यात्व	९
	११४७

D2

विषय	कुल घंटे
समयसार (प्रवचनरत्नाकर भाग १ से ११)	९२०
आत्मा की ४७ शक्तियां	१५३
	१०५१

D3

विषय	कुल घंटे
प्रवचनसार	८६०
तत्त्वार्थसूत्र	२०८
	१०५१

D4

विषय	कुल घंटे
कार्तिकेयानुप्रेक्षा	२२८
लघुतत्त्वस्फोट	८२
नियमसार	४३३
परमात्मप्रकाश	२७५
पुरुषार्थसिद्धिउपाय	७०
	१०८८

D5

विषय	कुल घंटे
अष्टपाहुड	३००
आत्मसिद्धि	१३८
अनुभवप्रकाश	८८
ज्ञानस्वभाव-ज्ञेयस्वभाव	१०५
इष्टोपदेश	५२
रत्नकरंड श्रावकाचार	१५७
नाटक समयसार	२४७
	१०८७

D6

विषय	कुल घंटे
अध्यात्मयोगी राम	६५
धन्य महापुरुष	१२
हरिवंश पुराण	७४
द्रव्यसंग्रह प्रवचन	१७६
कारण कार्य रहस्य	९९
जैन सिद्धान्त (कुछ विषय)	२१
कलशामृत	५८३
	१०३०

D-SP

विषय	कुल घंटे
अमृत प्रवचन	४००
प्रवचन सुधा	४००
जैनतत्त्व परिचय	९७.५
कारण कार्य रहस्य	९९
करणानुयोग परिचय	४८
	१०४५

– विषय सूची –

१. काल – गणना एवं प्रकार १

२. गुणस्थितिकाल, भवस्थितिकाल २५

३. मार्गणाओं में काल, क्षुद्रभव ४९

४. काल – कर्मस्थिति, कायस्थिति, उपपाद, भावस्थिति ७२

५. परावर्तन – ५ प्रकार ९४

६. कर्मशरीर, नोकर्मशरीर, विस्रसोपचय ११५

७. छह पर्याप्ति – आहारपर्याप्ति और शरीरपर्याप्ति १३४

८. छह पर्याप्ति, समयप्रबद्ध १५६

९. पुद्गल – सादि, अनादि १७६

१०. कर्म - नोकर्म शरीरों की स्थिति १९७

११. नोकर्मशरीर निषेक रचना २१९

१२. द्रव्यपरावर्तन का यंत्र २४१

१३. कर्मपुद्गलपरावर्तन २६१

१४. क्षेत्रपरावर्तन – जीवों की अवगाहना २८२

१५. जीवों की जघन्य, उत्कृष्ट अवगाहना ३०३

१६. अवगाहना के ६४ स्थान ३२३

१७. अवगाहना का अल्पबहुत्व, मत्स्यरचना ३४३

१८. परक्षेत्रपरावर्तन ३६४

१९. अवगाहनास्थान – गुणकार विधान ३८३

२०. अवगाहना के भेद, अधोलोक रचना ४०४

२१. तीन लोक – रचना ४२६

२२. करणानुयोग – क्यों जानना ? ४४६

२३. मध्यलोक – ढाई द्वीप रचना ४६८

२४. विदेहक्षेत्र – रचना ४८७

२५. भोगभूमि ५०४

२६. कुभोगभूमि ५२५

२७. संख्यामान ५४५

२८. कालपरावर्तन – असंख्यात के भेद ५६६

२९. कालपरावर्तन, भवपरावर्तन – १ ५८८

३०. भवपरावर्तन – २ ६०९

३१. भवपरावर्तन – ३ ६२७

३२. भावपरावर्तन – १ ६४९

३३. भावपरावर्तन – २ ६७२

३४. भावपरावर्तन – ३ ६९४

१. काल – गणना एवं प्रकार

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

।। ॐ शुद्धात्मने नमः।।

।। मंगलाचरण।।

कम्मकलंकुत्तिण्णं विबुद्धसव्वत्थमुत्तवत्थमणं ।
णमिऊण उसहसेणं कालणिओगं भणिस्सामो।।

आप कहेंगे यह मंगलाचरण हमने कभी सुना नहीं था। धवला शास्त्र की चौथी पुस्तक में काल अनुयोगद्वार जहां शुरू होता है वहां यह मंगलाचरण लिखा है। यहां तो वृषभसेन को नमस्कार किया है; भाई, ये वृषभसेन कौन थे, जिनको यहां नमस्कार किया है? *श्रोता: आदिनाथ भगवान के गणधर।* आदिनाथ भगवान के गणधर यानी हमारे सर्व प्रथम गणधर को-इस अवसर्पिणी काल के सर्व प्रथम गणधर को नमस्कार किया है। इसका अर्थ देखेंगे, फिर हम विषय के प्रति आगे बढ़ेंगे। यहां हमने यह बात देखी है कि कर्मरूपी कलंक से उत्तीर्ण, जो पार हुये हैं यानी कर्मकलंक से जो रहित हुये हैं ऐसे वृषभसेन को नमस्कार किया है। सभी कर्मों से रहित तो सिद्ध भगवान होते हैं और वृषभसेन तो गणधर थे परंतु यह नियम है कि प्रत्येक गणधर नियम से केवलज्ञान प्राप्त करके उसी भव में मोक्ष जाते ही है इसलिये यहां प्रथम तीर्थंकर के प्रथम गणधर जो वृषभसेन थे उनको यहां कर्मकलंक से रहित कहा है यानी वे आठों कर्मों से रहित होकर मोक्ष चले गये थे। सर्व अर्थों के जाननेवाले और अस्त रहित अर्थात् सदा उदित ऐसे वृषभसेन गणधर को नमस्कार करके अब कालअनुयोगद्वार कहते हैं। यह नमस्कार करनेवाले आचार्य कौन हैं? हां?

श्रोता: नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती? नेमिचन्द सिद्धान्तचक्रवर्ती नहीं क्योंकि अभी हमने धवला की बात की थी। *श्रोता: वीरसेन आचार्य?* हां, क्योंकि षट्खण्डागम की टीका का नाम धवला है जिसकी रचना वीरसेनस्वामी ने की हुयी है। षट्खण्डागम मूल ग्रंथ है जो पुष्पदंत और भूतबली आचार्यों ने लिखा है। वे धरसेन आचार्य के शिष्य थे जिनके द्वारा उन्हें यह ज्ञान प्राप्त हुआ था। उस षट्खण्डागम पर वीरसेन आचार्य ने धवला टीका रची है, उसकी चौथी पुस्तक में यह कालअनुयोगद्वार बताया है; यह अनुयोगद्वार क्या होता है वह

सब हम देखेंगे। यहां तो बहुतसे अभ्यासु लोग हैं, हमारी भी भूलें निकालनेवाले यहां चौकन्ने बैठे हैं और कितने तो एकदम जिनकी कहेंगे पाटी यानी स्लेट कोरी है; तो हम सब साथ में चलेंगे। ऐसा कोई विकल्प नहीं रखना कि हमें समझ में आयेगा कि नहीं आयेगा। जिसके समझ में नहीं आयेगा, उसके लिये एक प्राइज रखा है, लास्ट में, शिबिर के लास्ट में। हम पूछेंगे किसको समझ में नहीं आया, उसको वह प्राइज अवश्य मिल जायेगा।

हम तो यहां काल की गिनती करने आये हैं। गिनती करनी सबको अच्छी लगती है क्योंकि जब लोगों को कहा कि यह शिबिर होनेवाला है तो सबने पूछा कितने दिन का है? एक दिन में कितने घंटे पढ़ाओगी? हमें कब आना है और कब हम जा सकेंगे? तो यह काल की गिनती है। आप कहेंगे यह काल की गिनती तो हमें आती है, हमने तो हाथ में घड़ी बांधकर रखी है। काल तो हम अच्छी तरह से गिन सकते हैं और भी क्या-क्या गिनते हैं सबको तो पता है। *श्रोता: नोट गिनते हैं।* अच्छा है, आपने ही बता दिया। नोट की गिनती करते हैं तो कितनी गिनती करने से समाधान हो रहा है? देखो, पैसा तो कोई कमा नहीं सकता क्योंकि हमने देखा है, गुरुदेवश्री के हम शिष्य हैं – हम जानते हैं कि एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता, पैसा अपने कारण से आता है। हम क्या करते हैं, हम गिनती करते हैं और समाधान मानते हैं।

सुबह न्यूज़ पेपर खोलते हैं तो कितने करोड़ों का घोटाला है वह पहले देखते हैं, वहां भी गिनती चलती है। यहां हम काल गिनने को आये हैं; तो यह काल कैसे गिनते हैं, किसमें गिनेंगे काल हम? घंटो में? या सालों में? या सदियों में? क्योंकि काल को गिनने के बहुत सारे तरीके हैं न? हम यहां देखेंगे कि ये काल भी दो प्रकार के होते हैं। कौन बताना चाहते हैं? हां, सौमिल? *श्रोता: निश्चयकाल और व्यवहारकाल।* निश्चयकाल और व्यवहारकाल। यह निश्चयकाल क्या होता है? हम सबको पता है। इस विश्व में छह द्रव्य हैं, जो जाति अपेक्षा छह द्रव्य हैं; इनमें से एक का नाम है कालद्रव्य; वे कालद्रव्य कितने हैं? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात, लोकाकाश में जितने प्रदेश हैं उतने कालद्रव्य हैं, इसको कहते हैं लोकप्रमाण असंख्यात। लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर एक-एक कालद्रव्य स्थित है। उसकी क्या गिनती करनी? हो गयी गिनती। परंतु यहां जो काल हम गिनने आये हैं और यह जो कहते हैं कि टाइम कितना हुआ, टाइम कितना बीत गया, यह जो काल है उसे

कहेंगे व्यवहारकाल। कालद्रव्य की जो पर्याय है वह एक समय है, कालद्रव्य का जो परिणमन हो रहा है उसका नाम है समय। वह एक समय कितना सूक्ष्म है उसको हम आगे चलकर देखेंगे।

यहां तो 'समय' यह काल गिनने का सबसे छोटे में छोटा नाप है, उससे छोटा नाप नहीं है। हम कहेंगे हमारे सायंटिस्ट ने बहुत तरक्की की है। है न? तो सेकंड के भी कितने ही भाग हमने जान लिये हैं। ये हमारे सारे सायन्स के स्टुडंट्स बैठे हैं न! हां सौमिल, एक सेकंड के कितने भाग किये हैं आज के सायंटिस्ट ने? *श्रोता: नॅनो सेकंड, १०$^{-९}$*। नॅनो सेकंड, १०$^{-९}$, समझ में आती है यह बात? टेन रेज्ड टु मायनस नाइन जरा बता दो, –९ का अर्थ क्या होता है? *श्रोता: डेसीमल के पीछे...* हां, डेसीमल के पीछे कोई संख्या है यानी वह संख्यात कोई संख्या हो गयी, भले वह अरबों-खरबों में होगी। यहां तो हम समय कितना सूक्ष्म है वह बात देखेंगे। अभी तो मैं सामान्य से बताऊंगी फिर उसमें डिटेल में फिर आपको पढ़ाऊंगी। तो हमें जो मालूम है सेकंड, तो इस सेकंड में क्या होता है? तो कहते हैं, हज़ारों कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं। यह कोड़ाकोड़ी क्या होता है? करोड़ गुणा करोड़ को कोड़ाकोड़ी कहते हैं। एक करोड़ के ऊपर कितने झिरो होते हैं? *श्रोता: सात झिरो होते हैं।* एक करोड़ में एक के ऊपर सात झिरो होते हैं; तो कोड़ाकोड़ी में यानी १ करोड़ गुणा १ करोड़ में एक के ऊपर चौदह झिरो हो गये – इसको कोड़ाकोड़ी कहते हैं। ऐसी हज़ारों कोड़ाकोड़ी आवली एक सेकंड में होती हैं; यह आवली भी एक यूनिट है – माप है, काल गिनने का। तो एक आवली में समय कितने होते हैं? इंजिनिअर साहब बराबर नोट करो। *श्रोता: जघन्य युक्तासंख्यात।* जघन्य युक्तासंख्यात, क्या कहा? जघन्य युक्तासंख्यात इतने समय एक आवली में होते हैं। तो यह जघन्य युक्तासंख्यात क्या है? तो यह मिनिमम असंख्यात है जिसका नाम है जघन्य परीतासंख्यात। यह बाद में डिटेल में आनेवाली बात है, पहले सुन लो, नहीं तो अभी घबराकर भाग नहीं जाना।

तो यह जघन्य परीतासंख्यात नाम का जो सबसे छोटा असंख्यात है, उसको ऐसा बिखेरकर एक-एक में डिस्ट्रिब्यूट कर दो; विरलन कहते हैं उसको। जैसे फॉर एक्झाम्पल, यानी उदाहरण के तौर पर हमारे पास चार संख्या है और चार संख्या को हमें एक-एक में बिखेर देना है। तो कैसे लिखेंगे? १–१–१–१; फिर जो चार संख्या है उसे हर एक के

माथे पर लिख दो ४–४–४–४; यानी चार बार चार आ गये न? उन सबको आपस में गुणा कर दो; कितने हुये? कल से कॅल्क्युलेटर लेकर बैठना यहां पर। *श्रोता: २५६।* २५६ हुये; ४ गुणा ४ = १६ और १६ गुणा १६ = २५६ हो जाते हैं। यहां तक बात ख्याल में आयी? अब आगे बढ़ते हैं। जैसे हमने यह चार का विरलन कर दिया और फिर हर एक के ऊपर चार लिखकर आपस में गुणा किया। ऐसे अब क्या करना है? हमारे पास जो मिनिमम असंख्यात है – जघन्य परीतासंख्यात उसको एक-एक में बिखेर दो; यानी असंख्यात बार एक-एक लिखना पडेगा; हर एक के ऊपर जघन्य परीतासंख्यात लिखो; जघन्य परीतासंख्यात, जघन्य परीतासंख्यात, जघन्य परीतासंख्यात; कितनी बार? जघन्य परीतासंख्यात बार; फिर उनको आपस में गुणा करो; तब जाकर एक आवली में जितने समय होते हैं, उन समयों की संख्या आयेगी। यहां हमें तो संख्या निकालनी है, तो उसको कहते हैं जघन्य युक्तासंख्यात। तो जघन्य युक्तासंख्यात इतने समय एक आवली में होते हैं और ऐसी हजारों कोड़ाकोड़ी आवली एक सेकंड में होती हैं।

हम जब कहते हैं हमारे भगवान केवलज्ञानी जो सर्वज्ञ हैं, एक समय में इतना सब जानते हैं - युगपत् - ॲट अ टाइम; तीन काल के सभी द्रव्यों के सभी गुणों की सभी पर्यायों को एक साथ ॲट अ टाइम स्पष्ट, प्रत्यक्ष जानते हैं; तो वह समय कितना सूक्ष्म है! हम तो उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते हैं कि सेकंड के इतने भाग हो सकते हैं। ख्याल में आयी बात? अब यहां यह सभी सूक्ष्मता की बात हम धीरे-धीरे देखेंगे। यहां तो हमने यह बात देखी कि काल के दो भेद हैं – एक सत्तारूप निश्चयकाल जिसको हम कालद्रव्य कहते हैं और दूसरा है व्यवहारकाल। तो यह जो व्यवहारकाल है, जाहिर है वह तो पर्यायरूप है; यह व्यवहारकाल उत्पाद, व्ययरूप है; जिनको हम कहेंगे ये कालद्रव्य की पर्यायें हैं। अभी उनमें तो बहुत सारे भेद हैं जिनको हम बाद में देखेंगे। अभी तो हमने केवल आवली क्या है उसकी बात देखी है और यह पल्य क्या होते हैं? अंगुल क्या होते हैं? सागर क्या होते हैं? उसकी भी बात हम बाद में देखनेवाले हैं। तो यहां व्यवहारकाल कहना किसको? तो देखिये धवला पुस्तक ४ में, पृष्ठ ३१८ – मैं इसलिये आपको बता रही हूं क्योंकि लोग हमें प्रूफ मांगते हैं; आगम का प्रूफ बताओ; हम कहते हैं ठीक है, हम बतायेंगे आप लाओ आगम; तो कहते हैं हमारे पास आगम तो नहीं है, परंतु आप हमें बस उसके नाम बता दो, पृष्ठ संख्या भी बता दो और कहते हैं कि लाइन भी बता दो, तो अच्छा होगा।

देखिये, हम आपको आगम की लाइन भी बता देंगे, परंतु उस लाइन में जो लिखा है उसका अर्थ कैसे लगाना है यह यदि मालूम नहीं है तो ये धवला, जयधवला, महाधवला के अर्थ आपको भासित नहीं होंगे। हम तो आगम कैसे पढ़ना, उसका अर्थ कैसे लगाना, यही बात हम थोड़े में - स्थूलरूप से देखनेवाले हैं; वह भी मात्र काल की अपेक्षा की बात यहां चलेगी, पूरे छह दिन, काल की ही अपेक्षा बात चलेगी।

इन धवला आदि ग्रंथों में यह मार्गणाओं का प्रकरण आता है वहां मार्गणाओं का काल, उनका अंतर आदि की बातें होती हैं, उसका अर्थ कैसे समझना यह महत्व की बात है। इसलिये यह जो मैं अभी बताने जा रही हूं, यह धवला पुस्तक ४ में ३१८ पृष्ठ पर बताया है कि जिसके द्वारा कर्म, भव, काय और आयु की स्थितियां कही जाती हैं उसे काल कहते हैं। स्थिति यानी वह कितने काल तक रहते हैं; स्थिति का अर्थ क्या है? कितने काल तक एक भव रहता है? कितने काल तक कायस्थिति; अभी उसका अर्थ क्या है उसको हम देखेंगे; तो इसको कहेंगे काल। इस काल के दूसरे नाम क्या हैं? तो काल को हम कहेंगे समय, अद्धा, हमारी भाषा में टाइम ये सब एकार्थवाचक शब्द हैं। तो ये सब प्रकार के काल गिनने का यूनिट क्या है? यह व्यवहारकाल की बात चल रही है। हमने यहां निश्चयकाल की बात अभी बता दी आपको। परंतु यह सब जब गिनने की बात चलेगी तो व्यवहारकाल में चलेगी। तो इसको गिनने का हमारे पास सबसे छोटे में छोटा यूनिट, एकक क्या है? *श्रोता: प्रदेश?* प्रदेश तो क्षेत्र का माप है, काल का माप क्या है? अभी हमने बताया था समय; समय यह काल का सबसे सूक्ष्म अंश है, इसमें हम काल को गिनेंगे। तो यह समय किसको कहना? तो देखो, यह परमाणु और जीव – गमन करनेवाले द्रव्य तो दो ही हैं – जीव और पुद्गल। तो परमाणु मंद गति से गमन करे तो एक समय में एक प्रदेश पर वह गमन करता है; एक परमाणु अपने क्षेत्र को - प्रदेश को लांघ कर बाजूवाले दूसरे प्रदेश पर चला जाये, तो उसने कितना गमन किया? एक प्रदेश प्रमाण आगे बढ़ गया। तो सबसे मंदगति से अगर वह जाता है, तो एक समय में वह एक प्रदेश आगे जाता है तो उसको कहेंगे वह काल का एक समय। परमाणु में इतनी योग्यता है कि एक समय में अधिक से अधिक कितना गमन कर सकता है? चौदह राजू। आपके एअरोप्लेन कितने स्पीड से जाते हैं अभी आज कल? यह लाइट की कितनी स्पीड है? लाइट कितने समय में कितना ट्रॅव्हल करती है? तो प्रकाश को सूरज से यहां आने में

कितना टाइम लगता है? आठ मिनट लगते हैं, हैं न? तो यहां तो एक समय में चौदह राजू यानी लोकाकाश के नीचे के एण्ड से ऊपर के एण्ड तक पहुंचे इतनी पुद्गल में गमन करने की शक्ति है। तो आप कहेंगे ये चौदह राजू के जितने प्रदेश हैं न, एक समय को उतना डिव्हाइड करो तो एक समय के इतने अंश होंगे की नहीं? नहीं – जैसे हम कहते हैं एक घंटे में साठ किलोमीटर जाता है तो एक मिनट में वह एक किलोमीटर जायेगा; तो हमने साठ किलोमीटर के साठ भाग करके एक भाग लिया। उसमें से साठवां भाग है एक किलोमीटर और घंटे का भी साठवां भाग किया, वह है एक मिनट। वैसे समय के भी वहां कितने भाग होने चाहिये तो चौदह राजू के जितने प्रदेश हैं उतने, परंतु ऐसा नहीं होता।

जैसे आकाश के एक प्रदेश में जो अवगाहना है; आकाश के एक प्रदेश में इतना अवगाहना का सामर्थ्य है कि एक-एक प्रदेश में अनंत जीवों के कितने ही प्रदेश, अनंतानंत पुद्गल परमाणु, एक-एक कालद्रव्य, धर्मद्रव्य का एक प्रदेश, अधर्मद्रव्य का एक प्रदेश, इसतरह से सबको अवगाहना देने का उसमें सामर्थ्य है। ऐसे ही यह काल की भी ऐसी अद्भुत बात है कि पुद्गल परमाणु यदि मंद गति से गमन करे तो एक प्रदेश आगे जाता है और तीव्र गति से यदि गमन करे तो एक समय में चौदह राजू गमन करता है। जैसे उसमें अवगाहना की बात है वैसे ही इसमें - काल में भी बात आती है - यह अद्भुत बात है कुछ!

तो यहां वर्तमान का तो केवल एक समय है; परंतु हम वर्तमान किसके लिये कहते हैं देखेंगे; वर्तमान में आज कौनसा दिन है कहेंगे? कौनसा वार है आज? भूल गये न आज? शिबिर में आते हैं तो सब भूल जाते हैं! शुक्रवार है कहेंगे। तो यह हमारा वर्तमान कितना हुआ? चौबीस घंटे का। हमारे वर्तमान के चौबीस तीर्थंकर कितने काल में हुये? करीबन एक कोड़ाकोड़ी सागर क्योंकि चौथे काल में तो हुये थे न; परंतु हमारी वर्तमान अवसर्पिणी कहेंगे तो हमारा वर्तमान का पूरा अवसर्पिणी काल दस कोड़ाकोड़ी सागर का हुआ। यह कोड़ाकोड़ी सागर क्या है वह देखेंगे – कुछ शब्द पहले सुन लेना, बाद में उसके अर्थ बतायेंगे। तो जब हम वर्तमान शब्द कहते हैं तो जिस अपेक्षा से हम कहते हैं उस अपेक्षा से उस वर्तमान का अर्थ भी अलग-अलग होता है। अपेक्षा बदल जाती है परंतु जब हम एक-एक समय की बात करेंगे तो वर्तमान का एक समय है; भूतकाल में ऐसे कितने समय बीत गये हैं? क्या पता? हमें पता नहीं! वही तो पता करना है कि हमने कितना काल बिताया है। किसीको पूछा कि आपने कितना काल बिताया है और भविष्यकाल

कितना बाकी है? तो कोई कहेंगे हमने पैंसठ साल बिता दिये हैं, अभी कुछ पांच-दस साल बाकी हैं। हम मनुष्यपर्याय की बात नहीं पूछ रहे हैं।

हम जीवद्रव्य हैं; वर्तमान में हम हैं; जो द्रव्य है, जिसका अस्तित्व है, उसका अस्तित्व तीन काल में रहता है; वह अनादि से है; अनादि यानी जिस काल की कोई शुरुआत ही नहीं है, आदि ही नहीं उसको कहते हैं अनादि; और कब तक हम रहनेवाले हैं? तो अनंतकाल तक रहनेवाले हैं। हमने अपनेको मनुष्य मान लिया है तो हमारा अस्तित्व हमने मान लिया है ज्यादा से ज्यादा ८० साल या ९० साल का। इतना कौन जियेगा अभी? क्या करेगा जीकर? इसके लिये हम सारी तजबीज करते हैं। हमारे मां-बाप हमें बचपन में स्कूल में डाल देते हैं; फिर हम पढ़ते चले जाते हैं। कोई पदवी - डिग्री हासिल करते हैं। फिर आगे क्या? उसमें हम स्पेशलायझेशन करते हैं। फिर... ? इतना अभी पढ़ा है तो फिर कुछ नौकरी-धंधा करेंगे; पैसा कमायेंगे; फिर... ? इतना कमाया है तो भोगेंगे तो सही। तो इतने में तो भव समाप्त हो जाता है फिर दूसरे भव में चले जाते हैं। वहां पहले से फिर अे बी सी डी शुरू करनी पडती है सबको। ऐसे कितने भव चले गये हैं? यानी हम अभी मनुष्य हैं तो इसके पहले हम थे कि नहीं? उसका विचार करना है; और अभी हम मनुष्य हैं तो इसके बाद हम रहेंगे कि नहीं रहेंगे?

तो यह सब विचार करने के लिये हम यहां इकट्ठे हो गये हैं; क्यों विचार करना है? क्योंकि ऐसे ही हम तो अनादि से हैं कह रहे हो, तो अनादि से हैं तो हम कहां थे? और अनंतकाल हम रहनेवाले हैं तो कहां रहनेवाले हैं? इसका जरा विचार करेंगे; और हम कहां रहना चाहते हैं, इसको भी नक्की करके वहां चलेंगे। यहां वर्तमान में हम मनुष्य हैं, परंतु हम तो अनादि से हैं; अनादि क्या होता है मालूम है किसीको? यहां लिखा है बोर्ड पर। यहां चार नाम लिखे हैं बोर्ड पर। क्या-क्या लिखा है? देखो। ये काल गिनने के जो तरीके हैं, उनको चार पद्धति से कहने में आता है। देखो यहां

– काल –

सादि, अनादि, सांत, अनंत

अब इनके यदि हम कॉम्बिनेशन्स करेंगे, जोडियां बनायेंगे तो वे इसप्रकार से होंगे –

(१) अनादिअनंत, (२) अनादिसांत, (३) सादिसांत, (४) सादिअनंत

सादि है, शादि नहीं हो, सादि। फिर दूसरा है अनादि, देखो यहां लिखा है। सादि, अनादि, सांत और अनंत। यह शास्त्र में तो ऐसा ही लिख देंगे। हम उसका अर्थ देखते हैं। सादि यानी स + आदि, जिसको आदि यानी शुरुआत है, उसको सादि कहेंगे। अनादि का अर्थ होता है अन् + आदि, जिसको आदि यानी शुरुआत ही नहीं है वह सब अनादि है। सांत का अर्थ होता है स + अंत यानी जिसका अंत होता है वह है सांत और अनंत यानी जिसका अंत नहीं है, कायम रहनेवाला है, उसको कहेंगे अनंत।

सभी द्रव्य तो अनादिअनंत हैं ही हैं, परंतु जब उनकी पर्यायों की जो अन्य-अन्य बातें आती हैं तो उनको हम गिनते हैं। तो यहां जो आपको मालूम है ऐसा अनादिअनंत क्या है? *श्रोता: सुमेरु पर्वत। अन्य श्रोता: सभी द्रव्य हैं।* आप और मैं? *श्रोता: मैं स्वयं अनादिअनंत...* तो पहले अपने को रखो। अनादिअनंत क्या है? अकृत्रिम क्या है? तो अकृत्रिम तो हमें नंदीश्वर द्वीप आदि के चैत्यालय याद आते हैं। उनकी महिमा आती है। मैं स्वयं अकृत्रिम अनादिअनंत हूं, कायम रहनेवाला हूं ऐसा नक्की करेंगे तो अपनी महिमा आये बिना नहीं रहेगी। यह तो मनुष्यपर्याय है; यह मनुष्यपर्याय अनादि से है कि सादि है? यह अभी नक्की करो। *श्रोता: सादि।* सादि है। उसका अंत है कि अनंतकाल तक वह रहनेवाली है? *श्रोता: अनंतकाल...* क्या अनंतकाल तक रहनेवाली है? *श्रोता: नहीं, उसका अंत है।* यह मनुष्यपर्याय की जब हम बात करेंगे तो यह सादि है और सांत है। ऐसा कोई आपको मालूम है कि जो अनादि है और सांत होनेवाला है या हुआ है? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व; तो मिथ्यात्व हर जीव को कब से है? अनादि से। जो कोई सिद्ध हो चुके हैं वे भी पहले संसार अवस्था में थे; पहले मिथ्यादृष्टि थे; उनका भी मिथ्यात्व अनादि से था और किस विधि से, किस पुरुषार्थपूर्वक उसका अंत हुआ? वह तो हम सब जानते हैं और सीख भी रहे हैं। तो यह मिथ्यात्व जो हर पर्याय में नया-नया-नया-नया, एक-एक समयवाला है; परंतु उसका अंत हो जाता है तो हम कहेंगे प्रवाह की अपेक्षा से वह अनादि है और उसका अंत हुआ इसलिये वह अनादि सांत है। अभव्यों में कहेंगे कि उनका मिथ्यात्व अनादिअनंत चलता रहेगा क्योंकि वे कभी सम्यग्दर्शन प्राप्त करनेवाले नहीं हैं।

ऐसी कोई बात आपको मालूम है कि जिसको आदि है यानी वह सादि है और अनंतकाल तक रहनेवाला है? *श्रोता: सिद्धपर्याय।* सिद्धपर्याय, और कुछ? केवलज्ञान,

केवलदर्शन, क्षायिक सम्यक्त्व – पर्याय प्रकट हुयी तो वैसी की वैसी ही चलेगी। हर समय की पर्याय की अपेक्षा बात करेंगे तो वह एक समय की है; एक समय की अपेक्षा से उसको हम सादिसांत कहेंगे; परंतु प्रवाह की अपेक्षा से वैसी की वैसी पर्याय – वही नहीं, वैसी की वैसी अनंतकाल तक चलती है तो उस अपेक्षा से उसको सादिअनंत भी कहेंगे; इसलिये ध्रुव भी कहेंगे उनको। सिद्धदशा को ध्रुव किस अपेक्षा से कहते हैं? वह अभी वैसी की वैसी कायम रहनेवाली है, इसलिये उसको ध्रुव भी कहेंगे। आचार्य कुंदकुंद ने समयसार की पहली गाथा में उसको ध्रुव और अचल कहा है। तो हमने अभी तक क्या किया? हम तो अनादि से हैं वह तो नक्की है तो अनादि जब कहते हैं, तो हम जीवद्रव्य हैं तो हम अनादि से हैं; परंतु हमारी पर्याय एक के बाद, एक के बाद, एक के बाद होती आयी है; यहां पर्याय यानी भव जैसे मनुष्यपर्याय, देवपर्याय आदि। तो अनादि से आज तक हमने किया क्या? किसी न किसी पर्याय में जन्मे, कुछ काल बिताया, फिर मर गये; फिर अन्य पर्याय धारण की, फिर मर गये। कितने भव धारण किये अभी तक? कुछ हिसाब ही नहीं न? तो इसका हिसाब हम देखेंगे थोड़ा। तो अनंत-अनंत-अनंत भव ऐसे हो गये हैं, तो हम इसीको कहेंगे संसरण, संसार। हमारा संसार क्या है? यह जन्म-मरण, जन्म-मरण हम अभी तक करते आये हैं इसीको संसार कहते हैं; संसरण कहते हैं। संसरण शब्द से संसार शब्द तैयार हुआ है। तो यह संसार हमने कैसे-कैसे, कहां-कहां बिताया है? हम कहां-कहां ये चक्कर लगाकर आये हैं? उसकी बात हम यहां करनेवाले हैं। इसके लिये कुछ पारिभाषिक शब्द भी आते हैं, उनके अर्थ देखते-देखते हम आगे बढ़ेंगे।

देखो, आगे बढ़ने से पहले कुछ सामान्य बातें हम यहां देख लेते हैं। एक बात तो यह है कि कोई नये शब्द जो आयेंगे उसका अर्थ तो हम जरूर आपको बतायेंगे। किसीके मन में कोई प्रश्न हो सकते हैं, परंतु बीच में कोई प्रश्न मौखिकरूप से नहीं पूछे। आपके हर प्रश्न का जवाब दिया जायेगा, आपके प्रश्न लिखितरूप से चिट्ठी में आप यहां जमा कीजिये। जहां उस विषय का प्रसंग आयेगा वहां उस प्रश्न का उत्तर मिल जायेगा। बीच में प्रश्नोत्तरी करने से विषयांतर होता है, चालू विषय छूट जाता है। जिसका अभ्यास है, वह ऊपर-ऊपर के हाय लेव्हल के कुछ प्रश्न पूछता है और अगर मैं उन प्रश्नों के उत्तर देने लगूं तो बाकी लोगों को पता नहीं लगता है कि यह क्या जुगलबंदी हो रही है, इसलिये फिर बोअर हो जाते हैं। विषय को समझने के लिये हम सबको साथ में चलना है। आपको विषय

में कोई प्रश्न है तो आप लिखितरूप में यहां टेबल पर जमा कर देना। बाद में दूसरे प्रवचन में या जब इसका विषय आयेगा, तब उसका खुलासा हो जायेगा। पुस्तकें जरूरी होंगी, अभी तो आपके पास नहीं हैं। अभी तो सामान्य से विषय चलेगा यहां पर, परंतु जीवकाण्ड के दोनों व्हॉल्यूम और जैन भूगोल की पुस्तकें आवश्यक हैं। इस पहले लेक्चर के बाद सभी लोगों को ये पुस्तकें मिल जायेगी, उसकी व्यवस्था पं. दिनेशभाईजी ने कर दी है, वे आपको उसकी सूचना देंगे। आज तो जैन भूगोल नहीं लगेगी आपको, जब जो पुस्तकें लगनेवाली हैं तब मैं पहले सूचित करूंगी। परंतु लेकर रखना है आपको।

तो यहां हम देखेंगे कि यह काल को जानना है, तो इस अनुयोगद्वार यानी इस चॅप्टर का नाम लिखा है – कालानुगम। अनुगम क्या होता है? तो यथार्थ बोध को, यथार्थ ज्ञान को अनुगम कहते हैं। यहां काल की बात विस्तार से बतायी है, इसमें बहुत सारी चर्चा है क्योंकि अनेक पुस्तकें हैं इस पर, अनेक पेजेस, अनेक पृष्ठ इस पर लिखे हुये हैं – कालानुयोगद्वार में। पहले हम यह नक्की करेंगे कि काल को जानना आवश्यक क्यों है? हमें क्या चाहिये? हम स्वाध्याय क्यों करते हैं? अपना स्वरूप हम क्यों जानना चाहते हैं? हमें सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है; अपने को पहचानना है; अपने में ही स्थिर होना है और मोक्ष प्राप्त करना है। हमें सुखी होना है तो सुखी होने के लिये काल को जानने की क्या आवश्यकता है? हमें तो मोक्षमार्ग की प्राप्ति करनी है। तत्त्वार्थसूत्र में पहले ही सूत्र में बताया है कि **सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः**। तो यह सम्यग्दर्शन कैसे होगा? तत्त्वों के अभ्यास से होगा **तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्।** तो वहां तत्त्व बताये हैं, सात तत्त्वों के नाम बताये हैं। फिर तत्त्वों का अभ्यास, तत्त्वों का निर्णय कैसे होगा? तो आगे के सूत्र में कहते हैं – प्रमाण और नय से होता है। यह तो हमने सुना है न? सबका अभ्यास है यहां पर। क्या है सूत्र? *श्रोताः प्रमाणनयैरधिगमः।* **प्रमाणनयैः अधिगमः।** यह प्रमाण और नय से अधिगम होता है यानी प्रमाण और नय से ज्ञान होता है। तो उसको विस्तार से कहना है, तो किसी पदार्थ को, किसी विषय को, किसी गुणस्थान को, किसी पर्टिक्युलर चीज को जानना है तो उसको वे कह देंगे प्रमाण और नय से जानना है। तो कहते हैं जरा विस्तार से बताइये कि प्रमाण और नय से जानना यानी कैसे जानना? तो तत्त्वार्थसूत्र में ही बताया है और उसीको धवला पुस्तक एक में भी पृष्ठ ३५ पर बताया है, कि पदार्थ को जानना है तो कैसे जानना है? तो पहले नंबर पर पदार्थ क्या है? उसका नाम बतायेंगे; वह किसका है?

उसका स्वामित्व बतायेंगे; किसके द्वारा होता है? साधन बतायेंगे; कहां पर होता है? क्षेत्र - उसका अधिकरण बतायेंगे; कितने समय तक रहता है? उसकी स्थिति या काल भी कहेंगे; कितने प्रकार का है? विधान बतायेंगे। इन छह अनुयोगद्वारों से संपूर्ण पदार्थों का ज्ञान करना चाहिये। इसीको तत्त्वार्थसूत्र में पहले अध्याय के सातवें सूत्र में बता दिया है, क्या लिखा है? **निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः।** (१) निर्देश, (२) स्वामित्व, (३) साधन, (४) अधिकरण, (५) स्थिति, (६) विधान इनके द्वारा पदार्थों का ज्ञान करना चाहिये। उसीको हमने अभी विस्तार से खोलकर बताया आपको। तो पदार्थो को जानने के लिये ये छह बातें आवश्यक हैं।

तो कहते हैं कुछ नहीं समझे, जरा और विस्तार से बताओ। तो और भी विस्तार से बताने के लिये आगे के यानी आठवें सूत्र में क्या कहा? **सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च।** सत् यानी वस्तु है; यह चौथा गुणस्थान कहो या तेरहवां गुणस्थान जिस किसीकी बात है, वह है, यह बताना वह सत् हो गया। संख्या बतानी है; किसी गुणस्थान की या किसी कर्म की बात करनी है तो कर्म की या ज्ञान के भेदों की या ज्ञान की बात करनी है तो उसकी संख्या कितनी है, यानी उस ज्ञानवाले – उस गुणस्थानवाले जीव कितने हैं? तो वह संख्या बतानी है। तो सत् हुआ, संख्या हुयी। अब क्षेत्र - उस पर्टिक्युलर गुणस्थानवाले जीव कितने क्षेत्र में रहते हैं; क्या पूरे लोक में रहते हैं कि लोक के संख्यातवें भाग में रहते हैं कि लोक के असंख्यातवें भाग में रहते हैं? उसको कहेंगे उसका क्षेत्र। उसका स्पर्शन का अर्थ क्या है? उस गुणस्थानवाले जीव अतीतकाल में यानी अनादि से आज तक के काल में कहां-कहां पाये जाते हैं; फिर वहां उनकी बहुत सारी बातें – वे कहां रहते हैं? विहार करके कहां तक जा सकते हैं? मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा कहां तक जा सकते हैं? जन्म लेकर यहां उनके प्रदेश कहां तक फैले रहते हैं? उसकी अपेक्षा कितना क्षेत्र व्याप्त है? – उसको कहेंगे स्पर्शन। तो क्या-क्या बातें हुयी? सत्, संख्या, क्षेत्र और स्पर्शन। फिर उसके बाद? हां? *श्रोता: काल।* हां, काल में क्या बतायेंगे हम? उस गुणस्थान में रहने का काल कितना है। जब काल की बात आती है जैसे मिथ्यात्व गुणस्थान का काल – तो अनेक जीवों की अपेक्षा भी बतायेंगे, उसको कहते हैं नाना जीव, नाना जीव यानी वह गुजरातीवाला नाना (छोटा) नहीं, अनेक जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में कितने काल तक रहेंगे; यानी मिथ्यात्व गुणस्थान, इस संसार में, इस विश्व में कितने काल तक

चलेगा। आप बतायेंगे? मिथ्यात्व गुणस्थान अनेक जीवों की अपेक्षा से कितने काल तक रहेगा? *श्रोता: अनादिअनंत।* अनादिअनंत चलता ही रहेगा यानी सदाकाल रहेगा, उसका अर्थ क्या है? सदाकाल यानी हमेशा। अब एक जीव की अपेक्षा बात करनी है। देखो, यह हर एक गुणस्थान में, हर एक मार्गणा में; गुणस्थान तो समझते हो न? पहले से चौदहवें गुणस्थान तक, गुणस्थान कहेंगे; मार्गणा किसको कहते हैं? अपने यहां यह विषय बहुत बार चला है, जैसे गतिमार्गणा की अपेक्षा से चार गतियों की बात होगी; इन्द्रियमार्गणा की अपेक्षा से एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक की बात; इनको कहेंगे मार्गणायें।

तो मार्गणाओं में रहने का नाना जीवों की अपेक्षा कितना काल है और एक जीव की अपेक्षा कितना काल है? जैसे हमने अभी देखा नाना जीवों की अपेक्षा से मिथ्यात्व गुणस्थान सदाकाल है, ऐसे और कोई गुणस्थान मालूम हैं जो हमेशा रहेंगे सदाकाल? यहां भाइयों में से कोई बतायेंगे? भाइयों को जरा सोचने का और उत्तर देने का मौका दे दो न, नहीं तो बहनें ही सब जल्दी मोक्ष चली जायेंगी – हां, उनको जाने के पहले भाई होकर जाना पड़ेगा हो। हां, कोई बतायेंगे? हां बोलो, सौमिल? *श्रोता: चौथा।* चौथा गुणस्थान भी हमेशा पाया जायेगा यानी चौथे गुणस्थानवाले जीव हमेशा होंगे ही इस विश्व में। और? *श्रोता: पांचवां...* पांचवां और? *श्रोता: छठवां...* छठा, *श्रोता: सातवां...* सातवां, *श्रोता: तेरहवां...* तेरहवां, ये गुणस्थान नाना जीवों की अपेक्षा से हमेशा ही पाये जायेंगे – इनको कहेंगे निरंतर मार्गणा और बाकी दूसरे, तीसरे गुणस्थान में और श्रेणी के गुणस्थानों में कभी-कभी जीव नहीं है ऐसा भी हो सकता है इसको कहेंगे सांतर मार्गणा। तो हमने यह देखा है कि नाना जीवों की अपेक्षा मिथ्यात्व गुणस्थान सदाकाल रहता है।

अभी एक जीव की अपेक्षा बात करेंगे। तो एक जीव की अपेक्षा बात करनी है तो मिथ्यात्व गुणस्थान एक जीव की अपेक्षा कितने काल तक रह सकता है? तो हम कहेंगे अभव्यों की अपेक्षा अनादिअनंत भी हो सकता है और अब भव्यों की अपेक्षा बात करेंगे हम – हं? *श्रोता: अनादिसांत।* तो अनादि से था, सांत हुआ। तो कोई सादिसांतवाले भी होंगे मिथ्यादृष्टि? हं, भव्य, आप कहते हैं नहीं होंगे। आप क्या कहते हैं अनुज? हां, हां? *श्रोता: हो सकते हैं।* पहले नहीं थे अभी हो सकते हैं, ऐसा? हां, देखो कोई सम्यग्दृष्टि है और गिरकर मिथ्यात्व में आया, तो उसके मिथ्यात्व की शुरुआत हो गयी न। *श्रोता: नहीं,*

फिर क्षायिक सम्यक्त्व कब करेगा? फिर करेगा परंतु मिथ्यात्व हो गया न उसका? इसको सादि मिथ्यादृष्टि कहेंगे। एक तो होते हैं अनादि मिथ्यादृष्टि और दूसरे हैं सादि मिथ्यादृष्टि। हां जो सादि मिथ्यात्व है उसका अंत तो होने ही वाला है अर्थात् कुछ काल में सम्यग्दर्शन प्राप्त करके वह जीव नियम से मोक्ष प्राप्त करनेवाला है।

तो जो सादिसांत मिथ्यात्व का काल है, वह सादिसांत काल गिनना है; तो कैसा गिनेंगे हम? तो मिथ्यात्व में रहने का कम से कम काल कितना है यानी कोई जीव एक बार सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में आया है अभी वह अर्लिएस्ट, शीघ्र से शीघ्र कितनी देर में वह सम्यक्त्व प्राप्त करेगा? उसको कहेंगे मिथ्यात्व का जघन्य काल। *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* हां, अंतर्मुहूर्त और कोई जीव लंबे से लंबे काल तक मिथ्यात्व में ही रहेगा, हां, तो उसको कहेंगे मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल, वह कितना है? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तनकाल।* आपने बताया अर्धपुद्गलपरावर्तनकाल; यह परावर्तन कहो या परिवर्तन कहो एक ही बात है। तो अर्धपुद्गलपरावर्तन कितना बड़ा लंबा काल है? वह तो अनंतकाल है। यह परावर्तन क्या होता है? वह अनंत क्या होता है? तो यह सभी हम पांच-छह दिन में परावर्तन ही करने हैं हमको; वैसे तो हम करते आये हैं अनादि से, अभी उसके बारे में सीखना है केवल। इसके लिये यह काल गिनना है न! यह परावर्तन क्या है? वह तो काल गिनने का एक माप है। सबसे छोटा माप तो हमने एक समय देखा; अभी यहां बड़े से बड़े माप लेंगे क्योंकि अनंतकाल गिनना है हमको तो हम बहुत बड़े मापों से गिनेंगे; तो यहां पांच परावर्तनों के रूप में हम काल को गिननेवाले हैं। तो मिथ्यात्व में रहने का सबसे अधिक से अधिक काल कितना है? जिसको हम सादिसांत मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल कहेंगे। तो उसको कहेंगे हम कुछ कम अर्धपुद्गलपरावर्तन काल। उसका अर्थ ऐसा है कि पहली बार सम्यक्त्व प्राप्त होने पर कोई जीव मिथ्यात्व में भी चला जाये तो अधिक से अधिक इतने काल तक ही वह संसार में रहेगा, अर्धपुद्गलपरावर्तन काल में वह नियम से मोक्ष जानेवाला ही है उसमें कोई संदेह नहीं है।

तो अभी हम यहां देखते हैं, यहां जो हमने सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन और काल देखा; फिर एक अंतर होता है। यह अंतर क्या होता है? जैसे हमने देखा मिथ्यात्व, अभी हम मिथ्यात्व गुणस्थान की बात कर रहे हैं; कोई जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में है – एक जीव

की अपेक्षा बात चलेगी, नाना जीवों की अपेक्षा मिथ्यात्व गुणस्थान का अंतर नहीं है क्योंकि सदाकाल उसमें कोई न कोई जीव पाया जाता है। देखो, यह क्यों जानना है? क्योंकि यह शब्द आते हैं न कि इसका अंतर इतना है, उसके ऊपर से हम कितनी ही बातें डिराइव्ह कर सकते हैं, हम उसके निर्णय तक पहुंच सकते हैं। तो यह अंतर जानना हैं हमें, तो गुणस्थान का – कौनसे? मिथ्यात्व गुणस्थान का अंतर, एक जीव की अपेक्षा से देखना है; यानी किसी जीव ने मिथ्यात्व गुणस्थान छोड़ा तो उसका अंतर चालू हो गया और जब वह दुबारा मिथ्यात्व में आयेगा तो उसका अंतर समाप्त होगा। यह ख्याल में आती है बात?

कोई जीव मिथ्यात्व गुणस्थान में था, सम्यग्दृष्टि हुआ तो उसका मिथ्यात्व गुणस्थान का अंतर चालू हुआ। यह जरूरी नहीं है कि उसको फिर दुबारा मिथ्यात्व में आना पड़े, पर हमको अंतर घटित करना है, इसलिये उसको दुबारा मिथ्यात्व में लाना; तो कम से कम कितने काल तक सम्यक्त्व में रहकर फिर वह मिथ्यात्व में आयेगा, उस काल को कहेंगे मिथ्यात्व का जघन्य अंतर। *श्रोता: अंतर्मुहूर्त में।* अंतर्मुहूर्त में यानी किसीको सम्यग्दर्शन हुआ, एक अंतर्मुहूर्त तक सम्यग्दृष्टि रहा और फिर मिथ्यात्व में चला गया; तो मिथ्यात्व गुणस्थान का एक जीव की अपेक्षा कम से कम अंतर यानी जघन्य अंतर, एक अंतर्मुहूर्त है। मिथ्यात्व का अधिक से अधिक अंतर कितना होगा? हं? *श्रोता: दो ६६ सागर।* हां, तो यह दो ६६ सागर कैसे होते हैं उसको हम देखते हैं। तो दो ६६ सागर वेदक सम्यक्त्व की अपेक्षा से होंगे क्योंकि क्षायिक होगा तो मिथ्यात्व में आयेगा नहीं; वेदक सम्यग्दर्शन यानी क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन। हां, तो एक बार ६६ सागर तक वह चौथे, पांचवें, छठे और सातवें गुणस्थान में वेदक सम्यक्त्व के साथ रहेगा; ६६ सागर में एक अंतर्मुहूर्त शेष रहे तब यह तीसरे गुणस्थान में आता है और अंतर्मुहूर्त में फिर चौथे में चला जाता है। फिर दोबारा चौथे, पांचवें, छठे, सातवें गुणस्थान में रहते हुये वह दूसरी बार ६६ सागर काल तक वेदक सम्यक्त्व में रहता है और जब वह ६६ सागर में एक अंतर्मुहूर्त शेष रहता है तब वह वापस यानी दोबारा मिथ्यात्व में आता है। यह अंतर्मुहूर्त पहले ही वह मिथ्यात्व में अथवा तीसरे गुणस्थान में आता है उसका कारण यह है कि पूरे ६६ सागर काल तक यदि कोई वेदक सम्यक्त्व यानी क्षायोपशमिक सम्यक्त्व में रहता है तो वह नियम से क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करता है। इसीलिये पहले ६६ सागर समाप्त होने से एक अंतर्मुहूर्त पहले वह तीसरे गुणस्थान में आया, फिर सम्यक्त्व प्राप्त करके वह दूसरे ६६ सागर तक

सम्यक्त्व के साथ रहा और उसमें एक अंतर्मुहूर्त शेष रहा तो वह दुबारा मिथ्यात्व में आया। इसतरह से मिथ्यात्व का उत्कृष्ट अंतर दो ६६ सागर में कुछ कम घटित हो जाता है। यह अंतर क्या है? उसको समझना है हमको, ख्याल में आयी बात?

अब हम औपशमिक सम्यक्त्व का अंतर देखते हैं। किसीको औपशमिक सम्यक्त्व – प्रथमोपशम सम्यक्त्व हुआ; औपशमिक सम्यक्त्व के बाद वह मिथ्यात्व में चला गया; फिर दुबारा औपशमिक सम्यक्त्व होने के लिये कम से कम कितना अंतर चला जायेगा बीच में? हां जीवंधरजी, हां, *श्रोता: अंतमुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त? मिनिमम अंतर चाहिये हमको, अंतर्मुहूर्त में नहीं। मैं प्रथमोपशम सम्यक्त्व की बात कर रही हूं। *श्रोता: पल्य का असंख्यातवां भाग।* हां, पल्य का असंख्यातवां भाग। एक बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व होकर गिर गया तो फिर दुबारा प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने के लिये कम से कम अंतर असंख्यात वर्षों का है; जिसको पल्य का असंख्यातवां भाग कहते हैं। औपशमिक सम्यक्त्व छूटकर कोई जीव मिथ्यात्व में आता है तो अंतर्मुहूर्त में वह क्षायोपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। औपशमिक सम्यक्त्व का उत्कृष्ट अंतर कितना होगा? किसीको औपशमिक सम्यक्त्व हुआ उसके बाद वह मिथ्यात्व में गया या क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि होकर बाद में मिथ्यात्व में गया, तो अधिक से अधिक कितने काल के बाद वह दुबारा औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन में कुछ कम।* अर्धपुद्गलपरावर्तन में कुछ कम, पहली बार औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त होने पर वह मिथ्यात्व में चला गया और कुछ कम अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक मिथ्यात्व में रहा और अंतिम भव में उसने आयु के अंत में औपशमिक सम्यक्त्व के साथ संयम प्राप्त किया और अंतर्मुहूर्त में मोक्ष चला गया। तो यह उत्कृष्ट अंतर घटित होता है। ख्याल में आता है?

क्षायिक सम्यक्त्व का अंतर कितना होगा? एक बार होने के बाद अंतर का सवाल नहीं है, वह अनंतकाल तक क्षायिक सम्यग्दृष्टि रहता है। इसको कहेंगे काल, अंतर और फिर भाव; भाव में तो पांच भाव में से कौनसा भाव है, हम जहां जिस विषय की बात चलती है वहां उस भाव को हम ले सकते हैं; जैसे मिथ्यात्व की बात हो तो हम औदयिक भाव कहेंगे, सम्यक्त्व की बात हो तो उसमें औपशमिक, क्षायोपशमिक, क्षायिक भाव कहेंगे और अंत में है अल्पबहुत्व – यानी इसमें जो हीनाधिकता होती है, जीवों की संख्या

में, काल में, आदि-आदि बातें वे अल्पबहुत्व में आती हैं। इसलिये पदार्थों को, गुणस्थानों को, मार्गणाओं को सत्, संख्या, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव और अल्पबहुत्व के द्वारा नक्की करना चाहिये। हमें सम्यग्दर्शन चाहिये, सम्यग्दर्शन के लिये जीवादि जो छह द्रव्य हैं, उनका स्वरूप, उनकी परिणमन व्यवस्था और सात तत्त्व, उनका ज्यों का त्यों स्वरूप, इनका यथार्थ निर्णय होना ही चाहिये।

जब हम जीवद्रव्य कहेंगे, तो जीव की पर्यायों का भी निर्णय यथार्थ होना चाहिये। उसके लिये गुणस्थान, मार्गणास्थान का थोड़ा नॉलेज यानी थोड़ा ज्ञान तो आवश्यक है, जितना सम्यग्दर्शन के लिये कार्यकारी है, उतना तो होना चाहिये। हमें उसके बारे में कुछ भी नहीं मालूम है और उस संबंधी कुछ भ्रान्ति चलती है, तो भ्रान्ति के साथ तो सम्यग्दर्शन होगा नहीं क्योंकि हमें सम्यग्दर्शन तो चाहिये, परंतु उसके साथ सम्यग्ज्ञान नहीं हुआ तो भी चलेगा, हं? क्योंकि हमने समयसार पढ़ा है, वहां तो कुंदकुंद आचार्य लिखते हैं, क्या लिखते हैं? कि जीव में यानी मुझमें न गुणस्थान है, न मार्गणास्थान है, न उदयस्थान है, न बंधस्थान है – ये क्या होते हैं? न वर्ग है, न वर्गणा है, न स्पर्धक है, न कुछ है; ये क्या होते हैं? उससे क्या लेना देना? ये हमारे में नहीं हैं। वे ही कुंदकुंद आचार्य, अष्टपाहुड ग्रंथ के बोधपाहुड में कहते हैं कि अरिहंत भगवान को नमस्कार करना हो तो स्थापनापूर्वक करना चाहिये। आपने तो कर दी स्थापना, बेंगलोर में बड़ा मंदिर बनाया है न आपके पिताजी ने, क्यों रमेशभाई? हां, क्या-क्या स्थापना की? तो हमने पंचकल्याणक मनाया, विधिपूर्वक स्थापना की; तो कहते हैं उसको स्थापना नहीं कहते। आप निकालकर देखना बोधपाहुड, हमने यहां बहुत बार बताया है आपको। बोधपाहुड में ३१ नंबर की गाथा में कहते हैं कि अरिहंत की स्थापना करना यानी अरिहंतों का जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, उपयोग जानना और गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद, कषाय आदि इन सभी चौदह मार्गणायें लगाकर उनका स्वरूप जानना यह अरिहंत की स्थापना है। अरिहंत को इसप्रकार से जानकर फिर नमस्कार करो, तो आपने अरिहंतों को नमस्कार किया, नहीं तो नहीं किया।

कुंदकुंद आचार्य ही कह रहे हैं, कुंदकुंद आचार्य का करणानुयोग का गजब का अभ्यास था। षट्खण्डागम में से तीन खण्डों के ऊपर उन्होंने स्वयं टीका लिखी थी परिकर्म नाम की, जो हमारे दुर्भाग्य से आज उपलब्ध नहीं है। हमें लगता है करणानुयोग जानने की

क्या आवश्यकता है? करणानुयोग में तो जीव के ही गुणस्थान, मार्गणास्थान, विस्तार से बताये हैं, वह जीव का स्वरूप है, उसकी पर्यायों का वर्णन है। पर्यायों को सहीरूप से जानकर, फिर पर्यायों को गौण करके हम त्रिकाली शुद्ध आत्मा की बात करेंगे, उसका अनुभव करेंगे। इसलिये पदार्थों को इन सभी प्रकार से - सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव, अल्पबहुत्व सभी प्रकार से यथार्थ जानना आवश्यक है। तो इसके लिये हम कुछ कालों की यहां चर्चा करेंगे। ये जो छह प्रकार के काल बतायें हैं, उसके लिये हम आपको अभी यहां चार्ट भी बतायेंगे। पहले मैं उनके नाम बताती हूं आपको। तो ये छह प्रकार के जो काल हैं उनको पहले मैं आपको पुस्तक में से बताती हूं, जब तक चार्ट लगेगा। आपको जीवकाण्ड की पुस्तक निकालनी है, पृष्ठ संख्या २७४, पुस्तक नहीं है, तो सुनना, आकुलता नहीं करना, शांति से सुनना। अभी हम चार्ट के द्वारा भी देखेंगे और बाद में जो विस्तार है वह आगे की बात है वह आगे के लेक्चर में देखेंगे तब तक आपको पुस्तकें मिल जायेंगी और बोर्ड पर लगनेवाले सभी चार्टस् के झेरॉक्स भी मिलेंगे। *श्रोता: पेज नंबर?* हां, मैं बताती हूं आपको। देखो, हमने यह जो बातें देखी थी, २७२ पृष्ठ निकालना है, टू सेव्हंटी टू। देखो, यहां बीच में जो काल की अपेक्षा कथन दो प्रकार से हैं, बोल्ड लेटर में लिखा है मिला सबको २७२ पृष्ठ, कि **काल की अपेक्षा दो प्रकार का कथन** होता है। यहां जो अभी हमने काल और अंतर की बात देखी है, उसीको पुस्तक के माध्यम से भी देखेंगे। जीवकाण्ड पहला भाग, पृष्ठ २७२ है, यह हिन्दी अनुवादवाले जीवकाण्ड की बात है। कि **नाना जीव अपेक्षा और एक जीव अपेक्षा।** अभी हमने नाना जीव यानी सभी जीवों की अपेक्षा से बात देखी और एक जीव की अपेक्षा से बात देखी।

वही बात यहां दुबारा बता रहे हैं, कहते हैं कि **विवक्षित गुणस्थानों का**, विवक्षित यानी पर्टिक्युलर जिस गुणस्थान की बात कर रहे हैं उसका; **अथवा मार्गणास्थानों में होनेवाले गुणस्थानों का सभी जीवों में से कई जीवों में जितने काल तक सद्भाव पाया जाता है वह नाना जावों की अपेक्षा काल जानना और उन्हींका विवक्षित एक जीव में जितने काल तक सद्भाव पाया जाता है, वह एक जीव की अपेक्षा काल जानना।** अभी उसको जरा हम थोड़ा गौण करके, पृष्ठ संख्या २७४ पर आते हैं क्योंकि यहां तो अलग-अलग मार्गणाओं में नाना जीवों की अपेक्षा बात देखी थी। हम एक जीव की अपेक्षा जानना चाहते हैं। एक जीव की अपेक्षा बात करेंगे उसके पहले हम आपको यहां

बोर्ड पर एक चार्ट बताना चाहते हैं, बोर्ड की तरफ देखना, दो नंबर का चार्ट है; यहां छह प्रकार के कालों की बात आ गयी। ये जो हम काल गिनने जा रहे हैं, उनमें छह प्रकार के काल बतायें हैं, हम एक-एक को क्रम से देखेंगे।

– छह प्रकार के काल –

(१) गुणस्थितिकाल, (२) भवस्थितिकाल, (३) कर्मस्थितिकाल,
(४) कायस्थितिकाल, (५) उपपादकाल, (६) भावस्थितिकाल.

गुणस्थितिकाल, आप रिपीट करेंगे? (१) गुणस्थितिकाल। *सभी श्रोता: गुणस्थितिकाल।* (२) भवस्थितिकाल। *सभी श्रोता: भवस्थितिकाल।* (३) कर्मस्थितिकाल। *सभी श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* (४) कायस्थितिकाल। *सभी श्रोता: कायस्थितिकाल।* (५) उपपादकाल। *सभी श्रोता: उपपादकाल।* (६) भावस्थितिकाल। *सभी श्रोता: भावस्थितिकाल।* ये छह प्रकार के काल हम यहां देखेंगे, इनका स्वरूप क्या है उसकी चर्चा अभी हम करेंगे। यह गुणस्थितिकाल क्या है? उसको हम पृष्ठ संख्या २४२ के आधार से देखेंगे। यानी विवक्षित गुणस्थानों में अनेक जीवों की अपेक्षा जितने काल तक सद्भाव पाया जाता है, उसको कहेंगे नाना जीवों की अपेक्षा वह गुणस्थितिकाल है। गुणस्थिति यानी उस गुणस्थान में कितने काल तक उनकी स्थिति होती है; वे जीव कितने काल तक रहते हैं उसको उनकी स्थिति कहने में आती है और यह तो नाना जीवों की अपेक्षा हुआ और एक जीव की अपेक्षा जितने काल तक उसका सद्भाव पाया जाता है, यानी एक जीव एक विशिष्ट गुणस्थान में जितने काल तक रहेगा, उस गुणस्थान में रहने का उसका जो काल है, उसको एक जीव की अपेक्षा गुणस्थितिकाल कहेंगे।

अभी-अभी हमने देखा था न, नाना जीवों की अपेक्षा कौनसे गुणस्थान सदाकाल रहते हैं? तो पहला है, चौथा है, पांचवां है, छठा है, सातवां है और तेरहवां है। इसका अर्थ समझते हैं? तेरहवें गुणस्थानवाले जो अरिहंत भगवान हैं, वे तो हमेशा ही इस विश्व में रहनेवाले हैं। आप कहेंगे हमेशा यानी? वे ही जीव रहेंगे नहीं, कोई न कोई जीव अरिहंत अवस्था में तो होंगे ही होंगे, तीर्थंकर भी हमेशा ही विद्यमान रहेंगे। आप कहेंगे कि कहां है? हमें तो कोई नहीं दिखायी देते हैं। क्योंकि हम तो इतना ही देख रहे हैं अपने आसपास, देश

में और विदेशों में। परंतु हम आगम की अपेक्षा, आगम के द्वारा, आगम का चश्मा लगाकर पूरा लोकालोक जान सकते हैं क्योंकि केवली भगवान ने अपने केवलज्ञान के द्वारा पूरा विश्व जाना है; आज का ही नहीं, अनादि से अनंतकाल तक का। आज जितने भी इन्व्हेन्शन्स हुये हैं वे आदिनाथ भगवान ने पहले ही जाने थे कि नहीं जाने थे? हं? यानी होने के कितने काल पहले जाने थे? है न, और हम तो क्या कर रहे हैं? हमने यह खोज निकाला; नया-नया खोज निकाला। वैज्ञानिक किसको कहते हैं? मेरी परिभाषा सुनी है आपने, है न? जिसकी खोज पूरी नहीं होती उसको वैज्ञानिक कहते हैं; और सर्वज्ञ किसको कहते हैं? जिनको खोजने के लिये - जानने के लिये कुछ भी बाकी नहीं, उनको सर्वज्ञ कहते हैं। तो किसका कहना सच होगा? वह आप निर्णय करना, हमें नहीं बताना है।

क्योंकि सर्वज्ञ भगवान ने जो जाना है, तो वह केवलज्ञान के द्वारा जानकर उनकी दिव्यध्वनि में आया; गणधरों ने उसको सुनकर उसको जाना और फिर उन्होंने आगम की रचना की और हम भी उस आगम को देखकर जानते हैं; तो हम भी उतना ही जानते हैं, जितना केवलज्ञानी जानते हैं; वे प्रत्यक्ष जानते हैं और हम परोक्ष जानते हैं। आगम के द्वारा जो-जो हम जान रहे हैं वह सही ज्ञान है, १०० % करेक्ट है, प्रमाण है। उसके लिये किसी वैज्ञानिक ने उसको प्रूव्ह करने की आवश्यकता नहीं है। ख्याल में आयी न बात? हं, तो यह स्वयं प्रमाण है उसका। तो देखो, हमें सर्वज्ञ के ऊपर भरोसा है कि नहीं है? *श्रोता: है।* है, कहते तो हो, है; हां, क्या उतना विश्वास है जितना एक पॅथॉलॉजी के रिपोर्ट पर है? उसमें तो कोई संदेह नहीं है। जितना रिपोर्ट आया, आज से तो मेरा इतना यह रिपोर्ट है – शुगर इतनी, कोलेस्टेरॉल इतना। अभी जो डॉक्टर जैसा नचायेंगे वैसा नाचेंगे हं, जो डाएट लिखकर देंगे वैसा का वैसा डिट्टो; परंतु हम यहां खान-पान संबंधी मर्यादा की बात करते हैं, तो यह कौनसे ज़माने की बात कर हैं आप, ऐसा कहेंगे; है न? तो ये सर्वज्ञ भगवान ने बतायी हुयी बातें हैं और हम उस पर अगर विश्वास नहीं करते, तो हम सर्वज्ञ को नमस्कार करते हैं वह सब झूठा है, वह तो हम क्रिया मात्र करते हैं। यहां तो आगम का चश्मा लगाकर हम पूरा लोकालोक जान सकते हैं। हम जिनवाणी की स्तुति में बोलते हैं कि 'जा वाणी के ज्ञान तै सूझे लोकालोक', सूझे यानी ज्ञान में आता है लोकालोक, इसीलिये हम इनकी इतनी विनय करते हैं।

तो अभी हमें २७४ नंबर का पेज निकालना है, एक जीव की अपेक्षा हम यहां बात देखेंगे। देखो, वहां से पढ़ेंगे, **वहां सामान्य से** यानी इन जनरल **मिथ्यादृष्टि के काल में तीन भंग हैं** यानी तीन प्रकार से वह मिथ्यादृष्टि के काल पाये जाते हैं; अभी हमने इसकी बात की थी, उसीको पढ़ रहे हैं। **अनादिअनंत** यानी कोई जीव ऐसे अनादि से मिथ्यादृष्टि हैं; उनका मिथ्यात्व अनंतकाल तक चलता रहेगा – उसीको कहेंगे अनादिअनंत। **अनादिसांत** – जिसने सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है, उसका अभी मिथ्यात्व का अंत आ गया उसको कहेंगे अनादिसांत; और **सादिसांत** – यानी एक बार सम्यक्त्व प्राप्त करके जो मिथ्यात्व में आया है, उसका मिथ्यात्व कैसा है? सादि है, फिर दुबारा सम्यक्त्व प्राप्त करेगा; तो उसका अंत आ गया; तो वह सादिसांत है।

तो मिथ्यात्व का **यह सादिसांत काल जघन्य** यानी कम से कम **अंतर्मुहूर्त**; देखो यह शब्द आता है न, अंतर्मुहूर्त शब्द बहुत बार आनेवाला है; मुहूर्त का अर्थ होता है दो घड़ी। एक घड़ी होती है चौबीस मिनट की, दो घड़ी होती हैं अड़तालीस मिनट की, जहां-जहां अंतर्मुहूर्त आता है वहां-वहां वह अंतर्मुहूर्त अड़तालीस मिनट का होगा ऐसा नहीं है; अड़तालीस मिनट में एक समय कम यह सबसे बड़ा अंतर्मुहूर्त है। अंतर्मुहूर्त यानी लेस दॅन मुहूर्त – मुहूर्त से कम। हमने अंग्रेजी भाषा बोली जो अपने को ज्यादा नजदीक की लगती है न। मुहूर्त से कम वे सारे अंतर्मुहूर्त के भेद हैं। परंतु छोटे में छोटा अंतर्मुहूर्त कितना है? जो अभी हमने आवली देखी न, जघन्य युक्तासंख्यात जितने समय। उसमें एक समय बढ़ा दो – वह सबसे छोटा अंतर्मुहूर्त है और सबसे बड़ा अंतर्मुहूर्त है अड़तालीस मिनट में एक समय कम, तो कितने काल तक हम अंतर्मुहूर्त में अंतरंग में लीन होंगे तो केवलज्ञान होगा? *श्रोता: अड़तालीस मिनट।* अड़तालीस मिनट? हां, अरे! इतना नहीं, उसमें तो बहुत छोटा काल लगता है। छठे गुणस्थान का काल जितना छोटा अंतर्मुहूर्त है; उससे सातवें गुणस्थान का काल आधा है; उससे आठवें गुणस्थान का काल उसके संख्यातवें भागप्रमाण है; नौवें गुणस्थान का काल उसके भी संख्यातवें भागप्रमाण है; दसवें गुणस्थान का काल नौवें के संख्यातवें भागप्रमाण है; बारहवें गुणस्थान का काल उससे भी छोटा है; तेरहवें में जो कुछ कम ज्यादा काल है। उपशम श्रेणी चढ़कर उतरनेवाले का काल कितना होगा? छठे का जितना काल है, उतने काल से भी छोटे काल में पूरा सातवां, आठवां, नौवां, दसवां, ग्यारहवां, फिर दसवां, फिर नौवां, फिर आठवां, फिर सातवां, फिर छठे में आता

है। हमें ऐसा लगता है कि अड़तालीस मिनट तक अंतरंग में स्थिर हो जायेगा तो केवलज्ञान हो जाये, लेकिन ऐसा नहीं है। वहां अंतर्मुहूर्त शब्द आता है; कहीं-कहीं दो घड़ी भी कहने में आता है। वह दो घड़ी कैसे? जैसे, पति ने कहा – चलो, जल्दी तैयार हो जाओ, तब पत्नी कहती है दो मिनट में आयी, हं; भले वह आधा घंटा भी हो जाये; ऐसा यहां अंतर्मुहूर्त का अर्थ है। किस अंतर्मुहूर्त से, कौनसा अंतर्मुहूर्त, कितना बड़ा-छोटा है, वह सब अल्पबहुत्व प्रकरण में आता है और उसके लिये हमारे आगम में बहुत-बहुत विस्तार से वर्णन है। वह जानने के बाद यह पता चलता है कि कौनसा अंतर्मुहूर्त कितना बड़ा है। जब मालूम नहीं है तो कहना यथायोग्य, जो केवली भगवान ने जाना है, वह यथायोग्य अंतर्मुहूर्त है।

तो यहां एक जीव की अपेक्षा हमने देखा था कि मिथ्यात्व का सादिसांत काल जो है, वह जघन्य से जघन्य अंतर्मुहूर्त है और **उत्कृष्ट** कितना है? तो **देशोन**, देश यानी कुछ, पार्ट; ऊन यानी कम; कुछ कम, देशोन का अर्थ होता है कुछ कम, **अर्धपुद्गलपरावर्तन मात्र है।** यह पुद्गलपरावर्तन शब्द हम बहुत बार सुन रहे हैं और उसका विस्तार हम देखनेवाले हैं। हमें यही जानना है कि बार-बार हम काल की गिनती करते हैं, वहां परावर्तन या पुद्गलपरावर्तन यह शब्द बहुत बार आता है तो इसको गिनना कैसे? उसीके लिये सारा परावर्तन का आगे का प्रकरण लेने का विचार है। **किंचित् हीन का नाम देशोन जानना।** अब **सासादन का जघन्य काल** कितना है? एक जीव की अपेक्षा बात करेंगे, कोई जीव सासादन गुणस्थान में आता है, यानी औपशमिक सम्यग्दृष्टि प्रथमोपशमवाला हो या द्वितीयोपशमवाला, वहां से गिरकर दूसरे गुणस्थान में आता है और वहां से मिथ्यात्व में चला जाता है। तो सासादन गुणस्थान का कम से कम काल कितना रहता है? तो **एक समय। अधिक से अधिक** कितना, तो **छह आवली,** अभी हमने आवली का प्रमाण देखा था न और फिर बाद में वह मिथ्यात्व में चला जाता है।

मिश्र यानी तीसरे गुणस्थान का काल **जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त** है, यह काल गिन रहे हैं हम। काल के द्वारा उस गुणस्थान का कुछ स्वरूप ख्याल में आता है, कोई जीव उस गुणस्थान में जाता है तो कितने काल तक रह सकता है? **असंयत** यानी चौथे गुणस्थान **का जघन्य** काल तो **अंतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक तैंतीस सागर है।** अभी आपने किसीने बताया था ६६ सागर क्षयोपशम सम्यक्त्व और यहां तो चौथे का

काल है। *श्रोता: क्षायिक की अपेक्षा...* क्षायिक की अपेक्षा नहीं है, क्षयोपशम सम्यक्त्व का उत्कृष्ट काल ६६ सागर है और यहां तो चौथे गुणस्थान का काल हम देख रहे हैं। देखो, जब वेदक सम्यक्त्व ६६ सागर तक रहता है, अकेले चौथे गुणस्थान में रहकर देव और मनुष्य होता रहे और ६६ सागर तक क्षयोपशम सम्यक्त्व चलता रहे यह बात नहीं हो सकती; उसको बीच में मुनिपना और पांचवां गुणस्थान आयेगा तो ही ६६ सागर बनता है; अकेले चौथे में रहने का काल, देवों में रहेगा सर्वार्थसिद्धि में, तो ३३ सागर और वहां से मनुष्य हुआ, तो सम्यक्त्व के साथ आया। तो जब तक वे संयमी नहीं होते, तब तक का काल गिनना, तो कुछ साधिक ३३ सागर हो जाता है। *श्रोता: साधिक कितना होता है?* साधिक में पूर्वकोटी में कुछ कम ले लेना तो वह साधिक में चला जायेगा।

पूर्वकोटि समझते हैं? *श्रोता: नहीं समझते।* आदिनाथ भगवान की आयु कितनी थी? *श्रोता: ८४ लाख पूर्व।* हां ८४ लाख पूर्व, यह पूर्व क्या होता है? *श्रोता: ८४ हजार वर्ष × ८४ हजार वर्ष का एक पूर्व होता है। अन्य श्रोता: ७० लाख, ५६ हजार करोड़ वर्ष।* ७० लाख, ५६ हजार करोड़ वर्ष, यानी ८४ लाख वर्ष × ८४ लाख वर्ष उसको एक पूर्व कहते हैं, तो एक पूर्व, दो पूर्व, तीन पूर्व, लाख पूर्व, तो ८४ लाख पूर्व यह आदिनाथ भगवान की आयु थी और ऐसे एक करोड़ पूर्व की आयुवाले कोई मालूम है? *श्रोता: सीमंधर भगवान।* हां, सीमंधर भगवान, तथा अन्य भी मनुष्य जो विदेहक्षेत्र में हैं, वहां उनकी उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि है। तो यहां तो बात क्या हो रही थी? कोई ३३ सागर आयुवाले देव है; वहां सर्वार्थसिद्धि में जानेवाले तो संयमी ही जाते हैं; यानी जाने के पहले तो संयमी थे, चौथे गुणस्थान में नहीं थे; वहां गये तो चौथे गुणस्थानवाले देव हो गये, ३३ सागर की देव की आयु पूर्ण करके मनुष्य में आये; माता के गर्भ में आये तो चौथे गुणस्थान के साथ आये; और अर्लिएस्ट उन्होंने संयम प्राप्त ही नहीं किया, पांचवें गुणस्थान में गये ही नहीं, चौथे में ही रहे; और फिर आखिर में जाकर उन्होंने संयम प्राप्त किया और क्षपकश्रेणी चढ़कर अंतर्मुहूर्त में सिद्ध हुये। तो पूर्वकोटि में से अंतर्मुहूर्त कम किया और जो शेष रहा उसे ३३ सागर में मिला दो; उसको कहेंगे साधिक ३३ सागर। यह गिनती बहुत हो गयी न!

तो यह हम देख रहे हैं, संयतासंयत यानी पांचवें गुणस्थान में रहने का काल। पांचवें गुणस्थान में कौनसे गतिवाले जीव रह सकते हैं, क्या यह मालूम है आपको? देव या

नारकी, वे तो चौथे गुणस्थान तक ही जा सकते हैं; मनुष्य और तिर्यंच पांचवें गुणस्थान में रह सकते हैं। तो कम से कम कितने काल तक पांचवें गुणस्थान में रह सकते हैं? तो कहते हैं अंतर्मुहूर्त तक। अब अधिक से अधिक यानी उत्कृष्ट काल कितना है? जन्म से तो कोई पांचवें गुणस्थान में तो जाता नहीं है; मनुष्य होगा तो आठवें साल के बाद पांचवें गुणस्थान में जायेगा; हां तिर्यंच, संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त सम्मूर्च्छन तिर्यंच जन्म के बाद एक अंतर्मुहूर्त में सम्यग्दर्शन के साथ पांचवां गुणस्थान प्राप्त कर सकते हैं। जो महामत्स्य की बात आपने सुनी होगी बहुत बार, या अन्य भी जो सम्मूर्च्छन हैं, जन्म के बाद पर्याप्ति पूर्ण होने पर एक अंतर्मुहूर्त में वेदक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकते हैं। वेदक सम्यक्त्व के साथ सीधे पांचवें गुणस्थान में जा सकते हैं और वे तो करोड़ पूर्व की आयुवाले भी हो सकते हैं, तो कुछ कम करोड़ पूर्व पांचवें गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल है। पांचवें में मर जाये तो फिर देव होकर चौथे में चले जायेंगे यानी पांचवें गुणस्थान में रहने का मिनिमम काल एक अंतर्मुहूर्त है और मॅक्झिमम काल कुछ कम एक करोड़ पूर्व है। पूर्वकोटि कहो या करोड़पूर्व कहो एक ही बात है। अब प्रमत्त-अप्रमत्त गुणस्थान में देखो, कोई अप्रमत्त में से प्रमत्त में यानी सातवें में से छठे में आये और एक समय में मर जाये, तो छठे गुणस्थान का जघन्य काल एक समय है। कोई सातवें में चले जाये और एक समय में मर जाये तो सातवें गुणस्थान का जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अंतर्मुहूर्त तो है ही है। उससे ज्यादा तो कोई न छठे में रहता है, न सातवें में रहता है। छठा-सातवां चलता रहता है और वह भी अंतर्मुहूर्त बहुत बड़ा नहीं है। ऐसे ही उपशम श्रेणी में प्रत्येक गुणस्थान का जघन्य काल एक समय मरण की अपेक्षा घटित होता है और नहीं मरे, चढ़कर उतरे तो एक-एक गुणस्थान का उत्कृष्ट काल अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त है।

तेरहवें गुणस्थान में रहने का काल कम से कम कितना है और अधिक से अधिक कितना है? कम से कम एक अंतर्मुहूर्त है – कोई क्षपक श्रेणी चढ़े; बारहवें में से तेरहवें में आये; अंतर्मुहूर्त में चौदहवें में गये; अंतर्मुहूर्त में मोक्ष चले गये; ऐसा भी हो सकता है। या कोई तेरहवें गुणस्थान में आये तो अधिक से अधिक कितने काल तक रहेंगे? देखो, हमने देखा है कि कर्मभूमि के मनुष्यों की बड़ी आयु कितनी होती है? एक करोड़ पूर्व की; किसीने आठ वर्ष के बाद संयम धारण किया और संयम धारण करके एक अंतर्मुहूर्त में क्षपक श्रेणी चढ़ी और वे तेरहवें गुणस्थान में आये। अब एक करोड़ पूर्व की आयुवाले

उसके पहले तो मोक्ष जायेंगे नहीं; इसलिये कुछ कम करोड़ पूर्व यानी आठ वर्ष और कुछ अंतर्मुहूर्त करोड़ पूर्व में से बाद करना; यह तेरहवें गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल है। यह हम काल की गिनती कैसे करनी है उसकी यहां कुछ झलक देख रहे हैं।

अब मार्गणाओं में भी हम देखेंगे थोड़ी-थोड़ी बात। वह तो... *श्रोता: चौदहवां गुणस्थान?* चौदहवां गुणस्थान का कम से कम काल और अधिक से अधिक कितना होगा? अ, इ, उ, ऋ, लृ ये पांच लघु अक्षर के उच्चारण में जितना समय लगता है उतना चौदहवें गुणस्थान का काल है। हां, सबका समान होगा, उसमें कोई हीनाधिकता नहीं है। जो कोई चौदहवां गुणस्थान जल्दी पार करता है, कोई थोड़ा धीरे-धीरे क्योंकि अभी संसार छोड़ना है तो इतना जल्दी क्यों छोड़े, ऐसा नहीं है – सबका काल समान है वहां पर। तो यह हमने सामान्य से हर एक गुणस्थान की बात देखी थी। अब इसीको मार्गणाओं में भी हम थोड़ा घटित करके देखेंगे क्योंकि मार्गणायें क्या है, उनके नाम क्या हैं, वह काल कैसा है? यह मार्गणा समझते हैं न? जैसे मार्गणा क्या होती है? मार्गणा यानी संसारी जीवों का क्लासिफिकेशन – भेद; हमें जीवों को खोजना है। मार्गणा यानी अन्वेषण, खोज; जीवों की खोज करनी है तो कहां ढूंढ़ना उनको? सिद्ध भगवान तो वहां विराजमान है लोकाकाश के अग्रभाग में, उनकी बात नहीं है। संसारी जीवों के विशिष्ट अपेक्षा के साथ हम जो वर्गीकरण करेंगे, भेद करेंगे, उसको मार्गणा कहेंगे। जैसे हम सभी मनुष्य हैं अभी जो हमें मालूम हैं, तो हम देश की अपेक्षा उनका विभाजन करेंगे; तो कोई अमेरिकन हैं, कोई आफ्रिकन हैं, कोई चायनीज हैं, कोई जॅपनीज हैं, कोई इंडियन हैं; तो यह देश की अपेक्षा विभाजन हुआ। उन्हीं सभी मनुष्यों को हम वे क्या बिझनेस करते हैं इस अपेक्षा से देखेंगे, तो कोई व्यापारी हैं, कोई डॉक्टर हैं, कोई इंजिनिअर हैं, कोई कारीगर हैं और जो कोई उनके अलग-अलग व्यवसाय होंगे; तो पहले के भेद मिट जायेंगे और दूसरी अपेक्षा से दूसरा वर्गीकरण हो जायेगा। चायनीज हो या इंडियन हो या अमेरिकन हो सभी डॉक्टर एक ग्रुप में आ जायेंगे; सभी इंजिनिअर एक ग्रुप में आ जायेंगे। मार्गणा में भी ऐसा ही है। हं, तो उसकी हम विशेष चर्चा दूसरे लेक्चर में करेंगे, अभी यहीं समाप्त करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२. गुणस्थितिकाल, भवस्थितिकाल

यहां हम करणानुयोग के ग्रंथों के आधार से काल की प्ररूपणा देख रहे हैं। हमने देखा था कि कालद्रव्य छह द्रव्यों में से एक प्रकार का, एक जाति का द्रव्य है, संख्या अपेक्षा वे कालाणु असंख्यात होते हैं। एकप्रदेशी होने से उनको कालाणु भी कहते हैं। जैसे परमाणु एकप्रदेशी है, वैसे कालद्रव्य, जिसको निश्चयकाल कहते हैं वह भी एकप्रदेशी है। लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर एक-एक कालद्रव्य स्थित है। उसी संबंध में एक प्रश्न आया है कि *निश्चयकाल और व्यवहारकाल में क्या संबंध है?* निश्चयकाल यह कालद्रव्य है और व्यवहारकाल उसकी पर्याय है, उसीको हम समय कह रहे हैं। *श्रोता: क्या यह कहा जा सकता है कि व्यवहारकाल के समय आदि निश्चयकाल के परिणमन के आधार से स्थापित किये गये हैं?* वह परिणमन के आधार से स्थापित नहीं है, वह तो उसका परिणमन ही है। कालद्रव्य के परिणमन को ही हम समय कहते हैं।

प्रत्येक द्रव्य का परिणमन हर समय चलता है और वह समय हम कालद्रव्य की अपेक्षा ही तो कहते हैं। क्योंकि हम जो टाइम गिनते हैं न, कितना समय गया? तो हम कहेंगे पांच सेकंड हुये, एक मिनट हुआ। यह इतना हुआ, हुआ यानी हम गिनते हैं, तो कुछ न कुछ हमें प्रतीत होता है। तो वह गिनने का जो चल रहा है, तो कालद्रव्य भी अपना परिणमन कर रहा है, उसीको यहां हम समयों में गिन रहे हैं और प्रत्येक द्रव्य का अपना-अपना परिणमन उतने ही काल में होता है, तो हम कहेंगे प्रत्येक समय में प्रत्येक द्रव्य परिणमन करता है; अपने-अपने से करता है। कालद्रव्य भी अपने-अपने में परिणमन कर रहा है और यह जो कितना समय बीत गया हम गिनते हैं इसको हम व्यवहारकाल कहेंगे। यह काल गिनने का जो माप है, उसकी अपेक्षा से हम इसको व्यवहारकाल कहते हैं और उसीकी हमने यहां चर्चा आरंभ की थी। हमने यह बात देखी थी कि यह जो व्यवहारकाल है उसका सबसे छोटा जो माप है - नाप है, उसका नाम है समय। असंख्यात समयों की एक आवली होती है। फिर आवली के आगे बहुत सारे भेद हैं उस काल को गिनने के। अंतर्मुहूर्त, प्रहर, दिन, मास, वर्ष, पूर्व, पल्य, सागर, कल्पकाल आदि और भी अनेक काल को गिनने के माप हैं। काल के जो भेद हैं उनको हम क्रम से देखने जा रहे हैं। हमने छह प्रकार के काल अभी-अभी देखे थे, भूल गये न अभी, हां? वह चार्ट तो निकल गया।

कौनसे थे? *श्रोता: गुणस्थिति।* हां, गुणस्थितिकाल। आप रिपीट करेंगे? गुणस्थितिकाल। *सभी श्रोता: गुणस्थितिकाल।* भवस्थितिकाल। *सभी श्रोता: भवस्थितिकाल।* कर्मस्थितिकाल। *सभी श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल। *सभी श्रोता: कायस्थितिकाल।* उपपादकाल। *सभी श्रोता: उपपादकाल।* और भावस्थितिकाल। *सभी श्रोता: भावस्थितिकाल।*

आप कहेंगे उपपादकाल में स्थिति शब्द नहीं लगाया, और सब जगह लगाया, हां? आपके मन में ऐसा प्रश्न आया कि नहीं? नहीं आया? उपपाद यानी जन्म का एक ही समय; उसमें ज्यादा स्थिति नहीं होती है; वह एक ही समय है। उपपादकाल तो एक समय का होता है, इसलिये वहां स्थिति शब्द नहीं लगाया। यानी कोई ज्यादा समय लगाता होगा ऐसी बात नहीं है। वह हम क्रम से उस पर आयेंगे तब उसकी और चर्चा करेंगे। अपना प्रकरण गुणस्थितिकाल संबंधी चल रहा था। हमने यह बात देखी थी कि प्रत्येक गुणस्थान में और अलग-अलग मार्गणाओं में जो गुणस्थान पाये जाते हैं, उनमें रहने का जो काल है उसको यहां गुणस्थितिकाल नाम दिया था। गुणस्थितिकाल के भी दो भेद होते हैं। अनेक जीवों की अपेक्षा, जिसको कहेंगे नाना जीवों की अपेक्षा काल और दूसरा भेद है एक जीव की अपेक्षा काल। नाना जीवों की अपेक्षा का अर्थ होता है कोई न कोई जीव उस गुणस्थान में रहेगा तो उसका काल। एक जीव की अपेक्षा कहेंगे तो कोई एक जीव उस गुणस्थान में कम से कम कितने काल तक रहता है उसको कहेंगे एक जीव की अपेक्षा उस गुणस्थान का जघन्य काल और कोई एक जीव उस गुणस्थान में अधिक से अधिक कितने काल तक रह सकता है उसको कहेंगे एक जीव की अपेक्षा उस गुणस्थान का उत्कृष्ट काल।

यह तो काल की बात हुयी, वैसे ही प्रत्येक गुणस्थान और मार्गणास्थान का जो अंतर कहा जाता है वह भी नाना जीवों की अपेक्षा और एक जीव की अपेक्षा कहने में आता है। अभी हमने औपशमिक सम्यक्त्व का अंतर देखा था कि कोई जीव औपशमिक सम्यक्त्व से गिरकर मिथ्यात्व में आता है और दुबारा औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त करता है, तो कितना काल बीच में जाता है उसको कहेंगे औपशमिक सम्यक्त्व का अंतर। वह अंतर कम से कम यानी जघन्य तो, पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण है, जिसमें असंख्यात अबज वर्ष होते हैं। तो इस पर से प्रश्न यह हुआ, क्या वह जीव सम्यक्त्व नहीं प्राप्त करता इतने काल में? हां करता है, परंतु वह कौनसा सम्यक्त्व प्राप्त करेगा? तो कहते हैं क्षायोपशमिक

जिसका दूसरा नाम है वेदक सम्यक्त्व। यहां औपशमिक यानी कर्मों की जो उपशम अवस्था होती है; उस सहित जो सम्यक्त्व है उसको औपशमिक सम्यक्त्व कहते हैं। औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त होते ही मिथ्यात्वकर्म के तीन भेद हो जाते हैं – मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति। ऐसा जीव मिथ्यात्व में आनेपर भी वे तीन प्रकृतियां असंख्यात वर्षों तक बनी रहती हैं और जब तक सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति की स्थिति बहुत अधिक है – अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से लेकर कुछ सागर की, तब तक उन सब प्रकृतियों का उपशम एक साथ नहीं हो सकता। अभी यह उपशम क्या है वगैरह अभी अपना विषय नहीं है यहां पर क्योंकि वह यहां बहुत बार हो चुका है। हम इस अंतर के विषय संबंध में अधिक चर्चा करेंगे।

तो कहते हैं ऐसा दुबारा उपशम होने के लिये असंख्यात वर्ष बीच में चले जाते हैं। ये जो असंख्यात वर्ष बीच में चले जाते हैं और उसके बाद यदि सम्यक्त्व होगा तो वह औपशमिक सम्यक्त्व होगा और इतने काल के बीच में दुबारा सम्यक्त्व तो हो सकता है तो वहां कौनसा सम्यक्त्व होता है? तो उसको कहेंगे वेदक सम्यक्त्व। यानी उसकी अनुभूति में कोई फर्क नहीं है, परंतु कर्मों की अवस्था में फर्क है, अंतर है। एक बार औपशमिक सम्यक्त्व में से छूटकर जीव मिथ्यात्व में चला जाता है; उसके बाद उस जीव को असंख्यात वर्षों तक सम्यक्त्व होगा तो वेदक सम्यक्त्व ही होगा, इसको कहेंगे वेदकयोग्य काल। यह बात ख्याल में आयी? हां? तो ये कोई ऐसे प्रश्न हैं, ऐसा लगता है कि उस जीव को सम्यक्त्व ही नहीं होगा? यह बात नहीं है। ये दो प्रश्नों के उत्तर अपने हो गये, अभी हम आगे बढ़ेंगे। हमने जीवकाण्ड पुस्तक के आधार से देखना शुरू किया था कि एक जीव की अपेक्षा – हम २७४ पृष्ठ पर आये थे – एक जीव की अपेक्षा अन्य-अन्य गुणस्थानों में रहने के काल हमने कुछ यहां देखे थे। यह हमें याद नहीं करना है। जब पुस्तक पढ़ते हैं तो उसका अर्थ क्या है, यह हमें समझना है। याद रह जाये तो अच्छी बात है; नहीं याद हो जाये, दुबारा रिपीट नहीं कर सकते तो ऐसा नहीं कि हम कुछ समझते ही नहीं हैं। बहुत लोग ऐसे भी हैं कि करणानुयोग का नाम सुनकर ही घबरा जाते हैं, हम आयेंगे नहीं, हम समझेंगे नहीं। बिलकुल समझेंगे; यह हम समझ नहीं सकते, यह बात ही नहीं हो सकती। केवलज्ञान यहीं से निकलनेवाला है, कहीं बाहर से तो आनेवाला है ही नहीं। सभी जीव जो यहां बैठे हैं, केवलज्ञान की सामर्थ्यवाले हैं हम। तो हम क्यों नहीं समझेंगे? जरूर

समझेंगे। किसी के कोई प्रश्न हो तो आप लिखितरूप से दे देना। हम समझेंगे सब साथ में, चर्चा भी करेंगे।

तो यह गुणस्थितिकाल की बात हम देख रहे थे। गुणस्थानों में हमने देखा था, अब जरा मार्गणास्थानों में देखेंगे। तो किसीको प्रश्न हो सकता है यह मार्गणा यानी क्या और मार्गणास्थान वगैरह क्या बात होती है? हमने तो कभी नाम नहीं सुने हैं। तो अभी जब हमने देखा था; जैसे हम मनुष्यों को देशों की अपेक्षा विभाजन करेंगे तो कोई भारतीय, कोई आफ्रिकन, कोई चाइनीज, जॅपनीज होते हैं। उन्हींको वे क्या धंधा करते हैं, कोई व्यापार करते हैं, कोई इंजिनिअर है, डॉक्टर है उसकी अपेक्षा से हम ग्रुप्स करेंगे तो अलग-अलग ग्रुप्स बनेंगे। स्त्री-पुरुष-बालक भेद करेंगे तो उनके ग्रुप्स अलग बन जायेंगे। ऐसे ही यहां हम अलग-अलग अपेक्षा लगाकर संसारी जीवों के भेद करेंगे। संसारी जीवों में अरिहंत भी आ गये हैं कि उनको अलग रखना हैं? *श्रोता: आ गये।* क्योंकि हमें कुंदकुंद आचार्य ने बताया है उनके भी जीवसमास-पर्याप्ति-प्राण-मार्गणा सब जानो। क्योंकि संसारी किसको कहेंगे? जिसको बाल-बच्चे हैं वह संसारी, हां? नहीं, चौदहवें गुणस्थान तक के सभी जीव संसारी ही हैं। क्योंकि हमने तत्त्वार्थसूत्र में जीवों के दो ही भेद देखे, कोई संसारी हैं और कोई मुक्त हैं। जो मुक्त नहीं हुये वे सभी संसारी हैं यानी जिनके अभी कर्मों का सद्भाव है, कर्मों से बंधे हुये हैं, वे सभी संसारी हैं। आप कहेंगे हमने समयसार में पढ़ा है हम बंधे ही नहीं हैं; हां, वह किसी नय से बताया है यानी बराबर अपेक्षा भी समझनी चाहिये। अपेक्षा सहित बात हम समझेंगे तो कहीं कोई घोटाला नहीं होगा।

यहां जो मार्गणायें हैं उनके नाम हम देखते हैं। फिर उनमें हम कालों की बात करेंगे। तो मार्गणाओं के नाम हैं – पहला नाम है गतिमार्गणा। यानी गति की अपेक्षा सभी संसारी जीवों को हम विभाजित करेंगे। आप सब जानते ही हैं, गतियां कितनी हैं? *श्रोता: चार।* चार हैं। नरकगतिवाले हैं, तिर्यंचगतिवाले हैं, मनुष्यगतिवाले हैं, देवगतिवाले हैं। ये तो गतिमार्गणा की अपेक्षा संसारी जीवों के चार भेद हो जाते हैं और फिर इन्द्रियमार्गणा की अपेक्षा? *श्रोता: पांच।* उन्हीं सब जीवों को, वे कितनी इन्द्रियवाले हैं इसकी अपेक्षा से यानी उनके ज्ञान का उघाड़ और शरीर की इन्द्रियों की रचना – इसकी अपेक्षा से देखेंगे तो कोई एकेन्द्रिय हैं, कोई द्वीन्द्रिय हैं, कोई त्रीन्द्रिय हैं, कोई चतुरिन्द्रिय हैं, कोई पंचेन्द्रिय हैं। देखो, गतिमार्गणा में हमने चार भेद किये थे – मनुष्य, तिर्यंच, देव और नारकी। अब सभी

देव, सभी नारकी और सभी मनुष्य संज्ञी पंचेन्द्रिय हैं और तिर्यंचों में बहुत व्हरायटी है एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक। जब हम इन्हीं सभी को इन्द्रियमार्गणा की अपेक्षा विभाजित करेंगे तो ये तीन – मनुष्य, देव और नारकी तो पंचेन्द्रिय में आ ही गये। तिर्यंचों में से भी पंचेन्द्रिय जो हैं, संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय, वे उनमें चले गये और बाकी एकेन्द्रिय अलग हुये, द्वीन्द्रिय अलग हुये, त्रीन्द्रिय अलग हो गये, चतुरिन्द्रिय अलग हो गये; ये पांच भेद हो गये।

अभी उन्हींको, कायमार्गणा की अपेक्षा भेद करेंगे तो कोई पृथ्वीकायिक हैं, कोई जलकायिक हैं, कोई अग्निकायिक हैं, कोई वायुकायिक हैं, कोई वनस्पतिकायिक हैं और बाकी सब? *श्रोता: त्रसकायिक।* त्रसकायिक हैं। तो यह हमने जिसको एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय कहा था। अब देखो, द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक सभी जीव त्रसकायिक में आ गये और इस एकेन्द्रिय में से पांच भेद और हो गये। तो जैसे हम जिस अपेक्षा से भेद करेंगे, वैसे-वैसे उनके विभाजन हो जायेंगे। तो ऐसी मार्गणायें कितनी हैं? मालूम है? *श्रोता: चौदह।* १४ मार्गणायें हैं। अभी हमने देखा गति-इंद्रिय-काय, आप रिपीट करेंगे मेरे बाद? गति-इंद्रिय-काय, फिर से, दुबारा, गति, इंद्रिय, काय। *सभी श्रोता: गति, इंद्रिय, काय।* योग, वेद, कषाय। *सभी श्रोता: योग, वेद, कषाय।* ज्ञान, संयम, दर्शन। *सभी श्रोता: ज्ञान, संयम, दर्शन।* लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व। *सभी श्रोता: लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व।* संज्ञी और आहार। *सभी श्रोता: संज्ञी और आहार।* ये मार्गणायें हैं; तो इनमें जीवों का विभाजन करते हैं। तो इन मार्गणाओं में हम कालों की गिनती करेंगे।

नाना जीवों की अपेक्षा यदि हम कहेंगे तो इनमें तो जीव हमेशा पाये जायेंगे। एकेन्द्रिय जीव भी हमेशा होंगे, द्वीन्द्रिय जीव हमेशा होंगे। मेरा प्रश्न है चारों गति हमेशा होंगी कि नहीं होंगी? *श्रोता: नाना जीवों की अपेक्षा होंगी।* नाना जीवों की अपेक्षा बात है। *श्रोता: होंगी, नाना जीवों की अपेक्षा होंगी।* नाना जीवों की अपेक्षा चारों गति हमेशा होंगी। तो उस डार्विन की थिअरी का क्या होगा? *श्रोता: इव्होल्यूशन।* रमणीकभाई, हंस रहे हैं। तो डार्विन नाम के वैज्ञानिक ने बताया पहले तो सूक्ष्म जीव थे; फिर थोड़ी उनमें बढ़ोतरी हो गयी, उत्क्रांति हो गयी और फिर होते-होते मंकी यानी बंदर हो गया और फिर मानव हो गया। तो तब क्या यह अन्य चार गतियां नहीं थी क्या? ख्याल में आयी न बात? हां। *श्रोता: वह वैज्ञानिक और सर्वज्ञ...* हां, वही वैज्ञानिक और सर्वज्ञ में अंतर है ही। तो यह हम जो देख

रहे हैं कि यह जो काल की बात हम देख रहे थे, आपको पृष्ठ संख्या २७४ निकालना है। गतिमार्गणा में हम काल देखेंगे। तो गति में भी हमने चार भेद देखे थे। नरकगति – तो नरकगति में जीव हमेशा पाये जायेंगे, नाना जीव। परंतु एक जीव नरकगति में जाता है तो कितने काल तक वहां रह सकता है? यह हमें नक्की करना है। हां? *श्रोता: जघन्य से उत्कृष्ट...* हां, हमको जघन्य से उत्कृष्ट तक सभी भेद देखने हैं। कम से कम काल वहां रहेगा तो १०००० वर्षों तक तो रहेगा ही रहेगा। नरक की उससे छोटी आयु नहीं होती और अधिक से अधिक? *श्रोता: ३३ सागर।* ३३ सागर, वह सातवें नरक की उत्कृष्ट आयु है। हर नरक की आयु के अलग-अलग भेद हैं; वह जब हम भवपरावर्तन में आयेंगे तब चर्चा करेंगे। यहां तो नरक की कम से कम आयु कितनी है? *श्रोता: १०००० वर्ष।* १०००० वर्ष और अधिक से अधिक? *श्रोता: ३३ सागर।* ३३ सागर। देव में, कम से कम? *श्रोता: १०००० वर्ष।* हां, १०००० वर्ष और अधिक से अधिक? *श्रोता: ३३ सागर।* ३३ सागर। मनुष्य में मालूम है किसीको? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* हां-हां? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त, अच्छा। अंतर्मुहूर्त यानी जिसको हम कहेंगे लब्धिअपर्याप्त की छोटे में छोटी आयु; अंतर्मुहूर्त बहुत छोटा काल है और बड़ी से बड़ी आयु? *श्रोता: तीन पल्य।* तीन पल्य। पढ़ लिया क्या आपने? *श्रोता: नहीं, याद है।* अच्छा, हां याद है, याद है।

देखो हम मनुष्यों की बात कर रहे हैं। मनुष्य कहां-कहां पाये जाते हैं? हमारी आपकी आयु हम गिनेंगे तो कोई एक सौ सालवाला, एक सौ दो सालवाला, एक सौ पच्चीसवाला कोई रेअर्ली मिलेगा, तो उसकी फोटो-वोटो आ जायेगी। वह कल-परसों देखा था कोई एक सौ दो साल का वह आदमी दौड़ रहा था, हां। तो, वह कोई ऑलिम्पिक्स वगैरह में, हां, अॅथलेटिक्स में। तो यहां हम देखते हैं, यहां जो कर्मभूमि की जो मनुष्य आयु है; कर्मभूमि में ये जो लब्धिअपर्याप्त यानी सम्मूर्च्छन मनुष्य हैं; सम्मूर्च्छन मनुष्य का अर्थ है वे गर्भ में नहीं आते – मनुष्यों के लिये बात चल रही है। सम्मूर्च्छन मनुष्य का अर्थ क्या है? वे गर्भ में नहीं उत्पन्न होते; मां-बाप के निमित्त से नहीं होते हैं; तो विशिष्ट वातावरण में उनकी उत्पत्ति होती है। तो उनकी आयु कितनी है? अंतर्मुहूर्त प्रमाण उनकी आयु है। उसमें भी आयु के बहुत सारे भेद हैं, उसकी चर्चा अभी थोड़ी देर में करेंगे हम। लब्धिअपर्याप्त की भी जघन्य आयु से लेकर उत्कृष्ट आयु तक के बहुत सारे भेद होते हैं। अब हम पर्याप्तों की बात करेंगे जो गर्भ में आते हैं। उनकी भी कम से कम आयु कितनी है? तो

एक अंतर्मुहूर्त; एक अंतर्मुहूर्त में मर सकते हैं और अधिक से अधिक आयु? *श्रोता: तीन पल्य।* हम कर्मभूमि की पूछ रहे हैं। हमने याद करके रखा है तीन पल्य, हां। *श्रोता: एक कोटि पूर्व।* हां, भोगभूमिवाले गर्भज ही हैं, परंतु हम कर्मभूमि की बात करेंगे तो एक करोड़ पूर्व यहां की उत्कृष्ट आयु है। अभी हमारे यहां तो कर्मभूमि चलती है न।

तो यह जब हम जैन भूगोल पुस्तक में पढ़ेंगे तब यह कर्मभूमि-भोगभूमि की बात देखेंगे उसके आधार से। तो भोगभूमि जहां है, उसमें भी तीन प्रकार की भोगभूमि होती हैं; एक जघन्य है, एक मध्यम है, एक उत्तम है। तो यह जघन्य भोगभूमि की जघन्य आयु कितनी है? *श्रोता: एक पल्य।* एक पल्य तो उत्कृष्ट आयु है। हम तो जघन्य आयु पूछ रहे हैं आपको। जघन्य भोगभूमि की जघन्य आयु कितनी है? हां-हां बोलो। हां, बोलो। *श्रोता: एक अंतर्मुहूर्त।* ना-ना-ना, वहां एक अंतर्मुहूर्तवाले नहीं होते। हां, एक करोड़ पूर्व प्लस एक समय। जो कर्मभूमि की उत्कृष्ट आयु है उसमें एक समय बढ़ा दो, तो जघन्य भोगभूमि की वह जघन्य आयु है; एक करोड़ पूर्व प्लस एक समय। वहां कोई एक करोड़ पूर्व दो समयवाले भी होंगे, एक करोड़ पूर्व तीन समयवाले भी होंगे, एक करोड़ पूर्व चार समयवाले भी होंगे। वह बाद में हम सारे जन्म करेंगे वहां पर, वह देखेंगे तभी, हां। तो जघन्य भोगभूमि की उत्कृष्ट आयु एक पल्य है। मध्यम भोगभूमि की जघन्य आयु? अभी आसान है न? *श्रोता: एक पल्य प्लस एक समय।* एक पल्य प्लस एक समय। और वहां की उत्कृष्ट आयु? *श्रोता: दो पल्य।* दो पल्य। उत्तम भोगभूमि की जघन्य आयु? दो पल्य प्लस एक समय। वहां से एक-एक समय के बढ़ते हुये आयु के अलग-अलग भेद होंगे तो वहां की उत्कृष्ट आयु कितनी है? *श्रोता: तीन पल्य।* तीन पल्य। ये मनुष्यों की हुयी, ऐसे ही तिर्यंचों में है। तिर्यंचों में भी जघन्य में जघन्य आयु किसकी है? तो जिसको हम कहेंगे वह लब्धिअपर्याप्त की। यह लब्धिअपर्याप्त समझते हैं? नहीं समझते?

जब पर्याप्ति हम देखेंगे, इसका प्रकरण आनेवाला है, पर्याप्तियों का। तो पर्याप्ति यानी विशिष्ट शक्तियां। जीव कहीं से मर कर अन्य भव में चला जाता है तो वहां शरीर के परमाणुओं को ग्रहण करता है और शरीर की रचना भी होती है। ऐसा कोई रेडिमेड, जैसे यहां जीन्स पॅन्टस् मिलते हैं, कोई टी-शर्ट मिलते हैं, ड्रेस मिलते हैं, वैसे कोई रेडिमेड शरीर नहीं होता कि जिसके अंदर जाकर जीव प्रवेश करता है। तो क्या होता है? जीव यहां से क्या-क्या ले जाता है साथ में? *श्रोता: तेजस और कार्माण शरीर।* बाकी कुछ नहीं ले

जाता? *श्रोता: मिथ्यात्व।* और इतना सारा पैसा कमाया, इतनी गिनती की हमने? करोड़ों-अब्जों की गिनती की और पूरी लाइफ उसके पीछे दौड़े और इतना जमा किया, तो उसका क्या होगा? किसके लिये कमाया? आप कहेंगे बच्चों के लिये कमाया। यदि कोई फॅसिलिटि होती ले जाने की, तो स्त्री और बच्चों के लिये कितना छोड़ता? परंतु उस पैसे कमाने के एक-एक समय के परिणाम के कारण कर्मबंध तो अवश्य हुआ है। अकेले पैसे कमाने के परिणाम से ही नहीं, दिन भर चौबीस घंटे में हर समय का हमारा जो कोई परिणाम है; उस हर समय के परिणाम में हमारे जैसे राग-द्वेष-मिथ्यात्व चलते हैं; वैसा-वैसा उसके अनुसार ऑटोमॅटिक कर्मबंध होता ही होता है और उस कर्मबंध का फल भी अवश्य मिलेगा ही मिलेगा। वहां किसीकी चिट्ठी वगैरह कुछ काम आनेवाली नहीं है; वहां वशिलेबाजी नहीं चलेगी। जो हमने परिणाम किये हैं, वह ऑटोमॅटिक उनका पूरा रिझर्वेशन होगा।

देवलाली में आना था तो कितना-कितना रिझर्वेशन किया, हां। लोग कहां-कहां से आये हैं हमारे, कोई लंडन से आयी है बहन, हां, सागर से हमारे बहुत सारे लोग आये हैं, औरंगाबाद से आये हैं। *श्रोता: अमेरिका से भी आये हैं।* अमेरिका से भी आये हैं। तो रिझर्वेशन किया न पहले? रिझर्वेशन करना चाहिये, कहां जायेंगे? कहां रुकेंगे? क्या होगा वहां? क्या व्यवस्था होगी? सब बातों की हमें कितनी चिंता लगी रहती है और दूसरे भव में जाते हैं तो कितनी चिंता करते हैं? कितना रिझर्वेशन करते हैं? कहते हैं वह ऑटोमॅटिक होता है। हमारे एक-एक समय के परिणाम का फल अवश्य मिलता है। जीव ने जो कोई कर्म बांधे हैं, गट्ठा बंधा है न कर्म का, उसे साथ में लेकर जीव अन्य भव में चला जाता है। तो वहां शरीर की रचना भी तो होगी; नया शरीर धारण करना है क्योंकि यह वर्तमान का शरीर तो यहीं छोड़ना है। इसके लिये कितनी हमने इसकी मरम्मत की, कितना खाना खिलाया, कितना एक्झरसाइज किया, यह शरीर यहीं पड़े रहनेवाला है। अब वहां जाकर दूसरा शरीर धारण करेगा, तो कैसे करेगा? तो जीव में कुछ ऐसी शक्ति-पर्याप्ति होती हैं कि शरीर की रचना होवे। यह सारा विभाव है हां, यहां हम शक्ति कहेंगे, परंतु यहां पर जीव के स्वभावरूप शक्ति की बात नहीं है।

हां, कर्म के उदय में, अभी जिस गति में गया है, जैसा नामकर्म का बंध करके गया है, जैसा कोई संहनन है, जो कोई आकार है, जो कोई रंग है, वह सब उसके नामकर्म के उदय के अनुसार ये जो आहारवर्गणा के परमाणुओं का ग्रहण करेगा, उनकी शरीररूप

रचना होगी। उसके विस्तार में हम बाद में आनेवाले हैं। उसमें कौन-कौनसी पर्याप्ति होती हैं? तो जीव में यह जो शक्ति की पूर्णता होने के लिये एक अंतर्मुहूर्त लगता है; बहुत छोटा अंतर्मुहूर्त है। अंतर्मुहूर्त में उसकी शक्तियां डेव्हलप होती हैं, परिपूर्ण होती हैं; फिर उन शक्तियों का कार्य तो पूरे लाइफटाइम तक चलेगा, मरण तक चलेगा। यानी मरण तक हर समय में हम शरीर के अनंत परमाणुओं को ग्रहण करते हैं; उनको शरीररूप से ढ़ालने का कार्य होता रहता है; उनमें से हर समय कितने ही परमाणु छूटकर चले जाते हैं। यानी यह औदारिक शरीर के परमाणु हर समय नये-नये आते हैं। हं, पुराने बंधे हुये में से हर समय कुछ न कुछ चले जाते हैं। यह तो कार्य पूरे लाइफटाइम तक चलेगा। परंतु ये जो पर्याप्ति यानी शक्तियां जो हैं; वे जिसकी पूर्णता तक पहुंचती हैं और जितनी आयु बांधकर आया है उतना उसका जीवन चलता है; उसको कहेंगे पर्याप्त जीव और जो अपर्याप्त नामकर्म ही बांधकर आया है, उसकी एक भी पर्याप्ति पूरी होनेवाली नहीं है। उसके पहले ही वह मर जाता है। उसकी आयु बहुत छोटी होती है जिसको हम श्वास के अठारहवें भागप्रमाण कहते हैं। 'एक श्वास में अठ-दस बार', यह तो सबने सुना है छहढाला में। ऐसे कौनसे जीव हैं जो श्वास के अठारहवें भाग में मर जाते हैं? *श्रोता: निगोद।* हां, निगोद, यही हमेशा उत्तर मिलता है परंतु वह सही नहीं है।

ऐसे तो एकेन्द्रिय भी हैं, द्वीन्द्रिय भी हैं, त्रीन्द्रिय भी हैं, चतुरिन्द्रिय भी हैं, असंज्ञी पंचेन्द्रिय भी हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच भी हैं और मनुष्य भी हैं, जो सम्मूर्च्छन लब्धिअपर्याप्त हैं, जिनकी श्वास के अठारहवें भागप्रमाण इतनी छोटी आयु होती है। यह श्वास यानी हम नाक से हवा अंदर लेते हैं और बाहर छोड़ते हैं उस श्वास की बात यहां नहीं है। यह जो नाड़ी-पल्स है न हमारी, ठक-ठक होता है, तो दो जो पल्स हैं उनके बीच का जो काल है उसे श्वास कहते हैं। लेकिन वह पल्स किसकी चाहिये? तो कहते हैं जो हेल्दी युवा है क्योंकि कोई बीमार है तो उसकी पल्स रेट बढ़ जाती है, बच्चों की भी ज्यादा होती है; तो हमें तो निरोगी चाहिये, स्वस्थ चाहिये और वह युवा चाहिये; उसकी जो नाड़ी है, उसके दो नाड़ी के बीचवाला जो अंतर है, उसको श्वास कहेंगे। उसका अठारहवां भाग कर देना। यह आप कॅल्क्युलेट कर देना, कैसे कॅल्क्युलेट करेंगे? नाड़ी का पल्स रेट ७८ यानी एक मिनट में ७८ होते हैं। हम आसानी के लिये ८० मान लेते हैं। ८० श्वास के लिये ६० सेकंड यानी एक मिनट लगता है तो एक श्वास के लिये कितना लगेगा? तो $\frac{६०}{८०}$ यानी

$\frac{३}{४}$ सेकंड, इसका अर्थ हुआ एक श्वास राउंड-अबाउट सेकंड का भी थ्री फोर्थ होता है उसका भी अठारहवां भाग करना है। तो $\frac{३}{४} \times \frac{१}{१८} = \frac{१}{२४}$ सेकंड का भी चौबीसवां हिस्सा आता है। तो यहां हम कहेंगे, यह इतनी छोटी में छोटी आयु है। लब्धिअपर्याप्त हमने देखा न? इन लब्धिअपर्याप्तों की जघन्य आयु इतनी छोटी होती है और ऐसे लब्धिअपर्याप्त तिर्यंचों में भी हो सकते हैं, मनुष्यों में भी हो सकते हैं; देवों और नारकियों में नहीं होते। अधिक से अधिक आयु हमने तिर्यंचों और मनुष्यों की तीन पल्य की देखी; देवों में भी आयु जघन्य १०००० वर्ष से उत्कृष्ट ३३ सागर तक होती है; नरकों में भी इसीतरह १०००० वर्ष से ३३ सागर उनकी आयु होती है। हर एक नरक की और हर एक अलग-अलग देवों की, वैमानिकों की, आयु के जघन्य और उत्कृष्ट के जो भेद हैं, वे अलग-अलग होते हैं। जैसे भवनवासियों की तो १०००० वर्ष से शुरू हो जायेगी। व्यंतरों की १०००० वर्ष से शुरू हो जायेगी। ज्योतिषियों में जघन्य आयु ही पल्य के आठवें भाग प्रमाण होगी यानी उनमें अंतर है। तो जैसे सौधर्म-ईशान में वहां की आयु साधिक पल्य से शुरू हो जायेगी। ऊपर-ऊपर के देवों की आयु भी ज्यादा है, जघन्य भी और उत्कृष्ट भी। उसकी अपनी-अपनी रेंज है। तो इसको हम क्या कहेंगे? इस सब काल को? भवस्थितिकाल। अभी तो हम गतिमार्गणा की बात पहले उठायेंगे। बाद में वह भवस्थिति पर चले जायेंगे।

आपको निकालना है पृष्ठ संख्या २७४, जीवकाण्ड पहला भाग, यहां देखते हैं, तीसरा पॅरेग्राफ जहां से शुरू होता है। **गतिमार्गणा से सातों पृथ्वियों के नारकियों में** – अभी वहां नारकियों में उन्होंने गुणस्थान लगाये हैं। नारकियों में चार गुणस्थान होते हैं, पहला-दूसरा-तीसरा-चौथा। तो कोई जीव नरक में गया है और वह पहले गुणस्थान में है। तो वहां रहने का काल कितना है? नारकी में पहले गुणस्थान में रहने का काल, कम से कम और अधिक से अधिक? तो कोई नारकी है, सम्यग्दर्शन प्राप्त हुआ उसको; तो क्या नरक में भी सम्यग्दर्शन हो सकता है? *श्रोता: हो सकता है।* हां, हो सकता है। असंख्यात सम्यग्दृष्टि हैं हर नरक में। सातवें नरक में भी असंख्यात सम्यग्दृष्टि हैं, छठे में भी, पांचवें में, पहले तक आओ, सब जगह असंख्यात जीव सम्यग्दृष्टि हैं। औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त करनेवाले भी वहां असंख्यात जीव हैं; एक समय में आवली के असंख्यातवें भाग प्रमाण जीव औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकते हैं। *श्रोता: एक समय में असंख्यात जीव?* हां,

इतने जीव सम्यक्त्व प्राप्त कर सकते हैं ॲट अ टाइम। मॅक्झिमम उनकी संख्या बतायी है। तीर्थंकर प्रकृति का बंध तो तीसरे नरक तक होता है, और वहां पहले, दूसरे और तीसरे हर नरक में असंख्यात सम्यग्दृष्टि जीव तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं; और ऐसे जीव हमेशा ही वहां पाये जायेंगे। और क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहां हैं? *श्रोता: पहले नरक में।* पहले नरक में। कितने हैं? *श्रोता: असंख्यात हैं।* असंख्यात हैं। *श्रोता: और तीर्थंकर कितने हैं?* तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाले भी असंख्यात जीव हैं हर नरक में; तीसरे में भी, दूसरे में भी और पहले में भी और देवों में भी तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाले असंख्यात सम्यग्दृष्टि तो हैं ही हैं। हम सब तीर्थंकर प्रकृति बांधना चाहते हैं। क्यों? उसे बांधना चाहनेवालों को नहीं बंधती है। आप कहेंगे इन असंख्यात के बाद नंबर कब लगेगा? जाने दो, डायरेक्ट मोक्ष जायेंगे तो अच्छा है।

श्रोता: सातवें नरक में भी असंख्यात सम्यग्दृष्टि हैं? सातवें नरक में असंख्यात जीव सम्यग्दृष्टि हैं, इस बात का हमें आश्चर्य लगता है। हमारे यहां अभी तो संयोगों की इतनी अनिष्टता तो नहीं है न। हम संयोगों की आड़ लेते हैं; स्वाध्याय के लिये भी संयोग आड़े आते हैं। हमारे सारे जो-जो अंतराय कर्म हैं, सारे आड़े आते हैं पहले-पहले, हां, वे दिखते हैं न आपको, नहीं दिखते? अंतराय कर्म दिखता होगा कि नहीं दिखता होगा? हम आपसे पूछते हैं अंतराय कर्म किसीको दिखता होगा कि नहीं दिखता होगा? हां? *श्रोता: सर्वज्ञ को दिखता होगा। श्रोता: सर्वज्ञ को।* सर्वज्ञ को; सर्वज्ञ को उनका अंतराय कर्म दिखता होगा न? *श्रोता: दिखता है... है ही नहीं।* सर्वज्ञ को अपना अंतराय कर्म दिखता होगा कि नहीं? *श्रोता: है ही नहीं उनके।* उनके तो है ही नहीं। हां, पूर्व भव का दिखता होगा। तो उसमें कोई वर्ण होगा कि नहीं होगा? हां? कर्मों को वर्ण है कि नहीं है? *श्रोता: है।* हां है, अरे! पुद्गल है तो वर्ण होना ही चाहिये, हां। तो यहां हम यह बात देख रहे थे, सातों पृथ्वियों की बात और तीर्थंकर प्रकृति की बात हो रही थी। तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाले इतने असंख्यात जीव वहां हैं। सच नहीं लगता है न। *श्रोता: बांधनेवाले हैं?* बांध रहे हैं। जो तीर्थंकर प्रकृति बांधता है वह हर समय बांधता ही रहता है। वहां से आयेंगे, माता के पेट में आयेंगे, फिर यहां आठवें गुणस्थान तक हर समय तीर्थंकर प्रकृति का बंध चलता ही है और उसका उदय तेरहवें गुणस्थान में आनेवाला है।

तो यहां हम देख रहे हैं कि सातों पृथ्वियों के नारकियों में पहले गुणस्थान में रहने का मिनिमम काल कितना है, तो अंतर्मुहूर्त है। क्योंकि वह अंतर्मुहूर्त में मिथ्यात्व में से फिर सम्यक्त्व प्राप्त करेंगे और अधिक से अधिक काल कितना होगा? *श्रोता: ...* देखो वहां तो हम मिथ्यात्व का काल देख रहे हैं। तो जो मिथ्यात्व के साथ नरक में गया है, वहां जाकर सम्यक्त्व प्राप्त करता है, एक अंतर्मुहूर्त में कर सकता है; फिर दुबारा मिथ्यात्व में आया और लंबे काल तक, उस नरक की जितनी आयु है उतने काल तक, मिथ्यादृष्टि रहा; अंत में जाकर सम्यक्त्व प्राप्त किया। तो जिस नरक की जितनी उत्कृष्ट आयु है उसमें कुछ कम कह देंगे यह होगा मिथ्यात्व का सादिसांत काल। है न? तो यहां क्या लिखा है उसका अर्थ कैसे समझना है वह बता रही हूं मैं आपको। देखो, यहां लिखा है, **सातों पृथ्वियों के नारकियों में मिथ्यादृष्टि का काल जघन्य अंतर्मुहूर्त** – यानी अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में आये, अंतर्मुहूर्त में फिर दुबारा सम्यक्त्व प्राप्त किया, तो मिथ्यात्व में रहने का काल एक अंतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल क्रम से अपनी-अपनी उत्कृष्ट आयुप्रमाण है। देखो जो मिथ्यात्व के साथ नरक में उत्पन्न हुआ है और उसने वहां सम्यक्त्व प्राप्त ही नहीं किया तो उसका पहले गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल क्रम से वहां की उत्कृष्ट आयु प्रमाण होगा। क्रम से यानी पहली, दूसरी, तीसरी, चौथी-सातवीं तक की पृथ्वियों में एक सागर, तीन सागर, सात सागर, दस सागर, सत्रह सागर, बाईस सागर और तैंतीस सागर है। पूरी आयु तक वह मिथ्यात्व में ही रहा। यदि हम वहां मिथ्यात्व का सादिसांत काल गिनेंगे तो कुछ कम शब्द हर एक को लगाना क्योंकि वहां तो सम्यक्त्व के साथ गये नहीं हैं। वहां जाने के बाद सम्यक्त्व प्राप्त करके फिर मिथ्यात्व में आये हैं और वहां वे उसका मिथ्यात्व का सादिसांत काल गिनना है और बाद में लास्ट में उसने सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है। इसतरह से लेना उसका काल। *श्रोता: इन बिट्वीन नहीं प्राप्त करेगा?* कहीं भी करेगा न, हमें तो उत्कृष्ट काल देखना है। अंतर्मुहूर्त से हो सकता है कि दस वर्ष तक मिथ्यादृष्टि रहा, कोई पल्य तक रहा, कोई दस पल्य तक रहा – तो जितना है उतना रहे; बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया। हमें तो मिनिमम और मॅक्झिमम, उसके बीच में एक-एक समय से बढ़ते हुये सभी विकल्प होंगे।

श्रोता: सातवें नरक में तो ३३ सागर की आयु के बीच में सम्यक्त्व होगा और वापस वहां आखिर तक सम्यक्त्व रहेगा। तो बाद में तो फिर मिथ्यात्व में चला जायेगा न

मरते समय? आपका प्रश्न है, सातवें नरक में मरते समय तो मिथ्यात्व में जायेगा? हां, यह नियम है। छठे नरक तक के नारकी वहां सम्यक्त्व प्राप्त करके सम्यक्त्व के साथ यहां मनुष्य में जन्म ले सकते हैं। सातवें नरक में, वहां सम्यक्त्व तो प्राप्त करते हैं, हो सकता है शुरुआत में, बीच में, कभी भी लास्ट में, फिर भी, अंत में वे मिथ्यात्व में जायेंगे ही जायेंगे। मिथ्यात्व में जाने के पश्चात् आयु का बंध करेंगे। उसके पश्चात् एक अंतर्मुहूर्त के बाद मरकर तिर्यंच में ही जन्म लेंगे और जिस तिर्यंच में जन्म लेंगे, हिंस्र श्वापदों में, उस भव में उनको सम्यक्त्व नहीं हो सकता। सातवें नरक से निकलकर जो तिर्यंच हुये हैं उनके लिये यह कंडिशन है, बाकी अन्य की बात नहीं है। अब हम आगे बढ़ते हैं यहां पर।

अभी सातवें नरक में सम्यक्त्व का काल अगर देखना है, तो सातवें नरक में मिथ्यादर्शन के साथ जन्मा है, वहां फिर सम्यक्त्वी हुआ, एक अंतर्मुहूर्त तक सम्यक्त्व में रहकर फिर मिथ्यात्व में गया, तो सम्यक्त्व का जघन्य काल अंतर्मुहूर्त है। किसी जीव ने सातवें नरक में जन्म के बाद अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त किया और फिर पूरी आयु तक सम्यग्दर्शन के साथ ही रहा – मरण के एक अंतर्मुहूर्त पूर्व तक, क्योंकि सातवें नरक में मिथ्यात्व में जाकर ही मरण होता है। छहों नरकों में तो मरण तक जीव सम्यग्दृष्टि रह सकता है, तो वहां सम्यक्त्व का उत्कृष्ट काल वहां की उत्कृष्ट आयु में अंतर्मुहूर्त कम इतना होगा। इसतरह से हर एक में समझ लेना। तिर्यंचगति में भी ऐसा ही समझना। तिर्यंच में तो पांच गुणस्थान होते हैं। तिर्यंचों में रहते हुये पहले गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है वह हमें सोचना है। अभी हमारी मार्गणा क्या है? तिर्यंच है। तिर्यंच मरकर तिर्यंच, तिर्यंच मरकर तिर्यंच, तिर्यंच मरकर तिर्यंच। जो अनादि मिथ्यादृष्टि है उसका मिथ्यात्व में रहने का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन है। परंतु किसी तिर्यंच ने सम्यक्त्व प्राप्त किया, वह मिथ्यात्व में चला गया। फिर लंबे काल तक मिथ्यात्व-मिथ्यात्व-मिथ्यात्व में रहा और लास्ट में जाकर फिर सम्यग्दृष्टि हुआ, तो कितने काल तक वह मिथ्यात्व में रहा? तिर्यंच में रहते हुये सादिसांत मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल कितना है? *श्रोता: असंख्यात, तीन पल्य।* तीन पल्य, कौन कह रहे हैं? हां। वहां पढ़कर नहीं बताना आपको, सोच कर बताना है, हां। *श्रोता: अनंतकाल।* अनंतकाल? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन।* अर्धपुद्गलपरावर्तन में कुछ कम। क्यों? उसने वह तिर्यंच के अंतिम भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया। सम्यक्त्व के साथ निकलकर हां, सम्यक्त्व के साथ निकलते हुये वह मनुष्य नहीं

होगा; सम्यग्दृष्टि तिर्यंच देव में जायेगा। इसलिये उसका काल कम करने के लिये, अर्धपुद्गलपरावर्तन में कुछ कम काल में वह सम्यग्दृष्टि हुआ, फिर मिथ्यात्व में गया। मिथ्यात्व में जाकर मनुष्य में आया, छोटी आयु लेकर आया। हम कहते हैं दस-बारह वर्ष की आयु लेकर आया है और उस आयु में उसने आठवें साल के बाद फिर सम्यक्त्व प्राप्त किया और फिर संयमी हुआ और श्रेणी चढ़कर मोक्ष चला गया। क्योंकि हमें यह मिथ्यात्व का काल बड़ा बताना है न, इसलिये सम्यक्त्व के बादवाला काल बहुत छोटा लिया है। किसी भी जीव के सम्यग्दर्शन होने के पश्चात् अधिक से अधिक अर्धपुद्गलपरावर्तन काल में मोक्ष निश्चित है। आप कहेंगे तभी वह मनुष्य नहीं हुआ तो? वज्रवृषभनाराच संहनन नहीं बांधा तो? अभी निगोद में पड़ा है, वहां से मरकर डायरेक्ट मनुष्य में आकर मोक्ष जा सकता है। इतना काल, अर्धपुद्गलपरावर्तन का इतना बड़ा अनंतकाल है, तो अनेकों बार एकेन्द्रिय में बितायेगा।

देखो, जितने जीवसमास हैं न एकेन्द्रिय से लेकर सभी; एकेन्द्रिय हैं, द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय हैं, चतुरिन्द्रिय हैं, उनमें एकेन्द्रिय में कोई सूक्ष्म हैं, कोई बादर हैं, कोई पर्याप्त हैं, कोई अपर्याप्त हैं; इन सभी पर्यायों में ऐसे अनेक जीव, असंख्यात जीव पड़े हैं कि जिन्होंने कभी सम्यक्त्व प्राप्त किया था, वह छूटकर, वहां उस पर्याय में पड़े हैं। वहां से निकलकर मनुष्य होकर मोक्ष जा सकते हैं। हां, सूक्ष्म में से निकलकर मनुष्य होकर मुनि हो सकते हैं, मोक्ष नहीं जा सकते, परंतु बादर निगोद में से निकलकर कोई जीव मनुष्य होकर मुनि हो सकते हैं और मोक्ष भी प्राप्त कर सकते हैं। यानी वह बादर निगोदवाला जीव, देखो, मनुष्य में आया है तो उसने निगोद पर्याय में मनुष्यगति बांधी, मनुष्यगत्यानुपूर्वी बांधी, मनुष्यायु बांधी, वज्रवृषभनाराच संहनन बांधा, ये सभी शुभ प्रकृतियां बांधकर आया है। तभी तो वह उस भव में मोक्ष जायेगा न? तो उसको वहां कौन सिखाता होगा? तो लोगों को प्रश्न होता है कि वहां कैसे शुभभाव करता है क्योंकि हमने शुभभाव को भावों में नहीं रखा, क्रियाओं में जाना-माना है। कोई क्रिया को हम वह शुभभाव समझते हैं। वह तो परिणामों की विशुद्धि में यथायोग्य प्रकृतियां बंधती रहती हैं। देखो, यह एक दूसरी बात समझने जैसी है। कोई एकेन्द्रिय में रहता है तो एकेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? यह हम आयेंगे इन्द्रियमार्गणा में।

यह देखो, पढ़ लो, २७५ पेज पर, जहां इन्द्रियमार्गणा लिखा है बोल्ड में। एकेन्द्रिय

का जघन्य काल क्षुद्रभव, क्षुद्रभव यानी वह अपर्याप्त का भव, लब्धिअपर्याप्त का छोटा भव, वह अंतर्मुहूर्तवाला है और एकेन्द्रिय में लगातार, एकेन्द्रिय से एकेन्द्रिय, एकेन्द्रिय से एकेन्द्रिय, एकेन्द्रिय से एकेन्द्रिय – कभी वनस्पतिकायिक हुआ, कभी वायुकायिक, कभी अग्निकायिक, जो कुछ भटका तो अधिक से अधिक कितने काल तक रहेगा? तो कहते हैं असंख्यात पुद्गलपरावर्तन। यह पुद्गलपरावर्तन क्या है? वही तो विषय हमें देखना है। परंतु वह क्यों देखना है उसकी बात यहां चल रही है। तो लगातार एकेन्द्रिय में इतने अनंतकाल तक रहा, यानी जब-जब आयु बांधी तो तिर्यंचायु ही बांधी है, एकेन्द्रिय जाति ही बांधी। तो निलेशभाई, वह मनुष्यगति कभी बांधेगा कि नहीं बांधेगा? हां? *श्रोता: बांधेगा।* बांधेगा। मनुष्य की आयु कभी नहीं बांधी परंतु हर अंतर्मुहूर्त में मनुष्यगति बांधता रहा। एकेन्द्रिय जीव – उनमें से अग्निकायिक और वायुकायिक को छोड़ो क्योंकि वे मनुष्यगति कभी बांधते ही नहीं हैं; परंतु अन्य सभी एकेन्द्रिय जीव, हर अंतर्मुहूर्त में, तिर्यंचगति-मनुष्यगति, तिर्यंचगति-मनुष्यगति, पलट-पलटकर बांधते ही बांधते हैं नियम से। परंतु जब-जब आयुबंध का सवाल आया, जब उसका समय आया, तब-तब उसने तिर्यंचायु, तिर्यंचगति और एकेन्द्रिय जाति ही बांधी और असंख्यात पुद्गलपरावर्तन नामक अनंतकाल तक तो एकेन्द्रिय में भटका।

उसने मनुष्यगति बांधी नहीं ऐसी बात नहीं क्योंकि उसके विशुद्धि और संक्लेश होते रहते हैं वहां पर। वह संक्लेश में तिर्यंचगति बांधेगा और विशुद्धि में मनुष्यगति बांधेगा। ऐसा कोई नहीं है कि जो लगातार एक ही गति का बंध करे; हां केवल अग्निकायिक-वायुकायिक ही है, जो लगातार तिर्यंचगति बांधते हैं विशुद्धि में भी। *श्रोता: चारों गति बांधते हैं या खाली मनुष्यगति?* नहीं-नहीं, एकेन्द्रिय जीव पलट-पलट कर अंतर्मुहूर्त में मनुष्यगति और तिर्यंचगति ही बांधते हैं। एकेन्द्रिय जीव नरकगति नहीं बांध सकते, देवगति भी नहीं बांध सकते। देवगति और नरकगति बांधनेवाले केवल मनुष्य और पंचेन्द्रिय तिर्यंच ही हैं – संज्ञी भी और असंज्ञी भी। परंतु बाकी एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के जीव मात्र तिर्यंचगति और मनुष्यगति का ही बंध करते हैं यह बात है। *श्रोता: उसमें अग्निकायिक, वायुकायिक?* सिर्फ तिर्यंचगति – अग्निकायिक और वायुकायिक मात्र तिर्यंचगति का ही बंध करेंगे। *श्रोता: मनुष्यगति?* कोई मनुष्यगति बांधकर कालांतर से अग्निकायिक-वायुकायिक में उत्पन्न होता है तो उसने बांधे हुये मनुष्यगति की भी उद्वेलना होती है यानी वह टर्न होकर

नष्ट होती है, यानी मनुष्यगति के परमाणु तिर्यंचगतिरूप से परिणमित होते हैं और मनुष्यगति नामकर्म की सत्ता नहीं रहती। पूर्व में बंधी हुयी मनुष्यगति का भी वहां कोई उदय नहीं है, अभी वह प्रकृति सत्ता में भी नहीं रहेगी और अग्निकायिक, वायुकायिक में रहते हुये वह जीव मनुष्यगति का नया बंध भी नहीं करेगा और मरकर मनुष्य में भी नहीं जन्मेगा, तिर्यंच में ही जन्म लेगा। अभी आगे बढ़ेंगे थोड़ा।

श्रोता: देव-नारकी जो होते हैं वे संज्ञी तिर्यंच और संज्ञी मनुष्य होते हैं? हां, देव और नारकी मरकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य में ही जन्म लेते हैं। आपका प्रश्न ऐसा था, देव और नारकी मरकर, तो ये देव ही ऐसे हैं, कौनसे? नीचेवाले। कौनसे नीचेवाले? भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषि, सौधर्म और ईशानवाले, वे एकेन्द्रिय में भी जन्म लेते हैं; ले सकते हैं। वहां के जो मिथ्यादृष्टि हैं न, भवनत्रिक और सौधर्म-ईशान तक के जो मिथ्यादृष्टि देव हैं, वे हर अंतर्मुहूर्त में एकेन्द्रिय जाति और पंचेन्द्रिय जाति, एकेन्द्रिय जाति और पंचेन्द्रिय जाति बांध रहे हैं; अब जो आयु बांधेंगे वहां जन्म लेंगे। अन्य भी जो देव हैं वे मनुष्यायु या तिर्यंचायु बांधकर उसमें उत्पन्न होते हैं। कहां तक के – तो सहस्रार तक के; यानी सनत्कुमार से लेकर सहस्रार तक के देव मनुष्यायु या तिर्यंचायु बांधकर उसमें उत्पन्न होते हैं, सम्यग्दृष्टि तो मनुष्यायु का ही बंध करेंगे। ऊपर के जो हैं आनत-प्राणत और ऊपर ग्रैवेयकादि के जो देव हैं वे सभी मनुष्यगति, मनुष्यायु बांधकर मनुष्य में ही उत्पन्न होते हैं नियम से – मिथ्यादृष्टि हो तो भी। *श्रोता: सम्यग्दृष्टि?* वहां सम्यग्दृष्टि भी तो होंगे ही होंगे, और वे तो नियम से मनुष्यों में ही जन्म लेंगे। *श्रोता: सौधर्म-ईशान के जो देव हैं, जो एकेन्द्रिय जाति का बंध करते हैं, मिथ्यादृष्टि हैं, उनके परिणाम क्या होते होंगे?* संक्लेशरूप। यहां तो संक्लेश और विशुद्धि, ऐसी ही बातें होती हैं। देव और नारकी सम्यग्दृष्टि सारे मनुष्यगति का ही बंध करेंगे, लगातार।

श्रोता: उनको संक्लेश क्या हो सकते हैं? अभी वहां तो संक्लेश है न, ईर्ष्या है। हमें संक्लेश क्या? पैसेवालों को तो यहां संक्लेश नहीं होने चाहिये? तो कहते हैं हम तो अनुभव करते हैं कि पैसे ज्यादा होने पर ज्यादा संक्लेश होते हैं। अरे! मेरा धन कोई चोरी तो नहीं हो जायेगा, कहां रखूं और इसको कैसे बढ़ाऊं, क्या-क्या करूं? वहां पर ऐसे परिणाम होते हैं? वहां तो बढ़ाने का सवाल नहीं, जिसका जो है, उसका वैभव तो उतना रहनेवाला है। दूसरे को देख-देखकर वहां तो जलन होती है, ईर्ष्या होती है। इतने भोग हैं तो

भोगने की इच्छारूप परिणाम तो हैं न वहां। कितनी उसमें आकुलता है। इसको भोगूं, यह आकुलता चल रही है न हर समय। वहां की तो कितने सागरों की आयु है और सभी भोग उपलब्ध हैं; तो यहां बैठे-बैठे हमें लगता है कि देव में जायेंगे तो सुखी हो जायेंगे। तो देव में जायेंगे, फिर पंचकल्याणकों में चले जायेंगे और वहां फिर डायरेक्ट भगवान से हम सुनेंगे। कौनसे तीर्थंकर के पास जाकर सुनेंगे? *श्रोता: सीमंधर भगवान।* सीमंधर भगवान। जुगमंधर, बाहु, सुबाहु नहीं चलेंगे, संजातक नहीं चलेंगे; अरे! उनका नाम ही नहीं सुना है हमने। यानी हम देव में जायेंगे और वहां से, अरे! यहां थोड़ीसी, थोड़ीसी अनुकूलता है, थोड़ासा जो कुछ वैभव है हमारा, उसको छोड़कर स्वाध्याय में नहीं आना चाहते और देवों के इतने सारे विषय उपलब्ध हैं, वे छोड़कर क्यों जायेंगे वे वहां पर, पंचकल्याणकों में? वे तो घूमने जायेंगे नंदनवन या कहां-कहां, चले जायेंगे वहां। वे तो सब जगह विहार करते हैं न।

श्रोता: गर्भ के दु:ख से संक्लेश परिणाम होते हैं क्या? इसलिये एकेन्द्रिय होते हैं? गर्भ का दु:ख? आपका प्रश्न है गर्भ के दु:ख से एकेन्द्रिय होते हैं क्या? देवों में गर्भ होता ही नहीं। *श्रोता: नहीं गर्भ के दु:ख का डर, इस वजह से?* ना, देखो गर्भ के दु:ख का डर क्यों? क्योंकि उनकी तो आयु सागरों की है और हर अंतर्मुहूर्त में मिथ्यादृष्टि देव हैं वे नियम से एकेन्द्रिय जाति और पंचेन्द्रिय जाति का ऑल्टरनेटली बंध कर ही रहे हैं। *श्रोता: एकेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय?* एकेन्द्रिय जाति और पंचेन्द्रिय जाति को नीचे के देव बांधते हैं। ऊपर के देव तो संक्लेश हो या विशुद्धि हो पंचेन्द्रिय का ही बंध करेंगे। फिर उसमें तिर्यंचगति या मनुष्यगति ऑल्टरनेटली बंधेगी। हां, ये बहुत सारे नियम हैं, यहां तो करणानुयोग में संक्लेश और विशुद्धि की बात आती है। हम कहेंगे कैसे परिणाम करते होंगे? हम कैसे-कैसे परिणाम करते हैं दिनभर, वे याद करना; कभी संक्लेश के होते हैं, कभी विशुद्धि के होते हैं; ऐसे ही उनके भी होते हैं। किसी विशिष्ट परिणाम का नाम नहीं है कि यह ऐसा किया तो ऐसा बंध होगा, हां। *श्रोता: नारकी और देवों को दो में ही जाने की सुविधा है, मनुष्यों को सबमें जाने की सुविधा है?* हां। नारकी जो हैं, छह नरक के नारकी, मरकर मनुष्य या तिर्यंच हो सकते हैं। सातवें नरक के नारकी मरकर नियम से तिर्यंच ही होते हैं, उनके दूसरा कोई ऑल्टरनेटिव्ह नहीं है।

अब यहां पुस्तक के आधार से हम देखेंगे यहां की थोड़ी बात। यह ब्रॅकेट में जो है न,

२७४ पृष्ठ पर नीचे का पॅरेग्राफ। ब्रॅकेट में और वे थोडे तिरछे लेटर लिखे हैं; वे मैंने अपनी ओर से लिखे हैं और बाकी जो सीधे सरल लिखे हैं, वह तो पं.टोडरमल जी ने जो लिखा है मूल में ढूंढ़ारी भाषा में, उसका अनुवाद है। हां, अनुवाद के बीच-बीच में जो बोल्ड लेटर्स हैं, जो पॅरेग्राफ बनाये हैं, वे मैंने अपनी ओर से बनाये हैं। जैसे बोल्ड लेटर्स में गतिमार्गणा, इन्द्रियमार्गणा ये नाम जो दिये हैं, वे मैंने अपनी ओर से दिये हैं क्योंकि समझने के लिये सुविधा हो। तो हम यह पॅरेग्राफ देखेंगे, इसको कहेंगे इटॅलिक, यानी वह तिरछे लेटर्स में लिखा है। **किसी गति में गुणस्थान का काल कहते हैं, तब अन्य गति से इस गति में आनेपर उस गुणस्थान में कितना काल हो सकता है, उसे बताते हैं। अन्य गति से तिर्यंचगति में आकर वहां मिथ्यात्व सहित रहने का उत्कृष्ट काल,** यह तिर्यंच की बात चल रही है, **असंख्यात पुद्गलपरावर्तन होगा। यह जीव अनादि मिथ्यादृष्टि ही होगा। असंयत** देखो, क्या कहना चाहते हैं?

कोई सादि मिथ्यादृष्टि है जिसने अन्य भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया था। फिर वह मिथ्यात्व में जाकर तिर्यंच में उत्पन्न हुआ है। तो जब पहली बार सम्यक्त्व प्राप्त किया था, तब से हम अर्धपुद्गलपरावर्तन को गिनेंगे। यहां तिर्यंच में आने के बाद हम गिन रहे हैं। यानी तिर्यंच में उत्पन्न हुआ है, तो कोई भी जीव तिर्यंच में सम्यक्त्व के साथ उत्पन्न नहीं होता, नारकी सम्यग्दृष्टि भी क्यों न हो वह भी मरकर मनुष्य में ही आता है। हां, मनुष्य क्षायिक सम्यक्त्व के साथ भोगभूमि का तिर्यंच हो सकता है परंतु उसका दोबारा मिथ्यात्व में आने का सवाल ही नहीं है। तिर्यंच जन्म से तो मिथ्यादृष्टि है और तिर्यंच में आकर उसने पहली बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त किया है। प्रथमोपशम सम्यक्त्व के लिये वे पांचों लब्धियां आवश्यक हैं। देशनालब्धि वह सब उसके अंतर्गत आ गयी। तो उसने प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त किया, गिरकर मिथ्यात्व में गया और तिर्यंच में ही लगातार रहा। तो अर्धपुद्गलपरावर्तन में कुछ कम काल शेष रहने पर वह सम्यक्त्व प्राप्त करेगा ही। यह बात है न? यहां जो बात है, वह कैसे लिया है उसका मिथ्यात्व का बड़ा काल? तो वह तिर्यंचगति में आया है इसलिये वहां से काल शुरू किया। समझ में आती है बात? तिर्यंचगति में मिथ्यात्व का सादिसांत काल अगर लेना है तो अर्धपुद्गलपरावर्तन लेना पड़ेगा परंतु तिर्यंचगति में मिथ्यात्व का काल लेना है तो मिथ्यात्व सहित तिर्यंचगति कितने काल तक रह सकती है उसको गिनना पड़ेगा; वहां सादिसांत काल नहीं लिया है, ख्याल में

आती है बात? तिर्यंच में जाने के बाद कोई सम्यक्त्व प्राप्त करता है और फिर मिथ्यात्व में जाता है; तो सम्यक्त्व प्राप्त किया तो अब मोक्ष जाने के पूर्व का काल लिमिटेड हो गया। अर्धपुद्गलपरावर्तन में मोक्ष होगा ही होगा। अब वह तिर्यंच में से अर्धपुद्गलपरावर्तन के पहले-पहले ही निकलेगा, मनुष्य होगा और मोक्ष चला जायेगा। ख्याल में आती है यह बात? हां।

अभी आगे बढ़ेंगे। तिर्यंच में **असंयत का उत्कृष्ट काल तीन पल्य कहा वह उत्तम भोगभूमि की अपेक्षा कहा है।** देखो, तिर्यंचों में कोई उत्तम भोगभूमि में जन्मा है; जन्म से अगर वहां कोई मिथ्यादृष्टि है और वहां जाकर उसने सम्यक्त्व प्राप्त किया है; तो वह असंयत यानी चौथे गुणस्थानवाला हुआ। तो उसमें रहने का काल कितना है? तो तीन पल्य में कुछ कम क्योंकि वहां के सारे गर्भज होते हैं; गर्भ से निकलने पर जो कुछ विशिष्ट काल में उसने सम्यक्त्व प्राप्त किया और तीन पल्य में से बाकी शेष काल सम्यग्दृष्टि रहा, मरकर देव हुआ; परंतु सम्यक्त्व में रहने का यह उत्कृष्ट काल वहां क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी जन्म लेते हैं यानी वहां जो सम्यक्त्व के साथ जन्म लेनेवाले हैं न, उनकी अपेक्षा से पूरे ३ पल्य होता है। हमने पहले बात की थी। कर्मभूमि के तिर्यंच में तो कोई सम्यक्त्व के साथ जन्मता नहीं है परंतु भोगभूमि में क्षायिक सम्यक्त्व के साथ तिर्यंच में जन्म ले सकता है। यहां मनुष्य क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है, उसके पहले मिथ्यात्व अवस्था में अगर उसने तिर्यंच आयु बांधी है, तो वह भोगभूमि के तिर्यंच में क्षायिक सम्यक्त्व लेकर उत्पन्न होगा। अदरवाइज् कोई तिर्यंचों में जन्म से सम्यग्दृष्टि नहीं होता, हां। अब हम आगे बढ़ेंगे। थोड़ा इसको गौण करके २७५ पेज पर आते हैं। **इन्द्रियमार्गणा में एकेन्द्रिय का,** अभी यहां मार्गणा की बात है यहां गुणस्थान को नहीं लेना क्योंकि एक मिथ्यात्व गुणस्थान ही होता है। हम एकेन्द्रिय में रहने का काल देखेंगे। **एकेन्द्रिय का काल जघन्य क्षुद्रभव और उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गलपरावर्तन मात्र।** यानी एकेन्द्रिय से एकेन्द्रिय, एकेन्द्रिय से एकेन्द्रिय, उसका काल है और विकलत्रय यानी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय को विकलत्रय कहते हैं। उसमें भी छोटा भव तो क्षुद्रभव का है, क्षुद्रभव यानी लब्धिअपर्याप्त का भव और उत्कृष्ट काल कितना होता है तो संख्यात हजार वर्ष। हर एक में संख्यात हजार वर्ष अलग-अलग होता है और **पंचेन्द्रिय में, मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडिपूर्व अधिक हजार सागर।** अभी हम इसका जरा अर्थ देखने जा रहे हैं।

यहां जो क्षुल्लकभव लिखा है या क्षुद्रभव लिखा है, उसकी बात हम करेंगे, वह भवस्थिति काल में देखेंगे। अभी यहां जो बताना चाहते हैं न, इसका अर्थ पहले देखेंगे। यहां क्या लिखा है देखो, पंचेन्द्रिय में, इन्द्रियमार्गणा की अपेक्षा पंचेन्द्रिय में, देखो, पंचेन्द्रिय का अर्थ पंचेन्द्रिय मरकर पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय मरकर पंचेन्द्रिय होगा; यहां वह तिर्यंच है कि मनुष्य है कि देव है कि नारकी, उसकी बात नहीं है। हमारी अपेक्षा कौनसी है? पंचेन्द्रियपना। पंचेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है, हां? *श्रोता:...* एक हजार सागर और कुछ पूर्वकोटि अधिक। हजार सागर से ज्यादा फिर वह पंचेन्द्रिय में से एकेन्द्रिय आदि में चला जायेगा। त्रस की स्थिति मालूम है सबको? वह हमने बहुत बार सुनी है। *श्रोता: २००० सागर।* त्रस में रहने का उत्कृष्ट काल? *श्रोता: २००० सागर।* २००० सागर। वह त्रस पर्याप्त में लगातार रहेगा द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक, तो २००० सागर काल तक रहेगा और उसमें त्रस में कभी पर्याप्त – कभी अपर्याप्त होता रहेगा तो पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक २००० सागर और अकेले पंचेन्द्रिय में रहने का काल, यह हजार सागर में कुछ अधिक होता है।

अब कायमार्गणा में भी यहां अलग-अलग बातें हैं ये, देखेंगे हम। यानी कोई पृथ्वीकायिक-पृथ्वीकायिक में से पृथ्वीकायिक, ऐसा लगातार पृथ्वीकायिक-पृथ्वीकायिक में रहेगा, तो अधिक से अधिक कितने काल तक रहेगा? तो असंख्यातलोकप्रमाण काल तक रहेगा। आप कहेंगे असंख्यातलोक तो यह तो क्षेत्र का प्रमाण है और आप काल को असंख्यातलोक लिख रहे हैं। लोक का अर्थ क्या होता है, लोकाकाश में जितने प्रदेश हैं, उनकी जो संख्या है वह पर्टिक्युलर असंख्यात है। उसको कहेंगे लोकप्रमाण असंख्यात। ऐसा एक लोक, दो लोक, चार लोक, करोड़ लोक, ऐसे असंख्यात लोक, उसमें जितने प्रदेश होंगे, उन प्रदेशों को समयों में कन्व्हर्ट करना है। आपने एक प्रमाण सुना है न, अंगुल। अंगुल क्या होता है? यह इतना होता है अंगुल (उंगली के पेर जितना)। उसमें प्रदेश, यानी लिनिअर लाइन में लेना है, ऐसे सिंगल लाइन में। कितने प्रदेश हैं, एक–दो–तीन–चार गिनो उसमें। हां, कितने हैं? *श्रोता: अंगुल प्रमाण – आप बोलिये।* हां, अंगुल कहेंगे उसको तो उसमें कितने हैं? तो पल्य बड़ा कि अंगुल बड़ा? पल्य में तो हम रोमखंडों को गिन रहे थे और अंगुल में प्रदेश गिन रहे हैं। *श्रोता: कितना बड़ा होता है पल्य?* हां, पल्य तो कितना बड़ा मालूम है न? एक योजन ऐसा बड़ा लंबा और ऊंडा

उतना खड्डा करना और उसको रोमखंडों से भरना, सौ साल के बाद एक-एक निकालना। जितने वर्ष पूरे हो गये वह व्यवहार पल्य हुआ। उसकी बात आयेगी क्रम से। तो यह पल्य बड़ा है कि अंगुल बड़ा है? यह मेरा प्रश्न है। *श्रोता: अंगुल बड़ा है।* अंगुल बड़ा है, अंगुल बड़ा है। क्योंकि ये अभ्यासु हैं न सारे। ये जीवंधर चंद्रपुर से आये हैं।

तो यह अंगुल में हम प्रदेशों को गिन रहे हैं, तो यह अंगुल के असंख्यातवें भाग में, अंगुल की बात नहीं, उसके असंख्यातवें भाग में इतने प्रदेश हैं; सुनना बराबर, उन प्रदेशों को हम समयों में गिनेंगे; यानी उतनी ही संख्या में समय गिनेंगे और उन समयों का माप बतायेंगे आपको। तो वे कितने हो गये? तो कहते हैं उसमें तो असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी चली जायेंगी। एक उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी मिलकर २० कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होती है। ऐसे एक–दो–चार नहीं। देखो, हमने पहले आपको एक परीतासंख्यात बताया था, जघन्य परीतासंख्यात। उसको उतनी बार रेज्ड टु करो तो जघन्य युक्तासंख्यात आता है इतने समय आवली में होते हैं। फिर जघन्य युक्तासंख्यात को जघन्य युक्तासंख्यात से गुणा करेंगे तो मिनिममवाला असंख्यातासंख्यात होगा। तो उस पर भी और उसके वर्ग-वर्ग-वर्ग करते चले जाओ तो ऐसा जो असंख्यातासंख्यात का प्रमाण है, उतनी बार पूरा कल्पकाल २० कोड़ाकोड़ी सागर का ले लेंगे, इतने समय अंगुल के असंख्यातवें भाग में होंगे। तो अंगुल में कितने होंगे? अंगुल में उतने हों तो इस हॉल में कितने होंगे? पूरे लोकाकाश के प्रदेशों को समयों में कन्व्हर्ट करो तो कितना होगा? ऐसे असंख्यात लोक में जितने प्रदेश हैं उनको समयों में कन्व्हर्ट करो तो भी कितना होगा? फिर भी वह असंख्यात है, अनंत नहीं है।

तो इतने काल तक वह लगातार अग्निकायिक में या वायुकायिक में रहेगा यानी अग्नि-अग्नि-अग्नि-अग्नि या वायु-वायु-वायु-वायु में रहने का इतना लंबा काल है। हर एक कायिक में यानी यहां कायमार्गणा की बात है न; विशिष्ट काय में रहने का उत्कृष्ट काल; एक वनस्पतिकायिक ही ऐसी है जिसमें रहने का उत्कृष्ट काल है असंख्यात पुद्गलपरावर्तन। तथा साधारण वनस्पति जिसको हम कहेंगे वह निगोद है, जिसमें लगातार निगोद से निगोद, निगोद से निगोद ऐसा जन्म-मरण करता रहेगा, तो कितने काल तक रहेगा? हां? *श्रोता: अनंत।* निगोद में रहने का, हां अनंत है, वह कितना अनंत है? ढाई

पुद्गलपरावर्तन। यह लौटकर हम परावर्तन पर आते हैं। इसीलिये वह परावर्तन क्या है, वह देखेंगे जरूर हम। उसीका तो निर्णय करना है हमको कि इन पर्यायों में इतना काल बिताते हैं कोई।

देखो, हमें अभी मनुष्यपर्याय मिली है और यह छूटकर न जाने कौनसा जीव किस पर्याय में चला जायेगा। यदि यहां सम्यक्त्व नहीं प्राप्त किया है और देव भी हुआ तो क्या हुआ। एकेन्द्रिय में जायेगा या फिर मनुष्य–तिर्यंच होकर फिर एकेन्द्रिय में जा सकता है, नरक में जा सकता है, कहीं भी – चारों गतियों के दरवाजे खुले हैं उस जीव के लिये और मान लेते हैं बाय चान्स एकेन्द्रिय में चला गया, तो कितने काल तक वहां रह सकता है वह जीव? अनंत-अनंत-अनंत-अनंतकाल। वह अनंतकाल गिनने के ये माप हैं सारे, परावर्तनवाले।

श्रोता: यह अनंत बार मुनिव्रत धारी भव्यजीव की बात है? हां, आपका प्रश्न है यह अनंत बार मुनिव्रत धारी भव्य की बात है कि अभव्य की है? हां, अभव्य की तो हो ही सकती है, भव्यों की भी होगी; जब तक उसने सम्यक्त्व नहीं प्राप्त किया है तब तक। क्या किया अनादि से? और यह मुनिव्रत धार की बात है न, वह तो द्रव्यलिंगी – वह सच्चे द्रव्यलिंगी होंगे उन्हींकी बात है – एक बात और है कि द्रव्यलिंग धारण करके सभी ग्रैवेयक में तो नहीं जाते हैं। ग्रैवेयक में जाने के लिये भी उत्तम तीन संहननों की आवश्यकता है; और पांचवें काल के कोई भी मुनि वहां ग्रैवेयक में तो जायेंगे नहीं क्योंकि यहां किसी के भी उत्तम संहनन तो है ही नहीं। यानी जब कोई चौथे काल में या विदेहक्षेत्र में जन्मेगा; मुनि होने के भाव आयेंगे उसके; उत्तम संहननवाला होगा और आयु बंधने के समय में वहां के जैसी शुक्ललेश्या होगी तो ही वहां की आयु बांधेगा। यह जरूरी नहीं कि वह ऊपर की ही आयु बांधेगा, नीचे के देवों की भी आयु बांध सकता है। तो इसमें बहुत सारी लिमिटेशन्स हैं। फिर भी कोई मिथ्यादृष्टि अवस्था में वहां तक जा सकता है और वहां अनंत बार जाने के लिये; क्योंकि वहां से लौटकर मनुष्य होगा, फिर मनुष्य में से अभी मिथ्यादृष्टि है, तो कहीं भी जा सकता है, चारों गतियों के सभी रास्ते खुले हैं। फिर जब कभी मनुष्य होगा तो हर मनुष्यभव में उसको क्या मुनि होने के भाव होना जरूरी है? तो अनंत बार मुनिव्रत धारण करके ग्रैवेयक गया है, इसका अर्थ क्या है? बाईस सागर से इकतीस सागर की कोई न कोई आयु उसने बांधी है।

श्रोता: यह भी कथन है बत्तीसवें बार में वह मोक्ष जा सकता है। बत्तीसवें बार किसके? भावलिंगी मुनि के। अभी हम यह ऐसा भी देखते हैं न, कोई भावलिंगी भी मुनि हुआ और मिथ्यात्व में चले गये। तो उनका मिथ्यात्व में रहने का काल कितना होगा? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन।* अर्धपुद्गलपरावर्तन। अर्धपुद्गलपरावर्तन के अनंतवें भाग में अनंत उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी चली जायेंगी। तो वह भी, एक बार भावलिंगी हुआ मुनि भी अनंत बार बीच में ग्रैवेयक में जा सकता है, ख्याल में आती है न बात? हां, ऐसा भी है कि कोई उपशम श्रेणी चढ़कर भी उतरा है पहले और फिर मिथ्यात्व में जाकर इतना अनंतकाल उसने मिथ्यात्व में बिताया है। गिरकर मिथ्यात्व में जावे, तो की बात है; यह क्या हो सकता है? उसकी बात है। आप कहेंगे आपने तो डरा दिया हमको; यह डरना अच्छा है, हां, क्योंकि हम एकदम निडर होकर घूम रहे हैं संसार में, यहां के झूठे मजे ले रहे हैं। तो थोड़ा डरें तो अच्छा है, हां स्वामीजी क्या कहते हैं, उसको गौर से सुनेंगे तो सही, अपना कल्याण कर लेंगे। अभी यहां हर एक मार्गणा में उसको अलग-अलग देखना है, परंतु चूंकि हमारे मार्गणा का अभ्यास अभी सबका यहां नहीं हुआ है न, इसलिये उसको छोड़कर हम आगे बढ़ेंगे।

देखो, एक वेदमार्गणा की बात मैं बताना चाहती हूं, उसी पेज पर नीचे आना, उसके पहले देखो, वहां योगमार्गणा में जो हम संज्ञी पंचेन्द्रिय हैं या द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के जीव जो हैं, हमारा एक ही योग में रहने का काल अंतर्मुहूर्त है। हर अंतर्मुहूर्त में योग पलटता है। एकेन्द्रिय ऐसे हैं उनके मात्र काययोग है और वे लगातार काययोग में ही रहते हैं। बाकी हमारे योग तो अंतर्मुहूर्त में पलटते हैं। अब हम थोड़ी वेदमार्गणा की बात इसलिये उठाते हैं कि हमें यह २००० सागर की त्रसस्थिति में मनुष्यभव कितने होते हैं इसके बारे में बार-बार सबके प्रश्न आते हैं। मनुष्यों के लगातार भव कितने होते हैं? उसके बारे में जो कोई चर्चा चल रही है विद्वानों में, हमारे भाई भी, पं. हेमचंदभाई हेम भी बहुत बार प्रश्न करते हैं हमको। देखो यहां, **तीन वेदों में**, नीचे से चौथी लाइन। *श्रोता: पेज नंबर?* पेज नंबर २७५ है। **मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिकरण तक और अवेदियों में सामान्यवत्**, इसको छोड़ो, **विशेष इतना स्त्रीवेद में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल।**

देखो, अभी स्त्रीवेदी क्या है? यहां तो भावस्त्रीवेदी की बात है। स्त्रीवेदी जीव जो हैं, वे

कहां-कहां होते हैं? नारकियों में तो होते नहीं हैं। वहां सारे नपुंसकवेदी हैं। तो स्त्रीवेदी जीव कहां होते हैं? मनुष्यों में होते हैं, तिर्यंचों में होते हैं और देवों में होते हैं। देवियां कहां तक की होती हैं? *श्रोता: सौधर्म, ईशान।* हां? सौधर्म-ईशान तक। हां? *श्रोता: सोलहवें स्वर्ग तक।* सोलहवें स्वर्ग तक की देवियां तो जन्मती हैं सौधर्म-ईशान में। नहीं समझे आप? *श्रोता: माने दूसरे तक?* पहले-दूसरे स्वर्ग तक ही हैं। एक तो भवनवासी की वे उनके वहां उत्पन्न होती हैं; व्यंतरों की वे उनके वहां उत्पन्न होती हैं; ज्योतिषियों की देवियां उनके वहां उत्पन्न होती हैं; और ऊपर सोलहवें स्वर्ग तक के जो देव हैं उनकी जो देवियां कहते हैं हम वहां की हैं; उनका जन्म तो होता है सौधर्म और ईशान के विमानों में और ऊपर के देव अपनी-अपनी नियोगिनी देवी को ले जाते हैं, अवधिज्ञानी हैं न। हमारे यहां भी हैं जो अमेरिका में रहते हैं सारे, हां और अपनी-अपनी देवी को लेने के लिये यहां इंडिया में आते हैं। पर वहां तो अच्छा है अवधिज्ञानी होते हैं तो अपनी-अपनी देवी को ले जाते हैं। यहां मां-बाप को कितनी चिंता करनी पड़ती है! क्यों? बच्चे नहीं चाहते कि मां-बाप चिंता करें; पर मां-बाप ही स्वाध्याय छोड़कर बच्चों के पीछे चले जाते हैं। देखो तो, यह स्त्रीवेद में, यानी वह लगातार मनुष्यनी होगी, तिर्यंचनी होगी या देवी होगी और लगातार स्त्री में रहने का अर्थ है वह मिथ्यादृष्टि है और हमारे महाराष्ट्र में कहने की पद्धति है, कहां? है न सारे औरंगाबाद में? *श्रोता: जन्मोजन्मी हाच पति मिळावा।* हां, हर जन्म में यही पति चाहिये। यानी वह स्त्री ही रहना चाहती है। हां-हां? *श्रोता: सात जन्म के लिये।* सात जन्म के लिये, कॉन्ट्रॅक्ट कर देते हैं। *श्रोता: आपके यहां सात जन्म हैं? अपने यहां जन्मों-जन्मों के लिये।* यानी वह मिथ्यात्व में रहना चाहती है, है न? तो वेदमार्गणा, यह देखो, स्त्रीवेदी में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल, यानी लगातार स्त्री में से स्त्री, स्त्री में भले वह मनुष्यनी हो या तिर्यंचनी हो, देवी हो, इसीमें ही भटकेगी। तो कहते हैं, **पृथक्त्व सौ पल्य**, यानी कुछ सौ पल्य, यानी मान लेते हैं न ९०० पल्य। अभी उसकी चर्चा थोड़ी विस्तार से करनी पड़ेगी, वह हम दोपहर में करेंगे। अभी तो अपना समय हुआ है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

३. मार्गणाओं में काल, क्षुद्रभव

यहां हम कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। पदार्थों को जानने के जो अनेक प्रकार हैं उनमें से काल की बात अपनी यहां चल रही है। तो हमने देखा था कि मार्गणाओं में एक जीव की अपेक्षा काल। किसी मार्गणा में रहने का एक जीव की अपेक्षा जघन्य काल और उत्कृष्ट काल, उसकी अपनी चर्चा चल रही थी। हमने देखा था न कि अलग-अलग गतियों में एक जीव कितने काल तक रह सकता है। मनुष्यगति में कितने काल तक रह सकता है उसकी हमने बात की थी, गतिमार्गणा की अपेक्षा।

अब बाद में हमने इन्द्रियमार्गणा की अपेक्षा देखी कि एकेन्द्रिय जीव में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है, एक जीव की अपेक्षा। ऐसे पंचेन्द्रिय में रहने का कितना काल है तो हमने देखा था हजार सागर प्लस पूर्वकोटि पृथक्त्व, यह पृथक्त्व जो शब्द आया है, उसका अर्थ क्या होता है? तो कहीं-कहीं उसका अर्थ लिख दिया जाता है कि पृथक्त्व का अर्थ इतना है और जहां नहीं लिखा है वहां पर भी विषय के अनुसार उसका अर्थ समझना चाहिये। पृथक्त्व शब्द शास्त्र में अनेक बार आता है, कहीं-कहीं तो तीन से आठ के लिये भी पृथक्त्व कहते हैं, परंतु यह नियम नहीं है। क्योंकि अभी हम देखेंगे मनुष्य में रहने का लगातार काल कितना है? मनुष्य से मनुष्य, मनुष्य से मनुष्य, मनुष्य से मनुष्य, तो वहां कहेंगे पृथक्त्व पूर्वकोटि प्लस तीन पल्य। उसका अर्थ क्या है? उसको हमें देखना है कि मनुष्य मरकर मनुष्य, मनुष्य मरकर मनुष्य, मनुष्य मरकर मनुष्य, उसके लिये तो उसको लगातार मिथ्यात्व में रहना चाहिये।

मनुष्य सम्यग्दृष्टि हो जाता है और बाद में आयु का बंध करता है तो देव में चला जाता है। आप कहेंगे किसीने पहले मनुष्य आयु बांधी है और बाद में सम्यग्दृष्टि हुआ हो तो? भोगभूमि में जायेगा; पर उसके लिये कंडिशन है – वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि होना आवश्यक है। यानी हमारे यहां का कोई भी सम्यग्दृष्टि मनुष्य मरकर मनुष्य नहीं हो सकता सम्यक्त्व के साथ; क्योंकि यहां सम्यक्त्व प्राप्त करे और विदेहक्षेत्र में जाकर डायरेक्ट मोक्ष चला जाये ऐसा नहीं हो सकता। हां, मिथ्यात्व में जाने के बाद मरकर वह जा सकता है वहां पर, मिथ्यात्व में जन्म लेकर; फिर वहां से वह मोक्ष चला जा सकता है। इसका अर्थ क्या है? अभी इस पंचमकाल का कोई भी मनुष्य सम्यग्दृष्टि, सम्यक्त्व के साथ मरकर

यहां से विदेहक्षेत्र में जन्म नहीं ले सकता; देव में चला जायेगा। वहां एक भव करके फिर मनुष्य होकर वह विदेहक्षेत्र में सम्यक्त्व के साथ आयेगा। हमारे यहां पंचमकाल चल रहा है। वह जीव वहां पर जहां चौथा काल चलता है, वहां जन्म लेकर मोक्ष जा सकता है। यानी मनुष्य से मनुष्य, मनुष्य यह जो लगातार मनुष्यभव में रहने का काल कितना है? तो वहां कह दिया कि कर्मभूमि के पूर्वकोटि के एक-एक भव ऐसे पृथक्त्व यानी ४७ भव और अंतिम भव उसको उत्तम भोगभूमि में भेजेंगे हम। यह भोगभूमिवाला भव लगातार मनुष्यपर्याय में रहने का अंतिम भव होगा क्योंकि भोगभूमि का मनुष्य मरकर नियम से देव में ही जाता है। मिथ्यादृष्टि है तो भवनत्रिक यानी भवनवासी, व्यंतर या ज्योतिषि में जाता है और भोगभूमि के सम्यग्दृष्टि सौधर्म और ईशान में जाते हैं। ये सारे नियम हैं। यानी यह जो बता रहे हैं; यह जो पृथक्त्व पूर्वकोटि की व्हॅल्यू कितनी है? यह हमें नक्की करना है। तो मनुष्य में यानी पर्याप्त मनुष्यों के भव हम गिनेंगे, लगातार आठ भव पुरुष के, लगातार आठ भव नपुंसक के, लगातार आठ भव स्त्री के होते हैं। फिर एक अपर्याप्त मनुष्य का भव बीच में करके फिर लगातार आठ और आठ और आठ होते हैं। यानी पहले चौबीस, फिर एक अपर्याप्त का या अधिक से अधिक अपर्याप्त मनुष्य के भव हो गये तो भी आठ भव हो गये और फिर आठ, आठ और आठ, चौबीस बार पर्याप्त मनुष्य के भव होते हैं।

इन सबको मिलकर पृथक्त्व कहेंगे। हर एक भव मान लेते हैं पूर्वकोटि का होगा यानी उसकी जो कर्मभूमि की मॅक्झिमम आयु है, यानी पहले ८ × ३ = २४ पर्याप्त मनुष्यभव के २४ पूर्वकोटि, फिर बीच में लब्धिअपर्याप्त मनुष्यभव का एक अंतर्मुहूर्त, उसके बाद दुबारा २४ पर्याप्त मनुष्यभव के २४ पूर्वकोटि इसतरह पर्याप्त मनुष्य के ४८ भवों का काल ४८ पूर्वकोटि हुआ। इसका काल और बढ़ाने के लिये अड़तालीसवां जो भव है वह उत्तम भोगभूमि का तीन पल्यवाला अगर सोचेंगे, तो मनुष्य में रहने का लगातार अधिक से अधिक काल कितना है, तो सैंतालीस पूर्वकोटि, प्लस तीन पल्य। अड़तालीस भव हुये, अड़तालीसवां पर्याप्त भव हमने भोगभूमि का लिया इसलिये सैंतालीस पूर्वकोटि, उसमें एक अपर्याप्त का, लब्धिअपर्याप्त का भव भी उसीमें गिन लिया। यहां पृथक्त्व की व्हॅल्यू इतनी होती है। यह लगातार भवों की बात है। आगम में कहीं भी ऐसा नहीं लिखा है कि २००० सागर की त्रसस्थिति में ४८ ही मनुष्य के भव मिलते हैं। इस बात पर बहुत बहस चल रही है विद्वानों में; क्योंकि बहस करने के लिये फुर्सत कहां है दूसरों को?

निलेशभाई, यह जो बात आती है न, ४८ ही भव मिलते हैं - ४८ ही भव मिलते हैं, उस संबंधी खास बात मैं वेदमार्गणा की अपेक्षा बताना चाहती थी आपको। जो विषय हमने छोड़ा था वह स्त्रीवेद की बात बाद में करेंगे; पहले पुरुषवेद को लेते हैं यहां। यह ४८ भवों को समझाने के लिये, उसकी चर्चा करने के लिये कि कोई पुरुषवेद में लगातार रहे, यानी पुरुष मरकर पुरुष, पुरुष मरकर पुरुष, पुरुष मरकर पुरुष रहे, नारकी तो सारे नपुंसकवेदी हैं यानी पुरुष ही में रहने का लगातार काल कितना है; तो कहते हैं, सौ सागर पृथक्त्व। उसीको पृथक्त्व सौ सागर भी कहेंगे, पृथक्त्व शब्द कहीं पर भी लगाओ। स्त्रीवेद में हमने क्या पढ़ा था, पृथक्त्व सौ पल्य या सौ पल्य पृथक्त्व। यानी पृथक्त्व सौ के लिये हम नौ सौ लेंगे, तो स्त्रियों में हम नौ सौ पल्य मान लेते हैं और पुरुषों में नौ सौ सागर हो जायेंगे। बहुत ज्यादा हैं। मैं क्या कहना चाहती हूं कि ४८ की बात हमें सिद्ध करनी हैं यानी ४८ भव होते हैं कि अधिक हो सकते हैं इसकी हमें चर्चा करनी हैं। तो देखो, यह वेदमार्गणा का प्रकरण निकालना, वेदमार्गणा जो है। हेमचंदजी नहीं आये हैं, उनके बहुत प्रश्न होते हैं इसके बारे में। देखो, वेदमार्गणा में, निकालना पुस्तक, पेज नंबर २७५।

पुरुषवेद की बात देखते हैं हम यहां पर, २७६ पृष्ठ पर मैं बताना चाहती हूं; स्त्रीवेद की बात बाद में देखेंगे हम; चौथी लाइन, २७६ पेज पर, पुरुषवेद में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल। हेमचंदजी आ गये, चलो अच्छा है। पुरुषवेद में मिथ्यादृष्टि का काल बता रही हूं क्योंकि सम्यक्त्व प्राप्त होने के बाद जीव लगातार पुरुषवेद में ही रहता है। यहां मिथ्यादृष्टि की बात चल रही है तो मिथ्यात्व अवस्था में पुरुषवेद में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? तो पृथक्त्व सौ सागर प्रमाण है। इसका अर्थ क्या है वह देखते हैं, यानी कोई पुरुषवेदी पर्याप्त मनुष्य हुआ, तिर्यंच हुआ या देव हुआ, तो इन तीन ही भवों में घूमता रहे तो लगातार कितने काल तक घूमता रहेगा? तुम कहते हो मनुष्य में से मनुष्य, मनुष्य में से लगातार भले पुरुष भी होवे, तो कितनी बार पुरुष-पुरुष-पुरुष होगा? आठ बार। अभी वह अपर्याप्त का भव यहां हम नहीं ले सकते; न स्त्री के भव ले सकते हैं; न नपुंसक के भव ले सकते हैं। यानी आठ बार पुरुष हुआ, आठवीं बार का हम भोगभूमि में रखेंगे या कर्मभूमि में उससे कुछ लेना देना नहीं, तो ये आठ भव हुये। भोगभूमि में भेजते हैं तो डायरेक्ट देव में ही जायेगा, पुरुष होगा। वहां से मनुष्य होगा या तिर्यंच होगा, पुरुष में आयेगा तो बीच में वह तिर्यंच या मनुष्य होना पड़ेगा; क्योंकि देव से निकलकर कोई दुबारा देव नहीं होता। देव

कोई मरकर इमीजिएट्लि देव नहीं होता; उसको मनुष्य या तिर्यंच में तो आना ही पडता है। यानी एक-एक भव बीच में देव का करेंगे और लगातार मनुष्य के तो आठ ही भव हो सकते हैं। तिर्यंच के कितने हो सकते हैं? संज्ञी के आठ और असंज्ञी के आठ, पुरुष में। यानी बारंबार उसको देव के भव करके फिर मनुष्य के या तिर्यंच के करने पड़ेंगे, तो कितना नौ सौ सागर करीबन मान लो, तो नौ सौ सागर में तो उसके अड़तालीस से अधिक भव हो सकते हैं। ख्याल में आती है न बात?

मैं क्या बताना चाहती हूं, ये ४८ ही बार मनुष्यभव मिलते हैं ऐसा जो हमें लगता हैं ऐसा नहीं है; वह लगातार भवों की बात है। त्रसपर्याय प्राप्त हुयी है और किसीको लगातार मनुष्य-मनुष्य, मनुष्यपना प्राप्त हो, मिथ्यात्व में ही ऐसा बन सकता है, तो वह लगातार मनुष्य के भव कितनी बार प्राप्त कर सकता है? तो आठ स्त्री के, आठ पुरुष के, आठ नपुंसक के फिर एक अपर्याप्त का भव, फिर चौबीस भव मनुष्य के, यह हो सकता है। सबको मिलता है ऐसी बात नहीं है। अब हम अपने विषय पर आते हैं जहां हमने छोड़ा था, २७५ पेज पर। *श्रोता: आपका कहना है २००० सागर में ४८ भव से ज्यादा भव हो सकते हैं?* ज्यादा भव भी हो सकते हैं, कितने होते हैं वह तो डिपेंड्स क्योंकि अभी तो हमने केवल पुरुषवेद की बात की और २००० सागर में तो तीनों वेद में घूमेगा वह, कभी नारकी भी होगा, कभी देव भी होगा। नारकी का भव मिले या देव का मिले, बीच में उसको मनुष्य या तिर्यंच तो होना ही पड़ता है। यह हो सकता है कि २००० सागर में वह मात्र तिर्यंच, देव और नारकी के ही भव करता रहे, एक भी मनुष्य भव न मिले, यह बात भी हो सकती है। परंतु तिर्यंच का एक भी भव न मिले ऐसा नहीं हो सकता। *श्रोता: क्यों?* ऐसा ही नियम है जिसको हम कहे न, अंतर जिसको कहते हैं, तिर्यंच; किसीने तिर्यंच आयु बांधी और तिर्यंच आयु बांधकर उसने, उस तिर्यंच ने मनुष्यायु बांधी या देवायु बांधी और फिर तिर्यंचायु बांधी ही नहीं; या तो वह मनुष्य में है या देव में है और आगे बताना चाहती हूं मैं, यह जो हमने पुरुषपर्याय में रहने का काल देखा सौ सागर पृथक्त्व और पुरुष होकर किसीने तिर्यंचायु बांधी, वह तिर्यंच ने देवायु बांधी। अभी यह सौ सागर पृथक्त्व में पहली आयु तिर्यंच की ली और बाद में लौटकर तिर्यंच में आने का उत्कृष्ट अंतर कितना होता है? वह भी सौ सागर पृथक्त्व जितना, उसमें तो तिर्यंच में आना ही पड़ता है। तो वह कौनसे भव करेगा? पुरुष है, एक भव तिर्यंच का किया है और सौ सागर पृथक्त्व के रिमेनिंग भवों

में वह लगातार देव और मनुष्य ही होगा यानी करीबन नौ सौ सागर, वह देव के और मनुष्य के ही भव करता रहेगा, तो मनुष्य के कितने भव हो गये! यह सब मैं महाबंध (महाधवला) के आधार से बता रही हूं। महाधवला में स्पष्टरूप से ये अंतर और कालों की बातें बतायी हैं। देखो, महाधवला हो, धवला हो, जयधवला हो, उसको कैसे पढ़ना है यह पता होना चाहिये यानी उसके काल और अंतर से बहुत सारी बातें सिद्ध होती हैं। लोग हमें पूछते हैं, कहां लिखा है? हमको बताओ और हम आपको पेज नंबर बतायेंगे, पर यह पेज नंबर में जो लिखा है उसका अर्थ कैसे निकालना यह हमें अगर नहीं मालूम होगा तो वह आगम पढ़कर भी उसमें से कुछ नहीं निकाल सकते। यह तो हम आपको इसतरह से प्रेरित करना चाहते हैं आगम पढ़ने के लिये, यह जो सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका में तो पं. टोडरमलजीसाहब ने बहुत कमाल की, गज़ब की बात कर दी है कि बहुत सरल करके लिख दिया है।

देखो, यहां क्या लिखते हैं? हम वेदमार्गणा की बात फिर पढ़ेंगे। **वेदमार्गणा में**, मिला न पेज २७५ लास्ट पॅरेग्राफ, **तीन वेदों में, मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिकरण तक और अवेदियों में, सामान्यवत् काल**, इसका अर्थ देखते हैं। सामान्यवत् यानी यहां गुणस्थानों की चर्चा चल रही थी। जैसे पहले गुणस्थानों का काल, किसी भी वेद की अपेक्षा वह तो वही होगा जो हमने पहले देखा था। यह काल की बात – अंतर की नहीं, काल की बात। यानी मिथ्यात्व का जघन्य में जघन्य काल कितना है? तो अंतर्मुहूर्त, जो सम्यक्त्व से गिरकर मिथ्यात्व में आता है और अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त करता है और अधिक से अधिक लंबा काल कितना है? अर्द्धपुद्गलपरावर्तन, यह तो हमने सामान्य से कथन किया, है न? अभी अलग-अलग वेदों में अलग-अलग बात होगी, नपुंसकवेद में लगातार अर्द्धपुद्गलपरावर्तन काल तक रह सकता है। पुरुषवेद में तो नहीं रह सकता, तो वह पुरुषवेद में मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल वहां सौ सागर पृथक्त्व कहना पड़ेगा। अब इसके लिये हम आगे पढ़ेंगे तो आपको ख्याल आयेगा देखो; **विशेष इतना**, विशेष इतना का अर्थ होता है, क्या डिफरन्स है। प्राकृत में उसको णवरी ऐसा कहते हैं, णवरी। यानी पहले जो बता दिया सब वेदों में ऐसा है, परंतु पं. टोडरमलजीसाहब का परंतु है न। यानी यहां विशेष क्या है? तो स्त्रीवेद में तो लगातार अर्द्धपुद्गलपरावर्तन काल तक नहीं रह सकता। तो स्त्रीवेद का जो उत्कृष्ट काल है, उसमें वह दो बार सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है और बीच में मिथ्यात्व में रह सकता है, जिसको हम मिथ्यात्व का सादिसांत काल कहेंगे। अथवा उस

मार्गणा में वह मिथ्यादृष्टि ही रहा तो जो मार्गणा का उत्कृष्ट काल है वही उस मार्गणा में मिथ्यात्व का उत्कृष्ट काल होगा।

श्रोता: लगातार कितना हुआ? यह देखो, **स्त्रीवेद में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पल्य**, यानी वह स्त्रीपर्याय छोड़कर नियम से नपुंसकवेदी या पुरुषवेदी होगा ही जीव। लास्ट टाइम ऐसी बात आयी थी, तब वे वाशीमवाले ही दौड़कर आये थे पूछने, तो क्या स्त्रीपर्याय का छेद हो जाता है? उसको छेद नहीं कहेंगे परंतु स्त्रीपर्याय छूटकर पुरुष या नपुंसक होगा ही क्योंकि यह कोई नियम नहीं है कि स्त्री मरकर स्त्री में ही जन्मे। कोई स्त्री मरकर पुरुष हो सकती है, नपुंसक हो सकती है, कोई पुरुष मरकर स्त्री या नपुंसक हो सकता है। ऐसा है न कि एक भव में वह पुरुष हुआ तो उसने कोई ठेका नहीं लिया है कि उसको कायम पुरुषपर्याय मिले और स्त्रियों का ऐसा नहीं कि सम्यक्त्व हुये बिना उसको पुरुषपर्याय नहीं मिलेगी; ऐसा नहीं है क्योंकि उसकी लिमिट कितनी है? सौ पल्य पृथक्त्व अथवा पृथक्त्व सौ पल्य। उसके बाद वह तो नियम से उसका वेद चेंज हो जायेगा अन्य वेदों में, वह जीव के भाव वैसे होंगे, उसको अन्य पर्याय मिल ही जायेगी, नियम से। इतने लंबे काल तक वही पर्याय चलेगी, स्त्रीपर्याय या पुरुषपर्याय या नपुंसक, ऐसा भी नहीं है। यह कम से कम उत्कृष्ट से उत्कृष्ट काल कितना है, उसको बताया जाता है। जैसे स्त्रीपर्याय में रहने का कम से कम काल कितना है? अंतर्मुहूर्त। अंतर्मुहूर्त का एक भव करेंगे तो अन्यत्र चला जायेगा जीव। *श्रोता: अपर्याप्त होगा?* अपर्याप्तवाला नपुंसकवेदी है, हां, सारे अपर्याप्त जो हैं न, लब्धिअपर्याप्त जीव, वे नपुंसकवेदी ही होते हैं। यानी स्त्रीपर्याय में जब कहेंगे अंतर्मुहूर्त, वह तो गर्भज लेना पड़ेगा, क्योंकि सम्मूर्च्छन भी सारे नपुंसकवेदी होते हैं।

श्रोता: यह वेद भाववेद की अपेक्षा से है? जब शास्त्रों में वेदों की चर्चा आती है तो भाववेद की अपेक्षा आती है। बहुत सारे तो द्रव्यवेद और भाववेद समान होते हैं; जो स्त्रियां हैं उनको स्त्रीवेद होता है; जो पुरुष है उनको पुरुषवेद होता है। परंतु कर्मभूमि के मनुष्यों और तिर्यंचों में ऐसा हो सकता है कि द्रव्य से तो पुरुष है और भाव से स्त्री है यानी उलट-पुलट हो सकता है। द्रव्य से यानी शरीर की अपेक्षा स्त्री है और भाव की अपेक्षा पुरुष है। यह यहां कर्मभूमि में हो सकता है; पर जो कोई भाववेद है वह जन्म से लेकर मरण तक वही रहता है; उसमें उलट-पुलट नहीं होता। यानी कुछ काल के लिये स्त्रीवेदी हुआ फिर

पुरुषवेदी हुआ, ऐसा नहीं है क्योंकि हमने सुना है बहुत जगह, ऐसा पढ़ाया भी जा रहा है और वे दृष्टांत भी देते हैं, किसका? रानी लक्ष्मीबाई का। वह स्त्रीवेदी जीव था और वह घोड़े पर बैठकर युद्ध में गया तो फिर पुरुषवेदी हो गया, ऐसा है नहीं; वेद का वह कार्य नहीं है। वेद का कार्य वह सेक्शुअल अॅट्रॅक्शन जिसको हम कहेंगे, उस संबंधी है। यह बाकी कौन युद्ध करते हैं, कि घोड़े पर बैठते हैं, कि धंधा करते हैं, कि व्यापार करते हैं – उससे स्त्रीवेद का या पुरुषवेद का कोई मतलब है नहीं।

तो यहां हम देखते हैं नीचे से तीसरी लाइन, **विशेष इतना** यानी डिफरन्स क्या है? **स्त्रीवेद में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पल्य प्रमाण** और आगे की बात महत्व की है; कोई स्त्रीपर्याय का जीव है; तो उसमें सम्यक्त्व में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? सम्यग्दृष्टि कोई रहा, स्त्रीपर्याय में है। *श्रोता: एक कोटिपूर्व।* एक कोटिपूर्व, हां, यह किसकी अपेक्षा कहा, मनुष्यों की अपेक्षा कहा और देवी की अपेक्षा भूल गये आप। *श्रोता: पचपन पल्य।* देवी की उत्कृष्ट आयु पचपन पल्य की होती है। तो वहां तो स्त्रीपर्याय में जन्म लिया है तो जन्म से मिथ्यादृष्टि है। कोई भी स्त्री जन्म से सम्यग्दृष्टि नहीं होती है। यहां भरतक्षेत्र में कोई भी पंचमकाल का पुरुष भी जन्म से सम्यग्दृष्टि नहीं होता है। कोई किसीको समझता है वह पूर्व भव में ऐसा-ऐसा सम्यग्दृष्टि हुआ था और अब यह उसका अवतार है तो समझना कैसा अवतार है? ख्याल में आया न? क्योंकि पंचमकाल के मनुष्य सारे ही जन्म से मिथ्यादृष्टि ही होते हैं। हम यहां स्त्री की बात कर रहे हैं। किसी देवी ने, जन्म से तो मिथ्यादृष्टि थी और फिर उसने सम्यक्त्व प्राप्त किया; तो मरण तक सम्यक्त्व बना रहेगा और मरकर वह पुरुषवेद में जन्म लेगी। यानी उसमें सम्यक्त्व में रहने का काल कितना है स्त्रीपर्याय में? कुछ कम पचपन पल्य। यानी वह बड़ी आयुवाली देवी होगी तो यह इतना घटित हो सकता है, यह इसका अर्थ है।

देखो, यहां ब्रॅकेट में जो लिखा है लास्ट लाइन में, **स्त्रीवेद सहित मनुष्यनी, तिर्यंचनी और देवियों के भवों में मिथ्यादृष्टि का काल बताया है।** यानी मिथ्यात्व गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल। **असंयत में**, यानी चौथे गुणस्थान में **देवियों की उत्कृष्ट आयु पचपन पल्य होती है, परंतु जन्म से कोई भी स्त्री असंयत गुणस्थान में नहीं होती। वहां जन्म के बाद सम्यक्त्व प्राप्त करेगी इसलिये देशोन**, देशोन यानी कुछ कम,

पचपन पल्य कहा तथा सम्यक्त्व के पश्चात् वह जीव पुरुषवेद सहित ही मनुष्य में जन्मेगा। यानी वह देवी है, वह भी पुरुष होकर यहां जन्म लेगी। आगे पढ़ेंगे – **पुनश्च पुरुषवेद में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ सागर प्रमाण है और नपुंसकवेद में मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल** कितना है? **असंख्यात पुद्गलपरावर्तन।** लौटकर हम वह परावर्तन पर आते हैं। क्योंकि ये सारे एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के जीव नपुंसकवेदी ही होते हैं और हमने देखा है; एकेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन प्रमाण होता है इसलिये नपुंसकवेद का यह उत्कृष्ट काल बिताया। मरकर वह फिर नपुंसकवेदी हुआ, फिर मरकर फिर नपुंसकवेदी हुआ, यहां एकेन्द्रियों की अपेक्षा यह बात बतायी जा रही है।

आगे हम कषायमार्गणा की बात करते हैं, यह बात समझ में आयी न, त्रस की स्थिति जो २००० सागर की है उसमें मनुष्य के अनेक भव हो सकते हैं यह बात हमने इस पर से सिद्ध कर दी है। *श्रोता: इसका अर्थ ऐसा है कि त्रस के २००० सागर में मनुष्य के ४८ से अधिक भव हो सकते हैं?* हां, क्योंकि हम सुनते हैं न कि मनुष्य के इतने ही भव मिलते हैं; परंतु वह लगातार भवों की बात है; क्योंकि हमने जो बात बतायी है उसीसे यह बात सिद्ध होती है। धवला आदि में तो उसके कितने भव – कितने यानी हर स्वर्ग के कितने भव होते हैं, उसकी भी बात बतायी है। जैसे देवों के ये हमने देखे न, नौ सौ सागर समझ लो। एक बार पहला भव तिर्यंच किया और बाकी भव तो उसके मनुष्य और देवों के होंगे। देवों के दस हजार वर्ष की आयु और एक मनुष्य का भव भी लेंगे और फिर वह आयु भी लेंगे सागरों की, फिर भी एक-एक स्वर्ग में लगातार कितने भव कर सकता है उसके लिये भी लिमिट है। लगातार ऊपर के ही करेगा, लगातार नीचे के ही करेगा, ऐसा भी नहीं है। इससे सिद्ध होता है कि २००० सागर की त्रसस्थिति में मनुष्यों के अनेक भव हो सकते हैं।

अब हम आगे देखते हैं कषायमार्गणा में; ये कषाय कहां तक कौनसे गुणस्थान तक होते हैं मालूम है? दसवें तक लोभ होता है और क्रोध, मान, माया तो नौवें तक होते हैं। तो जैसे हमने सामान्य का काल देखा था, वैसे वहां पर यहां कषायमार्गणा में एक जीव की अपेक्षा जब बात करेंगे; एक जीव के किसी एक कषाय में रहने का काल कितना है? तो

अंतर्मुहूर्त। नाना जीवों की अपेक्षा हो तो हम बात करेंगे वह अलग है। ख्याल में आती है बात यह? हम किसीको सर्टिफिकेट देते हैं; बहुत क्रोधी है, बहुत लोभी है, परंतु वह क्रोध कषाय हो या लोभ कषाय हो, वह कितने काल तक लगातार चलता है? अंतर्मुहूर्त में तो नियम से पलटता ही है और ये अंतर्मुहूर्त बहुत छोटे-छोटे हैं। योग हो या कषाय हो, दोनों ही अंतर्मुहूर्त में पलटते हैं। हां, एक एकेन्द्रिय पर्याय ऐसी है कि लगातार काययोग-काययोग-काययोग चलेगा असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक। अभी हम योगों के विस्तार में नहीं जायेंगे। उसमें भी औदारिक काययोग होगा तो बीच में औदारिकमिश्र काययोग भी होगा उसको क्योंकि हर बार वह नयी पर्याय में जायेगा तो औदारिकमिश्र भी होगा।

अब यहां आगे बढ़ेंगे, ज्ञानमार्गणा में, देखो **तीन कुज्ञानों और पांच सुज्ञानों में अपने-अपने गुणस्थानों का काल है** जो हमने गुणस्थानों के काल पहले देखे थे। यहां विशेष क्या बता रहे हैं, **विभंगज्ञान में**; यह विभंगज्ञान कहना किसे? *श्रोता: कुअवधिज्ञान को।* कुअवधिज्ञान को विभंगज्ञान कहते हैं। तो कोई जीव विभंगज्ञान में लगातार कितने काल तक रह सकता है, यह मेरा प्रश्न है। हां, निलेशभाई, आप बतायेंगे? *श्रोता: ३३ सागर।* कहां का? *श्रोता: नरक का, सातवें नरक का।* नरक का लेना कि सर्वार्थसिद्धि का लेना? *श्रोता: नरक का।* सर्वार्थसिद्धि का क्यों नहीं लेना? वहां सारे सम्यग्दृष्टि हैं। हां, यहां कोई प्रश्न था सर्वार्थसिद्धि के सम्यग्दृष्टि के बारे में, मुझे याद आया। यहां एक प्रश्न है कि *सर्वार्थसिद्धि के देव क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही होते हैं या क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी भी हो सकते हैं?* आपका क्या कहना है? *श्रोता: दोनों हो सकते हैं।* हां, दोनों हो सकते हैं, क्षायिक तो हो ही सकते हैं क्योंकि क्षायिक सम्यक्त्व के साथ कोई वहां उत्पन्न हो सकता है, सर्वार्थसिद्धि में। तो वहां कोई औपशमिक सम्यग्दृष्टि होंगे कि नहीं होंगे? द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के साथ उपशम श्रेणी चढ़नेवाले जीव ग्यारहवें गुणस्थान में मरकर सर्वार्थसिद्धि में जायेंगे तो, पहले अपर्याप्त अवस्था में तो द्वितीयोपशमवाले रहते हैं, बाद में नियम से वे वेदक सम्यग्दृष्टि ही होंगे न, द्वितीयोपशम में से वेदक हो गये और एक अंतर्मुहूर्त छोड़ दो, बाकी पूरे ३३ सागर तक तो वेदक सम्यक्त्व में ही रहेंगे। यानी वहां तीनों ही सम्यक्त्व हैं।

श्रोता: वहां जाने के बाद क्षायिक नहीं होंगे? देखो, क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करने का जो कार्य है, वह कर्मभूमि के मनुष्य के ही होता है और वह भी कहां होता है? तीर्थंकरों

के, केवली के पादमूल में। यानी यहां से क्षायिक लेकर वहां कोई जन्म लेता है, कर्मभूमि के मनुष्यों को छोड़कर अन्य भवों में कोई क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता। *श्रोता: तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ भी यहीं केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में होता है?* हां, तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ भी यहीं केवली, श्रुतकेवली के पादमूल में होता है। एक प्रश्न और है यहां, उसको भी लेते हैं, चौथे, पांचवें आदि गुणस्थानों में रहनेवाले जीवों की संख्या निश्चित है। चौथे में कितने जीव रहते हैं? तो असंख्यात जीव, चारों गति की अपेक्षा। पांचवें में कितने हैं? वे भी असंख्यात हैं क्योंकि तिर्यंचों में असंख्यात जीव पांचवें गुणस्थानवर्ती हैं। *प्रश्न: जैसे तीन कम नौ करोड़ मुनिराजों की संख्या है, यानी मुनिराजों की संख्या कितनी है? तो यह प्रश्न है, यह जघन्य है या उत्कृष्ट है?* इसको उत्कृष्ट बताया जाता है। मॅक्झिमम कितने हो सकते हैं यह उसकी संख्या है। कहीं भी जो संख्या बतायी जाती है अधिक से अधिक कितनी है उसकी यह बात है। *श्रोता: द्रव्यलिंगी और भावलिंगी दोनों होते हैं ये तीन कम नौ करोड?* अरे! मुनिराज तो उन्हींको कहेंगे जो भावलिंगी हैं। *श्रोता: यह जो आपने बताया श्रेणी चढ़नेवाले मरकर सर्वार्थसिद्धि में जायेंगे?* हां क्योंकि देखो, सर्वार्थसिद्धि में शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट अंश है और बहुत सारे जीव तो उपशमश्रेणी में मरकर वहां उत्पन्न होंगे। देखो, वैमानिक देवों की वहां की जो लेश्या होती है, वहां उत्पन्न होनेवाले जीव का पूर्वभव में उसी लेश्या में मरण होता है। द्वितीयोपशमवाले जीव के श्रेणी में तो शुक्ललेश्या ही होती है। तो ये शुक्ललेश्यावाले के कोई ग्यारहवें गुणस्थान में मरेंगे या श्रेणी में मरेंगे, हम एक गुणस्थान का नाम नहीं लेंगे। आयु तो उन्होंने छठे में बांधी थी ३३ सागर की और मरण हुआ उनका उत्कृष्ट अंश में, द्वितीयोपशमवाले ग्यारहवें में मरकर, तो सर्वार्थसिद्धि में चले जायेंगे। वहां तो शुरुआत में वे द्वितीयोपशमवाले हैं और बाद में वे वेदक यानी क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि हो जाते हैं।

श्रोता: करण के परिणाम वहां करेंगे? देव होकर बाद में करण परिणाम होकर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करेंगे? देखिये, आपका प्रश्न है द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कहां करेंगे? द्वितीयोपशम सम्यक्त्व की प्राप्ति यानी वह जो कार्य होता है वह सातवें गुणस्थान में ही होता है; जिसको हम सातिशय अप्रमत्त कहेंगे। मनुष्य में ही होगा, मुनिराज के। उसके बाद सातवां-छठां, सातवां-छठां, हज़ारों बार होगा फिर वह जीव उपशमश्रेणी चढ़ेगा। चढ़कर उतर भी सकता है, ग्यारहवें से फिर लौटकर दस, नौ, आठ, सात, छह, फिर छह में से

पांच और चार में भी जा सकता है। ये सारे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के गुणस्थान हैं। द्वितीयोपशम सम्यक्त्व के लिये जो करण करता है वे करण तो उसने सातवें गुणस्थान में किये थे। द्वितीयोपशम के बाद में जो करण किये थे, वे चारित्रमोह की उपशमना करने के लिये तीन करण और किये थे। जो एक करण उसका सातवें में हुआ अध:करण, आठवें में अपूर्वकरण हुआ, नौवें में अनिवृत्तिकरण हुआ, फिर वह ग्यारहवें तक गया है, वहां मरण हुआ, मरण होते ही चौथे में गया है तो चौथे के योग्य वहां सभी बातें चलेगी, उदय भी और बंध भी, सभी बातें। यहां ग्यारहवें में थे और वहां देव में जाकर ऑर्डिनरि चौथे गुणस्थान जैसी बातें शुरू हो जाती हैं।

अभी आगे बढ़ेंगे हम, **विभंगज्ञान** की बात चल रही थी, यहां क्या लिखा है, **देशोन तैंतीस सागर** कहा, इसका अर्थ क्या है देखो, नारकी और देव में, अवधिज्ञान जिसको हम सामान्य से अवधिज्ञान कहेंगे, वह तो उस भव में नियम से होता ही है जिसको हम भवप्रत्यय अवधिज्ञान कहते हैं। सुअवधिज्ञान तो सम्यग्दृष्टि के होगा और कुअवधिज्ञान या विभंगज्ञान मिथ्यादृष्टि के होगा। परंतु अपर्याप्त अवस्था में विभंगज्ञान नहीं होता। *श्रोता: किसको?* नारकी या देव को अपर्याप्त अवस्था में विभंगज्ञान नहीं होता। पर्याप्त होने पर विभंगज्ञान की नियम से प्राप्ति हो जाती है। इसलिये कुछ कम ३३ सागर कह दिया यदि वह मिथ्यात्व में रहा तो। बीच में सम्यग्दृष्टि हुआ तो सुअवधिज्ञान हो जाता है। दूसरी बात, मनुष्य और तिर्यंच में भी विभंगज्ञान हो सकता है, वह लगातार कितने काल तक रहता है? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त, क्यों? मनुष्य की आयु कितनी लंबी है? पूर्वकोटि तक लगातार रहेगा कि नहीं रहेगा? *श्रोता: नहीं रहेगा, कषाय की वृद्धि होगी।* कषाय हुआ तो क्या, कषाय से क्या संबंध है अवधिज्ञान का? यह अंतर्मुहूर्त तक ही रहता है। मनुष्य और तिर्यंच में विभंगज्ञान अंतर्मुहूर्त तक ही चलता रहता है, लगातार अधिक काल तक नहीं, बारंबार हो सकता है। यह बात मुझे भी मालूम नहीं थी, हमारे महाधवला के स्वाध्याय में यह बात हमें विशेषरूप से ख्याल में आ गयी। हमने देखा है कि ये कुअवधिज्ञानवाले होते हैं वे आगे की, पीछे की कुछ बातें बताते हैं; परंतु उनका वह कुअवधिज्ञान कंटिन्युअस नहीं रहता, बारंबार हो सकता है। सम्यग्ज्ञान प्राप्त होने पर मनुष्यों का अवधिज्ञान यानी सुअवधिज्ञान तो करोड़ पूर्व तक लगातार रहेगा। यहां भोगभूमि के सम्यग्दृष्टि को लगातार तीन पल्य तक रहेगा वैसे कुअवधिज्ञान अंतर्मुहूर्त से अधिक काल तक लगातार नहीं रह सकता।

श्रोता: लेकिन विभंगज्ञान अंतर्मुहूर्त तक ही रहता है? हां, मनुष्यों और तिर्यंचों में विभंगज्ञान अंतर्मुहूर्त तक ही रहता है। *श्रोता: क्यों, क्यों?* ऐसा ही स्वरूप है। क्योंकि शास्त्र में यह बात आती है आयु के बंध के बारे में कि आयु का बंध एक बार होता है, फिर दुबारा भी हो सकता है जिसको अपकर्षकाल कहते हैं। यानी अपकर्षकाल में आयु का बंध होता है। देव और नारकियों में उनकी आयु के अंतिम छह महीनों में आयु का बंध होता है तो उनके अपकर्षकाल भी अंतिम छह महीने में रहते हैं। कर्मभूमि के मनुष्यों और तिर्यंचों में आयु बंध अंतिम त्रिभाग में होता है जो अधिक से अधिक पूर्व कोटि का त्रिभाग हो सकता है। अब इसमें आयुबंध के जघन्य अंतर की बात आती है। यानी एक बार आयु बंध हुआ फिर दुबारा कब होगा? तो छोटे में छोटा, त्रिभाग का त्रिभाग, त्रिभाग का त्रिभाग, त्रिभाग का त्रिभाग करते करते सातवें और आठवें त्रिभाग के बीच में यानी सातवें और आठवें अपकर्षकाल के बीच में कम से कम अंतर अंतर्मुहूर्त का रह सकता है। यह बात शास्त्र में आती है। मनुष्यों और तिर्यंचों के विभंगज्ञान में आयु बंध के जघन्य अंतर की बात आती है तो कहते हैं वहां अंतर नहीं होता यानी मनुष्यों और तिर्यंचों में विभंगज्ञान में आयु का बंध एक बार होता है तो दुबारा नहीं हो सकता। क्योंकि उनके विभंगज्ञान का काल इतना छोटा अंतर्मुहूर्त है कि उस छोटे अंतर्मुहूर्त के अंदर आयु का बंध अंतर्मुहूर्त होकर रुक जाये और फिर दुबारा हो इतना उसका काल बड़ा नहीं रहता। परंतु देव और नारकियों में विभंगज्ञान लगातार चलने के कारण उनके आयु बंध का जघन्य अंतर अंतर्मुहूर्त घटित हो सकता है। तो इससे यह निश्चित हो जाता है कि देवों में और नारकियों में तो विभंगज्ञान लगातार रहता है और मनुष्य और तिर्यंच में वह लगातार नहीं रहता, अंतर्मुहूर्त से अधिक उसका काल नहीं है।

आगे देखते हैं थोड़ा, संयममार्गणा, दर्शनमार्गणा ठीक, आगे लेश्यामार्गणा में भी बहुत भेद हैं, उसमें भी हम विस्तार में नहीं जायेंगे। एक बात यह है कि नारकी की जो लेश्या है उसके पूरे भव तक वही लेश्या रहती है। ऊपर-ऊपर के नरकों में तीसरे नरक तक कापोतलेश्या, बीचवाले नरकों में नीललेश्या और नीचेवाले नरकों में कृष्णलेश्या होती है। *श्रोता: द्रव्यलेश्या?* द्रव्यलेश्या सभी नारकियों में काली यानी कृष्ण ही होती है, यहां भावलेश्या की बात है। देवों में भवनत्रिक और सौधर्म-ईशान में पीतलेश्या, सनत्कुमार से लेकर सहस्रार तक पद्मलेश्या और ऊपर के देवों में शुक्ललेश्या होती है – भाव से भी

और द्रव्य से भी। देवों और नारकियों में उनकी लेश्या उस भव में कायम रहती है। मनुष्यों और तिर्यंचों में चौथे गुणस्थान तक छहों लेश्या होगी और वह एक-एक अंतर्मुहूर्त में नियम से पलटती रहेगी। मनुष्यों और तिर्यंचों में ये लेश्या पलटती रहती हैं; उनमें लेश्या का काल अंतर्मुहूर्त है, उससे ज्यादा नहीं है। यानी शुक्ललेश्यावाला भी कृष्णलेश्या तक जाता है फिर कृष्णलेश्या से शुक्ललेश्या तक उसके परिवर्तन होते रहते हैं। मात्र तेरहवें गुणस्थान का जो उत्कृष्ट काल है उसमें शुक्ललेश्या लगातार रहेगी, वहां शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट काल कुछ कम करोड़ पूर्व होगा।

आगे आते हैं हम २७७ पेज पर। भव्यमार्गणा में, **भव्य में मिथ्यादृष्टि** यानी मिथ्यात्व में भव्य हुआ तो क्या है? उसका मिथ्यात्व का काल कितना हो सकता है? **अनादिसांत**। अनादि का है और सम्यक्त्व प्राप्त हुआ तो सांत हुआ है। **या सादिसांत**, यानी एक बार सम्यक्त्व प्राप्त हुआ, फिर मिथ्यात्व में आया, फिर सम्यग्दृष्टि हुआ। हां, ऐसे भी कोई भव्य होंगे, भव्य तो हैं, अनादिअनंत मिथ्यात्व में रहेंगे, ऐसे भी होंगे। *श्रोता: उनको दूरानुदूर भव्य कहते हैं?* हां, उनको कहते हैं दूरानुदूर भव्य या अभव्यसम भव्य ऐसा कहेंगे उनको और सादिसांत जो हैं, एक अंतर्मुहूर्त में फिर सम्यक्त्व प्राप्त करेंगे, या लंबे से लंबे रहेंगे तो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक मिथ्यात्व में रह सकते हैं। देखो, **संज्ञीमार्गणा में पुरुषवेदवत्** उन्होंने काल बताया है। पुरुषवेदवत् का अर्थ है संज्ञी में रहने का, संज्ञी पंचेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? हमने देखा था वह सौ सागर पृथक्त्व, इतना इसमें भी हो सकता है। **असंज्ञी में जघन्य क्षुद्रभव और उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गलपरावर्तन** क्योंकि एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक सभी जीव असंज्ञी ही हैं, तो यह होती है बात। एक क्षुद्रभव की बात मैं जरा आपको बताना चाहती हूं, पहले यह आहारमार्गणा की बात देख लेते हैं। **आहारमार्गणा में आहारक मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात कल्पकाल प्रमाण जो अंगुल के असंख्यातवें भाग है उसप्रमाण काल है,** उसका अर्थ हम देखेंगे क्योंकि ऐसे पढ़ते हैं तो ख्याल में नहीं आता ये क्या कहना चाहते हैं।

पहले में पहले आहारक का अर्थ क्या है? हम दो बार भोजन करते हैं तो हम आहारक हो गये, ऐसा है? आहारकशरीर की भी बात नहीं है यहां पर। शरीर के परमाणुओं का ग्रहण होता है उसको हम कहेंगे आहारक। जीव किसी भी – औदारिक हो, वैक्रियिक

हो या आहारक हो; शरीर के परमाणुओं का ग्रहण करता है उस जीव को कहेंगे आहारक और जब शरीरसंबंधी परमाणुओं का ग्रहण नहीं करता, तब उस जीव को हम कहेंगे अनाहारक। यह अनाहारक कब हो सकता है? विग्रहगति में, वह भी मोड़वाली गति में। एक भव से मरकर मोड़ सहित दूसरे भव में चला जाता है, तो जब मोड़ के पहले-पहले, उसको जहां कार्माण काययोग कहने में आता है; वहां उसके शरीर के परमाणुओं का ग्रहण नहीं है। पहुंचने के समय में ही वह शरीर के परमाणुओं का ग्रहण शुरू करता है। उसमें कर्मों के उदय निमित्त होते हैं। शरीर नामकर्म का उदय वहां पहुंचते ही चालू हो जाता है तो उस जाति के परमाणुओं का ग्रहण होता है। तो यह ग्रहण कितने काल तक चलता है? तो हर समय। यानी हम इस मनुष्यपर्याय में आये हैं। हम, आप सब, तो जब हमने शरीर धारण करना शुरू किया, पहले समय में अनंत परमाणु लिये, दूसरे समय में अनंत लिये, तीसरे समय... यह कब तक चलता है? मरण के समय तक। तो हम लगातार कैसे हैं? तो आहारक हैं। यह बात ख्याल में आयी? तो आहारक-आहारक-आहारक हम रहते हैं और अनाहारक कब कहलायेंगे? जब मोड़ सहित अन्य भव में गमन होगा तब अनाहारक होंगे। परंतु जो मोड़ नहीं लेता है, सीधी गति में - ऋजुगति में परभव में जाता है यानी यहां मरा और बिलकुल इसी डायरेक्शन में यहां कहीं उसका जन्म हुआ। तो उसको हम कहेंगे आहारक था, आहारक ही रह गया। बीच में मोड़ लिये बिना उसने अन्य भव में गमन किया है तो वह आहारक का आहारक रहा।

फिर उस भव से अन्यत्र जाते समय, वह भी वैसे ही ऋजुगति से गया है; भले देव में जाये, नरक में जाये, तिर्यंच में जाये, कहीं पर भी, उसने ऋजुगति से गमन किया है। हां, कभी एकेन्द्रिय हुआ, कभी पंचेन्द्रिय हुआ, उससे कोई मतलब नहीं है। जब-जब जन्म लिया तो बिना मोड़ के ऋजुगति से उसने जन्म धारण किया है; ऐसा लगातार कितने काल तक हो सकता है? तो यहां क्या लिखा है? देखो। **असंख्यातासंख्यात कल्पकाल,** जिसको दूसरी भाषा में कहना है तो **अंगुल के असंख्यातवें भाग।** जो मैंने सुबह यह बात उठायी थी, अंगुल के असंख्यातवें भाग में जितने प्रदेश हैं उतने समय, उन समयों को हम कल्पकाल में यानी सागरों में गिनेंगे। तो कल्पकाल का अर्थ होता है २० कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण एक कल्पकाल होता है। ऐसे एक, दो, चार, ऐसे कितने, असंख्यातासंख्यात कल्पकाल तक वह लगातार आहारक का आहारक रहा। यानी हर बार बिना मोड़ के

ऋजुगति से उत्पन्न हुआ। इससे और भी एक भ्रान्ति का निराकरण होता है। *श्रोता: यह जानने का निष्कर्ष क्या है?* निष्कर्ष यह है कि ऐसा हमने सुना है; ऐसा कहीं पढ़ाया भी जा रहा है कि जीव मरने के बाद ऊर्ध्वगमन ही करता है। *श्रोता: स्वर्गवासी होगा।* स्वर्गवासी होगा? एकेन्द्रिय कहां से स्वर्गवासी होगा? यह स्वर्गों का एकेन्द्रिय होगा, क्या कहना चाहते हैं? यानी ऊर्ध्वगमन ही करता रहे तो जो यहां से मरकर नरक में जाता है, मान लेते हैं, तो उनका कहना है पहले ऊर्ध्व में यानी ऊपर जाता है, फिर ऐसा आड़ा जाता है, फिर ऐसा नरक में गमन करता है। यानी ऐसा ऊपर गया, फिर ऐसा आड़ा हुआ, एक मोड़ हुआ, फिर नीचे आया तो दूसरा मोड़ हुआ, फिर और तीसरा मोड़ लेना पड़ेगा क्योंकि उसका नरक कहां है? क्या पता। तो ऊपर कितना जाता है? एक फूट ऊपर जाता है कि सात राजू ऊपर जाता है फिर मोड़ लेता है? और बिना प्रयोजन तो गमन होता नहीं है। जिसने नरकायु बांधी है; नरकगति का उदय उसका शुरू हुआ है; तो डायरेक्ट नरक की तरफ जायेगा। ऊपर जाकर नीचे नहीं जायेगा। यह भ्रमणा जो चल रही है; वह क्या है, उसको बता रही हूं। यानी एक ही समय में उत्पन्न होनेवाला है, तो भी ऊपर जायेगा और नीचे आयेगा इतना समय कहां है उसको। हां, जहां मनुष्य में है, उसीके नीचे उसका बिल है तो डायरेक्ट नीचे चला जायेगा। स्वर्ग में जाना है तो डायरेक्ट ऊपर जायेगा। तिर्यंच में जाना है तो पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ऊपर नीचे, ये छह दिशाओं में जा सकता है, डायरेक्टलि। यानी पहले ऊपर जाता है और बाद में नीचे आता है यह कथन बिलकुल आगम से विरुद्ध कथन है। हां, किसीने सुना है तो समझ लेना अभी, सही क्या है वह हमको समझना है। हम किसीकी आलोचना नहीं करना चाहते, हमें तो आगम से चलना है, बस। इसीसे, यानी इतने लंबे काल तक लगातार आहारक का आहारक रहा है और हर बार ऊपर-ऊपर-ऊपर-ऊपर जायेगा यह कैसे पॉसिबल है। ख्याल में आती है बात? हां, अब अनाहारक में देखते हैं।

श्रोता: वायुकायिक हैं ऊपर की लेअर में? आप प्रश्न पूछ रहे हैं कि ऊपर के जो वायुकायिक हैं न, कहां के? जहां सिद्ध भगवान विराजमान हैं, अंतिम वातवलय में, वे जीव मर जायेंगे तो कहां जाना पड़ेगा? ऊपर तो जा नहीं सकते। या तो आड़े जायेंगे या नीचे आयेंगे। देखो, यहां अनाहारक की भी बात है। अनाहारक में रहने का उत्कृष्ट काल देखना है हमें। अनाहारक कभी देखा हमने? मोड़वाली गति में। तो उसके उत्कृष्ट कितने

समय होते हैं? तो तीन समय। यानी अधिक से अधिक तीन मोड़ लेते हैं। ये तीन मोड़ भी एकेन्द्रियों में घटित होते हैं। कोई भी एकेन्द्रिय मरकर पंचेन्द्रिय में आयेगा तो दो मोड़ से ज्यादा नहीं लगते। कोई पंचेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय में या त्रस में जन्म लेगा तो दो मोड़ से अधिक मोड नहीं लगते, क्योंकि वह त्रसनाली के अंदर ही अंदर उसको गमन करना है। जो एकेन्द्रिय से मरकर, वह भी सूक्ष्म एकेन्द्रिय में ही बात घटित की है शास्त्र में, उन्हींमें यह बात पॉसिबल है कि उनके तीन मोड़ लेने पड़ सकते हैं। इसलिये विग्रहगति की अपेक्षा अनाहारक का उत्कृष्ट काल बताया है, तीन समय। वह भी मिथ्यात्व गुणस्थान में बताया है। चौदहवें गुणस्थान में जीव अनाहारक है और उसका काल अंतर्मुहूर्त है। अभी हम यह मार्गणाओं में काल की बात छोड़ेंगे, थोड़ा आगे बढ़ेंगे अपने विषय की तरफ।

हमने छह प्रकार के काल देखे थे, है न? याद है कि भूल गये? *श्रोता: क्षुद्रभव की बात बतानेवाले थे।* क्षुद्रभव की बात पहले करेंगे, चलो, क्योंकि क्षुद्रभव हमने बहुत किये हैं न, तो ज़रा वहां क्या-क्या किया वह देखते हैं हम। कैसे-कैसे क्षुद्रभव किये। वह तो बात भवस्थिति में भी आनेवाली है, फिर भी अभी देखते हैं हम। यह क्षुद्रभव यानी क्या-क्या किया हमने। तो देखो, ये जो क्षुद्रभव हैं, वे भी दो प्रकार के बताये गये हैं। यहां आपके सामने बोर्ड पर लगा है चार्ट। क्षुल्लक कहो या क्षुद्रभव कहो, एक ही बात है।

क्षुल्लकभव ग्रहण– (१) निषेकक्षुल्लकभव (२) घातक्षुल्लकभव

निर्वृत्तिस्थान (बंधनीय आयु का प्रमाण) – (१) निर्वृत्तिपर्याप्त (२) निर्वृत्तिअपर्याप्त

जीवनीयस्थान – जीवित रहने का काल

क्षुल्लकभव या क्षुद्रभव या जो लब्धिअपर्याप्त का जो जघन्य भव है; जघन्य आयु है उसको यहां क्षुल्लकभव कहते हैं। जो हम श्वास के अठारहवें भागप्रमाण कहते हैं इतनी छोटी आयु एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य तक की होती है, उनकी सबकी समान होगी। यह क्षुद्रभव यानी जो लब्धिअपर्याप्त भव है, उनकी जो आयु बंधी है; लब्धिअपर्याप्त संबंधी आयु, वह भी छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी – उसमें भी रेंज होगी। बांधते समय तो सब उसमें हीनाधिकता हो सकती है। तो यहां एक क्षुल्लकभव या क्षुद्रभव है, ये दो प्रकार से बताये हैं। क्या लिखा है यहां? निषेकक्षुद्रभव या निषेकक्षुल्लकभव और

घातक्षुल्लकभव। इसका क्षुल्लकभवग्रहण ऐसा पूरा नाम है। हमने वह ग्रहण शब्द यहां नहीं लिखा है। वह क्या है? उसको देखेंगे हम।

क्या लिखे हैं दो नाम? निषेकक्षुल्लकभव और घातक्षुल्लकभव। यानी जब क्षुल्लकभव संबंधी आयु बंधती है यानी लब्धिअपर्याप्त संबंधी किसीने आयु बांधी, अंतर्मुहूर्त की आयु होती है, जघन्य भी अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट उससे थोड़ी ज्यादा, उत्कृष्ट भी अंतर्मुहूर्त। यह तो उसने जो आयु बांधी है, तो कोई भी कर्म बंधता है तो उसकी निषेक रचना होती है, यह तो आपने सुना होगा। आयु का भी बंध हुआ, तो मान लेते हैं किसीकी अभी एक साल की आयु बाकी है, उसने आयु का बंध किया, अपर्याप्त संबंधी आयु का बंध किया, कितनी आयु का? अंतर्मुहूर्त प्रमाण आयु का बंध किया। आबाधाकाल कितना कहलायेगा? एक साल। *श्रोता: एक साल कैसे?* किसी जीव ने वर्तमान भव का एक साल बाकी था, तब आयु बांधी। कौनसी बांधी? क्षुद्रभव संबंधी आयु बांधी, अपर्याप्त की आयु बांधी। कितनी बांधी? अंतर्मुहूर्त की बांधी। आबाधाकाल कितना रहेगा? *श्रोता: एक साल?* एक साल; जबसे आयु बांधी है, तबसे मरण तक का काल वह आबाधा कहलायेगा। नहीं समझे?

फिर से, हम तैंतीस सागर की पहले आयु बांध लेते हैं। किसी मनुष्य ने, पूर्वकोटिवाले मनुष्य ने, सबसे जल्दी से जल्दी, यानी वन थर्ड (एक तिहाई) भव जब बाकी है तब आयु बांधी ३३ सागर की। आयु की बात चल रही है, अन्य कर्मों की नहीं। तो ३३ सागर की आयु बांधी, कब बांधी? वन थर्ड पूर्वकोटि पहले बांधी। तो उसका जो वन थर्ड पूर्वकोटि है, पूर्वकोटि की तिहाई, इतनी आयु अभी उसकी बाकी थी, कौनसी? मनुष्यायु बाकी थी, तब उस जीव ने ३३ सागर की आयु बांधी। आबाधाकाल कितना कहलायेगा? *श्रोता: वन थर्ड पूर्वकोटि।* और आयु कितनी बांधी? *श्रोता: ३३ सागर।* ३३ सागर। कोई जीव वन थर्ड पूर्वकोटि पहले, क्षुद्रभव की अपर्याप्त की आयु बांधेगा तो? आबाधा कहलायेगी यह वन थर्ड पूर्वकोटि और आयु बांधी है अंतर्मुहूर्त की। यह हो सकता है कि नहीं हो सकता? आयु में आबाधा और स्थिति, इसमें कोई ऐसा संबंध नहीं है, अन्य कर्मों में हैं। जैसे मिथ्यात्व का सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का बंध होता है, तो उसकी सात हज़ार वर्ष की आबाधा होती है। वह तो प्रपोर्शनेट होती है। *श्रोता: सात हज़ार वर्ष तक कुछ भी नहीं होगा? उदीरणा...* सुनो, उसका अभी विषय नहीं है। आबाधा का अर्थ ऐसा है कि जिस समयप्रबद्ध की निषेक रचना होती है वहां आबाधाकाल को छोड़कर उसके ऊपर से लेकर निषेक रचना बतायी

जाती है। अब यहां हम आयु की बात कर रहे हैं। आयु उसने क्षुद्रभव की बांधी है तो जितनी आयु बांधी तो उसके उतने निषेक तैयार होते हैं।

निषेक का अर्थ क्या है? समान स्थितिवाले कर्म परमाणुओं को बताने के लिये हम एक आड़ी लाइन लिखेंगे उसको निषेक कहेंगे और एक-एक समय से बढ़ती हुयी स्थिति के निषेक एक के ऊपर एक लिखेंगे। यानी एक-एक निषेक में अनंत-अनंत परमाणु हैं, जिनकी स्थिति समान होती है। बंधी हुयी आयु का उदय कब शुरू होगा? मरकर जब नयी आयु शुरू होगी तब उसका उदय भी शुरू होगा। हम समझाने के लिये मान लेते हैं, उसने पचास समय की आयु बांधी; इतनी छोटी आयु कोई नहीं बांधता; अंतर्मुहूर्त में तो असंख्यात समय होते ही होते हैं; हम आपको समझाने के लिये पचास समय कहते हैं। तो किसीने पचास समय की आयु बांधी है, कभी भी बांधे वह, मरण के सालभर पहले बांधे या अंतर्मुहूर्त पहले बांधे, तो उसके निषेक कितने होंगे? पचास। पचास निषेक होंगे; पचास समय की आयु बंधी है, तो पचास निषेक उसके तैयार होंगे। जब उस आयु का उदय शुरू होगा यानी यहां से मरकर वह अन्य भव में चला जायेगा, पहले समय में वह एक निषेक उदय में आया, खिर गया। दूसरे समय में दूसरा उदय आया, खिर गया। उसके पास कितने निषेक हैं? पचास निषेक हैं। तो पचासवें समय में पचासवां निषेक उदय में आयेगा, वहां वह मर जायेगा। हां, उसके पहले वह आगामी आयु का बंध करेगा और यहां की आयु पूरी करके, मरकर अन्य भव में चला जायेगा। यह बात ख्याल में आयी? तो जितनी आयु बांधी है, उतने निषेक वहां होंगे; यानी एक समय के लिये एक निषेक।

तो हमारी यहां क्षुद्रभव संबंधी बात चल रही है। लब्धिअपर्याप्त की उसने आयु जितनी बांधी है, उसको कहेंगे निषेकक्षुल्लकभव। लब्धिअपर्याप्तों की भी आयु की अपनी रेंज होगी, हम मान लेते हैं कि कोई पचास समय की आयु बांध सकता है और कोई पांच सौ समय की आयु बांध सकता है। हम समझने के लिये कहेंगे, पचास से पांच सौ समयों तक, यह लब्धिअपर्याप्त के भवों की जघन्य से उत्कृष्ट तक इतनी उसकी रेंज है। कम से कम कितनी बांधी? पचास समय। यानी बंधने की अपेक्षा मिनिमम क्षुद्रभव कितना हुआ? पचास समय क्योंकि उसने इतने ही निषेक बांधे थे। अब यह पचासवाला कम नहीं हो सकता; परंतु मान लेते हैं, सौ हैं, डेढ़ सौ हैं, दो सौ हैं समय। हमने पांच सौ समय तक की रेंज रखी है। वह जो डेढ़ सौवाला है, वह आयु का घात करके पचास से भी कम हो सकता

है, जिसको कदलीघात कहते हैं। यह कदलीघात केवल मनुष्यों और पंचेन्द्रियों में नहीं होता; एकेन्द्रियों में भी होता है और बादर निगोद में भी होता है। सूक्ष्म जीवों में भी कदलीघात होता है परंतु वे दूसरे के मारने से तो नहीं मरेंगे, अपने स्वयं की योग्यता से कदलीघात से मर सकते हैं। मसलने से तो मसले नहीं जाते हैं। उनको तो बॉईल करने से वगैरह तो मरेंगे नहीं वे। परंतु ये जो बादर जीव हैं, उनका दूसरे जीवों से घात होता है।

हम मान लेते हैं किसी जीव ने लब्धिअपर्याप्त की पचास समयवाली क्षुद्रभव की आयु बांधी है और किसीने सौ या एक सौ पचास समयवाली आयु बांधी है। मान लेते हैं किसीने सौ समयवाली आयु बांधी थी; तो उसने कट करके यानी कदलीघात करके उसकी आयु पचास से भी कम कर दी; मान लेते हैं पैंतालीस समयों की कर दी। यह घात करके, कदलीघात यानी वहां निषेकों का घात होता है और निषेकों का घात होकर उसकी आयु इतनी शेष रह गयी। पैंतालीस समय, उसकी कुल आयु पैंतालीस समय की हो गयी, घात की अपेक्षा उसको कहेंगे घातक्षुद्रभव या क्षुल्लकभव। पहले बंध की अपेक्षा जो कही थी उसको निषेकक्षुल्लकभव कहते हैं। बंधनीय आयु, इसको कहेंगे बंधनीय आयु की अपेक्षा जघन्य आयु और घातक्षुल्लकभव यानी उसने लब्धिअपर्याप्त की आयु तो बांधी थी; उसमें भी कदलीघात होकर जल्दी मर गया और बंधनीय आयु से भी उसकी जीवनीय आयु कम हो गयी, उसको जीवनीय आयु कहते हैं। बंधनीय आयु यानी वह निषेकक्षुद्रभव कहा और जीवनीय आयु, यह जो घात करके उसने कम से कम की है, तो उसको कहेंगे घातक्षुद्रभव, यह उसकी जीवनीय की अपेक्षा जघन्य आयु। यह जो हम एक श्वास में १८ बार कहते हैं, वह इस घात की अपेक्षा उसकी इतनी जघन्य आयु हो सकती है। *श्रोता: घात कब किया उसने?* घात तो किया कुछ समय बाद क्योंकि... *श्रोता: यह उसी भव में?* हां, यह उसी भव में घात होता है उसीको कदलीघात कहते हैं। इसको कहते हैं भुज्यमान आयु का घात होना।

देखिये, ये दो बातें आती हैं, आयुकर्म का जो घात होता है, अभी हमने इस भव में कोई आयु बांधी है, जैसे हमारे श्रेणिक राजा ने बांधी थी, कितनी बांधी थी? *श्रोता: सातवें नरक की।* ३३ सागर की और फिर उसी भव में श्रेणिक की पर्याय में ही उसने उस आयु का घात किया, यानी वह आयु कम हो गयी। कितनी रह गयी? *श्रोता: ८४००० वर्ष।* ८४००० वर्ष की रह गयी। तो उसने क्या किया? कदलीघात तो नहीं कह सकते।

कदलीघात तो जो आयु हम भोग रहे हैं, उसका होता है। यह तो इसी भव में उसने आगामी भव की आयु बांधी और इसी भव में उसने कम की। कैसे कम हुयी? परिणामों के कारण, क्योंकि वे सम्यग्दृष्टि हुये। क्या दुबारा नरक आयु बांधी? दुबारा नरक आयु तो नहीं बांधी क्योंकि सम्यग्दर्शन के बाद तो नरकायु बंधती नहीं है। यानी उनके सम्यक्त्व के परिणामों के कारण, उनकी आयु घटकर ८४००० वर्ष की रह गयी। इसको कहेंगे घातायुष्क। आयु का जो घात होता है, उसी भव में, जिस भव में हमने अगले भव की आयु बांधी है, पूर्व भव में बांधते हैं न नेक्स्ट भव की आयु, तो इसी भव में हमने आगामी भव की आयु घटा दी। घटा दी यह कहने की बात है, वह घट गयी परिणामों के कारण, तो उसको कहेंगे घातायुष्क। अभी हमने श्रेणिक राजा की नरकायु की बात देखी। ऐसे किसी एक जीव के बारे में ऐसा भी हो सकता है कि किसी मुनिराज ने सर्वार्थसिद्धि की ३३ सागर की देवायु बांधी और वे मुनि अवस्था से भ्रष्ट हो गये, मिथ्यात्व में चले गये और परिणामों के कारण बध्यमान आयु का घात होकर १०००० वर्ष की देवायु शेष रही। ऐसे हो सकता है और यह सब आगम का वाक्य है; हम अपनी ओर से नहीं कह रहें। तो उसको भी हम घातायुष्क कहेंगे और कदलीघात कब कहते हैं? कि हमारी वर्तमान की आयु जो हमने पूर्वभव में बांधी थी उसका घात होकर जल्दी मरण होता है, कर्मभूमि के मनुष्य और तिर्यंचों में ही यह कदलीघात होता है। *श्रोता: भुज्यमान आयु?* भुज्यमान आयु में कदलीघात होता है।

हम मान लेते हैं कोई जीव सौ साल की आयु बांधकर यहां आया है और वह पच्चीस साल का युवा हुआ, और फिर उसका कोई ॲक्सिडेंट हुआ या अन्य कोई कारणवश उसका मरण हुआ। यह ज़रूरी नहीं कि हर पच्चीस साल में मरनेवाला वह कदलीघात से ही मरेगा। क्योंकि हो सकता है, वह पच्चीस साल की आयु बांधकर आया हो, तो उसको हम कदलीघात नहीं कहेंगे। जिसने ४५ साल की या उससे अधिक आयु बांधी थी, और यहां जन्म लिया है, पच्चीस साल हो गये, इतने अल्पकाल में तो नेक्स्ट भव की आयु उसने बांधी नहीं है, क्योंकि दो-तिहाई आयु बीत जाने पर वह आयुबंध का पहला अवसर आता है। पच्चीसवें साल में उसने अन्य भव की आयु तो बांधी नहीं थी, अब निषेक कितने थे उसके पास? मान लेते हैं कि सौ साल के थे, हर समय का एक-एक निषेक। अब ऐसी कोई घटना घटी कि इन निषकों का घात हो गया और उनके सारे परमाणु नीचे के निषेकों

में आ गये। यानी पचहत्तर साल के निषेक बाकी थे, अब पांच मिनट के निषेक छोड़कर ऊपर के सारे निषेकों के परमाणु वे पांच मिनट के निषेकों में आ मिले। कदलीघात किया यानी आयु घटायी है उसने, अब यहां नये आयु का बंध होगा और फिर जितना भी काल बाकी है उसमें उसका मरण होगा। हमने यहां पांच मिनट माना था तो पांच मिनट में उसका मरण होगा।

जिसने आयु का बंध किया है, उसका कदलीघात नहीं होता है क्योंकि आयुकर्म की आबाधा अब निश्चित हुयी है। मान लेते हैं कोई जीव नब्बे साल की आयु लेकर आया है; साठ साल होने पर उसने आगामी आयु का बंध किया; अब उसके मनुष्यायु के तीस साल बाकी हैं; अर्थात् अब उसके आयु का आबाधाकाल निश्चित हुआ। अब वह आबाधा कम नहीं हो सकती। हम देखते हैं कितने ही जीव इतने अधिक बीमार होते हैं कि वे स्वयं और बाकी अन्य लोग भी चाहते हैं कि ये छूट जाये तो अच्छा है, परंतु वे कैसे छूटेंगे? और वे तो दयामरण लेना चाहते हैं, परंतु ऐसी कोई बात नहीं हो सकती। यानी जितनी आयु निश्चित है, यह कदलीघात से भी होगा तो भी वह निश्चित था इसलिये कदलीघात हुआ। हर किसीका कदलीघात नहीं होगा। ख्याल में आती है बात? यह सब सायंटिफिक है, इसमें कोई ऐसी हेरा-फेरी कुछ नहीं चलती है। हां, पोपाभाईनुं राज नथी। *श्रोता: राजा श्रेणिक के मरण को क्या कहेंगे?* राजा श्रेणिक के मरण को, ऑर्डिनरी उसका जो रेग्युलर मरण हुआ, कदलीघात से तो नहीं कहेंगे, क्योंकि आयु तो उसने ३३ सागर की बांधी थी यानी आबाधा निश्चित हुयी थी और बाद में उसने घातायुष्क करके उसके ८४००० वर्ष किये हैं। उसको कदलीघात नहीं कहेंगे। *श्रोता: ऐसा प्रश्न है उसने सर पटक लिया...* सर पटक लिया तो उसके परिणाम संक्लेश के हो गये। संक्लेश, क्योंकि पहले नरक में जाना था, कापोतलेश्या में जन्म लेना था, तो यहां मरण भी कापोतलेश्या में हुआ है उसका। भले क्षायिक सम्यग्दृष्टि था, परंतु ऐसी अवस्था में उसके ऐसे संक्लेश परिणामों में तीव्र कषाय में उसका मरण हो गया है। सातवें नरक में जन्म लेनेवाला, कृष्णलेश्या में मरेगा। जहां की आयु बंधी है, मरण के समय वैसे परिणाम होंगे ही होंगे। देव में जानेवाले वैसे शुभ परिणाम में, शुभलेश्या में मरेंगे। यह सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। इसलिये मरनेवाला जीव अच्छी गति में जायें, इसलिये तो हम उसके कान में णमोकार मंत्र जोर-जोर से बोलते हैं और कोई कहता है जरा चुप बैठना, अभी मैं मरनेवाला नहीं हूं, हमने ऐसे भी सुने हैं लोग।

श्रोता: अकालमृत्यु किसे कहते हैं? कदलीघात को ही अकालमृत्यु कहते हैं। किसी भी पर्याय में पांचों समवाय होंगे ही उसमें से जो काललब्धि कहा है वह तो निश्चित ही है। ऐसा नहीं है कि वह मरण अनिश्चित था और बाय चान्स हो गया। कदलीघात से होनेवाला मरण भी, निश्चित अपने स्वसमय पर ही हुआ है वह मरण जिस क्षेत्र में, जिस काल में, जिस विधि से, ये सब वहां लगा लेना। **जं जस्स जम्मि देसे जेण विहाणेण जम्मि कालम्मि** वह सब वैसा ही होगा यह सब निश्चित था और निश्चित है। हमें मालूम नहीं है तो हम बहुत आकुलता करते हैं, अरेरे, कार से नहीं जाता तो अच्छा था। कभी-कभी ऐसा होता है कि एअर का टिकट लेकर जानेवाला था; किसी दूसरे ने उसको रिक्वेस्ट की; वह रुक गया, दूसरा चला गया और वह जानेवाला प्लेन ॲक्सिडेंट में मर गया। तो उसका ऐसा ही निश्चित था, यह नक्की है। लोग कहते हैं यह नहीं करता तो अच्छा था, नहीं जाता, घर में बैठता। तो कोई ऐसा भी कहते हैं कि वहां नहीं जाता तो घर में मरता। अरे, घर में कैसे मरता? निमित्त भी निश्चित है। पांच समवाय जो हम देखते हैं, किसी भी कार्य में, कार्य में यानी पर्याय में, उस समय की, उस पर्याय के वे पांचों समवाय निश्चित होते हैं। उनको पलटाने में कोई समर्थ नहीं है। तो क्या हम बेचारे हीन-दीन हो गये? अरे नहीं! इसको सहीरूप से समझेंगे, यथार्थ निर्णय करेंगे, तो आकुलता रहित हो जायेंगे। पर्याय की ओर से निश्चिंत हो जायेंगे, जो होनेवाला है वह निश्चित है। केवल होनेवाला वह निश्चित नहीं है, उस संबंधी का पुरुषार्थ भी निश्चित है, उस संबंधी का निमित्त भी निश्चित है। वही उसी समय में होगा, वही पर्याय होगी जो होनेवाली है। ऐसे ही उस द्रव्य की अंतर्गत पूरी व्यवस्था है। वह द्रव्य ही अपने एक-एक समय की पर्यायरूप से सुनिश्चित समय में परिणमन करनेवाला है। उसमें कोई दूसरा पलटा नहीं सकता है। इससे तो हमें द्रव्य की और पर्याय की स्वतंत्रता सिद्ध होती है। इससे तो निराकुलता उत्पन्न होती है। हम उसको जान-जान कर यहां आकुलित होते रहते हैं। अब यहां आगे देखेंगे –

श्रोता: यह हमने जो निषेकक्षुल्लकभव ये दोनों जो बताये तो यह मतलब वर्तमान में भुज्यमान में ही ये दोनों घटित किये हैं? हां, निषेकक्षुल्लकभव यानी जो बंधनीय आयु है, जो बांधकर आया है और उसने मिनिमम बांधी है, तो उसे निषेकक्षुल्लक यानी क्षुद्रभव, यानी छोटी आयुवाला कहेंगे। घातक्षुल्लकभव यानी उसने मिनिमम आयु तो नहीं बांधी थी, थोड़ी ज्यादा बांधी थी, क्योंकि मिनिमम आयु का और घात नहीं होता। तो हमने पचास के

बदले सौ या डेढ़ सौ कहा था। उसका घात होकर जो आयु, बंधी हुयी जघन्य आयु से भी कम हो जाती है, उसको घातक्षुल्लकभव कहते हैं। *श्रोता: ये दोनों हमने क्षुद्रभव, उसका एक चालू हो गया है क्षुद्रभव?* क्षुद्रभव पर घटित किया है। एक क्षुद्रभव चालू हो गया है। वह जो निषेकक्षुल्लकभव यानी जो मिनिमम आयु बांधकर आया है जिसका घात नहीं होता वह निषेकक्षुल्लकभव है और जो थोड़ी अधिक आयु बांधकर आया था और कदलीघात होकर जल्दी मर गया, उसको घातक्षुल्लकभव कहेंगे।

श्रोता: किसीको फांसी की शिक्षा हो गयी है और उसको फांसी देने का टाइम भी निश्चित हो गया फिर उसने हाय कोर्ट, सुप्रीम कोर्ट में मुकदमा दाखिल किया। उसे छह महीने का समय मिल गया फिर कदलीघात कौनसा समझेंगे अभी का या छह महीने बाद का समझेंगे? आपका प्रश्न है, किसीको फांसी की सजा हुयी है और किसी कारणवश उसके छह महीने और बढ़ा दिये गये, तो कदलीघात कब होगा उसका? तो हमें पता नहीं वह कितनी आयु बांधकर आया है। यह हो सकता है कि उतनी आयु बांधकर आया है; जो फांसी का समय होगा। ऐसा भी हो सकता है आयु बाकी थी और उसकी फांसी तो पहले के छह महीने बढ़ गये न, तो उसमें कदलीघात करके निषेकों को छह महीने तक घटा दिया है या उसने फांसी के अंतर्मुहूर्त पहले कदलीघात करके अंतर्मुहूर्त आयु शेष रखकर वहां आगामी आयु का बंध करके मर गया। वह कदलीघात कब करता है यह हम नहीं कह सकते। हम तो वहां निमित्तों की तरफ देख रहे हैं। उसके ऐसे ही उसी समय होना था, तो उसमें ऐसी बातें हो जाती हैं। किसीको फांसी की सजा हो गयी और हो सकता है कि अन्य किसी कारणवश वह बीच में मर जावे, ऐसे भी हो सकता है। *श्रोता: राष्ट्रपति उसको माफ़ी दे तो?* ये माफ़ी देते हैं, कौन माफ़ी देगा? कौन ज्यादा जीने देगा? यह तो हम निमित्तों की तरफ से बात करते हैं। इसने माफ़ किया, इसलिये उसकी आयु और बढ़ गयी ऐसा नहीं है। *श्रोता: ये दोनों भवों को हम श्वास के अठारहवें भाग का ही नाम देंगे?* नहीं, दोनों को नहीं। जो मिनिमम पॉसिबल है; वह घातक्षुल्लकभव है; और ये ऐसे जो अपर्याप्त भव हैं; वे एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के होते हैं; उसकी और चर्चा हम बाद में करेंगे, थोड़ी देर के बाद। अभी अपना समय पूरा होता है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

४. काल – कर्मस्थिति, कायस्थिति, उपपाद, भावस्थिति

यहां हम करणानुयोग के आधार से काल की प्ररूपणा का अभ्यास कर रहे हैं। हमने देखा था छह प्रकार के काल होते हैं, याद है न? कौन-कौनसे देखे थे? *श्रोता: गुणस्थितिकाल।* गुणस्थितिकाल, उसके बाद? *श्रोता: भवस्थितिकाल।* भवस्थितिकाल, *श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* कर्मस्थितिकाल, *श्रोता: कायस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल, *श्रोता: उपपादकाल।* उपपादकाल और *श्रोता: भावस्थितिकाल।* भावस्थितिकाल। तो हमने देखा था जीव कौनसे गुणस्थान में कितने काल तक रहता है, मार्गणाओं में कितने काल तक रहता है; कम से कम कितने काल तक और उत्कृष्ट से उत्कृष्ट कितने काल तक, उसकी बात अपनी चल रही थी। तो यह क्षुल्लकभव की बात चल रही थी, उस संबंधी कुछ प्रश्न लेकर फिर हम आगे बढ़ेंगे। यहां प्रश्न है *एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के लब्धिअपर्याप्त के भव जीव के एक अंतमुहूर्त में उत्कृष्ट कितने होते हैं?* तो ६६३३६ होते हैं। तो सभी घातक्षुल्लकभव होते हैं क्या? तो कहते हैं, हां; क्योंकि मिनिमम आयु फिलहाल तो घातक्षुल्लकभव की अपेक्षा ही हो सकती है और इसके लिये आधार है धवला पुस्तक चौदहवीं, पृष्ठ संख्या ३६१।

वहां यह प्रश्न पूछा गया था कि यह सभी समान हैं? क्योंकि हमने क्या देखा? एक अंतर्मुहूर्त, कौनसा? बड़ावाला, अड़तालीस मिनट में एक समय कम इतने काल में कोई जीव मरकर अपर्याप्त हुये, फिर अपर्याप्त हुये, फिर अपर्याप्त हुये, फिर अपर्याप्त हुये, तो उसके कितने भव हो सकते है? तो कहते हैं, ६६३३६। उनमें से ६६१३२ तो एकेन्द्रिय संबंधी भव होते हैं। एकेन्द्रिय में पांच सूक्ष्म और छह बादर – ग्यारह उनमें हो गये। यानी एक-एक के खाते में ६०१२ भव होंगे, द्वीन्द्रिय के ८० होते हैं; त्रीन्द्रिय के ६०, चतुरिन्द्रिय के ४०, पंचेन्द्रियों में असंज्ञी पंचेन्द्रियों के ८ और संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच के ८ और मनुष्यों के ८ क्षुद्रभव होते हैं, लगातार की बात है। इतने हो सकते हैं तो ये सभी का जो प्रमाण है वह समान है और यह घातक्षुल्लकभव की अपेक्षा बात हो रही है। वहां स्पष्टरूप से वैसा बताया है। *श्रोता: यहां एक ही जीव इतना करेगा न?* यहां एक जीव की अपेक्षा है। *श्रोता: उत्कृष्ट करेगा तो एक ही जीव ६६३३६ भव अंतर्मुहूर्त में?* अधिक से अधिक इतने भव उसके हो सकते हैं। यहां तो कोई मरता है तो इतने पहले तो उसको डेथ सर्टिफिकेट भी नहीं मिलता है और मान लेते हैं कि कोई अपर्याप्त में चला गया

तो यहां हम उसके एक भव के लिये रो रहे हैं। लोग कहते हैं कि उसके लिये थोड़े ही रो रहे हैं, हम तो अपने लिये रो रहे हैं। इन्कन्व्हीनिअन्स हो जाता है न हमें।

श्रोता: घातक्षुल्लकभव और घातायुष्क यह भुज्यमान से संबंधित है या बध्यमान से? घातक्षुल्लकभव यह कदलीघात से संबंधित है और घातायुष्क यह जो कहते हैं जो बंधी हुयी आयु – बंधनीयआयु, भुज्यमान आयु नहीं, बद्धायु – जो आगामी भव की बंधी हुयी आयु है उसके बारे में जो घात होता है उसको घातायुष्क कहते हैं। फिर दुबारा सुनना – आयु का घात ऐसे तो किसी अन्य कारण से नहीं होता है। घात तो नहीं होता पर आयु तो बढ़ सकती है कि नहीं? नहीं बढ़ती? तो कोई बीमार हो जाये तो अमेरिका में, इंग्लंड में क्यों दौड़ते हैं हम? यह जितनी आयु बांधकर आया है, अब इस भव में उसमें एक समय की भी बढ़ोतरी नहीं होनेवाली है। उसका घात तो हो सकता है, जिसको कदलीघात कहते हैं। यहां जो घातक्षुल्लकभव की बात की थी वह कदलीघात की अपेक्षा बात की थी। तो यह कदलीघात से जो आयु का घटना होता है, यहां लब्धिअपर्याप्त में उसके घातक्षुल्लकभव की बात चल रही है। यहां घातायुष्क जो कहते हैं, वह आगामी भव संबंधी जो बंधी हुयी आयु है जो इसी भव में कम हो जाती है उसको घातायुष्क कहते हैं। यह बात ख्याल में आयी? उसके लिये हमने श्रेणिक राजा का उदाहरण भी देखा था। अब वर्तमान में श्रेणिक के जीव को-नारकी को हम घातायुष्क कहेंगे। अब जो आयु बांधकर आया है बढ़ सकती है क्या? बध्यमान आयु बढ़ सकती है यानी किसीने आगामी भव की कम आयु बांधी है और फिर दुबारा आयुबंध का सवाल आया यानी उसका काल आया, अवसर आया, उस समय उसने बढ़कर आयु बांधी तो बढ़ी हुयी जो अधिक आयु बांधी है तो उतने काल तक वह जियेगा, आगामी भव की बात है। यानी किसीने पहले दस हजार वर्ष की देवायु बांधी है और फिर दूसरी बार उसका आयु बंध का अवसर आया, तो उसने एक सागर की देवायु बांधी; तो उसकी आयु कितनी हो जायेगी? एक सागर की।

बंधते समय ऐसा भी हो सकता है किसीने पहली बार, आप कहेंगे बार-बार आयु का बंध हो सकता है? हां, हो सकता है। ऐसे आठ अपकर्षकाल हो सकते हैं, आठ बार आयु का बंध का अवसर। जब-जब आयु बंधती है, मध्यम परिणामों में बंधती है उसको अपकर्षकाल कहते हैं। तो ऐसे काल में आयु बंधती है तो वह पहला अवसर कब होता है? कर्मभूमि के मनुष्य, तिर्यंचों में आयु वन थर्ड यानी एक तिहाई बाकी है तब। आयु के एक

तिहाई का एक तिहाई बाकी होगा तब दूसरी बार आयु बंधेगी। उसका एक तिहाई होगा तो तीसरी बार आयु बंधेगी, बंध सकती है, बंधती ही है ऐसा नियम नहीं है। पहली बार कम बंधी, दूसरी बार अधिक बंधी, तो जो अधिक बंधी है वह आयु उसकी निश्चित हो गयी। हो सकता है पहली बार एक सागर की बांधी, दूसरी बार कम बांधी, पल्य की बांधी तो सागर की तो बंधी हुयी पड़ी है, तो उसीमें पल्य के परमाणु मिल रहे हैं। तो सागर की तो आयु निश्चित है उसकी, परंतु बढ़ती है तो बढ़ने के लिये दुबारा बंधना आवश्यक है। परिणामों के कारण घट सकती है ऐसे, पर अन्य परिणामों के कारण बढ़ नहीं सकती। जैसे कोई मिथ्यादृष्टि है उसने एक पल्य की आयु बांधी देवायु और उसने सम्यग्दर्शन प्राप्त किया, तो यह एक पल्य बढ़कर एक सागर नहीं होनेवाला है। परिणामों के कारण घट तो सकती है पर अन्य परिणामों के कारण बढ़ नहीं सकती। बढ़ने के लिये दुबारा आयु का बंध आवश्यक है जो बढ़कर बंधेगा तो।

ये आयु के बारे में अन्य-अन्य नियम हैं। तो यह जो बढ़कर बंधती है तो परिणामों के कारण। यानी जहां हम कहेंगे आयु का उत्कर्षण हुआ, वहां नये बंध की कंडिशन लागू होती है – वह आवश्यक है। घटने के लिये अन्य परिणामों से वह घट सकती है, श्रेणिक राजा की नरकायु घटी क्योंकि उसके परिणाम सुधर गये। यदि परिणाम बिगड़ जायेंगे तो किसी की बंधी हुयी देवायु घटेगी यह भी हो सकता है। *श्रोता: आपने जो ६६३३६ भव को हमने जो कदलीघात से मरण होता है जो ऐसा कहा तो ६६३३६ भव के अंदर सूक्ष्म के भी भव लिये है? और क्या उनका भी कदलीघात से मरण होता है?* हां, शास्त्र में सूक्ष्म जीवों का भी कदलीघात से मरण बताया है, परंतु हमारे से उनकी हिंसा नहीं होती है। वह तो उनकी मिनिमम आयु जीवनीय आयु है। वह उनका क्षुल्लकभव ही कहलायेगा।

तो अब हम यहां देखेंगे, कदलीघात की तो बात हो गयी है। इसका दूसरा भी एक नाम है, निर्वृत्तिस्थान। इससे कुछ लेना-देना नहीं है। परंतु जो आयु बंधी है उसको निर्वृत्ति कहेंगे। यानी पर्याप्त संबंधी आयु बंधी है तो पर्याप्तनिर्वृत्ति कहेंगे। अपर्याप्त संबंधी आयु बंधी है तो अपर्याप्तनिर्वृत्ति कहेंगे। बस यह आपको एक शब्द बताना था, उसका अर्थ बताना था, उसके विस्तार में हमें यहां तो नहीं जाना है। एक होता है, जो बंधी हुयी आयु उतनी भोगना है वह तो बंधनीय स्थान है, निर्वृत्तिस्थान है और जीवनीयस्थान किसको

कहेंगे? जीवनीयआयु कितनी कहेंगे? जितना काल जियेगा, उसको जीवनीयस्थान कहेंगे, जीवित रहने का काल है उसका जीवनीयस्थान कहते हैं। अब हमने तो ये दो बातें देखी थी यहां पर गुणस्थितिकाल और भवस्थितिकाल। ख्याल में आयी यह बात? अभी हम आगे बढ़ेंगे।

भवस्थिति का अर्थ क्या देखा? कि एक भव में रहने का उत्कृष्ट काल, उसको कहेंगे भवस्थितिकाल। देवों में तो एक ही भव होता है, मनुष्यों का भी एक ही भव उसको भवस्थिति कहेंगे। लगातार मनुष्य मरकर मनुष्यों के ही भव करता रहे उसकी भवस्थिति नहीं कहेंगे; उसको कायस्थिति कहेंगे; उसकी बात तो हम थोड़ी देर के बाद देखेंगे। एक ही भव उत्कृष्ट कितना हो सकता है मनुष्य का? तो हमने देखा न, कर्मभूमि में एक करोड़ पूर्व का, भोगभूमि की अपेक्षा तीन पल्य का। यह भवस्थिति में एक भव लेना। एक मनुष्यपर्याय या देवपर्याय या नरकपर्याय, एक भव का काल है उसको भवस्थितिकाल कहते हैं। *श्रोता: आयुप्रमाण?* हां, आयुप्रमाण वह भवस्थिति, उत्कृष्ट जो है। भवस्थिति जब कहेंगे तो उसमें से हमको उत्कृष्ट लेना है, वह मॅक्झिमम हम यहां बता रहे हैं।

अब तीसरा जो है कर्मस्थितिकाल, यह तो हम सबके परिचय का है। है न, क्योंकि कर्म की स्थिति कितनी बांधी है ऐसा जब हम कहते हैं, तो प्रत्येक कर्म की मिनिमम कितनी स्थिति होती है; मॅक्झिमम कितनी है; यहां जो कर्मस्थितिकाल बताया जाता है तो उत्कृष्ट से उत्कृष्ट कितना स्थितिबंध है उसको यहां कर्मस्थितिकाल कहने में आता है। सामान्य से अगर कहेंगे यह कर्मस्थितिकालप्रमाण उस पर्याय में रहा तो उसका अर्थ क्या होगा? सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर काल तक रहा, नहीं समझे? कोई जीव बादर पृथ्वीकायिक में से बादर पृथ्वीकायिक में ही उत्पन्न होता रहे, एकेन्द्रियों की वनस्पतिकायिक छोड़कर अन्य कायिकों की बात करें, तो कितने काल तक रहेगा? यानी बादर वायुकायिक-वायुकायिक-वायुकायिक रहेगा या बादर में अन्य जलकायिक-जलकायिक रहेगा तो कितने काल तक रहेगा? तो वहां कहते हैं कि कर्मस्थितिकालप्रमाण काल तक रहता है। क्यों विनोदभाई? बराबर है न। ये सब चार्टस् हैं न, विनोदभाई ने बनाये हमारे, विनोदभाई सावला। उनका अच्छा अभ्यास है और जब-जब हम यहां शिबिर लेते हैं तो ऐसे सारे चार्टस् बनाने के लिये जो टाइपिंग वगैरह करके वह सब सेटिंग करना पड़ता है वह

सारा काम विनोदभाई अत्यंत रुचि से करते हैं और बाद में जाकर वह हम प्रिंट करके फ्लेक्स बनाकर लाते हैं।

तो यह जो हम देख रहे हैं यहां कर्मस्थितिप्रमाण यानी सामान्य से सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर। यह कोड़ाकोड़ी क्या होता है हमने देखा था – करोड़ गुणा करोड़ यह है कोड़ाकोड़ी और यह सागर क्या होता है? समुद्र होता है, है न? यह सागर से यहां लोग आये हैं न बहुत सारे, अब पच्चीस-तीस तो स्वाध्यायी आये हैं हमारे यहां स्वाध्याय में, इटारसी और सागर से। कहां बैठे हैं? कोई हाथ ऊपर करो एक-दो। हां-हां-हां यह देखो बहुत सारे हैं, यहां पर भी हैं, पीछे बैठे हैं। *श्रोता: आप वहां गये थे?* हां, अभी हम गये थे, वहां अपना दस दिन का शिबिर हुआ था। तो वहां अच्छा लगा उनको करणानुयोग। हमने उनको बताया था ऐसा शिबिर होनेवाला है, तो इतने सारे लोग उत्साह से आये हैं, छोटे बच्चे भी आये हैं वहां के। तो यह सागर क्या होता है? तो यह हम माप देख रहे हैं काल का नाप सागर, वह पानीवाला सागर नहीं। तो दस कोड़ाकोड़ी पल्य का एक सागर होता है। *श्रोता: आप तो यह सब कोड़ाकोड़ी में ही बातें करते हैं।* आपको भी करोड़ों का आकर्षण है, हमको भी करोड़ों का है। तो आप इतने हजार करोड़ की बात करते हो, हम तो कोड़ाकोड़ी की बात करते हैं। जिसको फिगर्स का यानी अंकों का ॲट्रॅक्शन है न गिनने का, उसको तो जैनिझम के आगम पढ़ना चाहिये। यहां तो हम असंख्यात और अनंतों में डील करते हैं; हम लाखों में नहीं करते। तो यह जो दस कोड़ाकोड़ी पल्य का एक सागर होता है; जिसमें कर्मों की स्थिति नापी जाती है। ये सागर भी तीन प्रकार के होते हैं। कौनसे हैं जीवंधरजी? *श्रोता: व्यवहारसागर, अद्धासागर और उद्धारसागर।* व्यवहारसागर के बाद उद्धारसागर और फिर अद्धासागर ऐसा क्रम से कहना चाहिये। देखो, यह दस कोड़ाकोड़ी व्यवहारपल्यों का एक व्यवहारसागर कहलायेगा। दस कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्यों का एक उद्धारसागर कहलायेगा और दस कोड़ाकोड़ी अद्धापल्यों का एक अद्धासागर कहलायेगा। तो ये पल्य क्या होते हैं? अलग-अलग प्रकार के पल्य क्या हैं उनको देखेंगे। देखो जरा निकालना, आपके पास पुस्तक है न, नहीं लाये पुस्तक? जीवकाण्ड प्रथम भाग, २४१ पृष्ठ है।

देखो, यहां एक शब्द आया, **प्रमाणांगुल** जो नया तीसरा पॅरेग्राफ है; जहां बोल्ड में लिखा है, बीच में जो फिगर है न, आकृति बनायी है वहां चौड़ा एक योजन और ऊंडा एक योजन लिखा है। मिला क्या आपको? २४१ पेज। **सो प्रमाणांगुल द्वारा उत्पन्न ऐसा**

एक योजन प्रमाण ऊंडा और चौड़ा ऐसा एक गर्त यानी खड्डा-गड्ढा करना। इसका अर्थ देखेंगे – अंगुल यानी यह उंगली का इतना भाग उसकी चौड़ाई इसको अंगुल कहेंगे। यह अंगुल हमारा जो है उसको कहेंगे आत्मांगुल क्योंकि हमारी तो अवगाहना छोटी है। कोई बड़ी-बड़ी अवगाहनावाले होंगे या तो अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्रवर्ती होंगे, जैसे हमारे भरत चक्रवर्ती है उनका तो अंगुल बड़ा होगा और हमारा तो छोटा है। अपना-अपना अंगुल, बच्चों का तो और छोटा होगा, उसको आत्मांगुल कहेंगे। एक होता है उत्सेधांगुल; उत्सेधांगुल यानी वह आठ यव प्रमाण जो एक अंगुल होता है वह उत्सेधांगुल है। बराबर है न, क्यों यशवंतजी? हां, ठीक है। आप बराबर कहो, क्योंकि ये सारे अभ्यासु लोग हैं, हम कहीं गलत हो जावे तो अच्छा नहीं है न! फिर प्रमाणांगुल किसको कहना? अवसर्पिणी का जो प्रथम चक्रवर्ती है, जैसे हमारे यहां भरत चक्रवर्ती हैं, उनके अंगुल का जो प्रमाण है उसे प्रमाणांगुल कहेंगे। ऑर्डिनरि अंगुल जो है उससे वह प्रमाणांगुल ५०० गुणा बड़ा होता है। तो ऐसे अंगुलों के द्वारा यानी इतने अंगुलों का, देखो उसके ऊपर का पॅरेग्राफ देखो, २४१ पेज नया पॅरेग्राफ।

छह अंगुलों का एक पाद होता है, दो पाद की एक विलस्ति, दो विलस्ति का एक हाथ, दो हाथ का एक बीख, दो बीख का एक धनुष और दो हजार धनुषों का एक कोस और चार कोसों का एक योजन होता है। ऑर्डिनरि में जो चार कोस हैं उनसे एक योजन होता है और यह कौनसा है? प्रमाणयोजन, तो यह प्रमाणांगुल के द्वारा जो प्रमाणयोजन उत्पन्न हुआ है यानी बड़ा योजन; वहां तो सामान्य योजन चार कोसवाला होगा; चार कोस को ५०० गुणा करेंगे, तो दो हजार कोस का एक प्रमाणयोजन होगा। ख्याल में आती है यह बात? गणित है न, बहुत टफ होता है। इतना एक योजन चौड़ा यानी डायमीटरवाला गोल कर देना, उतना ही वह गड्ढा गहरा होना चाहिये और वह भर देना, किससे? उत्तम भोगभूमि में जन्मे हुये सात दिन के अंदर का जो घेटा यानी मेंढा जो कहते हैं, उसके बाल जो हैं उसका अग्रभाग जिसका दूसरा टुकड़ा नहीं होवे। उनका क्यों लेना? हमारा क्यों नहीं चलेगा? उत्तम भोगभूमिवालों से मध्यम भोगभूमिवालों के बाल आठगुणा मोटे होते हैं; मध्यमवालों से जघन्यवालों के आठगुणा मोटे होते हैं; उनसे हमारे कर्मभूमिवालों के, उनसे भी आठगुणा मोटे होते हैं। यानी उनसे तो ५१२ गुणा मोटे हो जायेंगे हमारे। तो इतने छोटे-छोटे बालाग्र जिसको रोमखंड कहेंगे उनसे वह गड्ढा ठसाठस भर देना। सौ साल

के बाद एक टुकड़ा निकालना, दूसरे सौ साल हो जायेंगे तो दूसरा निकालना, इसतरह से जब वह गड्ढा खाली हो जायेगा तब उसको हम कहेंगे व्यवहारपल्य।

व्यवहारपल्य में तो हमने गड्ढे में रोमखंड कितने समाते हैं, उनकी संख्या कितनी है वह गिना था और हर सौ साल के बाद उसमें से एक-एक रोमखंड निकाला था। उन एक-एक रोमखंडों के कितने और टुकड़े करना है कल्पना में, तो कहते हैं असंख्यात करोड़ वर्षों के जितने समय हैं उतने उसके टुकड़े करना अर्थात् व्यवहारपल्य के रोमखंडों की संख्या को असंख्यात करोड़ वर्षों के समयों से गुणा करनेपर उद्धारपल्य के रोमखंडों का प्रमाण आता है, उतने ही उसमें समय होते हैं। उसको और असंख्यात वर्षों के समयों से गुणा करो तो वह हो जायेगा अद्धापल्य के समयों का प्रमाण यानी अद्धापल्य बहुत असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा बड़ा है और यहां जो हम कर्मों की स्थिति नापते हैं वह अद्धापल्यों में नापते हैं। देवों की या नारकियों की जो अभी हमने तैंतीस सागर की आयु नापी थी, वह किसमें नापी थी? यह अद्धापल्य से उत्पन्न जो अद्धासागर है उससे नापी थी। यानी एक अद्धापल्य इतना बड़ा, तो ऐसे दस कोड़ाकोड़ी अद्धापल्यों का एक अद्धासागर और एक समय में जीव मिथ्यात्व कर्म का उत्कृष्ट में उत्कृष्ट स्थितिबंध करता है यानी वह जीव के साथ कितने साल तक रहता है? सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर तक। यह एक समय की कमाई है। जीव सोचता है कि इतना गणित कैसे हो सकता है? बुद्धि काम ही नहीं करती कि यह कैसे हो सकता है? परंतु यह सत्य है, वस्तुस्थिति है और यह किसीने कल्पना से नहीं बतायी है। यह ऐसा जो सागर है उसमें तो कर्मों की स्थिति नापनी है, तो यह जो कर्मस्थिति जो अलग-अलग होती है सामान्य से हम कहेंगे कर्मस्थितिप्रमाण, उसका अर्थ होता है सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर कालप्रमाण।

अब विशेष यानी हर एक कर्म की अपनी-अपनी अलग-अलग उत्कृष्ट स्थिति होती है। देखो, किसी मिथ्यादृष्टि जीव ने एक ही समय के उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम में मिथ्यात्व कर्म का सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का स्थितिबंध किया, तो ज्ञानावरणादि का उत्कृष्ट स्थितिबंध कितना होगा मालूम है? जिसको यहां लिखा है न कि विशेष से उनकी कितनी-कितनी कर्मस्थिति होती है? यहां लिखा है देखो हम पढ़ेंगे उसको। दर्शनमोहनीय यानी मिथ्यात्व का उत्कृष्ट स्थितिबंध कितना है? यह स्थितिबंध की अपेक्षा बात चल रही है।

कर्मस्थितिकाल

सामान्य से ७० कोड़ाकोड़ी सागर
विशेष से

दर्शनमोहनीय	**७० कोड़ाकोड़ी सागर**
चारित्रमोहनीय	**४० कोड़ाकोड़ी सागर**
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय, वेदनीय	**३० कोड़ाकोड़ी सागर**
नाम, गोत्र	**२० कोड़ाकोड़ी सागर**
आयु	**३३ सागर**

यह कर्मस्थिति यानी कर्म का बंध होने पर उसमें जो उस समय निषेक रचना हो जायेगी; उसमें से अंतिम निषेक खिरने का काल कब आयेगा? तो यह इतनी स्थिति बांधी उतने काल के बाद आयेगा। जिसको हम यहां कहेंगे यह सामान्य से, कर्म की उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है, विशेष से यानी हर कर्म में अलग-अलग है। तो यहां दर्शनमोहनीय यानी मिथ्यात्व की बात है। दर्शनमोहनीय में तीन प्रकृति होती हैं। तो यहां जो सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर कह दिया है, वह कौनसी प्रकृति की बात है? *श्रोता: मिथ्यात्व की।* क्यों? *श्रोता: बंध योग्य तो एक ही प्रकृति है।* हां। देखो अन्य जो दो प्रकृतियां हैं वे बाद में तैयार होती हैं, बंध योग्य तो एक मिथ्यात्व प्रकृति ही है। पहली बार सम्यक्त्व होता है तो मिथ्यात्व प्रकृति में से उसका अनुभाग घटकर सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति नामक और दो प्रकृतियां तैयार होती हैं। हां, तो इसकी उत्कृष्ट स्थिति, किसकी? तो मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति कितनी है? *श्रोता: ७० कोड़ाकोड़ी सागर।* सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर। जब जीव सम्यक्त्व प्राप्त करता है, प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करता है, उसके पहले आयु कर्म को छोड़कर शेष सभी कर्मों की स्थिति तो अंत:कोड़ाकोड़ी सागर बना देता है। तो जो सम्यक्त्व होने के बाद उस मिथ्यात्व में से सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार होती हैं, उनकी स्थिति कितनी होगी? जितनी मिथ्यात्व की स्थिति है यानी अंत:कोड़ाकोड़ी सागर।

ऐसा कोई जीव है कि इससे ज्यादा भी स्थिति होती है, उन दो कर्मों की? हां, ऐसा

कोई जीव होता है कि जो मिथ्यात्व में है, यानी जिसको हम कहेंगे पहले औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त करके फिर दुबारा मिथ्यात्व में गिरकर आया है – सादि मिथ्यादृष्टि है। सादि मिथ्यादृष्टि है तो उसकी दो प्रकृतियां तो अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण थी। अब मिथ्यात्व में आया, तो मिथ्यात्व का बंध करने लगा। कभी हीनाधिक बंध करता है, तो अधिक से अधिक सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया है उसने और ऐसा भी जीव हो सकता है कि जो स्थिति का घात किये बिना वेदक सम्यक्त्व प्राप्त करे, यानी स्थिति को अंत:कोड़ाकोड़ी सागर किये बिना उसने सम्यक्त्व प्राप्त किया, एक अंतर्मुहूर्त में। सत्तर कोड़ाकोड़ी के बंध के बाद एक अंतर्मुहूर्त में परिणाम पलट गये। सम्यक्त्व प्राप्त किया तो उसके सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति की स्थिति सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर मायनस एक अंतर्मुहूर्त इतनी हो सकती है। ऐसे भी जीव पाये जाते हैं, यह सबके नहीं होता है परंतु स्थितिघात किये बिना उन्होंने सम्यक्त्व प्राप्त किया था। यानी किसीके परिणाम कैसे पलट सकते हैं यह इससे सिद्ध हो जाता है। *श्रोता: यह सत्तर कोड़ाकोड़ी का बंध किसको होता है?* सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का स्थितिबंध तो उत्कृष्ट संक्लेश परिणामवाले को होता है। *श्रोता: अभी होता है पंचमकाल में?* हां, पंचमकाल में होगा, क्यों नहीं होगा? हो सकता है और होता ही है ऐसा भी नहीं है। अभी उसमें वह तो अंतर में वगैरह हम नहीं पडेंगे। हो सकता है असंख्यातलोकप्रमाण काल तक चारों गतियों में से एक भी जीव सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का बंध न करे, यह पॉसिबल है। इसको हम नाना जीवों की अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिबंध का अंतर कह सकते हैं। अभी अपना विषय वह नहीं चल रहा है।

अभी हम देखेंगे दर्शनमोहनीय के मिथ्यात्व प्रकृति का उत्कृष्ट स्थितिबंध सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है। चारित्रमोहनीय का उत्कृष्ट स्थितिबंध चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय और वेदनीय का – वेदनीय का जब कहेंगे तो असातावेदनीय का उत्कृष्ट स्थितिबंध तीस कोड़ाकोड़ी सागर इतना होता है; नाम और गोत्र का बीस कोड़ाकोड़ी सागर है और आयु का तैंतीस सागर। हमने देखा है न मॅक्झिमम – यह मॅक्झिमम स्थितिबंध की बात चल रही है, हर बार इतना बंध सबको नहीं होता है। यहां तो देखो, इसके कारण ये जो हैं चालीसवाले, इनका नाम हैं चालीसिय; ये जो चालीस कोड़ाकोड़ी सागरवाले कर्म हैं न, कौनसे हैं? अनंतानुबंधी हैं, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन हैं, जिनका उत्कृष्ट स्थितिबंध चालीस कोड़ाकोड़ी सागर है; भले श्रेणी चढ़ने

के बाद उनका बंध अल्प-अल्प होता है, पर उनका नाम क्या है? चालीसिय। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय और वेदनीय ये चार जो तीस कोड़ाकोड़ी सागरवाले हैं इनका नाम है तीसिय और नाम और गोत्र ये जो बीस कोड़ाकोड़ी सागरवाले हैं उनका नाम है बीसिय। यानी हर बार यह इतना उत्कृष्ट बंध नहीं करते। कम से कम अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का भी स्थितिबंध होगा, फिर भी उनका प्रपोर्शन ऐसा ही रहेगा। उसमें भी बीसिय का जितना होगा उससे डेढ़गुणा तीसिय का होगा और दोगुणा चालीसिय यानी संज्वलन आदि का होगा। तो ये इनके नाम ही ऐसे हैं बीसिय, तीसिय और चालीसिय। आयुकर्म का उत्कृष्ट स्थितिबंध ३३ सागर है उसकी बात हमने पहले देखी है। इसको कहते हैं कर्मस्थिति। इन कर्मों का जो बंध हुआ है उस समय में बंधे हुये कर्म के कुछ परमाणु इतने काल तक जीव के साथ सत्ता में पड़े रहते हैं, तब तक उनका उदय पॉसिबल है, तो उसको कहेंगे यह कर्म की स्थिति इतनी है। हमें तो यहां काल को गिनना है। तो कभी-कभी कहते हैं कि कर्मस्थितिप्रमाण उस पर्याय में रहता है। बादर वायुकायिक में रहने का काल, बादर जलकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर निगोद में रहने का काल, कितना है? तो कहेंगे कर्मस्थितिप्रमाण है। उसका अर्थ क्या है? अधिक से अधिक सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर इतने काल तक उसी पर्याय में वह जीव जन्म-मरण करता रहता है।

श्रोता: त्रस पर्याय कुल २००० सागर की है तो इसका मतलब है वह नियम से निगोद में जायेगा, सत्तर कोड़ाकोड़ीवाला? देखो, यह सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का बंध करनेवाला जीव संज्ञी पंचेन्द्रिय है। आप कहते हैं त्रस का तो काल २००० सागर का है, बराबर है; पर २००० सागर में वह लगातार मिथ्यात्व कर्म बांध रहा है। कभी हीनाधिक, कभी सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का बांधेगा और मिनिमम अभव्य भी पंचेन्द्रिय की बात करें, अन्य की नहीं, तो वह अंत:कोड़ाकोड़ी का तो बंध करता ही रहता है। तो उसके कारण तो वह निगोद में नहीं जा रहा है परंतु इनका ऐसा प्रश्न है क्या कोई निगोद में जायेगा नियम से, जिसकी त्रस की स्थिति पूरी हुयी है? कायस्थिति में यह प्रकरण आयेगा, फिर भी आपका प्रश्न है तो यहीं पर बताते हैं। जो मार्गणा है जिसको हम त्रसकायिक कहेंगे, त्रस किसको कहना? द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय। इसमें लगातार त्रस में से त्रस, त्रस में से त्रस, बीच में एकेन्द्रिय नहीं हुआ तो उसको कहेंगे यह त्रस की कायस्थिति है। त्रसपर्याय में रहने का उत्कृष्ट काल, वह जो त्रस की कायस्थिति है वह कितनी है? तो त्रस कहने से

उसमें पर्याप्त, अपर्याप्त सब आ गये; २००० सागर और कुछ पूर्वकोटि वर्ष अधिक जिसको पृथक्त्व पूर्वकोटि कहेंगे। इतने काल तक वह लगातार त्रस में रहेगा, बाद में वह नियम से एकेन्द्रिय में चला जायेगा। निगोद की बात नहीं है, कोई भी एकेन्द्रिय, कोई भी एकेन्द्रिय। हो सकता है बाद में वह निगोद में भी चला जावे क्योंकि एकेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन है। उसमें से अकेले निगोद में रहने का काल ढाई पुद्गलपरावर्तन, इतना है। आपका प्रश्न है न किसीका, बार-बार कहते हो परावर्तन क्या होता है अर्धपुद्गलपरावर्तन? उसीको देखने के लिये हम इकठ्ठे हो गये हैं, *श्रोता: परावर्तन पूरा करने के लिये?* हां पूरा करने के लिये।

यह पुद्गलपरावर्तन देखेंगे हम, विस्तार से देखेंगे। उसके लिये यह भूमिका हम बांध रहे हैं कि यहां इतना काल बिताया, वहां इतना काल बिताया, तो है क्या यह? इतना परावर्तन का चक्कर क्या है? तो यह चक्कर ही है जो हम घूम-घूमकर बारंबार लगा रहे हैं। तो किसीने जो त्रस की अंतिम पर्याय है उसकी, २००० सागर पूरा होने को आया है, उस जीव ने सम्यक्त्व प्राप्त किया तो क्या होगा यह मेरा प्रश्न है। क्या कह रहे है? *श्रोता: क्या उसे सम्यक्त्व प्राप्त हो सकता है?* सम्यक्त्व प्राप्त हो सकता है, प्राप्त होने में क्या बाधा है? सम्यक्त्व तो प्राप्त कर ही सकता है, परंतु यदि उसी भव में मोक्ष प्राप्त करेगा तो ही एकेन्द्रिय पर्याय में जाने से बचेगा, नहीं तो सम्यक्त्व तो प्राप्त हो गया और उसकी त्रस की स्थिति समाप्त होने का काल नजदिक आया हो तो वह मिथ्यात्व में जाकर एकेन्द्रिय पर्याय में चला जायेगा। पर कोई भी जीव त्रस की उत्कृष्ट स्थिति से अधिक काल तक त्रसपर्याय में नहीं रह सकता। उसकी त्रस स्थिति पूरी हुयी है तो उस पर्याय के बाद तो उसको एकेन्द्रिय में जाना ही है। हां, हो सकता है उस अंतिम भव में उसने मुनि अवस्था भी धारण की, उपशमश्रेणी चढ़कर भी उतरा, फिर उतरकर मिथ्यात्व में जायेगा और बंध करेगा एकेन्द्रिय का और एकेन्द्रिय में चला जायेगा। *श्रोता: निगोद में?* निगोद में ही क्यों भेजते हो, उसको एकेन्द्रिय में भेज रहे हैं हम। अभी घबराने का बाकी है। हम घबराते नहीं हैं न, ढीठ होकर चल रहे हैं, तो थोड़ा हमें जागृत करने के लिये आचायों ने यह पांच प्रकार का संसार बताया है। इसको संसार कहते हैं, पांच प्रकार का संसार यह है, कौनसा? द्रव्यपरावर्तन या इसीको पुद्गलपरावर्तन कहते हैं, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन और भावपरावर्तन। वे कैसे-कैसे हैं उसीकी बात हम देखेंगे। यही विषय शुरू होनेवाला है

और साथ में वह दूसरी पुस्तक भी लाना अभी जीवकाण्ड की, अकेले एक पुस्तक लेकर नहीं आना। उसमें से विषय चलेगा अपना।

तो हमने यहां कर्मस्थिति की बात देखी, उसके विशेष प्रकार देखे। उसके बाद अपना प्रकरण है कायस्थितिकाल। यह कायस्थिति क्या होती है? यह शब्द तो सुना होगा आपने। इतनी कायस्थिति, किसीकी कायस्थिति कितनी है? काय यानी यहां शरीर के स्थिति की बात नहीं है। कायस्थिति यानी उस मार्गणा में रहने का उत्कृष्ट काल। जैसे मनुष्यपर्याय कहेंगे, मनुष्य का एक भव, फिर दूसरा भव, फिर तीसरा भव, फिर चौथा भव, लगातार मनुष्य में से मनुष्य में रहने का उत्कृष्ट काल वह मनुष्य की कायस्थिति कहेंगे। एकेन्द्रिय में से एकेन्द्रिय, एकेन्द्रिय में से एकेन्द्रिय, एकेन्द्रिय में से एकेन्द्रिय इसको कहेंगे एकेन्द्रिय की कायस्थिति। बादर एकेन्द्रिय जीव मरकर फिर बादर एकेन्द्रिय हुआ, फिर बादर एकेन्द्रिय हुआ उसको कहेंगे बादर एकेन्द्रिय की कायस्थिति। सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव मरकर फिर सूक्ष्म, फिर सूक्ष्म, फिर सूक्ष्म होगा तो उसको कहेंगे सूक्ष्म की कायस्थिति। अकेले सूक्ष्म पर्याप्त-पर्याप्त-पर्याप्त कहेंगे तो सूक्ष्मपर्याप्त की कायस्थिति।

देखो, सूक्ष्म जीव एकेन्द्रिय में होते हैं। सूक्ष्म पर्याप्त मरकर फिर सूक्ष्म पर्याप्त, फिर सूक्ष्म पर्याप्त तो अंतर्मुहूर्त से ज्यादा भव नहीं होंगे। सूक्ष्म में अपर्याप्त-अपर्याप्त-अपर्याप्त में रहेगा तो अंतर्मुहूर्त से अधिक भव नहीं होंगे। परंतु सूक्ष्म में कभी अपर्याप्त, कभी सूक्ष्म पर्याप्त, कभी सूक्ष्म अपर्याप्त, कभी सूक्ष्म पर्याप्त होता रहेगा तो सूक्ष्म एकेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? तो कहेंगे असंख्यातलोकप्रमाण काल है। उसमें कितने अभी कल्पकाल होंगे, इमॅजिन कर लो आप। कभी पर्याप्त कभी अपर्याप्त होता है तो हम कहेंगे, एक और एक अंतर्मुहूर्त मिलकर दो अंतर्मुहूर्त हो जायेंगे, ऐसा नहीं है। उसका असंख्यातलोक इतना लंबा काल है उसको कहेंगे सूक्ष्म एकेन्द्रिय की कायस्थिति। यह हर एक मार्गणा में लगायेंगे हम। केवल देवपर्याय और नरकपर्याय ऐसी है कि वहां का एक भव करने के बाद मरकर दुबारा उसी पर्याय में जन्म नहीं होता, मरकर मनुष्य या तिर्यंच में आना ही पड़ता है। इसलिये देवगति और नरकगति के जीवों की जो भवस्थिति है यानी वहां की उत्कृष्ट आयु ३३ सागर की है वही उनकी कायस्थिति है। परंतु अभी हमने देखा था वेदमार्गणा में स्त्रीपर्याय में रहने का उत्कृष्ट काल तो उसे हम कहेंगे, यह स्त्रीवेद की कायस्थिति है। यह आगम कैसे पढ़ना है उसकी यह टर्मिनॉलॉजी है, ये उसके पारिभाषिक शब्द हैं।

जब कायस्थिति ऐसा शब्द आयेगा, किसी मार्गणा का – हम वेदमार्गणा की बात करें। तो कोई नपुंसकवेद में अधिक से अधिक कितने काल तक भटक सकता है? लगातार नपुंसकवेद-नपुंसकवेद, तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन। ये नपुंसकवेदी तो मनुष्य भी हो सकते हैं, पंचेन्द्रिय तिर्यंच भी हो सकते हैं, नारकी तो होते ही हैं, परंतु एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक तो सारे नपुंसकवेदी ही हैं, तो इन्हीं पर्यायों में लगातार घूमने का उत्कृष्ट काल कितना है तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन प्रमाण। यह क्या कहते हैं उसको? कायस्थिति। जिस किसीकी बात कर रहे हैं; जिस मार्गणा की बात कर रहे हैं, उस मार्गणा में एक जीव की अपेक्षा उसीमें लगातार रहने का जो उत्कृष्ट काल है उसको कहेंगे कायस्थिति। देव और नारकी में क्या होगा? जितनी एक भवस्थिति है उतनी ही उसकी कायस्थिति है। ख्याल में आती है बात?

मनुष्यों में हमने क्या देखा? उनकी भवस्थिति कितनी होती है? मनुष्य का एक भव उत्कृष्ट से तीन पल्य का होता है। मनुष्यों में लगातार रहने का काल हमने कैसे गिना था? वे आठ-आठ भव किये थे स्त्री के, पुरुष के, नपुंसक के; फिर एक अपर्याप्त का; फिर उसके आठ-आठ-आठ किये थे और अंतिम भव में उसको भोगभूमि में रखा था, है न? तो कितने हो गये? सैंतालीस पूर्वकोटि और तीन पल्य। अब तिर्यंचों में, पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में रहने का उत्कृष्ट काल यानी पंचेन्द्रिय तिर्यंचों की कायस्थिति कितनी है? पंचेन्द्रिय कहा, उसमें संज्ञी पंचेन्द्रिय भी आ गये और असंज्ञी पंचेन्द्रिय भी आ गये। संज्ञी में भी उत्कृष्ट आयु उनकी करोड पूर्व की हो सकती है। असंज्ञी पंचेन्द्रिय की भी उत्कृष्ट आयु करोड़ पूर्व की हो सकती है। तो करोड़ पूर्व के उसने संज्ञी के आठ-आठ-आठ भव किये, असंज्ञी के आठ-आठ-आठ भव किये यानी आठ त्रिक चौबीस और चौबीस, अड़तालीस हुये। फिर एक अपर्याप्त का भव किया और फिर अड़तालीस भव किये; ऐसे अड़तालीस और अड़तालीस कितने होंगे? नाइंटी सिक्स हो जायेंगे। अंतिम भव उसका भी भोगभूमि में रखेंगे तो उसके भी नाइंटी फाइव्ह पूर्वकोटि प्लस तीन पल्य, यह पंचेन्द्रिय तिर्यंच में रहने का उत्कृष्ट काल है। इसको भी पृथक्त्व पूर्वकोटि अधिक तीन पल्य कहेंगे।

पृथक्त्व शब्द का अर्थ-प्रमाण अलग-अलग जगह अलग-अलग होता है। मनुष्यों में तो हमने देखा था, उसको तो हमने सैंतालीस पूर्वकोटि देखा था और यहां पंचेन्द्रिय तिर्यंच

में तो नाइंटी फाइव्ह पूर्वकोटि कह रहे हैं। ख्याल में आयी न बात? तो वहां तो ग्रंथों में केवल इतना ही लिखेंगे, पृथक्त्व पूर्वकोटि। वह कितनी है? वह गिनने का काम अपना है। देखिये हर बार वह पूरी चर्चा नहीं करेंगे, इतना ही बता देंगे। *श्रोता: तीन से आठ के बीच का सामान्य जो लेते हैं?* वह तो पृथक्त्व का सामान्य अर्थ है, पर पृथक्त्व का अर्थ हर जगह ऐसा नहीं है। कहीं-कहीं हजारों के लिये भी पृथक्त्व शब्द आयेगा क्योंकि श्रेणी में इतनी-इतनी बार स्थितिकाण्डकघात होते हैं, वगैरह-वगैरह। यहां तो कोड़ाकोड़ी बार होते हैं। फिर भी कहेंगे हजारों बार होते हैं, पृथक्त्व बार होते हैं। *श्रोता: ये तिर्यंचों के पंचानबे पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों लिये इसमें?* पर्याप्त-अपर्याप्त नहीं लिये, संज्ञी-असंज्ञी के पर्याप्तों के भव लिये, इसलिये डबल हो गये न? मनुष्यों में तो केवल हमने चौबीस और चौबीस, अड़तालीस लिये। वहां तिर्यंचों में संज्ञी के भी अड़तालीस और असंज्ञी के भी अड़तालीस तो नाइंटी सिक्स भव हो गये। यह तो लगातार रहने की बात है। यह हमने अभी-अभी आपको पढ़कर बताया न, २७४ पृष्ठ पर, मार्गणा में रहने का जघन्य काल और उत्कृष्ट काल उसकी बात अपनी हुयी थी। *श्रोता: सिद्धों में मार्गणा है?* नहीं, ये मार्गणायें संसारी जीवों के ऊपर लगाते हैं। सिद्धों में हम कहेंगे उनको तो कोई गति नहीं है, पंचमगति कहेंगे उनके लिये। तो ये मार्गणायें यानी ये संसारी जीवों के भेद करते हैं इसलिये उनको मार्गणायें कहते हैं। ये सारे मार्गणास्थान संसारी जीवों में घटित करते हैं हम। अभी हम आगे का काल का प्रकार देखते हैं।

हमने जो देखे थे छह प्रकार के काल, उसमें से हमने कायस्थितिकाल किसको कहना उसकी बात देखी। एक होता है उपपादकाल, उपपाद का अर्थ होता है जन्म का पहला समय। एक समय का ही होगा उसका काल, उसमें हीनाधिकता तो कुछ है ही नहीं। ख्याल में आती है बात? उपपाद का अर्थ क्या है? जन्म। आपने उपपाद शैय्या यह नाम तो सुना होगा। देवों में होती हैं, वहीं उनका जन्म होता है, वहीं उनकी पर्याप्ति पूरी होती हैं और वहां देव युवा अवस्था में ही उत्पन्न होते हैं, वहां कोई बालक नहीं जन्मते। जैसे अन्यमती समझते हैं कि यह देव है, यह देवी है, उनका बालक हुआ, वह बड़ा हुआ है। ऐसी बात नहीं होती वहां पर। नरकों में भी वहां उपपाद जन्म है उनका। उपपाद जन्म यानी उनके जन्म के कोई स्थान होते हैं जो उनके बिलों के छत में मधुछत्ते के समान होते हैं उसीमें वे नारकी उत्पन्न होते हैं उन स्थानों में अंदर नुकीले शस्त्र जैसी रचना होती है और

उसीमें से कटते-कटते नारकी नीचे आते हैं और भूमि पर गिरते हैं। फिर उछलकर ऊपर जाते हैं फिर नीचे गिरते हैं और नीचे भी कहां, जहां शस्त्र आदि जैसी रचना होती है भूमि पर, वहीं से उनके जो भूमि संबंधी दु:ख हैं वे चालू हो जाते हैं। यह तो हो गयी अपनी कायस्थिति की बात और यह उपपाद की बात। उपपाद काल तो एक समय का है उसमें अधिक स्थिति नहीं होती है।

फिर आगे हम देखते हैं, यह कर्मस्थिति की भी बात हो गयी है, हां। अब जो भाव की बात है, भावस्थितिकाल। भाव का अर्थ क्या लेना है? कि जीवों के परिणाम। तो जीवों के परिणाम भी अलग-अलग होते हैं। तो एक ही भावरूप से रहने का काल उसको कहेंगे भावस्थिति का काल यानी वैसा का वैसा परिणाम। वैसा का वैसा परिणाम लगातार अधिक समय तक नहीं रहता। देखो, समय कितना सूक्ष्म है हमने देखा था। कोई एक जैसा स्थितिबंध करेगा, एक पर्टिक्युलर स्थिति बांधने का जो परिणाम है, वही परिणाम कायम रहेगा ऐसी बात नहीं। भले ही वह स्थिति उतनी बंधती है पर परिणामों में बहुत सारे व्हेरिएशन्स हो जाते हैं। तो कहते हैं एक ही परिणाम में रहने का काल, कमसे कम दो समय से लेकर अधिक से अधिक आठ समय तक होता है, ज्यादा नहीं होता। यह तो बात आगे आयेगी अपने भावपरावर्तन में। यहां तो हम उसकी थोड़ी इंट्रोडक्शन कर रहे हैं कि क्या हैं परिणामों में अलग-अलग? कि जो स्थिति के बंध के कारणरूप परिणाम हैं वे अलग, उसीके साथ उसमें से एक-एक परिणाम में अनुभागबंध के कारण की अपेक्षा अगर हम चर्चा करेंगे तो उसमें तो असंख्यातलोकप्रमाण भेद हैं। स्थिति बांधने का जो एक-एक परिणाम है उसी परिणाम में अनुभागबंध की अपेक्षा से देखेंगे तो असंख्यातलोकप्रमाण व्हेरिएशन्स हैं, इतने अलग-अलग भेद हो सकते हैं। तो इन परिणामों में कितनी सूक्ष्मता है। अब वैसा का वैसा परिणाम दूसरे समय में हो, यह तो बात असंभव जैसी है। किसी जीव के हो सकता है दो समय तक हो, अधिक से अधिक चार समय तक हो परंतु वह वैसा होना ही चाहिये ऐसी बात नहीं है। उसमें बहुत सारी उलट-पुलट बातें हो जाती हैं।

जीवों के ये बंध के परिणाम कौन-कौनसे हैं? योग से प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध होता है और कषाय से स्थितिबंध और अनुभागबंध होता है। यह तो बहुत सामान्य कथन है। वह कषाय से जब हम स्थिति और अनुभागबंध कहते हैं, उस एक परिणाम में स्थितिबंध के

परिणाम अलग और अनुभागबंध के परिणाम अलग। उसी एक परिणाम में इतने व्हेरिएशन्स हैं और फिर योंगों के व्हेरिएशन्स, योग के जो अलग-अलग भेद हैं वे तो अलग। योग भी हीनाधिक होता है; उसमें हीनाधिकता होती रहती है और उसके कारण जो कर्म परमाणु हम बांधते हैं उसमें भी उनकी संख्या हीनाधिक होती रहती है। तो इन सभी में परिवर्तन होता है। एक ही योग में रहने का काल या एक ही परिणाम में रहने का उत्कृष्ट काल, जघन्य दो समय से लेकर आठ समय लगातार वैसा का वैसा परिणाम रह सकता है। किसीका रहेगा तो, परंतु यह बात आवश्यक है नहीं। तो उसको भावस्थितिकाल कहने में आता है।

तो ये सभी जो काल हमने देखे हैं तो ये हम क्यों गिनते हैं? ये काल जो हमने अभी तक गिने, अलग-अलग हमने ये छह प्रकार से काल गिने। कौन-कौनसे हैं, याद है न? कौनसे हैं? लिखे हैं न आपने? हां, बोलो-बोलो, हां पढ़कर, क्योंकि क्या है पढ़कर भी बतायेंगे तो कोई बात नहीं है, विषय हमारे लिये नया है। *श्रोता: गुणस्थितिकाल।* गुणस्थितिकाल यानी गुणस्थान में – हम यहां एक जीव की अपेक्षा बात करेंगे। एक ही जीव किसी गुणस्थान में कम से कम और अधिक से अधिक कितने काल तक रहता है तो उसको हम कहेंगे गुणस्थितिकाल। दूसरा कौनसा देखा था? *श्रोता: भवस्थितिकाल।* भवस्थिति यानी एक भव देव का हो, नारकी का हो, तिर्यंच का हो या मनुष्य का हो, उस एक भव का जो उत्कृष्ट काल है उसको कहेंगे यह भवस्थिति का काल है। तीसरी बात हमने क्या देखी थी? *श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* हां, कर्मस्थितिकाल। तो कर्मस्थिति कितनी बांधता है? स्थितिबंध की बात हमने देखी थी तो यह कर्मस्थिति का काल है। वह अलग-अलग कर्मों में अलग-अलग है।

देखो, इससे एक बात सिद्ध हो जाती है। परिणाम तो एक और कर्म कितने बंधते हैं एक समय में? *श्रोता: सात या आठ।* सात या आठ और हर कर्म में स्थिति अलग पड रही है। इससे क्या सिद्ध होता है? *श्रोता: निमित्त के अनुसार कार्य नहीं होता है।* हां, निमित्त के अनुसार कार्य नहीं होता है। अपने-अपने उपादान के अनुसार होता है। ज्ञानावरण में तो तीस कोड़ाकोड़ी सागर का स्थितिबंध हुआ और मोहनीय में सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का हो सकता है; मॅक्झिमम की बात है। परिणाम तो एक ही उत्कृष्ट संक्लेशवाला है और नाम, गोत्र का तो बीस कोड़ाकोड़ी सागर का होता है। तो ऐसा क्यों? कोई पुद्गल ज्ञानावरणरूप

से परिणमता है और कोई पुद्गल तो मोहनीयरूप से परिणमता है, उसमें भी स्थिति अलग-अलग बंधती है। अब ज्ञानावरण की जो तीस कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति बंधती है तो एक समय में कितने परमाणु बंधते हैं? तो अनंत बंधते हैं। उसमें जो निषेक रचना होती है; पहला निषेक कितने समय का है, तीन हजार वर्ष और एक समय, वहां अनंत परमाणु; तीन हजार वर्ष और दो समय वहां अनंत परमाणु और अंतिम लास्ट निषेक जो तीस कोड़ाकोड़ी सागरवाला पड़ा है उसमें भी अनंत परमाणु। उनकी स्थिति कितनी? तीस कोड़ाकोड़ी सागर। एक समय में बंधनेवाले अनंत परमाणु में – एक ही प्रकृति के अनंत परमाणुओं में स्थिति के इतने व्हेरिएशन्स हैं। उसका अर्थ क्या है? निमित्त से कार्य नहीं होता। उस पुद्गल की अपनी-अपनी उपादान की योग्यता से कार्य होता है। हर बार हमें ऐसा लगता है कि करणानुयोग है न, वह तो निमित्त का ही कथन करता है। निमित्त का कथन भले करे परंतु उसके हर वाक्य में यह सिद्ध होता है कि निमित्त से कुछ कार्य नहीं होता है। कार्य तो अपने उपादान से ही होता है। पुद्गल परमाणु में भी अपनी उपादान की योग्यता है। जीव के परिणाम वहां निमित्तरूप से हैं। परंतु वहां कर्म की जो स्थिति बंधती है; उसमें जो उपशम होता है; उसमें जो संक्रमण होता है; जो कुछ होता है वह उसकी अपनी स्वयं की उपादान की योग्यता से होता है।

श्रोता: कार्माणवर्गणाओं के रूप में भेद है? हां, कार्माणवर्गणा ही अलग-अलग प्रकार की हैं। जो कार्माणवर्गणा मोहनीयरूप से परिणमित होती है वह कार्माणवर्गणा ही अलग है। जो ज्ञानावरणरूप होती है वह कार्माणवर्गणा ही अलग है और ऐसी सभी कर्मों की मिलकर जो कार्माणवर्गणा ग्रहण करता है जीव एक समय में, उसीका ही आठ में विभाजन होता है। जैसे हम अन्न खाते हैं; अन्न में से तो लोहीरूप होनेवाले परमाणु अलग हैं, है न? अन्न में से चर्बी भी हो जायेगी, उसमें जो प्रोटीन है उसमें से अमायनो ॲसिड बनेंगे, खून किसका बनेगा? जो लोह वगैरह है उसका हिमोग्लोबिन बनेगा; जो कॅल्शियम है वह हड्डीरूप से हो जायेगा। तो ये परमाणु जैसे अलग-अलग अवयवरूप से उनमें टर्न हो जायेंगे, वैसे ही यह कार्माणवर्गणा भी अलग-अलग प्रकार की है। उसमें भी अनंत भेद होंगे, स्थिति और अनुभाग की अपेक्षा। स्थिति में तो असंख्यात भेद पड़ेंगे, अनुभागों में तो अनंत व्हेरिएशन्स, अनंत भेद पड़ सकते हैं। इससे क्या सिद्ध होता है कि निमित्त से कार्य नहीं होता।

हमें बात तो वह सिद्ध करनी है यानी जो निमित्तप्रधान कथन करनेवाला जो अनुयोग है, उसी अनुयोग के द्वारा यह सिद्ध हो जाता है कि कार्य तो उपादान से ही होता है। उसका जो नियामक कारण है वह उपादान ही है, निमित्त नहीं है और कर्मों की जो हम इतनी सारी बातें पढते हैं तो उनको देख-देख कर लगता है कि कर्मों का हम ऐसा उपशम करेंगे या क्षय करेंगे। हमें क्या करना चाहिये? आपका क्या कहना है? *श्रोता: उसमें हम कुछ नहीं कर सकते।* उसमें हम कुछ नहीं कर सकते यह निर्णय करना है। हम जाते थे प्रवचनार्थ, तो कहीं गये थे। यहां पर कोई देऊळगांवराजा के आये क्या? वहां किसी एक महिला ने ऐसा प्रश्न पूछा था, चिठ्ठी भेजी थी कि वे बेचारे मुनिराज ऐसा क्यों करते हैं? हमें पता है कि उपशमश्रेणी चढ़नेवाला गिरता है तो वे बेचारे मुनिराज उपशमश्रेणी चढ़ते ही क्यों हैं? उसमें कोई बिचारेपना नहीं है। उपशमश्रेणी चढ़ने का अपूर्व पुरुषार्थ होता है। इतनी विशुद्धि होती है कि एक छोटे अंतर्मुहूर्त में पूर्ण वीतराग अवस्था प्राप्त होती है और वह सहजरूप से होती है। मुनिराज तो अंतरंग में स्थिर है; वे उपशमश्रेणी चढ़े कि क्षपकश्रेणी, वे तो कर्मों में जो कुछ बातें बननी हैं वे सहजरूप से उस विशुद्धि के निमित्त से होती हैं। जैसी विशुद्धि है वैसी उसकी वह बात होगी। उसमें भी बहुत सारे नियम हैं करणानुयोग के। परंतु हम ऐसा सोचते हैं न कि उनको उतरना पडता है तो वे क्यों चढ़ते हैं!

तो यह जो हमने अभी तक काल बिताया है, उसका हम यहां माप लेने जा रहे हैं। यह नाप तो हमने छोटे-छोटे आवली में देखा, पल्य में देखा, सागर में देखा; तो इतनेसे नाप से क्या होगा? हमने तो अनादि से कितना काल बिताया है? *श्रोता: अनंत-अनंत।* अनंतकाल बिताया है। वह अनंतकाल किस प्रकार से बिताया है? कितना काल गया है? उसका अंदाजा तो हमें हो जावे, इसलिये आचार्यों ने जो सत्य वस्तुस्थिति है उसको इस परावर्तन की भाषा में बताया है। परिवर्तन कहो या परावर्तन कहो एक ही बात है। परावर्तन का अर्थ क्या होता है? घूमकर उसी पॉइंट पर वापस आना उसको कहेंगे परावर्तन यह तो हमें मालूम है। हम भी सुबह घूमने को जाते हैं न, हम कहते हैं कितने परावर्तन लगाये आपने? चक्कर लगाये? हं, पांच लगाये, अच्छा। यहां पर भी हम पांच परावर्तन अनादि से लगा रहे हैं। जो मिथ्यादृष्टि जीव है, उसने अनादि से आज तक कितना काल बिताया है उसकी बात यहां चल रही है; उसको कहेंगे संसार; यह संसार पांच प्रकार का है; इसको कहते हैं पांच प्रकार का संसार। द्रव्यपरावर्तनरूप संसार, क्षेत्रपरावर्तनरूप संसार, कालपरावर्तनरूप संसार,

भवपरावर्तनरूप संसार और भावपरावर्तनरूप संसार। तो ये इतने अलग-अलग प्रकार बताये हैं तो उनमें सबसे छोटे में छोटा कौनसा काल है? इसमें तो हम काल गिन रहे हैं। यह पुद्गलपरावर्तन का भी जो काल हम गिनेंगे, किस प्रकार से गिनेंगे, उसका अंदाजा ले लेंगे हम, परंतु वह जो गिनने का तरीका है; गिनने का जो माप है; तो इनमें से सबसे छोटा कौनसा है? यह हम पूछेंगे। तो जिसका नाम पहले लिया, जिसको हम पुद्गलपरावर्तन कहेंगे या द्रव्यपरावर्तन कहेंगे वह इनमें से सब से छोटा काल है।

तो पुद्गलपरावर्तन का काल कितना है? तो कहते हैं अनंतकाल है। परंतु उससे भी अनंतगुणा काल एक क्षेत्रपरावर्तन का है। नहीं समझे? हमारे हर एक के हाथ में घड़ी है, है न? उसमें कितनी सूइयां हैं? कांटे, मराठी में कांटे कहते हैं। तीन; एक है घंटेवाली सूई, एक है मिनटवाली और एक है सेकंडवाली। तो घंटेवाली सूई अभी कितने, वह पांच बजने को आये हैं, तो यह घंटेवाली सूई दुबारा पांच पर आये तो उसमें कितना काल लगेगा? बारह घंटे लगेंगे। बराबर है न? बराबर? यह मिनटवाली जो अभी बारह पर है, वह मिनटवाली फिर दुबारा बारह पर आये, तो कितना काल लगेगा? *श्रोता: साठ सेकंड।* साठ सेकंड का तो एक मिनट हो जायेगा। अभी पांच बजे हैं तो बारह पर मिनट की सूई है, मिनट की बात करें। हां, अभी पांच बजे हैं, जाते-जाते सवा पांच हुये, फिर साढ़े पांच हुये, फिर पौने छह हुये, फिर छह हुये, तब जाकर वह मिनट की सूई फिर बारह पर आ गयी न, कितना काल लगा? साठ मिनट यानी एक घंटा लगा। सेकंड की सूई को एक टर्न पूरा करने के लिये, एक परावर्तन करने के लिये कितना काल लगता है? सेकंड की सूई को वह पूरा एक राऊंड लगाने के लिये एक मिनट लगेगा न, कितना लगेगा? *श्रोता: एक मिनट।* एक मिनट। ख्याल में आती है बात? तो सबसे कम काल किसको लगता है? *श्रोता: सेकंडवाली सूई को।* सेकंडवाली सूई को, कितना काल लगता है? एक मिनट में वह एक राउंड पूरा करती है। मिनटवाली सूई को एक पूरा राउंड करने के लिये एक घंटा लगता है और वह अवरवाली-घंटेवाली सूई, उसे एक पूरा राउंड करने के लिये बारह घंटे लगते हैं। यह तो बात ख्याल में आयी? यह तो सबके परिचय की बात है।

ऐसे ही घंटेवाली सूई बारह घंटों में एक परावर्तन करती है न, तो उसमें बाकी सूइयां ज्यादा बार घूमेंगी कि नहीं घूमेंगी? और अधिक बार कौन घूमेगी? *श्रोता: सेकंडवाली।*

सेकंडवाली। उससे कम बार? *श्रोता: मिनटवाली।* मिनटवाली और उससे कमबार? *श्रोता: घंटेवाली।* घंटेवाली। ख्याल में आया? यानी जिसको अधिक समय लगता है उसके परावर्तन कम बार होते हैं यह तो सरल है न उदाहरण, हां! यहां पर ऐसा ही है। सबसे कम काल किसको लगता है? अनंतकाल सबको लगता है। उसमें सबसे कम से कम काल किसको लगता है? तो कहते हैं पुद्गलपरावर्तन होने के लिये सबसे कमवाला अनंतकाल लगता है; उसके नेक्स्टवाला जो क्षेत्रपरावर्तन है तो क्षेत्रपरावर्तन होने के काल में जीव के पुद्गलपरावर्तन कितनी बार होंगे? तो कहेंगे अनंत बार होंगे। तो एक कालपरावर्तन होने में क्षेत्रपरावर्तन कितनी बार होंगे? तो कहते हैं अनंत बार क्षेत्रपरावर्तन होते हैं तब जाकर एक बार कालपरावर्तन पूरा होता है। तो भवपरावर्तन पूरा होने में कितना काल लगता है? तो ये जो कालपरावर्तन हैं वे अनंत बार हो जाते हैं तब जाकर एक भवपरावर्तन पूरा होता है और आखिरवाला जो भावपरावर्तन है वह पूरा होने में कितना काल लगता है? तो ये भवपरावर्तन भी अनंत बार होते हैं तब जाकर एक बार भावपरावर्तन होता है। तो यह होता क्या है? कि परावर्तन होता है यानी क्या होता है? और हमें उससे छूटना है तो क्या करना है? हमारा सवाल तो यही है न! हम तो नहीं करना चाहते हैं। लोग पूछते हैं इसतरह करना पडेगा क्या? अभी कितना बाकी है हमारा? आप नक्की करो कितना बाकी है। इसमें से छूटने का मार्ग है सम्यग्दर्शन की प्राप्ति। जो कोई जीव सम्यक्त्व प्राप्त करता है वह सबसे छोटावाला जो पुद्गलपरावर्तन है, उसके आधे काल जितने काल में उस जीव का मोक्ष निश्चित है। वह आधा काल और पूरा काल कितना है? उसको हम देखेंगे विस्तार से।

परंतु जब बार-बार हम कहेंगे, कोई भी जीव एक बार सम्यक्त्व प्राप्त करता है और वह बाय चान्स मिथ्यात्व में आ भी जाये; तो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक रखड सकता है, इससे अधिक नहीं। कोई सम्यक्त्व प्राप्त करेगा और जल्दी मोक्ष प्राप्त करेगा तो सवाल ही नहीं कोई, उसी भव में मोक्ष चला जायेगा। हम अधिक से अधिक काल की बात कर रहे हैं। कोई सम्यक्त्व प्राप्त करके गिर भी जाये और मिथ्यात्व में चला जाये, एकेन्द्रिय में भी चला जाये, तो अभी वहां रहने का काल कितना है उसका? बस अर्धपुद्गलपरावर्तन से अधिक नहीं, कुछ कम; क्योंकि सम्यक्त्व प्राप्ति से उसका अभी मोक्ष निश्चित हो गया है। दूसरी भाषा में हम कहेंगे किसी जीव को सम्यक्त्व प्राप्त होता है तो मोक्ष जाने के पूर्व में अर्धपुद्गलपरावर्तन काल ही अर्लिएस्ट उसको सम्यग्दर्शन होगा, उसके पहले नहीं हो

सकता। अगर वह पुरुषार्थ करे तो? उसका वैसा पुरुषार्थ होगा ही नहीं क्योंकि पर्याय उसी समय होगी तो उस पर्याय संबंधी उसका वैसा पुरुषार्थ भी उसके पहले नहीं होगा।

मान लेते हैं देखो यह लकड़ी है तो यहां लकड़ी के टॉप में उसका मोक्ष होना है और यहां सेंटर में उसका मोक्ष के पूर्व का अर्धपुद्गलपरावर्तन काल है, उसके पहले उस जीव को सम्यक्त्व होगा ही नहीं। यहां पर होना ही चाहिये ऐसी बात नहीं है; इतने काल में यानी सेंटर से टॉप तक कहीं पर भी हो सकता है; परंतु अर्लिएस्ट कब होगा? तो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल पहले। उसीको कहीं-कहीं शास्त्र में काललब्धि भी कहते हैं। यानी मोक्ष से अधिक से अधिक पहले कब सम्यक्त्व हो सकता है? मोक्ष जाने के पहले उसका अर्धपुद्गलपरावर्तन काल बाकी है तब उसको सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होगी। ऐसा जीव यदि मिथ्यात्व में भी जाता है तो ऐसे मिथ्यात्व में घूमने का उसका अधिक से अधिक काल कितना है? तो कुछ कम अर्धपुद्गलपरावर्तन कालप्रमाण है। अभी इसमें यह पूछा था न, अर्धपुद्गलपरावर्तन काल कितना होता है? वह कितना होता है वह तो हम देखेंगे। जब एक पुद्गलपरावर्तन का काल देखेंगे तब उसका आधा काल है वह अर्धपुद्गलपरावर्तन काल है ऐसा हम कहेंगे; वह भी अनंतकाल है। परंतु अनंत भी गिनेंगे कैसे? तो उसके गिनने के ये कुछ तरीके हैं।

आप कहेंगे अनंत तो उसीको कहते हैं जिसका अंत नहीं है और यहां तो एक अनंत हुआ, फिर दूसरा अनंत हुआ, फिर तीसरा अनंत हुआ यह कैसे होगा? क्योंकि अनंत भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। एक होता है सक्षय अनंत और एक होता है अक्षय अनंत। जिसका कभी अंत ही नहीं है वह अक्षय अनंत है। एक होता है सक्षय अनंत; जैसे पुद्गलपरावर्तन का काल हम गिन रहे हैं। एक पुद्गलपरावर्तन पूरा हुआ, कितना काल लगा? अनंत। फिर दूसरा पुद्गलपरावर्तन शुरू हुआ, उसका अर्थ पहला पूरा तो हो गया न, तो उसमें तो कुछ तो लिमिट आ गयी कि नहीं आ गयी? क्योंकि अनंतों के भी अनंत भेद हैं और ये सर्वज्ञ भगवान के प्रत्यक्ष ज्ञान के विषय हैं। हम उनको अनंतकाल तक नहीं गिन सकते। हम कहेंगे उसको हम कम करेंगे, कम करेंगे उसमें से उसको अनंत का भाग देते जायेंगे तो परंतु हम उतनी बार करेंगे तो यह हमारे पकड़ की बात नहीं है। अनंतकाल तक हम करेंगे तो उसमें से कम नहीं होनेवाला। एक से अनंत तक की यह सब संख्या तो

निश्चित है। वह तो सर्वज्ञ भगवान के ज्ञान का विषय है। हमारे और अवधिज्ञानियों के ज्ञान का वह विषय नहीं है। हम जो जान रहे हैं वह श्रुतज्ञान के द्वारा, आगम के द्वारा जान रहे हैं। हम भी इसको सही जान रहे हैं। परंतु जैसा सर्वज्ञ भगवान को उसका प्रत्यक्ष ज्ञान है वैसा हमें प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं है, हम इसको परोक्ष रीति से जान रहे हैं। तो यह पुद्गलपरावर्तन क्या होता है? उसको जानने के लिये हमें जीवकाण्ड के दूसरे भाग की आवश्यकता होगी। जब शाम को मिलेंगे तो दूसरा भाग साथ में लाना, पहला भी रखना साथ में। अरे हमारे छोटे-छोटे बच्चे – प्रायमरी क्लास के वे भी इससे ज्यादा बोझा लेकर घूमते हैं। जरा यहां आते समय आप पुस्तकें भी साथ में लेकर आयेंगे। अभी बस दो मिनट बाकी हैं, कोई प्रश्न है तो पूछना अभी, नहीं तो हम शाम को मिलेंगे।

श्रोता: पुद्गल में उसका उपादान ही काम करता है तो फिर जीव के परिणाम होते हैं और ये कर्म पुद्गल हैं तो फिर जीव जैसा परिणमन करे, परिणाम करे वैसा तो पुद्गल परिणमता है तो फिर... उसको कहते हैं निमित्त-नैमित्तिक संबंध। *श्रोता: ये ऐसा दिखता है न – जैसा जीव परिणमन करे, परिणाम करे वैसा पुद्गल परिणमता है...* नहीं, ऐसा सर्वथा नहीं कहेंगे हम। उसमें भी बहुत सारे भेद हैं, बहुत सारी बातें हैं तो उसकी चर्चा हम करेंगे। इनका प्रश्न ऐसा है कि जीव जैसा परिणाम करता है वैसे कर्मों में बंध भी होता है, उनमें भी परिणमन होता है। परंतु जो नहीं होने योग्य पुद्गलों में होता है कि होने योग्य पुद्गलों में होता है?

जहां जीव की सत्ता है, जहां जीव के प्रदेश हैं उसी क्षेत्र में अनंतानंत पुद्गल परमाणु पाये जाते हैं परंतु उनमें से उनके अनंतवें भागप्रमाण परमाणु ही कर्मरूप से परिणमित हो जाते हैं। तो सारे के सारे क्यों नहीं परिणमते? जीव के परिणामों के कारण ही बदलना है तो सबको बदलना चाहिये। उसकी चर्चा हम करेंगे, अभी तो यहीं हम रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

५. परावर्तन – ५ प्रकार

षट्खण्डागम के आधार से हम कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। उसमें हमने देखे अनेक प्रकार के काल होते हैं। याद है न कुछ-कुछ? *श्रोता: गुणस्थितिकाल।* गुणस्थितिकाल, दूसरा? *श्रोता: भवस्थितिकाल।* भवस्थितिकाल, *श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* कर्मस्थितिकाल, *श्रोता: कायस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल, *श्रोता: उपपादकाल।* उपपादकाल और? *श्रोता: भावस्थितिकाल।* भावस्थितिकाल। तो इन अलग-अलग प्रकार के कालों को देखते हुये, इसमें बहुत बार हमने किसी-किसी मार्गणा में या तिर्यंचों में या एकेन्द्रियों में ऐसा वर्णन सुना है कि एकेन्द्रियों में रहने का काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन प्रमाण है। कोई जीव सम्यक्त्व से भ्रष्ट होता है, तो मिथ्यात्व में घूमने का लंबे से लंबा काल अर्धपुद्गलपरावर्तन होता है। तो यह पुद्गलपरावर्तन क्या है? अन्य भी कौन-कौनसे परावर्तन होते हैं? उनका स्वरूप क्या है? यह तो काल गिनने का नाप है। हमने अनादि से आज तक अनंतकाल बिताया है और अनंतकाल अभी बाकी है। तो उसको गिनने का तरीका कुछ होना चाहिये। तो उसके लिये माप भी अनंत का है; परंतु अनंत में भी बहुत सारे भेद हैं; इसलिये यहां जो हम घूम रहे हैं, संसार में जन्म-मरण, जन्म-मरण कर रहे हैं तो कितने काल तक घूमकर हम यहां आये हैं मनुष्यपर्याय में, यह देखने के लिये यहां इस पंच परावर्तन की बात चल रही है।

हमने देखा है कि सम्यग्दर्शन होने के पश्चात् कोई मिथ्यात्व में गिर भी जावे, तो अर्धपुद्गलपरावर्तन उसका संसार में रहने का उत्कृष्ट काल है। यह हमने देखा था न, तो यह गिनना कैसे है? यह परावर्तन क्या है? उसके लिये हमने दोपहर में थोड़ी बात उठायी थी। अब यहां जीवकाण्ड भाग २, पेज नंबर है ६५० निकालना। इन परिवर्तनों का स्वरूप समझने के लिये पहले हमने जो घड़ी का दृष्टांत देखा था, वही दृष्टांत अभी हम पुस्तक में से पढ़ने जा रहे हैं। दृष्टांत तो आपने सुन लिया, फिर दुबारा यहां हम पढ़ेंगे तो बात हमें पक्की ख्याल में आ जायेगी। क्योंकि एक बार सुनकर कभी-कभी हम भूल जाते हैं, भूलने की आदत है न हमको। यह विषय हमारे लिये नया है, इसलिये बार-बार सुनने से ये बातें ख्याल में भी आती हैं, याद में भी रहती हैं और उनका अर्थ भी भासित होता है।

आप कहेंगे, हमें तो कुछ नहीं मालूम, यह सब कुछ हमारे लिये नया है। आपके घर में बच्चा जन्म लेता है, तो उसके लिये क्या-क्या नया है? और उसके सामने हम क्या-क्या बातें करते हैं? महिलाओं से पूछ लो यह सब। उसकी बारात तक ले आते हैं, क्यों मंजूबहन? तो उस बच्चे के साथ इतनी बातें करते हैं हम सब कि छह महीने में उस बच्चे को समझना तो चालू हो ही जाता है और कुछ थोड़े महीनों में तो वह बोलना भी चालू करता है, डेढ़ साल, दो साल में तो इतना बड़बड़ाता है कि बाकी लोगों को चुप बैठना पड़ता है। हम भी जब यह पहली बार सुनते हैं तो सुनते-सुनते-सुनते वही बात हम बार-बार, बार-बार सुनेंगे, पढ़ेंगे, समझेंगे, तो हम भी उसके साथ परिचित हो जायेंगे, यह कोई कठिन बात नहीं है।

लोगों ने उसका हौवा बना लिया है कि करणानुयोग बहुत कठिन बात है। करणानुयोग के अभ्यास में तो उपयोग इतना लगता है, उसमें उपयोग की सूक्ष्मता इतनी होती है कि मन कहीं इधर-उधर नहीं भटकता है। समय कहां पसार हो गया वह ख्याल में नहीं आता है। दूसरे को बताना पड़ता है अभी घंटा हो गया, अभी बंद करो। यह तो कोई फालतू की बात नहीं है, ये तो सर्वज्ञ भगवान ने बतायी हुयी जो सारी सत्य बातें हैं उन्हें हम यहां सुन रहे हैं, समझ रहे हैं। उनके कारण ज्ञान की निर्मलता बढ़ती है क्योंकि इस विषय संबंधी अपना ज्ञान सही हो जाता है। हमारी अनेक भ्रांतियां निकल जाती हैं; क्योंकि हमने अपनी कल्पना से कुछ समझ रखा होगा और यहां जो सत्य परिस्थिति ख्याल में आती है तो उसका हमें सही ज्ञान हो जाता है। भेदज्ञान करने के लिये यह अत्यंत कार्यकारी विषय है। मुनिराज भी, जिनके तो सम्यदर्शन हो गया है और अंतरंग में स्थिरता भी है, ऐसे मुनिराजों को भी मुख्य आधार तो आगम का ही है। उसमें भी करणानुयोग का मुख्य आधार है क्योंकि उसीके विचारों में उनका उपयोग इतना सूक्ष्म हो जाता है। राग-द्वेष रहित किसी विषय को जानते रहना, इसको ध्यान कहा है। वहां कोई मात्र आत्मा को जानने की कंडिशन नहीं है क्योंकि श्रेणी में भी पृथक्त्ववितर्कवीचार नामक जो ध्यान है, आपने सुना है कि नहीं सुना? शुक्लध्यान का यह पहला भेद है। उसमें क्या होता है? वह जो विषय है ज्ञान का और ध्यान का, वह भी पलटता है, द्रव्य से द्रव्यांतर, शब्द से यानी व्यंजन से व्यंजनांतर होता है, योग भी पलटता है। वहां पुद्गल को भी जानेंगे, अंतर्मुहूर्त तक राग-द्वेष रहित होकर एक ही वस्तु को जानते रहने को यहां ध्यान कहा है। हां, नीचे की भूमिका में कहेंगे कि परद्रव्यों

को जानना छोड़कर निज आत्मा का ध्यान करना। क्यों? क्योंकि हम उसीको जानते रहते हैं; उसीमें राग-द्वेष करते हैं; इसीलिये उसको जानना छोड़ो और आत्मा को जानो, ऐसा कहेंगे, परंतु मात्र उसकी कंडिशन नहीं है। मुनिराजों को भी यह जो करणानुयोग के विषयों की बात है वह मुख्य है क्योंकि इसमें उपयोग एक ही विषय में लगा रहता है। राग-द्वेष की उसमें बात नहीं है, कोई इष्टता-अनिष्टता तो है नहीं तो उसके अभ्यास में उनकी असंख्यातगुणा निर्जरा होती है। यह बताने की आवश्यकता क्यों लगी? क्योंकि लोगों को लगता है कि यह तो बेकार का विषय है, है न। बेकार का नहीं है, बहुत काम का विषय है क्योंकि सम्यग्दर्शन होने के पहले भी और बाद में भी उस विषय को हम पढ़ेंगे, उसे समझेंगे तो बिलकुल पूरा मोक्षमार्ग हमारे सामने ऐसा खुला होकर हमारे ख्याल में आ जाता है। ज्ञान की जितनी निर्मलता होगी, जितनी उसमें क्लॅरिटी होगी, उतना जो सम्यग्दृष्टि हैं उनका सम्यग्दर्शन दृढ़ होगा और जिसे सम्यग्दर्शन नहीं है तो उसके होने में उसे बल मिलेगा। श्रेणी भी चढ़नी है तो कौन चढ़ सकते हैं? कहां गये हमारे सारे विद्वान? तत्त्वार्थसूत्र में सूत्र है, श्रेणी चढ़नेवाले जो हैं। हां, बोलो-बोलो, सूत्र बोलो। *श्रोता: शुक्ले चाद्ये पूर्वविद:।* **शुक्ले चाद्ये पूर्वविद:।** (तत्त्वार्थसूत्र अध्याय ९, सूत्र ३७) इसका अर्थ मालूम है? *श्रोता: नहीं।* नहीं मालूम?

पहले दो शुक्लध्यान जो हैं, कौनसे? *श्रोता: पृथक्त्ववितर्कवीचार।* पृथक्त्ववितर्कवीचार और? *श्रोता: एकत्ववितर्कअवीचार।* एकत्ववितर्कअवीचार; कहां होते हैं? श्रेणी में होते हैं। पहला जो है वह आठवें गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान के बहुभाग तक, संख्यात बहुभाग तक होता है और अंत में जाकर वह दूसरे नंबर का होता है। *श्रोता: सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति?* नहीं-नहीं, एकत्ववितर्कअवीचार, शुक्लध्यान के पहले दो भेदों की बात है। यानी यह श्रेणी कौन चढ़ सकते हैं? तो उन्होंने कहा कि **शुक्ले चाद्ये पूर्वविद:।** यानी ये पहले जो दो शुक्लध्यान हैं वे पूर्वविद् को होते हैं। पूर्वविद् का अर्थ समझते हैं? पूर्वों को जाननेवाले। पूर्व क्या होता है? ये बारहवें अंग के चौदह पूर्व में से दस पूर्व या चौदह पूर्व के जो ज्ञाता हैं, वे ही जीव श्रेणी चढ़ेंगे यह कंडिशन है। यह हमें एक ही मुनिराज मालूम हैं, *श्रोता: शिवभूति मुनि।* शिवभूति मुनि; वे सबके प्रिय हैं क्योंकि उन्होंने गुरु से मा तुष मा रुष सुना था परंतु भूल गये। रास्ते में दो महिलाओं से सुना कि तुष-माष भिन्न कर रही हैं तो उसी भिन्नता के विचारों में भेदज्ञान करते-करते श्रेणी पर आरूढ़ हो गये और

उन्हें केवलज्ञान हो गया। ऐसा नहीं है क्योंकि बीचवाले स्टेप्स तो बताये नहीं न। जब जीव सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है, मुनि अवस्था प्राप्त करता है, अंतरंग में स्थिरता हो जाती है, तो ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का अनुभाग अत्यंत हीन-हीन-हीन-हीन होते चला जाता है और जब मुनिराज श्रेणी चढ़ने के सन्मुख होते हैं; तो वहां ज्ञान की भी निर्मलता बढ़ती है। ज्ञानावरण का अनुभाग कम होता है तो ज्ञान तो बढ़ेगा, अपने आप बढ़ेगा, तो उनकी उतनी ज्ञान की भी योग्यता हो जाती है और सारे पूर्वों के ज्ञाता होकर ही वे श्रेणी चढ़ जाते हैं।

अब उसकी बात हम गौण करके यहां आगे अपना विषय चलायेंगे, ६५० पेज पर। बात यह है कि करणानुयोग का पढ़ना अत्यंत कार्यकारी है। बिलकुल फिजूल नहीं है क्योंकि हम तो कहते हैं, तिर्यंच कहां पढ़ने जाते हैं? उनको सम्यग्दर्शन होता है। सातवें नरक के नारकी कहां शास्त्र पढ़ते हैं? उनको सम्यग्दर्शन होता है, है न? तो हमें भी तो बिना पढ़े होना चाहिये। परंतु तिर्यंच क्या खाते हैं रोज? *श्रोता: घास-फूस।* घास-फूस चलती है उनके, रोज का चेंज नहीं चाहिये उनको। हमें दो रोटी और दाल से काम चलता है; परंतु रोज नया चेंज चाहिये। वही का वही खाकर बोअर हो जाते हैं न, तब तिर्यंचों की याद नहीं आती। तिर्यंचों की याद तभी आती है जब हमें करणानुयोग के ग्रंथ पढ़ने हैं। उनको तो बिना पढ़े हो जाता है, हमको क्यों नहीं होता है? तो वहां तो हम तिर्यंचों के साथ कम्पेअर करते हैं। *श्रोता: इंद्रभूति गौतम को जब मुनि दीक्षा हुयी थी तब चार ज्ञान कब हुये?* हां, आपका प्रश्न है – इंद्रभूति गौतम गणधर, ये इंद्रभूति ब्राह्मण थे तो उनके चार ज्ञान कब प्रकट हुये? *श्रोता: मानस्तंभ के आगे।* मानस्तंभ के आगे चार ज्ञान नहीं प्रकट हुये। मान गल गया का अर्थ होता है सम्यग्दर्शन हो गया; क्योंकि जिनबिंब को देखा है। जिनबिंब को देखा तो उनके तो, वे तो वैदिक धर्म में से आये थे, गृहीत मिथ्यात्व में थे। उनको सम्यग्दर्शन हुआ तो बिना देशना के हुआ कि नहीं हुआ? कि महावीर की देशना मिली थी? *श्रोता: नहीं मिली थी।* उस वक्त तो नहीं मिली थी। वे तो अभी बाहर थे। मानस्तंभ को देखा था; उनकी पूर्वभव की देशना तब उनके स्मरण में आ गयी और तत्त्व का निर्णय तो उनके हो गया। अंतर्सन्मुख परिणाम हो गये और उनको सम्यग्दर्शन प्राप्त हो गया, फिर अंदर जाकर तीर्थंकर के सामने उन्होंने मुनिदीक्षा अंगीकार की और ध्यान अवस्था में सातवां गुणस्थान प्रकट हुआ तब उनके मन:पर्ययज्ञान प्रकट हुआ और वे चार ज्ञान के धारी हो गये। यह हो सकता है, किस जीव का कब कैसा पुरुषार्थ हो यह हम कह

नहीं सकते। उसमें कोई ऐसा नहीं कह सकता कि हमने तो इतने चालीस साल से सबको पढ़ाया है, हमें सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं हुयी और उसने तो पढ़कर दो साल में ही सम्यक्त्व प्राप्त किया, किसीने एक घंटा पढ़कर प्राप्त किया। उसमें कोई ऐसी कंडिशन हम नहीं डाल सकते हैं कि किस जीव का कैसा पुरुषार्थ होगा। हर द्रव्य की अपनी-अपनी सभी पर्यायों का क्रम सुनिश्चित है, वह उस द्रव्य के अंतर्भूत है।

श्रेणिक राजा गृहीत मिथ्यादृष्टि बौद्धधर्मी था और उसकी पत्नी चेलना सम्यग्दृष्टि थी। श्रेणिक राजा ने सातवें नरक की आयु बांधी थी, इतना तो संक्लेश परिणाम किया होगा न! वह गृहीत मिथ्यादृष्टि था, जैनधर्म के प्रति इतना द्वेष था कि उसने मुनिराज के ऊपर उपसर्ग किया और तब उन्होंने ३३ सागर की नरकायु बांधी। बाद में वे सम्यग्दृष्टि हुये, तीर्थंकर प्रकृति का बंध शुरू किया, क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी हुये। इन परिणामों के कारण नरकायु की स्थिति घटकर चौरासी हजार वर्ष की रह गयी। मरकर वे पहले नरक में गये हैं। कब लौटेंगे यहां पर? *श्रोता: चौरासी हजार वर्ष के बाद।* चौरासी हजार वर्ष के बाद। यानी पांचवा काल जायेगा, छठा काल जायेगा फिर छठा जायेगा फिर पांचवां जायेगा, चौथे काल के शुरुआत में पहले तीर्थंकर होंगे। चौरासी हजार वर्षों में तो वे तीर्थंकर होंगे और मोक्ष भी चले जायेंगे, क्योंकि पहले तीर्थंकर हैं न उत्सर्पिणी के, छोटी आयु लेकर आयेंगे। अभी चेलना का क्या होगा? सम्यग्दृष्टि है। देव में गयी है, पुरुष होकर गयी है। कम से कम साधिक पल्य या कुछ सागरों की आयु बांध कर गयी होगी और पता नहीं उसके कितने भव अभी बाकी हैं। यानी एक तो सम्यग्दृष्टि और एक तो गृहीत मिथ्यादृष्टि; फिर भी चेलना के पहले श्रेणिक राजा तीर्थंकर होकर मोक्ष भी चले जायेंगे। तो हर एक जीव का पर्यायों का क्रम सुनिश्चित है। उसके अपने-अपने द्रव्य में वह सुनिश्चित है।

हम स्वाध्याय कर रहे हैं हम बहुत अच्छे हैं – बड़े हैं और वह कुछ नहीं जानता है, ऐसा कुछ नहीं समझना। स्वाध्याय की तो बात छोड़ो; हम स्वाध्याय कर रहे हैं; इतने ग्रथों का अभ्यास करते हैं। गुरुदेवश्री को सुन रहे हैं और कोई चींटी यहां से चल रही है। हो सकता है हमारे पहले वह मोक्ष पहुंच जावें। हो सकता है न? प्रत्येक द्रव्य का अपनी-अपनी पर्यायों का क्रम सुनिश्चित है। हमें तो यहां इतनी बात देखनी है कि हमें तो सम्यग्दर्शन प्राप्त करके अपना कल्याण करना है। तो इसके लिये हमने अभी तक क्या-

क्या किया है यह हमारी पास्ट हिस्टरि देखने आये हैं। डॉक्टर के पास जाते हैं तो पूछते हैं न? पास्ट हिस्टरि पूछते हैं कि पहले क्या-क्या बीमारी हो चुकी है। तो हम अभी विद्यमान हैं तो इसके पहले कहां-कहां थे? कितना काल हमने कहां-कहां घूमने में बिताया है? उसकी यहां चर्चा चलेगी और कुछ नहीं चलेगा।

हम तो गिनती करने को आये हैं और गिनती करना तो हमको बहुत अच्छी लगती है। हमारे बच्चे भी, छोटे-छोटे बच्चे हैं। क्या गिनते हैं? बर्थडे! पूछते हैं, नानी आप कब आओगी हमारे यहां? आपके बर्थडे को आयेंगे। कहते हैं अभी दस महीने बाकी हैं, अभी नौ महीने बाकी, वे गिनते रहते हैं और बच्चे बड़े होते हैं तो भी वे गिनते हैं – स्कूल में जाते हैं तो मार्क्स गिनते हैं, कितने मिले हैं और फिर और बड़े होते हैं तो पैसे गिनते हैं। तो यहां हम काल को गिनेंगे। देखो ६५० पृष्ठ निकालना है आपको। यह दृष्टांत तो हमने देख लिया है, फिर दोबारा सुनते हैं इसको। **इन परिवर्तनों का काल देखने के पहले हम उसे दृष्टांत द्वारा समझेंगे।** जीवकाण्ड भाग २, पृष्ठ ६५० है। **जैसे घड़ी में बड़ी और छोटी सूइयां होती हैं। बड़ी सूई जो घंटों को बताती है और छोटी सूई जो मिनटों को बताती है, अन्य भी छोटी सूई जो सेकंड को बताती है। घड़ी में किसी सूई के बारह से लेकर दुबारा बारह पर आ जाने पर एक परावर्तन होता है।** हर एक सूई का एक परावर्तन जिसका हर एक का हम काल गिन रहे हैं उसका काल अलग-अलग होगा, उसको समय अलग-अलग लगेंगे। परंतु परावर्तन तो हम उसीको कहेंगे कि एक बार पूरा उसने राउंड लगाया तो एक परावर्तन कहलायेगा। **उसमें सेकंड की सूई को एक परावर्तन करने में साठ सेकंड अर्थात् एक मिनट लगता है।** यह हमने दोपहर में देखा था। **मिनटवाली सूई को एक परावर्तन करने के लिये साठ मिनट अर्थात् एक घंटा लगता है। उतने काल में सेकंडवाली सूई के साठ परावर्तन होते हैं। जो सूई घंटों को बताती है उसको एक परावर्तन के लिये बारह घंटे लगते हैं।**

उन बारह घंटों में मिनटवाली सूई के, यहां जरा करेक्शन करना है कि **मिनटवाली सूई के बारह परावर्तन होते हैं और सात सौ बीस मिनट लगते हैं।** क्या कहा? एक परावर्तन होने को, मिनटवाली सूई को एक परावर्तन होने के लिये कितना काल लगता है? एक घंटा, नहीं समझे? हम पहले घंटेवाली सूई से शुरू करते हैं। घंटेवाली सूई बारह पर थी यानी बारह बजे थे। दुबारा बारह बजने के लिये कितना काल जायेगा? बारह घंटे चले

जायेंगे। मिनटवाली सूई को, एक परावर्तन करने में कितना समय लगता है? एक घंटा, तो बारह बजे से बारह बजे तक के कितने परावर्तन होंगे? बारह। उसके परावर्तन बारह होंगे, परंतु उसमें काल कितना लगेगा? सात सौ बीस मिनट। तो आपको यहां पुस्तक में करेक्शन करना है। ऐसा लिखना है, बारह घंटों में मिनटवाली सूई के, अभी यहां ऊपर ॲड करना। बारह परावर्तन अर्थात् सात सौ बीस मिनट लगते हैं, बराबर? १२ × ६० = ७२०, परावर्तन होते हैं बारह और उनमें काल कितना लगता है? तो सात सौ बीस मिनट लगते हैं। अब आगे **और सेकंडवाली सूई के सात सौ बीस परावर्तन होते हैं** क्योंकि एक परावर्तन के लिये कितने मिनट लगते हैं? एक मिनट और यहां सात सौ बीस मिनट हो गये हैं। तो सात सौ बीस परावर्तन यहां ॲड करना है आपको और उसमें सेकंड कितने लगते हैं? तो कहते हैं, **तैंतालीस हजार दो सौ (४३२००) इतने सेकंड लगते हैं।** यह ख्याल में आयी बात? बारह घंटों की बात है। बारह घंटों में घंटे की सूई एक परावर्तन करती है। उन्हीं बारह घंटों में मिनट की सूई बारह परावर्तन करती है और उसीमें सेकंडवाली सूई सात सौ बीस परावर्तन करती है। समझ में आयी बात?

इस पुस्तक की पुरानी आवृत्ति में आपको थोड़ा करेक्शन करना है वहां तो समय बताया है, परावर्तन को अलग से लिखना था। **यहां द्रव्यपरावर्तनादि में क्रम से** द्रव्यपरावर्तन आदि कहने से क्या समझेंगे? *श्रोता: पांच परावर्तन।* आप नाम बतायेंगे पांचों के? हां सौमिल? *श्रोता: द्रव्यपरावर्तन,* द्रव्यपरावर्तन, *श्रोता: क्षेत्रपरावर्तन,* क्षेत्रपरावर्तन, *श्रोता: कालपरावर्तन,* कालपरावर्तन, *श्रोता: भवपरावर्तन,* भवपरावर्तन और *श्रोता: भावपरावर्तन।* भावपरावर्तन। ये क्रम से हैं, क्रम से क्यों रखा? पहले से दूसरे, दूसरे से तीसरे का काल बड़ा है, तो उसके परावर्तन कम बार होंगे। एक पर्टिक्युलर टाइम में, जैसे हम बारह घंटे में देख रहे हैं वह घंटेवाली सूई एक बार ही परावर्तन करती है। ऐसे हम कोई काल लेंगे, एक भावपरावर्तन का काल सबसे बड़ा है। तो उसका एक परावर्तन होने में, उलटे क्रम से लेंगे। भवपरावर्तन कितनी बार होंगे? *श्रोता: अनंत बार।* अनंत बार होंगे। उस एक भवपरावर्तन में कालपरावर्तन? *श्रोता: अनंत बार।* अनंत बार होंगे। उस एक कालपरावर्तन में क्षेत्रपरावर्तन? *श्रोता: अनंत बार।* अनंत बार होंगे। एक क्षेत्रपरावर्तन को जितना काल लगता है, उसमें पुद्गलपरावर्तन? *श्रोता: अनंत बार।* अनंत बार होंगे और पुद्गलपरावर्तन को कितना काल लगता है? तो कहते हैं अनंतकाल लगता है। अभी हम पढ़ेंगे यहां पर।

यहां द्रव्यपरावर्तनादि में क्रम से द्रव्यपरावर्तन का काल अनंत होने पर भी सब से अल्प है। क्या? काल, यहां द्रव्यपरावर्तन का काल सबसे अल्प है। **अनुक्रम से आगे-आगे के परावर्तनों का काल अनंतगुणा है।** पहले से दूसरा अनंतगुणा, दूसरे से तीसरा अनंतगुणा, इसतरह से। **इसलिये एक भावपरावर्तन में अनंत भवपरावर्तन, उनसे अनंतगुणे कालपरावर्तन, उनसे अनंत-अनंतगुणे क्षेत्रपरावर्तन और उनसे भी अनंत-अनंतगुणे द्रव्यपरावर्तन होते हैं। ऐसे ये पंचपरावर्तन कहे।** हमने अभी देखे नहीं है, हम तो देखने जा रहे हैं। अभी तो हमने उनके नाम देखे हैं। उनमें क्या-क्या बातें होती हैं, उनको क्या कहते हैं? जीव क्या कर रहा है वहां पर? वे सब बातें हम देखेंगे। यहां आगे भी देखते हैं। इनका काल कहते हैं उसी पृष्ठ पर आगे, **सबसे अल्प एक पुद्गलपरावर्तन का काल है, वह अनंत है। उससे अनंतगुणा क्षेत्रपरावर्तन का काल है। उससे अनंतगुणा कालपरावर्तन का काल है। उससे अनंतगुणा भवपरावर्तन का काल है। उससे अनंतगुणा भावपरावर्तन का काल है।**

इसी कारण, एक जीव के अनादि से लेकर अतीतकाल में, अतीतकाल किसको कहेंगे? बीता हुआ काल। वर्तमान एक समय उसके पहले जो काल बीत चुका है, कब से? अनादि से। अनादि से कहने से कोई बिगिनिंग तो है ही नहीं उसकी, ऐसा उलटा चले जाओ, चले जाओ, चले जाओ उसकी तो कोई शुरुआत ही नहीं है न। उसको कहेंगे अनादि से यानी **अतीतकाल में भावपरावर्तन थोड़े हुये।** जैसे हमारी घंटेवाली सूई कम बार घूमी है। वैसे यहां भावपरावर्तन कम बार हुये हैं। ये सारे परावर्तन ॲट अ टाइम चल रहे हैं न? जैसे हमारी सब तीनों सूइयां एक साथ घूम रही हैं। किसीका स्पीड ज्यादा है, किसीका कम, कोई कम काल में घूमती है, किसीको बहुत लंबा काल लगता है। ऐसे ही भावपरावर्तन का काल सबसे बड़ा है तो कहते हैं, **सब से अल्प एक पुद्गलपरावर्तन का काल है, वह अनंत है। उससे अनंतगुणा क्षेत्रपरावर्तन का काल है। उससे अनंतगुणा** यह हमने पढ़ा था, **कालपरावर्तन का काल है। उससे अनंतगुणा भवपरावर्तन का काल है** और **उससे अनंतगुणा भावपरावर्तन का काल है। इसी कारण एक जीव के अनादि से लेकर अतीतकाल में भावपरावर्तन थोड़े हुये।** किसकी बात चल रही है? श्रोता: मिथ्यादृष्टि जीव की। कौनसे जीव की? *श्रोता: हमारी।* हां, हमारी-हमारी चल रही है। हमने ये परावर्तन किये हैं न तभी तो आज हम मनुष्य हैं; अभी

मोक्ष नहीं पहुंचे हैं। अभी किसीको सम्यग्दर्शन प्राप्त हुआ है ऐसा कोई यहां बैठा है, तो वह अब अर्धपुद्गलपरावर्तन के अंदर-अंदर मोक्ष पहुंच जायेगा उसकी गॅरंटी है; परंतु उसके पहले उसने क्या किया था, उसने भी ऐसा ही किया था वह भी अनंतों बार पांचों परावर्तन करके आया है। **इसी कारण एक जीव के अनादि से लेकर अतीतकाल में भावपरावर्तन थोड़े हुये, वे भी अनंत हुये।** दो, चार, पांच नहीं हुये, **वे भी अनंत हुये। उनसे अनंतगुणे भवपरावर्तन हुये, उनसे अनंतगुणे कालपरावर्तन हुये, उनसे अनंतगुणे क्षेत्रपरावर्तन हुये तथा उनसे अनंतगुणे द्रव्यपरावर्तन हुये ऐसा जानना।**

तो कोई प्रश्न पूछेंगे, यह तो हमने अभी परावर्तन का स्वरूप नहीं जाना है न? तो जानकर बाद में इस प्रश्न पर आते हैं। पहले तो हम परावर्तन क्या है? उसको भी देख लेते हैं। हमारा जो विषय चलता है उसके आगे हम बढ़ेंगे अभी। हमने छह प्रकार के काल को देख लिया है और यह परावर्तन का दृष्टांत भी देख लिया है। अब यहां सबसे पहले द्रव्यपरावर्तन की बात आनेवाली है। यह द्रव्यपरावर्तन क्या है? उसका दूसरा भी कोई नाम मालूम है क्या आपको? *श्रोता: पुद्गलपरावर्तन।* हां, पुद्गलपरावर्तन, तो यह पुद्गलपरावर्तन की बात हम यहां देखेंगे। इसी पुस्तक के आधार से, देखो, पृष्ठ संख्या ६३७। यहां ५६० नंबर की जो गाथा है न जीवकाण्ड की, उसकी टीका ६३६ पेज पर लास्ट लाइन वहां से शुरू हुयी है। वहां से पढ़ेंगे हम – **अभव्यराशि**, देखो, जीव दो प्रकार के हैं, संसारी और मुक्त। संसार अवस्था पार करके अरिहंत दशा पार करके जो मुक्त हुये हैं, कर्मों से रहित हो गये हैं, जन्म-मरण से रहित होकर सिद्ध अवस्था प्राप्त हुयी है तो वे हैं सिद्ध और जिनके अभी वह सिद्ध अवस्था प्राप्त नहीं हुयी है वे सारे कैसे हैं? संसारी जीव हैं। अब ये जो संसारी जीव हैं उनमें भी कोई भव्य हैं और कोई अभव्य हैं। तो भव्य और अभव्य कैसे समझना? कौनसे कर्म के कारण होते हैं ये? *श्रोता: पारिणामिक भाव हैं।* हां-हां-हां ये पारिणामिक भाव हैं। जीव की वैसी योग्यता सहजरूप से पड़ी है कि कोई जीव ऐसे हैं कि उनको तीन काल में कभी सम्यग्दर्शन होनेवाला नहीं है और फिर मोक्ष का तो कोई सवाल ही नहीं है। उसको अभव्यसिद्धिक कहेंगे यानी सिद्ध होने की उनमें पात्रता नहीं है इसलिये उनका नाम है अभव्यसिद्धिक। भव्यसिद्धिक यानी उनमें सिद्ध होने की पात्रता है।

हां, पात्रता है परंतु वे भी जब सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे यानी उनकी योग्यता तो है

कभी न कभी वे सम्यक्त्व प्राप्त करनेवाले हैं; जब तक प्राप्त नहीं करते, वे भी अभव्य के समान घूम रहें हैं, इस संसार के चक्कर काट रहे हैं। तो यहां यह कहते हैं कि अभव्य कितने हैं और भव्य कितने हैं? क्योंकि लोगों को डर है हम अभव्य तो नहीं हैं न? यहां हॉल की दीवार पर लिखा है, पढ़ा है क्या कभी? हां, पढ़ लो-पढ़ लो क्या लिखा है। **तत्प्रति प्रीति चित्तेन येन वार्ताऽपि हि श्रुता। निश्चितं स भवेद्भव्यो भावि निर्वाण भाजनम्।।** तत्प्रति यानी, आत्मा की बात भी जो रुचिपूर्वक सुनते हैं, उसकी वार्ता भी, उसकी बात भी जो सुनते हैं वे निश्चित ही भव्य हैं और अल्पकाल में वे मुक्ति पाने के योग्य हैं। क्योंकि जिसको आत्मा की बात रुचती नहीं है न, वह सुनेगा नहीं, समझेगा नहीं, निर्णय करेगा नहीं, उसका मोक्षमार्ग शुरु होनेवाला नहीं है। कोई भव्य भी ऐसे हो सकते हैं जिनको आत्मा की बात नहीं रुचती परंतु कालांतर से जब उनकी पर्याय की योग्यता आती है तब वह बात उनको रुचेगी, वे सुनेंगे भी, वह बात उन्हें सच भी लगेगी, उसमें वे इंटरेस्ट भी लेंगे, उनके सम्यग्दर्शनादि सब कार्य होनेवाले हैं। तो यहां कहते **अभव्यराशि का प्रमाण** – यानी संसारी जीव अनंत हैं उनमें अभव्य कितने हैं? तो कहते हैं, **जघन्य युक्तानंत प्रमाण हैं।**

श्रोता: ये भव्य-अभव्यों की परिभाषा कुंदकुंदाचार्य ने प्रवचनसार में गाथा ६२ में की है कि जो अतीन्द्रिय ज्ञान और अतीन्द्रिय सुख को उपादेय मानता है, श्रद्धान करता है वह भव्य है। यानी वहां भव्य की अभिव्यक्ति हुयी है उस अपेक्षा से उन्हें भव्य कह दिया है। *श्रोता: और अमृतचंद्राचार्य लिखते हैं जो आगे चलकर सम्यक्त्व प्राप्त करेगा वह भव्य जीव है और जो नहीं करते हैं वे अभव्य हैं।* वहां उनको दूरभव्य कहा है जो आगे सम्यग्दर्शन प्रकट करेंगे। वह बात सही है। करणानुयोग में तो सूक्ष्म कथन आता है। तीनों काल में जो सम्यक्त्व प्राप्त नहीं करेंगे ऐसे भी कोई भव्य हैं, जिन्हें अभव्यसम भव्य कह दिया, उनमें योग्यता तो है। परंतु अभव्य जीवों में वह प्राप्त करने की योग्यता नहीं है, उनकी संख्या है जघन्य युक्तानंत। भव्य कितने हैं? उनसे अनंतगुणे हैं; थोडे ज्यादा नहीं हैं, अनंतगुणे हैं। अभव्यों से अनंतगुणे हैं। तो यह युक्तानंत क्या होता है? हमने युक्तासंख्यात सुना था, हैं न, किसका प्रमाण था? युक्तासंख्यात प्रमाण क्या देखा था? जघन्य युक्तासंख्यात? *श्रोता: आवली में समयों का प्रमाण।* आवली में समयों का प्रमाण है और यह जघन्य युक्तानंत कैसे निकालना? जैसे हमने आवली को निकाला था न? जघन्य युक्तासंख्यात प्रमाण, जो

आवली में समयों का प्रमाण है उसको कैसे निकाला था याद है? जघन्य परीतासंख्यात को विरलन करके बिखेर दिया एक-एक में, हर एक के माथे पर हमने जघन्य परीतासंख्यात-जघन्य परीतासंख्यात लिखा और आपस में गुणा किया, तो जघन्य युक्तासंख्यात का प्रमाण आया। अभव्यराशिवाला जघन्य युक्तानंत कैसे निकालना? जो मिनिमम अनंत है, उसका नाम है जघन्य परीतानंत। उसको भी बिखेर दो एक-एक में, हर एक के माथे पर जघन्य परीतानंत-जघन्य परीतानंत-जघन्य परीतानंत लिख दो, आपस में गुणा करो। यानी जघन्य परीतानंत रेज्ड टु जघन्य परीतानंत। बराबर है न आप की भाषा में? कहीं भूल होगी तो बताना। हम तो गणित नहीं पढ़े हैं न, हम तो मेडिकल के हैं न, तो उसको कहेंगे जघन्य युक्तानंत। इतना अभव्यराशि का प्रमाण है **तथा संसारी जीवों के प्रमाण में से अभव्यराशि का प्रमाण घटाने पर अवशेष रहे उतना भव्य जीवों का प्रमाण है।** लोगों को लगता है कि हर छह महीने और आठ समय में छह सौ आठ जीव मोक्ष चले जाते हैं; मोक्ष चले जाते हैं, मोक्ष चले जाते हैं, तो यहां कौन रहेगा? क्या अकेले अभव्य ही रहेंगे?

कितना भी काल जाने के बाद, अनंतकाल भी जाने के बाद जो यहां संसार में हैं बाकी, उनमें से अभव्यराशि से तो भव्यराशि अनंतगुणा होगी ही होगी, ऑलवेज। ऐसा कभी नहीं होगा कि सभी जीव मुक्त हो गये और यहां अभी संसार में कोई भव्य बाकी नहीं है। इसलिये इस चिंता से लोगों को मुक्त करने के लिये वे कहते हैं हम स्वाध्याय नहीं करेंगे। सब जायेंगे तो इस संसार की तरफ कौन देखेगा? तो ये छह महीने और आठ समय में जो जीव मोक्ष चले जाते हैं उतने ही जीव निगोद में से, कौनसे? नित्यनिगोद में से बाहर निकलते हैं। यह नित्यनिगोद क्या होता है? अनादि से जिसने अभी तक निगोदपर्याय में से अन्य कोई पर्याय नहीं प्राप्त की; अन्य एकेन्द्रिय की भी नहीं – कभी वायुकायिक नहीं हुआ, जलकायिक नही हुआ, वनस्पति, वनस्पति में ही है वह निगोद, परंतु प्रत्येक वनस्पतिकायिक नहीं हुआ तथा अन्य कोई एकेन्द्रिय की पर्याय भी जिसको नहीं मिली है। बारंबार अनादि से लेकर आज तक जो निगोदपर्याय में ही जन्म-मरण करते आया है, उसका नाम है नित्यनिगोद। हां, वह लोकाकाश के किसी भी क्षेत्र में रहता है उससे कोई मतलब नहीं है। कभी सूक्ष्म हुआ, कभी बादर हुआ, कभी पर्याप्त हुआ, कभी अपर्याप्त हुआ, निगोद पर्याय उसने छोड़ी नहीं।

श्रोता: त्रिलोक रचना में जो सातवीं पृथ्वी के नीचे बताते हैं... कलकल भूमि है वहां पर भी निगोद है। वहां तो हमेशा निगोद ही रहते हैं, इसलिये निगोद कहते हैं उसको। एक राजू प्रमाण, सातवें नरक के नीचे, सातवीं पृथ्वी के नीचे एक राजू प्रमाण जो एरिया है और ऐसे सात राजू बाय सात राजू और हाइट उसकी एक राजू ७ × ७ × १ = ४९ घनराजू प्रमाण जो एरिया है वह निगोद की है। *श्रोता: बादर?* सूक्ष्म होंगे क्योंकि बादर वायुकायिकों को छोड़कर बादर एकेन्द्रियों का रहने का ठिकाना लोक का असंख्यातवां भाग ही है। इस पर से हम निष्कर्ष निकालते हैं। हमने देखा न, आगम पढ़ने को आना चाहिये, वहां सूक्ष्म हैं कैसे जाना? क्योंकि बादर वायुकायिक जीव ही पांच घन राजू प्रमाण क्षेत्र में रहते हैं वे ही लोक के संख्यातवें भाग में रहते हैं। अन्य सभी बादर एकेन्द्रिय जीव लोक के असंख्यातवें भाग में ही रहते हैं। वह पूरा ४९ घनराजू प्रमाण एरिया अगर हम बादर निगोद का समझेंगे तो बादर का क्षेत्र हो जायेगा लोक का संख्यातवां भाग-असंख्यातवां नहीं। इससे यह सिद्ध होता है कि वहां सूक्ष्म जीव होने चाहिये। किसी विषय में ऐसा डायरेक्ट लिखा हुआ नहीं मिलेगा। यह तो हमें सोचना है क्योंकि ऐसे जो क्षेत्र की, स्पर्शन की, अंतर की जो बातें हैं उसपर से ये बातें आगम के द्वारा, जिसको हम कहेंगे, डिराइव्ह की जाती हैं, जानी जाती हैं। अब यह प्रश्न क्यों निकाला?

अभव्य और भव्य की बात है, तो निगोद किसको कहते हैं मालूम है न? क्योंकि निगोद, निगोद हम सुनते हैं। निगोद मालूम है? क्या है? यंग जनरेशन को मालूम है कि नहीं, निगोद क्या होता है? आपको पता है बेटा? *श्रोता: नहीं मालूम।* नहीं मालूम, अच्छा सुन लो। अभी हमने अन्य-अन्य कायिक की बात देखी न, कोई पृथ्वीकायिक है – पृथ्वी ही जिनका शरीर है वे पृथ्वीकायिक हैं; जल ही जिनका शरीर है वे जलकायिक हैं; वायु ही जिनका शरीर है वे वायुकायिक हैं। फिर कौनसे रह गये? अग्नि ही जिनका शरीर है वे अग्निकायिक हैं और वनस्पति ही जिनका शरीर है वे वनस्पतिकायिक जीव हैं। ये वनस्पतिकायिक जीव दो प्रकार के होते हैं। अभी जो हमने अग्नि, जल वगैरह देखे थे। एक शरीर और एक जीव, हां परंतु उनके शरीर इतने छोटे होते हैं और परस्पर में ऐसे जुड़े होते हैं। तो वह जुड़ने के कारण हमें वह एक कोई वनस्पति बड़ा ऐसा स्कंध दिखायी देता है। यानी एक यह इतनी बड़ी वनस्पति है। तो अभी इसमें से वनस्पतिकायिक जीव निकल गया। यह वनस्पतिकाय रह गयी, लकड़ी रह गयी।

पहले इसमें वनस्पति जीव रहता था तब इसको वनस्पतिकायिक जीव कहते थे हम। अब वह जीव निकल गया। यह तो जड़ है, इसमें कोई अभी जीव नहीं है, जो वनस्पतिकायिकवाला था वह नहीं है तो हम कहेंगे यह कोई वनस्पति की डेड बॉडि रह गयी है, है न। यहां तक तो बात समझ में आ गयी? जो वनस्पतिकायिक जीव है – एक जीव और उसका एक शरीर, उस जीव को प्रत्येक शरीरी कहते हैं। ऐसे अनेक शरीर एक साथ जुड़े हुये होते हैं तो उसका एक स्कंध हमें आंखों से दिखायी देता है। हमें जो वनस्पति दिखायी देती है, पत्ते हो, फूल हो, फल हो, शाखा हो उसमें प्रत्येक वनस्पतिकायिक अनेक जीवों के शरीर वहां होते हैं। उनकी अवगाहना छोटी होने के कारण एक-एक जीव के शरीर अलग-अलग नहीं दिखायी देते, वे एक साथ जुडे हुये हैं इसलिये वे एक स्कंधरूप से दिखायी देते हैं। ये जो हैं वे प्रत्येक शरीरवाले हैं। वनस्पतिकायिक का दूसरा एक भेद है उसको कहेंगे साधारण शरीरवाले, साधारण शरीर यानी कॉमन बॉडि, कितने जीवों में वह एक ही शरीर है? शरीर एक और उसमें रहनेवाले जीव यानी उसके स्वामी अनंत, वे अनंत कैसे होते हैं? जैसे हमारी स्कूल होती है। स्कूल में मान लेते हैं, अब वह दसवीं क्लास तक होती है न स्कूल और हर क्लास में हम मान लेते हैं सौ-सौ बच्चे हैं। तो जिन सौ बच्चों ने एक साथ ॲडमिशन ली है, वे दस साल बिताकर, दसवीं पास करके निकल जाते हैं। सभी एक साथ आये, सभी पास हो गये। वहां कोई फेल होनेवाला नहीं ऐसा हम मान लेते हैं अभी यहां पर। जो एक साथ जिन्होंने ॲडमिशन ली है वे सौ बच्चे दसवीं पास करके वहां से निकल जायेंगे दस साल के बाद। दूसरे साल में और सौ बच्चे आयेंगे तो स्कूल में हमेशा कितने बच्चे रहेंगे? *श्रोता: सौ।* सौ? दस क्लासेस हैं और हर साल सौ-सौ बच्चे आ रहे हैं और दसों क्लासों में सौ-सौ बच्चे हैं, तो कितने हैं? *श्रोता: एक हजार।* एक हजार हुये, यानी स्कूल में हमेशा एक हजार बच्चे रहेंगे, हर साल सौ बच्चे आयेंगे, सौ बच्चे निकल जायेंगे। आपकी स्कूल कितने साल से है? पूना में हमारी स्कूल है जहां मैं पढ़ी हूं उसे १२५ से ऊपर साल हो गये हैं। यहां पूना के होंगे कोई।

तो ऐसा यह निगोद शरीर है। उसमें एक साथ अनंत जीव उत्पन्न होते हैं। वहां ऑलरेडि अनंत रहते हैं। दूसरे समय, *श्रोता: एक समय में?* हां एक समय में, जो वहां जन्म लेते हैं न, उन सबकी आयु समान होती है। समान आयु बांधकर आये हैं। लोकाकाश के किस कोने से आये होंगे पता नहीं हैं, परंतु वे समान आयु बांधकर एक साथ एक शरीर

में उत्पन्न हुये हैं और जब मरेंगे तो एक साथ सब मरेंगे। एक साथ जन्मनेवाले अनंत जीव एक साथ अपनी आयु पूरी होकर मरेंगे, जैसे वह स्कूल की बॅच है एक साथ ॲडमिशन लेनेवाले एक साथ दसवीं पास करके निकल जायेंगे। ऐसे जो समान आयु बांधकर आये हैं वे वहां जन्मेंगे। पर्याप्त होंगे तो पर्याप्त ही जन्मेंगे और अपर्याप्त होंगे तो अपर्याप्त ही जन्मेंगे। दूसरे समय में और अनंत की बॅच आती है, तीसरे समय में और अनंत की बॅच आती है। जिनकी आयु पूरी होती है वे अनंत चले जाते हैं और वह निगोदशरीर बना रहता है। इसको निगोद कहेंगे। तो एक शरीर में कितने अनंत जीव हैं, तो आज तक जितने सिद्ध हुये हैं उनसे अनंतगुणे जीव एक निगोद शरीर में हैं। इसका अर्थ समझते हैं? एक निगोद शरीर में इतने अनंत जीव हैं कि उसके अनंतवें भागप्रमाण जीव सिद्ध बनेंगे। तो इस संसार में कोई नहीं रहेगा यह डर निकाल दो। हां, एक निगोद शरीर में जितने जीव हैं उतने भी सिद्ध नहीं होंगे, उसके अनंतवें भागप्रमाण सिद्ध होंगे। इनकी संख्या की अनंतता का हमें एहसास नहीं है। तो ऐसे निगोद शरीर, देखो, एक इतनासा आलू लेंगे तो उसमें ऐसे निगोद शरीर कितने होंगे? असंख्यात होंगे और हर एक-एक शरीर में अनंत जीव होंगे। पूरे विश्व में, पूरे लोकाकाश में ऐसे निगोद के शरीर कितने हैं? तो असंख्यातलोक को पांच बार लिखकर आपस में गुणा करना इतने निगोद के शरीर हैं।

श्रोता: निगोद शरीर का नाश होता हैं? निगोद शरीर का भी नाश होता है। असंख्यात वर्षों की उनकी भी उत्कृष्ट स्थिति होती है। निगोद शरीरों की बता रही हूं। इतरनिगोद पर्याय की उत्कृष्ट स्थिति यानी कोई एक जीव लगातार निगोद पर्याय में ही जन्म-मरण करता रहे तो उसका अधिक से अधिक काल है ढाई पुद्गलपरावर्तन; दो और आधा; परंतु एक निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति है असंख्यात कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण। इतने काल तक उस शरीर में नये-नये अनंत जीव उपजते और मरते रहते हैं फिर भी निगोद शरीररूप से परिणत हुये पुद्गल स्कंध उतने काल तक निगोद शरीर को नहीं छोड़ते हैं। अभी आप आलू-प्याज को देखो, अन्य सब्जियां तो कुछ काल के बाद मुरझा जाती हैं। आलू-प्याज तो रहते हैं न कई दिनों तक। क्यों? देखे हैं न जैनियों के घरों में? इसको कहते हैं निगोद। ऐसे निगोद... *श्रोता: एकेन्द्रिय और निगोद एक ही हैं या अलग-अलग हैं क्या एक हैं?* देखो, निगोद वह वनस्पतिकायिक है, वह एकेन्द्रिय जीव है। जब हम निगोद कहेंगे तो वे वनस्पतिकायिक नाम के एकेन्द्रिय जीव हैं जो साधारण शरीरवाले हैं और जब

मात्र हम एकेन्द्रिय कहेंगे तो एकेन्द्रिय कहने से उनमें पृथ्वीकायिक, जलकायिक, वायुकायिक, अग्निकायिक, वनस्पतिकायिक, सभी आ गये। यह बात समझ में आयी? एकेन्द्रिय कहने से पांचों स्थावरकाय आ गये और निगोद कहने से साधारण वनस्पति – सभी वनस्पति नहीं, साधारण वनस्पतिकायिक आ गये, परंतु वह निगोदपर्याय अत्यंत हीन पर्याय है, ज्ञान की भी हीनता रहती है, इसलिये निगोद-निगोद-निगोद हमने बहुत सुना तो है परंतु उसका अर्थ नहीं ख्याल में आता, क्या है? तो निगोदपर्याय में क्यों जाता है जीव? मिथ्यात्व और अन्य संक्लेश परिणाम करके वह चला जाता है। ख्याल में आया? वह तो हेड क्वॉर्टर है।

श्रोता: निगोद शरीरों का प्रमाण कितना बताया आपने? असंख्यातलोक पांच बार लिखना और आपस में मल्टिप्लाय करना, यानी असंख्यातलोक रेज्ड टु ५, अभी उसके भेद बहुत हैं। वह करणानुयोग परिचय पुस्तक में है, इसमें भी है, जीवकाण्ड में है, वहीं से लिया है। कायमार्गणा में वनस्पतिकायिक में देख लेना आप उसको। आपके पास जो जीवकाण्ड भाग १ पुस्तक है उसके कायमार्गणा में यह वनस्पतिकायिक का और निगोद का भी, सूक्ष्म उसका एक भेद है, उसका वर्णन है विस्तार से। अभी हमारा वह विषय नहीं है।

अभी हम यहां यह बात देख रहे हैं कि अभव्यजीव तो कभी सम्यक्त्व प्राप्त नहीं करेंगे। भव्यों में भी जो सम्यक्त्व प्राप्त करेंगे उसके पांचों समवाय लेना वहां। पुरुषार्थ से, काललब्धि से, होनहार से फिर निमित्त वह सब कुछ निश्चित है हर एक का। हम तो निमित्त को पहले नक्की करना चाहते हैं। निमित्त तो परद्रव्य की पर्याय होती है और वह भी उस द्रव्य में अपने स्वयं की योग्यता अनुसार स्वयं अपने समय में होगी। जैसे द्रव्य की पर्याय निश्चित है तो उसके पांच समवाय नामक कारण भी सुनिश्चित हैं, उनको भी हम बदल नहीं सकते हैं। निमित्त भी, हमारे सम्यग्दर्शन का जो कोई निमित्त है वह भी तो निश्चित है। अकेले सम्यग्दर्शन की बात नहीं, किसी भी पर्याय का उसका अपना-अपना उचित निमित्त वहां होगा। निमित्त से कार्य नहीं होने पर भी निमित्त होता अवश्य है। न हम उसको पलटा सकते हैं, न ला सकते हैं, न छोड़ सकते हैं।

श्रोता: जो नित्यनिगोद से निकलकर सीधा मनुष्य में आता है और मोक्ष जाता है उसके वे पांच समवाय किस प्रकार होते हैं? आप का प्रश्न हैं – जो नित्यनिगोद से मनुष्य

में आया है, नित्यनिगोद से यानी वह उसी मनुष्यपर्याय में से अगर मोक्ष जानेवाला है तो बादर निगोद से आना चाहिये, सूक्ष्म निगोद से आया हुआ जीव मोक्ष नहीं जाता। तो नित्यनिगोद से मनुष्य में आया है तो पहली बार अनादि का जो कोई मिथ्यादृष्टि हो, कहीं से भी क्यों नहीं आया हो तो उसको होगा तो प्रथमोपशम सम्यक्त्व ही होगा। प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है तो यह पांचों लब्धिपूर्वक ही होगा। क्षयोपशमलब्धि है, विशुद्धिलब्धि है, देशनालब्धि है, प्रायोग्यलब्धि है और करणलब्धि है। देशनालब्धि में देशना यानी मोक्षमार्ग संबंधी उपदेश और लब्धि यानी उसकी प्राप्ति अर्थात् सुनना, समझना, याद रखना, विचारपूर्वक उसका निर्णय करना आदि। यह देशना उसे तीर्थंकर या गणधर या अन्य आचार्य या सम्यग्दृष्टि गृहस्थ द्वारा प्राप्त हो सकती है यानी इनके द्वारा दिया हुआ मोक्षमार्ग संबंधी उपदेश वह सुनेगा, साक्षात यानी प्रत्यक्ष वह सुनेगा। सुनने की भी कंडिशन है। हां, दौलतराम जी ने लिखा है छहढाला में – **'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै,** क्यों? **यह नरभव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवै।**

सुनने की कंडिशन क्यों आवश्यक है? हम तो पढ़ भी लेते हैं न? पर पढ़ते तो हैं परंतु जो अभी मिथ्यादृष्टि है, उसकी कुछ न कुछ भ्रांतिया तो चल रही हैं और वह पढ़ता है तो उसकी बुद्धि में जो है, उसने सोच रखा है वैसा ही उसका अर्थ लगाता है। क्योंकि शब्द तो संख्यात हैं और अर्थ तो अनंत हैं तो उसको जैसे लगता है न, वैसे ही उसका अर्थ लगाता है और वैसे ही उसको सोचता रहता है। व्यवहार, निश्चय शब्दों का सही अर्थ वह नहीं समझता। यह आत्मा-आत्मा करते हैं ये निश्चयवाले और हम सबको चाय-पानी पूछते हैं, व्रत करते हैं इसलिये हम व्यवहारवाले ऐसा मानता हैं, परंतु ऐसा नहीं है। जो शब्द लौकिक में हम जिस अर्थ में वापरते हैं; उसका यहां कुछ अलग अर्थ होता है। द्रव्य किसको कहेंगे आप? लौकिक में? *श्रोता: पैसा।* पैसे को, हां वह द्रव्य है, द्रव्यदृष्टि – हम द्रव्यदृष्टिवाले हैं और यहां बार-बार कहते हैं कि द्रव्यदृष्टि करो तो उसका अर्थ अलग-अलग होता है न। तो यह अर्थ हमें सुनने से प्रतिभासित होता है; क्योंकि नहीं समझते तो, वे तो समझानेवाले समझते हैं मुंह की तरफ देखकर कि कितना समझा है? कितना ग्रहण किया? क्या नहीं ग्रहण किया। पूछ सकते हैं तो यह सुनने की कंडिशन आवश्यक है। हां, हो सकता है किसीको पूर्व भव की देशना मिली है और इस भव में उसने किसीसे सुना है या स्वयं पढ़ा है तो हो सकता है उसका सही अर्थ उसने ग्रहण किया हो।

गुरुदेवश्री की बात तो सबको जाहिर है। स्थानकवासी परंपरा में थे और समयसार पढ़कर उन्होंने अर्थ लगाया। जो हम दिगंबरों में जन्मे थे, हमको जो नहीं मालूम था उन्होंने आकर हमको समझाया, है न? उनके तो पूर्व की थी देशना, बीच में जो कुछ हुआ होगा और यहां जन्म लेने के पश्चात् उन्होंने स्वयं पढ़कर उसका सही अर्थ ग्रहण किया। उन्हें समयसार ग्रंथ निमित्तरूप से मिल गया, यह हो सकता है। तो जो पहले आपका तो नित्यनिगोद का प्रश्न था, अनादि का जो मिथ्यादृष्टि है उसके तो पहली बार सम्यक्त्व होगा, वहां देशनालब्धि में ज्ञानी के द्वारा ही देशना होनी चाहिये। देशना तो उपदेश को कहेंगे और देशनालब्धि तो ज्ञान की पर्याय है। वह सुनेगा, समझेगा, याद रखेगा, उसपर विचार करके निर्धारण करेगा और उसरूप परिणमन करेगा, ये सब बातें देशनालब्धि के अंतर्गत आती हैं। पंचलब्धि पुस्तक में इन पांच लब्धि का विस्तार से वर्णन है, पढ़ लेना आप। अनादि मिथ्यादृष्टि जीव जब प्रथम बार सम्यक्त्व प्राप्त करता है – औपशमिक सम्यक्त्व, वह अंतर्मुहूर्त में नियम से गिरकर मिथ्यात्व गुणस्थान में आता है। अंतर्मुहूर्त में वह दुबारा सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है, मुनि भी हो सकता है, मोक्ष भी जा सकता है।

श्रोता: जो बादर नित्य निगोदिया मनुष्य में आता है, मतलब वहां पर यानी मनुष्यायु बंधती है? हां, हां, केवल अग्निकायिक और वायुकायिक जीवों को मनुष्यायु, मनुष्यगति नहीं बंधती। बादर निगोद हो या सूक्ष्म निगोद हो, डायरेक्ट मनुष्यायु बांधकर मनुष्य में आ सकता है। *श्रोता: गति का बताया था जो वायुकायिक और अग्निकायिक हो उनको तिर्यंचगति ही बंधती है?* हां, और आयु भी तिर्यंच की ही बंधेगी, पर अन्य सभी जीव, अन्य सभी कायिक-पृथ्वीकायिक हो, जलकायिक हो, वनस्पतिकायिक हो, उसमें निगोद भी हो, या प्रत्येक वनस्पतिवाला भी हो, तो वे तो मनुष्यगति, मनुष्यायु बांध भी सकते हैं; मनुष्यायु बंधती ही है ऐसे नहीं, बांध सकते हैं; कोई रुकावट नहीं है और बीच में कोई अन्य भव धारण करना पड़ता है ऐसा बिलकुल नहीं है। जो ऐसी कोई मान्यता चल रही है, ऐसा है नहीं। भरत चक्रवर्ती के पुत्रों ने निगोद से निकलकर द्वीन्द्रिय की पर्याय प्राप्त की थी। वह तो हर एक को करनी पड़े ऐसी बात नहीं है, *श्रोता: डायरेक्ट मनुष्य हो सकता है।* डायरेक्ट हो सकता है, होता है, मोक्ष भी जा सकता है। *श्रोता: नित्यनिगोद होगा या इतर निगोद होगा दोनों में से कोई भी निकलकर मोक्ष जा सकता है?* हां, जा सकता है, बादर निगोदवाला।

श्रोता: सूक्ष्म नहीं? सूक्ष्म से मनुष्य में आकर वह मुनि अवस्था तक पहुंच सकता है, मोक्ष जाने का पुरुषार्थ उस भव में उसको नहीं होगा, अन्य भव में हो सकता है।

तो यहां तो हम ६३७ पृष्ठ पर थे। तो यह अभव्यराशि और भव्यराशि की बात चल रही थी। तो भव्यराशि भी जो है, वह अभव्यराशि से अनंतानंतगुणी है। यहां, सेकंड लाइन, **संसारी जीवों के परावर्तन कहते हैं** – उसीका दूसरा नाम है परिवर्तन, अब परावर्तन कहो या परिवर्तन कहो एक ही बात है। आप कहेंगे, परिवर्तन कहने से छोटा लगता है, परावर्तन कहने से बड़ा लगता है। ऐसा कुछ नहीं है, दोनों शब्दों का अर्थ वही है। **परावर्तन, परिभ्रमण, संसार ये एकार्थवाची हैं।** कहीं-कहीं इसको पांच प्रकार का संसार भी कहने में आता है। **द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव से परावर्तन पांच प्रकार का है। वहां द्रव्यपरावर्तन दो प्रकार का है।** द्रव्यपरावर्तन कहो यो पुद्गलपरावर्तन कहो एक ही बात है। उसमें भी दो प्रकार बताये हैं। कौनसे? **कर्मद्रव्यपरावर्तन और नोकर्मद्रव्यपरावर्तन।** अभी यह कर्म क्या है और नोकर्म क्या है उसको देखेंगे।

कर्म की बातें तो हमने सबने देखी हैं, सुनी हैं, यानी उस शब्द से हम परिचित हैं। हम कहते हैं हमने कर्म बांधा। क्या करें? हमारा कर्म का उदय खोटा चल रहा है। क्या करें? अंतराय कर्म आड़ा आता है। हमारा असाता का उदय चल रहा है, क्या करें? हमारा मिथ्यात्व कर्म हमको सम्यक्त्व नहीं होने देता। ऐसी बात है न? *श्रोता: नहीं।* नहीं, यह तो कर्म और जीव अनादि से बंधी हुयी अवस्था में पाये जाते हैं और जीव के हर समय के परिणाम के अनुसार नये-नये कर्मों का बंध होता रहता है। तो यहां तो यह जो जीव हर समय कर्मों के परमाणु ग्रहण करता है। यहां कर्म शब्द से क्या समझना है? *श्रोता: आठ कर्म।* द्रव्यकर्म। जो आठ कर्म हैं उसमें जीव जो कार्माणवर्गणा को – कर्मों का रॉ मटीरिअल क्या है? कार्माणवर्गणा, वह स्वयं कर्मरूप परणमित होनेवाली है। कर्मद्रव्यपरावर्तन में उसको लेना यहां पर। जीव कार्माणवर्गणा को ग्रहण करता है, उसके परमाणु संबंधी बात चलेगी। वह क्या होता है? उसकी बात बाद में करेंगे। जब हम नोकर्मद्रव्यपरावर्तन कहेंगे तो नोकर्म में किसको लेना है? *श्रोता: शरीर को।* शरीर के परमाणुओं को। देखो, जीव पांच प्रकार की वर्गणायें ग्रहण करता है। मालूम हैं कौन-कौनसी? *श्रोता: आहारवर्गणा,* आहारवर्गणा, *श्रोता: तेजसवर्गणा,* तेजसवर्गणा, *श्रोता: भाषावर्गणा,* भाषावर्गणा, *श्रोता:*

मनोवर्गणा, मनोवर्गणा, *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* कार्माणवर्गणा। यहां वर्गणा की बात चल रही है। कार्माणवर्गणा से तो कर्म बनता है। बाकी चार वर्गणाओं को मिलकर, एक शब्द मालूम है? *श्रोता: नोकर्मवर्गणा।* नोकर्मवर्गणा।

क्या कहा? *श्रोता: नोकर्मवर्गणा।* नोकर्मवर्गणा में क्या-क्या आता है? आहारवर्गणा आयी, उसमें से तीन शरीर बनते हैं। औदारिक, वैक्रियिक और आहारक। तेजसवर्गणा से तेजसशरीर बनता है। भाषावर्गणा से शब्द यानी भाषा बनती है और मनोवर्गणा से द्रव्यमन की रचना होती है। तो इनसे बननेवाले जो हैं उनको नोकर्मशरीर कहेंगे और यह है कर्मशरीर। कार्माणवर्गणा से जो बनेगा वह कर्मशरीर है और नोकर्मवर्गणा से जो बनेगा वह नोकर्मशरीर है। यहां तक बात ख्याल में आयी? *श्रोता: कर्मशरीर क्या है?* कर्मशरीर यानी आठ कर्मों का जो स्कंध है उसको कर्मशरीर कहेंगे, कार्माणशरीर कहेंगे, एक ही बात है। कार्माणशरीर कहो, आठ कर्मों का जो बंध हुआ है, वहां पर जो स्कंध बना है, वह कहो, एक ही बात है। उसीको यहां कर्मशरीर या कार्माणशरीर भी कहेंगे। यहां तो कर्मद्रव्यपरावर्तन में, जीव हर समय जो कर्म के परमाणु ग्रहण करता है उस संबंधी चर्चा चलेगी। वह कहां से लेता है? क्या करता है? वह सब चर्चा आयेगी अभी और नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में, शरीर संबंधी जो परमाणु ग्रहण करता है, उसकी बात चलेगी। हर समय शरीर के भी अनंत परमाणु जीव ग्रहण करता है और हर समय में कर्म संबंधी भी अनंत परमाणु जीव ग्रहण करता है। वह ग्रहण करता है हम कहेंगे कर्म आते हैं तो वे बाहर से आते हैं? क्या हम उनको बाहर से लाते हैं? बाहर से कहीं से नहीं आते – फिर कहां से आते हैं? हम देखेंगे उसको। *श्रोता: नोकर्म भी आठ कर्म के अंतर्गत गर्भित हैं क्या?* नहीं, नोकर्म अलग हैं, वह तो एक भव पुरते होते हैं।

देखो-देखो, कर्मशरीर में आठों कर्म हैं। ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वे सब नामकर्म भी उसके अंदर हैं। उसके निमित्त से शरीर के परमाणु आते हैं। परंतु वह नामकर्म है, वह कर्म का भाग है वह कर्मशरीर में आते हैं, कार्माणवर्गणा से बना है। देखो-देखो औदारिकशरीर नामकर्म, अभी प्रश्न सुनना। वैक्रियिकशरीर नामकर्म और आहारकशरीर नामकर्म कौनसी वर्गणा से बने हुये हैं? *सभी श्रोता: आहारवर्गणा से।* अरे मैं नामकर्म की बात पूछ रही हूं। *श्रोता: कार्माणवर्गणा से।* है न? समझ में आयी बात? कहां भूल हुयी? देखो, फिर प्रश्न

सुनना। यदि मैं पूछती कि औदारिकशरीर काहे से बना है? तो आहारवर्गणा से। वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर काहे से बने हैं? आहारवर्गणा से, तीनों शरीर; तब तो उत्तर सही होता, परंतु मैंने क्या पूछा था? मैंने पूछा था औदारिकशरीर नामकर्म *श्रोता: बराबर है।* वैक्रियिकशरीर नामकर्म, आहारकशरीर नामकर्म कौनसी वर्गणा से बने हैं? कार्माणवर्गणा से। वह शरीरवाली बात छोड़ दो, नामकर्म कौनसी वर्गणा से बना है? कार्माणवर्गणा से, यह तो बात ख्याल में आयी? तो हमने नामकर्म का एक भेद – शरीर नामकर्म पूछा आपको, तो आपने आहारवर्गणा से बनता है कह दिया क्योंकि हमें तो आधा सुनने की आदत है न! हम प्रश्न पूछेंगे तो उसमें तो सोच समझकर उसका उत्तर देना। देखो, अभी यहां क्या कह रहे हैं हम? कि नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में शरीर संबंधी जो अनंत पुद्गल परमाणु जीव हर समय ग्रहण करता है, उसकी बात चलेगी। अब वह परावर्तन करता है यानी क्या करता है? वह पुद्गल परमाणु कितने लेता है? क्या है? वह सब बात हम विस्तार से देखनेवाले हैं। यहां तो दो प्रकार से द्रव्यपरावर्तन गिनते हैं। नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में हम शरीररूप परिणमित होनेवाले परमाणु यानी आहारवर्गणा को लेंगे और कर्मद्रव्यपरावर्तन में कर्मरूप परिणमित होनेवाले परमाणु यानी कार्माणवर्गणा को लेंगे। यह बात ख्याल में आयी?

तो यह जीव इनका ग्रहण क्यों करता है? ग्रहण होता क्यों है? हम आप करते हैं और सिद्ध भगवान तो नहीं करते हैं। कुछ तो कारण ऐसा है जो हमारे में विद्यमान है, सिद्ध भगवान में विद्यमान नहीं है। आप कह सकते हैं क्या कारण है? *श्रोता: भावकर्म।* हां, भावकर्म, तो भावकर्म से अकेले आते हैं? भावकर्म क्यों होता है? मैं प्रश्न पूछती हूं कि हमें ही मोह, राग, द्वेष होते हैं तो सिद्धों को क्यों नहीं होते? *श्रोता: वे वीतराग हुये हैं।* हां, वीतराग हुये तो क्या हुआ, वह फिर करेंगे न। *श्रोता: विभावरूप परिणमन होता है।* अभी विभावरूप हम करते हैं, तो सिद्ध भगवान क्यों नहीं करते हैं? *श्रोता: योग।* योग तो तेरहवें गुणस्थानवाले अरिहंत को भी है, उनके तो मोह-राग-द्वेष नहीं हैं। *श्रोता: कर्मों का आना।* हां, कर्मों का आना है। मेरा प्रश्न यही है कि हमें मोह-राग-द्वेष हो रहे हैं और सिद्धों को क्यों नहीं? यह तो मेरा सिम्पल क्वेश्चन है। यह हो सकता है न कि मोक्ष होने के बाद फिर दुबारा मोह-राग-द्वेष हो जाये और फिर यहां संसार में आवे? *श्रोता: कर्मों का अभाव हुआ है।* तो सिद्धों को मोह-राग-द्वेष क्यों नहीं होते? हमें मोह-राग-द्वेष इसलिये होते हैं कि पुराने

कर्मों का उदय होता है। हां, यह सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है, कर्म कुछ नहीं करते, जीव स्वयं कर रहा है। परंतु वहां निमित्तरूप से उनका प्रेझेन्स, उनकी हाजिरी है तो उनके पुराने कर्मों का उदय होता है और यहां जीव मोह-राग-द्वेष करता है और नये कर्म बंधते हैं, आते हैं, हम कहेंगे।

श्रोता: उदय में आनेवाले कर्मों को भी तो भावकर्म कहते हैं? नहीं, जीव के परिणामों को भावकर्म कहते हैं, मोह-राग-द्वेष कहते हैं। आस्रव किसको कहते हैं? *श्रोता: नये कर्मों के आने को,* हां, नये कर्म आते हैं, उनको आस्रव कहते हैं। समयसार में क्या लिखा है? हमने आपको बताया बहुत बार, हां बोलो। *श्रोता: जीव के परिणामों में जो मोह-राग-द्वेष भाव की उत्पत्ति होती है उसको आस्रव कहा।* खरेखर आस्रव किसको कहा? पुराने कर्मों के उदय को खरेखर आस्रव कहा, समयसार गाथा निकालो १६३, १६४। *श्रोता: यह जो भावकर्म की बात पूछी, तो सबके भावकर्म हो उसकी अपेक्षा से वहां अनुभाग...।* हां, वह तो होता है जैसे भावकर्म हैं। आपका ऐसा कहना है कि कर्म में जो परमाणु हैं उसको हम द्रव्यकर्म कहेंगे और उनमें जो शक्ति है उसको - उसका जो भाव है उसको भावकर्म कहेंगे। बात सही है और उनके निमित्त से जीव में मोह-राग-द्वेष होते हैं; इसलिये जीव के परिणामों को भी भावकर्म कहेंगे। यह अलग-अलग अपेक्षा से यह कथन बिलकुल सही है। यहां तक बात ख्याल में आयी?

यह पुद्गलपरावर्तन कर्म की अपेक्षा से कहो या नोकर्म यानी शरीर की अपेक्षा से कहो, दोनों का काल समान है। उसको हम कर्मों की भाषा में लेंगे या नोकर्म की भाषा में लेंगे तो उसका काल समान होगा। दोनों ही पद्धति से यहां समझाया जायेगा। यह क्या होता है? कहां से शुरुआत होती है? कैसे-कैसे उसका परिभ्रमण होता है? कैसे उसको काउंट करना? कैसे उसको समझना है? वह पूरा ही टेबल सहित हम यहां पढ़ेंगे कि कर्म बंधता है यानी कितने परमाणु आते हैं। क्यों आते हैं? कैसे होते हैं? उसकी रचना कैसी होती है? कितने काल तक रहेंगे? वे छूटकर कहां चले जायेंगे? कहां से आयेंगे? उसकी चर्चा हम थोड़ी देर के बाद शुरू करनेवाले हैं। अब यहां थोडा रुकते हैं हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

६. कर्मशरीर, नोकर्मशरीर, विस्रसोपचय

षट्खण्डागम के आधार से कालअनुयोगद्वार की चर्चा चल रही है। उसमें बारंबार जो अर्द्धपुद्गलपरावर्तन या असंख्यात पुद्गलपरावर्तन या ढाई पुद्गलपरावर्तन ऐसे शब्द आते हैं, तो यह परावर्तन का स्वरूप क्या है? उसकी हम चर्चा करने जा रहे हैं। तो हमने यहां देखा था द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन और भावपरावर्तन नामक ये पांच प्रकार के परावर्तन हैं। मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा हम देख रहे हैं कि वह अनादि से इनको आज तक करता आ रहा है और यदि इसको सम्यक्त्व प्राप्त नहीं होगा तब तक तो यह ऐसा ही चलता रहेगा। एक बार सम्यक्त्व होने के पश्चात् अभी उसका अधिक काल संसार में भटकना नहीं होगा; भले वह मिथ्यात्व में भी चला जाये तो नियम से अर्द्धपुद्गलपरावर्तन काल के अंदर-अंदर वह मोक्ष चला जायेगा ही। अर्द्धपुद्गलपरावर्तन का अर्थ किसीने पूछा है, जो अभी हम देखने जा रहे हैं वह जो पुद्गलपरावर्तन का काल है, उस काल के आधे प्रमाण को अर्द्धपुद्गलपरावर्तन कहेंगे; जो अनंतकाल है। वह अनंतता कितनी है उसको हम जब देखेंगे तो उसका हमें पता चलेगा।

तो अभी-अभी हमने दो शब्द यहां सुने हैं, कर्मशरीर और नोकर्मशरीर। उसके लिये इसी पुस्तक में आपको देखना पड़ेगा, जीवकाण्ड की पहली पुस्तक में ३५६ पृष्ठ है। अभी पहली और दूसरी दोनों पुस्तकें साथ में रखना हो, जभी जिसका नंबर आयेगा उसको खोलना पड़ेगा क्योंकि घर में रखकर, कपाट में या अलमारी में रखने से कुछ नहीं होनेवाला। उसको हम पढ़ेंगे, समझेंगे कैसे पढ़ना, तो फिर दुबारा पढ़ने का भी उत्साह आ जायेगा। पृष्ठ संख्या ३५६, गाथा २४४ के ऊपर लिखा है – **आगे शरीर का कर्म और नोकर्म भेद दिखाते हैं।** यानी शरीर दो प्रकार के बता रहे हैं – कर्मशरीर और नोकर्मशरीर। जो हमने अभी देखा, बताया आपको, वही बात यहां हम पुस्तक में पढ़ेंगे। ये सब जो बातें हम यहां चर्चा कर रहे हैं वे सभी बातें आगम के आधार से ही चल रही हैं और चलेगी। इसलिये आपको बारंबार आगम को बताते हैं कि कहां क्या लिखा है? तो थोड़ा हमें भी समझ में आयेगा और उसको कैसे पढ़ना है यह भी ख्याल में आयेगा।

देखो, २४४ गाथा में लिखते हैं टीका में, हम डायरेक्ट टीका देखेंगे इसकी –

औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तेजसरूप जो नामकर्म की प्रकृति हैं; इसका अर्थ है औदारिकशरीर नामकर्म, वैक्रियिकशरीर नामकर्म, आहारकशरीर नामकर्म और तेजसशरीर नामकर्म। ये जो नामकर्म की प्रकृतियां हैं **उनके उदय से,** जो ये औदारिक आदि चार शरीर नामकर्म हैं, उनके उदय से क्या होता है? तो उस जाति के परमाणुओं का ग्रहण होता है और ग्रहण होकर वे उस शरीररूप से परिणमित होते हैं। यह क्यों ग्रहण होता है? शरीर के परमाणु को जीव क्यों ग्रहण करता है? हं? *श्रोता: नामकर्म के उदय से...* नामकर्म के उदय से डायरेक्ट आते हैं क्या परमाणु? क्या होता है? *श्रोता: योग के कारण।* योग के कारण, योग-योग, योग नाम सुना है न? योग का अर्थ क्या है? यह जुड़नेवाला योग अलग। आत्मा में जुड़ते हैं वहवाला योग अलग और यहां जो योग है वह आत्मा के प्रदेशों के चंचलपने को, उनके कंपन को - परिस्पंदन को यहां योग कहते हैं। वह परिस्पंदन क्यों होता है? तो कहेंगे कि, वहां कुछ भावयोग है तो यह द्रव्ययोग भी होता है। तो यह क्यों होता है? तो पुराने नामकर्म के उदय में। कौनसे नामकर्म? शरीर नामकर्म के उदय में।

अभी हमने जो नाम पढ़े यहां, हमने तो चार ही नाम लिये। औदारिकशरीर नामकर्म के उदय में ऐसा योग होता है कि जहां मात्र औदारिकशरीर संबंधी आहारवर्गणा का ग्रहण होता है। वैक्रियिकशरीर नामकर्म के उदय में; वह उदय किसको होता है? देव और नारकियों को होता है; उनके तो वैक्रियिकशरीररूप परिणमित होनेवाली जो आहारवर्गणा है, उसकी भी रेंज अलग है, उसका ग्रहण होता है। जो मुनिराज हैं जिनके आहारकशरीर का निर्माण होता है उनके तभी उस आहारकशरीर नामकर्म के उदय में वहां पर आहारककाययोग होता है। तो वे आहारकशरीर संबंधी परमाणु ग्रहण करके आहारकशरीर की रचना करते हैं। तो यह अलग-अलग योग से अलग-अलग शरीर के परमाणुओं का ग्रहण होता है। अभी उसमें सारे लगा लो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण नामकर्म के उदय में जो गोरा है तो गोरे परमाणुओं को ग्रहण करेगा, काला है तो काले। यहां पर कोई हमारा काला आदमी यु. एस. चला जायेगा, तो वहां के गोरे परमाणु ग्रहण करेगा कि नहीं करेगा? जैसा नामकर्म का उदय है उस जाति के परमाणुओं का ग्रहण होगा। जो शरीर का ढांचा है; जो वर्ण है, जो कुछ है, उसका आकार है वे सभी नामकर्म के अलग-अलग भेद वहां हैं उनके उदय से वैसी-वैसी उस शरीर की रचना होती है। तो यहां यही कहते हैं कि उनके उदय से,

कौनसे? हम पहले जो नामकर्म बांधकर आये हैं, अभी मनुष्य में आये हैं, तो औदारिकशरीर नामकर्म का उदय चल रहा है। तो औदारिकशरीर होने योग्य ऐसे जो परमाणु हैं, उनका यहां ग्रहण होगा हर समय। तो औदारिकशरीर नामकर्म के उदय में जीव में यहां योग होता है और उसके कारण उस शरीर की जाति के परमाणुओं का ग्रहण होता है। उसको क्या कहा? यह **उनके उदय से** यह तो डायरेक्ट बात बतायी है। **औदारिक आदि चार शरीर होते हैं।** यह जिस क्रम से बताया उसके वैसे शरीर होते हैं।

तेजसशरीर नामकर्म के उदय से तेजसवर्गणा का ग्रहण होता है और तेजसशरीर की उत्पत्ति होती है। यानी जो जीव के साथ बंधे हुये हैं वह एक स्कंध बन गया है; जीव तो यहां एक है और वहां कौन-कौनसे शरीर हैं? एक कार्माणशरीर है, एक तेजसशरीर है और यहां एक हमारा और आपका वह औदारिकशरीर है, हर एक का अपना-अपना! है न? वह क्यों बना है? तो यह शरीर नामकर्म के उदय से आत्मा में कंपन होता है, योग होता है। यह योग किसे कहना? कर्म और नोकर्म के आकर्षण की शक्ति को योग कहते हैं। कर्माकर्षण की शक्ति कहो या कर्म-नोकर्म के आकर्षण; आकर्षण यानी उसका वह जो रॉ मटीरिअल है, आहारवर्गणा है या कार्माणवर्गणा है, उनमें से आहारवर्गणा शरीररूप से परिणमित होती हैं और कार्माणवर्गणा कर्मरूप से परिणमित होती हैं। जीव उनको ग्रहण करता है ऐसा कहेंगे हम। ग्रहण करता है यानी क्या? कहां से ग्रहण करता है? वह तो बात आयेगी अभी, कहां से लेता है? कितना लेता है? उसकी चर्चा करेंगे हम। तो देखो यहां क्या कहते हैं? यहां चार शरीर होते हैं उनको क्या कहा? **वे नोकर्मशरीर जानने।** किस-किसको नोकर्मशरीर कहा? *श्रोता: औदारिकशरीर।* औदारिकशरीर। *श्रोता: वैक्रियिकशरीर।* वैक्रियिकशरीर। *श्रोता: आहारकशरीर।* आहारकशरीर। *श्रोता: तेजसशरीर।* तेजसशरीर। इन सबका नाम है नोकर्मशरीर।

जो वर्गणा ली थी, उसका नाम था नोकर्मवर्गणा और ये जो शरीर हुये उनका नाम है नोकर्मशरीर। **नो शब्द के दो अर्थ हैं,** ३५७ पृष्ठ पर – **एक तो निषेधरूप**, यह एन ओ नो शब्द है न? वैसा वहां पर भी नो यानी नहीं यानी निषेध यानी अभावरूप कहना अथवा दूसरा अर्थ है **ईषत्** यानी अल्प, **स्तोक।** *श्रोता: यहां पर भाषावर्गणा का उल्लेख क्यों किया है लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका के ९ पेज पर?* नोकर्मवर्गणा में हम भाषावर्गणा को भी लेंगे; पर भाषा नाम का कोई शरीर तो नहीं है यहां पर; यहां शरीर की बात थी न इसलिये

उसमें भाषा को नहीं लिया। *श्रोता: और मनोवर्गणा?* हां, मनोवर्गणा से मन बनता है, मनोवर्गणा को नोकर्मवर्गणा कहेंगे। परंतु यहां हम नोकर्मशरीर कहते हैं तो उसमें औदारिक, वैक्रियिक, आहारक शरीर के अंगरूप मन को ग्रहण करेंगे, उन्हींका पार्ट ॲण्ड पार्सल समझेंगे तो उसकी भी हम वहां बात करेंगे। उसमें भी ऐसा ही है, इसका कोई नामकर्म अलग से नहीं है। तो वहां नोइन्द्रियावरण नाम के ज्ञानावरण कर्म के उदय से, ऐसा-ऐसा कहेंगे लंबा, चौड़ा, ख्याल में आया न? ये पांच शरीर के नाम हैं। उन शरीर नामकर्म के उदय से, उस-उस शरीर के परमाणु का ग्रहण होता है, इसीलिये उन चार की बात यहां उठायी है।

तो यह नो का अर्थ क्या होता है? थोड़ेसे, थोड़े के लिये भी नो कहते हैं। यह समझे न? जैसे नोकषाय यानी किंचित् कषाय, यहां नो शब्द से क्या समझना? थोड़ासा। **चूंकि यहां कार्माण की तरह ये चार शरीर आत्मा के गुणों को घातते नहीं अथवा गत्यादिरूप पराधीन नहीं कर सकते।** आत्मा के गुणों को घातनेवाले कौनसे-कौनसे कर्म हैं? *श्रोता: चार घातिकर्म।* हां, चार घातिकर्म, जैसे नाम ही उनका घातिकर्म है – ज्ञानावरण है, दर्शनावरण है, मोहनीय है, अंतराय है। ये आत्मा के गुणों को घातते हैं, तो गुण नष्ट होते होंगे आत्मा के? *श्रोता: कभी नहीं।* गुण तो कभी कोई नष्ट ही नहीं कर सकता है; गुण तो अनादि से अनंतकाल तक रहेंगे; द्रव्य तो उन्हींसे बना है ऐसा हम कहेंगे। *श्रोता: आवरण करता है...* तो वह आवरण करता है, किसको? गुणों को; उसकी जो शक्ति है वह पर्याय में प्रकट नहीं होती। क्यों नहीं होती? जीव के अपने कारण; जीव अपने उपादान से ही हीन पर्यायरूप परिणमन करता है, तो सामने कर्म मौजूद हैं तो हम कहेंगे इस कर्म ने उनका घात किया – यह कथन पद्धति है। निमित्त ने कार्य किया, कर्म ने जीव को आवरण किया, कर्म ने जीव के गुणों को घात किया, यह कथन पद्धति है। कर्म जीव का कुछ सुधार-बिगाड़ नहीं कर सकते। यहां निमित्त का ज्ञान कराने के लिये यह भाषा है। यह भाषा का अर्थ समझना कैसे? यह कर्तव्य हमारा है जो हमारी बुद्धि पर निर्भर है।

तो यहां क्या लिखते हैं? देखो, **ये चार** जो **शरीर** हैं औदारिकशरीर है, वैक्रियिकशरीर है, तेजसशरीर है, आहारकशरीर है, वे **आत्मा के गुणों को घातते नहीं अथवा गत्यादिरूप पराधीन नहीं कर सकते।** यह गत्यादिरूप पराधीन करने की बात, गति नामकर्म आदि अन्य-अन्य अघातिकर्मों की है। आयुकर्म क्या करता है? आयुकर्म अच्छा कि बुरा?

श्रोता: उस भव से छूटने नहीं देता। तो अच्छा है न? अरे हमारा आयु कर्म कायम रहे उसीकी तो कोशिश करते हैं हम। डॉक्टर के पास क्यों जाते हैं? ये हार्ट रिप्लेस क्यों करते हैं? आजकल के पंचमकाल में तो हीन संहननवाले हैं सभी। मालूम है न? तीन हीन संहनन होते हैं। आजकल तो संहनन भी हमने स्टील का बना दिया है। नहीं बना दिया? यह घुटने रिप्लेस करते हैं न सारे? स्टील बॉडि बना देते हैं। क्यों? कुछ नया संहनन डाल दिया हमने अंदर। ऐसा है? *श्रोता: हार्ट भी रिप्लेस हो जाता है।* हां, सभी रिप्लेस हो सकता है। तो भेदविज्ञान करना आज के युग में बहुत सरल हुआ है। जो कुछ रिप्लेस हो सकता है, वह मैं नहीं हूं यह समझना। हार्ट होता है, किडनी होती है, लिव्हर होता है, पूरा-पूरा ब्लड ट्रान्स्प्लांट होता है। बच्चों को जब जाँडिस होता है तो पूरा ब्लड निकाल कर दूसरा डालते हैं। मालूम है? आजकल वह स्किन ट्रान्स्प्लांट भी हो रहा है। देखो, इसीलिये जो-जो कुछ रिप्लेस हो सकता है वह मैं नहीं हूं। यह घुटने बदल दे, यह बदल दे, हम तो वही के वही हैं, है न? तो भेदविज्ञान सरल हुआ कि नहीं हुआ!

देखो-देखो, तो इसलिये जैसे कर्मों का आत्मा के परिणामों के साथ, गुणों के साथ निमित्त-नैमित्तिक संबंध है, वैसे इतना ज्यादा इन चार शरीरों का नहीं है। हां शरीर के प्रति मोह है, परंतु फिर वह मोहकर्म के उदय में डालेंगे, तो कहते हैं **इसलिये कर्म से विपरीत लक्षण धरने से इनको अकर्मशरीर कहते हैं।** उसीको नोकर्मशरीर कहते हैं **अथवा कर्मशरीर के ये सहकारी हैं;** सहकारी हैं यानी निमित्त-नैमित्तिक संबंध है उनका आपस में; **इसलिये ईषत् कर्मशरीर कहते हैं। इसप्रकार इनको नोकर्मशरीर कहा। जैसे मन को नोइन्द्रिय** कहा। ये पांच तो इन्द्रियां हैं और मन को क्या कहा? नोइन्द्रिय, पांच को करण कहते हैं और मन को अंत:करण कहते हैं। **तथा कार्माणशरीर नामक नामकर्म के उदय से ज्ञानावरणादिक कर्मस्कंधरूप कर्म,** कर्मस्कंध क्योंकि जो कर्म परमाणु यानी जो परमाणु कर्मरूप परिणमित होते हैं उनका पुराने कार्माणशरीर के साथ बंध हो जाता है, उनका एक स्कंध बन जाता है। देखो, यहां एक जीव है और उसके साथ कर्म तो अनादि से बंधा तो था ही, नये-नये कर्म आकर उसीके साथ और नया-नया बंध होता है, उसका ही स्कंध होता है। तेजसशरीर भी अनादि से है; कुछ परमाणु निकल जाते हैं; नये भी आते हैं; उनका भी एक स्कंध बना है। जिस भव में जाता है उस संबंधी औदारिक या वैक्रियिक जो शरीर है उसको भी ग्रहण करता है; वह भी उसी क्षेत्र में रहता है जितना जीव

का क्षेत्र है, जीव के प्रदेश हैं; उसमें ये सभी तीनों ही प्रकार के परमाणु अनंतानंत बंधे हुये पड़े हैं। कार्माणशरीर और तेजसशरीर का भी आपस में बंध है; इन दोनों का औदारिक शरीर के साथ भी आपस में बंध है। इतना ही नहीं उसके एक-एक परमाणु देखो, एक समय में तो अनंत बंधते हैं उसका हिसाब हम बाद में लगायेंगे, गणित की थोड़ी बातें सुबह करेंगे न, तो अच्छा है। हां-हां-हां क्यों? दिमाग फ्रेश रहता है न?

तो यहां हम देखेंगे कि यहां औदारिकशरीर के परमाणु कितने हैं? तो अनंतानंत हैं; एक समय में अनंत ग्रहण कर रहा है और हर समय जीव अनंत-अनंत ग्रहण करता है और अनंत को छोड़ता है; तथा अनंत उसकी सत्ता में हैं। औदारिकशरीर के परमाणु अनंतानंत हैं, यहां पर तेजसशरीर के परमाणु अनंतानंत हैं, कार्माणशरीर के परमाणु यानी कर्मरूप जो हुये हैं वे भी अनंतानंत हैं। क्या इतने ही पुद्गल हैं जीव के साथ जिनको हम कहेंगे जीव से बंधे हुये हैं? तो नहीं! हर कर्म परमाणु है या तेजस परमाणु है या औदारिकशरीर का परमाणु है उसके साथ, जीव ने उनको नहीं बांधा है; परंतु उनके स्निग्धत्व-रुक्षत्व के कारण उनके साथ मेरी भाषा में चिपके हुये हैं, स्कंधरूप बने हुये हैं; ऐसे जितने जीव अनंत हैं न, उनसे अनंतानंतगुणे ऐसे ही फालतू जो अन्य परमाणु हैं वे इनमें से हर एक परमाणु के साथ बंधे हुये हैं। क्या कहा? एक-एक कर्म परमाणु के साथ अनंत-अनंत अन्य परमाणु बंधे हैं। तेजसशरीर का जो एक-एक परमाणु है उस एक-एक परमाणु के साथ अनंतानंत अन्य परमाणु बंधे हुये हैं। औदारिकशरीर के एक-एक परमाणु के साथ अन्य अनंतानंत परमाणु बंधे हुये हैं। तो ये तो ओरिजिनल तीन शरीर के और सबके अनंतानंतगुणे अन्य, ये सब इसी एरिया में, इसी जीव के क्षेत्र में बंधी हुयी अवस्था में पाये जाते हैं। ये जो अन्य बाहर से आये हुये हैं न, परमाणु बाहर से आये हुये यानी चिपके हुये हैं मेरी भाषा में, उसको कहेंगे विस्रसोपचय।

हां, अभी इसको भी देखेंगे कहीं लिखा होगा यह, यह विस्रसोपचय कैसे पढ़ना और कैसे जानना? क्योंकि वे कितने हैं? क्या हैं? कहां पड़े हुये हैं? उसको देखेंगे हम। हां-हां, देखो निकालो यहां, इसी जीवकाण्ड के पहले ही भाग में है। देखो-देखो विस्रसोपचय का जरा स्वरूप देखेंगे, विस्रसोपचय कहना किसको? पहली पुस्तक में ३६० पृष्ठ निकालना है, २४९ गाथा में **विस्रसोपचय का स्वरूप कहते हैं। कर्म और नोकर्म के जितने**

परमाणु हैं। कर्म कहने से जो ऑलरेडि कर्मरूप परिणमित हुये हैं उनको कर्म के परमाणु कहेंगे; उसका रॉ मटीरिअल था उसको हमने कार्माणवर्गणा कहा था; ये अभी कर्मरूप हो चुके हैं; तो जो कर्म परमाणु हैं और नोकर्म परमाणु हैं यानी ये जो औदारिक, वैक्रियिक, तेजस, आहारक जो शरीर हैं उनके यानी नोकर्म के जितने परमाणु हैं **उन एक-एक परमाणु के प्रति जीवराशि से अनंतानंतगुणा विस्रसोपचयरूप परमाणु हैं।**

देखो, कैसा लिखा है? विस्रसोपचयरूप परमाणु **जीव के प्रदेशों में एकक्षेत्रावगाही हैं**; यह एकक्षेत्रावगाही क्या होता है? मालूम है न कि नहीं सुना है? एक ही क्षेत्र में, अन्य-अन्य अनेक द्रव्य रहते हैं; उसको क्या कहेंगे? एकक्षेत्रावगाही। जैसे यह एक हॉल है, वहां एक बल्ब जलाया तो उसका प्रकाश कहां तक फैला? तो पूरे हॉल में; फिर हमने दूसरा बल्ब जलाया, उसका प्रकाश उसी क्षेत्र में; तीसरे बल्ब का उसी क्षेत्र में; तो क्षेत्र उतना ही है और फिर हर एक बल्ब को बुझाओ तो उसका प्रकाश उतना कम हो गया यानी उतने ही क्षेत्र में हर एक बल्ब का अपना-अपना प्रकाश है, तो उनका आपस में कैसा संबंध हुआ? *श्रोता: एकक्षेत्रावगाही संबंध।* एकक्षेत्रावगाही संबंध। जैसे एक ही लोकाकाश में धर्मद्रव्य भी है; उतने ही पूरे क्षेत्र में अधर्मद्रव्य भी है; *श्रोता: आकाशद्रव्य।* आकाशद्रव्य तो वहां है ही है; *श्रोता: कालद्रव्य।* कालद्रव्य भी है और जीवद्रव्य भी है; पुद्गलद्रव्य भी है; ये कैसे रह रहे हैं? *श्रोता: एकक्षेत्रावगाह।* एकक्षेत्रावगाह संबंध से। क्योंकि लोकाकाश तो है असंख्यातप्रदेशी और उसमें जीव कितने हैं? *श्रोता: अनंत।* अनंतानंत; पुद्गल? *श्रोता: अनंतानंत।* उनसे भी अनंतानंत और ये रहते कहां हैं? बस उसी क्षेत्र में; तो ये कैसे रहते हैं? एकक्षेत्रावगाहीरूप से।

हम यहां एक-एक जीवद्रव्य है, हमारा कार्माणशरीर कहां रहता है? थोड़ासा घर में छोड़कर आये कि नहीं कि सब लेकर आये? तो उसी क्षेत्र में, जितना जीव बड़ा है उसकी जितनी अवगाहना है, उसी क्षेत्र में उसका कार्माणशरीर है; उसी क्षेत्र में उसका औदारिकशरीर है; उसी क्षेत्र में उसका तेजसशरीर है और उनके परमाणु – कौनसे? विस्रसोपचयवाले – बिन बुलाये मेहमान, वे उनके अपने हैं हमारे कुछ नहीं हैं; ये कर्म तो हमने अपने परिणामों से बांधे हैं और वे विस्रसोपचय तो स्निग्धत्व-रुक्षत्व के कारण जो परमाणुओं का आपस में बंध होता है उसके कारण बंधे हुये हैं। तो शरीर के एक-एक परमाणु के साथ वे परमाणु

अनंतानंत बंधे हैं और ऐसे परमाणु हमारे पास अनंतानंत पड़े हैं। *श्रोता: तीनों के विस्रसोपचय अलग-अलग हैं?* हां, तीनों के विस्रसोपचय अलग-अलग हैं। *श्रोता: हमें कोई फर्क नहीं पड़ता?* हमें कोई फर्क नहीं पड़ता; इतना कर्म हैं, हमें क्या फर्क पड़ता है? कुछ पता ही नहीं न कि ये हमारे साथ हैं और उन विस्रसोपचय से हमारा कुछ निमित्तपना भी नहीं बनता है। उसके कारण जीव के मोह-राग-द्वेष परिणाम होते होंगे ऐसा भी नहीं है। वे बढ़ने से कोई वजन-बजन बढ़ता होगा ऐसा भी नहीं है। ये जो विस्रसोपचयरूप हैं, उनमें से कितने ही कार्माणवर्गणारूप से होते हैं और ग्रहण किये जाते हैं, उसकी बात आयेगी।

तो ये सभी एकक्षेत्रावगाहीरूप से रहते हैं; जीव मरकर चला जाता है न, तो औदारिकशरीर और उसका विस्रसोपचय यहां पड़ा रहता है और कार्माणशरीर, तेजसशरीर और दोनों के विस्रसोपचय साथ में ले जायेंगे क्योंकि वह बंधे हुये हैं न, जीव के प्रदेशों में स्थित हैं वे; वे चले जाते हैं वहां पर जीव के साथ। **विस्रसा अर्थात् अपने ही स्वभाव से आत्मा के परिणाम बिना ही** आत्मा के परिणाम के कारण वे नहीं बंधे हैं; वे अपने ही स्निग्धत्व-रुक्षत्व के कारण बंधे हुये हैं। पुद्गलों का जो मिलना-जुड़ना है न, पुद् और गल; स्निग्ध और रुक्ष में जो दो गुणों का डिफरन्स होता है, दो गुणों का अंतर, उसके कारण उनका बंध होता है; रुक्ष का रुक्ष के साथ या रुक्ष का स्निग्ध के साथ या स्निग्ध का स्निग्ध के साथ या स्निग्ध का रुक्ष के साथ; ऐसे ही इनका आपस में बंध है बस इतना ही। तो **आत्मा के परिणाम बिना ही उपचीयंते अर्थात् कर्म-नोकर्मरूप परिणमित हुये बिना ही** वे हमारे न कर्म हैं, न हमारे नोकर्म हैं, तो उसरूप हुये बिना ही **कर्म-नोकर्मरूप स्कंध में स्निग्ध-रुक्ष गुण के विशेष से मिलकर एक स्कंधरूप होते हैं।** यह ख्याल में आया?

जैसे आप घर से निकले हैं। आपने क्रीम लगायी हुयी है; तेल लगाया हुआ है; जो कुछ है और आप स्कूटर से आ गये हैं और धूलवाला रास्ता है। तो क्या होता है? वह क्रीम के ऊपर धूल भी चिपकेगी कि नहीं? या अभी यहां कन्स्ट्रक्शन चल रहा है तो वह धूल भी ऊपर से आकर चिपकेगी, तो आप यह धूल लगाकर थोड़े ही आये हैं! धूल तो उसके स्वयं के कारण वहां की स्निग्धता के कारण आकर चिपक गयी है। ऐसे ही यहां समझना। **उन्हें विस्रसोपचय कहते हैं, ऐसा निरुक्ति द्वारा ही इनका लक्षण आया है।** निरुक्ति यानी शब्द कैसे तैयार होता है उसको कहेंगे निरुक्ति। विस्रसा का अर्थ क्या है? उपचीयंते का

अर्थ क्या है? वह बताकर वह शब्द कैसे तैयार हुआ वह कहते हैं। **उनका जुदा लक्षण नहीं है। विस्रसोपचयरूप परमाणु कर्म-नोकर्मरूप होने को योग्य हैं।** यह तो रॉ मटीरिअल पड़ा है उसमें, सभी प्रकार की वर्गणायें होंगी, कितनी सारी। उनमें से ही कुछ कार्माणवर्गणायें वे कर्मरूप से हो जायेंगी; उनमें से ही कितनी ही औदारिकशरीररूप से परिणमित हो जायेंगी। विस्रसोपचय में से ही जीव कितना ग्रहण करेगा, यह बात कल और आयेगी। एक भी कर्म परमाणु जीव के प्रदेशों के बाहर से अंदर नहीं आता।

जब हम कहेंगे न जीव कर्मों का ग्रहण करता है; कार्माणवर्गणा आती हैं और जीव छोड़ जाता है; तो हम ऐसा ही समझते थे जब पहले-पहले पढ़ते थे। कार्माणवर्गणा बाहर से अंदर आती है उसको हम आस्रव कहते हैं और निकल जाती हैं तो उसको निर्जरा कहेंगे और वह आना रुकता है तो संवर होता है और उसके लिये वह नाव का भी उदाहरण सुना था क्योंकि वह नाव में बाहर से पानी अंदर आता था। यहां तो जो इस जीव का क्षेत्र है, उसी क्षेत्र में जो पुद्गल परमाणु पड़े हैं, उन्हीं में से कुछ परमाणु कर्मरूप परिणमित होते हैं; उसीको कहेंगे जीव ने कर्म को ग्रहण किया या नोकर्म को ग्रहण किया। एक भी परमाणु जीव का क्षेत्र छोड़कर बाहर के क्षेत्र में से, बाहर के एक भी प्रदेश में से एक भी परमाणु नहीं आता। उसके लिये मैं आपको प्रूफ दूंगी कल, यह विषय चलेगा। *श्रोता: तो कर्म उदय में आकर अकर्मरूप हो जाते हैं?* हां कर्म उदय में आकर अकर्मरूप होता है; वह वहां पडा रहे या पूरे लोकाकाश में कहीं पर भी चला जाये; जाने के लिये कोई लिमिट नहीं है। *श्रोता: सबसे लास्ट में भी लाइन में लग सकता है?* कहां पर? *श्रोता: जिसकी निर्जरा हो गयी वह वापस वहीं पर रह सकता है?* कहीं पर भी जा सकता है; उसकी अपनी योग्यता से कहीं पर भी जा सकता है। वह हम देखेंगे, ये जो निर्जरा होती है कर्मों की, वे कहां चले जाते हैं? औदारिकशरीर के परमाणु भी अनंत-अनंत हर समय निकलते हैं, वे कहां जाते हैं? उसकी चर्चा करेंगे हम; आते कहां से हैं और जाते कहां हैं; कितने आते हैं और कितने जाते हैं; क्योंकि इसका हिसाब, हमें यह परावर्तन में तो उसीको देखना है। जीव ने एक बार परमाणु ग्रहण किये हैं, उन्हींके संबंध से यह बात सब चलेगी। उसमें जो कोई पारिभाषिक शब्द आयेंगे, उसको जानने के लिये हम विस्रसोपचय को देख रहे हैं।

श्रोता: आपने अभी इसके पहले यह कहा कि जो जुदा शरीर है वह निकल जायेगा;

जीव यहां से दूसरी जगह पर जाता है। औदारिकशरीर छोड़ देता है और साथ में विस्रसोपचय-औदारिकशरीरवाले विस्रसोपचय के परमाणु भी वहां छोड देता है; तो अगर वह समझो दोबारा औदारिकशरीर बनायेगा या तो फिर उसके पास तो वे परमाणु मटीरिअल मतलब कि उसके पास और भी पड़े रहेंगे, मतलब... नहीं-नहीं, वहां वे तो चले गये; अब नामकर्म के उदय से वहां, जिस क्षेत्र में गया है, उस क्षेत्र में तो पुद्गल परमाणु हैं न, उसी क्षेत्र में। जीव वहां गया और जो प्रदेश जीव ने व्यापा है, वहां तो सभी परमाणु पड़े हैं न? देखो, यह मान लेते हैं यह जीव है; यह कहीं से मरकर यहां आया है; तो यहां के परमाणु हैं न! भले ही वे चिपके नहीं हैं, लूज हैं; परंतु यहां पर भी परमाणु हैं न? आकाश के एक-एक प्रदेश में अनंतानंत परमाणु पड़े हैं; अनंतानंत स्कंध पड़े हैं; एकप्रदेशी यानी एक-एक सिंगल परमाणु अनंत हैं, द्व्यणुक-दो अणुओं के एकप्रदेशी स्कंध वे अनंत हैं, तीन अणुओं के एकप्रदेशी स्कंध-अनंत हैं, चार अणुओं के एकप्रदेशी स्कंध-अनंत हैं ऐसे असंख्यात नहीं अनंत करो; अनंत अणुओं के एकप्रदेशी स्कंध भी अनंत हैं और वे सभी आकाश के एक प्रदेश पर स्थित हैं। परमाणु की अनंतता हमारे ख्याल में नहीं है। तो उस क्षेत्र में पडे हुये में से औदारिकशरीर संबंधी परमाणु वहां ग्रहण होंगे; फिर उसके साथ उसका विस्रसोपचय वहां नया बनेगा क्योंकि कोई औदारिक में से वैक्रियिक में गया है; कोई वैक्रियिक से औदारिक में, इसतरह से होता है न। कोई नारकी यहां जन्म लेगा और वह औदारिकशरीर बनायेगा यहां पर, हां। *श्रोता: एकप्रदेशी परमाणु कितने काल तक अवस्थित रहेगा?* कितने काल तक वह एकप्रदेशी रहता है? उसकी अपनी योग्यता अनुसार रहता है क्योंकि एकप्रदेशी क्यों नहीं बंधेगा? यदि वह एक गुणवाला हो जायेगा क्योंकि एक गुणवाला किसीसे बंधता नहीं है; परंतु परमाणु में एक से ज्यादा गुण नहीं होते यह बात नहीं है; परमाणु स्वयं की योग्यता से एक गुण से अधिक गुणवाला हो जाता है। एक गुण कहने से समझते हैं? अविभागप्रतिच्छेद कितने होते हैं उसमें, एक या दो? *श्रोता: अनंत।* अनंत, परंतु जो मिनिमम अनंत है न, उसको एक कह दिया वहां, हां, दो गुणवाले वह जो मिनिमम अनंत में एक अविभागप्रतिच्छेद बढ़ा दो, उसको दो गुण कहेंगे। उसमें दो बढ़ा दो, उसको तीन गुणवाले कहेंगे, एक गुणवाला यानी एक ही उसमें अविभागप्रतिच्छेद ऐसा नहीं है, यह जो मिनिमम संख्या है उसको एक कहेंगे। फिर से –

यह परमाणु के स्पर्श गुण की बात है। स्पर्श गुण में स्निग्धता या रुक्षता होगी, वह

किसमें गिनेंगे? अविभागप्रतिच्छेदों में। तो उसमें अविभागप्रतिच्छेद कितने होते हैं? तो कहेंगे जघन्य में जघन्य भी अनंत होते हैं। जघन्य में जघन्य जो स्निग्धता है उसको हम एक गुण कहेंगे, कहने के लिये। हैं उसमें अनंत, एक गुणवाला वह स्निग्ध होगा या एक गुणवाला रुक्ष होगा, वह किसीके साथ नहीं बंधेगा – यह नियम है। उसकी अपनी ही योग्यता से वह एक गुण से अनंत गुण तक कुछ भी हो सकता है, तो फिर वह बंधने के योग्य हो गया तो उससे दो गुण के डिफरन्स से वह किसीके साथ बंधेगा; तो कितने काल तक एक सिंगल परमाणु रहेगा क्योंकि सिंगल परमाणु भी अनंतानंत पड़े हैं। *श्रोता: स्कंध अवस्था में?* वे उनकी अपनी योग्यता से सिंगल परमाणुरूप से रहते हैं उनका स्कंध होना ही पड़ेगा यह कोई आवश्यक कंडिशन नहीं और वे परमाणु एक ही गुणवाले हो यह भी जरूरी नहीं है। *श्रोता: बराबर है लेकिन भेद, संघात से उत्पन्न होते हैं ऐसा जो आता है...* भेद से और संघात से उत्पन्न होते हैं यह जो कथन है, भेद से – किसके भेद से तो कहते हैं स्कंधों के भेद से; और संघात से, कौन? स्कंध कैसे उत्पन्न होते हैं? तो दो अलग-अलग स्कंध जुड़ने से भी अन्य बड़ा स्कंध हो जाता है। कोई दो गुणवाला है और चार गुणवाले के साथ बंध होकर तो संघात हुआ, उससे दूसरा और एक स्कंध तैयार हुआ ऐसा भी हो सकता है। अभी मान लो, एक लड्डू है उसके हमने दो टुकड़े कर दिये तो एक स्कंध था उसके भेद से दो स्कंध हो गये। या लड्डू ड्राय हो गया, उसमें से छोटे-छोटे कण अलग हो गये, बिखर गये तो वहां भेद से उसके अनेक अलग-अलग छोटे-छोटे स्कंध हो गये।

श्रोता: परमाणु का भी उसमें से होना बताया है? परमाणु का होना है वह अविभागप्रतिच्छेदों के अपेक्षा बतायेंगे, परमाणु के भेद नहीं होते और संघात से परमाणु नहीं बनते। उसके अविभागप्रतिच्छेदों में घटना-बढ़ना होता है उसीको पुद् और गल भी कह देते हैं; परमाणु को भी पुद्गल क्यों कहा? परमाणु तो एक सिंगल परमाणु है तो उसमें जो अविभागप्रतिच्छेदों का बढ़ना और कम होता है उसकी अपेक्षा से उसको यह कहेंगे। अपेक्षा वह लगायेंगे वहां पर क्योंकि परमाणु उसीको कहते हैं कि जो द्रव्य है ॲक्चुअलि और वह सबसे छोटे में छोटा साइझ है। प्रदेश से छोटा कुछ नहीं हो सकता; क्षेत्र का वह छोटे में छोटा यूनिट है, उससे छोटा वह बन ही नहीं सकता। *श्रोता: मतलब लोक में वर्ग है कि वर्गणायें हैं या दोनों होते हैं?* आप वर्ग किसको कह रहे हैं और वर्गणा किसको कह रहे हैं? *श्रोता: समान जाति के...* देखो, वर्ग और वर्गणा ये शब्द हैं न ये जिसको कहते हैं, वह

बहुत मिस्लीडिंग टर्म्स हैं; क्योंकि वर्ग और वर्गणा ये शब्द बहुत जगह आयेंगे। जब हम योगों का प्रकरण लेंगे – आत्मा के एक-एक प्रदेश को एक-एक वर्ग कहेंगे और जिन-जिन प्रदेशों में योगों के समान अविभागप्रतिच्छेद हैं उन आत्मा के प्रदेशों को एक वर्गणा कहेंगे। यहां कर्मों में भी वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक शब्द लगायेंगे। जहां जिओमेट्रिक प्रपोर्शन में घटना-बढ़ना होता है उसको बताने के लिये वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक, गुणहानि ये गणित के पारिभाषिक शब्द यानी टर्मिनॉलॉजि है। तो ये वर्ग, वर्गणा अभी तो हम यह कर्मों के लिये यूज़ कर रहे हैं। *श्रोता: वर्ग से वर्गणा बनती है तो...* नहीं, उसकी चर्चा हम बाद में करेंगे क्योंकि अभी वर्ग, वर्गणा क्या है इन लोगों को पता नहीं है; उसकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

अभी यहां तो अपनी विस्रसोपचय की बात हो रही है कि विस्रसोपचयवाले परमाणु कहां पर पड़े हैं? इन्हीं आत्मप्रदेशों में अन्य पुद्गलों के साथ बंधे हुये पड़े हैं। उन्हींमें से नये-नये जो कुछ जीव के परिणामों के कारण, वहां पड़े हुये परमाणुओं में से ही कुछ परमाणु कर्मरूप या नोकर्मरूप परिणमित होते हैं; इतनी बात हमने यहां विस्रसोपचय में देख ली। उसमें बहुत सारा गणित बताया है परंतु हमें, यहां अभी उसकी बात करने की जरूरत नहीं है। अभी हम थोड़ा आगे बढ़ते हैं, ये जो दो ही लाइन हमें पढ़नी है जीवकाण्ड की दूसरी पुस्तक में से क्योंकि यह अभी परावर्तन कैसे प्रारंभ होता है? क्या होता है? उसकी हम बात करेंगे और फिर उन दो लाइन को हम कल दो-चार घंटों में समझेंगे। हं, देखो – ६३७ नंबर का पृष्ठ निकालना है। ये जो पांच प्रकार के परावर्तन हैं उसमें जो पहला नंबर है द्रव्यपरावर्तन, उसको दो प्रकार से समझाया है; नोकर्मद्रव्यपरावर्तन और कर्मद्रव्यपरावर्तन। नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में शरीर संबंधी परमाणुओं के ग्रहण की बात है। हमने देखा था विग्रहगति में, मोड़वाली गति में मोड़ के पूर्व समय में जीव शरीर के परमाणुओं का ग्रहण नहीं करता उसके पश्चात् हर समय जीव शरीर के परमाणुओं का ग्रहण करता है। कब तक करता है तो मरण के समय तक करता है।

जैसे कर्म हर समय बांधता है न, वे तो कोड़ाकोड़ी सागरों के बंधते हैं और उनकी वह रचना भवों-भवों तक चलती है। एक समय में बंधे हुये कर्म की निषेक रचना होती है वह तो कोड़ाकोड़ी सागरों की होती है और वह कितने ही भवों तक चलती रहती है। परंतु शरीर के परमाणु जो ग्रहण करता है उसकी स्थिति कितनी बांधेगा? जितनी आयु लेकर

आया है उतनी बांधेगा। सौ साल की आयु लेकर आया है तो वह जो शरीर के परमाणुओं का भी बंध करता है, हर समय शरीर के परमाणु लेता है तो उसमें भी निषेक रचना होगी जैसे कर्मों में होती है। तो उसके परमाणु कितने काल तक जीव के साथ सत्ता में रहेंगे? जितनी आयु बांधकर आया है उतने। न आयु एक समय की बढ़ सकती है, न शरीर के साथ जो कॉन्ट्रॅक्ट हुआ है वह एक समय का बढ़ सकता है। जीव ही उस शरीर को छोड़कर निकल जानेवाला है। हम ही ऐसे हैं कि यह मेरा है, यह हम हैं-यह हम हैं ऐसा हम ही कहते हैं, शरीर नहीं कहता है। वह तो अज्ञानी है परंतु उसका ऑटोमॅटिक यह कॉन्ट्रॅक्ट हुआ है जीव के साथ। इतने साल तक, इतने समयों तक, समयों का हिसाब है वहां पर। इतने समयों तक ही जीव के साथ उसका यह संबंध है। उसके बाद उसका और जीव का संबंध नहीं रहनेवाला क्योंकि उसकी अपनी-अपनी योग्यता अनुसार उसकी जो कुछ राख होनी है या हवा में उड़ जाना है या जो कुछ होना है वह तो स्वयं अपनी योग्यता से होनेवाली बात है। तो यहां क्या देखते हैं हम? नोकर्मद्रव्यपरावर्तन की बात पहले उठायेंगे हम यहां पर। देखो, हम इसको पढ़ेंगे – ६३७ पृष्ठ है, जहां नया पॅरेग्राफ शुरू होता है।

वहां नोकर्मद्रव्यपरावर्तन कहते हैं यानी पुद्गलपरावर्तन का वर्णन यहां शरीर के परमाणु के ग्रहण की अपेक्षा से बतायेंगे। **किसी जीव ने**, अब यह स्टार्टिंग पॉइंट है, पुद्गलपरावर्तन का प्रारंभ यहां से हम गिनेंगे। इसके पहले जो कुछ उसने ग्रहण किये थे परमाणु उसकी बात यहां पर नहीं है। यहां से फिर हम सभी नये से, उसको नये से शुरू करेंगे कि **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी** – यह पूरा वाक्य पढ़ती हूं क्योंकि उसके एक-एक शब्द का अर्थ देखना पड़ेगा। क्या कहा? **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल किसी एक समय में ग्रहण किये।** यहां रुकेंगे हम; यानी जीव शरीर के परमाणुओं को ग्रहण करता है, तो कैसे करता है? तो कहते हैं तीन शरीरों में से – ये औदारिकादि तीन शरीर कौनसे हैं? *श्रोता: औदारिक, वैक्रियिक, आहारक।* औदारिक, वैक्रियिक और आहारक। हां, परंतु आहारकशरीर में वह पूरा पुद्गलपरावर्तन नहीं होनेवाला है। क्यों नहीं होनेवाला? *श्रोता: वह मुनिराजों के होता है।* यह मुनिराजों के होता है; वे तो सम्यग्दृष्टि हैं तो अर्धपुद्गलपरावर्तन से ज्यादा काल वे इस संसार में नहीं रह सकते, ख्याल में आया? फिर भी उनके भी ये छह पर्याप्ति तो होती हैं; यह पर्याप्ति क्या है

उसको देखेंगे। जैसे औदारिकशरीर संबंधी पर्याप्ति होती हैं, वैक्रियिकशरीर संबधी छह पर्याप्ति – यह संज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा छह पर्याप्ति कही। उन पर्याप्तियों के नाम हम देखने जा रहे हैं। वैसे ही आहारकशरीर जो बनाते हैं; आहारकशरीर कौन बनाते हैं मालूम है न? *श्रोता: ऋद्धिधारी मुनिराज।* हां, छठे गुणस्थानवर्ती ऋद्धिधारी मुनि यानी जिन्होंने वह आहारकशरीर नामकर्म का बंध किया है, उसके उदय में आहारकशरीर बनता है। जैसे कोई करणानुयोग का विषय चल रहा हो और मुनि को कोई प्रश्न है उसका वे समाधान चाहते हैं, यहां तो कोई केवली है नहीं; या तीर्थवंदना आदि के लिये उनके मस्तक से एक हाथप्रमाण सफेद, सप्तधातु रहित, यह जो पुरुषाकार पुतला निकलता है, वहां आत्मा के प्रदेश मूल शरीर में तो रहते ही रहते हैं, उस दूसरे शरीर में आहारकशरीर में भी रहते हैं और वह शरीर जहां तीर्थंकरादि विराजमान हैं वहां तक जाकर अंतर्मुहूर्त में लौटकर फिर वापस आता है।

कितना बड़ा अंतर्मुहूर्त होगा? *श्रोता: छठवें गुणस्थान से छोटा काल।* हां, छठे गुणस्थान के काल से भी इसका काल कम है। देखो, आहारकशरीर नामकर्म का उदय तो छठे में ही होता है, सातवें में नहीं। तो छठे गुणस्थान का जितना छोटा अंतर्मुहूर्त है उससे भी छोटे काल में यह आहारकशरीर का बनना, वहां तक जाना फिर उनका समाधान होना, वापस लौटना, मूलशरीर में प्रवेश – ये सब उतने काल में होता है। आत्मा के प्रदेश तो अखंड हैं, आत्मा के तो दो टुकडे होते नहीं हैं। *श्रोता: उस अंतर्मुहूर्त में तीर्थंकर नहीं मिलते हैं तो क्या होगा?* आपका क्या कहना है? उस अंतर्मुहूर्त में तीर्थंकर नहीं मिलेंगे तो कैसे होगा? कैसे नहीं मिलेंगे? बीस तीर्थंकर तो हमेशा विद्यमान रहेंगे, मिनिमम बीस; तीर्थंकर नहीं होते ऐसा विश्व में कभी नहीं होनेवाला। *श्रोता: क्षेत्र की बात नहीं है वहां पर?* यह तो मनुष्यलोक में कहीं पर भी जा सकते हैं और बहुत छोटे काल में पहुंच जाते हैं क्योंकि उनको यह आहारकशरीर है न। वैक्रियिकशरीर से भी जिसको कहेंगे सूक्ष्म टाइप का शरीर है जैसे विक्रिया करनेवाले वहां स्वर्गों में से कुछ क्षणों में ही नीचे आ जाते हैं; ये आहारकशरीरवाले भी वहां सहजरूप से पहुंच जाते हैं। उनको ढूंढ़ना नहीं पड़ता है, या कोई चार्ट नहीं देखना पड़ता है, मॅप नहीं देखना पड़ता है कि किस दिशा में जाऊं? कुछ नहीं। यह कर्मों की बात है वहां, कर्मों के बंध हो या ये जो समुद्घात होते हैं वे सहजरूप से होते हैं। यह सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। ऐसे प्रश्न अभी उठते हैं परंतु ये सहज बातें

बनती हैं। मरण के बाद जो चला जाता है वह भी सहज है। मारणांतिक समुद्घात भी सुना है कि नहीं सुना? मरण के एक अंतर्मुहूर्त के पहले जहां जन्म लेना है वहां तक इस जीव के प्रदेश फैले रहते हैं – उसी रूट पर, उसी मोड़ से जाते हैं। तो कैसे कौन उसको समझाता होगा? कौन कहता होगा कहां जाना है? कैसे करना है? कभी पहुंचना है? कहां मोड़ लेना है? हं? वहां कोई मॅप नहीं, कोई आपका जीपीएस क्या होती है सिस्टिम? वह भी नहीं है उनको तो कैसे पहुंचते होंगे, हं? क्यों? भाई? यह सहजरूप से वैसी अवस्था बनती है।

श्रोता: यह सभी जीवों को मारणांतिक समुद्घात होता है? मारणांतिक समुद्घात मेजॉरिटी में होते है, हां, एकेन्द्रियों में भी होते हैं। अनंत जीव ॲट अ टाइम एक समय में मारणांतिक करते हैं, कहीं पर भी ट्रॅफिक जॅम नहीं है क्योंकि मारणांतिक करते हैं तो सबके कार्माणशरीर और तेजसशरीर तो होंगे, उनके विस्रयसोपचय भी होंगे साथ में। क्योंकि औदारिकशरीर भले ही यहां पर है; आत्मप्रदेश और वे कार्माण, तेजस वहां तक गये हैं। जैसे आपके वे लेझर बीम्स वगैरह जो भी कुछ होता होगा वैसा। तो वहां तक फैलकर फिर वह वापस, वापस नहीं आते हैं वैसे, आत्मप्रदेश ही यहां से उचक कर जाते हैं। तो यह तो मारणांतिक समुद्घात की बात है।

श्रोता: हम जो आहारकशरीर की बात करते हैं तो उसमें यह जो परावर्तन है वह मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा से घटित करते हैं तो क्या इसके अंदर सादि मिथ्यादृष्टि भी इसप्रकार से लेंगे – चलेंगे? आहारकशरीर तो मिथ्यादृष्टि तो वह परमाणु ग्रहण करेंगे। तो यहां तीन शरीर में इसको कैसे लिया? तीन शरीर में इसलिये लिया कि जीव हर समय में परमाणु ग्रहण करता है शरीर के और छह पर्याप्ति शब्द डाला है। तो ये छह पर्याप्ति कौन-कौनसे शरीर के संबंध में होती हैं? औदारिकशरीर में होती हैं, वैक्रियिकशरीर में होती हैं, आहारकशरीर में होती हैं। हां, आहारकशरीरवाला वह छठे गुणस्थानवर्ती ही होगा जो अंतर्मुहूर्त तक ही उन परमाणुओं को ग्रहण करेगा और उसके तो पूरा पुद्गलपरावर्तन नहीं होनेवाला है; उसका तो अर्धपुद्गलपरावर्तन हो सकता है अधिक से अधिक। किसीने आहारकशरीर बनाया भी मुनिराज ने; मुनिराज हैं, भावलिंगी संत हैं तभी तो वह बन सकता है छठे गुणस्थान में। अब ऐसे मुनिराज कुछ काल में – उसी भव में या देव की पर्याय करके या कभी भी, फिर मिथ्यात्व में जा सकते हैं। दुबारा वापस मान लेते हैं कि एकेन्द्रियों में भटककर अर्धपुद्गलपरावर्तन कम्प्लीट होने को आया है तभी जाकर फिर

संयमी हुये हैं, तभी फिर आहारक का बंध भी करेंगे; नया करेंगे न पहले का तो निकल गया; नया करेंगे और आहारकशरीर भी बना सकते हैं। तो अर्धपुद्गलपरावर्तन तक तो यह ऐसा हो सकता है। परंतु यहां उसको पूरे पुद्गलपरावर्तन में आहारकशरीर को नहीं लेना है। कोई भी सम्यग्दृष्टि जीव अभी वहां से चलकर आगे अर्धपुद्गलपरावर्तन से अधिक काल इस संसार में नहीं रहता है यह नक्की है, परंतु यहां यह जीव शरीर के परमाणुओं को ग्रहण करता है बस इसके लिये इस तीसरे शरीर को लिया है, यहां पर। क्योंकि तेजसशरीर और कार्माणशरीर में छह पर्याप्ति नहीं होती। वह तो निरंतर उसका ग्रहण चल रहा है। ख्याल में आती है बात? विग्रहगति में भी, कोमा में भी, सोया होता हो तभी भी कर्म का ग्रहण तो हर समय चल रहा है। शरीर के भी परमाणु का ग्रहण चल रहा है परंतु वह विग्रहगति में नहीं होता। बाकी हम सोते हैं तब भी चलता है, खाते हैं तब भी चलता है, उपवास किया है तब भी चलता है। चलो, अब थोड़े और प्रश्न भी हम देखेंगे।

प्रश्न: नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में अर्थात् शरीर के परमाणु का और कार्माण का भी ग्रहण है और कर्मद्रव्यपरावर्तन में भी उसका, कर्म का ग्रहण है? नहीं-नहीं, यह नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में, वहां तो शरीर के परमाणु की ही बात चलेगी और जहां कर्मशरीर की बात है वहां कार्माणवर्गणा की ही बात चलेगी। दोनों सेपरेट हैं परंतु उनका काल हम गिनेंगे वह एक जैसा ही होगा। वह तो चर्चा आयेगी तब उसकी विस्तार से चर्चा करेंगे हम।

प्रश्न: अभव्यजीव प्रायोग्यलब्धि तक जा सकता है परंतु करणलब्धि प्राप्त नहीं कर सकता। परंतु दूसरी ओर से ऐसा भी कथन आता है कि जिसको जिनेन्द्र कथित तत्त्वों में रुचि रहती है वह भव्य ही हो सकता है। दोनों कथन में से यह कैसे तय करना कि यहां बैठनेवाला जीव भव्य है या अभव्य? हम तय नहीं कर सकते क्योंकि हम सर्वज्ञ नहीं है और अपने को अभव्य मानने की कोई जरूरत नहीं है। पहले ही रोती सूरत लेकर... ऐसा कहते हैं न कि रोती सूरत लेकर गया और मरे की खबर लाया, ऐसा नहीं कहना।

श्रोता: विदेहक्षेत्रमां मिथ्यादृष्टि जीव ज जाय के सम्यग्दृष्टि जीव जई शके छे? मिथ्यादृष्टि ही जाता है मानेंगे तो सारे तीर्थंकर अभी वहां जन्म लेंगे वे सम्यग्दृष्टि होंगे या मिथ्यादृष्टि होंगे? *श्रोता: नहीं, यहां से जायेंगे।* हां, तो प्रश्न में क्या लिखा कि विदेहक्षेत्र में मिथ्यादृष्टि जाता है या सम्यग्दृष्टि भी जा सकता है? तो यह प्रश्न किस अपेक्षा से पूछा है?

यहां का कोई कर्मभूमि का मनुष्य, अभी विदेहक्षेत्र का ही मनुष्य लेते हैं। विदेहक्षेत्र का मनुष्य विदेहक्षेत्र में ही जन्म लेगा, वह सम्यग्दृष्टि होगा कि मिथ्यादृष्टि होगा? *श्रोता: मिथ्यादृष्टि होगा।* यह तो जाहिर है, है न? वैसे अगर यहां का जीव वहां चला जायेगा तो मिथ्यात्व सहित ही जायेगा। यह तो हमने उसकी कंडिशन देखी थी।

श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन कोणे कहे छे? वही तो हम देख रहे हैं। अभी तो हमने यह नोकर्मद्रव्यपरावर्तन की बात देखनी प्रारंभ की। इन **तीन शरीर संबंधी, किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल।** इसमें यह पर्याप्ति क्या है? उसको देखेंगे। उसके लिये आपके पास जीवकाण्ड पुस्तक नंबर १ है न, इतना बोझा उठाकर लाया है तो थोड़ा उसका हम उपयोग तो करेंगे। नहीं तो आप कहेंगे कि बेकार के हमने पैसे खर्च किये, हं। लोग कहते भी हैं कि हमारे घर में तो ये शास्त्र पड़े थे, हमने बेकार का यहां खर्चा कर दिया। कोई बेकार का नहीं है, उसको समझना ही इसकी सफलता है। प्रश्न आ गया और? *प्रश्न : विग्रहगति में दो मोड़ पहले दो समय में जीव अनाहारक और अंतिम समय में आहारक किस अपेक्षा से आयेगा? क्योंकि शरीरवर्गणा विग्रहगति में ग्रहण तो नहीं करता।*

विग्रहगति में तो ग्रहण नहीं है। विग्रह के पहले, विग्रह यानी मोड़, जीव मोड़ से जाता है न – क्योंकि देखो, यहां से किसीको जाना है मरने के बाद; उस सामनेवाले ऊपर के कोने में जन्म लेना है; तो ऐसा तिरछा नहीं जा सकता। उसके नियम क्या हैं? मरने के बाद की बात है। अभी आप कैसे भी यहां से उलट-पलटकर, गोल इधर-उधर चक्कर काट सकते हैं, परंतु मरण के बाद जो गमन होता है वह तो सीधी लाइन में ही होता है। आकाश की एक ही श्रेणी में, प्रदेशों की पंक्ति में होता है। कैसे होगा? या तो पूर्व में या पश्चिम में या दक्षिण में या उत्तर में; ऐसे विदिशा में नहीं होगा; आग्नेय, नैऋत्य ऐसी दिशाओं में नहीं होगा। ऊपर हो सकता है, नीचे हो सकता है यानी छह दिशाओं में गमन हो सकता है। अब उस कोने में जाना है तो पहले ऐसा डायरेक्ट तिरछा तो नहीं जाता। पहले ऐसा (आड़ा) जायेगा, फिर ऊपर चढ़ा और फिर ऐसा आड़ा गया। दो मोड़ में चला गया न वहां पर? तो ऐसा लोकाकाश अगर घनाकार होता तो कहीं से भी कहीं पर भी जाने के लिये उसे दो मोड़ काफी होते; तीसरा मोड़ नहीं लेना पड़ता। अभी लोकाकाश कैसा है? ऊपर एक

राजू है, बीच में फिर पांच राजू है, फिर मध्यलोक में एक राजू है, नीचे सात राजू तक फैला है। अब जो सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव है जो त्रसनाली के बाहर है, उसको ऊपर त्रसनाली के बाहर जन्म लेना है तो सीधा जायेंगे ऊपर तो अलोकाकाश में से जायेंगे कि नहीं जायेंगे? *श्रोता: नहीं जायेंगे।* नहीं जायेंगे, वहां जा नहीं सकते तो क्या करना पड़ेगा? पहले त्रसनाली में आना पड़ेगा फिर ऊपर जाने के लिये एक मोड़, फिर वह बाहर जाने के लिये एक मोड़ और फिर दक्षिण-उत्तर जाने के लिये और एक मोड़ ले सकते हैं यानी तीन मोड़ वहां हो सकते हैं। सूक्ष्म एकेन्द्रियों में ही ये तीन मोड़ लगते हैं ऐसा कथन शास्त्र में आता है।

श्रोता: जिस कोन में है उतना? माने जो स्ट्रेट नहीं है? हां-हां, वह तो पीछे जाना है तो... दक्षिण-उत्तर वह जो सात राजू है वहां जाना है तो। प्रश्न समझ में आया? तो उसका उत्तर यह है कि दूसरे मोड़ के बाद वह आहारक हो जाता है। आहारक यानी शरीर के परमाणु ग्रहण करता है क्योंकि शरीर नामकर्म का उदय तब शुरू हो जाता है। विग्रहगति में जब अनाहारक है, कार्माणकाययोग है तब शरीर नामकर्म का उदय वहां नहीं है। न शरीर नामकर्म का उदय है, न संस्थान नामकर्म का उदय है, आकार भी वह पहले का चल रहा है। मरकर विग्रहगति में आया है, कोई मनुष्य मरकर कुत्ता हुआ है; उसका कुत्ते का भव तो चालू हो गया; आयु चालू हो गयी, तिर्यंचगति शुरू हुयी है परंतु वह संस्थान नामकर्म का उदय अंतिम मोड़ के बाद वहां पहुंचने के समय होगा। तब वह नया आकार ग्रहण करेगा; उसके पहले वह मनुष्याकार है यानी कैसा कुत्ता है? मनुष्य के आकार का है! मनुष्य के आकार का कुत्ता दिखाया न हमने आपको? आगम का चश्मा लगा लो और देख लो यह पूरी व्हरायटी! यह तो ऐसे-ऐसे अलग नामकर्मों के जो उदय हैं, कौनसे कर्म का उदय किस पोझिशन में कब होता है उसका भी निश्चित काल है। इसलिये हम बता सकते हैं कि विग्रहगति में वह अनाहारक है और अंतिम मोड़ के बाद एक समय में अपने उपजने के स्थान में पहुंच जाता है, वहां आहारक हो जाता है। यानी शरीर के परमाणुओं का ग्रहण शुरू हो जाता है। यहां तक बात ख्याल में आयी?

शरीर के परमाणुओं का ग्रहण होता है तो उनको शरीररूप ढालने का कार्य कैसे होता है? उस जीव में ऐसी कोई शक्तियां उत्पन्न होती हैं, ये शक्ति माने कोई महाशक्तिमान ऐसा कुछ नहीं ले लेना है; शक्तिमान वगैरह कुछ नहीं होता है; यह तो उसका विभाव

परिणमन है। अन्य-अन्य कर्मों के उदय में उसमें ऐसी कुछ योग्यता उत्पन्न होती है कि जो ग्रहण किये हुये परमाणु हैं उनको पहले सॉलिड-लिक्विड बनायेगा। वे तो बनते अपने उपादान से हैं, यहां जीव की वहां निमित्तता बनती है। तो उसको खलरूप और रसरूप परिणमाने की जीव में योग्यता उत्पन्न होती है, जीव में शक्ति उत्पन्न होती है और फिर वह खलरूप में से सॉलिड अवयव होते हैं, ऑर्गन्स होते हैं और रसरूप में से तो लिक्विड अवयव होते हैं। तो यह जो सारी बाकी की आगे की प्रक्रिया है वह सब पूरी होने में जीव में जो कोई शक्तियों की उत्पत्ति होती हैं, उन शक्तियों की डेव्हलपमेंट कहो, उत्पत्ति कहो, पूर्णता कहो उसको पर्याप्ति कहते हैं और ये शक्तियां पूर्ण नहीं होती हैं, जीव उसके पहले ही मर जाता है उसको कहेंगे अपर्याप्त जीव। पर्याप्त जीव ऐसे हैं कि पर्याप्ति तो होनेवाली हैं, अभी हुयी नहीं हैं तो उसको भी जब तक वह शरीरपर्याप्ति नहीं पूरी हुयी तब तक हम कहेंगे यह अपर्याप्त है – निर्वृत्तिअपर्याप्त है। उसकी चर्चा हम कल करेंगे अभी इसके विषय में कोई प्रश्न है तो पूछना, एक दो मिनट हैं अपने पास।

छह पर्याप्ति हम पहले पुस्तक के आधार से लेनेवाले हैं। इन पर्याप्तियों के नाम भी आपको मालूम होंगे शायद, यहां हमने बहुत बार इस विषय को लिया है। हम उनके नाम आपको बतायेंगे – आप अभी उनको सुनना तो सुबह फिर उसकी चर्चा करेंगे। मैं बताऊंगी एक-एक पर्याप्ति का नाम और आप उसको दोहरायेंगे। आहारपर्याप्ति, *सभी श्रोता: आहारपर्याप्ति।* बहुत स्लो हो गया न। आहारपर्याप्ति, *सभी श्रोता: आहारपर्याप्ति।* शरीरपर्याप्ति। *सभी श्रोता: शरीरपर्याप्ति।* इन्द्रियपर्याप्ति। *सभी श्रोता: इन्द्रियपर्याप्ति।* श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति। *सभी श्रोता: श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति।* भाषापर्याप्ति। *सभी श्रोता: भाषापर्याप्ति।* मन:पर्याप्ति। *सभी श्रोता: मन:पर्याप्ति।* कितनी हुयी? *श्रोता: छह।* ये छह की छह एक साथ शुरू होती हैं, वे संज्ञी पंचेन्द्रिय के होती हैं। ये छहों की उत्पत्ति यानी डेव्हलपमेंट, स्टार्टिंग तो पहले ही समय से हो जाती है और एक के बाद एक, एक के बाद एक वे पूर्णता को पहुंचती हैं। तो ये कैसे होती हैं? समय कौनसा होता है? कौनसी पहले होती है? उसका क्या कार्य है? उस पर्याप्ति में क्या-क्या बातें होती हैं? जीव में कैसी-कैसी शक्तियां होती हैं? उसकी चर्चा हम कल करेंगे। अभी तो हम अपना विषय यहीं समाप्त करते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

७. छह पर्याप्ति – आहारपर्याप्ति और शरीरपर्याप्ति

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां काल की प्ररूपणा देख रहे हैं। इसीको कालअनुयोगद्वार भी कहते हैं, कालानुगम भी कहते हैं। अलग-अलग विषयों की अपेक्षा से विस्तार से चर्चा होती है उसको अनुयोगद्वार कहते हैं। अनुगम का भी यही अर्थ है; यथार्थ बोध होना उसको कहेंगे अनुगम। कालानुगम ऐसा उसका नाम है। तो यहां हमने कल से काल संबंधी बात देखनी शुरू की थी। काल नाम का द्रव्य है, छह द्रव्यों में से वह एक द्रव्य है। जो संख्या में कितने हैं, मालूम है न? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात; कितने असंख्यात? क्योंकि असंख्यात के असंख्यात प्रकार हैं। तो विशिष्ट असंख्यात है उसका नाम, जितने लोक में प्रदेश हैं, उनकी जितनी संख्या है, वहां एक-एक प्रदेश पर एक-एक कालद्रव्य है। तो लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं, यह तो हमें पता है।

हम यहां जिस काल की चर्चा कर रहे हैं, उसको व्यवहारकाल कहेंगे; यह कालद्रव्य की पर्याय है। जैसे प्रत्येक द्रव्य की अनादि से अनंतकाल तक एक-एक समय में एक-एक पर्याय होती है, वैसे ही कालद्रव्य की भी पर्याय होती है, उसीको हम समय कहेंगे और वह तो पता चलता है न हमें? क्या है? अभी तो हम आये हैं, पांच मिनट हुये हमें आये हुये या हम यहां बैठे हैं, एक घंटा बीत गया। तो यह बीत गया, तो कुछ तो पता चला न कि काल बीत गया, जो हम कहते हैं। तो इसको नापने को हम घंटों में नापेंगे, मिनटों में नापेंगे, सेकंडों में नापेंगे। यहां तो सूक्ष्म में सूक्ष्म अंश कौनसा है? तो कहते हैं एक समय। तो अनादि से अभी तक के समयों की गिनती हम करेंगे। तो उसके हम अलग-अलग यूनिट बनाकर भी उसकी चर्चा यहां चलेगी। काल का जैसे हमने आवली नाम का एक माप देखा था, पल्य नाम का भी माप होता है। सागर है, कल्पकाल है – जो बीस कोड़ाकोड़ी सागर का होता है; आगे भी अंगुल है, फिर लोक है, असंख्यातलोक है; तो इसमें तो हम कितना काल गया; उसके जो अलग-अलग नापने के तरीके हैं, तो उसीकी चर्चा यहां अपनी चलेगी।

तो हमने यहां बहुत बार यह बात सुनी है कि यह जीव एकेन्द्रिय पर्याय में जाता है तो अधिक से अधिक कितने काल तक रहता है? तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन प्रमाण काल

तक रहता है। कोई जीव निगोदपर्याय में रहता है, तो अधिक से अधिक कितने काल तक रहता है? इतरनिगोद की बात है; नित्यनिगोद में तो अनादि से था, कोई जीव अन्य पर्याय धारण करके वापस निगोद में जाता है, उसको कहेंगे इतरनिगोद और जो अनादि से आज तक जन्म-मरण उसी निगोदपर्याय करता आया है, उसको कहेंगे नित्यनिगोद। बाकी नित्यनिगोद और इतरनिगोद का ऐसा कोई अलग-अलग रहने का ठिकाना नहीं है कि यहां मात्र नित्य निगोद ही रहते हैं और यहां मात्र इतर निगोद ही रहते हैं। उसमें ढाई पुद्गलपरावर्तन का काल है इतरनिगोद में। हमने यह भी सुना है कि कोई जीव सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है और मिथ्यात्व में चला जाता है, तो अधिक से अधिक कितने काल तक घूम सकता है संसार में? तो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक। तो यह परावर्तन-परावर्तन शब्द बार-बार आता है उसको हमें यहा देखना है कि वह नक्की क्या है।

तो इसके लिये द्रव्यपरावर्तन का स्वरूप देखना हमने प्रारंभ किया था। उसमें से यह जो पुद्गलपरावर्तन कहो या द्रव्यपरावर्तन कहो एक ही बात है। पुद्गलपरावर्तन का ही दूसरा नाम है द्रव्यपरावर्तन। वह द्रव्यपरावर्तन भी दो प्रकार से बताया जाता है। एक कर्मद्रव्यपरावर्तन और एक नोकर्मद्रव्यपरावर्तन। यहां द्रव्य का अर्थ होता है पुद्गल परमाणु। जीव पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण करता है। देखो यह जो ग्रहण करना है, छोड़ना है, बांधना है, ये जो करणानुयोग के शब्द हैं, वे तो यहां निमित्त-नैमित्तिक संबंध बतानेवाले शब्द हैं। इसका अर्थ ऐसा नहीं कि निमित्त से कार्य होता है। देखो, जीव ने पुद्गल को बांधा कि नहीं? जीव ने ग्रहण किया कि नहीं? जीव ने उसको शरीररूप से परिणमित किया कि नहीं? ऐसे हमें प्रश्न उठते हैं मन में। प्रत्येक द्रव्य अपनी-अपनी योग्यता से प्रतिसमय परिणमन करता है। वहां अन्य द्रव्य निमित्तरूप से पाये जाते हैं, उसका यहां कथन होता है। उसका अर्थ वह द्रव्य इसको परिणमाता है यह बात नहीं है। यह तो हमने द्रव्यानुयोग में बहुत अच्छी तरह से समझा है कि निमित्त-नैमित्तिक संबंध क्या है, उपादान से ही कार्य होता है, ये बातें ध्यान में रखकर हमें यह करणानुयोग पढ़ना है, नहीं तो हमें भ्रांति हो सकती है। कहीं भी जिनागम के किसी भी आगम में विरोध तो होता ही नहीं है; विरोध लगता होगा तो हमारी समझ में कहीं कुछ भूल हो रही है। तो अभी हम आगे बढ़ेंगे।

कल हमने छह प्रकार के काल देखे थे, है न? कौन बताना चाहता है? छह प्रकार

के काल। हां-हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: गुणस्थितिकाल।* पहला गुणस्थितिकाल, फिर? *श्रोता: भवस्थितिकाल।* भवस्थितिकाल। *श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* कर्मस्थितिकाल। *श्रोता: कायस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल। *श्रोता: उपपादकाल।* उपपादकाल और *श्रोता: भावस्थितिकाल।* भावस्थितिकाल। क्योंकि कई लोग नये आये हैं न आज? तो गुणस्थितिकाल यानी एक जीव का किसी गुणस्थान में रहने का काल, उसको गुणस्थितिकाल कहा था। उसके बाद भवस्थिति यानी एक भव अधिक से अधिक कितना हो सकता है? तो मनुष्यों में हमने देखा था, भोगभूमि की अपेक्षा तीन पल्य हो सकता है; तिर्यंचों में भी ऐसा ही है; देव और नारकी में हमने तैंतीस सागर का देखा था; यह भवस्थितिकाल हुआ। कर्मस्थितिकाल से तो हम सब परिचित हैं। सामान्य से सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर और विशेष से प्रत्येक कर्म की जो उत्कृष्ट स्थिति होती है, उसको उस-उस कर्म का स्थितिकाल कहेंगे। उसके बाद *श्रोता: कायस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल, कायस्थिति का जरा फिर से अर्थ समझना। कायस्थिति का अर्थ किसी काया की यानी शरीर की स्थिति नहीं बता रहे हैं; कायस्थिति का अर्थ है विशिष्ट मार्गणा में रहने का उत्कृष्ट काल। जेसे हमने देखा था तिर्यंचगति में रहने का उत्कृष्ट काल जो है, वह तिर्यंचगति की कायस्थिति कहलायेगी। कोई जीव अन्य गति से मरकर तिर्यंचगति में आया, उसकी तिर्यंचगति शुरू हुयी। ऐसे तो अनादि से जो नित्यनिगोद में है, वह तो अनादि से उसकी तिर्यंचगति ही चल रही है, उसका ही उदय चल रहा है। परंतु हम सादिसांत काल की बात करेंगे। कोई जीव अन्य पर्याय से मरकर तिर्यंच पर्याय में उत्पन्न हुआ तो लगातार तिर्यंचगति में कितने काल तक रहेगा? उसको कहेंगे तिर्यंचगति की कायस्थिति। *श्रोता: उसमें गुणस्थिति में...* गुणस्थितिकाल में तो, गुणस्थानों में रहने का काल बताते हैं। उसमें मार्गणा में गुणस्थानों का काल भी कहेंगे। किसी मार्गणा में रहने का उत्कृष्ट काल जो है उसे हम यहां कायस्थितिकाल कह रहे हैं।

गुणस्थितिकाल में विशेषत: गुणस्थानों की बात है। वहां मार्गणास्थानों में भी गुणस्थानों के काल की बात है। हां, जैसे तिर्यंचगति, तो यह गतिमार्गणा हुयी और उसमें पांच गुणस्थान हैं। तो तिर्यंचगति के जीव विशिष्ट गुणस्थान में कितने काल तक रह सकते हैं? नहीं समझे? जैसे चौथे गुणस्थान में जीव अधिक से अधिक कितने काल तक रहता है? यहां हम किसी गति की अपेक्षा नहीं करेंगे तो तैंतीस सागर और कुछ ज्यादा। जघन्य नहीं, मैं उत्कृष्ट बता रही हूं और तिर्यंचों में रहते हुये अविरत सम्यक्त्व में यानी चौथे गुणस्थान में

रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? हां? *श्रोता: तीन पल्य।* तीन पल्य। क्योंकि बाद में तो वह देव में चला जायेगा। क्षायिक सम्यक्त्व के साथ जो उत्तम भोगभूमि के तिर्यंच में उत्पन्न हुआ है, पहले समये से वह सम्यग्दृष्टि है इसलिये पूरे ३ पल्य तिर्यंच में चौथे गुणस्थान का काल घटित होता है। समझ में आया न यह? मार्गणा में हमने गुणस्थान लगाये हैं। तिर्यंचगति में पांचवें गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल कितना होगा? तिर्यंचगति में पांचवां गुणस्थान? हां? एक करोड़ पूर्व में कुछ कम कहना पड़ेगा। *श्रोता: कुछ कम?* कुछ कम, क्यों? क्योंकि पांचवां गुणस्थान है, तो वह तो कर्मभूमि के जीवों को होगा और कर्मभूमि के तिर्यंच तो सम्यक्त्व के साथ उत्पन्न नहीं होंगे। *श्रोता: तिर्यंच में?* हां, तिर्यंच में और गर्भज जो हैं, वे गर्भ के बाद, जन्म के बाद कुछ काल के बाद सम्यक्त्व प्राप्त करेंगे। परंतु सम्मूर्च्छन जीव जो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच हैं, वे जन्म के अंतर्मुहूर्त के पश्चात् वेदक सम्यक्त्व के साथ पांचवां गुणस्थान प्राप्त कर सकते हैं; प्रथमोपशम नहीं, वेदक सम्यक्त्व। तो अंतर्मुहूर्त कम पूर्वकोटि यह उसका उत्कृष्ट काल होगा। इसतरह से यह अलग-अलग मार्गणाओं में हम देख सकते हैं। वहां मार्गणाओं में हमने गुणस्थान को लगाया तो उसको गुणस्थितिकाल कहा। अब यहां हम केवल मार्गणाओं में रहने का उत्कृष्ट काल देख रहे हैं उसको हम कहेंगे कायस्थिति।

हमने कल देखा था मनुष्य में, लगातार मनुष्य मरकर मनुष्य, मनुष्य मरकर मनुष्य होता रहे तो मनुष्य की कायस्थिति कितनी है? शास्त्र में तो इतना ही लिखेंगे, पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य; उसका अर्थ लगाना हमारा काम है। पृथक्त्व का अर्थ कुछ भी हो सकता है, उसकी गिनती तो हमें आनी चाहिये। यहां तो, मनुष्य में कोई जीव जन्म लेता है यानी बार-बार मनुष्य मरकर मनुष्य, मनुष्य मरकर मनुष्य, यह बात तो मिथ्यादृष्टि के ही संभव है। तो पर्याप्त मनुष्यों के लगातार भव, यानी पूर्वकोटि का एक-एक भव हम लेंगे, मॅक्झिमम पॉसिबल बात हमें करनी है। हर जीव को यह मिलता है ऐसी बात नहीं है। अधिक से अधिक कोई जीव मनुष्यपर्याय में रहेगा तो कितने काल तक रहेगा? तो पर्याप्त मनुष्यों में आठ भव पुरुष के, आठ स्त्री के, आठ नपुंसक के; फिर एक भव लब्धिअपर्याप्त मनुष्य का; फिर पर्याप्त के आठ, आठ, आठ यानी पर्याप्त के अड़तालीस भव हो सकते हैं। उसमें अंतिम भव तीन पल्यवाला भोगभूमि का रखेंगे, तो सैंतालीस पूर्वकोटि प्लस? *श्रोता: तीन पल्य।* तीन पल्य, यह मनुष्यों की कायस्थिति कहने में आयेगी। ग्रंथों में तो

केवल उसकी कायस्थिति कहेंगे उसका काल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक ३ पल्य इतना ही कहेंगे। तो यह कैसे निकाला है? और वहां पृथक्त्व का अर्थ कितना होता है? यह हमें समझना चाहिये। *श्रोता: पृथक्त्व का अर्थ यह है, यह आपने कहां से निकाला?* अपने मनसे नहीं। ग्रंथों में उसका भी विस्तार से वर्णन है। जैसे पं. टोडरमलजीसाहब ने तो इसको विस्तार से खोलकर बताया भी है उसका कैसा क्या अर्थ होता है।

अब यह तो हमने कल बातें देखी हैं कि कुछ मार्गणाओं की कायस्थिति कितनी होती हैं, ऐसी हर मार्गणा में लगाना। जैसे हमने वेदमार्गणा में लगाया था। नपुंसकवेद में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? यानी कोई जीव नपुंसकवेदी है, मरकर फिर नपुंसकवेदी हुआ, फिर नपुंसकवेदी हुआ, तो नपुंसकवेदी कहां पाये जाते हैं? तिर्यंच में, मनुष्य में और नारकी में। हो सकता है कुछ भव मनुष्य के, नारकी के नपुंसकवेद में किये, तिर्यंच में गया और फिर वह तिर्यंच एकेन्द्रिय में चला गया। तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक नपुंसकवेद में रहा। इसको कहेंगे नपुंसकवेद की कायस्थिति। कायस्थिति क्या है? यह हमको समझना है। ख्याल में आयी यह बात? ऐसे सम्यक्त्वमार्गणा में लगायें, संयममार्गणा में लगायें, हर मार्गणा में लगायें। इसके लिये थोडा मार्गणाओं का अभ्यास होना चाहिये, उनके नाम परिचित होने चाहिये। यह बहुत कठिन बात नहीं है और यहां कोई रटने नहीं पड़ते हैं उनके नाम। हम थोड़े परिचित हो जाये न, ये गुणस्थान क्या हैं? मार्गणा क्या हैं? फिर उन मार्गणाओं में हम विचार करेंगे, तो यह बिलकुल कॉमनसेन्स है और कुछ नहीं है, हां। पढ़ते हैं तो उसका अर्थ ख्याल में आता है कि नहीं, बस इसकी मुख्यता रखना। किसीको याद नहीं रहता है तो, मुझे कुछ समझा ही नहीं है; अभी मैं छोड़ दूं ऐसी बात सोचना जरूरी नहीं है। याद सबको रहे यह तो नहीं हो सकता न? हर एक का अलग-अलग क्षयोपशम होता है। परंतु हम जब पढ़ते हैं तो उस लाइन का अर्थ हमें ख्याल में आना चाहिये।

तो यह कायस्थितिकाल के बाद उपपादकाल देखा था जो एक समय का होता है और लास्ट में हमने कौनसा देखा था? हं, *श्रोता: भावस्थितिकाल।* भावस्थितिकाल यानी एक ही परिणाम में लगातार रहने का उत्कृष्ट काल; जघन्य तो एक समय में एक परिणाम होता है। वही परिणाम दूसरे समय में चालू रहे, तो दो समय तक हो सकता है। अधिक से अधिक यानी मॅक्झिमम आठ समय तक रह सकता है, उससे अधिक कोई एक परिणाम

नहीं रहता। क्योंकि परिणामों के भी कितने क्या व्हेरिएशन्स हैं, वह तो हम भावपरावर्तन के काल में देखेंगे, लास्ट में। अभी हम यहां द्रव्यपरावर्तन आरंभ करते हैं, पढ़ने के लिये। वैसे तो हमने कब से आरंभ किये हैं। *श्रोता: भावस्थितिकाल की जो आपने बात की कि दो समय से लेकर आठ समय तक एक जैसे परिमाण रहते हैं तो मतलब वहां भावों के अंदर अविभागप्रतिच्छेद समझना?* अविभागप्रतिच्छेद और... *श्रोता: तो वो समान होंगे?* हां, ऐसा भी ले सकते हैं। परंतु भाव में तो बहुत सारे भाव हैं न? वहां तो स्थिति के कारणभूत भाव, उसी भाव के अंतर्गत अनुभाग के कारणभूत भाव और उसीके साथ होनेवाले योग के परिणाम, इन सबका कॉम्बिनेशन अगर लेंगे तो वैसा का वैसा फिर दुबारा होना असंभव जैसी बात है, हां। हो सकता है कि उसमें बीच में अनंतकाल भी चला जायेगा।

यह हमने कल दो लाइन पढ़ी थी, दूसरे भाग में से पेज नं ६३७ पर, उन्हें पहले समझेंगे और फिर बाद में हम पहले भाग में पढ़ने जा रहे हैं। क्योंकि लाये हैं साथ में उठाकर, तो थोड़ा खोलकर देखेंगे न, हां? नहीं तो क्या फायदा? यहां नोकर्मद्रव्यपरावर्तन का प्रारंभ करते हैं। हमने कर्म और नोकर्म के अर्थ देखे थे। ज्ञानावरणादि आठ कर्म जो हैं, उनको कर्म कहते हैं और जो अन्य शरीर हैं, औदारिक है, वैक्रियिक है, आहारक है इन सबको नोकर्मशरीर कहेंगे। यहां हम नोकर्मद्रव्यपरावर्तन का प्रारंभ करते हैं। **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्‌गल किसी एक समय में ग्रहण किये**। हमने आगे नहीं पढ़ा है, बस इसीका अर्थ हमको लगाना है। जीव विग्रहगति के बाद नया शरीर धारण करता है यानी क्या करता है? तो उसके कुछ नामकर्मों के उदय से परमाणुओं का ग्रहण होता है। शरीर नामकर्म के उदय से जीव में योग उत्पन्न होता है और योग के कारण वह परमाणुओं का ग्रहण करता है। तो उनका क्या होता है? तो उनका शरीररूप से परिणमन चालू होता है; परंतु इसलिये जीव का कुछ निमित्तपना बन जाता है। तो जीव में भी कुछ बातें होती हैं, इनको हम कहेंगे पर्याप्ति होती हैं। यहां लिखा है न, कि **छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्‌गल।** पुद्‌गलों का भी वहां कुछ परिणमन होता है और जीव में भी कुछ शक्तियां उत्पन्न होती हैं, उन शक्तियों की डेव्हलपमेंट होती है, तो उसके लिये कुछ समय लगता है अंतर्मुहूर्त का। तो अंतर्मुहूर्त में ये छह पर्याप्ति परिपूर्णता को पहुंच जाती हैं। यह पर्याप्ति क्या है? देखेंगे हम यहां।

तो यहां तो बहुत सारे प्रश्न हमें उठते हैं कि यह पर्याप्ति क्या है और जीव पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण करता है तो एक समय में शरीर के कितने पुद्गल परमाणु ग्रहण करता है? वे कितने काल तक जीव के साथ रहते हैं? क्या एक समय में ग्रहण किये हुये एक साथ छूटकर चले जाते हैं? क्या एक समय में ग्रहण किये हुये अलग-अलग समयों में चले जाते हैं? उनमें निश्चित क्या बातें होती हैं यह भी एक प्रश्न है। वे क्या सब एक साथ छूट जाते हैं? और छूटकर कहां चले जाते हैं? जीव उनका जो ग्रहण करता है, वे कहां से ग्रहण होते हैं? यहां हम देवलाली में बैठे हैं तो बम्बई के कुछ परमाणु हम ग्रहण करेंगे कि नहीं? कहां तक के परमाणु ग्रहण करेंगे? हं, शिखरजी जाते हैं, तो वहां से कुछ परमाणु ग्रहण करेंगे कि नहीं बाहर से? वे परमाणु व्हायब्रेशन्स वगैरह से हमें कुछ ठीक-ठाक करेंगे कि नहीं? यह सब देखेंगे हम। वहां जाते हैं, तो कुछ परमाणु लेकर आयेंगे कि नहीं आयेंगे? आप गये थे न? तो कुछ परमाणु लाये कि नहीं वहां से? कुछ काम के लाये कि नहीं? हम देखेंगे – यह शरीर संबंधी परमाणु भी कहां से ग्रहण होते हैं? ये सारे प्रश्न हमारे मन में हैं, इन प्रश्नों का उत्तर हम आगम के आधार से देखने जा रहे हैं। हमने तो कुछ न कुछ मानकर रखा है अनादि से। क्योंकि हम कहीं जाते हैं, तो बाहर से कोई न कोई हमारे में कुछ तो, वहां के कोई व्हायब्रेशन्स तो होंगे, कोई परमाणु तो होंगे इसलिये वहां जाकर शांति होती है – ऐसी कुछ न कुछ भ्रमणा हम अपने मन में रखें हुये रहते हैं। एक दूसरे की बाते सुनते भी हैं, हां?

श्रोता: एक छोटासा प्रश्न है विग्रहगति के बाद जीव जैसी यह पर्याप्ति को ग्रहण करने के योग्य परमाणुओं को ग्रहण करता है, विग्रहगति में कार्माणकाययोग है तो उसमें कार्माणकाययोग में मात्र नामकर्म का उदय आता है कि सभी का आता है? और उदय आता है तो किसमें आता है? देखो, आप का जो प्रश्न है, मैं रिपीट इसलिये कर रही हूं कि सब सुन सके, इनका प्रश्न ऐसा है कि *विग्रहगति में तो कार्माणकाययोग है, अनाहारक है, शरीर के परमाणुओं का ग्रहण नहीं है। तो क्या वहां केवल नामकर्म का उदय है या अन्य कर्मों का भी उदय है?* आठों ही मूलप्रकृतियों का उदय विग्रहगति में भी होता है। नामकर्म की बहुत सारी प्रकृतियां हैं और नामकर्म की प्रकृतियों के उदय के भी पॅकेज होते हैं। बंध के भी पॅकेज होते हैं मेरी भाषा में। आपके पॅकेज होते हैं न? हॉटेल के तो होते हैं, हॉस्पिटल के भी होते हैं। हां? ओपन हार्ट सर्जरी करनी है, आठ दिन का पॅकेज है। हां,

मेरा भाई बीमार हुआ था, ओपन हार्ट सर्जरी हो गयी थी। आठवां दिन था, हॉस्पिटलवालों ने कह दिया, आपका पॅकेज पूरा हुआ, घर जाओ। अरे वह सीरियस हो गया है। नहीं, आप घर जाओ और घर जाकर फिर उसे आय सी यु में दुबारा भरती कराओ। यह पॅकेज होता है। यहां पर भी यानी विग्रहगति में नामकर्म की बीस प्रकृतियों का ही उदय रहता है। फिर जन्मस्थान पर पहुंचते ही मनुष्य में कितनी प्रकृतियों का उदय शुरू होगा, एकेन्द्रिय में कितनी प्रकृतियों का होगा, देव में कितनी प्रकृतियों का होगा और कौनसी प्रकृतियों का होगा उसके सारे अलग-अलग नियम हैं। अभी अपना यह विषय यहां कर्मकाण्ड के शिबिर में हो चुका है। तो यह शरीर नामकर्म का उदय है, साधारण या प्रत्येकशरीर नामकर्म का उदय है। यह तो वहां पहुंचने के समय उनका उदय शुरू होता है।

विग्रहगति में तो नामकर्म की बीस प्रकृतियों का ही उदय है, उसमें कोई शरीर नामकर्म का उदय नहीं है उस काल में। उसका उदय वहां जन्मस्थान में पहुंचने पर होता है। वैसे एक-एक पर्याप्ति पूरी होने पर अलग-अलग कर्मों का उदय शुरू होता है। जैसे विहायोगति प्रकृति का उदय शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने पर या उच्छ्वास प्रकृति का उदय श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति पूर्ण होनेपर होता है ऐसे बाद-बाद में होता है। तो उस विषय को हम अभी अधिक विस्तार से नहीं कहेंगे क्योंकि उस पूरे विषय पर अलग से अपने यहां शिबिर में एक बार चर्चा हो चुकी है। तो, पहले विग्रहगति में शरीर नामकर्म का उदय नहीं है, तो वहां शरीर के परमाणुओं का ग्रहण नहीं है। परंतु विग्रहगति में भी कर्मों का ग्रहण तो है ही। विग्रहगति में कार्माणशरीर और तेजसशरीर नामकर्म का उदय चलता रहता है। *श्रोता: उदय?* उदय, उसके कारण तेजसशरीर के और कार्माणशरीर के परमाणुओं का ग्रहण वहां भी चलता रहता है, वह तो कायम चलेगा, थ्रूआउट लाइफ चलेगा। कार्माणशरीर और तेजसशरीर के परमाणु हर समय जीव ग्रहण करता है, विग्रहगति में भी और अन्य समयों में भी। परंतु इन औदारिक, वैक्रियिक शरीरों के परमाणुओं का जो ग्रहण होता है, वह तो वहां पहुंचने पर जब वह शरीर नामकर्म का उदय शुरू होता है, तब होता है। तो कर्मों के उदय के अनुसार ये कार्य निमित्त-नैमित्तिक संबंधरूप से सहजरूप से बनते रहते हैं। इसलिये वहां क्यों नहीं ग्रहण होता है? वहां क्यों होता है? ऐसा कोई सवाल वहां नहीं उठता।

इस शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य परमाणुओं को जीव ग्रहण करता है। तो ये छह पर्याप्ति क्या हैं? इन्हें हमें देखना है पहली पुस्तक के आधार से। क्योंकि पर्याप्ति क्या हैं यह नहीं समझेंगे तो जीव उनके योग्य परमाणु ग्रहण करता है यह बात हम कैसे समझेंगे? तो यह विषय २५२ पेज से, गाथा ११८ से शुरू होता है। ११८ गाथा के ऊपर का हेडिंग हम पहले पढ़ेंगे फिर आगे बढ़ेंगे। देखो, **अब पर्याप्ति प्ररूपणा का प्रारंभ करते हुये** यह प्ररूपणा क्या होती है? तो विशेष व्याख्यान, विस्तार से व्याख्यान करने को प्ररूपणा कहते हैं। प्ररूपण करना यानी कथन करना। यह पूरे जीवकाण्ड का जो विषय... यह आपके हाथ में जो है न, इस पुस्तक का नाम है जीवकाण्ड; सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड। किसने लिखी है? पं. टोडरमलजी ने, ढूंढ़ारी भाषा में। यह जो आपके हाथ में है, वह तो मेरे द्वारा किया हुआ हिंदी अनुवाद है। पं. टोडरमलजी ने ढूंढ़ारी भाषा में लिखा है। उन्होंने अपने मन से लिखा होगा न? नहीं। उन्होंने संस्कृत टीका के अनुसार ही उसका कथन किया है। वे संस्कृत टीकाकार कौन थे? केशववर्णीजी, जिन्होंने कन्नड लीपी में संस्कृत टीका लिखी। केशववर्णीजी ने कहां से लिखा?

चामुंडराय का नाम सुना है? क्या किया उन्होंने? *श्रोता: बाहुबली भगवान की...* इतना ही हमने सुना है। वह बाहुबली भगवान की मूर्ति की स्थापना की श्रवणबेलगोला में – हमने इतना ही सुना है। उन्होंने तो नेमिचंद सिद्धांतचक्रवर्ती ने जो गोम्मटसार लिखे हैं, कौनसे? जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार सबकी टीका चामुंडराय ने स्वयं कर्नाटक भाषा में लिखी है, वे बहुत विद्वान थे और उसकी टीका केशववर्णीजी ने की है संस्कृत में और उसके अनुसार पं. टोडरमलजी ने ढूंढ़ारी भाषा में, देशभाषा जिसको कहते थे, उसमें उसका विस्तार से वर्णन किया। मूल ग्रंथों में तो बहुत कठिन विषय भी उसीके अंतर्गत था, संदृष्टि जिसको कहते हैं यानी चिन्ह बनाये हैं। संख्यात के लिये, असंख्यात के लिये, अनंतों के लिये अलग-अलग चिन्ह बनाये हैं। बहुत सारे जो शब्द आते हैं पल्य के लिये अलग, सागर के लिये अलग। तो वे चिन्हों में लिखकर उन्हें चिन्हों में ही समझाया जाता है। उसको कहते हैं संदृष्टि। जो यथार्थ है, उसको कहेंगे अर्थसंदृष्टि और विषय को सरल बनाने के लिये हमें परिचित ऐसी छोटी-छोटी संख्यायें लेकर उन्होंने जो समझाया है, उसे कहते हैं अंकसंदृष्टि। पं. टोडरमलजीसाहब ने पूरी अर्थसंदृष्टि को वहां से उठाकर उसका पूरा एक व्हॉल्यूम अलग बनाया। जीवकाण्ड की अर्थसंदृष्टि आपको देखनी है आपके हाथ

में पुस्तक है, दो नंबर की, जरा निकालकर देखना, हां पृष्ठ संख्या ८८० के आगे। आप देखेंगे तो आपको डर लगेगा कि यह क्या है ऐसा! ८८० के आगे कोई भी पेज निकालो।

ये हैं संदृष्टि। तो यह मूल ग्रंथ में जहां-तहां संदृष्टि थी क्योंकि जो विषय आया, उसको समझाया; संदृष्टि भी समझायी, सिम्प्लिफाय करके भी समझाया; तो लोग उसको देखकर डर जाते थे। यह अपने बस की बात नहीं कहकर छोड़ देते थे, है न? तो उन्होंने यह पूरा संकलन करके अंत में वह संदृष्टि अधिकार बनाया। आपके हाथ में ग्रंथ है और आप पढ़ने जा रहे हैं इसलिये बता रही हूं। बड़े ग्रंथों में तो केवल संदृष्टि ही लिखी है। कौनसे संदृष्टि का क्या अर्थ है, यह चिन्ह असंख्यात का है, यह चिन्ह संख्यात का है, यह अनंत के लिये लिखा है या अन्य पल्य के लिये लिखा है, किसके लिये क्या चिन्ह है? कहीं अंकों के ऊपर आड़ी लाइन लिखेंगे, कहीं ऐसा लिखकर उसके ऊपर ऐसा कटोरी जैसा रखेंगे – उसका अर्थ क्या है? यह तो वहां पता नहीं चलता है। पं. टोडरमलजीसाहब ने अद्‌भुत कार्य किया है कि एक-एक संदृष्टि का, एक-एक चिन्ह का अर्थ उन्होंने खोल-खोलकर बताया है और फिर उन्होंने यहां उसका अधिकार अलग से बना दिया है। क्योंकि हम तो केवल चिन्ह पढ़ते हैं तो हमको बोध नहीं होता है कि यह चिन्ह किसका है। परंतु उन्होंने इतना विस्तार करके बताया है कि सभी इसको सरलता से समझ सकते हैं। उनकी यही भावना थी कि जन-जन इस विषय को समझे। बहुत उनकी भावना थी। तो उन्होंने यह ग्रंथ अलग लिखा, उसमें बहुत सरलता से अंकसंदृष्टि यानी अपनी छोटी-छोटी संख्या में विषय समझाया है और यह गहरा विषय अंत में रख दिया है और मूल ग्रंथ के अनुसार कहीं भी अपनी ओर से कोई फेरफार नहीं किया है।

उनके जमाने में तो धवला, महाधवला, जयधवला तो देखने मात्र, दूर से दर्शन मात्र ही उपलब्ध थे। उनकी तो इच्छा थी कि वे ग्रंथ मंगवायें, मूडबिद्री में उन्होंने तीन आदमियों को भेजा भी था, परंतु वे शास्त्र उनको मिले नहीं थे। फिर भी उन्होंने इतनी गजब की ये टीकायें लिखी हैं, ये सरल करके जो मूल संस्कृत के अनुसार, मूल ग्रंथों के अनुसार, गोम्मटसार के अनुसार, आचार्यों के कथन के अनुसार उन्होंने बताया है। हमारे यहां भी घर में धवला, जयधवला, महाधवला का विस्तार से आद्योपांत अभ्यास - सामूहिक स्वाध्याय चला है, तो उसमें जब-जब हमें कहीं रुकना पडता था या कहीं समझाने के लिये सरल करके समझाना था, तो बार-बार हम इस सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका का रेफरन्स निकालकर

इसमें से पढ़कर सुनाते थे। आपने सुनी हैं न हमारी सीडी? ये सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक तीन ग्रंथ हैं - जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड और लब्धिसार-क्षपणासार। जयधवला में भी कहीं-कहीं अटक जाते थे, तो वह लब्धिसार ग्रंथ निकाल-निकालकर उसमें से पढ़ते थे। इतना उन्होंने सरल करके समझाया है। उनके तो इतने उपकार हैं हमारे ऊपर जो कि ऐसा गज़ब का अद्‌भुत कार्य उन्होंने किया है। फिर भी लोग वह ढूंढ़ारी भाषा है इसलिये उसको छोड़ देते थे। हां, इसलिये हमें विकल्प आया कि, चलो इसको हिंदी बनाये अपनी बुद्धि के अनुसार। तो इन तीनों ग्रंथों का हिंदी अनुवाद करके हमने छापा है और अभी आपके हाथ में है। आप लोगों की यह ज़्यादा जिम्मेदारी है। ये हमारे सारे यंगस्टर्स साथी बैठे हैं न! हं, क्यों निलेशजी और ये सारे कहां गये? आप पढ़े भी और इसको पढ़ाये भी। हां, स्वप्निल है, रवि है, ये सब हैं न। ये हमारे विद्वान सारे आये हैं, पं. रजनीभाई भी आये हैं। तो आप लोगों की तो जिम्मेदारी है कि यह आगे बढ़ाये इसको। हमें ऐसा लगता है कि हमारी बुद्धि में जो कुछ थोड़ा बहुत आया है उसके लिये हमें बहुत कष्ट उठाने पड़े थे। पढ़ते थे तब लगता था जैसे पत्थर पर हम अपना सिर टकरा रहे हैं। हमने इ.स. १९९३ से जीवकाण्ड से करणानुयोग पढ़ना शुरू किया था। शुरू में हम क्या पढ़ रहे हैं वह बात बिलकुल समझ में नहीं आती थी। एक तो ढूंढ़ारी भाषा और दूसरी बात बीच-बीच में गणित भी आते थे तो छोड़कर भाग जाने का मन होता था। फिर भी पढ़ते रहे, पढ़ते रहे, पढ़ते रहे तो थोड़ा अर्थ भासित होने लगा, तो अभी लगा कि चलो, आगे की पीढ़ी इसका कुछ उपयोग करे तो अच्छा है। अभी हम आगे बढ़ेंगे यहां पर।

श्रोता: हम अर्थसंदृष्टि नहीं समझे तो उसके बारे में आपने कुछ किया है क्या? देखो, लोगों को अर्थसंदृष्टि भी कठिन लगती है। हमारे यहां तो रोज के स्वाध्याय में हमने पूरा जीवकाण्ड ग्रंथ तो सिखाया ही था। तीन सौ घंटों के लेक्चर्स में इस ग्रंथ के अर्थसंदृष्टि के पहले तक के भाग हो गये और उसके बाद की अर्थसंदृष्टि हमने बोर्ड पर, ऐसे व्हाइट बोर्ड पर कलर चॉक से, एक-एक चिन्ह लिखकर – उसका अर्थ कैसा करना ये बातें सिखायी हैं। जैसे ये छोटे बच्चे दूसरी-तीसरी क्लास के भी पढ़ते हैं न, वह गणित कैसे करना है? कैसे उसको प्लस करना? कैसे मायनस करना? वह सब उसमें सिखाया है। घर पर स्वाध्याय के समय दिनेशजी ने उसकी व्हिडिओ शूटिंग की थी। उसकी भी व्हिडिओ डीव्हीडीज् बनाकर रखी हैं। कर्मकाण्ड की अर्थसंदृष्टि और लब्धिसार की अर्थसंदृष्टि भी

इसीतरह पढ़ायी है और उनकी भी व्हिज्युअल डीव्हीडीज् बनायी हैं। जो उपयोग करना चाहता है उसके लिये सभी साधन उपलब्ध हैं। आज तो मीडिया और साधन इतने बढ़ गये हैं कि घर बैठे-बैठे आप सब समझ सकते हैं। थोड़ी रुचि हो और यह नहीं समझें, ऐसा तो हो ही नहीं सकता है।

यह पर्याप्ति क्या है हमको देखना है। देखो, यह २५२ पेज पर यह **प्ररूपणा** शब्द हम देख रहे थे। तो प्ररूपणा यानी विशेष व्याख्यान। पूरे जीवकाण्ड का विषय क्या है? तो बीस प्ररूपणा। किस संबंधी? तो जीव संबंधी। वैसे तो इसको करणानुयोग में नहीं डालते हैं, यह तो द्रव्यानुयोग का विषय है क्योंकि ये सभी गुणस्थान, मार्गणास्थान जीव संबंधी हैं। गुणस्थान यह एक प्ररूपणा हुयी और बाकी सब मिलकर बीस प्ररूपणा होती हैं। कौन-कौनसी बीस हैं? हं, एक तो है गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा और उपयोग जिसको लास्ट में बीस नंबर पर रखेंगे, परंतु यहीं गिनेंगे, छह तो ये हो गये और चौदह तो मार्गणायें हैं। हमने गिनी हैं न – गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय वगैरह जो चौदह मार्गणायें और ये छह मिलकर जीव की बीस प्ररूपणायें कहने में आती हैं। इसीको चौबीस ठाणा भी कहेंगे। इसीमें चार बातें और हैं, आपके पास चौबीस ठाणा की पुस्तकें हैं न ये सागरवालों के यहां, तो उसमें क्या-क्या आता है? इन बीस के अलावा ध्यान आता है, आस्रव के भेद आते हैं, गुणस्थानों में आस्रव कितने? कौनसे होते हैं? कौनसे गुणस्थान में कौनसे ध्यान होते हैं? आस्रव, ध्यान, कुल और जाति ये चार बातें और होती हैं, तो इसी विषय को चौबीस ठाणा कहते हैं और ये पढ़ते हैं तो पूरा गुणस्थान का स्वरूप बिलकुल खुलकर एकदम साफ क्लिअर हो जाता है, समझने में; और कोई भी आगम का ग्रंथ निकालकर पढ़ो, तो उसका अर्थ ख्याल में आ जाता है। तो इनमें से पर्याप्ति प्ररूपणा की बात यहां चल रही है। कल हमने देखा था, अरिहंत भगवान को जानना है, कुंदकुंदाचार्य कहते हैं कि उनका जीवसमास जानो, उनकी पर्याप्ति जानो, उनके प्राण जानो, ये सब बीस प्ररूपणा उन पर लगाकर देखो और नक्की करो यह अरिहंत का स्वरूप है। इसीतरह इन प्ररूपणाओं को हम अपने पर भी घटित करके देखेंगे – हमारे में क्या-क्या है? है न?

तो यहां देखते हैं, **पर्याप्ति प्ररूपणा का प्रारंभ करते हुये प्रथम ही, दृष्टांतपूर्वक जीवों की उन पर्याप्तियों द्वारा पूर्णता-अपूर्णता दिखाते हैं।** पर्याप्तियों की पूर्णता को पर्याप्त कहेंगे। जब तक वह पूर्ण हो रही हैं तब तक उसको अपर्याप्त कहेंगे। जैसे हमारा

घर का कन्स्ट्रक्शन चल रहा है और हो गया तो हम कहेंगे वह पूरा हो गया; और अभी चल रहा है, पूरा नहीं हुआ है अभी, तो अधूरा कहेंगे। किसी-किसीका तो वैसा ही पड़ा रहेगा, पूरा होगा ही नहीं और किसीका तो, कुछ काल के बाद पूर्णता को पहुंच जायेगा। ऐसे यहां पर भी है, हम देखेंगे उसको २५३ पृष्ठ पर। **जिसतरह जगत में गृह, घट, वस्त्र, इत्यादि पदार्थ व्यंजनपर्यायरूप** यानी? गृह यानी घर है, घट यानी कोई बर्तन है, वस्त्र आदि हैं, ये जो हैं वे **पूर्ण और अपूर्ण दिखायी देते हैं।** वे जो बनकर पूरे होते हैं तो हम कहेंगे वे पूर्ण हुये। बन रहे हैं तो कहेंगे अपूर्ण हैं। कोई बनेंगे ही नहीं, ऐसे ही रह जायेंगे तो कायम के लिये ये अपूर्ण ही कहलायेंगे। ऐसे ही, **जो अपने कार्यरूप शक्ति से संपूर्ण हुये हैं उन्हें पूर्ण कहते हैं।** यह कौनसी कार्यरूप शक्ति? कुछ विशिष्ट कार्य करने की शक्ति। किसमें उत्पन्न हो रही है? जीव में। क्या कार्य करने जा रहे हैं? वह हम देखेंगे यहां, आहारपर्याप्ति आदि नाम सुनेंगे, और हर एक का जो कार्य है उसको भी देखेंगे। तो यह जो शक्ति का पूर्ण होना, उसको कहेंगे पर्याप्त यानी पूर्ण। **तथा जिनका प्रारंभ होकर कुछ हुये, कुछ नहीं हुये हैं।** कुछ पर्याप्ति हुयी हैं कुछ पर्याप्ति नहीं हुयी हैं। **वे अपने कार्यरूप शक्ति से संपूर्ण नहीं हुये, उनको अपूर्ण कहते हैं।** यहां पूर्ण को पर्याप्त कहेंगे, अपूर्ण को अपर्याप्त कहेंगे।

इसतरह, फिर कुछ होते हैं, कुछ नहीं होते हैं, उसका कारण क्या है? *श्रोता: नसीब अपना अपना?* हां, नसीब ही कहेंगे, क्योंकि दैव है, दैव यानी कर्म का उदय है। जिस जीव ने अपर्याप्त नामकर्म का बंध करके यहां अपर्याप्तपर्याय में जन्म लिया है, उसकी एक भी पर्याप्ति पूर्ण होनेवाली नहीं है, उसके पहले ही वह मर जायेगा। जो पर्याप्त नामकर्म बांध कर आया है, उसकी पर्याप्ति डेफिनेटली पूरी होगी ही होगी। उसके पहले वहां न कदलीघात से मरण होगा, न अन्य किसीसे। ख्याल में आ रही है बात? **इसतरह पर्याप्त-अपर्याप्त नामक नामकर्म की प्रकृति के उदय से संयुक्त जीव भी,** यहां सबमें निमित्तरूप से वह पर्याप्त या अपर्याप्त नामकर्म के उदय को लिया है, **अपनी-अपनी पर्याप्तियों से पूर्ण और अपूर्ण होते हैं। जो सर्व पर्याप्तियों की शक्ति से संपूर्ण होते हैं, वे पूर्ण कहलाते हैं। तथा जो सर्व पर्याप्तियों की शक्ति से पूर्ण नहीं होते, वे अपूर्ण कहलाते हैं।** यह तो आसान है समझने में। **वे पर्याप्ति कौनसी हैं और किसके कितनी पायी जाती हैं? सो विशेष कहते हैं,** विस्तार से कहेंगे।

अभी हम छह नाम पढ़ेंगे भी, सुनेंगे भी और बोलेंगे भी। मैं एक-एक नाम लूंगी, आपको रिपीट करना है। **आहारपर्याप्ति**, *सभी श्रोता: आहारपर्याप्ति।* **शरीरपर्याप्ति**, *सभी श्रोता: शरीरपर्याप्ति।* **इन्द्रियपर्याप्ति**, *सभी श्रोता: इन्द्रियपर्याप्ति।* **आनपान अर्थात् श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति**, *सभी श्रोता: आनपान अर्थात् श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति।* **भाषापर्याप्ति**, *सभी श्रोता: भाषापर्याप्ति* और **मन:पर्याप्ति**, *सभी श्रोता: मन:पर्याप्ति।* **ऐसी छह पर्याप्ति हैं।** अभी ये छहों-छह पर्याप्ति संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के होती हैं क्योंकि जिनके मन होता है उन्हींकी मन:पर्याप्ति होंगी और उनके वैसा कर्म का उदय होगा, वैसा मन संबंधी ज्ञान का उघाड होगा, ज्ञानावरण का वैसा क्षयोपशम होगा, तो उनके द्रव्यमन की रचना भी होगी, उनके मन:पर्याप्ति भी होगी, ये सब बातें उन्हींमें होंगी। जो असंज्ञी हैं उनके यह मन:पर्याप्ति नहीं होगी। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के, इस मन:पर्याप्ति बिना, पांच पर्याप्ति होंगी। ख्याल में आती है बात? एकेन्द्रिय जीवों के कितनी हो सकती हैं? *श्रोता: चार।* चार ही होंगी। उनके तो भाषापर्याप्ति भी नहीं होगी; हां, मन:पर्याप्ति भी नहीं होगी; तो उनके आहारपर्याप्ति होगी, शरीरपर्याप्ति होगी, इन्द्रियपर्याप्ति होगी और श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति होगी। तो एकेन्द्रियों के चार होंगी, द्वीन्द्रियों से असंज्ञी पंचेन्द्रियों तक के पांच होंगी और संज्ञी पंचेन्द्रियों के छह पर्याप्ति होंगी। अब और पढ़ेंगे आगे।

श्रोता: जो जीव पर्याप्त, अपर्याप्त नामकर्म का बंध करता है वह मरण के समय करता है जिससे कि उसका अगले शरीर में...। इनका यह प्रश्न है कि, पर्याप्त या अपर्याप्त नामकर्म का बंध कब होता है? तो कभी भी होता है, जिंदगी भर। परंतु यह नियम है, जहां जिस पर्याय में उत्पन्न होना है, उसके एक अंतर्मुहूर्त पहले से अंत में मरण के समय तक उस पर्याय संबंधी ही बंध होता है। ऐसे कुछ अलग नियम भी हैं। अभी हमारा वह विषय नहीं चल रहा है न? कर्मकाण्ड का विषय है वह। जैसे नरक में जो उत्पन्न होने जा रहा है अभी वह क्षायिक सम्यक्त्व के साथ उत्पन्न होने की बात छोड़ दो, अन्य जो कोई मरकर नरक में जा रहा है, तो नरक में जाने के एक अंतर्मुहूर्त पहले वह नरकगति का ही बंध करेगा। जिस वेद सहित जहां उत्पन्न होनेवाला है, उस वेद का ही अंत में बंध होता है। अब नरक की बात छोड़ो। कोई यहां स्त्रीपर्याय में उत्पन्न होनेवाला है, भले वह एकेन्द्रिय से आ रहा है, संज्ञी पंचेन्द्रिय में आ रहा है, स्त्री होनेवाला है, तो अंत में वह पंचेन्द्रिय जाति का बंध कर रहा है, अंत में वह स्त्रीवेद का बंध कर रहा है। ऐसे कुछ

नियम हैं। अंत की बात है, पहले बंध नहीं हो रहा था यह बात नहीं है। मिथ्यादृष्टि जीव अंतर्मुहूर्त में-अंतर्मुहूर्त में पर्याप्त-अपर्याप्त नामकर्म का बंध करता रहेगा। परंतु जहां उत्पन्न होना है, उसके एक अंतर्मुहूर्त पहले से, मरण के पहले तो नियम से उसीका बंध करेगा, जिसका वहां जाकर उदय होनेवाला है।

श्रोता: आयु जब बंधती है तब भी इनका बंध होता है क्या? यह तब भी होगा। आयु का बंध है, तो उस समय, उस पर्टिक्युलर आयु का बंध हो रहा है, वही गति बंध रही है वहां पर। सूक्ष्म या बादर, पर्याप्त या अपर्याप्त, प्रत्येक या साधारण आदि सभी नामकर्म भी उसके साथ बंधते हैं क्योंकि जिस पर्याय संबंधी यानी भव संबंधी कर्म बंध रहे हैं तो उसके अनुकूल उन सभी कर्मों का एक साथ बंध होगा। एकेन्द्रियपर्याय संबंधी बंध हो रहा है तो ॲट अ टाइम, नामकर्म की कौन-कौनसी प्रकृतियां बंधती हैं उसके नियम हैं। जैसे कोई देवगति का बंध कर रहा है तो ॲट अ टाइम उसको नामकर्म की अट्ठाईस प्रकृतियां बंधेगी। नरकगति के बंध के समय भी अट्ठाईस प्रकृतियां बंधेगी परंतु वे अलग होगी। उनके सारे नियम हैं। वह कौनसी पर्याय है, कौनसी प्रकृतियां हैं? अभी उसके विस्तार में हम यहां नहीं जायेंगे। *श्रोता: मगर यह पर्याप्त-अपर्याप्त यह कौनसे परिणाम से बंधता है?* हां, यह जो संक्लेश में तो अपर्याप्त का बंध होगा। जैसे अभी एकेन्द्रिय संबंधी तो बंध हो रहा है, तो संक्लेश में ही एकेन्द्रिय जाति का बंध कर रहा है। उसमें भी अधिक संक्लेशवाला है, तो अपर्याप्त का बंध करेगा। परंतु तीव्र संक्लेशवाला नरकगति का बंध करेगा तो उसके साथ पंचेन्द्रियजाति और पर्याप्त नामकर्म बंधेंगे। इसतरह लेना। यहां तो केवल संक्लेश, विशुद्धि ऐसी ही परिणामों की बातें करेंगे। अभी वह भी हर मार्गणा में, हर गति में, उसकी बातें अलग होती हैं। कौनसे गति के जीव, कौन-कौनसी प्रकृतियां बांध सकते हैं, कौनसी नहीं बांधते इसके भी नियम हैं और यह सब डेफिनेट है। तो थोड़ासा अभ्यास होने के बाद उसमें कोई अचरज या ऐसी कोई कठिन बात नहीं लगती है।

तो अब हम यहां देख रहे थे, **इनमें से एकेन्द्रिय के तो भाषा और मन बिना पहली चार पर्याप्ति पायी जाती हैं। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, इन विकलचतुष्क के** क्या लिखा? *श्रोता: विकलचतुष्क।* असंज्ञी को लेना है न यहां, तो विकलचतुष्क कहा। कहीं-कहीं विकलत्रय कहते हैं, तब द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय को लेना है। विकलचतुष्क के **मन बिना पांच पर्याप्ति पायी जाती हैं और संज्ञी पंचेन्द्रिय**

के छहों पर्याप्ति पायी जाती हैं। वहां औदारिक, वैक्रियिक, आहारक ये शब्द हमने कल भी पढ़े थे न? **इनमें से किसी शरीररूप नामकर्म की प्रकृति का उदय होने के,** फिर से यानी अभी वह शरीर होगा तब होगा, पहले में पहले क्या होता है? उस शरीर नामकर्म का उदय होता है। जो जीव मनुष्य और तिर्यंचगति में उत्पन्न हुआ है, जहां जन्म लेना है वहां पहुंचते ही, उसके औदारिकशरीर नामकर्म का उदय शुरू होता है। जो देव या नरक में उत्पन्न हुआ है, देव या नारकी है, वहां पहुंचते ही उसके वैक्रियिकशरीर नामकर्म का उदय प्रारंभ होता है। जो मुनिराज आहारकशरीर बनाने जा रहे हैं, उनके आहारकशरीर नामकर्म का उदय होता है। तो उस नामकर्म के **उदय होने के प्रथम समय से लेकर जो तीन शरीर और छह पर्याप्तिरूप पर्याय के परिणमने के योग्य पुद्गल स्कंध,** यही हमने अभी पढ़ा था न? तीन शरीर और छह पर्याप्तिरूप पर्याय के परिणमने के योग्य पुद्गल स्कंध, यह पुद्गल स्कंध कहां से ग्रहण करेगा? तो जीव के जो प्रदेश हैं, उन्हीं प्रदेशों में जो एकक्षेत्रावगाहरूप से वहां पड़े हुये जो पुद्गल परमाणु हैं, उनमें से ही ग्रहण करेगा। क्यों ग्रहण करता है? ये औदारिकशरीर नामकर्म के उदय से, उस जाति के परमाणुओं का जीव ग्रहण करता है। उसमें योग होता है। योग से ग्रहण करता है वह सब उसमें समझ लेना। यानी वे परमाणु किसरूप से परिणमनेवाले हैं? तीन शरीर और छह पर्याप्तिरूप से परिणमित होनेवाले हैं। यहां तो जीव की शक्ति को पर्याप्ति कह रहे हैं, परंतु वहां पुद्गलों में भी कुछ ऐसी रचना हो जाती है जिसको पर्याप्ति कहते हैं, उसकी विशेष विस्तार से चर्चा नहीं है। उसका धवला आदि में कुछ कथन आता है थोड़ा, पर हम उसके डिटेल में नहीं जायेंगे। हम यहां केवल जीवों की शक्ति की अपेक्षा से पर्याप्तियों की चर्चा करेंगे।

तो कहते हैं कि उनको, किनको? जो पुद्गल परमाणु ग्रहण किये हैं उनको। समझ में आती है बात? हम औदारिकशरीर की बात करेंगे, वैक्रियिक की बात छोड़ देते हैं। औदारिकशरीर नामकर्म का उदय प्रारंभ हुआ; कब हुआ? जीव मरा, विग्रहगति पार करके जहां जन्म लेना है वहां पहुंचा, तब उसके औदारिकशरीर नामकर्म का उदय शुरू हुआ; उसी समय आहारवर्गणा - जो औदारिकशरीररूप होने योग्य जो आहारवर्गणा है, उनके अनंत परमाणु जीव ने पहले समय में ग्रहण किये। **उनको,** उन परमाणुओं को **खल-रस भागरूप परिणमाने की,** उनको खल यानी सॉलिड और रस यानी लिक्विड,

खलरूप और रसरूप परिणमाने की शक्ति जीव में उत्पन्न हो रही है। वहां तो परमाणु ग्रहण किये हैं। अब इन परमाणुओं में से कुछ परमाणु खलरूप होंगे, कुछ परमाणु रसरूप होंगे। तो उनको परिणमाने की, **पर्याप्ति नामक नामकर्म के उदय से होनेवाली ऐसी जो आत्मा की शक्ति निपजती है...**

देखो, पर्याप्ति होती है यानी क्या? आत्मा में ऐसी शक्ति उत्पन्न होती है कि जिस शक्ति के कारण वह जीव ग्रहण किये हुये परमाणुओं को खलरूप और रसरूप परिणमाता है। ख्याल में आती है इतनी बात? आप कहेंगे देखो, जीव में शक्ति उत्पन्न हुयी, तो जीव ने पुद्गल को परिणमाया कि नहीं परिणमाया? तो हमने पहले ही डिक्लेअर कर दिया है, यह निमित्त-नैमित्तिक संबंध बतानेवाला कथन है। कथन निमित्त से होता है, कार्य तो उपादान से होता है। परमाणु अपनी योग्यता से परिणमते हैं। यहां जीव में यह तो शक्ति यानी विभावरूप शक्ति है। शक्ति यानी गुण या ज्ञान शक्ति है या स्वपरप्रकाशक शक्ति है या क्रियावती शक्ति है, वैसेवाली शक्ति नहीं समझना। यह तो विभाव है क्योंकि वहां जाकर अभी शरीर ग्रहण करना कुछ अच्छी बात तो है नहीं है, कलंक है, हां, हमने उसको कहां कलंक माना है? जन्म होता है वह भी कलंक है और यह कलंक हुआ तो एक बार ही हम खुशी नहीं मनाते, हमने जन्म धारण किया है उसकी खुशी हर साल मनाते हैं। सादा-सीधा बर्थडे नहीं होता है वह, वह हॅपी बर्थडे होता है, हं।

यहां तो, उन परमाणुओं को इन दो रूप-खलरूप और रसरूप परिणमाने की जो जीव की शक्ति यहां उत्पन्न हो रही है उसको आहारपर्याप्ति कहेंगे। **जिसतरह तिल को पेल कर खल और तेलरूप परिणमाते हैं,** आपने कभी देखा है क्या? पेलना यानी क्या? वहां तिल को घानी में पेलते हैं तो उसको क्रश करके उसमें से तेल अलग किया जाता है और उसका सॉलिड भाग अलग किया जाता है। **उसतरह किन्हीं पुद्गलों को तो खलरूप परिणमाते हैं और किन्हीं पुद्गलों को रसरूप परिणमाते हैं, ऐसी शक्ति होने को आहारपर्याप्ति कहते हैं।** यह पर्याप्ति कब शुरू हुयी? पहले ही समय से। दूसरी पर्याप्ति कब शुरू होगी? पहले ही समय से; तीसरी पर्याप्ति कब शुरू होगी? पहले ही समय से; सभी छहों पर्याप्तियों की शुरुआत तो एक साथ पहले ही समय में होती है और एक-एक की पूर्णता एक के बाद एक होती है। ऐसा नहीं है कि एक पूरी होने के बाद दूसरी शुरू हुयी, फिर तीसरी हुयी। जैसे वे दौड़ना चालू करते हैं न, आपने खेलों में देखा

होगा, एक साथ सब दौड़ना चालू करते हैं। कोई जल्दी पहुंच जाता है, कोई बाद में पहुंच जाता है। ऐसे ही, यहां क्या कह रहे हैं? यह आहारपर्याप्ति किसको कहना है? तो जीव की शक्ति को। कैसी शक्ति है? कि शरीर नामकर्म के उदय से जिन परमाणुओं को ग्रहण करता है, उनमें से किसीको खलरूप और किसीको रसरूप परिणमाने की जो जीव की शक्ति उत्पन्न होती है, उसको आहारपर्याप्ति कहेंगे। किसीकी वह आहारपर्याप्ति पूर्ण होगी, किसीकी होगी ही नहीं। ये लब्धिअपर्याप्त जो जीव हैं न? उनकी भी सभी पर्याप्ति तो शुरू हो जाती हैं, परंतु एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, उसके पहले ही वे मर जाते हैं।

यह आहारपर्याप्ति तो समझना सरल है। आगे पढ़ते हैं, २५४ पृष्ठ पर, यह पर्याप्ति समझेंगे न, तो आगे की बात सरल होगी अपने को। इसीको समझाने के लिये फिर यहां, तिरछे अक्षरों में ब्रॅकेट में लिख दिया है, यह मेरी अपनी ओर से बात बतायी है और सरल-सीधे अक्षरों में जो लिखा है वह मूल पं. टोडरमलजीसाहब की बात है। **औदारिकशरीर नामकर्म के उदय से, औदारिक शरीररूप परिणमने योग्य पुद्गल स्कंधों का जीव के द्वारा ग्रहण होता है। उन्हें खल-रसरूप परिणमाने की शक्ति जीव में उत्पन्न होती है। उसमें पर्याप्त नामकर्म के उदय से उस शक्ति की पूर्णता होती है। वैक्रियिकशरीर नामकर्म और आहारकशरीर नामकर्म के उदय में अपने-अपने योग्य पुद्गल स्कंधों का ग्रहण होता है। उसी प्रकार छह पर्याप्तिरूप पर्याय के परिणमने योग्य पुद्गल स्कंधों का भी ग्रहण होता है।** क्योंकि पहले ही समय से ये छह पर्याप्ति शुरू होती हैं। हम संज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा छह पर्याप्ति कह रहे हैं।

अब आगे देखते हैं। शरीरपर्याप्ति किसको कहना? यह हर बार पर्याप्ति-पर्याप्ति कह रहे हैं, तो यह शक्ति की बात चल रही है। उसकी पूर्णता को या उसकी जो शक्ति है, वह जो शुरू हो गयी है वह पर्याप्ति शुरू हुयी है ऐसा हम कहेंगे और पर्याप्ति पूरी होने पर उस जीव को पर्याप्त कहेंगे। हां, ये कुछ प्रश्न हैं वे बाद में देखेंगे। अपना अभी पर्याप्तियों का विषय चलेगा, बाद में इस विषय का जब नंबर आयेगा तब उसकी चर्चा करेंगे।

श्रोता: जीव में शक्ति उत्पन्न होती है यानी क्या? कुछ उघाड होता है, क्या होता है? हां, आपका प्रश्न यह है, शक्ति होती है यानी क्या होता है? कुछ उघाड होता है, क्या होता है? यह शक्ति होती है यानी उन कर्मों के उदय में जीव में ऐसी योग्यता होती है कि वह वहां

पुद्गल में वैसा परिणमन उनके स्वयं के कारण होता है। उनका आपस में निमित्त-नैमित्तिक संबंध है बस इतना ही है। *श्रोता: वह विभावरूप ही परिणमन है?* वह विभावरूप ही परिणमा है क्योंकि जो मुक्त हुये हैं, वे तो कोई नया शरीर धारण नहीं करते हैं। ख्याल में आया? उनके कोई कर्म नहीं रहे हैं। तो वहां कर्मों का उदय भी नहीं हैं और उसके निमित्त से होनेवाली, जीव में कोई बातें ही नहीं हैं। जीव परिपूर्ण शुद्ध है। यह शक्ति यानी वह गुणवाली या ज्ञानवाली या दर्शनवाली ऐसी शक्ति नहीं समझना। यह कोई गुण नहीं है। *श्रोता: गुण का परिणमन नहीं है?* गुण का परिणमन भी नहीं है, यह तो विभाव है। जैसे योग क्या है? तो प्रदेशों का कंपन है, चंचलता है। *श्रोता: फिर भी वहां योग गुण है।* आपका प्रश्न है योग गुण है। तो योग गुण है तो उसका प्रदेशों का चंचलपना चल रहा है। तो सिद्धों में योग गुण है कि नहीं है? *श्रोता: स्वभाव परिणमन।* आपको ब्लडप्रेशर है बहन? है, है कहते हैं। आपको है? आपको? नहीं है? जिसको झिरो ब्लडप्रेशर है, उसको हम मृत घोषित करते हैं। देखो, हम कहते हैं न लौकिक में, आपको ब्लडप्रेशर है कि नहीं है? तो आप कहेंगे, है। यानी हाय ब्लडप्रेशर की बीमारी है। वैसे योग है कि नहीं? तो है और अयोगी भगवानों को नहीं है, तो नहीं है यानी वह तो निष्कंप अवस्था है। हां, परंतु हम नॉर्मल है – हमारा ब्लडप्रेशर नॉर्मल है, तो हम कहेंगे हमें ब्लडप्रेशर नहीं है; बराबर है न? जिसको बिमारी है, ब्लडप्रेशर किसीका हाय होता है, किसीका लो होता है, तो कहते हैं, हमें ब्लडप्रेशर की बीमारी है। तो जो नॉर्मल आदमी है उसको पूछो आपको ब्लडप्रेशर है? तो कहता है नहीं है। अरे है, हर एक को होता है, मरने पर वह ब्लडप्रेशर चला जाता है। ऐसे ही यहां योग है, कंपन है, यह विभाव परिणमन है। विभाव परिणमन को हम योग है कहते हैं। सयोगकेवली तक विभाव परिणमन है, उनके आत्मप्रदेशों का चंचलपना है। अयोगकेवली में वह चंचलपना रुक गया है, यानी निष्कंप अवस्था प्राप्त हुयी और स्वभाव परिणमन चालू हो गया। वहां भी योग गुण तो है न? योग गुण है, तो उसका विभाव परिणमन है चंचलपना और स्वभाव परिणमन है निश्चलता, निश्चंचलपना।

श्रोता: भाव तो प्रतिपादन के लिये गुण है यहां तो शक्ति है इसके लिये कोई गुण नहीं है न? यहां इसके लिये कोई गुण नहीं है। यहां तो विभाव ही विभाव है, है न? *श्रोता: यहां शक्ति का अर्थ औदयिकभाव से लेना है?* हां, यानी जीव में ऐसा विभाव है, उसके औदयिकभाव भी है। किसी गुण में हम उसको नहीं लेंगे। औदयिकभावों के जो नाम

गिनाये, उनमें ऐसे कोई भाव नहीं हैं जो पर्याप्तिरूप परिणमते हैं। *श्रोता: जीवविपाकी प्रकृति है?* जीवविपाकी प्रकृति भी नहीं कहेंगे, पुद्गलविपाकी कहेंगे, उसका फल तो पुद्गल में मिल रहा है, ख्याल में आया? जीव में वैसा विभावरूप हो रहा है कि उसका पुद्गल के साथ संयोग हो रहा है। वैसे जीव के साथ कहना, वह भी ठीक नहीं है क्योंकि कर्मों के उदय में नये पुद्गल आकर वे उन्हींके साथ जुडते हैं क्योंकि जीव अनादि से कर्मों से बंधा हुआ है। उन्हीं कर्मों के साथ नये कर्म आकर जुड़ जाते हैं, औदारिकशरीर के परमाणु भी उन्हीं के साथ जुड़ जाते हैं। जीव तो अरूपी का अरूपी ठहरता है। फिर भी हम यह सब कथन करेंगे कि जीव के साथ बंधे हैं, जीव ने ग्रहण किया है। ये सब बातें ऐसी होगी क्योंकि जीव उसमें बीच में निमित्तरूप से है, तो उसको कहेंगे, उसका कथन होगा।

अब हम आगे बढ़ेंगे। यह पर्याप्ति क्या है? हमारी एक भी पर्याप्ति पढ़कर भी पूरी नहीं होगी तो हम अपर्याप्त कहलायेंगे। देखो, दो नंबर का पॅरेग्राफ पढ़ेंगे २५४ पृष्ठ पर। **पुनश्च खल-रस भागरूप परिणत पुद्गलों में,** पहले समय में वह शुरू किया और वह खलरूप, रसरूप परिणमना भी प्रारंभ हो गया। क्योंकि वैसी शक्ति उत्पन्न हुयी है। अब दूसरी शक्ति की बात कर रहे हैं। उस शक्ति की भी पहले समय से शुरुआत तो हो गयी है। उस शक्ति का कार्य क्या हो रहा है? कि वह जो खलरूप और रसरूप जो परिणत हुये पुद्गलों को, उनमें से **जिन्हें खलरूप परिणमाया था उन्हें तो हड्डी, चर्म,** चर्म यानी त्वचा, चमड़ी **इत्यादि स्थिर अवयवरूप परिणमावे और जिन्हें रसरूप परिणमाया था, उन्हें रुधिर-शुक्र इत्यादि द्रव अवयवरूप परिणमावे।** यानी खून है, वह लिंफ जो है, यानी पानी जैसा निकलता है, ये सारे कैसे हैं? द्रवरूप, प्रवाहीरूप, लिक्विडरूप हैं। हां, **ऐसी जो शक्ति होती है, उसे शरीरपर्याप्ति कहते हैं।**

अपनी भाषा में, शरीरपर्याप्ति का कार्य क्या है? जो खलरूप यानी सॉलिड है उसमें से शरीर के सॉलिड ऑर्गन्स यानी अवयव बनेंगे और जो लिक्विड है – रसरूप है, उसमें से रसरूप ऑर्गन्स यानी लिंफ, खून आदि बनेंगे। यह उसमें से अलग-अलग अवयवों में डेव्हलपमेंट जो होती है, उसको कहेंगे शरीरपर्याप्ति। यह कार्य केवल शुरुआत में होता है, ऐसा नहीं है। पूरे लाईफ टाइम तक - पूरे जीवन भर, हर समय जीव शरीर संबंधी नये-नये परमाणुओं को ग्रहण करता है और उन परमाणुओं को शरीर के अन्य-अन्य अवयवरूप परिणमाता रहता है। ये सारे जितने अवयव बने हैं न? हं, ह्यूमन बॉडि के लिये हम देखते

हैं, ब्रेन की रचना हुयी, हार्ट की हुयी, लिव्हर की हुयी, किडनी की हुयी। एक किडनी ट्रान्स्प्लांट या हार्ट ट्रान्स्प्लांट करना है, तो कितने डॉक्टरों की फौज होती है वहां पर। कितने पैसे खर्च करना पडते हैं और जब ये ऑर्गन्स बने तो क्या-क्या किया था? कितने डॉक्टर इकट्ठे होकर यह हार्ट बनाया था, लिव्हर बनाया या किडनी बनायी? क्या-क्या हुआ? हां, क्यों? *श्रोता: नामकर्म ने...* नामकर्म के उदय में अपने आप यह सब रचना हुयी है। परंतु उसमें थोड़ा बिगाड़ हो जाता है तो हम दौड़ते हैं, हं। *श्रोता: एक ही डॉक्टर ने बना दिया सब।* देखो, यह हमें विश्वास नहीं है न कि हम डॉक्टर के पास नहीं जायेंगे तो जिंदा कैसे रहेंगे? यह डॉक्टर तो भगवान हो गया। चिंता नहीं करना, मैंने तीस साल तक प्रॅक्टिस की है। मुझे मालूम है डॉक्टरों पर कितना भरोसा होता है? यह जीव जितने चक्कर मंदिर के नहीं काटता है उतने चक्कर डॉक्टर के पास काटता है। *श्रोता: सही है।* यहां मंदिर में बैठने के लिये फुरसत नहीं है, डॉक्टर के वहां तो घंटों तक बितायेगा, वहां वेटिंगरूम में।

पुनश्च, खलरूप, यह फिर पढ़ रही हूं मैं। **खल-रस भागरूप परिणत पुद्गलों में जिन्हें खलरूप परिणमाया था, उन्हें तो हड्डी-चर्म इत्यादि स्थिर अवयवरूप परिणमावे और जिन्हें रसरूप परिणमाया था, उन्हें रुधिर-शुक्र इत्यादि द्रव अवयवरूप परिणमावे, ऐसी जो शक्ति होती है, उसे शरीरपर्याप्ति कहते हैं।** हमने दो पर्याप्तियों के नाम देखे थे, एक तो आहारपर्याप्ति और दूसरी शरीरपर्याप्ति। आहारपर्याप्ति उस शक्ति को कहते हैं जिसमें ग्रहण किये हुये परमाणुओं को खलरूप और रसरूप परिणमाने की जीव की जो शक्ति होती है। ऐसा निमित्तपना बनता है। शरीरपर्याप्ति जीव की उस शक्ति को कहते हैं, जिसके निमित्त से खल में से खल अवयव होते हैं, रस में से रस अवयव होते हैं। शरीर के जो अलग-अलग अवयव होते हैं उनकी रचना होती है। अब जो शरीर होगा उस संबंधी जो कुछ रचना होती है उसको समझना है। आप कहेंगे वह वैक्रियिक शरीर में हड्डी कहां होती है, हं? तो उनकी जो शरीर की रचना है, वहां वह शरीरपर्याप्ति का कार्य समझ लेना।

श्रोता: इन शक्तियों की वृद्धि कब होती है? चालू ही होती है न, पहले ही समय से शुरुआत तो हो गयी। क्योंकि लब्धिअपर्याप्त भी जीव है, तो उसका भी शरीर है, उस संबंधी कुछ तो रचना हुयी है वहां पर। बात ख्याल में आती है न? वह पूर्णता को नहीं पहुंचनेवाला, वहीं मरनेवाला है। मान लेते हैं संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव है, लब्धिअपर्याप्त है, उसकी छहों पर्याप्ति शुरू हो गयी हैं। परंतु पहली पर्याप्ति भी पूर्णता को नहीं पहुंची उसके

पहले वह मर जाता है। यानी शरीर के बहुत सारे अवयव वगैरह बन गये हैं ऐसी कोई बात नहीं है। जैसा भी कुछ होता है क्योंकि पहली पर्याप्तिवाले अंतर्मुहूर्त में क्या-क्या बनेगा? तो उसी पहली पर्याप्ति पूर्ण होने से पहले उसका मरण हो जाता है। यानी जो सम्मूर्च्छन पंचेन्द्रिय, कौनसा? लब्धिअपर्याप्त मनुष्य जिसको सम्मूर्च्छन मनुष्य कहते हैं, उसके हाथ होंगे, पैर होंगे, नाक होगी, ऐसा कुछ नहीं है। पुद्गल का कुछ ढेर होगा वहां पर और वह भी हमें दिखायी नहीं देगा, क्योंकि इतनी सूक्ष्म उसकी अवगाहना होती है।

श्रोता: सभी पर्याप्ति शुरू होती हैं तो उसमें अंगोपांग वगैरह?

वे सब होंगे। मनुष्य में उत्पन्न होगा तो वहां औदारिकशरीर आंगोपांग का भी उदय होगा परंतु शरीर और उसके अंग और उपांगों की ऐसी पूर्ण रचना नहीं होगी। हां मनुष्य है तो उसके आंगोपांग नामकर्म का उदय तो होगा ही होगा क्योंकि जो त्रस जीव हैं उनके शरीर आंगोपांग का भी उदय शरीर नामकर्म के साथ चालू हो जाता है। अभी अपना समय यहां पूरा होने को आया है, कोई प्रश्न है तो पूछो इन दो पर्याप्तियों के बारे में। *श्रोता: पर्याप्ति कारण है तो प्राण कार्य हुआ? क्या वह शक्ति कहलायेगी?* नहीं, उसका कार्य कहलायेगा। शक्ति की व्यक्तता चालू हो गयी है और वह प्राण भी तभी से होते हैं। *श्रोता: कोई जीव सम्यक्त्व के साथ अर्धपुद्गलपरावर्तन बाद में मोक्ष प्राप्त करे, क्या ऐसा हो सकता है?* हां, अर्धपुद्गलपरावर्तन के होते-होते ही उसको मोक्ष प्राप्त हो जाता है। सम्यक्त्व छूट जाये तो इतना काल लग सकता है।

श्रोता: जो मनुष्य, तिर्यंच, जिनकी विक्रिया होती है, ऋद्धि होती है उन्हें उसके विक्रिया के समय क्या वैक्रियिक नामकर्म का उदय पाया जाता है? या औदारिक...? वह औदारिकशरीर की ही विक्रिया करते हैं और उनके वैक्रियिकशरीर नामकर्म का सत्ता में होना आवश्यक है। यह बाकी की चर्चा हम बाद में करेंगे, अभी अपना समय होता है, आप लिखितरूप से दे देना।

श्रोता: ये पर्याप्ति किसकी शक्ति है? जीव की शक्तिया हैं ये।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

८. छह पर्याप्ति, समयप्रबद्ध

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। यहां पर्याप्ति की बात चल रही थी अपनी। विषय तो हमें द्रव्यपरावर्तन का लेना है जिसको पुद्गलपरावर्तन भी कहते हैं। उसको समझने के लिये हमने शुरुआत की थी। तो हमने दो लाइन पढ़ी थी, है न? क्या पढ़ा था? कि एक समय में जीव अपने शरीर और पर्याप्ति के योग्य परमाणुओं को ग्रहण करता है। किसीका प्रश्न है कि क्या ये सभी परमाणु एक समय में पूरे ग्रहण करता है क्या? तो कहते हैं हर समय में करता रहेगा; कब तक? आयु के अंत समय तक। मरण के समय तक; मरण के समय में भी वह शरीर संबंधी अनंत परमाणु ग्रहण करेगा। फिर छोड़ेगा कब? तो जीव ही शरीर को छोड़कर चला जायेगा। ग्रहण तो किया न परमाणुओं को? यह कैसे-कैसे निषेक रचना होती है? उसमें क्या-क्या होता है? वह बात हम बाद में देखेंगे। अभी तो यह जो हमने वाक्य पढ़ा है कि शरीर और पर्याप्ति के योग्य परमाणुओं को ग्रहण करता है तो शरीर तो मालूम है हमें, परंतु पर्याप्ति क्या है? इसका विषय चल रहा है।

संज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा बात चल रही है तो वहां उनके छह पर्याप्ति होती हैं, हमने देखी थी; उनके नाम भी हमने देखे थे। आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति, इन्द्रियपर्याप्ति, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति और मन:पर्याप्ति। इन छह की छह पर्याप्तियों की शुरुआत पहले ही समय से, शरीर धारण करने के पहले समय से होती है। विग्रहगति में पर्याप्ति की शुरुआत नहीं होती है। जिस समय शरीर के परमाणु ग्रहण हुये हैं उसी समय से छह पर्याप्ति की उत्पत्ति यानी शुरुआत हो गयी है। उसकी पूर्णता एक-एक अंतर्मुहूर्त में होती है। पर यह पर्याप्ति कहना किसको, वह बात अपनी चल रही है। आहारपर्याप्ति किसे कहना कि शरीर नामकर्म के उदय से जीव जिन परमाणुओं को ग्रहण करता है; उन परमाणुओं को खलरूप और रसरूप परिणमाने की जीव की जो शक्ति है; उस शक्ति को आहारपर्याप्ति कहेंगे। उसकी पूर्णता होने को पर्याप्त कहेंगे, अपूर्णता रहने पर अपर्याप्त कहेंगे। पर्याप्ति तो शक्ति को कहते हैं। इस शक्ति का जो कार्य है वह तो लाइफ टाइम तक चलेगा। उसकी तो चर्चा हम करेंगे आगे। एक नंबर की आहारपर्याप्ति का हमने स्वरूप देखा था। जीवकाण्ड पहला भाग पृष्ठ संख्या २५४, टू फिफ्टी फोर, इंग्लिश भाषा

हमें नजदीक की हो गयी है। समझने से मतलब है, भाषा से हमें कोई विरोध नहीं है। आगे देखते हैं, शरीरपर्याप्ति को भी हमने देखा था कि जो खलरूप हुये हैं, उन स्कंधों को खल अवयवरूप और जो रसरूप परिणमित पुद्गल स्कंध हैं, उनको रस अवयवरूप परिणमाने की जो शक्ति है, उसको हम यहां शरीरपर्याप्ति कहेंगे।

अब इन्द्रियपर्याप्ति किसको कहते हैं? उसकी बात हम देखेंगे। इन्द्रियों की जो रचना है, द्रव्येन्द्रियों की रचना है वह तो शरीरपर्याप्ति के अंतर्गत आ गयी क्योंकि वे शरीर के अवयव हैं। द्रव्येन्द्रियां बनेगी वे तो शरीर की रचना में उनको हम गर्भित कर देंगे। परंतु जहां ये द्रव्येन्द्रियां बनी हैं; देखो, इन्द्रियां क्या कार्य करती हैं? इन्द्रियां यानी वे तो जड़ इन्द्रियां हैं, परंतु वहां के आत्मप्रदेश जानने का कार्य करते हैं। क्या कार्य करते हैं? तो अपने-अपने विषय को ग्रहण करते हैं। इसका अर्थ क्या है? *श्रोता: चक्षुइन्द्रिय।* चक्षुइन्द्रिय किसका ग्रहण करेगी, खट्टे का या मीठे का? अपने विषय का। चक्षुइन्द्रिय का विषय क्या है? तो वर्ण कहो, रूप कहो उसीका वह ग्रहण, ग्रहण करने का अर्थ है जानना। ग्रहण यानी लेना, ऐसा अर्थ नहीं है।

समयसार में भी कहते हैं। क्या? आत्मा को ग्रहण करना और राग को छोड़ना। तुम आत्मा को ग्रहण करना यानी लेना चाहते हो और राग को निकाल बाहर करना चाहते हो। तो कहते हैं आत्मा को ग्रहण करो यानी जानो और राग को छोड़ो यानी जानना छोड़ो। क्योंकि उसको भेद करके हमने अपने से अलग उसको रख दिया है और आत्मा को ग्रहण करो यानी आत्मा को जानते रहो। यहां पर भी ग्रहण करने का अर्थ क्या है? इन्द्रियां अपने विषय को ग्रहण करती हैं, तो रसनेन्द्रिय अपने विषय को ग्रहण करती है यानी लड्डू खाती है। है न? तो क्या होता है? जानती है; तो ज्ञान का कार्य है जानना। यहां इन्द्रियज्ञान की अपेक्षा बात चल रही है। तो यहां देखो, अलग-अलग जो इन्द्रियां बनी हैं, वहां के जो आत्मप्रदेश हैं, वहां से उन इन्द्रियों के विषयों को जानने का, ग्रहण करने का कार्य होता है। तो वहां से जानने की वह जो शक्ति उत्पन्न होती है उसको इन्द्रियपर्याप्ति कहेंगे। इन्द्रियों की रचना तो शरीर का अंग है तो यह द्रव्येन्द्रियों की रचना शरीरपर्याप्ति में आ गयी परंतु जिसको हम कहेंगे न, उपयोगरूप कार्य वहां से होता है, हाथ तो वर्ण का ग्रहण नहीं करते हैं। वर्ण को जानने का कार्य तो हाथ से नहीं हो रहा है; इस स्पर्शनइन्द्रिय से नहीं हो रहा है। स्पर्शनइन्द्रिय मात्र स्पर्श की जो पर्याय है पुद्गल की, उसको जानेगी। वह ठंडा है या गरम

है, कड़ा है या नरम है, यह स्पर्शनइन्द्रिय के द्वारा पता चलेगा। चक्षुइन्द्रिय के द्वारा क्या पता चलेगा? काला है या गोरा है या लाल है, उसका आकार कैसा है? शेप जिसको हम कहेंगे। तो उसको चक्षुइन्द्रिय के द्वारा हम ग्रहण करेंगे यानी जानेंगे। अब इसकी परिभाषा हम यहां से देखेंगे। इन्द्रियपर्याप्ति किसको कहना? यह तीसरे पॅरेग्राफ में बताया है।

पुनश्च इन्द्रियरूप मति, श्रुतज्ञान और चक्षु, अचक्षुदर्शन का आवरण इसका अर्थ होता है मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, चक्षुदर्शनावरण और अचक्षुदर्शनावरण ये तो कर्म के नाम हुये **और वीर्यान्तराय** इन सब कर्मों के **क्षयोपशम द्वारा उत्पन्न** जीव पंचेन्द्रिय में उत्पन्न हुआ है तो पांचों इन्द्रियों संबंधी जाननेरूप उसका क्षयोपशम तो वहां पाया जाता है। है न? जो एकेन्द्रिय में जाता है उसके बस एक स्पर्शनइन्द्रिय संबंधी जानने का कार्य चलेगा। तो उसका क्षयोपशम उतना ही है। पंचेन्द्रिय हुये फिर भी हमारा क्षयोपशम यानी ज्ञान का उघाड़ हीनाधिक होता है। तो जैसा यह हीनाधिक है उसको यहां क्षयोपशम कहेंगे। वह क्षयोपशम के डिटेल में अभी हम नहीं जायेंगे। तो कहते हैं कर्मों में क्या अवस्था हो रही है? ये ज्ञानावरण का, दर्शनावरण का और वीर्यान्तराय का क्षयोपशम होता है। यह कर्म की अवस्था हुयी। जीव में क्या हो रहा है? जीव में ज्ञान का उघाड़ है, दर्शन का जो कुछ कार्य चलेगा और उसका वीर्य भी है, वह जीव का कार्य है। यह निमित्त-नैमित्तिक संबंध है फिर भी हम कर्म की तरफ से बात कर रहे हैं कि वहां कर्मों का क्षयोपशम है। तो उससे **उत्पन्न जो आत्मा के यथायोग्य।** यथायोग्य, क्योंकि पांच इन्द्रियां अलग-अलग हैं। जिस इन्द्रिय की बात करेंगे उसके लिये **द्रव्येन्द्रिय के स्थानरूप प्रदेशों से** जहां वह द्रव्येन्द्रियों का स्थान है, चक्षुइन्द्रिय के लिये अंदर यहां, कर्णेन्द्रिय के लिये अंदर यहां, जहां से वह ग्रहण करने का कार्य होता है। ग्रहण यानी जानने का कार्य तो आत्मा के प्रदेश करते हैं। इन्द्रियों का तो निमित्त बनता है बीच में। तो उस स्थान में जो प्रदेश हैं उन **प्रदेशों से वर्णादिक ग्रहणरूप उपयोग की शक्ति।** वहां के आत्मप्रदेशों में यह वर्ण को जानने की उपयोगरूप शक्ति यहां होगी। तो यह जो शक्ति की उत्पत्ति होती है, यह उपयोगरूप जो शक्ति है **जाति नामकर्म के उदय से उत्पन्न होती है, उसे इन्द्रियपर्याप्ति कहते हैं।**

एकेन्द्रियजाति नामकर्म से बस एक स्पर्शनइन्द्रिय संबंधी उसके वह जानने की उपयोगरूप शक्ति होगी। द्वीन्द्रियवाले जीवों के स्पर्शनइन्द्रिय और रसनेन्द्रिय में जितनी जानने की शक्ति है वह उनके उपयोगरूप ग्रहण करने की वहां शक्ति उत्पन्न होगी इसको

कहेंगे इन्द्रियपर्याप्ति और सभी इन्द्रियां तो अपने-अपने ही विषय को जानती हैं। भले एक ही शरीर की हैं, एक ही ज्ञान की पर्याय है, प्रत्येक इन्द्रिय अपने-अपने विषय को जानती है। मतिज्ञान किसको कहेंगे हम? इन्द्रिय और मन के द्वारा जो ज्ञान होता है; उस मतिज्ञान का दूसरा नाम मालूम है कोई? हमने पहले बहुत बार बताया था यहां। आभिनिबोधिक ज्ञान। इतना लंबा-चौड़ा नाम है, क्या है? आभिनिबोधिक। आभि यानि अभि से शब्द शुरू हुआ; अभि से आभि शब्द तैयार हुआ; आभि यानी अभिमुख। इन्द्रियां अपने विषय के अभिमुख होकर जानती हैं, सन्मुख होकर जानती हैं। आंखों से सामनेवाली चीज़ दिख रही है, मुझे पीछे क्या चल रहा है वह दिखायी नहीं दे रहा है। तो इन्द्रियों के अभिमुख पदार्थों को इन्द्रियां जानती हैं। तो कर्णेन्द्रिय के द्वारा जो हम सुनते हैं वे जो शब्द के जो परमाणु हैं वे जब यहां अथडाते-टकराते हैं तब वहां सुनायी देने का कार्य होता है।

इन्द्रियां उनके सन्मुख पदार्थों को जानती हैं। स्पर्शनेन्द्रिय भी उसके कॉन्टॅक्ट में आये हुये पदार्थों को जानती है। इसको कहेंगे इन्द्रियां अपने विषय को अभिमुख होकर जानती हैं इसलिये 'आभि'। फिर 'नि' क्यों कहा? अपने निश्चित विषय को जानती हैं। अभी सुन-सुनकर बहुत थक गये, कंटाला आ गया, सिर भारी हो गया इसलिये जरा आंखों को बता दें कि अभी आप जरा सुनने का कार्य करो। हं? छह-छह घंटे सुनकर हम थक गये। तो आंखें सुनेगी? हं? नहीं सुनेगी। तो इन्द्रियां अपने नियत, निश्चित विषय को ही जानती हैं यानी आभिनिबोधिक ज्ञान होता है। इसलिये मतिज्ञान का ही दूसरा नाम है आभिनिबोधिक ज्ञान। शास्त्र में ऐसा कहेंगे आभिनिबोधिक, यह तो मतिज्ञान का दूसरा नाम है, बस इतना ही। तो यह इन्द्रियपर्याप्ति क्या होती है? कि जहां द्रव्येन्द्रियों की रचना हुयी है वहां के आत्मप्रदेशों में अपने-अपने विषय को जानने की जो शक्ति है उसीको इन्द्रियपर्याप्ति कहेंगे। जानने का जो कार्य होगा, कब तक? पूरे लाइफ टाइम तक उसको हम इन्द्रियप्राण कहेंगे। पर्याप्ति तो कारण है प्राण उसका कार्य है। जिसकी यह इन्द्रियपर्याप्ति नामक शक्ति उत्पन्न हुयी है उसके इन्द्रियों के द्वारा जानने का कार्य वहां से चलेगा। अभी तक हमने तीन पर्याप्ति देखी; कौन-कौनसी? आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति और इन्द्रियपर्याप्ति। अब आगे बढ़ेंगे – श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति। जो पर्याप्त नामकर्मवाले जीव हैं, अपर्याप्त नामकर्मवालों के भी वह पर्याप्ति शुरू तो होती है परंतु उसकी पूर्णता होने ही वाली नहीं है। तो यहां कहते हैं, अभी इसको पढ़ेंगे तो ख्याल आयेगा।

पुनश्च तेईस जाति की वर्गणा में से, ये तेईस जाति की वर्गणा किसमें होती हैं? पुद्गल में। यह वर्गणा किसको कहेंगे? वर्ग के समूह को वर्गणा कहेंगे। सिंगल-सिंगल-सिंगल-सिंगल परमाणु होंगे उनको भी यहां वर्गणा नाम देंगे। दो-दो परमाणुओं के स्कंध हैं उनको भी वर्गणा कहेंगे वे द्व्यणुक होंगे। तीन अणुवाले, चार अणुवाले, संख्यातवाले, अनंतवाले वे अनंतानंत तक चले जायें फिर वे अनंत परमाणुओं की जो स्कंधरूप जो वर्गणा है उसको हम आहारवर्गणा नाम देंगे। फिर उसके बाद, वह तो आहारवर्गणा जीव के द्वारा ग्रहण होती है। फिर अग्राह्यवर्गणा बीच में होगी। फिर तेजसवर्गणा, इसतरह से ये अलग-अलग वर्गणायें हैं। हम उसके डिटेल में नहीं जायेंगे। ऐसी तेईस वर्गणायें हैं। तेईसवीं वर्गणा का नाम मालूम है? हां, निलेश? याद नहीं, कोई बात नहीं। एक ही स्कंध है जो लोकाकाश प्रमाण है बड़ा; महास्कंध, तो उसमें कितने अनंतानंत परमाणु होंगे? पूरा मिलकर एक स्कंध है वह। अभी उसके डिटेल में हम नहीं जायेंगे। जीव इनमें से कितना ग्रहण करता है। ग्रहण करने की यानी लेने की बात है। इनमें से कितनी वर्गणाओं को जीव ग्रहण करता है? पांच। कौन-कौनसी? हमें मालूम है। आहारवर्गणा, तेजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा और कार्माणवर्गणा। इनको जीव ग्रहण करता है। अब यही बात यहां कहेंगे। इन **तेईस वर्गणाओं में से आहारवर्गणारूप पुद्गल स्कंधों को, श्वासोच्छ्वासरूप परिणमाने की शक्ति।** श्वासोच्छ्वास होता है – क्या होता है? हम तो पंचेन्द्रिय अभी यह नाक से श्वास अंदर लेते हैं, फिर फेफ़डों में जो कुछ प्रोसेस होकर फिर वह श्वास बाहर छोड़ते हैं, है न! इतना मात्र है, तो एकेन्द्रियों को कौनसी नाक होती है? सर्वांग से होता है यानी हम कहेंगे जो सेल लेव्हल पर, टिशू लेव्हल पर जो ऑक्सिजन इनटेक – आउटपुट जो कुछ होता है उसको यहां श्वासोच्छ्वास में गिनना है। क्योंकि नाक तो सब जगह नहीं दिखेगी, ना ही लंग्ज दिखेंगे सब जगह। क्योंकि हर एक जो द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय उनके शरीर की अलग-अलग रचना है तो यहां ऐसा समझना कि... *श्रोता: सांप के कान होते हैं? सांप पंचेन्द्रिय हैं?* हां।

देखो, यह श्वासोच्छ्वास कहेंगे न, अपना यह बच्चा जो श्वास लेता है गर्भ के बाहर निकलने के बाद वह लंग्ज से श्वास लेता है। तो उसका श्वासोच्छ्वास अंदर होगा कि नहीं गर्भ में? क्योंकि श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति होते हुये श्वासोच्छ्वास शुरू हुआ। हां, उसके जो ब्लड में से जो ऑक्सिजन इनटेक – आउटपुट हो रहा है वहां पर उसको हम श्वासोच्छ्वास

कहेंगे। हां, मेडिकल में उसको श्वास नहीं कहेंगे। वह बाहर निकलने के बाद वह लंग्ज में से हवा लेना-छोड़ना वहां चालू हो जायेगा उसका। तो यह श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति यानी क्या? यह आहारवर्गणा का ग्रहण करके वह श्वासोच्छ्वासरूप परिणमाने की जो शक्ति है उसको श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति कहते हैं। अब आगे बढ़ते हैं। *श्रोता: बीच में जरा प्रश्न था – प्रत्येकवाले चक्षु जो होते हैं, उसमें करण कैसा होता है?* अभी उसकी चर्चा हम बाद में करेंगे अलग से, अभी अपना विषय आगे बढ़ायेंगे।

पुनश्च स्वर नामक नामकर्म के उदय से भाषावर्गणारूप पुद्गल स्कंधों को सत्य, असत्य, उभय, अनुभय भाषारूप परिणमाने की शक्ति उत्पन्न होती है। ये सत्य-असत्य को भूल जाओ; हम यहां कहेंगे भाषावर्गणारूप पुद्गल स्कंधों को भाषारूप, शब्दरूप परिणमाने की जो जीव की शक्ति है, क्योंकि हम कहते हैं अरे अभी-अभी बोल रहा था, बोलते-बोलते क्या हो गया? हार्ट फेल हुआ और निकल गया जीव, चल पड़ा। तो अभी क्यों नहीं बोल रहा है? वहां तो सारे हैं न, वहां मुंह भी है, वहां तो व्होकल कॉर्ड भी है, सब कुछ है, स्वरयंत्र भी सब कुछ हैं; अभी बोल नहीं रहा है। तो यहां क्या कहते हैं? कि भाषावर्गणारूप पुद्गल स्कंधों को भाषारूप परिणमाने की जो शक्ति उत्पन्न होती है, यह जीव के शक्ति की बात है उसको भाषापर्याप्ति कहेंगे। यह अलग-अलग नामकर्म के उदय उसमें निमित्त होते हैं। **पुनश्च मनोवर्गणारूप जो पुद्गल स्कंध, उनको अंगोपांग नामक नामकर्म के बल से द्रव्यमनरूप परिणमाने की शक्ति होती है। उस द्रव्यमन के आधार से,** यह तो द्रव्यमन की रचना तो अंगोपांग नामकर्म के उदय से तो होगी। वह तो शरीर का एक अंग है। **उस द्रव्यमन के आधार से मन का आवरण,** मन का आवरण यानी नोइन्द्रियावरण कहते हैं उसको। मन संबंधी जो जानने का कार्य है न? मन के द्वारा जो जानने का कार्य होता है, संज्ञी पंचेन्द्रिय जानते हैं उसमें भी मन संबंधी हीनाधिक क्षयोपशम होता है। तो कहते हैं मन संबंधी जो ज्ञान का आवरण, ज्ञानावरण कर्म जो है उसका क्षयोपशम और **वीर्यान्तराय के क्षयोपशम विशेष से** यानी हम मन के द्वारा क्या करते हैं? तो **गुण-दोष का विचार, अतीत को याद करना,** जो हमने सुना है वह फिर से याद आता है यह किसके द्वारा हो सकता है? मन के द्वारा। असंज्ञी तक के जीवों को यह स्मरण में लाना वगैरह बातें नहीं हो सकती। गुण-दोष का विचार, हेय-उपादेय वे कुछ नहीं समझ सकते। ज्ञान नहीं होता यह नहीं है, परंतु यह हेय-उपादेय की बात वे उसमें से

सोच नहीं सकते। **अनागत में याद रखना,** अतीत को याद करना और अनागत में याद रखना; क्या कहना चाहते हैं? अतीत को याद करना यानी अभी वर्तमान में हम पहले बीती हुयी बात को याद करते हैं कि हम बचपन में वहां गये थे। मुझे याद है मैं तीसरी कक्षा में थी तब श्रवणबेलगोला में गयी थी, वहां का महामस्तकाभिषेक था, कोई इ. स. १९५३ की बात होगी वह। तो यह भूतकाल की बात हमने याद की तो यह मन के द्वारा हो सकता है। अब अनागत में याद रखना, हम परीक्षा के लिये स्कूल में तैयारी करते थे। वह अनागत यानी आनेवाले के लिये याद रखते थे, है न? यहां हम कोई चीज़ रटते हैं, याद करते हैं, हमें भविष्य में उसको स्मरण में लाना है तो **अनागत में याद रखना इत्यादिरूप भावमन के परिणमाने की शक्ति** यानी मन के द्वारा जो-जो कार्य होता है, द्रव्यमन तो जैसे आपका कॉम्प्युटर है, वह सारा द्रव्यमन का कार्य है। यह कॉम्प्युटर के सामने बैठकर उसको जो कोई ऑर्डर देना, चलाना, उसका ग्रहण करना, जानना ये कार्य तो आप स्वयं वहां करते हैं।

तो आजकल आप जो कॅल्क्युलेटर से जो कोई चीज़ें करते हैं वह द्रव्यमन के द्वारा जीव स्वयं करता है। यह रचना स्वयमेव वहां हुयी है और जीव के, अभी आजकल क्या हमने तरक्की कर दी। पहले तो हिसाब-बिसाब तो फटाफट होते थे। अभी कॅल्क्युलेटर के बिना हमें हिसाब भी नहीं करने को आता है। जो वहां पर भी सेव्ह करते हैं, तो बाद में उसको हम निकाल सकते हैं। *श्रोता: डिलीट भी कर सकते हैं।* डिलीट भी करना है? अच्छा, तो ऐसे ही, डिलीट की बात क्यों करते हैं सेव्ह की करो न! तो यहां मन के द्वारा ये बातें होती हैं, इसलिये कहते हैं यह मन का जो कार्य है, जाननेरूप जो कार्य है वह उसमें उपयोगरूप जो शक्ति वहां उत्पन्न होती है **उसको** हम कहेंगे **मन:पर्याप्ति**। यानी तब उसका कार्य चलेगा, उस संबंध में। *श्रोता: असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव को धारणा का भेद नहीं रहेगा?* हां? नहीं रहेगा। असंज्ञी पंचेन्द्रिय में वह कार्य नहीं होगा। धारणावाली बात नहीं होगी। धारणा तक वह नहीं पहुंचेगा यानी बाद में स्मरण करने का कार्य वहां नहीं होगा। *श्रोता: अतीत की जो बातें हैं वह कहां पर स्टोअर होती हैं?* हां, आपका कहना हैं अतीत की बातें कहां स्टोअर होती हैं? हम पुद्गल की अपेक्षा से बात करते हैं, कहां स्टोअर होती हैं? यह तो ज्ञान की योग्यता है कि वह ज्ञान में ही स्टोअर होती है जिसको हम कहेंगे संस्कार। यह संस्कार यानी हम बच्चों पर संस्कार डालते हैं – कैसे बैठना, कैसे उठना,

कैसे खाना – उन संस्कारों की बात नहीं है। जब हम कहते हैं न, स्वाध्याय करो अभी ये संस्कार आगे के भव में काम आयेंगे। तो कहते हैं हम संस्कार में संतुष्ट होकर बैठते हैं। कौनसे संस्कार? वह कौनसे गुण की पर्याय है? अभी तो बताया न मैंने, ज्ञान गुण की पर्याय। संस्कार यानी वह धारा ज्ञान की हर पर्याय में चलती है। कहां स्टोअर होती है? ज्ञान की पर्याय में स्टोअर होती है।

यह धारणारूप क्षयोपशम ज्ञान जो है वह ज्ञान की हर पर्याय में बना रहता है, उसे संस्कार कहते हैं। जाननेरूप कितना ग्रहण कर सकते हैं उसको कहते हैं क्षयोपशमलब्धि और जो जाननरूप कार्य चलेगा वह है उपयोग। क्षयोपशमज्ञान की पर्याय मात्र उपयोगरूप नहीं हैं। 'लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम्' कहते हैं; भावेन्द्रिय यानी क्षयोपशमज्ञान, जो उघाड़रूप है; वह कैसा है? लब्धि और उपयोग मिलकर वह पूरी ज्ञान की पर्याय है; यानी जो-जो धारणा तक पहुंचा है, उसकी वह संस्काररूप जो धारा है वह हर पर्याय में चली आ रही है। तभी तो हमने जो सेव्ह किया है वह बाद में उसीको रिप्रोड्यूस कर सकते हैं, हम याद में ले सकते हैं। जैसे हम जातिस्मरण की बात सुनते हैं, है न? यह तो ऋषभदेव के ज़माने में हुआ था न? राजा श्रेयांस को नौ भव पहले की बात जातिस्मरण से ज्ञान में आ गयी, जब उन्होंने मुनिराज को आहारदान दिया था। तो नौ भव तक वे संज्ञी पंचेन्द्रिय में रहे इसलिये वह याद आया। बीच में एकेन्द्रिय में चले जाते कोई तो वह तो धारा टूट जाती संस्कार की, *श्रोता: डिलीट हो जाती है।* डिलीट हो जाती है। तो जो संस्काररूप से चला है और वह हम यदि उपयोग में लेंगे तो कार्य होगा। हम कहेंगे अभी संस्कार डालो, अभी संस्कार डालो, आगे के भव में काम आयेंगे। तो हम इस भव में तो बस मौज-मजा करना चाहते हैं। बस कुछ पढ़ लो, एकाध घंटा स्वाध्याय करो और आगे के भव में संस्कार काम आयेंगे । तो मिथ्यात्व के संस्कार कब से हैं? *श्रोता: अनादि से हैं।* तो वे संस्कार जोर करेंगे या यह हमारा एक घंटे का स्वाध्याय जोर करेगा, हं? जो कार्य अभी इस समय, इस भव में हो सकता है वह हम संस्कार के नाम पर आगे करना चाहते हैं।

श्रोता: यानी उसे उपयोग में लिया तो ही धारा चालू हो जायेगी? नहीं, नहीं, नहीं, धारणा तो चल रही थी। उस धारणा में से जब हम उपयोग में लेंगे तब जाननेरूप कार्य हुआ ऐसा हम कहेंगे। जैसे हमने बचपन में कुछ पढ़ा था और अभी उसको स्मरण में लिया है; या

हमारे पिताजी कुछ कहते थे तभी तो हमने गौर नहीं किया। बारंबार कहते थे अभी याद आकर उसी बात को हम फॉलो करते हैं। तो हमने उसको फिर से याद किया। ऐसे ही किसीने पूर्वभव में अभ्यास किया है तत्त्वसंबंधी और तभी उसको मान लेते हैं सम्यग्दर्शन नहीं हुआ है। इस भव में उसकी ज्ञान की संस्काररूप पर्याय चल रही थी। उसने समयसार पढ़ा और उसको वह बात क्लिक हो गयी, उसका सही अर्थ ख्याल में आया यानी उसने उसको उपयोग में ले लिया, जान लिया। तो हम कहेंगे वह जो धारणा तक पहुंचा था और जो संस्काररूप से चल रहा था वह अभी उपयोग में आया तो उसका कार्य हुआ। केवल वह संस्कार में ही पडा रहा तो क्या फायदा है? *श्रोता: संस्कार यानी ज्ञान की पर्याय है?* ज्ञान की पर्याय है। देखो, जिसको हम धारणा कह रहे हैं, हैं न? उसका सही नाम संस्कार है। धारणा उसको कहते हैं जो संस्कार का कारण है। इसको हम कहेंगे सेव्ह किया, सेव्ह किया यानी धारणा तक पहुंचा। मराठी में कहेंगे हमने खूणगांठ बांधली। यानी क्या किया? हमने ऐसा मन में पक्का किया कि हमें यह याद करना है, हमने उसको बराबर सहीरूप से निर्णय करके धारणा में लिया। तो उसका संस्काररूप जो ज्ञान की हर पर्याय में चलता है उसको संस्कार कहते हैं। परंतु हम अपनी बोली-भाषा में उसीको धारणा कह देते हैं।

धारणा यह संस्कार का कारण है। जो धारणा तक पहुंचा है वही संस्काररूप से चल सकता है। परंतु एक बार धारणा में गये तो कायम वही चलता रहेगा ऐसी भी बात नहीं है। आपकी भाषा में डिलीट भी हो जायेगा कहीं बीच में। *श्रोता: ज्ञान की पर्याय तो नष्ट हो जाती है?* ज्ञान की वह एक पर्याय नष्ट होती है, परंतु ज्ञान की दूसरी पर्याय में भी उतना जाननेरूप कार्य होता है। क्योंकि ऐसा तो हम कहेंगे प्रागभाव है, वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है। फिर भी दूसरी पर्याय उतना जाननेरूप कार्य कर रही है। देखो-देखो हम अभी बातें कर रहे हैं। मैंने कहा कि हम जान रहे हैं। तो मैंने 'ह' कहा, आपने सुना उसका ज्ञान हुआ। मैंने 'म' कहा, उसका ज्ञान हुआ। तब तक आप 'ह' को भूल गये तो क्या हुआ? पूरा वाक्य सुनने तक के, पूर्व के संस्कार चल रहे हैं कि नहीं? तभी तो पूरे वाक्य का अर्थ हमें ख्याल में आ जाता है। वह तो चलती रहती है बात। जैसे हम वह अगरबत्ती घुमाते हैं अंधेरे में, पूरा सर्कल दिखता है। क्यों दिखता हैं? पूर्व-पूर्व ज्ञान के संस्कार जिसको हम यहां इम्प्रेशन कहेंगे, चल रहे हैं अभी। वह जितना फास्ट होता है तो पहले के अभी संस्कार चल रहे हैं, आगे का ज्ञान हुआ है। तो हम वह सब जानते हैं – यह

पूरा जैसे ॲनिमेशन वगैरह में करते हैं। क्या करते हैं उसमें? वही बात है न? फिल्म दिखाते हैं। एक-एक फ्रेम सेपरेट है, उसको इतना फास्ट घुमाते हैं कि हमें ॲक्शन चल रही है ऐसा दिखता है। हमारे ज्ञान की एक-एक पर्याय सेपरेट है, परंतु उसके संस्कार जो चलते हैं उस कारण हमें तो कंटिन्युएशन में लगता है।

हमने छह प्रकार की पर्याप्ति देखी। तो जो जिसकी जितनी पर्याप्ति हैं, वह कौन नक्की करता है? वह सारा ऑटोमॅटिक है। जैसा-जैसा कर्मों का उदय होता है, वैसी-वैसी वे पर्याप्ति भी उसके होती हैं और उसी शरीर के संबंधी परमाणुओं का ग्रहण भी होगा। यानी जीव मरकर अन्यत्र चला जाता है। विग्रहगति के मोड़ के पहले शरीर के परमाणुओं का ग्रहण नहीं है। वहां पहुंचते ही शरीर के परमाणुओं का ग्रहण शुरू हो जाता है। तो किस जाति के परमाणुओं को ग्रहण करता है? तो अपने शरीर और अपनी पर्याप्ति के योग्य परमाणुओं का ग्रहण करता है। इतनी बात हमने अभी तक देखी।

श्रोता: क्षयोपशमज्ञान में तो एक समय में एक ही विषय का उपयोग लगता है लेकिन इधर छह पर्याप्ति हैं तो फिर उन छह पर्याप्तियों का प्रत्येक समय का उनका उदय आये तो उसको ज्ञान होगा क्या? आप का प्रश्न है, क्षयोपशमज्ञान का उपयोग एक टाइम में एक समय में एक जगह लगता है और यहां छह पर्याप्तियों की बात है। हां, यहां जो पर्याप्ति बनती है, इन्द्रियपर्याप्ति बनती है, यहां उपयोगरूप जानने की बात नहीं हो रही है, उस उपयोगरूप शक्ति की उत्पत्ति की बात है। शक्ति की उत्पत्ति सर्वत्र हो रही है। ऐसा नहीं है कि पहले चक्षुइन्द्रिय संबंधी शक्ति उत्पन्न होगी बाद में अन्य इन्द्रिय संबंधी। यह तो पर्याप्तियों का कार्य है। यहां उपयोगरूप, उसकी बात नहीं चल रही है। उपयोगरूप जानने का यह तो कार्य है; प्राण कहेंगे हम उसको, इन्द्रियप्राण कहेंगे। वह तो ॲट अ टाइम एक इन्द्रिय द्वारा ही होगा। पांचों इन्द्रियों के द्वारा हम एक साथ नहीं जान सकते। वहां फिर भी इम्प्रेशन कहो, संस्कार कहो, एक इन्द्रिय के द्वारा जानना होता है फिर दूसरे। आप कहेंगे हम आपको देख भी रहे हैं सुन भी रहे हैं, है न? तो वह तो इतना ऑल्टरनेटिव्हलि फास्ट होता है कि हमें ऐसा लगता है कि हम देख भी रहे हैं, सुन भी रहे हैं। हम बम्बईवाले तो पांचों इन्द्रियों का कार्य एक टाइम कर देते हैं। नहीं करते क्या? टीव्ही ऑन करते हैं, पंखा या एसी लगाते हैं, भोजन की थाली लेकर सामने बैठ जाते हैं। देखो हम स्वाद भी ले रहे हैं, स्पर्शनइन्द्रिय का विषय भी चल रहा है, सामने देख भी रहे हैं, सुन भी रहे हैं, सब कुछ एक

साथ करते हैं। आप करते हैं कि नहीं करते हैं? तो यह उपयोगरूप कार्य अलग बात है और उसकी शक्ति उत्पन्न होना अलग बात है। इन शक्तियों की उत्पत्ति को या शक्ति को हम इन्द्रियपर्याप्ति कहेंगे। उसका कार्य तो लाइफटाइम तक चलेगा। वह तो उपयोगरूप प्राण की बात है।

तो यहां हमने छह प्रकार के पर्याप्तियों की चर्चा की। अब यहां २५५ पेज पर आते हैं। **जितनी-जितनी अपनी पर्याप्ति हो,** जितनी-जितनी यानी संज्ञी पंचेन्द्रियों की छह हैं, द्वीन्द्रिय से असंज्ञी तक की पांच हैं, एकेन्द्रिय की चार हैं। तो **जितनी-जितनी अपनी पर्याप्ति हो, उन सबका प्रतिष्ठापन,** प्रतिष्ठापन यानी बिगिनिंग, **अर्थात् प्रारंभ तो युगपत्,** युगपत् यानी एक साथ, एक ही समय में **शरीर नामकर्म के उदय के पहले समय ही होता है।** यह शरीर नामकर्म का उदय कब प्रारंभ हुआ? विग्रहगति के अंतिम मोड़ के बाद जब जन्मस्थान पर पहुंचने का समय है उसी समय शरीर नामकर्म का उदय शुरू हुआ। विग्रहगति में शरीर नामकर्म का उदय नहीं पाया जायेगा। अन्य कुछ नामकर्म के उदय हैं वहां पर भी, परंतु शरीर नामकर्म का उदय तो जन्मस्थान में पहुचने पर होता है। तो कहते हैं वहां **पहले समय ही होता है, परंतु निष्ठापन,** निष्ठापन यानी **पूर्णता,** प्रतिष्ठापन यानी प्रारंभ हुआ जिसके छह पर्याप्ति हैं, छह की छह पर्याप्ति एक साथ चालू होगी। परंतु उनकी पूर्णता, शक्ति की पूर्णता, शक्ति का प्रारंभ हुआ, परंतु उनकी पूर्णता एक-एक अंतर्मुहूर्त के बाद हो जाती है उसको कहेंगे निष्ठापन। तो प्रतिष्ठापन यानी प्रारंभ तो युगपत् होता है। कब होता है? शरीर नामकर्म के उदय के पहले ही समय से होता है और निष्ठापन यानी **पूर्णता अनुक्रम से होती है।** जिस क्रम से हमने छह पर्याप्तियों के नाम देखे, उसी क्रम से एक के बाद एक, एक के बाद एक अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में एक-एक की पूर्णता होती है। तो **निष्ठापन का काल अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त से अधिक है।** यानी पहले आहारपर्याप्ति पूरी होगी; कितने काल में? अंतर्मुहूर्त में; कितना बड़ा है? यथायोग्य है। उसके अंतर्मुहूर्त बाद शरीरपर्याप्ति पूरी होती है। शुरू तो सब एकसाथ हुयी थी उसके एक अंतर्मुहूर्त के बाद इन्द्रियपर्याप्ति पूरी होगी, फिर श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति पूरी होगी, फिर भाषापर्याप्ति पूरी होगी, फिर मनःपर्याप्ति पूरी होगी।

श्रोता: इन छह पर्याप्तियों को अंतर्मुहूर्त अलग-अलग लगेगा कि एक ही अंतर्मुहूर्त में

होगी? एक अंतर्मुहूर्त में तो आहारपर्याप्ति ही पूरी हुयी। *श्रोता: तो छह अंतर्मुहूर्त?* छह अंतर्मुहूर्त ऐसा नहीं कहेंगे उसको। कह भी दो, परंतु मन:पर्याप्ति का जो अंतर्मुहूर्त है उसमें सब पूरी हो गयी न? मन:पर्याप्ति पूरी होने के लिये इतना काल लगा। सभी छह की छह एक साथ चालू हो गयी थी। आहारपर्याप्ति यहां पूरी हुयी, फिर थोड़ा काल जाकर शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी और थोड़ा जाकर इसतरह से। **तथापि उन सबका काल सामान्य आलाप से,** आलाप यानी कथन, सामान्य कथन क्या होगा? हर पर्याप्ति के लिये अंतर्मुहूर्त लगता है, है न? तो मान लेते हैं, हम अपनी भाषा में बतायेंगे कि आहारपर्याप्ति पांच सेकंड में पूरी हुयी और शरीरपर्याप्ति सात सेकंड में पूरी हुयी। सात क्यों? क्योंकि सबका बिगिनिंग-झिरो पॉइंट यहां पर है, यहां से पांच सेकंड में आहारपर्याप्ति पूरी हुयी और यहां से लेकर सात सेकंड में शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी यानी पहले पांच सेकंड में तो दोनों ही हो रही हैं, सभी छहों हो रही थी न? झिरो पॉइंट में तो सभी थी, स्टार्टिंग में सभी थी और सभी स्टार्ट होकर आहारपर्याप्ति पहले पूरी हुयी, फिर अन्य पांच चलती रही, फिर वह दूसरी पूरी हुयी फिर और बाकी की चल रही हैं इसतरह से चलेगा। ये पर्याप्ति एक बार पूर्ण होने पर मरणपर्यंत वे ऐसी ही बनी रहेगी क्योंकि हर समय जीव शरीर के और पर्याप्तियों के योग्य परमाणुओं को ग्रहण करेगा। हमने तो दो ही वाक्य पढ़े थे न? अपने शरीर और छह पर्याप्ति के योग्य परमाणुओं को जीव ग्रहण करता है एक समय में। वहां से अपनी बात शुरू हुयी थी।

श्रोता: यह जीव मृत्यु के पहले अंतर्मुहूर्त में सब पर्याप्ति पूरी ग्रहण कर लेता है और विग्रहगति के बाद मृत्यु उसे आता है? मृत्यु के बाद विग्रहगति में पर्याप्ति है ही नहीं है। मर गया तो यहां की पर्याप्ति यहां छूट गयी। कोई मनुष्य मरकर एकेन्द्रिय हुआ, यहां तो उसकी छह पर्याप्ति मरण के समय तक थी, एकेन्द्रिय में जाने पर मान लेते हैं दो मोड़ लेकर एकेन्द्रिय में पहुंच गया है तो दो मोड़ के बाद तीसरे समय में उसके एकेन्द्रिय संबंधी शरीर नामकर्म का उदय चालू हो गया और वहां तो उसकी चार पर्याप्ति हैं तो वे सभी शुरू हो गयी और एक-एक के बाद एक-एक पूर्णता को पहुंची। ख्याल में आयी न बात?

तो **निष्ठापन का काल अंतर्मुहूर्त तथापि सबका सामान्य आलाप** यानी कथन **से अंतर्मुहूर्त ही कहते हैं।** तो निष्ठापन का काल किसतरह है? तो **आहारपर्याप्ति का निष्ठापन काल सबसे अल्प है।** यानी सबसे पहले वह समाप्त होती है, पूर्णता को

पहुंचती है, फिर भी अंतर्मुहूर्त है। अभी उसे संख्यात का भाग दे दो, उसमें मिलाओ वगैरे जो लिखा है उसे हम छोड़ देते हैं। हमें तो उसके विस्तार में नहीं जाना है। जैसे हमने कहा पांच सेकंड हैं, सात हैं, फिर दस हैं जो कुछ है इसतरह से अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त अधिक हैं। अभी यह पर्याप्त और निर्वृत्तिअपर्याप्त को जरा समझ लेते हैं। क्योंकि अपना विषय चल रहा है न? देखो २५६ पृष्ठ पर आना है। **पर्याप्त नामक नामकर्म का उदय होनेपर,** जिसके अपर्याप्त नामकर्म का उदय है उसकी उस पर्याय संबंधी जितनी पर्याप्ति हैं, उतनी चालू तो हो जाती हैं, परंतु आहारपर्याप्ति यानी पहली पर्याप्ति भी पूर्णत्व को नहीं पहुंचती, उसके पहले ही जीव मर जाता है। यानी इस आहारपर्याप्तिवाले अंतर्मुहूर्त से भी उसकी आयु छोटी है। आहारपर्याप्ति के पूर्ण होने के पहले उसका मरण हो जाता है और जो पर्याप्त नामकर्मवाले हैं वे भी क्रम से एक-एक पर्याप्ति पूर्ण करते-करते सभी छह पर्याप्ति पूरी करेंगे। अभी यहां देखेंगे हम।

पर्याप्त नामक नामकर्म का उदय होने पर अपने-अपने एकेन्द्रिय की चार, विकलेन्द्रिय की पांच और संज्ञी पंचेन्द्रिय की छह पर्याप्तियों से 'निष्ठिताः' अर्थात् संपूर्ण शक्ति युक्त होते हैं, वे ही जब तक यानी जो ये छह पर्याप्ति तो नियम से पूर्ण करनेवाले ही हैं। परंतु हमने देखा न कि थोड़े काल में – पहले अंतर्मुहूर्त में आहारपर्याप्ति पूरी हुयी, फिर शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी। तो जब तक शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं हुयी है, उसके एक समय पूर्व तक ये जो पर्याप्त नामकर्मवाले, पर्याप्त होनेवाले जीव हैं, जो नियम से पर्याप्ति पूरी करेंगे, उन जीवों की जब तक दूसरी पर्याप्ति पूरी नहीं होती है, तब तक उनको कहेंगे निर्वृत्तिअपर्याप्त। देखो यह पढ़ना, कैसे लिखा है? तो **एक समय कम शरीरपर्याप्ति संबंधी अंतर्मुहूर्त तक निर्वृत्तिअपर्याप्त** कहेंगे। निर्वृत्ति यानी रचना चल रही है उसकी और वह पूर्ण होनेवाली है परंतु इनको निर्वृत्तिअपर्याप्त कहते हैं और जो अपर्याप्त नामकर्मवाले हैं जिनकी एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होती उनको लब्धिअपर्याप्त कहते हैं।

श्रोताः यह क्षुद्रभव तो श्वास के अठारहवां भाग का होता है तो ये... क्षुद्रभव जिसको कह रहे हैं वह लब्धिअपर्याप्त का है। *श्रोताः पर्याप्ति का काल उससे बड़ा ही होगा?* हां, पर्याप्ति का काल तो बहुत बड़ा होगा उससे। यह आहारपर्याप्ति जो सबसे पहले

पूर्ण होनेवाली है, उससे भी कम काल में मरण हो जाता है। नीचे लिखा है देखो **लब्धिअपर्याप्त का स्वरूप कहते हैं।** १२२ गाथा की टीका। **अपर्याप्त नामक नामकर्म का उदय होने पर** यानी यही कर्म वह बांध कर आया है उसका उदय चल रहा है। **एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव अपनी-अपनी चार, पांच, छह पर्याप्ति,** यानी वह पर्याप्त जीव हो या अपर्याप्त उसकी अपनी-अपनी सभी पर्याप्ति शुरू तो हो जाती हैं। **उनको 'न निष्ठापयति' अर्थात् संपूर्ण नहीं करते, श्वास के अठारहवें भागप्रमाण अंतर्मुहूर्त में ही मरण को प्राप्त होते हैं वे जीव लब्धिअपर्याप्त कहलाते हैं।** अभी उनके निरंतर जन्म-मरण हमने कल देखे थे। एक अंतर्मुहूर्त में ६६३३६ भव होते हैं वगैरह-वगैरह। उसकी बहुत विस्तार से यहां बातें बतायी हैं। यह विषय हो चुका है इसलिये अभी हम इसमें नहीं जायेंगे।

एक बात है यह जो समुद्घात केवली है न? वे भी अनाहारक होते है क्या? हां; कब होते हैं? समुद्घात मालूम है? केवली समुद्घात? तेरहवें गुणस्थानवाले जो हैं सयोगकेवली, जब तेरहवां गुणस्थान समाप्त होने का समय आता है, तो वहां क्या बातें होती हैं? कर्म कितने बाकी हैं? *श्रोता: चार।* चार अघातिकर्म। अभी इन सब कर्मों में निषेक रचना होती है। हमने देखी थी न? एक समय में एक निषेक उदय में आता है और खिर जाता है। आयुकर्म के मान लेते हैं, इतने ऐसे निषेक पड़े हैं। कितने पड़े हैं? तो अंतर्मुहूर्त प्रमाण पड़े हैं अभी, क्योंकि अभी तेरहवें का अंत नजदीक आ गया है और चौदहवें का अंतर्मुहूर्त बाकी है। इतने वहां निषेक पड़े हैं और बाकी तीन कर्मों के निषेक तो बहुत ज्यादा हैं, पल्य के असंख्यातवें भाग इतने हैं। तो आयु तो सब खिर जायेगी और तीन अघातिकर्मों को लेकर जायेंगे क्या सिद्ध अवस्था में? तो उन तीन कर्मों की स्थिति घटकर सबकी स्थिति समान हो जाती है। वह समान स्थिति ऑटोमॅटिक ही होती है, ऐसे केवली को – अभी सबकी स्थिति समान नहीं की अभी इतना बाकी है न, अभी मुझे समुद्घात करना है – ऐसा कुछ नहीं है। तो उनके समुद्घात होता है तो आठ समयों में वे सारे स्थितिकांडकघात वगैरह होकर सभी कर्मों की स्थिति समान हो जाती है। तो पहले समय में क्या होता है? दंड यानी प्रदेश ऐसे दंडाकर फैलते हैं, खंबे जैसे। कहां से कहां तक? केवल बाहरी वातवलय को छोड़कर लोकाकाश के ऊपर से नीचे तक, दूसरे समय में क्या होता है? *श्रोता: कपाट।* कपाट; कपाट यानी ऐसे, ऐसे आड़े फैलते हैं। कहां तक? लोकाकाश के अंत तक। कोई पूर्व के सन्मुख... *श्रोता: दंडरूप में सिर्फ त्रसनाली में ही रहते हैं?* हां, जहां

मुनिराज बैठे हैं, वहां से वह दंड होगा, वह त्रसनाली के अंदर ही है, मनुष्य क्षेत्र के अंदर है; और वह कितना चौड़ा होगा? शरीर की जितनी ऐसी चौड़ी अवगाहना होगी उतने डायमीटरवाला वह होगा। उतने डायमीटर का पूरा दंड होगा, प्रदेशों का। दूसरे समय में आत्मप्रदेश ऐसे आड़े फैलते हैं न? दंड में गोलाकार थे वे इसतरह से ऐसे आड़े फैल जायेंगे; कहां तक? लोकाकाश के अंत तक। जो पूर्व की तरफ मुंह किये हैं उनके प्रदेश दक्षिण-उत्तर फैलेंगे। जो उत्तर की तरफ मुंहवाले हैं, उनके प्रदेश पूर्व-पश्चिम फैलेंगे। अभी ऐसे आड़े फैले हैं न, तो तीसरे समय में आगे पीछे भी फैलेंगे – वातवलय को छोड़कर, उसको प्रतर कहेंगे। चौथे समय में लोकपूरण, वे पूरे वातवलय तक पहुंचेंगे, लोकाकाश में सर्वत्र फैलेंगे; फिर प्रतर, फिर कपाट और फिर दंड और फिर मूलशरीर में प्रवेश करेंगे। तो जब कपाट हुये थे तो वहां औदारिकमिश्र काययोग था, उसके बाद प्रतर, लोकपूरण और प्रतर में कार्माण काययोग हुआ। वहां शरीर के परमाणुओं का ग्रहण नहीं हो रहा था। वापस वे कपाट में आ गये, दंड में आयेंगे तो वहां पर भी पर्याप्ति फिर से होगी उनकी भी।

श्रोता: वहां पर सब पर्याप्ति नहीं होंगी? तीन ही होंगी? हां, तीन होंगी। तीन होंगी क्योंकि इन्द्रियपर्याप्ति का सवाल नहीं है; इन्द्रियों द्वारा जानने का कार्य का सवाल ही नहीं; मन का भी जानने का कार्य नहीं है; परंतु वहां तो श्वासोच्छ्वास होगा उनका, श्वासोच्छ्वास होगा। तो हम यह देख रहे थे कि उनके भी वहां अपर्याप्त अवस्था कहने में आती है; परंतु निर्वृत्तिअपर्याप्त या लब्धिअपर्याप्त ऐसा उसको नहीं कहेंगे परंतु वह किस अपेक्षा से होता है बस उसका यहां वर्णन है। तो हमने यह पर्याप्ति संबंधी चर्चा कर दी। अभी हम वह पहला वाक्य फिर पढेंगे। दो नंबर की पुस्तक में था न? हमारे प्रश्न क्या-क्या थे? कि ये पर्याप्ति क्या है? ६३७ पेज पर हमने वाक्य पढ़ा था उसको फिर याद कर लेते हैं।

उसका यह द्रव्यपरावर्तन कहो या पुद्गलपरावर्तन शुरू होने जा रहा है। तो **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल किसी एक समय में ग्रहण किये...।** पहले ही समय में ग्रहण किये ऐसे भी नहीं कहा क्योंकि ये शरीर और पर्याप्ति संबंधी परमाणुओं का ग्रहण पहले समय से लेकर मरण के समय तक हर समय चलेगा। तो किसी एक समय में ग्रहण किये, यहां तक बात ख्याल में आयी? तो वह कितने परमाणुओं को ग्रहण करता है? तो

उसके लिये फिर पहली पुस्तक निकालना, ३५७ पृष्ठ पर २४५ गाथा उसके ऊपर लिखा है, **आगे जो ये औदारिकादि शरीर कहे**, वहां तो पांचों शरीर संबंधी बात है। **उनके समयप्रबद्धादिक की संख्या दो गाथाओं द्वारा कहते हैं।** समयप्रबद्ध का अर्थ देखते हैं हम, एक समय में जीव जितने परमाणुओं को ग्रहण करेगा, उसको कहेंगे समयप्रबद्ध; बद्ध यानी बंधे, प्रबद्ध यानी विशेष प्रकार से बंधे। एक समय में जितने परमाणुओं को जीव ग्रहण करता है उसको एक समयप्रबद्ध कहते हैं। एक ही समय में जीव कार्माणवर्गणा के भी परमाणुओं को ग्रहण कर रहा है जो कर्मरूप होनेवाले हैं, तेजसशरीर संबंधी परमाणुओं को भी ग्रहण करता है जो तेजसशरीररूप होनेवाले हैं, औदारिकशरीर संबंधी आहारवर्गणा के परमाणु भी ग्रहण कर रहा है, है न? ॲट अ टाइम सभी कार्य चल रहे हैं तो इसको कहेंगे एक-एक समयप्रबद्ध ग्रहण कर रहा है। हम पढ़ते समय तो एक-एक की बात ॲट अ टाइम करेंगे।

अभी तो औदारिकादि शरीरों की बात चल रही है तो ये समयप्रबद्ध यानी एक समय में जितने परमाणुओं का ग्रहण होता है उसको समयप्रबद्ध कहते हैं। ये परमाणु कौन नक्की करता है कि कितने ग्रहण करना, थोड़े की ज्यादा? उसमें भी कोई कम ग्रहण करेगा, कोई अधिक ग्रहण करेगा। हां, योग-योग; जहां योग कम है वहां ग्रहण तो होता है अनंतों में, फिर भी वह अनंत छोटावाला अनंत होगा और जहां ज्यादा योग होगा वहां बड़ावाला अनंत होगा। यानी एक समयप्रबद्ध में परमाणु कितने हैं? तो कहते हैं अनंत होते हैं। तो इसको हम पढ़ेंगे, २४५ गाथा के आधार से। टीका – तो यह अनंत कितना बड़ा अनंत है? क्योंकि अनंत के भी अनंत प्रकार हैं, अनंत भेद हैं, अनंत व्हेरिएशन्स हैं तो उनमें से कौनसा पर्टिक्युलर अनंत है उसको यहां बता रहे हैं। तो कहते हैं **सिद्धराशि का अनंतवां भाग...** सिद्ध कितने हैं? *श्रोता: अनंत हैं।* अनंत हैं क्योंकि अनादि से, अनादि से हो; हर छह महिने और आठ समय में छह सौ आठ-छह सौ आठ जीव तो मुक्त होते गये हैं। तो ऐसे छह महिने और आठ समय कितने हुये होंगे अब तक, तो अनंत। *श्रोता: अनंत?* हां, उसको छह सौ आठ से गुणा करते रहो तो इतने सिद्ध हो चुके हैं इसको कहेंगे सिद्धराशि। तो **सिद्धराशि का अनंतवां भाग और अभव्यराशि से अनंतगुणा...** अभव्यराशि कितनी देखी थी, याद है क्या? *श्रोता: जघन्य युक्तानंत।* हां, जघन्य युक्तानंत, उससे अनंतगुणा। तो दोनों तरफ से क्यों कहते हैं? उसका भी उत्तर देंगे। पहले हमें उस अनंत को निश्चित करना है,

कौनसा? जो सिद्धराशि का अनंतवां भाग है और जो अभव्यराशि से अनंतगुणावाला जो अनंत है, पर्टिक्युलर अनंत इतने **पुद्गल परमाणुओं का**, यह तो संख्या बतायी है। इतने **पुद्गल परमाणुओं का जो एक स्कंध होता है उसका वर्गणा ऐसा नाम जानना।** जीव एक वर्गणा नहीं ग्रहण कर रहा है। एक वर्गणा में परमाणु कितने हैं? सिद्धराशि का अनंतवां भाग और अभव्यों से अनंतगुणे इतने परमाणुओं की एक वर्गणा है।

अब कहते हैं **संख्यात या असंख्यात परमाणुओं से वर्गणा नहीं होती। चूंकि यद्यपि आगे पुद्गल वर्गणा के तेईस भेद कहेंगे, वहां अणुवर्गणा, संख्यातअणुवर्गणा, असंख्यातअणुवर्गणा आदि भेद हैं; तथापि यहां औदारिक आदि शरीरों के प्रकरण में।** क्या कहते हैं? ये शरीर संबंधी जो आहारवर्गणा हैं जिसमें सबसे कम परमाणु हैं। आगे-आगे की जो वर्गणायें हैं न? उनमें परमाणुओं की संख्या ज्यादा-ज्यादा है। एक समयप्रबद्ध में परमाणुओं की संख्या अधिक-अधिक है। परंतु यहां तो वर्गणा, तेईस वर्गणा तो एक अणु से शुरू होती हैं; दो अणुवाली हैं, तीन अणुवाली हैं, चार अणुवाली हैं उसका यहां विषय नहीं है क्योंकि यहां हम शरीर की वर्गणा संबंधी बात करते हैं तो मिनिमम भी अनंतों में ही है यह कहना चाहते हैं। तो देखो **पुनश्च सिद्धों के अनंतवें भाग और अभव्यों से अनंतगुणी ऐसी मध्यम अनंतानंत प्रमाण वर्गणा** ये अनंत भी तीन प्रकार के होते हैं – परीतानंत, युक्तानंत और अनंतानंत। अनंतानंत में से भी मध्यम अनंतानंतवाला जो भेद है उतनी वर्गणा **उनसे एक समयप्रबद्ध होता है।** फिर से सुनो – एक वर्गणा में परमाणु कितने? सिद्धों के अनंतवें भाग और अभव्यों से अनंतगुणा यानी हम अभी उसको अनंत कहेंगे। हमने वह पर्टिक्युलर अनंत निश्चित किया है यानी अनंत परमाणुओं की एक वर्गणा और ऐसी मध्यम अनंतानंतप्रमाण वर्गणा एक समयप्रबद्ध में होती हैं। औदारिकशरीर के भी परमाणु हर समय जीव ग्रहण कर रहा है, हर समय नये-नये। कितने? ये मध्यम अनंतानंतप्रमाण परमाणु एक समयप्रबद्ध में हैं।

एक समयप्रबद्ध यानी एक समय में बंधनेवाले जो औदारिकशरीर संबंधी परमाणु हैं उनकी संख्या। समय कितना सूक्ष्म है हमने देखा; एक सेकंड में हजारों कोड़ाकोड़ी आवली हैं और फिर एक आवली में इतने असंख्यात समय हैं। तो ऐसे हर समय में जीव इतने अनंत-अनंत परमाणु ग्रहण कर रहा है। किसके? शरीर के भी, उसकी यहां बात है। एक समयप्रबद्ध में अनंत वर्गणा और एक-एक वर्गणा में अनंत परमाणु। हमने केवल

उसको अनंत कह दिया, उसका प्रमाण तो हमने जान लिया है। अब आगे बढ़ते हैं। **समय में या समय द्वारा यह जीव कर्म-नोकर्मरूप पूर्वोक्त प्रमाण वर्गणाओं के समूहरूप स्कंधों से संबंध करता है।** जीव हर समय इन परमाणुओं से संबंध करता है। हं, संबंध करता है, हम कहेंगे उसको ग्रहण करता है वे शरीररूप से परिणमित होते हैं। **इसलिये इसको समयप्रबद्ध कहते हैं। ऐसा वर्गणा का और समयप्रबद्ध का भेद स्याद्वादमत में है; अन्यमत में नहीं है।** अब **यहां कोई प्रश्न करता है कि एक ही प्रमाण को सिद्धराशि का अनंतवां भाग और अभव्यराशि से अनंतगुणा ऐसे दो प्रकार से कहा, उसका क्या कारण है?** *श्रोता: यही प्रश्न था।* यही प्रश्न था न आपका? पं. टोडरमलजी को पता था कि कौनसे प्रश्न आनेवाले हैं। देखों, उन्होंने कितने ही प्रश्न स्वयं उठाकर उनके उत्तर दिये हैं। **उसका समाधान – सिद्धराशि के अनंतवें भाग के अनंत भेद हैं। वहां अभव्यराशि से अनंतगुणा ऐसा जो सिद्धराशि का अनंतवां भाग हो, उतना यहां प्रमाण जानना।** उसमें भी जघन्य से उत्कृष्ट तक बहुत भेद होंगे हो। **इसतरह अल्पबहुत्व द्वारा उस प्रमाण का विशेष जानने के लिये दो प्रकार से कहा है। अन्य कुछ प्रयोजन नहीं है।**

अब हम कहेंगे क्या? औदारिक संबंधी जो समयप्रबद्ध है उतना ही तेजस के परमाणु लेते हैं; उतने ही कार्माण के लेते हैं ऐसा है क्या? तो उसके लिये आगे की गाथा, २४६ गाथा की टीका पढ़ेंगे हम। **उन पांच शरीर के समयप्रबद्ध सभी परस्पर समान नहीं हैं। उत्तरोत्तर अधिक परमाणुओं के समूहवाले हैं, उसे कहते हैं।** हम जब पांच शरीर कौनसे हैं पूछते हैं तो आप कौनसे क्रम से बता रहे हो, बोलो? *सभी श्रोता: औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तेजस, कार्माण।* औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तेजस और कार्माण। औदारिक, वैक्रियिक और आहारक ये तीन शरीर आहारवर्गणा से बनते हैं, बराबर? तेजसशरीर? तेजसवर्गणा से बनता है; कार्माणशरीर? कार्माणवर्गणा से बनता है; तो कौनसी वर्गणा में परमाणु अधिक हैं यह यहां बतायेंगे। तो कहते हैं **उत्तरोत्तर अधिक परमाणुओं के समूहवाले हैं, उसे कहते हैं। परमाणुओं के प्रमाण की अपेक्षा औदारिकशरीर का समयप्रबद्ध सबसे अल्प है।** है तो अनंत हो, इनमें से सबसे अल्प है। **इससे श्रेणी के असंख्यातवें भाग गुणा...** यह श्रेणी किसको कहते हैं मालूम है? हां, जगत्श्रेणी।

जगत्श्रेणी किसको कहते हैं? *श्रोता: सात राजू।* सात राजू, देखो लोकाकाश घनाकार है, परंतु वह तो हाइट ज्यादा है, चौदह राजू है, ऐसे दक्षिण-उत्तर सात राजू है और ऐसा पूर्व-पश्चिम तो हीनाधिक है। उसको सब जगह से हम ऐसा फ्लॅट-चपटा करेंगे और एक क्यूब बनायेंगे। तो कैसा होगा? सात राजू लंबा, सात राजू चौड़ा और सात राजू ऊंचा ऐसा घनाकार होगा। तो उसको हम जगत्घन कहेंगे, लोक कहेंगे, उसका हम माप निकाल रहे हैं। तो ये सात राजू प्रमाण जो एक लाइन हम ड्रॉ करेंगे उसमें प्रदेश कितने होंगे? उनको गिनो उसको कहेंगे जगत्श्रेणी; यह असंख्यात का एक प्रमाण है। उस जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागगुणा यह उसका अर्थ होता है। हम उसके डिटेल में नहीं जानेवाले अभी, किसको कहना श्रेणी यह बात है। यह उपशमश्रेणी या क्षपकश्रेणी की बात नहीं है यहां। यानी जो औदारिकशरीर के परमाणुओं का प्रमाण है उससे **असंख्यातगुणा प्रमाण वैक्रियिक के समयप्रबद्ध का है।** यह श्रेणी को भूल जाओ बीच में से, वह उसका कितना प्रमाण है गुणकार का, वह प्रमाण बताया। अब **उससे भी श्रेणी के असंख्यातवें भाग गुणा परमाणु आहारक का समयप्रबद्ध है।** आगे-आगेवाले शरीर सूक्ष्म-सूक्ष्म हैं, पहले-पहले ये स्थूल हैं, मोटे हैं तो ऐसा लगता है कि मोटे में परमाणु भी ज्यादा होंगे न? नहीं उलटा है। औदारिकशरीर संबंधी जो एक समयप्रबद्ध है, उसमें परमाणु की संख्या अल्प है। वैक्रियिकशरीर है तो सूक्ष्म परंतु उसमें एक समयप्रबद्ध में वर्गणा का प्रमाण या इनके परमाणुओं का प्रमाण असंख्यातगुणा है। उससे आहारकशरीर में उससे भी असंख्यातगुणा है। इसतरह आहारक तक यह असंख्यातगुणावाला है।

उसके आगे आहारक के समयप्रबद्ध से कितने गुणा कहा? **अनंतगुणा परमाणुप्रमाण तेजसशरीर का समयप्रबद्ध है।** औदारिक से वैक्रियिक का असंख्यातगुणा, वैक्रियिक से आहारक का असंख्यातगुणा, उससे तेजस का अनंतगुणा और उससे **कार्माण का समयप्रबद्ध अनंतगुणा।** यानी एक समय में जीव कार्माणवर्गणा कितनी ग्रहण करता है? तो कितनी अनंतानंतगुणा ग्रहण करता है यह ख्याल में आया? यहां तो अल्पबहुत्व बताना था बस इतना ही इसका प्रयोजन हैं। **कोई आशंका करे कि यदि उत्तरोत्तर अधिक-अधिक परमाणु कहे तो उत्तरोत्तर स्थूलता भी होगी?** तो **कहते हैं – परं परं सूक्ष्मं भवति।** यानी **उत्तरोत्तर सूक्ष्म हैं।** ये जो शरीर हैं वे उत्तरोत्तर सूक्ष्म हैं। **औदारिक से वैक्रियिक सूक्ष्म है। वैक्रियिक से आहारक सूक्ष्म है। आहारक से तेजस सूक्ष्म है।**

तेजस से कार्माण सूक्ष्म है। यद्यपि परमाणु तो अधिकधिक हैं, तथापि स्कंध के बंधन में विशेष है, इसलिये उत्तरोत्तर सूक्ष्म हैं। जैसे कपास के पिंड से यह कपास का पिंड हमने एक किलो भर लिया और लोहा भी एक किलो लाया, तो कौनसा ज्यादा वजनदार होगा? इतना बड़ा कपास लिया, है न? कौनसा वजनदार होगा? *श्रोता: लोहा वजनदार है न?* अरे हमने दोनों एक किलो लिया है, वजन की अपेक्षा दोनों समान हैं और व्हॉल्यूम देखेंगे तो कपास इतना सारा आ जायेगा और लोहा इतना सा आ जायेगा, है न? यहां कहते हैं **कपास के पिंड से लोहे के पिंड में अधिकपना होते हुये भी कपास के पिंड से लोहे का पिंड थोड़ासा क्षेत्र रोकता है।** क्षेत्र थोड़ा रोकता है, **वैसे जानना।** अभी तो इतनी ही बात हमने देखी है। उसके गणित में तो नहीं जाना है हमें।

यह जो परमाणुओं का ग्रहण होता है तो हीनाधिक प्रमाण क्यों होता है? तो यह योग के कारण होता है। अब ये जो परमाणुओं को, इतने अनंतानंत परमाणुओं को ग्रहण करना है तो कहां-कहां से ये परमाणु आते होंगे यह आगे का प्रश्न है। अभी हम यहां बैठे हैं और यहां कितने लोग बैठे हैं और सब हर समय में औदारिकशरीर के परमाणु ग्रहण कर रहे हैं। तो वहां तो जैसे भोजनालय में भीड़ होती है न? पहले कौन जायेगा। वैसे यहां पर भी खींचातानी होगी क्या कि अरे वहां के प्रदेश हम ग्रहण करेंगे, यहां के ग्रहण करेंगे, वहां के हम ग्रहण करेंगे। कौन कहां के प्रदेश ग्रहण करेगा? परमाणु कहां से ग्रहण होते हैं? यह हमारा नेक्स्ट प्रश्न है। उस पर आप विचार करना और तब हम दोपहर में इस संबंधी आगे देखेंगे। अभी इस संबंधी कोई प्रश्न है तो पूछना, बस केवल दो मिनट हैं बाकी।

श्रोता: आहारवर्गणा, तेजसवर्गणा और कार्माणवर्गणा तीनों को एक साथ अगर ग्रहण करता है यह जीव; तो एक ही जीव होगा और उन तीनों को एक साथ लेगा? एक योग होगा? हां, एक समय में एक योग कहेंगे भले हम, परंतु सभी तीनों शरीर नामकर्म के उदय हैं, तो तीनों का ही ग्रहण होता है, इसतरह से। योग में तो हम एक योग को कहेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

९. पुद्गल – सादि, अनादि

षट्खण्डागम के आधार से यहां कालानुयोग यानी काल अनुयोगद्वार का वर्णन चल रहा है। अलग-अलग प्रकार का काल कैसे गिनना उसकी यहां चर्चा चल रही है। हमने द्रव्यपरावर्तन यानी पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप देखना प्रारंभ किया है। हमने वहां एक बात देखी थी – किसी एक समय में, कोई एक जीव अपने शरीर और पर्याप्ति के योग्य पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण करता है। तो कितने परमाणुओं का ग्रहण करता है? उसकी चर्चा अपनी प्रारंभ हो गयी थी। पर्याप्ति क्या है? उसकी अपनी चर्चा चली थी। छह पर्याप्तियों के हमने नाम देखे थे जो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के होती हैं। कौनसी देखी थी याद है न? *सभी श्रोता: १. आहारपर्याप्ति २. शरीरपर्याप्ति ३. इन्द्रियपर्याप्ति ४. श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति ५. भाषापर्याप्ति ६. मन:पर्याप्ति।* ये छह पर्याप्ति हमने देखी थी।

भाषापर्याप्ति के बारे में किसीका कोई प्रश्न था मेरे ख्याल से, वह भोपालवालों ने कुछ पूछा था न? आपका भी कोई प्रश्न था? *श्रोता: आत्मा के जो प्रदेश लगातार घूमते हैं वे प्रदेश वहीं रहते हैं या घूमकर के दूसरे प्रदेश; दूसरे प्रदेशों का घूमना होता है?* हां, प्रदेशों का घूमना होता है। प्रश्न यह था, भाषापर्याप्ति के बारे में हमने जो पढ़ा था, देखो अपना विषय चल रहा था न, *श्रोता: २५४।* हां, पृष्ठ २५४, **स्वर नामक नामकर्म के उदय से भाषावर्गणारूप पुद्गल स्कंधों को सत्य, असत्य, उभय** और **अनुभय भाषारूप परिणमाने की शक्ति उत्पन्न होती है,** उसको **भाषापर्याप्ति** कहते हैं, यह बात वहां आयी थी। तो फिर सत्य, असत्य, उभय, अनुभयरूप जो भाषा यह क्या होती है यह प्रश्न था किसीका। उसके लिये हम पेज नंबर ३३९ को देखेंगे, भाग पहला। पदार्थों के ही चार भेद कहे हैं – सत्यपदार्थ, असत्यपदार्थ, उभय यानी दोनों ही पदार्थ और अनुभय यानी जो दोनों ही नहीं ऐसे पदार्थ, तो पदार्थों में यह कैसे संभव होता है? पदार्थ तो पदार्थ होगा वह तो सत्य होगा, वह असत्य कैसे हो सकता है? तो ये चार प्रकार के पदार्थों में वचनरूप जो भाषा चलेगी उसको ही सत्यभाषा, असत्यभाषा आदि कहते हैं। तो उसका वर्णन यहां ३३९ पृष्ठ पर योगमार्गणा के प्रकरण में गाथा २१७ की टीका में दिया है, वहां लिखते हैं **सत्य, असत्य, उभय, अनुभयरूप जो पदार्थ**, पदार्थों को ये चार अलग-अलग नाम दिये। **उनमें मन, वचन की जो प्रवृत्ति होती है** यहां योगों का वर्णन है इसलिये प्रवृत्ति की

बात उठायी है। **उन्हें जानने वा कहने के लिये जीव की प्रयत्नपूर्वक प्रवृत्ति होती है।** इसलिये ऐसे **चार प्रकार के** वहां **मनोयोग** या **चार प्रकार के वचनयोग** कहने में आते हैं। पदार्थ सत्य, असत्य कैसे हो सकते हैं? उसके बारे हम आगे पढ़ेंगे।

वहां यथार्थ जैसा का वैसा, सांचा - सत्य ज्ञानगोचर जो पदार्थ उसको सत्य कहते हैं। जैसे जल के जानने के गोचर जल है; चूंकि स्नान-पानादिक जलसंबंधी क्रिया उससे सिद्ध होती है, इसलिये सत्य है। जल को जल कहना यह सत्य है, क्योंकि जल से उसका जो कार्य है वह सिद्ध होता है। क्या कार्य है? पीने के लिये काम आता है, स्नानादिक के लिये काम आता है। अब कहते हैं, **अयथार्थ अन्यथारूप पदार्थ जो मिथ्याज्ञान के गोचर है, उसको असत्य कहते हैं। जैसे जल के जानने के गोचर मृगजल है।** मृगजल, क्या वहां जल है? तो कहते हैं नहीं है, वहां तो कोई जल नहीं है; जल का सा आभास हो रहा है। परंतु उससे न प्यास बुझती है, न उससे कुछ स्नानादिक क्रियायें होती हैं। उसको कहेंगे असत्य और उसको कहनेवाला वह असत्य वचन होगा। उभय कैसा लेना? देखो, **यथार्थ और अयथार्थरूप पदार्थ – यदि दोनों ज्ञानगोचर हो उसको उभय कहते हैं। जैसे कमंडलु में घट का ज्ञान हो** यानी कमंडलु को घट कहना। **चूंकि घट के समान जलधारणादि क्रिया कमंडल से सिद्ध होती है, इसलिये सत्य है।** जैसे कमंडल में भी जल भरते हैं और इस घट में भी भरते हैं, **परंतु घट जैसा आकार नहीं है, इसलिये असत्य है।** इसलिये उसको **उभय** कहा और अनुभय **यानी यथार्थ-अयथार्थ के निर्णय से रहित पदार्थ, यदि अनुभय ज्ञानगोचर हो, उसको अनुभय कहते हैं। सत्य-असत्य कहने योग्य नहीं है। जैसे यह कुछ प्रतिभासित है, ऐसे सामान्यरूप पदार्थ प्रतिभासित हुआ, वहां उस पदार्थ से कौनसी क्रिया सिद्ध होती है ऐसा विशेष निर्णय नहीं हुआ, इसलिये उसको सत्य भी नहीं कहा जाता, असत्य भी नहीं कहा जाता।** आगे भी सत्य के बहुत सारे प्रकार बताये हैं, जनपद सत्य वगैरह-वगैरह। तो उस पर हम नहीं जायेंगे। इसका वर्णन आगे इस प्रकरण में दस प्रकार के सत्य ३४२ पृष्ठ पर लिखे हैं। हम उनको अभी नहीं देखेंगे, आपको केवल बता देती हूं कहां क्या हैं; ये दस अलग-अलग प्रकार के सत्य कैसे होते हैं? उसकी बात यहां बतायी है।

अब अपने विषय पर हम चलते हैं, हमने ये छह पर्याप्ति कौनसी होती हैं वह देखा है।

दूसरे भाग में से हमने यह बात पढ़ी थी। हमने जहां नोकर्मद्रव्यपरावर्तन पढ़ना प्रारंभ किया था, कि किसी जीव ने, यह मैं पढ़कर आपको बताती हूं, दूसरा भाग ६३७ पृष्ठ है। **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल किसी एक समय में ग्रहण किये,** तो उसने छह पर्याप्ति योग्य पुद्गल ग्रहण किये यह बात निश्चित हुयी। वे कितने ग्रहण किये? तो जितने ग्रहण करते हैं उनको कहेंगे एक समयप्रबद्ध। तो कौनसे शरीर का समयप्रबद्ध कितना बड़ा होता है, छोटा होता है उसकी भी हमने चर्चा की; कि एक समय में जीव कितने परमाणुओं को ग्रहण करता है? तो कहते हैं यह जो परमाणुओं का स्कंध उसको वर्गणा कहते हैं और वर्गणाओं के समूह को यहां समयप्रबद्ध कहेंगे। यानी एक समयप्रबद्ध में अनंतानंत वर्गणायें हैं और एक-एक वर्गणा में अनंत परमाणु हैं। उनका प्रमाण भी हमने देखा था, सिद्धराशि के अनंतवें भाग और अभव्य से अनंतगुणा ऐसा जो विशिष्ट अनंत है उतने परमाणु जीव एक समय में ग्रहण करता है। कौनसे शरीर संबंधी? वह औदारिकशरीर होगा तो औदारिकशरीर संबंधी, वैक्रियिकशरीर होगा तो वैक्रियिकशरीर संबंधी, आहारकशरीर जब होता है तो आहारकशरीर संबंधी परमाणुओं को ग्रहण करता है।

आहारकशरीर किसके होता है पता है न? *सभी श्रोता: मुनिराज के होता है।* हां, मुनिराज के होता है। कब होता है? देखो, उसका भी वर्णन आता है यहां पर, छठे गुणस्थान में। यह आहारकशरीर का वर्णन भाग १, पृष्ठ ३५२ पर है। जो नये लोग हैं उनको जरा पता चले न आहारक क्या होता है? क्या हमें भी आहारक होगा कि नहीं होगा? यह तो मुनिराजों के ही होता है, छठे गुणस्थान में होता है और उन्हींके होता है जिन्होंने आहारकशरीर और आहारक अंगोपांग नाम के नामकर्म बांधे हैं। ये बंधते हैं सातवें और आठवें गुणस्थान में और उदय होता है नीचे के छठे गुणस्थान में, क्योंकि मुनिराज छठे-सातवें गुणस्थानों में झूलते रहते हैं। जिन्होंने यह बांधा है उसका उदय उनके छठे में हो सकता है; उदय होगा ही यह जरूरी नहीं है। बांधकर वह प्रकृति ऐसे भी पड़ी रहेगी, कोई बात नहीं होती। तो यहां लिखते हैं देखो गाथा २३५ की टीका, **प्रमत्तविरत छठवें गुणस्थानवर्ती मुनि के आहारकशरीर नामक नामकर्म के उदय से,** देखो यहां पर भी शरीर नामकर्म के उदय की बात है। **आहारवर्गणारूप पुद्गल स्कंधों के आहारकशरीररूप परिणमने से आहारकशरीर होता है। वह किसलिये होता है? ढाई द्वीप में तीर्थयात्रादि के निमित्त**

अथवा असंयम दूर करने के निमित्त वा ऋद्धियुक्त होनेपर भी श्रुतज्ञानावरण और वीर्यांतराय के क्षयोपशम की मंदता होने से शास्त्र के अर्थ में धर्मध्यान का विरोधी ऐसा संदेह उत्पन्न हो तो...।

ये मुनियों के कौनसे धर्मध्यान होते हैं? मुनियों को मुख्यत: संस्थानविचय धर्मध्यान बताया है। वहां त्रिलोक संबंधी कोई वर्णन है, कर्म की कोई बातें हैं उस संबंधी यदि कोई प्रश्न हो तो यहां कोई श्रुतकेवली, केवली तो है ही नहीं है. आगम के ग्रंथ हैं परंतु उनमें भी अलग-अलग दो मतों के प्रवाह चले आते हैं। दोनों ही आचार्यों के मत हैं, तो उनमें से ऐसा प्रश्न उठता है कि इनमें से कौनसा सही होना चाहिये आदि ऐसी जो बातें होती हैं तो **ऐसा** कोई मन में **संदेह,** विकल्प आता है तो **उसको दूर करने के** लिये या **जिन और जिनमंदिर की वंदना करने के निमित्त,** जिन यानी तीर्थंकर भगवान या जिनमंदिर अभी कोई अकृत्रिम चैत्यालय आदि हैं तो उनकी वंदना के निमित्त, **गमन करने को उद्यमी हुये जो प्रमत्तसंयमी उनके आहारकशरीर होता है।** वह कैसा होता है? वह आगे लिखते हैं ३५३ पृष्ठ पर; **वह आहारकशरीर कैसा होता है? रसादिक सप्तधातु रहित होता है।** यह औदारिकशरीर कैसा है? सप्तधातु युक्त है। **तथा शुभ नामकर्म के उदय से प्रशस्त अवयवधारी शुभ होता है।** यानी उनके पुण्य प्रकृतियों के उदय से वह प्रशस्त होता है। **तथा संहनन अर्थात् हड्डियों के बंधन से रहित होता है।** औदारिकशरीर में ही संहनन होता है, संहनन यानी हड्डियां होती हैं और उनकी जो अलग-अलग मजबूती होती है, कितनी हार्ड हैं, उनके जॉइंट्स कैसे फिक्स हुये हैं; उसके अनुसार छह अलग-अलग प्रकार के संहनन पाये जाते हैं, परंतु आहारकशरीर में संहनन नहीं होता; वैक्रियिक में भी नहीं होता है, एकेन्द्रियों के भी संहनन नहीं होता है।

शुभ जो समचतुरस्रसंस्थान या अंगोपांग का आकार, उसका धारक होता है। आकार भी छह अलग-अलग प्रकार के बताये हैं। उनमें से भी प्रशस्त आकार का धारक होता है। **तथा चंद्रकांत मणि के समान श्वेत वर्ण का होता है। तथा एक हाथ प्रमाण होता है।** हाथ यानी उंगलियों से कोहनी तक इतना। **यहां चौबीस व्यवहारांगुलप्रमाण एक हस्त जानना। पुनश्च प्रशस्त जो आहारक शरीर, बंधन आदि पुण्यरूप प्रकृतियों का उदय जिसके है, ऐसा होता है।** यानी आहारकशरीर और आहारकबंधन नामकर्म

का उदय है, ऐसी-ऐसी बातें हैं। **ऐसा आहारकशरीर मुनि के उत्तमांग अर्थात् मस्तक, वहां उत्पन्न होता है।** आगे उसका वर्णन है। **वह आहारकशरीर अव्याबाध है;** अव्याबाध यानी उसको कोई रोक नहीं सकता, वह थ्रू ॲण्ड थ्रू कहीं से भी चला जायेगा, यानी पर्वत हो या कोई वज्र की दीवार भी हो बीच में, तो उसको कोई रोक नहीं सकता। **वैक्रियिकशरीर के समान किसी वज्र, पर्वतादिक से रुक नहीं सकता, स्वयं किसीको रोकता नहीं।** क्योंकि वह तो सूक्ष्मरूप पुद्गल है तो वह शरीर अन्य किसीको रोके ऐसा भी नहीं है, उसमें से भी कोई थ्रू ॲण्ड थ्रू पार हो सकते हैं, हां। **इसकी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति अंतर्मुहूर्त कालप्रमाण है।** क्योंकि छठे गुणस्थान का जो काल है जो छठा गुणस्थान प्रारंभ होने पर इन कर्मों का उदय होगा, फिर उनके ये छह पर्याप्ति होगी, फिर आहारकशरीर की रचना होगी और फिर गमन करके वहां जाकर वापस आयेंगे। यह पूरा ही कार्य छठे गुणस्थान के काल के अंतर्मुहूर्त से भी छोटे काल में संपन्न होगा। इसलिये इसका काल अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही है।

सीमंधर भगवान के पास जो अपने कुंदकुंद आचार्य गये थे वे आहारकशरीर से गये थे न? *श्रोता: नहीं।* नहीं, क्योंकि वे आठ दिन रहे थे वहां। वे सदेह विदेह गये थे; सदेह यानी औदारिकशरीर से गये थे, डायरेक्ट गये थे, हां। **जब आहारकशरीरपर्याप्ति पूर्ण हो जाये,** आहारकशरीर में भी छह पर्याप्ति होती हैं; आहारक संबंधी आहारपर्याप्ति, आहारक संबंधी शरीरपर्याप्ति, उस संबंधी वे सारे लगा लेना उसमें। *श्रोता: उसमें मन वगैरह?* हां, उसमें भी होते हैं क्योंकि जानने का कार्य होगा कि नहीं वहां? आत्मप्रदेश यहां से वहां तक फैले रहेंगे परंतु वहां पर भी जानने का कार्य होगा क्योंकि तीर्थंकर के पादमूल में जाते ही उनके समाधान हो जाता है। *श्रोता: भाषा भी?* हां, भाषापर्याप्ति भी, सभी पर्याप्ति होती हैं उनके। तो इसलिये कहते हैं, **आहारकशरीरपर्याप्ति पूर्ण हो जाये, तब कदाचित् किसी आहारक काययोग के धारक प्रमत्त मुनि का आहारक काययोग के काल में अपनी आयु के क्षय से मरण भी हो सकता है,** वह तो योग का प्रकरण है इसलिये बाकी बातें वहां बतायी हैं। अपना विषय तो इतना ही था कि आहारकशरीर क्या है उसको समझना। तो हमें यहां फिर अपने ६३७ पेज पर आना है, दूसरी पुस्तक में।

श्रोता: एक प्रश्न है – क्या आहारकशरीर के साथ मुनिराज नंदीश्वर द्वीप जाकर मंदिरों के दर्शन कर सकते हैं? वह कितने नंबर का है द्वीप? *श्रोता: आठवां।* आठवां,

कितना दूर है? *अन्य श्रोता: नहीं जा सकते भाई।* मनुष्य तो ढाई द्वीप के बाहर नहीं जाता, यह मनुष्यक्षेत्र जिसको कहने में आता है उसके बाहर आहारकशरीर के साथ भी नहीं जा सकते, ख्याल में आया? वे मेरु की वंदना करेंगे परंतु *श्रोता: पंचमेरु की।* हां पंचमेरु की करेंगे, नंदीश्वर द्वीप की नहीं करेंगे। वह तो हम भाव से ही उनको वंदन करते हैं यहां से, है न? हां, देव भी वहां ले जाना चाहे किसी मनुष्य को, तो भी नहीं ले जा सकते।

हां, अभी हम आगे बढ़ते हैं, तो **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल किसी एक समय में ग्रहण किये,** ग्रहण किये तो एक समय में जितने ग्रहण करेंगे उसको समयप्रबद्ध कहेंगे। यह समयप्रबद्ध में कितने अनंत परमाणु होते हैं उसको हमने देखा है। तो ये अनंत परमाणुओं का प्रमाण भी औदारिकशरीर का जो समयप्रबद्ध है वह सबसे छोटा है। उससे वैक्रियिकशरीर का जो समयप्रबद्ध है वह कितने गुणा है? तो असंख्यातगुणा है। उससे आहारकशरीर संबंधी समयप्रबद्ध असंख्यातगुणा है, उससे तेजसशरीर संबंधी अनंतगुणा है और कार्माणशरीर संबंधी उससे भी अनंतगुणा है। हम-आप औदारिकशरीर, तेजसशरीर और कार्माणशरीर, तीनों ही शरीरों के परमाणु हर समय में ग्रहण कर रहे हैं। क्योंकि तेजसशरीर, कार्माणशरीर के परमाणुओं का तो निरंतर ग्रहण और बंध तो चलता ही रहता है। औदारिकशरीर के लिये आहारवर्गणा का भी उस भव में पहले समय से अंत समय तक ग्रहण होता ही होता है, केवल विग्रहगति में नहीं होता। औदारिकशरीर के लिये परमाणुओं का जो ग्रहण किया है वह उसी भव तक चलेगा – ग्रहण भी और उसका छूटना भी और कार्माण और तेजससंबंधी जो परमाणु ग्रहण किये हैं उनकी तो स्थिति लंबी होती है। वे तो जो ग्रहण किये हैं वे भवों-भवों तक रहेंगे वहां जीव के साथ पड़े रहेंगे। हां, उसकी तो चर्चा हम बाद में करेंगे।

अब यहां जो ग्रहण करता है तो कहां से करता है? यह हमारा प्रश्न है। अब उसके लिये पुस्तकों का आधार तो हम आपको बाद में बतायेंगे। यहां उसीकी चर्चा करेंगे अभी कि यह जो शरीर के लिये जो अनंतानंत वर्गणा हैं वह कहां से ग्रहण होती हैं? क्योंकि हर समय में अनंत, हर समय में अनंत लाना कहां से इतने? तो कहते हैं कि चिंता मत करना। इस विश्व में पुद्गल कितने हैं? पहले में पहले जीव कितने हैं? उसको नक्की करेंगे। *सभी श्रोता: अनंत हैं।* अनंत हैं और पुद्गल कितने हैं? *श्रोता: अनंतानंत।* कितने अनंतानंत?

अनंतगुणा अनंत? *श्रोता: जीव से अनंतानंत।* देखो कैसे? देखो एक होती है द्विरूपवर्गधारा, दो का वर्ग है चार, अभी यह ऐसी धारा है कि इसमें सारे वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग ही करना है। चार अपना स्टार्टिंग पॉइंट है, यानी दो का वर्ग चार से हम शुरुआत करेंगे, चार का वर्ग? *श्रोता: सोलह।* यह चार पहले स्थान पर, सोलह दूसरे स्थान पर, सोलह का वर्ग? *श्रोता: दो सौ छप्पन।* दो सौ छप्पन, उसका वर्ग? पणट्ठी, उसकी व्हॅल्यू कितनी है पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस, उसका वर्ग बादाल, वह कितने? टेन डिजिट प्रमाण है। छठा वर्ग? ट्वेंटी डिजिट प्रमाण है जिसको एकट्ठी कहते हैं। तो हमने पांच-छह बार वर्ग किया तो हमारे वे कॉम्प्युटर-कॅल्क्युलेटर सब फेल हो जायेंगे, काम नहीं करेंगे। ट्वेंटी डिजिट दिखाते हैं क्या? *श्रोता: ट्वेल्व्ह डिजिट,* हम तो ट्वेंटी की बात कर रहे हैं। वे नहीं दिखेंगे आपको, हां, अब हमारी तो ट्वेंटी की बात कर रहे हैं हम, वह तो खाली दो संख्या के छठे वर्गस्थान की ही हमने व्हॅल्यू बतायी।

अब दो के बदले जीवराशि जो अनंत है उसको रखना पहले में पहले। जीवराशि का वर्ग करना, एक बार हुआ, उस वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग – कितनी बार? अनंतानंत बार। इतने तो पुद्गल परमाणु इस विश्व में हैं। तो चिंता मत करना कि उसने इतने पुद्गल लिये तो मैं कहां से लूं? और ये कहां पर पहले सारे पड़े हैं? इतने अनंतानंत पुद्गल? लोकाकाश में हैं उसके बाहर तो हैं ही नहीं और लोकाकाश कितना बड़ा है? असंख्यातप्रदेशी है न? लोकाकाश में प्रदेश कितने हैं? असंख्यात प्रदेश हैं, तो पूरे लोकाकाश में असंख्यात प्रदेश हैं। यानी ये जो अनंतानंत परमाणु कहां पर हैं? तो पूरे लोकाकाश में हैं। तो मान लेते हैं जीव का आकार इतना है इस पेन जितना तो इतने प्रदेशों में कितने परमाणु हैं? वह पूरे लोकाकाश का कितना भाग होगा इसमें? असंख्यातवें भागप्रमाण। ये जो प्रदेश हैं पूरा लोकाकाश असंख्यातप्रदेशी और यह पेन भी असंख्यातप्रदेशी आकारवाला है। *श्रोता: प्रदेश?* हां, प्रदेश की अपेक्षा यह आकाश के असंख्यात प्रदेश को रोकेगा। परंतु पूरे लोकाकाश का यह असंख्यातवां भाग है। तो जो अनंतानंत परमाणु हैं उसके असंख्यातवें भागप्रमाण, यानी इतने अनंतानंत परमाणु इतनी अवगाहनावाले जीव के क्षेत्र में होंगे। इसकी क्या बात है हं! निगोद भी जो है उसकी भी अवगाहना में कितने परमाणु होंगे? अनंतानंत होंगे। यानी प्रत्येक जीव जहां पर स्थित है उसके एकक्षेत्र में उसका जो अवगाहनावाला क्षेत्र है उसमें अनंतानंत पुद्गल परमाणु पड़े हैं।

अब उसमें से यह जीव कहां से ग्रहण करता है? इसलिये हमें आधार है धवला पुस्तक ४, पृष्ठ संख्या ३२७ और वहां जो गाथा है वही गाथा कर्मकाण्ड में भी है; गाथा १८५। आपके पास नहीं है कर्मकाण्ड, हां, केवल इस एक रेफरन्स के लिये आपको इतना क्यों बोझा उठाना? इसलिये मैंने नहीं बताया कि आपको लाना है। यह प्रदेशबंध का कथन जहां शुरुआत होता है १९३ पृष्ठ पर कर्मकाण्ड, पेज नंबर १९३। तो..., *श्रोता: गाथा बोलेंगे?* हां, गाथा बोलेंगे हम। तो यहां पूछा गया था कि यह जो जीव परमाणुओं का ग्रहण करता है, किसका? कर्म का भी, तेजस का भी और औदारिक आदि शरीर का भी। वह कहां से वे परमाणुओं को ग्रहण करता है? क्योंकि आज तक तो हमने ऐसे ही समझा था न कर्म आते हैं। आते हैं यानी बाहर से अंदर आते हैं तो हमने उसको आते हैं कहा और जाते हैं तो बाहर चले जाते हैं ऐसे ही हमने समझा था। अभी हम पूछेंगे आचार्यजी को, जो गाथा वहां पर धवला ग्रंथ में है वही कर्मकाण्ड में, गोम्मटसार के कर्मकाण्ड में वही गाथा है वह गाथा मैं आपको पढ़कर सुनाऊंगी।

एयक्खेत्तोगाढं सव्वपदेसेहिं कम्मणो जोग्गं।
बंधदि सगहेदूहिं य अणादियं सादियं उभयं।।१८५।।

इसका अर्थ देखते हैं – यानी यहां ऐसा कहते हैं एकक्षेत्रावगाही, यानी सूक्ष्म, देखो यहां दो शब्द आयेंगे एकक्षेत्र और अनेकक्षेत्र, एकक्षेत्र किसको कहना? एक जीव ने जितना क्षेत्र व्यापा है उसको एकक्षेत्र कहेंगे। अनेकक्षेत्र किसको कहेंगे? इतना एकक्षेत्र छोड़कर बाकी पूरे लोकाकाश में जो प्रदेश हैं उसको अनेकक्षेत्र कहेंगे। तो हम सभी अनंत जीवों की अपेक्षा – ॲव्हरेज क्षेत्र कितना है ऐसा पूछेंगे, तो जो अनंत जीवों का क्षेत्र होगा वही एकक्षेत्र कहलायेगा। मेजॉरिटी किस पर्याय में रह रहे हैं अनंत जीव? तो कहते हैं निगोद पर्याय में। तो उसमें भी जो सूक्ष्म निगोदिया है उनका जो क्षेत्र है उसको यहां एकक्षेत्र कहेंगे। इसलिये अब पढ़ेंगे, **सूक्ष्म निगोदिया के शरीर का घनांगुल के असंख्यातवें भागमात्र जघन्य अवगाहनरूप क्षेत्र है।** अवगाहना यानी कितनी जगह व्यापते हैं उसको अवगाहना कहते हैं। तो सूक्ष्म निगोद जीव का जो साइझ है, अवगाहना है, वह भी जघन्य अवगाहना **उसको एकक्षेत्र कहते हैं। उस एकक्षेत्र में अवगाहरूप रहनेवाले जो कर्मरूप परिणमने के योग्य** पुद्गल, पुद्गल तो अनंतानंत पड़े हैं। परंतु ये तो एकप्रदेशीवाले

परमाणु वे तो कर्मरूप नहीं होते, दोप्रदेशीवाले नहीं होते, या द्व्यणुकवाले नहीं होते, त्रिअणुकवाले नहीं होते, असंख्यात अणुकवाले नहीं होते। आहारवर्गणा भी कर्मरूप नहीं हो सकती है, बीचवाले अग्राह्यवर्गणा भी नहीं हो सकती है, तेजसवर्गणा भी नहीं हो सकती, भाषावर्गणा – मनोवर्गणा भी नहीं हो सकती।

तो कर्मरूप परिणमने के योग्य कौनसी वर्गणा होती है? *श्रोता: कार्माणवर्गणा।* कार्माणवर्गणा। तो कार्माणवर्गणा भी अनंतानंत पड़ी हैं। तो एक समय में क्या वहां पड़ी हुयी सभी परिणमित होती हैं? नहीं; उस समय कर्मरूप होने योग्य जो है, वही परिणमित होगी। तो **कर्मरूप परिणमने योग्य अनादि, सादि और उभयरूप पुद्गलद्रव्य।** पुद्गल को भी सादि-अनादि कहा। तो पुद्गल को सादि कहने से क्या वह पहले जीव था और बाद में पुद्गल हुआ क्या? क्योंकि सादि मिथ्यादृष्टि किसको कहते हैं? जो सम्यक्त्व से गिरकर आता है, वह सादि मिथ्यादृष्टि। तो सादिपुद्गल किसको कहेंगे और अनादिपुद्गल किसको कहेंगे? उसकी बाद में चर्चा करेंगे अभी हम। अब ऐसा जो द्रव्य है, कौनसा? कर्मरूप परिणमने के योग्य और कहां पर स्थित है? उसी एकक्षेत्र में स्थित है। यानी हम जिस किसी जीव की बात कर रहे हैं; उसका जो अवगाहना का क्षेत्र है, उसके आत्मप्रदेश जितने क्षेत्र में फैले हैं, उसी क्षेत्र में रहनेवाले जो पुद्गल परमाणु हैं, वे पुद्गल परमाणु; तो बहुत सारी वर्गणायें पड़ी हैं वहां पर, उनमें से भी कार्माणवर्गणा चाहिये। वे कार्माणवर्गणारूप पुद्गल हैं वे भी कोई सादि हैं, कोई अनादि हैं, कोई उभयरूप हैं। उनमें भी जो अनंतानंत में से अनंतवें भागप्रमाण उस समय कर्मरूप परिणमने के योग्य होंगे। सभी के सभी तो कर्मरूप परिणमित नहीं होंगे, तो वे ही परमाणु जीव ग्रहण करता है यानी वह कार्माणवर्गणा कर्मरूप होती है।

उसी क्षेत्र में थे तो ग्रहण क्या किया? उस क्षेत्र में थे तब तक वह जीव का कर्म नहीं कहलाया था। कार्माणवर्गणा से यानी रॉ मटीरिअल से जब कर्मरूप हो गया तब हम कहेंगे जीव ने उसको ग्रहण किया। तो यह कैसे होता है? तो जीव के जो मोह-राग-द्वेष परिणाम हैं, जो योग है उनके कारण यह बात हो जाती है। तो वह क्यों बांधता है जीव? सिद्ध भगवान तो कोई ऐसे कर्म-नोकर्म का ग्रहण नहीं करते। वहां पर भी उनके एकक्षेत्र में परमाणु पड़े रहेंगे कि नहीं पड़े रहेंगे? जहां सिद्ध भगवान है वहां पर ये कार्माणवर्गणायें होंगी

कि नहीं होंगी? *श्रोता: होंगी।* होंगी, वे नहीं बांधते और हम बांध रहे हैं। जहां सिद्धों के प्रदेश हैं वहां कोई अन्य जीव रहते होंगे या नहीं रहते होंगे? *श्रोता: एकेन्द्रिय जीव।* सभी पांच प्रकार के सूक्ष्म जीव रहेंगे वहां पर; अग्निकायिक, वायुकायिक वगैरह। तो मेरा प्रश्न है, उनको थोड़ा सुख होता होगा कि नहीं क्योंकि सिद्धों के प्रदेशों में वे रह रहे हैं? *श्रोता: एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता।* हां, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कुछ नहीं करता। तो वहां के भी जीवों के और अन्यत्र भी सभी जीवों के उनके अपने-अपने क्षेत्र में जो कर्मरूप होनेयोग्य कार्माणवर्गणायें पड़ी हैं वे कर्मरूप परिणमित होती हैं। क्यों होती हैं? कि **जीव नामक पदार्थ अपने सर्व प्रदेशों द्वारा** उनको ग्रहण करता है और क्यों ग्रहण करता है? **मिथ्यात्वादि के निमित्त से बांधता है।** यह कर्म क्यों बांधता है? तो मिथ्यात्वादि के निमित्त। मिथ्यात्वादि में क्या-क्या आता है? *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।* मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग – ये बंध के हेतु हैं, इनके कारण ये कर्म बंधते हैं। बात ख्याल में आती है न?

तो यहां तो इतनी सारी बातें बतायी हैं कि ये मिथ्यात्वादि जो हैं – वे कहां हो रहे हैं? कि जीव के प्रदेशों में हो रहे हैं और उन्हीं प्रदेशों में जो पुद्गल हैं, वे ही पुद्गल जो कार्माणवर्गणारूप हैं और उस समय में कर्मरूप परिणमने के योग्य हैं, वे पुद्गल मिथ्यात्वादि के कारण स्वयं कर्मरूप परिणमित हो जाते हैं; अपनी उपादान शक्ति से। वहां जीव का हेतु यानी वह निमित्त बनता है यानी यहां मोह-राग-द्वेष हो जावे और बाहर की कोई कार्माणवर्गणा यहां आकर कर्मरूप हो जावे ऐसा बनता ही नहीं है। उसी क्षेत्रवाले परमाणु ही कर्मरूप होते हैं। अब उसका अर्थ हम और देखेंगे। **एक शरीर की अवगाहना द्वारा रोका हुआ जो आकाश,** यानी आकाश के प्रदेश **उसे एकक्षेत्र कहते हैं, घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण एकक्षेत्र जानना, यद्यपि शरीर की अवगाहना,** शरीर की अवगाहना यानी अलग-अलग जीवों का साइझ, आकार। सूक्ष्म निगोद की सबसे कम अवगाहना है और सबसे बड़ी अवगाहना किस जीव की है आपको मालूम है? *श्रोता: महामत्स्य की।* महामत्स्य की। कितनी है? *श्रोता: साढ़े बारह करोड़ घनयोजन।* हां, साढ़े बारह करोड़ घनयोजन, वह कितने लंबे-चौड़े आकार का हो जायेगा। तो सूक्ष्म निगोद से लेकर एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के अनेक भेद हैं। तो कहते हैं, **यद्यपि शरीर की अवगाहना जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक और समुद्घात की अपेक्षा लोकप्रमाण तक होती है।**

समुद्घात तो पूरे लोक में होता है या अन्य-अन्य जीव समुद्घात करते हैं तो लोक में कहीं भी करते हैं। मारणांतिक समुद्घात किसी जीव ने किया तो जहां से वह मारणांतिक कर रहा है और जहां जन्मना है वहां तक उसके प्रदेश फैले रहते हैं।

तो जब मारणांतिक कर रहा है तब कर्म का बंध होगा कि नहीं होगा? होगा न? अभी मरण को अंतर्मुहूर्त बाकी है और कर्मों का ग्रहण तो हर समय चल रहा है। तो कहां के परमाणुओं को ग्रहण करेगा? जहां तक प्रदेश फैले हैं वहां पर जो पुद्गल परमाणु पड़े हैं उनको भी ग्रहण करेगा। ख्याल में आती है बात? *श्रोता: वहां के परमाणु भी?* हां, बिलकुल। *श्रोता: दोनों जगह?* कहां पर? *श्रोता: जहां पर मूल शरीर है और जहां तक फैले हैं?* आत्मप्रदेश तो फैले हैं और आत्मप्रदेशों के द्वारा ही ग्रहण होता है। समस्त आत्मप्रदेशों के द्वारा कर्मों का ग्रहण हो रहा है; यह बात है उसके अंदर। **वहां जघन्य अवगाहना का प्रथम भेद** यानी सबसे छोटे में छोटे आकारवाला। अभी वे डिटेल्स बताये हैं, पढ़ लेते हैं; **पल्य के असंख्यातवें भाग से भाजित घनांगुल** यानी घनांगुल का असंख्यातवां भाग है **और अंतिम भेद लोकप्रमाण है।** क्योंकि वह बड़ी अवगाहना ली क्योंकि केवली समुद्घात करते हैं न उस अपेक्षा से यहां बात की है। केवली भगवान जब समुद्घात करते हैं न, तब कुछ परमाणु का ग्रहण होता होगा कि नहीं होगा? कर्म का बंध होगा कि नहीं होगा? *श्रोता: बंध नहीं होगा।* बंध क्यों नहीं है? एक समयवाला है न, *श्रोता: ईर्यापथास्रव।* प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध है; स्थितिबंध, अनुभागबंध नहीं है। देखो, तेरहवें गुणस्थान में मात्र सातावेदनीय कर्म बंधता है और वह एक समयवाला है। उसमें न स्थिति पड़ती है, न अनुभाग पड़ता है। एक समय में आया है उसी समय में उदयरूप है, दूसरे समय में नहीं रहा। उदयरूप होते हुये ही आया है और दूसरे समय में वह रहता ही नहीं, दूसरे समय में दूसरे आते हैं और उदयरूप होकर चले जाते हैं।

तो वहां पर भी आत्मप्रदेश पूरे लोक में फैले हैं तो सातावेदनीय के परमाणु कहां-कहां से लेंगे? पूरे लोक में से लेंगे कि नहीं? हां, लेते हैं। तो अभी हमें इसका ॲव्हरेज निकालना है। मान लेते हैं जघन्य है पांच और उत्कृष्ट है सौ। तो उसका ॲव्हरेज कैसे निकालेंगे? ये सारे मॅथेमॅटिशिअन्स बैठे हैं न? हां, बोलो-बोलो? *श्रोता: फाइव्ह प्लस हंड्रेड डिव्हायडेड बाय टू।* हां, अभी हम क्या करेंगे? अब अवगाहना के भेद कितने होते हैं उसे

देखेंगे। **अंत में से आदि को घटाकर,** ये सभी भेद कितने होंगे? पांच से लेकर सौ तक के भेद कितने होते हैं? नाइंटी फाइव्ह होते हैं कि नाइंटी सिक्स होते हैं? सौ में से पांच घटाओ और एक मिलाओ क्योंकि हमें पांच को भी गिनना है और सौ को भी गिनना है; नाइंटी सिक्स होंगे। ऐसे ही यहां कितने भेद होंगे अवगाहना के? केवली समुद्घात की अपेक्षा सर्वोत्कृष्ट अवगाहना पूरा लोक है और वह छोटी अवगाहनावाला जघन्य भेद है। मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा उत्कृष्ट अवगाहना सातवें नरक में मारणांतिक समुद्घात करनेवाले महामत्स्य की होगी। उत्कृष्ट अवगाहना के असंख्यात प्रदेश मायनस जघन्य अवगाहना के घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण प्रदेश प्लस वन इतने अवगाहना के भेद होंगे। एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये सभी अवगाहना इस विश्व में पायी जायेंगी।

तो इसमें देखो, यहां लिखा है **अंत में से आदि को घटाकर एक मिलाने पर अवगाहना के समस्त भेद होते हैं; तथापि बहुत** यानी अनंत **जीव घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण शरीर की अवगाहना के धारक हैं।** एक निगोद पर्याय ही ऐसी है जहां अनंत जीव पाये जाते हैं। सूक्ष्म निगोद भी अनंत हैं, बादर भी अनंत हैं, उसमें पर्याप्त हैं, अपर्याप्त हैं, सभी जो व्हरायटी हैं वे सारे अनंत हैं। बाकी प्रत्येक वनस्पति कहो, वायुकायिक कहो अग्निकायिक कहो, जलकायिक कहो, कोई भी हो, द्वीन्द्रिय आदि हो, पंचेन्द्रिय हो, वे सभी कितने हैं, तो असंख्यात हैं। एक निगोद पर्याय ही ऐसी है जहां अनंत जीव रहते हैं। तो मेजॉरिटी किसकी है, तो निगोद की है, अनंत जीवों की है और अनंत जीवों की अवगाहना कितनी है? तो घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण। इसलिये यहां एकक्षेत्र में, क्योंकि एकक्षेत्र क्या है? हर एक का अपना-अपना एकक्षेत्र। फिर भी यहां मेजॉरिटी की अवगाहना कितनी होंगी? वह सारा मिलकर भी घनांगुल का असंख्यातवां भाग कहेंगे, ख्याल में आती है न बात? क्योंकि अनंत एक बाजू है वह अनंत बहुत बड़ी संख्या हो जाती है। तो कहते हैं, **बहुत जीव घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण शरीर की अवगाहना के धारक हैं, इसलिये मुख्यता से एकक्षेत्र का प्रमाण घनांगुल के असंख्यातवें भागमात्र कहा है**। यह एकक्षेत्र में से ग्रहण करते हैं उसका अर्थ ख्याल में आया? एक जीव की – यहां हम अपनी-अपनी बात करेंगे, हमारी जितनी अवगाहना है, उस क्षेत्र में जो पुद्गल हैं उन्हीं में से कर्म का या शरीर के परमाणुओं का ग्रहण होगा। **इतने क्षेत्र के बहुत प्रदेश हैं, इसलिये प्रदेशों की अपेक्षा यह अनेकक्षेत्र हैं**। आगे भी लिखते हैं **इस एकक्षेत्र के**

परिमाण से हीन, यानी एक क्षेत्र का जो प्रमाण है उसको लोकाकाश के प्रमाण में से मायनस करना, **उसको अनेकक्षेत्र कहते हैं**। यह हमने आपको बताया था, यहां से पढ़कर आपको बता रहे हैं। यह भी बताया था कि संपूर्ण लोक में पूरी पुद्गलराशि पायी जाती है, तो एकक्षेत्र में कितनी पायी जायेगी? पूरे का असंख्यातवां भाग।

प्रश्न: एक प्रश्न के उत्तर में आपने कहा, आत्मा के प्रदेश घूमते हैं, तो उस आत्मप्रदेशों का वेदन या ज्ञान हमें क्यों नहीं होता? यह तो सहज घूमना है, यह योग है वह तो सहजरूप से होता रहता है। यह घूमने में कैसा अनुभव होगा आपको? जैसे हम शरीर के साथ घूमते हैं या शरीर घूम रहा है ऐसा जो पता चलता है वैसी तो बातें वहां नहीं होती हैं और यह परिणमन जो है, या घूमना जो है, वह तो सूक्ष्म परिणमन है। अभी तो हम अपने विषय को लेकर आगे चलेंगे। तो यह जो हमने देखा था इतना जो एकक्षेत्र संबंधी पुद्गल है उसीका ग्रहण होगा। यहां तक बात आ गयी हमारी।

अब आगे देखते हैं, १८७ की टीका। मैं आपको पढ़कर बता रही हूं क्योंकि इसमें से बस इतना ही विषय चलेगा। बाद में कर्मकाण्ड तो लगनेवाला नहीं है। यह सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड में से मैं पढ़ रही हूं। **उन एक-अनेक क्षेत्र में रहनेवाले रूपी पुद्गलद्रव्य के प्रमाण के अनंतवें भागप्रमाण तो अपना-अपना योग्य पुद्गलद्रव्य है**, क्या कहना चाहते हैं? कि यह एकक्षेत्र में रहनेवाले पुद्गल हो या अनेकक्षेत्र में रहनेवाले, उसमें से उसका अनंतवां भागप्रमाण द्रव्य ही योग्य पुद्गलद्रव्य है। योग्य पुद्गलद्रव्य यानी अभी हम कर्म की बात कर रहे हैं तो कर्मरूप होने योग्य और उसके अनंत बहुभाग कर्मरूप होने के अयोग्य। मान लेते हैं यह जीव की अवगाहना है, तो उतने ही क्षेत्र में रहनेवाले जो पुद्गल परमाणु, कितने? तो अनंतानंत हैं; उनमें से कर्मरूप होने के योग्य कितने हैं? उनके अनंतवें भागप्रमाण हैं। यह बात ख्याल में आयी? **शेष अयोग्य पुद्गलद्रव्य हैं। एकक्षेत्र संबंधी पुद्गलद्रव्य के प्रमाण को, अनंत का भाग देने पर एक भागप्रमाण तो कर्मरूप परिणमने के योग्य पुद्गलद्रव्य है** और **अवेशष जो** बहुभाग है, वह **कर्मरूप परिणमने** के अयोग्य है। **इसप्रकार एकक्षेत्र में स्थितवाला योग्य, एक ही क्षेत्र में स्थितवाला अयोग्य**, यानी दो प्रकार के द्रव्य हो गये; योग्य भी और अयोग्य भी ।

ऐसे एकक्षेत्र में भी कह सकते हैं और अनेकक्षेत्र में भी कह सकते हैं। अब सादिद्रव्य

और अनादिद्रव्य को भी ज़रा देख लेते हैं। यहां बताया था कि एकक्षेत्र में जो योग्यरूप पुद्गल है उसीको जीव ग्रहण करता है और ग्रहण किये हुये पुद्गलद्रव्य में से कोई तो सादि है, कोई अनादि है और कोई उभयरूप है। क्योंकि एक समय में कितना ग्रहण करता है? तो एक समयप्रबद्धप्रमाण ग्रहण करता है। तो सादिद्रव्य किसको कहना? इसकी बात यहां जानने योग्य है। **अतीतकाल में,** अतीत यानी अनादि से आज तक उसको अतीतकाल कहेंगे, अनंतकाल बीत गया है। **अतीतकाल में जीव द्वारा जो ग्रहण किया गया हो वह सादिद्रव्य है**। एक जीव के द्वारा की बात नहीं है; जितने अनंत जीव हैं, जो संसार पार करके सिद्ध भी हो चुके उनको भी इन्क्लूड कर देना, उनको भी यहां गर्भित कर देना। यानी सिद्धों सहित, क्योंकि उन्होंने भी पहले कुछ पुद्गल ग्रहण करके छोड़ा था कि नहीं छोड़ा था? यानी अनंत जो जीवराशि है उन्होंने कभी न कभी जो पुद्गल ग्रहण करके छोड़ा है, कभी न कभी – उसको कहेंगे सादिद्रव्य। अनंत जीवों में से किसी भी जीव ने कभी भी अनादि से आज तक उस पुद्गल को ग्रहण नहीं किया है, उसको अनादिद्रव्य कहेंगे। ऐसा प्रश्न धवला में पूछा है कि यहां आप उसको अनादिद्रव्य कहते हैं और शास्त्र में पुद्गलपरावर्तन के प्रकरण में कहीं-कहीं ऐसा भी कथन आता है कि इस विश्व में ऐसा कोई भी परमाणु नहीं है जो इस जीव ने अनंत बार ग्रहण करके छोड़ा न हो। यह देखो, यह आपकी दूसरी पुस्तक में है, निकालो। यही प्रश्न वहां पर भी था। यह पेज नंबर है ६४२।

सर्वेऽपि पुद्गलाः खल्वेकेनात्तोज्झिताश्च जीवेन।
ह्यसकृत्त्वनंतकृत्वः पुद्गलपरिवर्तसंसारे।।

यानी **एक जीव पुद्गलपरावर्तनरूप संसार में यथायोग्य सर्व पुद्गल बारम्बार अनंत बार ग्रहण करके छोड़ता है**। यह सर्व जीवों का सादिद्रव्य भी सब पुद्गलों का अनंतवां भाग होता है। यह यहां नहीं लिखा है; इस गाथा में तो ऐसा लिखा है कि जीव ने तो सभी पुद्गल अनंत बार भोग कर छोड़ दिये हैं। तो कहते हैं इस कथन के साथ विरोध नहीं आता है क्या? ऐसा पूछा है वहां। धवला में भी यह प्रश्न किया है; तो कहते हैं वहां सर्व पुद्गल कहने से यह तो उपचार से वहां समझ लेना। यह एक जीव की तो बात क्या है? यहां कहते हैं अनंतानंत जो जीव हैं उन्होंने कभी न कभी ग्रहण करके छोड़े हुये द्रव्य भी पूरे पुद्गलद्रव्य के अनंतवें भागप्रमाण हैं। यानी इससे अनंतगुणा द्रव्य ऐसा है कि एक भी जीव ने किसी भी प्रकार से ग्रहण नहीं किया; न कर्मरूप से, न शरीररूप से, न मनोवर्गणारूप से,

न भाषावर्गणारूप से, न तेजसरूप से। यानी वह पुद्गल की अनंतता कितनी होगी? आज पता चला, है न? आगम पढ़ते हैं तो पता चलता है, हमको भी कितनी ही नयी बातें आगम पढ़ते समय पता चली हैं।

यह जो सादिद्रव्य और अनादिद्रव्य है इसके लिये हम फिर दुबारा देखेंगे। तो यह अनादिद्रव्य या सादिद्रव्य का प्रमाण कैसे निकालेंगे हम? एक जीव एक समय में कितना ग्रहण करता है? एक समयप्रबद्ध; बराबर? एक समय में एक जीव ने एक समयप्रबद्ध ग्रहण किया है। तो एक जीव ने अनादिकाल से कितना ग्रहण किया है? अनादि के जितने समय, अनादि से आज तक के जितने समय, जिसको हम कहेंगे अतीतकाल; अतीतकाल के जितने समय हैं उन समयों को समयप्रबद्ध से गुणा करो। तो वह क्या होगा? एक जीव ने अनादि से कितने परमाणु ग्रहण किये उसका प्रमाण आयेगा। अब जीव कितने हैं ? अनंत, क्योंकि जो सिद्ध हो चुके हैं उन्होंने भी पहले ग्रहण करके छोड़ा ही है। तो सभी जीवराशि, पूर्ण जीवराशि को लेंगे, पूर्ण जीवराशि को रखेंगे और हर जीव ने एक समय में, एक समयप्रबद्ध लिया है, तो पूर्ण जीवराशि मल्टिप्लाइड बाय एक समयप्रबद्ध, मल्टिप्लाइड बाय अतीतकाल के समय। तो हमें सभी जीवों ने कभी न कभी ग्रहण किये हुये, ग्रहण करके छोड़े हुये पुद्गलों का प्रमाण आयेगा। हम ऐसा समझ लेंगे कि हर बार उन्होंने फ्रेश परमाणु ग्रहण किये, ऐसा समझ लेते हैं न, समझने के लिये। तो भी उसकी व्हॅल्यू कितनी होगी उसके लिये हम आगे पढ़ेंगे। **सादिद्रव्य का प्रमाण यहां बता रहे हैं** और वहां ऐसा भी लिखा है, जो जिनदेव ने देखा है। क्योंकि इसको कौन कह सकता है? केवलज्ञानी के बिना इसको कौन जान सकता है? यह तो किसी अल्पज्ञानी की बात नहीं है। हम आगम के द्वारा इसको जान सकते हैं, समझ सकते हैं, उस पर चर्चा कर सकते हैं। परंतु यह तो प्रत्यक्ष ज्ञानियों के जानने का विषय है। उन्होंने जानकर बताया है, तब हम यदि उसके अनुसार जानेंगे तो हमारा जानना सही कहलायेगा।

देखो, १९५ पृष्ठ पर इसकी चर्चा है, आपके पास यह पुस्तक नहीं है। अभी समयप्रबद्ध में भी उत्कृष्ट योग होगा वहां उत्कृष्ट समयप्रबद्ध होगा। सभी जीवों ने उत्कृष्ट समयप्रबद्ध बांधा था, ऐसा भी मान लेंगे क्योंकि हमें प्रमाण बड़ा बनाना है न। तो **उत्कृष्ट योग के परिणामों द्वारा उत्पन्न उत्कृष्ट समयप्रबद्ध के प्रमाण को अतीतकाल से गुणा करने पर जो प्रमाण हो**। यानी अतीतकाल में हर समय एक-एक समयप्रबद्ध वह

भी उत्कृष्ट ग्रहण किया और ऐसे कितने समय बीत चुके? जितना अतीतकाल बीत गया उतने। **उसे सर्व जीवराशि के प्रमाण से गुणा करने पर** – क्या होगा? **सभी जीवों संबंधी सादिद्रव्य** होगा। यह तो आसान है न समझने के लिये? उसको आगे हम कैसे डिराइव्ह करना है वह देखेंगे – पहले में पहले क्या देखा हमने? प्रत्येक समय में हर जीव ने उत्कृष्ट समयप्रबद्ध ग्रहण किया, ऐसा मान लेते हैं। सादिद्रव्य जानना है, हम उसको बढ़ा-चढ़ाकर बोल रहे हैं। तो उत्कृष्ट समयप्रबद्ध क्यों बांधा? क्योंकि उत्कृष्ट योग से उत्कृष्ट समयप्रबद्ध बंधता है। योग के कारण परमाणु कितने बंधते हैं वह निश्चित होता है। जहां योग ज्यादा वहां परमाणु का प्रमाण ज्यादा। इसलिये उत्कृष्ट योग से उत्कृष्ट समयप्रबद्ध यानी मॅक्झिमम उन्होंने परमाणु ग्रहण किये ऐसा हम मानेंगे। तो ऐसा कब किया है? तो अनादि से आज तक अतीतकाल जितना बीत चुका है उतने समयों में। तो अतीतकाल कितना बीत चुका है? *श्रोता: अनंतकाल।* उसका प्रमाण हमको नक्की करना है, गणित के द्वारा नक्की करना है। तो अतीतकाल नक्की करने के लिये हम सिद्ध भगवान की थोड़ी हेल्प लेंगे। तो हर छह महिने और आठ समय में छह सौ आठ जीव मुक्त होते हैं और ऐसे छह महीने आठ समय कितनी बार गये हैं? यानी, देखो यहां लिखा है उसको हम देखेंगे। यह सादिद्रव्य जानने के लिये, आप चार्ट का आधार लेंगे तो आपके सामने वह फिगर होगी तो आपको समझने में आसानी होगी। अब आपके सामने जो बोर्ड पर चार्ट लगा है उसके अक्षर बहुत छोटे हैं। उस चार्ट में क्या लिखा है? मैं आपको बता दूंगी।

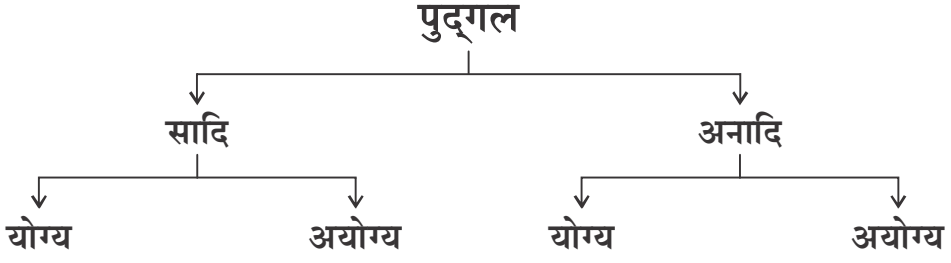

सादिपुद्गल का प्रमाण = जीवराशि × समयप्रबद्ध × अतीत काल के समय

= जीवराशि × (सिद्धराशि का अनंतवां भाग)

× (सिद्धराशि × संख्यात आवली)

= जीवराशि × जीवराशि का अनंतवां भाग

ऊपर लिखा है पुद्गल, यह पुद्गल का हम माप ले रहे हैं। वह कितना होता है? तो हमने देखा है, जीवराशि को अनंतानंत बार वर्ग का वर्ग करो तो इतने पुद्गल हैं। तो उसमें तो कुछ सादिपुद्गल हैं और कुछ अनादिपुद्गल हैं। यह योग्य-अयोग्य की भी बातें हमने देखी थी, योग्य यानी कर्मरूप होने के योग्य और अयोग्य यानी कर्मरूप होने के अयोग्य; उस समय की बात है। यह सादि में भी योग्य-अयोग्य हैं और अनादि में भी योग्य-अयोग्य द्रव्य होता है। यहां तक बात ख्याल में आयी?

तो यहां सादिपुद्गल का प्रमाण हमको लाना है। सादिपुद्गल हमने उसीको कहा था जो सभी जीवों ने अनादि से आज तक, हम कहेंगे हर समय उत्कृष्ट समयप्रबद्ध बांधकर ग्रहण किया था। तो यह जीवराशि यानी संपूर्ण जीवराशि सिद्धों सहित को लिया, क्योंकि सिद्धों ने भी पहले ग्रहण करके छोड़े थे। फिर एक-एक समयप्रबद्ध ग्रहण किया इसलिये उत्कृष्ट समयप्रबद्ध की संख्या से उसको गुणा करेंगे और अतीतकाल के समयों से गुणा करेंगे, तो हमें संपूर्ण लोकाकाश में जितना सादिद्रव्य है उसका प्रमाण मिल जायेगा। यहां तक बात ख्याल में आयी?

श्रोता: अनादि में योग्य-अयोग्य होते हैं? अनादिपुद्गल जो है यानी किसी जीव ने आज तक ग्रहण नहीं किया है। उसमें से कुछ ही परमाणु कर्मरूप होने के योग्य होंगे। सभी तो नहीं होगे न? भले वह अनादि भी, देखो ऐसा कुछ नहीं कि सादिद्रव्य को ही ग्रहण करता है या अनादि को ही ग्रहण करता है, दोनों ही प्रकार के ग्रहण होंगे। तो उनमें भी कर्मरूप होने के योग्य हैं वे ही कर्मरूप हो जायेंगे, सभी तो नहीं होंगे। तो सादि में भी योग्य-अयोग्यद्रव्य है और अनादि में भी योग्य-अयोग्यद्रव्य है। योग्य का अर्थ है, उस समय कर्मरूप परिणमने की उनमें योग्यता है।

अभी यह सादिपुद्गल का प्रमाण फिर दुबारा देखते हैं। पूरी जीवराशि रखी हमने, प्रत्येक जीव ने एक-एक समय में एक-एक उत्कृष्ट समयप्रबद्ध ग्रहण किया। यहां लिखा नहीं उत्कृष्ट, पर यहां हम समझेंगे, क्योंकि पुस्तक में लिखा है उत्कृष्ट समयप्रबद्ध और उसको अतीतकाल के समयों से गुणा करेंगे तो हमें पूरा सादिद्रव्य का प्रमाण मिल जायेगा। अब वह जीवराशि को तो जीवराशि रखा, समयप्रबद्ध कितना होता है? हमने देखा था, सिद्धराशि के अनंतवें भागप्रमाण और अभव्यों से अनंतगुणावाला जो अनंत है उतना अनंत

समयप्रबद्ध में होता है। उसमें से भी हमने उत्कृष्ट अनंत को यहां लिया, उत्कृष्ट समयप्रबद्ध। अतीतकाल के समयों को हमको यहां निकालना है, उसका कॅल्क्युलेशन करना है। वह कैसे निकालना? तो सिद्धराशि गुणा संख्यात आवली। उसका अर्थ क्या है? छह महीने आठ समय में छह सौ आठ जीव मुक्त होते हैं, तो ॲव्हरेज कितना होगा? एक सिद्ध के लिये कितना काल लगेगा? कितने काल में एक-एक जीव सिद्ध होता है? छह महीने आठ समय डिव्हाइडेड बाय छह सौ आठ। बराबर? ख्याल में आती है बात?

तो जो कुछ उसकी फिगर होगी उसको हम संख्यात आवली कहेंगे। आवली तो हमने देखा, सेकंड में भी हजारों कोड़ाकोड़ी होती हैं। परंतु उसको हम संख्यात आवली कहकर, वह संख्यात का प्रमाण कितना भी हो; अरबों-खरबों जो कुछ होगा। ख्याल में आती है बात? उसको संख्यात आवली बस इतना कहेंगे यानी उसमें असंख्यात समय होंगे। यानी इसका अर्थ क्या है समझ में आता है? यह कॅल्क्युलेशन आपको जरा समझना है, छह महीने आठ समय में छह सौ आठ जीव मुक्त होते हैं, तो ॲव्हरेज एक जीव के लिये कितना काल लगेगा मुक्त होने में? *श्रोता: छह महीने आठ समय डिव्हाइडेड बाय छह सौ आठ।* यानी हां, छह महीने आठ समय डिव्हाइडेड बाय छह सौ आठ। एक जीव के लिये करीब ७ घंटे और १२ मिनट आयेंगे उसीको हमने संख्यात आवली कहा है। एक जीव के लिये संख्यात आवली यानी असंख्यात समय, तो उसको सिद्धराशि से गुणा करो, इतने समय आज तक बीत गये हैं। यहां तक ख्याल में आयी बात? सिद्धराशि भी अनंत है और यह संख्यात आवली का प्रमाण तो असंख्यात में चला जायेगा। तो सिद्धराशिवाला अनंत है, उसको असंख्यातगुणा करो, इतना समय आज तक बीत गया है। यह हमने अतीतकाल का माप देखा। कितना समय अभी आनेवाला है? तो अतीतकाल बड़ा है कि अनागत आनेवाला भविष्य काल बड़ा है? इसकी भी चर्चा करेंगे, क्योंकि दोनों ओर कोई इसको एण्ड नहीं है और उसको बिगिनिंग नहीं है। तो कौनसा बड़ा कैसे नक्की करेंगे? तो इसीसे, इसी कॅल्क्युलेशन से इसी ईक्वेशन से हम आपको प्रूव्ह करके दिखायेंगे। सिद्धराशि मल्टिप्लाइड बाय संख्यात आवली यानी पर्टिक्युलर असंख्यात तो अतीतकाल का हमें प्रमाण मिल गया। तो सिद्धराशि का अनंतवां भाग यह समयप्रबद्ध और सिद्धराशि का असंख्यातगुणावाला भाग यह अतीतकाल दोनों को हम आपस में गुणा करेंगे, यह सिद्धराशि डिव्हाइडेड बाय अनंत और यह सिद्धराशि मल्टिप्लाइड बाय असंख्यात।

संख्यात तो आवली हुयी, पर एक आवली में असंख्यात समय हैं न? इसलिये हमने डायरेक्ट असंख्यात कह दिया। तो उसका प्रमाण कितना आयेगा? जीवराशि का अनंतवां भाग, सिद्धराशि का अनंतवां भाग कहो, उसको सिद्धराशि से भी गुणा कर दो, मान लेते हैं और उसको भी असंख्यात करो तो यह सब प्रमाण मिलकर जीवराशि के अनंतवें भाग प्रमाण होगा। क्योंकि सिद्ध कितने हैं? जीवराशि के अनंतवें भागप्रमाण हैं। यानी हमारा जो कॅल्क्युलेशन सादिपुद्गल का हुआ वह कैसे हुआ, जीवराशि मल्टिप्लाइड बाय जीवराशि का अनंतवां भाग। यह सादिपुद्गल हुआ और इस विश्व में पुद्गल परमाणु कितने हैं? जीव का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग – तो सादिपुद्गल जीव के वर्गप्रमाण भी नहीं होते हैं। जीव के पहले वर्ग के प्रमाण भी सादिद्रव्य नहीं होता है और पूरे विश्व में पुद्गल कितने हैं? तो जीव के अनंतानंत बार वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग करो इतने तो ये पुद्गल इस विश्व में पड़े हैं और आज तक सिद्धों सहित सभी जीवों ने हर समय नया-नया ग्रहण करके भी छोड़ा हुआ हम अगर मान लेते हैं, तो भी जीव के वर्ग से भी कम संख्या हुयी न। जीव मल्टिप्लाइड बाय जीवराशि का अनंतवां भाग, जीव का स्क्वेअर भी तो नहीं हुआ, ख्याल में आती है न बात? तो इतने सादिपुद्गल हैं और अनादिपुद्गल की कितनी बड़ी संख्या होगी?

श्रोता: अनंतकाल बाद भी यही पोझिशन रहेगी? अनंतकाल बाद भी यही पोझिशन होगी, क्योंकि कितने सिद्ध होंगे? एक निगोद शरीर के अनंतवें भागप्रमाण जीव सिद्धराशि में पहुंच जायेंगे। तो आज के बाद, अनंतकाल के बाद भी यही प्रमाण होगा, वहां पर भी अतीतकाल से अनागतकाल तो अनंतगुणा ही रहेगा। अभी काल का प्रमाण देखते हैं – काल कितना है? काल यानी काल के अतीत और अनागत सबके तीन काल के समय मिलकर काल कितना है? अभी हमने देखा, पुद्गल कितना है? तो जीवराशि को रखो और द्विरूपवर्गधारा में वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, कितनी बार? अनंतानंत बार करो तब जाकर पुद्गलराशि आती है। आगम का क्या प्रमाण है? निकालो, क्योंकि सब लोग आगम का प्रमाण मांगते हैं, नहीं तो लगता हैं उनको अपने मन से बात कुछ कह रहे हैं, है न? ये जो संख्यामान लिखे हैं न, वहां यह बात है। द्विरूपवर्गधारा में, यह पेज नंबर आपको मिलेगा, पहला भाग, हां पहला भाग निकालो द्विरूपवर्गधारा २२९ पेज पर है और उसका प्रमाण, हां, २३१ पेज पर यह है।

पर मैं आपको जो बताना चाहती हूं यह द्विरूपवर्गधारा क्या है? उसको एक लाइन, दो लाइन पढ़कर हम आगे बढ़ेंगे। पहला भाग जीवकाण्ड का २२९ पृष्ठ निकालना है आपको, द्विरूपवर्गधारा नाम की बारहवीं धारा है। ऐसी अलग-अलग धारायें बतायी हैं, संख्याओं के सीक्वेन्सेस बताये हैं, । तो द्विरूप के वर्ग; द्विरूप यानी दो संख्या, उसका वर्ग कितना होता है? *श्रोता: चार।* चार, **द्विरूप के वर्ग से लेकर** यानी पहला स्क्वेअर – वर्ग, दो का वर्ग चार, वहां से शुरुआत करेंगे, वह पहली संख्या है। **पूर्व-पूर्व के वर्ग करने पर जो संख्याविशेष होते हैं,** यानी चार का वर्ग फिर वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग, **वे जिस धारा में पाये जाते हैं वह द्विरूपवर्गधारा है। इसका प्रथम स्थान दो का वर्ग चार, दूसरा स्थान चार का वर्ग सोलह, तीसरा स्थान दो सौ छप्पन, चौथा स्थान पणट्ठी, वह है पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस और उसका वर्ग बादाल** कहते हैं। बादाल यानी वह ४२ से शुरू होता है उसके लिये उसको बादाल कहते हैं। यहां लिखा है न जो **४२९४९६७२९६** यह पूरी फिगर है वह बादाल की है। **उसका वर्ग** कहेंगे तो **एकट्ठी**, देखो नीचे लिखा है, नीचे से तीसरी लाइन में **१८४४६७४४०७३७०९५५१६१६** यह जो है इक अठ इसलिये उसको एकट्ठी नाम है, १८ से शुरू होता है न, इसका नाम ही एकट्ठी रख दिया। ये तो छह बार वर्ग किये।

अब मैं आपको २३१ पृष्ठ पर बताना चाहती हूं, जो नया पॅरेग्राफ शुरू होता है। **जीवराशि से** यानी जीवराशि को शुरुआत में रखना उसका वर्ग करना, वर्ग का वर्ग करना, तो जीवराशि द्विरूपवर्गधारा में किस स्थानपर है? तो अनंतानंत स्थान जाने पर जीवराशि का प्रमाण आता है। **अनंतानंत वर्गस्थान जाने पर पुद्गल परमाणुओं का प्रमाण है** और **इससे अनंतानंत वर्गस्थान जानेपर तीन काल के समयों का प्रमाण है**। यानी तीन काल के समय कितने हैं? तो जो हमने इतना पूरा ही पुद्गल का प्रमाण निकाला, टोटल पुद्गल, उसको पहले स्थान पर रखो; उस पुद्गलराशि का वर्ग करो, उस वर्ग का वर्ग करो, उस वर्ग का वर्ग करो, उस वर्ग का वर्ग करो, कितनी बार? अनंतानंत बार। तब जाकर तीन काल के समयों का प्रमाण आयेगा। *श्रोता: द्विरूप या वर्ग का वर्ग?* वर्ग का वर्ग, इस धारा का नाम द्विरूपवर्गधारा है। परंतु हम जहां पहुंचे हैं, पुद्गल का प्रमाण इस वर्गधारा में आता है, उससे फिर अनंतानंत स्थान आगे चले जायेंगे, वर्ग का वर्ग करते हुये, तब जाकर तीन काल के समयों का प्रमाण आता है। यानी ये इतने तीन काल के

समय हैं, इतना भविष्यकाल हमारा बाकी है। जो गया है वह उसके सामने कुछ नहीं है। अतीतकाल से अनंतानंतगुणा काल बाकी है। अभी तो जीवराशि के वर्ग तक भी नहीं पहुंचे हैं, आगे तीन काल के समयों के प्रमाण तक पहुंचने के लिये कितनी बार वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग हो जायेगा।

तो हमने जो काल बिताया है वह भविष्यकाल के सामने कुछ नहीं है और आनेवाले इतने काल तक के लिये क्या हम दु:खी रहना चाहते हैं या सुखी रहना चाहते हैं यह नक्की करना है हमें। यानी हमें इतने काल तक रहना है, हमारा अस्तित्व इतने काल तक कायम रहनेवाला है। वह अस्तित्व हम किसरूप में बिताना चाहते हैं? अभी तक जैसा करते आये हैं, जन्म-मरण, जन्म-मरण, जन्म-मरण, इतने सब परावर्तन – क्या हमें ऐसे ही परावर्तन करते रहना है आगे तक? क्योंकि चलते रहते हैं, ऑटोमॅटिक चल रहे हैं, कोई चिंता नहीं है , कैसे करें? कहां मुड़े? क्या करें? ये सब परिणाम भी ऐसे-ऐसे होते रहते हैं और पलट-पलटकर, पलट-पलटकर ऐसी बातें होती रहती हैं जिसको हम परावर्तन कहते हैं और काल तो चलता ही रहता है आगे-आगे। तो इसका हम यहां स्वरूप देख रहे हैं कि आज तक यह अतीतकाल जो यहां हमने इतना छोटा बताया आपको, वह कितना बड़ा है?

उसकी चर्चा हम परावर्तन के आधार से करेंगे। हम तो यहां वह द्रव्यपरावर्तन यानी पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप देख रहे हैं। तो जीव एक समय में कितना ग्रहण करता है तो यह सादि भी ग्रहण करता है, अनादि भी ग्रहण करता है। यह सादि किसको कहना? उसके लिये यह सब हमने मॅथेमॅटिक्स से आपको तकलीफ दी। है न? क्या करें? जब तक इसको नहीं जानते हैं तब तक तो उसकी विशालता हम नहीं समझ सकते हैं। तो जीव यह जो ग्रहण करता है, तो उसका क्या होता है? उसकी बात अभी हम थोड़ी देर के बाद करेंगे, अभी तो अपना समय हो चुका है, यहीं रुकेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१०. कर्म - नोकर्म शरीरों की स्थिति

षट्खण्डागम के आधार से हम काल अनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। अनादि से आज तक इस जीव ने कितना काल इस संसार में घूमते हुये बिताया है उसका यहां हम थोड़ा अंदाज़ा ले रहे हैं। इसीको हम पांच प्रकार के परावर्तनों के स्वरूप में देखने जा रहे हैं। उसमें से जो सबसे पहले हम यहां देख रहे हैं उसका नाम है पुद्गलपरावर्तन या द्रव्यपरावर्तन। उसको दो प्रकार से समझाया जाता है – कर्मद्रव्यपरावर्तन और नोकर्मद्रव्यपरावर्तन। नोकर्म में शरीर के परमाणुओं के ग्रहण की बात होती है और कर्मद्रव्यपरावर्तन में कर्म के ग्रहण की बात है। किसी भी पद्धति से कैसा भी समझाया है, उसका जो अनंतकाल है वह दोनों ही प्रकार से समान यानी उतना ही होगा। तो यहां हम सबसे पहले नोकर्मद्रव्यपरावर्तन की बात कल देख रहे थे, यानी शुरू की थी हमने; और जीवकाण्ड के दूसरे भाग में हमने पढ़ा था, **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल किसी एक समय में ग्रहण किये**। इसकी अपनी बात चल रही थी।

तो यह पर्याप्ति क्या है यह बात हमने देख ली है और वह जीव परमाणुओं को ग्रहण करता है; क्यों ग्रहण करता है? वह कौनसे कर्म के उदय में क्या होता है? वह भी बात देखी थी और वह जो पुद्गल ग्रहण करता है वह कहां से ग्रहण करता है? तो कहते हैं उसी जीव के प्रदेशों में एकक्षेत्रावगाहरूप से वहां रहनेवाले पुद्गल में से ही जीव ग्रहण करता है। तो वहां जो पुद्गल पड़ा है उसमें कितना ही तो सादिद्रव्य है और कितना ही अनादिद्रव्य है। सादिद्रव्य का अर्थ है जितनी पूरी जीवराशि है - अनंत जीवराशि; उनमें से सभी जीवों ने कभी न कभी ग्रहण करके छोड़े हुये पुद्गल को सादिद्रव्य कहते हैं और अनादि से आज तक किसी भी जीव ने किसी भी रूप में इन पुद्गलों को छुआ तक नहीं है, यानी क्या? उनको ग्रहण करके कभी छोड़ा ही नहीं है; न शरीररूप से, न कर्मरूप से, न किसी अन्यरूप से; उसको कहेंगे अनादिद्रव्य, अनादिपुद्गल। तो यह सादिपुद्गल है वह अनादिपुद्गल के अनंतवें भागप्रमाण है और हम देख रहे हैं कि हर जीव ने, हर समय में उत्कृष्ट समयप्रबद्ध ग्रहण किया हो और छोड़ा हो तो भी वह कितना हो जाता है सब मिलकर?

हमने देखा था। जीवराशि गुणा जीवराशि का अनंतवां भाग इतना होता है। इसको धवला पुस्तक ४ में लिखा है, ३२६ पेज पर कि अतीतकाल में भी सर्व जीवों द्वारा सर्व पुद्गलों का अनंतवें भागप्रमाण पुद्गल पुंज भोगकर छोड़ा गया है। सभी जीवों के द्वारा भी – यानी पुद्गल की संख्या इतनी बड़ी है; जो सर्व जीवराशि से अनंतगुणा है, हमने अभी देखा। जीव को समयप्रबद्ध से गुणा किया और उसको अतीतकाल के समयों से गुणा किया है। वह सब मिलकर कितना होता है? जीवराशि मल्टिप्लाइड बाय जीवराशि का अनंतवां भाग। यह सादिद्रव्य अनंतपने हैं। तो यह जो सादिद्रव्य है वह कितना है? तो सर्व जीवराशि से अनंतगुणा है और जीवराशि के वर्ग यानी स्क्वेअर से अनंतगुणा हीन है। यह अभी हमने बोर्ड पर देखा था। वह क्यों ऐसा कहा है? इसकी बात हमने देखी थी।

तो वह कैसा है उसको भी हमने देख लिया था। इससे यह बात सिद्ध हुयी कि जीव जिन परमाणुओं को ग्रहण करता है; ग्रहण करता है ऐसा जो हम कहते हैं वे पुद्गल परमाणु कहां से आते हैं? शरीर के लिये कहो या कर्म के लिये कहो, तो कहते हैं जहां जीव स्थित है, उसके आत्मप्रदेश जिस आकाश के क्षेत्र में स्थित हैं, उसी आकाश के क्षेत्र में उतनी ही अवगाहना में एकक्षेत्रावगाहरूप से वहां पड़े हुये पुद्गल में से ही कर्मरूप होने योग्य परमाणु; वे सादि भी हो सकते हैं और अनादि भी हो सकते हैं या दोनों के मिश्ररूप-उभयरूप भी हो सकते हैं; उनमें से ही जीव ग्रहण करता है। क्यों ग्रहण करता है और कैसे ग्रहण करता है? तो सभी आत्मप्रदेशों से ग्रहण करता है। क्यों ग्रहण करता है? उसमें क्या निमित्त है? उसका हेतु क्या है? तो कहते हैं जीव के मिथ्यात्व आदि परिणामों से इनको ग्रहण करता है। हमने देखा था कि बंध के हेतु क्या हैं? तो मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग ये बंध के हेतु हैं। तो ये बंध के हेतु जो हैं, जीव के जो परिणाम हैं, उनके कारण इन परमाणुओं का ग्रहण होता है। अब यह ग्रहण होता है तो क्या होता है बाद में? उसकी अभी चर्चा चलेगी। तो ये बाहर से नहीं आते, यह बात तो अभी सिद्ध हो गयी। अब जीव उनको ग्रहण करता है तो कितने काल तक वे जीव की सत्ता में पड़े रहेंगे? क्योंकि ग्रहण कर रहा है, अनादि से ग्रहण कर रहा है तो क्या अनादि से सब परमाणु जीव ने रख लिये हैं क्या? तो अनंतों को ग्रहण भी करता है और अनंतों को छोड़ता भी रहता है, ग्रहण भी करता रहता है, छोड़ता भी रहता है। यह तो चल ही रहा है उसका। कर्म में भी अनंतानंत कर्म परमाणु हर समय ग्रहण करता रहता है और पुराने जो बंधे हुये हैं उनमें से अनंतानंत छोड़

भी देता है। फिर भी उनकी सत्ता तो अनंतानंत में, उनसे भी असंख्यातगुणावाले अनंत में बनी रहती है। क्योंकि देखो, हमने बहुत बार देखा है।

एक बड़ी टंकी है, हौज़ है, पानी से भरा हुआ है। जैसे हमने मिथ्यात्वादि पांच हेतु देखे न, वैसे ऊपर की ओर से पांच बड़े नलों में से पानी टंकी में अंदर आ रहा है और उतने ही साइझ के, नीचे की ओर से पांच नलों में से पानी बाहर बह रहा है। तो वह हौज़ कब खाली होगा? जितना आ रहा है उतना ही जा रहा है। ऐसे जितने हम बांध रहे हैं उतने ही एक समयप्रबद्धप्रमाण परमाणु जा रहे हैं और यह हम कर्मों से हरेभरे हैं, यानी उनकी सत्ता हमेशा बनी रहती है। कभी पुण्य प्रकृतियां बांधी, कभी पाप प्रकृतियां बांधी, वे तो सत्ता में पड़ी हैं। जिसका जब काल पूरा होता है, उदय का समय आता है, उसका फल देकर वह कर्म चला जाता है क्योंकि जीव के साथ रहा इतने दिन, तो कुछ भाड़ा देगा कि नहीं देगा? तो उसका फल मिलता है और वह चला जाता है। जीव हर समय नये-नये कर्मों का बंध करता रहता है और उसका उदय भी आता ही रहता है और उसके उदय के रूप में जो कोई बातें बनती हैं, जीव ने उनको अपना स्वरूप मान लिया है। यही उसकी भूल है। जब जीव भेदविज्ञान करके इनसे अपनी भिन्नता समझ लेता है तब उसको सम्यग्दर्शन होकर उसका आगे का मोक्ष का मार्ग चालू हो जाता है। फिर इस परावर्तनरूप संसार में से उसकी मुक्तता हो जाती है। अब उसीकी बात यहां चलेगी अपनी।

यह जीव जो परमाणुओं को ग्रहण करता है, वह ग्रहण करता है यानी हम उसको बंध कहेंगे। तो जहां-जहां बंध होता है तो वह जीव के साथ कितने काल तक रहेगा? ये कितने काल के लिये बंधते हैं? इसकी भी हम यहां चर्चा करेंगे। कर्मों में तो वह हमने बहुत बार देखा है कि जीव कर्म बांधता है; हीनाधिक बांधता है; पंचेन्द्रिय जीव ज्यादा बांधेगा, एकेन्द्रिय जीव कम स्थिति बांधेगा – स्थिति की बात है। जितने काल तक वे कर्म या नोकर्म जीव के साथ सत्ता में पड़े रहते हैं उसको कहेंगे इतने काल की स्थिति बंधी। जितने एक समय में बंधे हैं सब के सब एक समय में निकल नहीं जाते। तो उसको कहते हैं बंधने के बाद उसकी निषेक रचना होती है। निषेक रचना होती है यानी वहां कोई कर्म या नोकर्म लाइन से खड़े नहीं रहते, वे तो संपूर्ण आत्मप्रदेशों में फैले रहते हैं। परंतु हम अपनी ओर से, अपनी बुद्धि से उसको विचार करेंगे तो जो एक ही समय में उदय आनेवाले हैं, एक समय में एक साथ उदय आने योग्य हैं, उन सब को हम एक निषेक कहेंगे। जो कर्म

परमाणु पहले समय में उदय में आकर खिर जायेंगे वह पहला निषेक; जो दूसरे समय में अनंत परमाणु खिर जायेंगे वह दूसरा निषेक; फिर तीसरा निषेक। तो एक समय में बंधे हुये, उनकी हम कहेंगे निषेक रचना होती है; अनंत परमाणुओं में कब वे उदय में आकर खिर जायेंगे वह निश्चित होता है। उसको कहेंगे उस कर्म की वह स्थिति बंधी, इतनी स्थिति का बंध हुआ। परंतु स्थितिबंध कितना हुआ यह कहने के लिये अंतिम जो निषेक है वह कितने काल के बाद उदय में आयेगा उसको कहेंगे उतनी स्थिति बंधी।

फिर से दुबारा, कर्मों की बात पहले समझाते हैं। जैसे हमें मालूम है कि मिथ्यात्व का उत्कृष्ट स्थितिबंध होता है सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का यानी वह गुजरातीवाला सित्तेर यानी सेव्हंटी-सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति बंधी। तो उसमें सात हजार वर्ष का तो आबाधाकाल है। जिस समय बंधा उसकी बात चल रही है। आबाधाकाल है यानी वहां कोई निषेक नहीं बने हैं। फिर कितने निषेक बने? ये कब बनते हैं? बंध के समय ही यह रचना हो जाती है। आबाधाकाल के सात हजार वर्ष के बाद उसकी निषेक रचना नहीं होती है। निषेक रचना तो पहले ही समय में हुयी है, परंतु वे निषेक कहां से कहां तक बनेंगे? तो सात हजार वर्ष और एक समय – वहां पर पहला निषेक, सात हजार वर्ष अधिक दो समय पर दूसरा निषेक, सात हजार वर्ष अधिक तीन समय पर तीसरा निषेक। अंतिम निषेक कहां पर है? वर्तमान बंध के समय से सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर के अंतिम समय में उदय आने योग्य निषेक वहां पर है। तो उस समय जीव ने स्थिति कितनी बांधी कहेंगे? तो सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति बांधी ऐसा कहने में आता है। जो अंतिम निषेक है, उसकी जो स्थिति है उतना यहां स्थितिबंध हुआ ऐसा कहेंगे। एक समय में बंधे हुये कर्म एक साथ सभी के सभी उदय में नहीं आते। अपने-अपने समय पर उदय में आयेंगे और उदय में आकर निकल जायेंगे, इसको कहेंगे स्थिति। अभी यह हम यहां से...

श्रोता: आबाधाकाल से पहले कुछ परमाणु फिसल जाते हैं, निकल जाते हैं? यह बंध की अपेक्षा जो हमने कहा। उदय की अपेक्षा जो आबाधाकाल है, जैसे अभी हमने देखा मिथ्यात्व में। आपका प्रश्न ऐसा है कि आबाधाकाल के पहले भी कुछ परमाणु खिसक जाते हैं क्या? तो यह जो आबाधाकाल बताया है वह उदय की अपेक्षा बताया है। यानी बंध हुआ है तब आबाधा कितनी बनी? तो कहते हैं सात हजार वर्ष की। हम यह मिथ्यात्व कर्म

पर बता रहे हैं। ज्ञानावरण की बात करेंगे और उसके उत्कृष्ट बंध की अपेक्षा बात करेंगे तो हम कहेंगे तीन हजार वर्ष की आबाधा है।

तो वह पूरा का पूरा पहला निषेक उदय में कब आयेगा? तीन हजार वर्ष और एक समय पर – यह ज्ञानावरण की बात है। मिथ्यात्व की बात करेंगे तो वह पूरा का पूरा पहला निषेक उदयरूप कब होगा? सात हजार वर्ष और एक समय पर। परंतु कोई भी कर्म, सभी कर्म; अभी आयु को अलग रखो; बंधने के एक आवली के बाद उनकी उदीरणा होती ही होती है क्योंकि मिथ्यात्व कर्म तो सत्ता में भी पड़ा है, हर समय उदय आ रहा है। तो यह आबाधा तो है उसकी सात हजार वर्ष और उसके ऊपर निषेक हैं। उस समयप्रबद्ध के निषेकों में से कुछ परमाणु बंध के समय से एक आवली काल बीत जाने के बाद जो उदयरूप अन्य निषेक हैं उनमें आकर मिलते हैं और वे भी उदयरूप होकर खिर जाते हैं; उसको कहेंगे उदीरणा की अपेक्षा। उदीरणा की अपेक्षा आबाधा तो आवली मात्र होती है; यानी अभी बंधा है तो एक आवली के पश्चात् उसमें से कुछ परमाणुओं का उदय चालू हो जाता है। कुछ परमाणु उदयरूप निषेक में आकर मिल जाते हैं और उनका उदय शुरू हो जाता है। हर कर्म में – ज्ञानावरण हो, मिथ्यात्व हो, कोई भी हो; आयु की बात ऐसी नहीं है, नयी बंधी हुयी आयु की आबाधा तो इस भव में मरण तक होती है, तब तक उसकी उदीरणा नहीं होती। नये भव में उस आयु का उदय शुरू होनेपर आयु में भी ऐसे कुछ परमाणु जो ऊपर के निषेक में हैं वे उदीरणा होकर उदय में आते रहते हैं। ऊपर के निषेकों में से कुछ थोड़े-थोड़े परमाणु उस आयु का उदय होने पर उदीरणा होकर खिरते रहते हैं वह बात है। आयु को छोड़कर अन्य कर्मों में यह आबाधा जो कहेंगे वह उदय की अपेक्षा आबाधा कहेंगे और उदीरणा की अपेक्षा आबाधा तो मात्र एक आवली प्रमाण होती है और वह सभी कर्मों में ऐसी ही होती है।

श्रोता: तो उदीरणा किसकी हो सकती है? जिसका उदय है उसीकी उदीरणा होती है और उदीरणा होने के लिये कुछ पुरुषार्थ नहीं करना पड़ता। यह ऐसी भ्रमणा चल रही है; ऐसा कथन भी होता है कि जीव के पुरुषार्थ के कारण उदीरणा होती है। वह उदीरणा जो श्रेणी आदि में होती है, असंख्यातगुणा निर्जरा वगैरह होती है वह बात अलग है। यह सामान्य से उदीरणा हर कर्म में अपने आप होती ही रहती है। *श्रोता: वर्तमान में उदय पाप का है*

और नया बंध पुण्य का होगा तो उसकी उदीरणा कैसे घटित होगी? हमने यह बताया कि उदीरणा उसीकी होती है जिसका उदय चलता है। उदीरणा का अर्थ क्या है? उदयावली के ऊपर के निषेकों में से कुछ परमाणुओं का उदयावली में आ मिलना। तो भले पाप का उदय है, पाप का उदय कितने काल तक चलेगा? छह महीने कि साढ़े सात वर्ष? साढ़ेसाती लगती है न लोगों को? साता और असाता हर अंतमुहूर्त में पलट-पलट कर बंधती भी है और उदय में भी आती है, नियमरूप से। साता का भी उदय अंतर्मुहूर्त तक ही चलेगा, असाता का भी उदय अंतर्मुहूर्त तक ही चलेगा। वह उसमें एक ही अपवाद है, कोई ऐसा एकाध जीव होता है सातवें नरक का, जिसको ३३ सागर तक कंटिन्युअस असाता का उदय है और कोई सहस्रार का देव ऐसा है कि छह महिने तक साता का उदय है। इनके बिना बाकी सभी जो जीव हैं, सर्वार्थसिद्धि के भी क्यों न हो, साता और असाता का उदय हर एक अंतर्मुहूर्त में पलटता ही रहता है। ऐसे ही हर अंतर्मुहूर्त में साता और असाता का बंध भी पलटकर होता ही रहता है। यहां तो हम बात यह कह रहे हैं कि उसमें भी जो उदयरूप होता है तो उसकी उदीरणा भी कहलायेगी। *श्रोता: जिसका उदय है उसीकी उदीरणा होती है?* उसीकी उदीरणा होती है, यह तो नियम है। जिस कर्म का उदय है उसीकी उदीरणा कहलायेगी क्योंकि उस कर्म के कुछ परमाणु अपनी जगह छोड़कर जल्दी उदय में आ रहे हैं, है न? तो जल्दी उदय में आ रहे हैं यानी वे स्वयं अपने स्वरूप से उदय में आ रहे हैं। तो जिसका उदय है उसरूप उसकी उदीरणा होगी। ख्याल में आ रही है यह बात? हां।

तो यह जीव परमाणुओं को ग्रहण करता है तो उनकी निषेक रचना होती है, यह अभी हम देख रहे हैं। तो वह स्थिति कितने काल तक हो सकती है? तो कर्मों में जो कोई स्थिति का बंध होता है – उसको कौन नक्की करता है? हमने देखा था समयप्रबद्ध में कितने परमाणु आते हैं? जहां योग कम है वहां परमाणुओं की संख्या कम ही है और जहां योग ज्यादा है वहां परमाणु अधिक आते हैं। परंतु उनकी कितनी स्थिति बंधती है? सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर की बंधती है या अंत:कोड़ाकोड़ी सागर की बंधती है, वह कौन नक्की करता है? तो कहते हैं कषाय के अनुसार वह नक्की होता है। कषाय में क्या समझना? मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय सब मिलकर कषाय नाम है। एक बाजू यह कषाय और

एक बाजू योग। योग से प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध नक्की होता है; प्रदेशबंध यानी कितने परमाणु आयेंगे और ये कषाय यानी ये मिथ्यात्वादि चारों को कषाय में गर्भित कर दिया, उससे स्थितिबंध और अनुभागबंध नक्की होता है। तो कितना स्थितिबंध होगा? ये कर्मों के बारे में कह रहे हैं कि जैसे जितने तीव्र संक्लेश हो, जैसे मिथ्यात्व और कषाय जहां ज्यादा हो, वहां तो स्थिति अधिक बंधती है और जहां कषाय मंद हो, वहां कर्मों की स्थिति छोटी बंधती है। इसके लिये अपवाद तीन आयुकर्मों का है – देवायु, मनुष्यायु और तिर्यंचायु। जहां संक्लेश परिणाम हैं तो छोटी आयु बंधती है; मंद परिणाम हैं, शुभभाव से आयु लंबी बंधेगी क्योंकि सर्वार्थसिद्धि की ३३ सागर की आयु कौन बांधेगा? मंद परिणामवाले बांधेंगे न, छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज इतनी आयु बांधेंगे; छठे-सातवें में बंध होगा उसका; अप्रमत्त में भी वह बंध चलता रहता है। तो यह स्थितिबंध जो है वह बताता है कि वे कर्म कितने काल के लिये जीव के साथ रहेंगे?

यह कर्म की बात तो हमने बहुत बार सुनी है। पर जो औदारिकशरीर के परमाणुओं का जो बंध हुआ, पहले ही समय में जीव ने ग्रहण किये तो उनकी स्थिति कितनी पड़ेगी? कितने सागरों की पड़ेगी? औदारिकशरीर के जो परमाणु बांधे; हम आपने बांधे समझ लेते हैं; जब शरीर धारण करने का हमारा पहला समय था, तब हमने जो इस शरीर संबंधी परमाणुओं को ग्रहण किया तो उनकी स्थिति कितनी पड़ी? जितनी आयु की वह ड्युरेशन है न, हम जितनी आयु बांध कर आये हैं उतनी – वर्तमान आयुप्रमाण। सौ साल की आयु हम बांध कर आये तो पहले समय में, अभी उसमें विग्रहगति के दो समय बाद कर दो, तो जितनी अभी शेष आयु है उतनी उस औदारिकशरीर की स्थिति पड़ेगी। यह ख्याल में आती है बात? या वैक्रियिकशरीर के बारे में – कोई एक सागर की आयुवाला देव है और ऋजुगति से यानी बिना मोड़ के वहां उत्पन हुआ है तो आयु के पहले ही समय में वह वैक्रियिकशरीर के परमाणुओं को ग्रहण करेगा तो उसकी स्थिति कितनी पड़ेगी? एक सागर की आयु लेकर आया है, तो एक सागर के जितने समय हैं उतनी उसकी निषेक रचना होगी यानी एक समयप्रबद्ध में से इतने उसके निषेक बनेंगे और हर निषेक में फिर भी अनंतानंत परमाणु रहेंगे क्योंकि इतने अनंत ग्रहण कर रहा है, है न? दूसरे समय में एक सागर में से एक समय मायनस कर दो इतने निषेक बनेंगे; तीसरे समय में और एक समय कम इतने निषेक बनेंगे।

हम आपकी बात करते हैं। सौ वर्ष की आयु लेकर कोई आया है। पहले समय में सौ वर्ष की स्थिति बांधी। वह दस साल का हुआ। अब वह जो औदारिकशरीर के परमाणु ग्रहण करेगा उसकी स्थिति कितनी बंधेगी? नब्बे साल की। वह पचास साल का हुआ, तो पचास साल की बंधेगी। ये निषेक उतने ही बनेंगे न उसके। अब मरण के एक समय पहले जो ग्रहण किया तो उसकी स्थिति वह समय और एक समय उतनी बंधेगी और मरण के समय में जो ग्रहण करेगा, मरण के समय में भी ग्रहण करेगा क्योंकि वहां आयु चल रही है, अभी उदय है; तो उस समय जो ग्रहण किये, बस एक ही समय, उसी समय में वे उदयरूप हैं। दूसरे समय में तो जीव ही सबको छोड़कर चला जायेगा। इसका अर्थ समझते हैं? औदारिकशरीर के जो कोई समयप्रबद्ध हैं, जब कभी ग्रहण करें, उन सब की अंतिम लिमिट एक ही पोझिशन पर है, एक ही समय पर है। जितनी आयु शेष है उतनी स्थिति बंधती है। यह कहां लिखा है? वह भी देखेंगे।

देखो ३७४ पृष्ठ है, पहला भाग। यहां तो तेजस और कार्माण की बात पहले बता चुके हैं। पृष्ठ ३७३ से शुरू करते हैं हम, नीचे से दूसरी लाइन, गाथा २५४ की टीका। **औदारिक आदि शरीरों में से,** औदारिक आदि कहने से सभी ले लिया – **तेजस और कार्माण**। देखो पांच शरीरों की बात हो रही है यहां पर। औदारिक आदि शरीर कहने से यहां पांचों शरीरों को लिया। उसमें से तेजस, कार्माण की बात हो रही है। **तेजस और कार्माण इन दो शरीरों का जीव के साथ अनादि से निरंतर संबंध है**। किसको छोड़ा इसमें से? तीन को छोड़ा क्योंकि औदारिकशरीर का संबंध तभी आया जब-जब इसने मनुष्यपर्याय या तिर्यंचपर्याय पायी। वैक्रियिकशरीर का संबंध तभी आया जब देव या नारकी हुआ। आहारकशरीर का संबंध तभी आया जब कभी मुनिराज होकर आहारक संबंधी कर्मों का उदय हुआ था और तेजसशरीर और कार्माणशरीर से अनादि का संबंध है। **इसलिये इनका सदाकाल उदय**, क्योंकि वे उदय में भी आ रहे हैं हर समय। **उदय और सत्त्व**; सत्त्व यानी सत्ता में रहना उसको सत्त्व कहते हैं। उदय भी हर समय चल रहा है और सत्ता में तो हैं ही हैं क्योंकि निरंतर बंध हो रहा है, निरंतर उदय हो रहा है और निरंतर सत्ता में पड़े हैं। ख्याल में आ रही है यह बात? कौनसे शरीर की बात चल रही है? तेजस और कार्माणशरीर की। **इसलिये जीव मिथ्यादर्शन आदि परिणामों के निमित्त से समय-समय प्रति** यानी एव्हरी समय-प्रति समय **तेजस संबंधी और कार्माण संबंधी**

एक-एक समयप्रबद्ध को बांधता है। यानी हर समय जीव कार्माण का भी और तेजस का भी एक-एक समयप्रबद्ध बांधता है। वह कोमा में हो, विग्रहगति में हो, सोया हो कभी भी, तेजस और कार्माणशरीर का बंध तो चलता ही रहता है।

पुद्गल वर्गणाओं को तेजसशरीररूप और ज्ञानावरणादि आठ प्रकार के कर्मरूप परिणमाता है। समयप्रबद्ध को बांधता है – यानी क्या है? यह वर्गणा उस शरीररूप से परिणमित होती है। **इन दो शरीरों का प्रतिसमय एक-एक समयप्रबद्ध उदयरूप होता है अर्थात् अपना फल देनेरूप परिणतिरूप परिणाम से फल देकर** उदय होना का अर्थ होता है **तेजसशरीरपना को** और **कार्माणशरीरपना को छोड़कर गल जाता है, निर्जरित होता है**। पहले कार्माणवर्गणा थी, कर्मरूप हुआ। कुछ काल सत्ता में रहा, फिर उसका उदय आया। उदय आया यानी वहां उसने फल दिया। फल देकर क्या हुआ? वे अकर्मरूप हो गये। अभी वे जीव के कर्म नहीं कहलायेंगे। भले वे उसी क्षेत्र में पड़े रहें या पूरे लोक में कहीं पर बिखर जायें। अब उनका जीव के साथ कुछ निमित्तपना नहीं बन सकता। यह बात क्लिअर हो गयी? और वह सत्ता में कितना पड़ा रहता है जीव के साथ? अभी यहां हम इस चक्कर में नहीं जायेंगे, केवल सुन लेते हैं – शब्द सुन लेते हैं। तो **विवक्षित समयप्रबद्ध की स्थिति के अंतिम निषेक संबंधी समय में**, यानी हमारी भाषा में, कभी भी सत्ता में कर्म कितना पड़ा है उसको हमें कॅल्क्युलेट करना है क्योंकि हर समय ग्रहण करता है, हर समय छोड़ता है। तो जितना ग्रहण किया उतना ही छोड़ा न, कुछ नहीं रहा ऐसा नहीं है। तो कितना रहता है? तो कहते हैं **अंतिम निषेक संबंधी समय में किंचित् न्यून**, यानी कुछ कम्, **डेढ़ गुणहानि से गुणित**।

यह गुणहानि क्या होती है? जो निषेक रचना होती है, उसमें परमाणु की संख्या पहले निषेक से ऊपर के निषेक तक कुछ हीन होती चली जाती है। थोड़ी-थोड़ी कम होते-होते कहीं जाकर वह आधी होती है। फिर थोड़ी-थोड़ी कम होकर आधी होती है। जहां आधी होती है उसको कहेंगे द्विगुणहानि-यानी दोगुणाहानि, यानी आधा होना और उसको सिम्पल भाषा में गुणहानि कहते हैं। एक बार गुणहानि हुयी; दूसरी बार गुणहानि हुयी; तिसरी बार गुणहानि हुयी; तो यह कितने निषेक जाकर गुणहानि होती है? तो असंख्यात निषेक जाकर होती है। तो एक गुणहानि का प्रमाण कितना है? तो कहते हैं असंख्यात है और डेढ़ गुणहानि का प्रमाण कितना होगा? उसके डेढ़गुणा होगा। यानी पर्टिक्युलर असंख्यातप्रमाण

है। तो समयप्रबद्ध मल्टिप्लाइड बाय डेढ़ गुणहानि। इतने परमाणु तो हमेशा सत्ता में पड़े रहेंगे। देखो, आप शायद आगे पढेंगे कभी किसी जीव ने क्षपकश्रेणी चढ़ी तो प्रति समय कितनी ही निर्जरा, असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा निर्जरा होती रही। फिर वह तेरहवें गुणस्थान में कितने ही काल तक रहा, वहां भी प्रतिसमय असंख्यातगुणा निर्जरा होती रही। फिर भी चौदहवें गुणस्थान के अंतिम समय में जीव के साथ सत्ता में कितना कर्म रहेगा? तो कहते हैं **डेढ़ गुणहानि से गुणित समयप्रबद्ध**।

तो अभी तक इतना खिर गया उसका क्या? तो कहते हैं वह असंख्यातवां भाग खिर गया। तभी तो कहते हैं कर्मभूभृत् पड़े हैं। इसे कर्मरूपी पर्वत कहा न, कर्मभूभृताम्। कहां लिखा है? *श्रोता: तत्त्वार्थसूत्र में।* क्या लिखा है? *श्रोता: मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम्।* भेत्तारं कर्मभूभृताम्। कर्मभूभृत – कर्मरूपी पर्वतों को भेदते हैं, चूर करते हैं। फिर भी वह पर्वत का पर्वत रह जाता है। मोक्षशास्त्र में अर्थात् तत्त्वार्थसूत्र में मंगलाचरण में है। यहां क्या देख रहे हैं हम? ये कार्माण की और तेजस की स्थिति देखी हमने। सत्ता में कितना पड़ा रहता है? अभी हम औदारिक की बात करेंगे, आगे के पॅरेग्राफ में ३७४ पृष्ठ पर। **पुनश्च औदारिक, वैक्रियिक शरीरों के समयप्रबद्धों में विशेष है**, विशेष यानी डिफरन्स है। कार्माण और तेजस से यह कुछ अलग बात है। **उसे कहते हैं। उन औदारिक वा**, वा यानी और – **वैक्रियिक शरीरों के ग्रहण के प्रथम समय से लगाकर**, यानी विग्रहगति के बाद जब प्रथम समय में इन परमाणुओं का ग्रहण किया उस समय से लेकर **अपनी आयु के अंतिम समय तक शरीर नामक नामकर्म के उदय संयुक्त जीव, वह प्रतिसमय उस शरीर के एक-एक समयप्रबद्ध को बांधता है**।

यह तो हमने पहले भी देखा था क्योंकि उसके शरीर नामकर्म का उदय है। औदारिकशरीर नामकर्म का उदय है तो औदारिक जाति की जो आहारवर्गणा हैं उनका ग्रहण करता है। कितना करता है? तो एक-एक समयप्रबद्ध बांधता है। **पुद्गल वर्गणाओं को उस शरीररूप परिणमाता है। उदय कितना है?** उसको कहेंगे। पहले समय में कितने परमाणु ग्रहण किये? तो अनंत किये। मान लेते हैं कि सौ साल की आयु बांधी है, तो सौ साल के, वे तो साल हुये। निषेक कितने बने? सौ बने न कि डेढ़ सौ बने? *श्रोता: सौ साल के जितने समय हैं उतने।* सौ साल के जितने समय हैं उतने निषेक बने। साल में

कितने सेकंड होंगे और हर एक सेकंड में कितनी आवली होंगी? हजारों कोड़ाकोड़ी और एक-एक आवली में तो कितने असंख्यात समय होंगे? उतने निषेक बनेंगे, एक समय में जितना ग्रहण करेगा उसमें से। तो क्या होगा? तो दूसरे समय में क्या होगा? जो प्रथम समय में ग्रहण किये हैं उनमें से कुछ उदयरूप होकर खिर जायेंगे। उनमें से एक निषेक उदयरूप होगा, उदयरूप है यानी वहां अस्तित्व है। दूसरे समय में उस निषेक का उदय नहीं रहा वे परमाणु अकर्मरूप हो गये यानी वे परमाणु खिर गये ऐसा हम कहेंगे।

पहले समय में बंधते समय, उसने मान लेते हैं अभी हम उसको कहने के लिये सौ निषेक बनाये, ऐसा हम कहेंगे – समझाने के लिये। तो पहले समय में सौ निषेक, वहां कोई आबाधा नहीं होती। औदारिकशरीर में कोई आबाधा नहीं होती। जैसे कर्म का बंध होता है वहां आबाधा छोड़कर निषेक रचना होती है। औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर में, तेजसशरीर में भी, कोई आबाधा नहीं होती। बिना आबाधा के वहां निषेक रचना तत्काल होती है। उदय भी तत्काल चालू हो जाता है। यानी उसने सौ निषेक बनाये तो पहला निषेक तो उदयरूप होकर ही रहता है और दूसरे समय में वह नहीं रहा। दूसरे समय में जो नया एक समयप्रबद्ध ग्रहण करेगा वहां निन्यानवे निषेक बनेंगे। वहां कितने उदयरूप होंगे? पहले समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का दूसरा निषेक और दूसरे समय में बंधे हुये का पहला निषेक; वे उदयरूप होकर वे चले जायेंगे। तीसरे समय में और एक समयप्रबद्ध बंधा, अट्ठानवे समय का बंधा। तो पहले समय में बंधे हुये का तीसरा निषेक, दूसरे समय में बंधे हुये का दूसरा निषेक और तीसरे समय में बंधे हुये का पहला निषेक, ये तीन निषेक उदयरूप होकर चले जायेंगे। फिर चौथे समय में और एक निषेक, ऐसा चलता रहेगा। बात ख्याल में आती है? फिर भी खिरनेवाले को उपचार से हम समयप्रबद्ध खिरा ऐसा कहेंगे। उसका निषेक खिरेगा, वह निषेक भी समयप्रबद्ध का एकदेश है, यह लिखा है यहां देखो, पेज ३७४ पर। अभी जो हमने देखा न, उसे कहते हैं **उदय कितना है? उसे कहते हैं** – यहां प्रश्न लिखा है उसके ऊपर की लाइन।

शरीरग्रहण के प्रथम समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध के पहले निषेक का उदय होता है। यहां प्रश्न-गाथा में तो प्रति समय एक-एक समयप्रबद्ध का उदय कहा है। यानी शरीर के परमाणु भी एक-एक समयप्रबद्ध प्रमाण उदय में आते हैं, ऐसा गाथा में कहा

है और **यहां एक निषेक का उदय कैसे कहते हो? उसका समाधान – निषेक है वह समयप्रबद्ध का एकदेश है**। एकदेश है यानी उसीका एक पार्ट है। **उसको उपचार से समयप्रबद्ध कहते हैं**। यह बात ख्याल में आयी? अब **दूसरे समय में, पहले समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का तो दूसरा निषेक और दूसरे समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का पहला निषेक, ऐसे दो निषेकों का उदय होता है**। उदय है यानी अभी वे हैं, नेक्स्ट यानी अगले समय में वे नहीं रहेंगे; वे औदारिकशरीररूप से नहीं रहेंगे; उनको जीव का औदारिकशरीर नहीं कहेंगे, वे भले वहां ही विस्रसोपचयरूप से पड़े रहें या निकलकर पूरे लोकाकाश में कहीं पर भी चले जायें। उनका उदय होकर अभी उसके अनंतर समय में वे खिर जायेंगे, निर्जरित होंगे। **इस क्रम से अंतिम समय में उदय और सत्त्वरूप संचय सो युगपत् किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानि से गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण होता है**। वह औदारिकशरारीर की जितनी डेढ़ गुणहानि, उसको यहां ले लेंगे। वह डेढ़ गुणहानि का प्रमाण अभी हमारा विषय नहीं है। वह थोड़ा और गहरा विषय है। जिसको जानने की बहुत उत्सुकता है, उसके लिये वहां इस विषय की एक सी.डी. है, वह ले लेना। डेढ़ गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध-कॅल्क्युलेशन कैसे करना? जिसको गणित में रुचि है न, हां, वह ले लेना।

पुनश्च, आहारकशरीर की स्थिति कितनी होती है? अंतर्मुहूर्त। तो वह ग्रहण किये हुये समयप्रबद्ध में निषेक कितने बनेंगे? अंतर्मुहूर्त प्रमाण। जितनी वह आहारकशरीर की स्थिति है उतनी ही उसकी निषेक रचना होगी, उतनी ही वह स्थिति बांधेगा। उसमें भी वह डेढ़ गुणहानि का प्रमाण चलता है। यानी हर समय बांधना, हर समय उदय में आना और सत्ता में जब तक शरीर की स्थिति है तब तक सत्ता में रहना – ये सभी बातें इसमें बनती रहेगी। अब यहां औदारिक और वैक्रियिकशरीर की और एक जो विशेषता है – जिसको हमने कहा न कि उसके कितने निषेक बनते हैं? तो जितनी आयु शेष है उतने बनते हैं। अभी-अभी हमने देखा था, इसीको क्या कहते हैं? तो गलितावशेष आयुप्रमाण बनते हैं। गलित यानी निकल गयी, अवशेष यानी बाकी रही। जैसे सौ साल में से हमारे साठ साल बीत गये, चालीस बाकी हैं। तो अभी जो समयप्रबद्ध ग्रहण होगा, उसमें से निषेक कितने बनेंगे? चालीस साल के जितने समय हैं उतने बनेंगे। इसीको कहते हैं गलितावशेष प्रमाण निषेक रचना होती है। यह बात ३७५ पृष्ठ पर गाथा २२५ की टीका में बतायी है।

औदारिक, वैक्रियिक शरीरों के शरीरग्रहण के प्रथम समय से लेकर अपनी स्थिति – अपनी स्थिति यानी अपनी जो आयु वह लेकर आया है वह तो नक्की है, निश्चित है। कर्म वहां पड़ा है सत्ता में उसीके अनुसार उसकी स्थिति पड़ेगी – ऑटोमॅटिक। तो **अपनी स्थिति के अंतिम समय तक जो समयप्रबद्ध बंधते हैं**, यानी हर समय समयप्रबद्ध बंध रहे हैं – उन समयप्रबद्धों की कितनी स्थिति बांधेंगे? **उनका स्थितिबंध गलितावशेष आयुमात्र जानना**। गतिलावशेष – गलित यानी जो बीत गयी आयु और अवशेष यानी जो बाकी है – उतनी आयु प्रमाण उस शरीर की स्थिति बंधेगी यानी परमाणुओं की, समयप्रबद्ध की स्थिति उतनी बंधेगी। देखो, यह कितना निश्चित है! आयु में एक समय की बढ़ोतरी तो होनेवाली नहीं है – आयु की तो बात छोड़ो, शरीर का हर समय में जो समयप्रबद्ध ग्रहण किया था उसकी भी स्थिति निश्चित है। उन परमाणुओं का तो उतना ही कॉन्ट्रॅक्ट है; उसके बाद वे छोड़कर अपनी-अपनी उसकी जो कोई पर्याय बदलनी है, होनी है वह ही होगी। वह शरीर की जलकर राख होनी है या कोई दफ़नाकर भूमि में गाड़ देना है, तो वैसी ही उसकी अवस्था होगी। हम ही उसको रखना चाहते हैं, है न? यानी हमको आयुकर्म अच्छा लगता है, बाकी कर्म झड़ जायें तो अच्छा है, आयुकर्म तो हम रखना चाहते हैं। गलितावशेष किसको कहते हैं? जो बीत गयी है उसे गलित कहेंगे और बाकी है उसको अवशेष कहेंगे। तो आयु जो, औदारिकशरीर या वैक्रियिकशरीर उसका जो समयप्रबद्ध बंधता है हर समय, उसमें स्थिति का बंध जो होता है – वह कितना होता है? उसको कहेंगे गलितावशेष आयुप्रमाण बंध होता है। यह बात ख्याल में आयी? **अवशेष रहे उसे गलितावशेष आयु कहते हैं, उसप्रमाण जानना। वही कहते हैं –**

शरीरग्रहण के प्रथम समय में जो समयप्रबद्ध बंधा, उसका स्थितिबंध अपनी संपूर्ण आयुमात्र होता है। दूसरे समय में जो समयप्रबद्ध बंधा, उसका स्थितिबंध एक समय कम अपनी आयुप्रमाण होता है। हमने जो देखा है उसीको फिर पढ़ रहे हैं उसका अर्थ भासित होता है कि नहीं इतना ही देखना है। इसमें तो कुछ याद करने की बात नहीं है। पहले समय में स्थितिबंध हुआ – हमने उसको सौ समय कहा था, एक समय बीत गया, अभी दूसरे समय में स्थितिबंध कितना होगा? निन्यानवे समय का होगा। **तीसरे समय में जो समयप्रबद्ध बंधा, उसका स्थितिबंध दो समय कम अपनी आयुप्रमाण होता है। ऐसे ही चौथे आदि** यानी चौथे, पांचवें, छठे आगे-आगे – **उत्तरोत्तर समयों में जो**

समयप्रबद्ध बंधते हैं, उनका स्थितिबंध एक-एक समय से घटता होता है। अंतिम समय में – अंतिम समय में यानी मरण का समय, यानी अभी मरण का नहीं कहेंगे; उस समय तो जी रहा है। तो **अंतिम समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का स्थितिबंध एक समय मात्र होता है। क्योंकि प्रथम समय से लेकर अंतिम समय तक बंधे हुये जो समयप्रबद्ध, उनकी स्थिति अपनी आयु को उल्लंघकर नहीं होती**। कोई भी परमाणु, अपनी वर्तमान आयु जो सत्ता में पड़ी है बंधी हुयी, उस आयु की जितनी स्थिति शेष है उसे उल्लंघकर अधिक, उस शरीर की स्थिति बंधे ऐसी बात नहीं हो सकती। उसको लांघकर-उल्लंघकर यानी एक्सीड नहीं हो सकती उसको। इसका अर्थ क्या है? उसकी आयु भी निश्चित है और शरीर की स्थिति भी उतनी होनी निश्चित है परंतु हमें ही आकुलता होती है; आयु बढ़ाने की कोशिश करते हैं; क्यों बढ़ाने की कोशिश करते हैं? अरे! वह शरीर तो दुबला होता जा रहा है, वृद्धत्व आ रहा है फिर भी इसी आयु में रहना चाहता है, है न? मज़े लेना चाहता है यहां के। क्यों? उसको यह गॅरंटी नहीं है कि वह कायम रहनेवाला है परंतु मर जाऊं तो मैं नष्ट ही हो जाऊंगा ऐसा मानता है।

उसको यह विश्वास नहीं है कि यहां मरूंगा तो ये सारे अपने कर्म रेडिमेड तैयार हैं न? फिर दूसरा शरीर तो मिलने ही वाला है। एक समय के लिये भी बीच में कुछ काल नहीं जायेगा। दूसरी गति भी चालू हो जायेगी, दूसरी आयु भी चालू हो जायेगी, वहां पहुंच भी जायेगा एक दो समय में और वहां नया शरीर का भी ग्रहण चालू हो जायेगा। पर्याप्ति वगैरह सब ऑटोमॅटिक चालू हो जायेंगी। मरने के बाद वह घूमता रहता है, इधर चक्कर लगाता रहता है ऐसी कोई बात नहीं है, हां। मरण के बाद किसीको समय नहीं इतना कि वहां वापस आये। हमारे कोई रिलेटिव्ह रो रहे हैं – क्या कर रहे हैं? कुछ देखे तो सही, ऐसा कुछ नहीं होता है। कोई श्राद्ध नहीं करे तो क्या वह आत्मा भटकती है? ऐसा कुछ नहीं होता है और यहां हम पूजा करेंगे तो उस आत्मा की शांति होगी ऐसा भी नहीं होता है। पूजा करें हम और फल मिले उस आत्मा को – यह हो नहीं सकता। वह तो आत्मा अपने परिणाम करके, अपने कर्म लेकर चला गया है। बाद में हम जो कुछ क्रियायें यहां करेंगे, उससे उसका कुछ भी संबंध नहीं है। हां, हम अपनी शांति के लिये कोई करते हैं तो करें। यह कोई प्रथा है, रूढ़ि है, तो हम उस रूढ़ि के अनुसार करते हैं। पर उससे उस गये हुये आत्मा को कुछ शांति-बांति कुछ नहीं मिलती है।

इसप्रकार जिस-जिस समयप्रबद्ध की जितनी-जितनी स्थिति हो उस-उस समयप्रबद्ध की उतनी-उतनी स्थितिप्रमाण निषेक रचना जाननी। यानी मान लेते हैं अभी पचास समय बाकी हैं और उस समय वह जो समयप्रबद्ध ग्रहण किया उसके पचास निषेक बनेंगे। जिसकी आयु अभी दस समय शेष है उस समय जो समयप्रबद्ध ग्रहण किया, उसके अनंत परमाणु ये दस निषेकों में बट जायेंगे। अंतिम समय में जो अनंत परमाणु ग्रहण किये, वे तो एक ही समय के लिये हैं और ये सभी; पहले समय से लेकर अंतिम समय तक, एक-एक समय में बंधे हुये; हर एक का लास्ट निषेक भी उसी समय पर है। वे सभी उदयरूप होंगे। कब? उस अंतिम समय में और नेक्स्ट समय में क्या होगा? जीव ही निकल जायेगा न। वे उस समय खिर गये कहेंगे, यानी जीव निकल गया कहेंगे। **अंत में समयप्रबद्ध की स्थिति एक समय की कही वहां एक निषेक संपूर्ण समयप्रबद्ध** है वह पूरा का पूरा उदयरूप हो कर बंधा जायेगा। **अंतिम समय में किंचित् न्यून डेढ़ गुणहानिमात्र गलितावशेष समयप्रबद्ध सत्त्वरूप से इकट्ठे होते हैं**। यह तो गणित है, उसको गौण करेंगे। इसका अर्थ मैं यहां नहीं बताना चाहती हूं क्योंकि हम तो यहां पुद्गलपरावर्तन देखने जा रहे हैं। पुद्गलपरावर्तन में पहले समय में जो परमाणु ग्रहण किये थे उस समयप्रबद्ध का क्या हुआ? तो निषेक रचना हुयी। निषेक रचना हुयी तो सारे के सारे पुद्गल परमाणु वे जीव के साथ रहेंगे या एक-एक समय में एक-एक गल जायेगा उसमें से?

एक समय में बंधा हुआ जो लॉट है उसमें प्रतिसमय में अनंत-अनंत परमाणु खिर रहे हैं। एक-एक निषेक जा रहा है। जो निषेक गल जायेगा वह या तो वहां पड़ा रहेगा, या उसको कोई अन्य जीव ग्रहण करेगा, या कहीं वह अन्य वर्गणारूप परिणमित हो जायेगा, उसका कुछ भी हो सकता है। वे परमाणु जीव के लिये ग्रहण करने के लिये फिर पूरा लॉट का लॉट उसको ग्रहण करना है। वह ॲव्हेलेबल कब होगा? इसकी चर्चा है। क्योंकि हमने पूरा वाक्य नहीं पढ़ा है न। हमने तो दो ही वाक्य पढ़े हैं, उसकी चर्चा चल रही है। पूरा वाक्य आगे पढ़ेंगे तब उसकी चर्चा और करेंगे। क्योंकि हमने तो ग्रहण किये इतना ही पढ़ा है। आगे तो हम गये ही नहीं पुद्गलपरावर्तन में। तो यहां देख रहे हैं हम, यह लास्ट लाइन देखो – **अंतिम समय में ही उन सब का उदय होता है। आयु का अंत होने के पश्चात् वे नहीं रहते, इसलिये उसी समय सर्व निर्जरते हैं**। उसको कहेंगे निर्जरा होती है यानी जीव ही नहीं रहा न तो उसको कहेंगे निर्जरा हो गयी सबकी।

अभी हम देखते हैं कि जीव कौनसे शरीर की अधिक से अधिक कितनी स्थिति बांध सकता है? जितनी आयु लेकर आया है; मनुष्य या तिर्यंच; उतना उसका स्थितिबंध होगा। जो लब्धिअपर्याप्त की जघन्य आयु एक अंतर्मुहूर्त की लेकर आया है उसका औदारिकशरीर का स्थितिबंध कितना होगा? अंतर्मुहूर्त, पहले समय में अंतर्मुहूर्त होगा। हम-आप सौ साल की आयु लेकर आये हैं, मान लेते हैं। हमने पहले समय में जो स्थितिबंध किया था, समयप्रबद्ध का, वह कितना किया था? सौ साल का हमने स्थितिबंध किया था। अब जो करोड़पूर्व की आयु लेकर आते हैं वे पहले समय में औदारिकशरीर के समयप्रबद्ध का स्थितिबंध कितना बड़ा करते हैं? *श्रोता: एक करोड़पूर्व का।* एक करोड़पूर्व का। एक करोड़पूर्व वर्ष में जितने समय हैं उतने निषेक बनेंगे। तो औदारिकशरीर में ऐसी अधिक से अधिक स्थिति कितनी बंध सकती है? *श्रोता: तीन पल्य।* तीन पल्य। कहां की? उत्तम भोगभूमि की। यहां लिखा है चार्ट में।

शरीरों की बंधरूप उत्कृष्ट स्थिति

औदारिकशरीर	–	**३ पल्य**
वैक्रियिकशरीर	–	**३३ सागर**
आहारकशरीर	–	**१ अंतर्मुहूर्त**
तेजसशरीर	–	**६६ सागर**
कार्माणशरीर	–	**७० कोड़ाकोड़ी सागर**

इन शरीरों की उत्कृष्ट स्थिति – अलग-अलग शरीरों की बात है। औदारिकशरीर की उत्कृष्ट स्थिति कितनी हो सकती है? यह पहले समय में होगी न इतनी। पहले समय में जो समयप्रबद्ध ग्रहण करेगा, उस समय एक समयप्रबद्ध में से तीन पल्य के जितने समय हैं उतने निषेक बनेंगे और हर निषेक में अनंत परमाणु होंगे, दो चार नहीं होंगे। वैक्रियिकशरीर की अधिक से अधिक स्थिति कितनी होती है? ३३ सागर। आहारकशरीर की? एक अंतर्मुहूर्त। तेजसशरीर की? ६६ सागर और कार्माणशरीर की? सामान्य से हम देखते हैं, ७० कोड़ाकोड़ी सागर।

श्रोता: तेजसशरीर की ६६ सागर कैसे?

हां, आपका प्रश्न है तेजसशरीर की ६६ सागर कैसे है? निकालो पेज ३६२, २५२ गाथा है न? उसके ऊपर लिखा है। **वहां औदारिकादि पांच शरीरों की उत्कृष्ट स्थिति का प्रमाण कहते हैं** और २५२ की टीका अब पढ़ेंगे। **उन औदारिक आदि पांच शरीरों की बंधरूप उत्कृष्ट स्थिति में औदारिक की उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्य है, वैक्रियिक की तैंतीस सागर है**, यानी थर्टी थ्री सागर है **आहारकशरीर की अंतर्मुहूर्त है** और **तेजसशरीर की छासठ सागर है**। यह अधिक से अधिक है। जीव अधिक से अधिक उतनी स्थिति बांध सकता है। कैसे? केवली ने जो जाना है वह यहां बताया है। यानी कार्माणशरीर और तेजसशरीर एक ही भव पुरता लिमिटेड नहीं है, वह अनेक भवों तक चलेगा और ऐसा बंध तो चलता रहता है। कभी हीन, कभी अधिक उनका बंध होगा। **कार्माणशरीर की स्थितिबंध में जो उत्कृष्ट कर्म की स्थिति वह जाननी**। यह हमने पहले पढ़ा था। **सामान्यपने से सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर है; विशेषपने से ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, अंतराय की तीस कोड़ाकोड़ी सागर, मोहनीय की सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर**, मोहनीय कहने से उसका भेद जो मिथ्यात्व है उसकी। **नाम-गोत्र की बीस कोड़ाकोड़ी सागर, आयु की तैंतीस सागर प्रमाण जाननी। ऐसे पांच शरीरों की उत्कृष्ट स्थिति कही**। यहां लिखा है न? ६६ सागर।

जब मैंने वह करणानुयोग परिचय पुस्तक लिखी, इसी बीस प्ररूपणा का ही वहां शॉर्ट में कथन है। करणानुयोग परिचय – जो पत्ररूप से लिखी है मैंने। उसमें यह तेजसशरीर की उत्कृष्ट स्थिति ६६ सागर की लिखी थी। पुस्तक प्रकाशित होने पर जब हम जयपुर शिबिर में गये वहां इस पुस्तक का विमोचन होना था। वहां पं. यशपाल अण्णाजी ने बीस-पच्चीस उसमें क्वेश्चन निकाले क्योंकि उन्होंने, ब्र.पं.राजमलजी जो हैं भोपाल के उनके साथ चर्चा की थी। तो उन्होंने हमें बुलाकर बोला यह किसी विद्वान को दिखाकर तो पुस्तक छपाना था। ऐसे ही अपने मन से कुछ भी लिख दिया और आपने २०-२५ इतनी बड़ी गलतियां की हैं उसमें – इनके लिये क्या प्रूफ है? बताओ हमको। मैंने बोला हम तो यहां जयपुर आये हैं, पुस्तकें तो लेकर नहीं आये हैं। हमें आप सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड दीजिये, तभी तो वह ग्रंथ ढूंढ़ारी भाषा में था। तो मैंने बैठकर आधे घंटे के अंदर सभी प्रश्नों के लिये पेज नंबर और गाथा नंबर लिखकर प्रूफ उनके हाथ में दे दिये। तो वे बहुत खुश हो गये। उन्होंने विमोचन के समय जाहिर सभा में कहा; कि मुझे आज इतना आनंद हो रहा

है क्योंकि इस सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड ग्रंथ का संपादन मैंने किया था तो मुझे जो बातें ज्ञात नहीं थी या ख्याल में नहीं थी वे बातें इन्होंने लिखी हैं और मेरा शिष्य मेरे से भी आगे बढ़ गया इसका मुझे बहुत आनंद हो रहा है। यानी यह बहन कोई भी बातें आगम से मिलाकर ही लिखती है। हां, वह जो पत्ररूप रचना थी इसलिये हर जगह हमने पेज नंबर और प्रूफ नहीं लिखा क्योंकि आपके पत्र में आप प्रूफ लिखते जायेंगे तो आपका पत्र कोई पढ़ेगा ही नहीं।

श्रोता: कार्माणशरीर में तो आठों कर्म हैं, तो पॅकेज रहेगा न वह तो? हां, आठों कर्म हैं, परंतु जब हम कहेंगे कर्म की उत्कृष्ट स्थिति कितनी है? तो वह ७० कोड़ाकोड़ी सागर है भले वह किसी एक कर्म की हो। अब उनमें से एक-एक कर्म का नाम लेकर बतायेंगे तो हर एक कर्म की अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति अलग-अलग है। *श्रोता: उसका ॲडिशन नहीं होगा?* ॲडिशन नहीं होती। हां-हां, देखो, एक ही समय में ॲडिशन नहीं होती। एक ही समय में आठों कर्म बंधे, मान लेते हैं, तो आठ कर्म बंधे तो मिथ्यात्व में तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति पड़ी और ज्ञानावरण में तो ३० कोड़ाकोड़ी सागर पड़ी, ऐसे अलग-अलग कर्मों में अलग-अलग स्थिति पड़ती है। जैसे चारित्रमोहनीय में ४० कोड़ाकोड़ी सागर पड़ी। परंतु संपूर्ण कर्म की ऐसी उत्कृष्ट स्थिति कितनी है तब? तो मॅक्झिमम है ७० कोड़ाकोड़ी सागर, उतनी ही कहलायेगी। सबकी ॲडिशन नहीं होगी। *श्रोता: क्योंकि बंध रहे हैं आठों।* आठों कर्म एक समय में बंध रहे हैं। उस समय से लेकर उनकी स्थिति गिननी है, बात ख्याल में आती है? किसीकी हीनाधिक भी बंधेगी न, हर एक की उत्कृष्ट ही स्थिति बंधेगी यह कोई ज़रूरी नहीं है। आयु की तो अलग से गिनना है। आयु की तो ३३ सागर नारकी और देवों की अपेक्षा से बतायी है। अभी इसमें वे बहुत सारे गणित आदि हैं – उसको तो हम गौण ही करेंगे। उसकी तो बात हमें लेनी ही नहीं है।

तो हमने प्रत्येक शरीर की यह जो निषेक रचना होती है उसको देखा। तो इन निषेक रचना में क्या-क्या विशेषता होती है उसको भी हम देखेंगे। यहीं पर वह बात है, अभी हमने जो आपको बताया था। *श्रोता: औदारिकशरीर की आपने जो अभी निषेक रचना बतायी, ये जो नये परमाणु बंधते हैं; जितना चला गया उसके बाद जितनी स्थिति रही उतने का मतलब सत्ता में नये परमाणु का बंध होगा?* देखो, पहले समय में, अभी हम सौ समय

लेकर चलेंगे। पहले समय में सौ निषेक बने, उसमें से पहला निषेक उदयरूप होकर चला गया, तो पहले समय में बंधे हुये के कितने निषेक बाकी हैं? निन्यानवे। दूसरे समय में बंधे, कितने? तो निन्यानवे। पहले के निन्यानवे निषेक हैं, दूसरे समय में और निन्यानवे बंधे और दोनों का पहला निषेक यानी नीचे का निषेक उदयरूप हो गया। तीसरे समय में क्या पोझिशन है? अठानवे निषेक पहले समयप्रबद्ध के, दूसरे समयप्रबद्ध के भी अट्ठानवे निषेक है, और? और एक तीसरा समयप्रबद्ध भी अठानवेवाला बंधा और सब का नीचे का एक-एक निषेक उदयरूप हो गया। फिर जो बंधेगा वह सत्तानवे का बंधेगा। परंतु सत्तानवेवाले पहले भी वहां पड़े हैं न, तो उनके साथ वे ॲड होते चले जायेंगे। *श्रोता: लेकिन वैक्रियिक, आहारक और औदारिक तीन शरीरों की यह पोझिशन है। तो तेजस का जब ग्रहण करेंगे तो वह ६६ सागर तक का तो वह उत्कृष्ट अपेक्षा से वह ग्रहण करेगा।* यह तो एक समयप्रबद्ध की अपेक्षा उत्कृष्ट है। देखो, तेजस का तो ग्रहण हर समय चल रहा है। औदारिक और वैक्रियिक की तो लिमिट है, क्या लिमिट है? कि जितनी उसकी आयु शेष है वहां तक ही बंध है, उसको एक्सीड नहीं कर सकता। तेजसशरीर का ६६ सागर तो उत्कृष्ट स्थितिबंध बताया। कभी कम भी होगा न उसमें। तो ६६ सागर तो कितने भवों तक चलेगा। परंतु ऐसा तो हर समय में बांध रहा है। तो उसकी स्थिति चलती ही रहेगी।

श्रोता: और विग्रहगति में तेजसशरीर को भी ग्रहण करेगा? बिलकुल । तेजस और कार्माणशरीर नामकर्म हैं, उनका उदय हर समय चलता है – उन्हें ध्रुवोदयी कहते हैं; हर समय उदयवाली प्रकृतियां है। कुछ प्रकृतियां ऐसी हैं, ध्रुवबंधी होती हैं – हर समय बंध होता है। कुछ प्रकृतियां ऐसी हैं ध्रुवोदयी हैं – हर समय उनका उदय चलता है। तो ये तेजसशरीर और कार्माणशरीर नामकर्म हैं वे ध्रुवोदयी प्रकृतियां हैं; कब तक उदय चलेगा? तेरहवें गुणस्थान के अंत समय तक। यानी तेजसशरीर और कार्माणशरीर का ग्रहण कब तक चलेगा? अनादि से चल रहा है। कब तक लास्ट में चलेगा? तेरहवें गुणस्थान के अंत समय तक चलेगा। चौदहवां अयोगी हो गया, अभी तेजसशरीर और कार्माणशरीर नामकर्म का उदय मिट गया तो अभी उन शरीरों का ग्रहण नहीं होगा। *श्रोता: बंध तो निरंतर होगा न?* हो ही रहा है बंध निरंतर। हम तेजसशरीर और कार्माणशरीर नामकर्म की बात करेंगे तो वे ध्रुवबंधी भी हैं और ध्रुवोदयी भी हैं। अपनी-अपनी बंध व्युच्छित्ति तक जो निरंतर बंधती रहती हैं उन प्रकृतियों को ध्रुवबंधी कहते हैं। तेजसशरीर और कार्माणशरीर नामकर्म

का बंध आठवें गुणस्थान तक होता है। अपने-अपने उदय व्युच्छित्ति तक जिनका हर समय उदय होता रहता है उनको ध्रुवोदयी कहते हैं। नामकर्म की कुछ प्रकृतियां ध्रुवोदयी हैं। तेजसशरीर और कार्माणशरीर नामकर्म का उदय तेरहवें गुणस्थान के अंत समय तक है।

श्रोता: तो चौदहवें गुणस्थान में कितना काल बाकी है अभी तो उदय यह समझो कि आपने तेरहवें के अंत तक बता दिया। उदय नहीं, किसका उदय? नामकर्म का उदय? *श्रोता: नामकर्म का उदय और शरीर की स्थिति तो चौदहवें के कुछ समय तक रहेगी, ऐसा?* नहीं, शरीर नामकर्म का उदय तो तेरहवें गुणस्थान के अंत तक है और शरीर की स्थिति तो चौदहवें के अंत तक है। *श्रोता: तो उदय बिना शरीर की स्थिति रहेगी वह?* ना-ना, उदय किसका हो रहा है? देखो-देखो – शरीर नामकर्म का उदय मिट गया। शरीर नामकर्म के उदय के कारण शरीर के नये परमाणु आते थे वे रुक गये हैं, परंतु जो ऑलरेडि शरीररूप से बने हैं उसमें खिरना तो चलेगा कि नहीं चलेगा? यानी तेजसशरीर और कार्माणशरीर का एक-एक निषेक उदयरूप होगा। वह कार्माणशरीर नामकर्म का उदय अलग, उसके कारण नये कर्म का बंध हो रहा था। अब यह जो शरीर ऑलरेडि बन चुका है तो शरीर के परमाणु भी खिर रहे हैं उसको शरीर नामकर्म का उदय नहीं कहा। यह कार्माणशरीर का उदय कह रहे हैं।

कार्माणशरीर नामकर्म का उदय अलग और कार्माणशरीर का उदय अलग। फिर से – हम औदारिकशरीर पर घटित करेंगे तो समझेगा। औदारिकशरीर नामकर्म के उदय में क्या हो रहा है? औदारिकशरीर के परमाणु का ग्रहण होता है और औदारिकशरीर का उदय है यानी क्या? औदारिकशरीर के परमाणु अभी छोड़कर जा रहे हैं। जो औदारिकशरीररूप से बन चुके हैं वे निकल जा रहे हैं और औदारिकशरीर नामकर्म का उदय यानी वह नामकर्म झड़ रहा है, परंतु उसका फल क्या है? कि नये औदारिकशरीर के परमाणु ग्रहण करना। *श्रोता: उस समय पर ही हुआ?* नामकर्म का उदय अलग बात है। नामकर्म के उदय से तो शरीर बनता है और यहां तो मात्र शरीर के उदय में तो शरीर के परमाणु निकल जाते हैं। यानी यह शरीर के परमाणु हर समय हम ग्रहण करते हैं और शरीर के परमाणु अशरीररूप होकर यानी वे अन्य उनकी पर्याय बदलकर वे निकल जा रहे हैं। दोनों में डिफरन्स है वह ख्याल में ले लेना।

अभी कुछ प्रश्न हैं उनको देखकर हम आगे बढ़ेंगे, फिर इसको भी समझायेंगे बाद में। *प्रश्न: विग्रहगति में जीव के कौनसे भाव होते हैं – स्वभाव या विभाव?* सब होते हैं सम्यग्दृष्टि होगा तो उसका सम्यक्त्व तो चलता रहेगा कि नहीं? कि उसका सम्यक्त्व चला जायेगा, मिट जायेगा? तो स्वभावरूप परिणमन चलेगा। *प्रश्न: जीव पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल कब ग्रहण करता है? क्या वह जीव विग्रहगति में ही ग्रहण करता है? या अन्य समय में भी ग्रहण करता है?* नहीं, विग्रहगति के बाद हर समय ग्रहण करता है मरण तक। *प्रश्न: हर छह महीने को छह सौ आठ जीव मोक्ष को जाते हैं, कहां से?* जायेंगे तो मनुष्यपर्याय में से जायेंगे और जिसको हम कहेंगे व्यवहारराशि में से चले जायेंगे। यानी मनुष्य होकर ही जायेंगे। देखो, नित्यनिगोदराशि को हम अलग रखेंगे। हर छह महिने आठ समय में नित्यनिगोद में से छह सौ आठ जीव अन्य पर्यायों में आयेंगे जिसको हम व्यवहारराशि कहेंगे और उनमें से ही कोई मनुष्य – छह सौ आठ जीव, मोक्ष चले जायेंगे। जहां चौथा काल चल रहा है – यहां विदेहक्षेत्र में से तो हर छह महीने में चले जायेंगे और हमारे यहां भरतक्षेत्र में जब-जब यहां चौथा काल होता है तब-तब चले जायेंगे।

प्रश्न: पंचमकाल में मुनि में छठा गुणस्थान में रहने की संभावना कितनी है? १००% है। छठे को ही क्यों लिया? सातवें को क्यों नहीं लिया? हां, श्रेणी के गुणस्थान, वे पंचमकाल में नहीं होंगे। परंतु पंचमकाल का जीव छठे-सातवें गुणस्थान तक का पुरुषार्थ करके मुनिराज हो सकता है। यहां संभावना की क्या बात है? यह हमारे ज्ञान की कमजोरी है कि उस ज्ञान में जानने में नहीं आते तो हमें लगता है कि पंचमकाल में मुनिराज होते ही नहीं हैं। *प्रश्न: तीन कम नौ करोड़ मुनिराज को हम अभी विद्यमान में नमस्कार करते हैं, लेकिन यह उत्कृष्ट संख्या विद्यमान तो नहीं है?* यह संख्या विद्यमान नहीं है यह आप कैसे कह सकते हैं? जब होती है तो कितनी होती है? जहां-जहां संख्या की बात होती है वहां-वहां तो उत्कृष्ट यानी मॅक्झिमम संख्या बतायी जाती है। जैसे लब्धिअपर्याप्त मनुष्य कितने होते हैं? उनकी संख्या असंख्यात है। क्या हमेशा होते हैं? कभी-कभी तो ऐसी पोझिशन आती है कि असंख्यात वर्षों तक एक भी जीव लब्धिअपर्याप्त मनुष्यपर्याय में नहीं है, यह बात हो सकती है। कभी हो सकता है एक ही जीव है उस पर्याय में; कभी हो सकता है दो ही हैं; कभी दस ही हैं – मॅक्झिमम कितने होंगे? तो असंख्यात होंगे। इसको सांतरमार्गणा कहते हैं। अनेक जीवों की अपेक्षा इसमें अंतर पड़ सकता है। एक भी जीव उस पर्याय में

नहीं है यह बात हो सकती है मात्र यह लब्धिअपर्याप्त मनुष्यों की बात है। ऐसी अन्य भी कुछ मार्गणा हैं जिसको सांतरमार्गणा कहते हैं। उनमें यह अंतर पड़ सकता है। ये हो गये प्रश्न।

श्रोता: जैसे कार्माणशरीर में अलग-अलग जीवों के ज्ञानावरण, दर्शनावरण ऐसे भेद हैं, वैसे तेजसशरीर में कुछ भेद हैं? नहीं, तेजसशरीर में ऐसे भेद नहीं हैं। कार्माणशरीर में तो आठ कर्मों की अपेक्षा भेद हैं, आठ कर्म तो हम स्थूलरूप से कहेंगे। उसके और भेद करेंगे तो एक सौ अड़तालीस प्रकृतियां कहेंगे, उसके और भेद करना है तो असंख्यातलोकप्रमाण भेद हो जायेंगे। ऐसे वे तेजसशरीर में नहीं हैं और ऐसे औदारिक आदि शरीर में नहीं हैं। हां, वह ऐसा होगा की कर्मभूमि के शरीर या जलकायिक के शरीर, वह जो काय की अपेक्षा भेद हैं, वैसे भेद होंगे। अन्यथा नहीं। अभी अपना समय हो चुका है और कोई प्रश्न है, एक-दो मिनट बाकी हैं बस।

श्रोता: तेजसशरीर के बारे में बहुत सुना नहीं है, थोड़ा विशेष? तेजसशरीर का कार्य तो यह है कि एक तो औदारिक, वैक्रियिक और आहारक शरीर में तेज होता है और दूसरी बात उष्णता होती है। अंदर भी जो कोई शरीर में यह अन्न पचाना वगैरह कार्य होता है वह भी उसके कारण होता है। जो हीट यानी गरमी होती है औदारिकादि शरीरों की, वह भी तेजसशरीर के कारण होती है। बस और उसका कुछ ज्यादा कार्य तो है ही नहीं है। ज्यादा कार्य नहीं का अर्थ शास्त्र में उसकी ज्यादा चर्चा नहीं है।

श्रोता: जो परमाणु की बात की है हमने कि सिद्धराशि का अनंतवां भाग यह जो बताया, तो वह अक्षय अनंत होगा क्या? अक्षय अनंत तो नहीं होगा। अभी हम रुकेंगे यहां पर।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

११. नोकर्मशरीर निषेक रचना

षट्खण्डागम के आधार से, हम यहां काल अनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। काल की प्ररूपणा चल रही है और यहां जो व्यवहारकाल है – काल के समयों की बात है, उसका जो नाप है; उसको गिनने के जो कोई अन्य-अन्य तरीके हैं, उस संबंधी यहां चर्चा चल रही है। द्रव्यपरावर्तन कहो या परिवर्तन कहो, उसीका दूसरा नाम है पुद्गलपरावर्तन, तो उसका स्वरूप देखने के लिये हमने प्रारंभ किया था। हमने देखा है कि एक ही समय में जीव अनंत परमाणुओं का ग्रहण करता है। अब ये तो औदारिक, वैक्रियिक, आहारकशरीर संबंधी भी हो सकते हैं और तेजस, कार्माण संबंधी भी हो सकते हैं।

हमने अलग-अलग शरीरों की स्थिति की बात देखी थी; स्थिति का अर्थ होता है एक समय में जो कर्म परमाणु या औदारिकशरीर के परमाणु या वैक्रियिकशरीर के परमाणु बंधते हैं तो पहले समय में बंधे हुये परमाणुओं की स्थिति कितनी बंधती है? इन तीन शरीरों संबंधी कितनी स्थिति बंधती है? आहारक की तो अंतर्मुहूर्त ही है, परंतु औदारिक और वैक्रियिक की स्थिति कितनी बंधती है पहले समय में? तो कहते हैं कि जितनी आयु लेकर आया है, उतनी ही उस समयप्रबद्ध की स्थिति होगी; उसको हम कहेंगे कि इतना स्थितिबंध होगा। जैसे कोई ३३ सागरवाला जो देव है या नारकी है और ऋजुगति से गया है यानी वहां भी एक समय कम नहीं करना है हमें; तो वहां पहले समय में जो वैक्रियिकशरीर संबंधी परमाणु ग्रहण करेगा, तो उस समयप्रबद्ध में स्थितिबंध कितना होगा? तो हम कहेंगे ३३ सागर। उसी समय में ये निषेक बनेंगे; ३३ सागर के प्रत्येक समय में एक-एक निषेक की रचना होगी और वे निषेक एक-एक समय में उदय में भी आते रहेंगे। अंतिम निषेक कहां होगा? ३३ सागर के अंतिम समय में। वह देवपर्याय या नारकीपर्याय का अंतिम समय कहलायेगा। हर समय में जितनी आयु शेष है, उतना स्थितिबंध होता है। औदारिक और वैक्रियिक शरीर में यह विशेषता है। आहारकशरीर में भी यह विशेषता है कि वहां आबाधाकाल नहीं है; जिस समय बंधा है, उसी समय से निषेक रचना है। कर्मों में हम क्या देखते हैं? कर्म बंधता है, तो जितनी स्थिति बंधती है उसके अनुपात में यानी उसके प्रपोर्शन में आबाधाकाल पड़ता है; यानी निषेक की रचना जो होती

है, वह आबाधाकाल को छोड़कर उसके पश्चात्‌वाले समय से लेकर उन निषेकों की रचना हो जाती है।

निषेक रचना होती कब है? बंध के समय में ही होती है। जब हम आबाधा के पश्चात् होती है ऐसा कहेंगे, तो आबाधाकाल बीत जाने के बाद सात हजार वर्ष के बाद वे निषेक बनते हैं ऐसा नहीं है। निषेक कब बने? जिस समय बंध हुआ तभी बने। यह ऐसा इतना खोल-खोलकर क्यों बता रही हूं? क्योंकि इसके बारे में कहीं चर्चा चलती है विद्वानों में आपस में। तो हमें बहुत सारे फोन आते रहते हैं; तो ऐसा पूछा था किसीने कि आबाधाकाल बीत जाने के बाद निषेक रचना होगी न? नहीं; निषेक रचना तो बंध के समय में ही होगी, परंतु जितना आबाधाकाल है उसमें एक भी निषेक नहीं बनेगा। वे निषेक कब कहलायेंगे? कि उतना काल छोड़कर वे बाद में उदय आने योग्य हैं, तो वह निषेक रचना कहलायेगी। *श्रोता: किसीने पूछा या कइयों ने पूछा?* बहुतों ने पूछा है। ये भोपाल से, बंडा से और कहां-कहां से फ़ोन आते रहते हैं और इसके बारे में चर्चा होती रहती है।

श्रोता: पहले समय में जब निषेक की सौ साल की आयु जितनी रचना की, तो दूसरे समय में जब हम नयी स्थितिवाले परमाणु बांधेंगे, तो ऐसा हो सकता है कि सौ साल से कमवाले परमाणु, मतलब निषेक रचना ही बंधेगी – ऐसा हो सकता है क्या? हां, एक समय छूट गया न अभी आयु में। *श्रोता: समय तो छूट गया लेकिन उससे कम समझो हो सकता है क्या?* निषेक उतने तो बंधेंगे जितनी आयु शेष है, उतने तो बंधेंगे ही, उससे कम नहीं। *श्रोता: उससे कम नहीं?* हां, कर्मों में हीनाधिक स्थिति बांधती है परंतु औदारिक या वैक्रियिक शरीर के समयप्रबद्धों की लास्ट लिमिट नक्की है। जीवन का जो अंतिम समय है, वहां तक की यानी गलितावशेष आयु प्रमाण स्थिति बंधेगी। जितनी आयु गल गयी है उतने निषेक नहीं बनेंगे, जितनी शेष है उतने निषेक बनेंगे और उनमें से हर समय में प्रत्येक समयप्रबद्ध का, बंधे हुये प्रत्येक समयप्रबद्ध का, एक-एक निषेक मिलकर इतने खिरेंगे। शुरुआत में एक निषेक खिरेगा, दूसरे समय में दो निषेक खिरेंगे, तीसरे समय में तीन खिरेंगे, ऐसे होते-होते कुछ असंख्यात समय बीत गये तो असंख्यात निषेक गलते रहेंगे हर समय यानी नया-नया बंध भी होता रहेगा और पुराने में से खिरते भी चले जायेंगे।

श्रोता: पर्याप्ति का और निषेक खिरते हैं इन दोनों का क्या संबंध है? पर्याप्ति का

पूर्ण होने का काल अंतर्मुहूर्त है, वह पर्याप्ति बनी रहती है थ्रूआउट लाइफटाइम। *श्रोता: इनका कुछ विशेष ऐसा संबंध है?* नहीं-नहीं, पर्याप्ति का और निषेक खिरने का कोई संबंध नहीं है। कितने, कौनसे परमाणु ग्रहण होते हैं? तो पर्याप्ति के योग्य परमाणु ग्रहण होते हैं। कौनसे परमाणु ग्रहण होते हैं? तो कहेंगे कि जो औदारिकशरीर है, वैक्रियिकशरीर है, उस संबंधी परमाणुओं का ग्रहण होता है। ग्रहण के बारे में उसका रूल है, खिरने का तो ऐसा है कि जो एक-एक समय का बंधा है, एक-एक निषेक तो खिरेगा ही खिरेगा। हर समयप्रबद्ध का नीचे का निषेक तो खिरेगा ही, वह उदयरूप होकर नेक्स्ट समय में निकल जायेगा। इतनी बात ख्याल में आयी? इसके बारे में कोई प्रश्न है?

तेजसशरीर के बारे में बहुत कुछ भ्रमणा चल रही थी कि ६६ सागर होता है यानी ३३ सागर नरक का और कहीं का ऐसा मिला-मिलाकर, यह बात नहीं है। एक समय में बंधी हुयी उत्कृष्ट स्थिति कितनी बंध सकती है? तो ६६ सागर की। दूसरे समय में कितनी बंधेगी? कुछ भी बंधेगी न! जो कुछ हीनाधिक जितना हो सकता है, उतना उसका बंध होगा। उससे कर्म जैसी कोई परिस्थिति नहीं बनती है इसलिये इसकी इतनी विस्तार से चर्चा नहीं है। तेजसशरीर एक भव के लिये नहीं बंध रहा है। तेजसशरीर बंधता रहता है, हर समय बंधता रहता है और पड़ा रहता है, उसके उदय भी चलते रहते हैं। जैसे कार्माणशरीर यानी कर्म बंधते रहते हैं, उसके उदय भी होते रहते हैं। ऐसे तेजसशरीर भी बंधता रहता है हर समय और उसका उदय भी चलता रहेगा हर समय; उदय हर भव में और हर समय में है। उसको हमने कहा न, प्रत्येक समय में उसका उदय है। उदय कब तक है? तेजसशरीर का कहा, तेजसशरीर नामकर्म का नहीं; फिर से सुनो बराबर, *श्रोता: उसीमें कन्फ्यूजन है।* हां उसीमें कन्फ्यूजन होता है।

देखिये, तेजसशरीर नाम का एक नामकर्म है, वह तो कर्म का भेद है, वह कर्म है। उस कर्म के उदय में तेजसशरीर के परमाणु यानी तेजसवर्गणा ग्रहण की जाती है; तेजसवर्गणा से तेजसशरीर बनता है। अब वह तेजसशरीर का हर समय में उसका समयप्रबद्ध खिर रहा है कि नहीं खिर रहा है? उदय होकर निकल जा रहा है। तेजसशरीर के परमाणु हर समय में निकल जा रहे हैं। तो यह तेजसशरीर का बंध होना कब तक होगा? जब तक योग है। जब तक तेजसशरीर नामकर्म का उदय है, तब तक तेजसवर्गणा का ग्रहण होगा।

वह कब तक होता है? तो तेरहवें गुणस्थान के अंत समय तक, क्योंकि वहां तक तेजसशरीर नामकर्म का उदय है। चौदहवें गुणस्थान में क्या होता है? जो तेजसशरीर ऑलरेडि बना है, वह खिरेगा कि नहीं खिरेगा? या वह तेजसशरीर लेकर जायेंगे सिद्ध अवस्था में? तेजसशरीर जो बना है, अभी कर्म भी नया ग्रहण नहीं हो रहा है, पर वहां कर्म तो पड़े हैं, सत्ता में हैं न? चारों अघातिकर्म पड़े हैं, तो उन सबके एक-एक निषेक खिर रहे हैं वहां पर। तो चौदहवें गुणस्थान में कार्य क्या हो रहा है? सभी कर्मों का एक-एक निषेक खिर रहा है। नया बंध कुछ नहीं हो रहा है। तेजसशरीर भी बना था, उसमें से भी परमाणु खिर रहे हैं। परंतु उदयरूप जो कर्म कहलाते थे, उन कितने ही कर्मों के उदय भी मिट गये। अब वह विषय अलग है कि कौनसे गुणस्थान में कौन-कौनसे उदय होते हैं? कौन-कौनसे उदयों की व्युच्छित्ति होती है, वह प्रकरण अलग है। यहां तो तेजसशरीर संबंधी जो बात है, उसकी चर्चा अब हम करेंगे। *श्रोता: ६६ सागर का प्रमाण क्यों बताया?* ६६ सागर का प्रमाण इसलिये बताया कि केवलज्ञानी ने जान लिया है। दूसरा कोई कारण नहीं है उसके लिये। क्योंकि हम उसका संबंध किसी भव के साथ लगा रहे हैं। परंतु ऐसी कोई बात नहीं है।

अब यह चार्ट देखना है आपको, देखो, नोकर्म की निषेक रचना होती है। नोकर्मशरीर यानी औदारिकशरीर है, वैक्रियिकशरीर है, आहारकशरीर है, तेजसशरीर भी है – उनको कहेंगे नोकर्मशरीर। उसका भी हर समय, एक-एक समयप्रबद्ध बंधता है और उसकी निषेक रचना होती है। कर्म भी जो बंधता हम कहेंगे, कार्माणशरीर की भी निषेक रचना होती है। यानी हर समय जो कार्माणवर्गणा ग्रहण होती हैं, वे कर्मरूप परिणमित होती हैं और उस प्रत्येक समयप्रबद्ध की निषेक रचना होती है। इन दोनों की निषेक रचना में क्या अंतर है वह हम देख रहे हैं। चार्ट में देखना आप।

नोकर्मशरीर (औदारिक, वैक्रियिक) निषेक रचना

- आबाधाकाल नहीं होता।
- सभी समयप्रबद्धों का अंतिम निषेक आयुस्थिति प्रमाण।
- स्थिति का बंध गलितावशेष आयुप्रमाण, उतना ही निषेकों का प्रमाण।
- एक ही भव तक।

कार्माणशरीर निषेक रचना

- स्थिति के अनुसार आबाधाकाल होता है।
- स्थिति का बंध परिणामों के अनुसार हीनाधिक।
- निषेकों का प्रमाण = स्थितिबंध मायनस आबाधाकाल।
- अनेक भवों तक।

नोकर्मशरीर की जो निषेक रचना है, वह ऊपर बतायी है। वहां पहली पंक्ति में क्या लिखा है? **उसका आबाधाकाल नहीं होता।** जिस समय में समयप्रबद्ध बंधा उस समय से लेकर निषेक रचना हुयी, देखा था न हमने? उसमें कोई आबाधा के बाद वह निषेक रचना, ऐसा नहीं है; यानी जिस समय बंधेगा उसी समय उदयरूप होकर निकलना भी शुरू हो जायेगा। क्या कहा? जिस समय पहला समयप्रबद्ध बांधा है औदारिकशरीर का, उसी समय कुछ परमाणु उसमें से उदयरूप है जिसे हम पहला निषेक कहेंगे, वह उस समय उदयरूप है, दूसरे समय में वह नहीं रहेगा, खिर जायेगा। दूसरी बात क्या है? सभी समयप्रबद्धों का अंतिम निषेक कहां पर पड़ा है? तो जितनी आयुस्थिति बंधी है, आयुस्थिति तो पूर्वभव में बांधी थी उसने, तो वहां तक उसकी निषेक रचना होगी। यानी कभी भी समयप्रबद्ध बांधे – सौ साल की आयु लेकर आया है, पहले समय बंधे तो अंतिम निषेक वह भव के अंतिम समय में पड़ा है – सौ साल के अंतिम समय में। पचासवें साल में बांधा उसका भी अंतिम निषेक उसी पोझिशन पर है यानी जीवन का अंतिम समय है, वहां सभी समयप्रबद्धों का अंतिम निषेक है।

श्रोता: इसमें तेजस को लेना है? तेजस को इसमें नहीं लेना है। *श्रोता: परंतु तेजस नोकर्मशरीर में आता है?* नोकर्मशरीर में आता है, उसमें आबाधाकाल नहीं होता है इसलिये उसको लेना है। परंतु यह दूसरा नियम उसके लिये लागू नहीं है। दूसरा जो नियम है, वह मात्र दो शरीरों के लिये है, तीन शरीरों के लिये भी नहीं है, औदारिक और वैक्रियिक के लिये ही लागू होगा। आहारक की तो अंतर्मुहूर्त स्थिति है तो उसका उतना ही बंध होगा। औदारिक और वैक्रियिक में यह नियम लागू होगा। *श्रोता: औदारिकशरीर और नोकर्मशरीर में क्या फर्क है?* औदारिकशरीर को ही नोकर्मशरीर कहते हैं; हां, एक ही

बात है, क्योंकि जो पांच शरीर हैं न, उनमें एक कर्मशरीर है और बाकी सबको नोकर्मशरीर कह देते हैं। परंतु यह बात किसमें लागू होगी कि जिसमें आबाधाकाल नहीं होता; औदारिक में भी, वैक्रियिक में भी, आहारक में भी और तेजस में भी परंतु समयप्रबद्धों का अंतिम निषेक आयुस्थिति प्रमाण है यह नियम कहां लागू होगा? औदारिक और वैक्रियिक के लिये। यहां तक ख्याल में आयी बात? आगे –

स्थिति का बंध यानी जो स्थितिबंध होता है – कितने समयों की स्थिति बंधेगी? तो कहते हैं कि गलितावशेष आयु प्रमाण स्थिति बंधती है। कुछ आयु अभी बीत गयी है और जितनी आयु शेष है, उतना स्थितिबंध होगा। किसका? औदारिकशरीर का और वैक्रियिकशरीर का। यानी उतने ही निषेक बनेंगे, यह तो बात हमने बहुत विस्तार से देखी है और यह जो औदारिक और वैक्रियिकशरीर का बंध हो रहा है, वह कितने भवों तक चलेगा? एक ही भव तक। यह शरीर की जो रचना हो रही है, उसके जो परमाणु ग्रहण करते हैं उसकी जो निषेक रचना हो गयी, उसका जो उदय चलेगा, एक भव के लिये है। कर्म का बंध होता है तो वह भवों-भवों तक बंधे हुये चलते हैं, उसका उदयकाल बहुत लंबा चलता है। एक ही समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का उदय बहुत लंबे काल तक, सागरों तक चलता रहता है। ऐसा यह औदारिक और वैक्रियिकशरीर में नहीं है; बस एक भव तक के लिये ही वे बंधते हैं। यहां से अभी कोई मनुष्य मरकर देव हुआ, तो वहां वैक्रियिकशरीर की रचना हो जायेगी, उसके परमाणु ग्रहण करेगा। जितनी आयु लेकर गया है, उतनी ही उसकी स्थिति पड़ेगी।

अब कार्माणशरीर की निषेक रचना में क्या अंतर है उसको देखते हैं। बोर्ड पर देखना अब। कि **स्थिति के अनुसार आबाधाकाल होता है** इसका अर्थ क्या है? जितना स्थितिबंध बड़ा, उतना आबाधाकाल बड़ा। हमने बहुत बार देखा कि ७० कोड़ाकोड़ी सागर का मिथ्यात्व का बंध करनेवाला जो जीव है, वहां आबाधाकाल का प्रमाण कितना है? तो सात हज़ार वर्ष यानी सत्तर सौ वर्ष। सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर के लिये सत्तर सौ वर्ष यानी एक कोड़ाकोड़ी सागर के लिये एक सौ वर्ष। बराबर है? अंत:कोड़ाकोड़ी सागर के लिये वह फिर अंतर्मुहूर्त वगैरह आबाधा हो जाती है। यानी आबाधा का प्रमाण कितना है? तो जितना स्थितिबंध बड़ा, उतना आबाधाकाल बड़ा – उसी अनुपात में होगा। किसमें?

कर्म के बारे में। और स्थिति का बंध कैसे होता है? परिणामों के अनुसार हीनाधिक भी होता है। देखो, शरीर में; कौनसे? औदारिक और वैक्रियिक में क्या देखा था? स्थितिबंध प्रति समय एक-एक समय से घटता हुआ होगा क्योंकि एक-एक समय आयु घट रही है। तो जो समयप्रबद्ध बंधता है , उसकी स्थिति एक-एक समय से हीन-हीन बंधेगी। कर्म में क्या होता है? कषाय हीनाधिक होते हैं। तो उसका स्थितिबंध भी हीनाधिक होगा। अकेले संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि की बात करेंगे, तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर से लेकर अंत:कोड़ाकोड़ी सागर तक उसके स्थितिबंध के व्हेरिएशन्स होंगे। कभी अधिक होगा, कभी कम होगा, संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात कर रही हूं मैं। एकेन्द्रिय में जायेगा तो एक सागर जितना बंध होगा उसका, इसलिये हम एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय की बात यहां नहीं ले रहे हैं। संज्ञी पंचेन्द्रियों में भी सभी जीव ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध नहीं करते, वह कोई विरला करेगा, कभी-कभी करेगा; वह भी हर बार नहीं करता है।

तो यह हम देख रहे थे कि कर्मों में स्थिति का बंध परिणामों के अनुसार होता है, परंतु औदारिकशरीर का जो स्थितिबंध है, उसमें परिणामों के अनुसार कोई व्हेरिएशन नहीं है; जितनी आयु बांधकर आया है उतनी स्थिति पड़ेगी और वह भी गलितावशेष आयुप्रमाण पड़ेगी। यानी वह तो हीन-हीन-हीन बंधता चला जायेगा। कर्मों में इन निषेकों का प्रमाण कितना होता है? तो हम देखते हैं कि ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया है, तो निषेक कितने बनेंगे? तो सात हजार वर्ष प्रमाण समयों में तो कोई निषेक नहीं बने। सात हजार वर्ष और एक समय, फिर दो समय, फिर तीन समय; कहां तक? ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक; यानी कितने निषेक बनेंगे, तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर मायनस सात हजार वर्ष, इनके जितने समय होंगे, उतने निषेक बनेंगे। किसमें से? एक समय की कमायी में से। एक समय में किसीने मिथ्यात्व का उत्कृष्ट स्थितिबंध किया, तो वह जो समयप्रबद्ध उसने बांधा, तो उसका डिस्ट्रिब्यूशन उसी समय में इतने निषेकों में हो जायेगा। कितने असंख्यात-असंख्यात निषेक तैयार होंगे। यानी इतने काल तक इसका उदयकाल चल सकता है। यह ज़रूरी नहीं है कि इतने काल तक वे पड़े रहेंगे, उसमें भी उथल-पुथल होती चली जाती है बंधने के बाद। वह अपना यहां का विषय नहीं है, यहां तो बंधने की चर्चा चल रही है अपनी। तो इन निषेकों का प्रमाण कितना है? जितना स्थितिबंध किया है उसमें से आबाधाकाल को मायनस करेंगे, इतने उसके निषेक बनेंगे और वह कितने भवों तक चलती है स्थिति,

तो अनेक भवों तक। हर समय नया-नया बंध करता रहता है – वह सागरों का भी होगा, तो अनेक भवों तक यह चलेगा।

देखो, इसमें यह भी एक बात है – कोई एकेन्द्रिय जीव है और वहां से वह मरकर त्रस में आया। यह सुनने जैसी बात है, कठिन लगेगी, परंतु कभी तो सुनना है न? तो एकेन्द्रिय में अधिक से अधिक स्थिति कितनी बंधती है? मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर है, ज्ञानावरण की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर का तीन सप्तमांश है। इसी प्रपोर्शन में होगा। मिथ्यात्व का ७० कोड़ाकोड़ी सागर है तो ज्ञानावरण का तीस कोड़ाकोड़ी सागर है तो एक सागर मिथ्यात्व के साथ ज्ञानावरण का तीन सप्तमांश सागर होगा। तीन सप्तमांश समझते हैं न? तीन बटे सात सागर हां, इस प्रपोर्शन में होगा। तो हम यहां मिथ्यात्व की बात करेंगे; तो मिथ्यात्व का उत्कृष्ट बंध किसीने किया, किसी एकेन्द्रिय ने; कितना किया? तो एक सागर का किया। मिथ्यात्व का कितना कर सकता है कोई जीव? ७० कोड़ाकोड़ी सागर – वह पंचेन्द्रिय करेगा, संज्ञी पंचेन्द्रिय – बहुत संक्लेशवाला मिथ्यादृष्टि इतना बंध करेगा। अब वह जीव एकेन्द्रिय से त्रस पर्याय में आया है। त्रस पर्याय में कितने काल तक रह सकता है? *श्रोता: दो हजार सागर।* दो हजार सागर तक। तो वह एक सागर का बंधा हुआ जो कर्म है, कितने काल में वह खिरकर नष्ट हो जायेगा? *श्रोता: एक सागर में।* एक सागर में जाना चाहिये, तो कहते हैं कि कोई जीव एकेन्द्रिय में लंबे काल तक पड़ा था, मान लेते हैं अनेक पुद्गलपरावर्तन तक पड़ा था। एकेन्द्रिय से निकलकर वह पंचेन्द्रिय में आया, मनुष्य हुआ है और मनुष्य फिर तिर्यंच, देव, नारकी जो कुछ हुआ है, पूरे २००० सागर बिताये, अब अंतिम भव है मनुष्य का और उस अंतिम भव में वह मोक्ष जानेवाला है ऐसा हम मान लेते हैं।

श्रोता: २००० सागर कैसे बिताया? द्वीन्द्रियादि से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक सभी पर्यायें जो हैं, वे सब मिलाकर त्रस की सभी पर्यायें उसने पूरी की, यानी त्रस की उत्कृष्ट स्थिति *श्रोता: २००० सागर।* २००० सागर और वह पूर्वकोटि पृथक्त्व मिलाना है तो मिला दो, पर्याप्त-अपर्याप्त मिलाकर। उसके अंतिम भव में आया है और उस भव में मान लेते हैं वह मोक्ष जानेवाला है, तो क्षपकश्रेणी चढ़ रहा है। २००० सागर के अंत में वह क्षपकश्रेणी चढ़ रहा है, तो क्षपकश्रेणी चढ़ने वाले उस जीव के, भले वह तीर्थंकर का भी

जीव क्यों न हो, जब नौवें गुणस्थान में आता है और क्षपणा चालू करता है तो एकेन्द्रियपर्याय, कितनी एकेन्द्रियपर्याय? एकेन्द्रियों के असंख्यात भवों में बंधे हुये कर्म वहां सत्ता में पड़े रहते हैं। *श्रोता: ओह!* हम तो कहते हैं एक सागर में नष्ट होने चाहिये, एक सागर का बंध किया था। परंतु वह एक सागर का बंध है पर उस कर्म की शक्तिस्थिति कितनी है? मिथ्यात्व की शक्तिस्थिति कितनी है तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर की है! तो वह एकेन्द्रिय जीव जब त्रसपर्याय में आया है, कभी संज्ञी पंचेन्द्रिय हुआ है तो उसने जब जिस समय मिथ्यात्व का ७० कोड़ाकोड़ी सागर का उत्कृष्ट स्थितिबंध किया और मान लेते हैं एकेन्द्रिय में कुछ काल बिताकर आया है – मान लेते हैं एक सागर का बंध करने के बाद कुछ एक हजार साल बीत गये उसके, उसके बाद में ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया; तो उसकी शक्तिस्थिति इतनी पड़ी है न बाकी? वहां तक वे कर्म परमाणु उत्कर्षण होकर ऊपर चढ़ सकते हैं। एक, दो, चार नहीं चढ़ते, बहुत सारे चढ़ेंगे। यानी बंधने के समय से लेकर ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक, मिथ्यात्व कर्म की विद्यमानता रह सकती है – उत्कर्षण के कारण और उत्कर्षण तभी होता है जब नया बंध होता है। यानी २००० सागर के लास्ट भव में वह अगर श्रेणी चढ़ रहा है तब भी; जब वह एकेन्द्रिय में था – एक, दो, चार भव की नहीं, एकेन्द्रियों के असंख्यात भवों में बांधे हुये ज्ञानावरणादि कर्म उसकी सत्ता में विद्यमान रहते हैं और यह आगम का वचन है। जयधवला में निकालकर देखना – अचरज लगता है न यह? उसका उत्कर्षण होते रहता है और वह बना रहता है वहां पर।

श्रोता: निर्जरा नहीं करता है? निर्जरा उसमें से कुछ की होगी, पर सबकी तो नहीं होगी। उसने जब क्षपक-श्रेणी में है तो मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी नहीं रहेंगे परंतु अन्य कर्म होंगे। *श्रोता: एक सागरवाला ७० कोड़ाकोड़ी सागर इतना चढ़ सकता है?* यह एक सागरवाला इतना चढ़ सकता है, हां! क्योंकि उसकी इतनी शक्तिस्थिति है। एक होती है व्यक्तिस्थिति – जितनी उसने बांधी है, अभी जो हम देखते हैं सात हजार वर्ष और एक समय, उस निषेक में कुछ परमाणु पड़े हैं और कुछ परमाणु ऊपर ७० कोड़ाकोड़ी सागर के ऊपर अंतिम निषेक में पड़े है। भले उसकी व्यक्तिस्थिति कितनी है? सात हजार वर्ष और एक समय, तब वह खिरने के योग्य है। परंतु बंध के एक आवली के बाद, इनमें यह ऊपर-नीचे होना चालू हो जाता है, उत्कर्षण-अपकर्षण। *श्रोता: फिर यह नया बंध भी ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक होना ही चाहिये न?* नये बंध के साथ मैंने तो बताया – कभी संज्ञी

पंचेन्द्रिय हुआ और अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का भी बंध करेगा तो एकेन्द्रिय में बंधे हुये कर्म बंधने के समय से जितना काल बीत गया उतना मायनस करके उतना ऊपर चढ़ सकते हैं। ख्याल में आती है बात? तो यह जो एक समय में बंधे हुये जो अनेक निषेक हैं, उन निषेकों में भी कुछ परमाणु ऊपर-नीचे होते रहते हैं। पहले निषेक का परमाणु अंतिम निषेक तक पहुंच सकता है, उत्कर्षण के द्वारा। उत्कर्षण में एक नियम है – नया बंध होना चाहिये, अपकर्षण के लिये कोई नियम नहीं है। वह उनका सहजरूप से अपकर्षण-उत्कर्षण चलता रहता है। तो यह बताने का प्रयोजन क्या है? कि हमें तो लगता है वह एकेन्द्रिय से आया वह तो सब खिर गया, अभी तो यहां थोड़े ही कर्म बाकी रह गये हैं – ऐसा नहीं है! क्योंकि कर्म के बारे में हम कुछ नहीं जानते हैं। *श्रोता: कब तक रहेंगे, नौवें गुणस्थान तक?* नौवें गुणस्थान में जब उनकी क्षय की प्रक्रिया चालू हो जायेगी, तब तक उसकी सत्ता होगी वहां! *श्रोता: २००० सागर का एक ही सागर बांधा था?* एक सागर की स्थिति बांधी थी और मिथ्यात्व कर्म ७० कोड़ाकोड़ी सागर ऊपर तक चढ़ सकता है, अंत:कोड़ाकोड़ी सागर भी बांधेगा तो उसके सामने २००० सागर तो कुछ नहीं है। २००० सागर कह रहे हैं – एक हजार सागर से करोड़ सागर ज्यादा है कि नहीं और उससे कोड़ाकोड़ी सागर ज्यादा है कि नहीं है?

तो यहां हम देख रहे थे, **अनेक भवों तक** – क्या लिखा है यहां पर? कार्माणशरीर की जो निषेक रचना होती है और वे निषेक पड़े रहते हैं, अनेक भवों तक और हर समय में नये-नये बंधते हैं और जो नया बंध होता है, वह पुराने निषेकों में जुड़ता चला जाता है। वे सत्ता के निषेक कहलायेंगे। एक समयप्रबद्ध जो नया बंधता है उसके हम निषेक बता रहे हैं, परंतु वे निषेक होते हैं, यानी क्या होते हैं? जो सत्ता में पड़े हैं उनमें वे भी मिल जाते हैं और जो पुराने बंधे हैं, जिनकी स्थिति पूरी हो गयी हैं, वे उदय में आते हैं। तो यह उदय हो रहा है, नया बंध हो रहा है, यह चक्कर चला आ रहा है; कबसे? अनादिसे और हम मानते हैं कि क्या करें, कर्म का उदय है! वह कैसे मिटे? वह जरा मिटे, थोड़ी देर रुके, तो हम अपना कार्य कर सकते हैं। क्या यह सही है? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं? वह जड़ है, उसने हमें रोक रखा है अपना कार्य करने के लिये? यानी हम इतने पराधीन हैं? कौन? ज्ञानवाले जीव कि कर्म जो जड़ है, वह हमें घुमा रहा है और वह हमें कंट्रोल कर रहा है ऐसा हमने मान रखा है, यह हमारी भूल है। यह भेदविज्ञान तो इन्हीं से करना है न? भले ही कर्म

होंगे, उसका बंध होगा, उसका उदय होगा, परंतु मैं तो इनसे भिन्न हूं, यह बात, यह भेदविज्ञान की कला हमें आनी चाहिये। उसकी बात तो हमने करणानुयोग के विषय में बहुत बार ली थी, अभी तो हमें परावर्तन करना है न?

श्रोता: तो आपने यह जो बताया कि २००० सागर के अंत में जीव को मोक्ष होता है, तो उसको उसके पहलेवाले जो एकेन्द्रिय भव का जो है, उन सब भवों की जो स्थिति है एक सागर की, वह सब स्थिति में ऐसा उत्कर्षण होगा या कोई स्थिति ऐसी खत्म भी हो जायेगी? नहीं-नहीं, देखो, इनका प्रश्न ऐसा है कि वह एक सागर की स्थिति बांधी तो सबके सब ऊपर चले जायेंगे? उसमें से कुछ परमाणु ऊपर चले जायेंगे, कुछ उदय में भी आकर खिर जायेंगे। यह कोई जरूरी नहीं कि सब के सब ऊपर जाये, परंतु फिर भी इतनी सत्ता विद्यमान रहती है, यह कहने का प्रयोजन है और ऐसा नहीं है कि किसीके रहती होगी, किसी एकाध जीव के रहती है, ऐसा नहीं है। सबकी नियम से रहती ही है, भले ही वह २००० सागर के अंत में चले जाये, शुरुआत में होंगे तो होगी ही होगी सत्ता – उसमें तो कोई नवाई नहीं है। परंतु जो इतना काल बिताकर त्रसपर्याय के अंत में वहां तक आया है, उसकी भी सत्ता में; उसने भी एक, दो, चार नहीं; एकेन्द्रियों के असंख्यात भव किये थे, उन असंख्यात भवों में बंधे हुये कर्म परमाणु उसकी सत्ता में पड़े हैं। उनके पड़े हैं तो हमारे-आपके होंगे कि नहीं होंगे?

श्रोता: तो उसका उदय के समय कैसे होता है, अलग-अलग-अलग? उदय के समय का जो कोई हिसाब है वह अलग है। हां, देखो, जब जीव सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो वह उसके उदय में नहीं आते हुये अन्यरूप उदय होकर चले भी जाते हैं। *श्रोता: वह मिथ्यादृष्टि को?* हां, मिथ्यादृष्टि को है; वह मिथ्यात्व कर्म का उदय तो निरंतर चल ही रहा है, उसके साथ उन निषेकों में वे निषेक जुड़ जाते हैं। *श्रोता: अनेक भवों का अगर लेंगे तो एक-एक भव में उसने दर्शनमोहनीय का ७० कोड़ाकोड़ी कभी एक कोड़ाकोड़ी ऐसा करते-करते जब उदय में आता है तभी...?* उदय में आता है तो एक ही निषेक उदय में आता है। *श्रोता: कौनसे भव का?* सभी भवों का प्रत्येक समयप्रबद्ध का एक-एक निषेक तो उदय में आता ही है। देखो, एक समय में उदय कौनसा चलता है? प्रत्येक अलग-अलग समयों में बंधे हुये परमाणु; कितने? असंख्यात भवों के जो बंधे पड़े थे, सत्ता में पड़े थे; सबका मिलकर वह सत्तावाला निषेक कहेंगे, वह उदय में आता है। देखो, बंधे हुये तो

डिस्ट्रिब्यूट हुये। मान लेते हैं, बंधे हुये उसका पचास में डिस्ट्रिब्यूशन हुआ, बराबर? दूसरे समय में बंधे हुये हम सबको कहेंगे कि पचास-पचास में डिस्ट्रिब्यूशन हुआ और अलग-अलग समय में बंधे हैं, तो उसका पहला निषेक अलग-अलग समय पर आता रहेगा। अब मान लेते हैं एक समय में अलग-अलग पचास समयों में बंधे हुये का एक-एक निषेक उदय में आयेगा।

श्रोता: जैसे अनेक भवों तक का आपने लिखा? फॉर एक्झाम्पल – सौ भव लेंगे। हर एक भव में अगर मिथ्यादृष्टि है और अलग-अलग प्रकार से दर्शनमोहनीय बांधता है, तो वह जो बांधा हुआ सत्ता में है, तो वह उदय में आयेगा तो फिर वह कैसे आयेगा? अभी हम पचास के बदले उसने एक समय में छह निषेक बांधे ऐसा समझेंगे। आबाधाकाल के ऊपर छह निषेकों की रचना हुयी। दूसरे समय में छह निषेक बांधे तो आबाधाकाल को छोड़कर ऊपर से छह बांधे। तीसरे समय में छह बांधे, चौथे समय में छह बांधे, इसतरह अलग-अलग समयों में बांधता गया। *श्रोता: एक ही भव में?* हर समय में लगातार। जब अंतिम समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध का आबाधाकाल पूरा हो गया है, तो उसका उदय आने का चालू हो गया। क्योंकि पहले से पड़े हैं न सत्ता में? उनमें से इसका एक पहला निषेक उसके पहले बंधे हुये का निषेक, उसके पहले बंधा हुआ, उसके पहले बंधा हुआ, यानी अलग-अलग छह समयों में बंधे हुये का एक-एक निषेक मिलकर एक समयप्रबद्ध प्रमाण उदय में आयेगा और एक समय में बंधे हुये का छह समयों तक डिस्ट्रिब्यूशन होगा। यह मोक्षमार्गप्रकाशक का वाक्य है कि एक समय में बंधे हुये अलग-अलग समयों में उदय में आते हैं और अलग-अलग समयों में बंधे हुये एक साथ उदय में आते हैं। तो अलग-अलग परिणामों से बंधे थे उनमें अनुभाग भी हीनाधिक होगा जो जैसा है। उदय में आते हुये स्थिति की कोई बात ही नहीं है, उसमें स्थिति के कोई व्हेरिएशन्स नहीं, जो उदय में आ रहा है, बस उदय में आयेगा। उसका फल किस पर निर्भर है? किस रूप से अनुभाग का उदय होता है, उस पर निर्भर है और ऐसा भी नहीं कि नीचे के निषेकों में अनुभाग कम है और ऊपर के निषेकों में ज्यादा है। हम ऐसा सोचते जरूर थे क्योंकि हमने ऐसा ही सुनकर रखा था लेकिन ऐसा है नहीं। प्रत्येक निषेक में अनुभाग के जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक अनंत व्हेरिएशन्स हैं – प्रत्येक निषेक में और वे जो उदय में आते हैं तो कौनसे अनुभागरूप से उदय में आयेंगे? बोलो? *श्रोता: कोई भी।* कोई भी? तो जीव फिर पराधीन हो गया?

श्रोता: जीव के जैसे परिणाम होंगे। जीव के जैसे परिणाम होंगे – क्योंकि यहां तत्त्वविचार कर रहा है जीव, तो ये जो मिथ्यात्व के तीव्र अनुभागवाले परमाणु पड़े थे, वे मंद-मंद-मंद-मंद होते चले जाते हैं। प्रतिसमय अनुभाग अनंतगुणा हीन होता है यानी अनंतवां भाग-अनंतवां भाग-अनंतवां भाग होकर उदय में आता है। क्यों? यहां जीव तत्त्वविचार में लग रहा है। तो इतना मंद उदय, वहां परमाणु अधिक प्रमाण में खिरते हैं और अनुभाग मंद-मंद होता चला जाता है। यानी मिथ्यात्व मंद-मंद-मंद हो रहा है; चारित्रमोहनीय भी मंद-मंद-मंद हो रहा है; ज्ञानावरणीय भी मंद हो रहा है यानी ज्ञान भी खुल रहा है। यह सहजरूप से प्रक्रिया होती है। यह पंचलब्धि पुस्तक में देखना आप, वह लब्धिसार के आधार से लिखा है – मैंने अपनी ओर से कुछ नहीं लिखा है उसमें, हां।

तो यह सहजरूप से प्रक्रिया होती है क्योंकि बंध के अनुसार यदि उदय में आता हो और जैसा अनुभाग का उदय है वैसा ही अगर जीव को परिणाम करना पड़े तो सोचना फिर, परंतु ऐसा तो है नहीं। वहां उदयरूप निषेक में जघन्य से उत्कृष्ट तक के सभी अनुभाग पड़े हैं और कितनी ही प्रकृतियां ऐसी हैं कि जीव के परिणाम के अनुसार उनके अनुभाग का उदय होता है। तो जैसे जीव के परिणाम हैं वैसे वे मंदरूप, मध्यमरूप से, तीव्ररूप से, जघन्यरूप से उदय में आ जाते हैं, उनमें व्हेरिएशन्स हैं। दूसरा विचार करो – कोई जीव एकेन्द्रिय में बहुत काल तक रहा है और वह त्रस में आ गया, पंचेन्द्रिय बन गया। तो एकेन्द्रिय के योग्य अनुभाग बांधा था उसने और वह अभी संज्ञी पंचेन्द्रिय हो गया, तो उसके अनुभाग का उदय कैसे चलेगा? मंद चलेगा, तीव्र तो नहीं चलेगा जितना संज्ञी पंचेन्द्रिय करता है – मिथ्यात्व के बारे में, क्योंकि एकेन्द्रिय के इतने तीव्र संक्लेश नहीं हो सकते और वहां तो पंचेन्द्रिय में से जो एकेन्द्रिय में चला जाता है उसके अनुभाग तो काण्डकघात होकर नष्ट होते-होते बहुत हीन हो जाते हैं। तो ऐसे जीव के अनुभाग का उदय मंद है और यहां संज्ञी पंचेन्द्रिय तीव्र संक्लेश करता है तो उसका ७० कोड़ाकोड़ी जितना ऐसा बंध होता है। अनुभाग भी तीव्र बंधता है, तो इसके तो अनुभाग का उदय तो कम है, अनुत्कृष्ट है और बंध उत्कृष्ट कैसे हो सकता है? तो एकेन्द्रिय से आनेवाले के उत्कृष्ट बंध ही नहीं हो सकता है, यह कहना पड़ेगा; ऐसा नहीं है। वर्तमान परिणाम के अनुसार होता है। उसमें बहुत अलग प्रकृतियों के अलग-अलग नियम हैं, उसमें भी बहुत व्हेरिएशन्स हैं।

श्रोता: जो बंध के समय निषेक रचना होगी, तो बाद में आबाधाकाल के बाद अनेक काल की बंधी हुयी नयी निषेक रचना होती है? वह सत्ता की निषेक रचना है। जो बंध के समय निषेक रचना हुयी है, वह उस एक समयप्रबद्ध की निषेक रचना कही जायेगी। बंधने के बाद वह क्या है? सत्तावाले निषेकों में मिल जाते हैं और वे क्या कहलायेंगे? वे सत्तावाले निषेक कहलायेंगे। सत्ता के निषेक कैसे बने हैं? अलग-अलग समयों में बंधे हुये समयप्रबद्धों का एक-एक निषेक मिलाकर उनकी रचना हुयी है। वह सत्तावाला निषेक है, वह सत्तावाला निषेक एक-एक उदयरूप होगा। उनमें तो अनुभाग के कितने व्हेरिएशन्स होंगे? क्योंकि अलग-अलग समयों में बंधे हैं, उनमें अलग-अलग व्हेरिएशन्स हैं। उनमें हीनाधिकता भी होगी कि नहीं होगी? हां, ऐसी कितनी ही प्रकृतियां हैं जो जीव के परिणामों के अनुसार उनका परिवर्तन नहीं होगा और कितनी ही प्रकृतियां ऐसी होती है कि जीव के परिणामों के अनुसार उनमें अनुभाग में व्हेरिएशन्स हो जाते हैं। *श्रोता: तो आबाधाकाल हर समय अलग-अलग होगा एक-एक समयप्रबद्ध का?* बिलकुल जो जिस समयप्रबद्ध का जितना स्थितिबंध पड़ता है, उसके प्रपोर्शन में आबाधाकाल होगा। ७० कोड़ाकोड़ी सागर स्थितिबंध का वह सात हजार वर्ष आबाधाकाल होगा और अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का स्थितिबंध किया तो अंतर्मुहूर्तवाला आबाधाकाल होगा और वह भी उदीरणा के द्वारा, उस आबाधाकाल में बंध के बाद एक आवली में उसका उदय चालू भी हो सकता है; कुछ परमाणु उदय में आते रहते हैं। तो यह हमने जो निषेक रचना में जो कोई व्हेरिएशन्स हैं, अन्य-अन्य शरीरों के, उनकी यहां हमने बात की। अभी हम अपना वाक्य पढ़ेंगे वह पुद्गलपरावर्तनवाला।

श्रोता: इसको क्यों कार्माणशरीर बोला है, जब की वह ज्ञानावरण, दर्शनावरण है, वह शरीर नाम क्यों लिया है? देखो, इनका एक बंध हुआ न, स्कंध हुआ। कार्माणवर्गणा कर्मरूप परिणमित होती है। उसे हम आठ कर्मरूप परिणमित हुयी ऐसा कहेंगे। वह परिणमित हुयी तो क्या? ऐसे सब परमाणु बिखरे-बिखरे पड़े हैं क्या? वे तो कर्मरूप होकर ऐसा एक... *श्रोता: स्कंधरूप।* स्कंध हुआ न, एक-दूसरे से बंधे हुये हैं। नये कर्म पुराने कर्मों के साथ बंधे हुये हैं, केवल इतना ही नहीं, कार्माणशरीर औदारिकशरीर के साथ भी बंधा हुआ है किसी अपेक्षा, तेजसशरीर के साथ भी, सबका मिलकर एक स्कंध हुआ है। फिर भी तीन शरीर अलग-अलग हमको बताना है, इसलिये उसी स्कंध को हम कार्माणशरीर

कहेंगे। यह कार्माणशरीर है और वह कार्माणशरीर नामकर्म अलग है वह नामकर्म का भेद है; दोनों का डिफरन्स समझ में आया न? शब्द वही-वही होते हैं इसलिये कन्फ्यूजन हो रहा है, है न? *श्रोता: नामकर्म भी कार्माणशरीर का ही अंग है न?* हां। उसका ही एक अंग है क्योंकि नामकर्म जो है, वह कार्माणशरीर का ही अंग है और उस अंग के भी और अंग हैं। हम देखते हैं न, भेद उसके? ९३, याद है क्या? *श्रोता: नहीं, याद नहीं है।*

श्रोता: आठ कर्म के पिंड को ही कार्माणशरीर कहेंगे न? हां, आठ कर्म जो द्रव्यकर्म हैं। *श्रोता: शरीर नामकर्म ही कार्माणशरीर घटित ऐसा कुछ?* आठ कर्म में एक कर्म है नामकर्म। नामकर्म में तो नाइन्टी थ्री प्रकृतियां हैं। उनमें से एक प्रकृति है शरीर नामकर्म, कौनसी? औदारिकशरीर नामकर्म कहो, वैक्रियिकशरीर नामकर्म कहो। वह कार्माणशरीर नामकर्म भी उसका ही एक भेद है। वे तो सब सत्ता में हैं। उनके उदय में उस-उस जाति के परमाणुओं का ग्रहण होता है, यह ऑटोमॅटिक प्रक्रिया है न? कौनसे जाति के परमाणुओं का ग्रहण करेंगे? वह तो स्पर्श नामकर्म, रस नामकर्म, गंध नामकर्म, वर्ण नामकर्म ये सब उसके नामकर्म हैं; आपकी भाषा में 'जीन्स' हैं न? हम कहेंगे 'जीन्स' हैं। फादर-मदर से आये हैं हमें। तो यही तो कहते हैं प्रत्येक जीव अपना-अपना नामकर्म लेकर आया है। सायंटिस्ट कहते हैं कि हमने 'क्लोन' बनाया है। तो उन्होंने क्या जीव की रचना की, कि पुद्गल की रचना की? *श्रोता: पुद्गल को।* क्या पुद्गल को बनाया? *श्रोता: नहीं, नहीं।* कौनसे पुद्गल उस शरीररूप परिणमित होंगे? वे तो योग्य ही परिणमित होंगे। क्यों परिणमित होंगे? उसमें निमित्त कौन? वह सायंटिस्ट या उस जीव के नामकर्म? *श्रोता: जीव के नामकर्म!* हां, और हम तो अभिमान करते हैं कि हमने बनाया है। ख्याल में आती है बात? हमने तो 'टेस्टट्यूब-बेबी' भी बनायी, क्या-क्या नहीं बनाया? इतनी तरक्की की! जितनी तरक्की की उतनी हिंसा चल रही है। यह 'टेस्टट्यूब-बेबी' के लिये जो कुछ गर्भ होते हैं वे टेस्टट्यूब में बनाये जाते हैं; गर्भ होते हैं वे; वह मनुष्य जीवन चालू है, पर्याप्त मनुष्य जीवन। गर्भज होते हैं वे पर्याप्त मनुष्य जीव हैं और ऐसे टेस्ट के लिये सात, आठ, दस जो कुछ बनते हैं। ये एम्ब्रियो यानी गर्भ तैयार हुये, उसमें एकाध एम्ब्रियो वह तो यूज़ होता है, बाकी सब तो ऐसे ही वेस्ट-व्यर्थ-फजूल हो जाते हैं, एक मनुष्यभव चला जाता है और उस पर अभी रिसर्च चलते हैं कोई उसमें से दवाइयां बनती हैं, क्या-क्या चलता है? यह सब चल

रहा है। हमें मालूम नहीं है न? वहां क्या हो रहा है? *श्रोता: स्टेम-सेल।* 'स्टेम-सेल' वगैरह। सब चल रहा है, ऐसा ही है। *श्रोता: वहां हिंसा है?* वहां पर हिंसा है ही।

अब हम यहां नोकर्मद्रव्यपरावर्तन पेज ६३७, जीवकाण्ड भाग २, हमने एक वाक्य भी पूरा नहीं पढ़ा है। देखो, **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल।** ये छह पर्याप्ति क्या होती हैं यह हमने देखा है। परिणमने के योग्य पुद्गल यानी हमने देखे थे सादि भी होते हैं, अनादि भी होते हैं, योग्य भी होते हैं, अयोग्य भी होते हैं। कौन परिणमेंगे? जो योग्य हैं, वे परिणमेंगे। **किसी एक समय में ग्रहण किये।** कितने ग्रहण किये? तो एक समयप्रबद्ध प्रमाण ग्रहण किये। यहां तक ख्याल में आया? यही वाक्य, यहां तक हमने उसका अर्थ समझा है। अब वे कितने प्रमाण में ग्रहण करते हैं? तो अनंत; कितने अनंत हैं? तो अनंत तो वर्गणायें हैं और एक-एक वर्गणा में अनंत परमाणु हैं। हमें परमाणुओं की संख्या गिननी है यहां पर। वे यानी **वे** सब परमाणु स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण, गंधादि। पुद्गल परमाणु में गुण कितने होते हैं? *श्रोता: चार।* चार? बहुत अच्छा! 'आदि' लिखा है न यहां? जैसे जीव में अनंत गुण हैं, वैसे प्रत्येक में यानी छहों द्रव्यों में अनंत गुण हैं। यहां तो फॉर एक्झाम्पल बता दिया, वे अनंत गिनेंगे तो परावर्तन नहीं पूरा होगा अपना। तो कहते हैं स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण, गंधादि; स्निग्ध, रुक्ष में तो स्पर्श गुण की बात ली। परमाणु है न? परमाणु के स्पर्श गुण की पर्यायें कितनी होती हैं? *श्रोता: आठ।* बहुत अच्छा! न नियमसार पढ़ा हमने, न समयसार पढ़ा, न पंचास्तिकाय पढ़ा, हं? *श्रोता: वर्ण एक।* वर्ण की बात नहीं है, एक परमाणु में स्पर्श गुण की पर्यायें कितनी होती हैं? *श्रोता: दो।* दो। किसमें से? स्निग्ध या रुक्ष में से एक, शीत और उष्ण में से एक और स्कंध की पर्यायें कितनी होती हैं? चार; स्निग्ध या रुक्ष में से एक, शीत या उष्ण में से एक, कड़ा-नरम में से एक, हलका-भारी में से एक। परमाणु में तो दो स्पर्श की, एक वर्ण की, एक गंध की, एक रस की पर्यायें होंगी। फिर भी जो उसके अनंत गुण हैं, उनकी सबकी अपनी-अपनी यथायोग्य पर्याय होगी ।

यहां तो तीव्र, मंद, मध्यम इतना ही कह दिया। यानी वर्ण गुण हम देखते हैं, हमें लाल या पिंक कलर की कोई शेड पसंद है, तो उसमें कितनी व्हरायटी होगी? हं? हमारे लिये तो संख्यात तो होगी की नहीं होगी? वह चार्ट लाते हैं न घर को कलर करने के लिये,

आपको कौनसा कलर चाहिये ? यहवाला-यहवाला, नहीं हमको यहवाला चाहिये, है न ? तो यहां तो कहते हैं कि ये तो सर्वज्ञ ने जानी हुयी बातें हैं। परमाणुओं में अलग-अलग सभी प्रकार के वहां वर्ण होंगे। एक समयप्रबद्धप्रमाण जो परमाणु ग्रहण किये हैं, उन प्रत्येक परमाणु का अपना-अपना अलग-अलग वर्ण होगा, उसकी अपनी-अपनी स्पर्श की पर्याय अलग होगी, गंध की अलग होगी। सबका मिलकर एक जैसा नहीं होगा। उसमें कितने भेद होंगे अविभागप्रतिच्छेद की अपेक्षा, वह समझ लेना। जितने गुण हैं उनकी सबकी अपनी-अपनी पर्याय। तो जिसरूप में **वे स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण, गंधादि** 'आदि' में सब गुण जान लो; **से तीव्र, मंद, मध्यम भावयुक्त** 'मध्यम' के व्हेरिएशन्स बहुत होंगे, 'तीव्र' यानी एकदम जो उत्कृष्ट है इतना और 'मंद' में सबसे जघन्यवाला और बीचवाले सब मध्यम सब आ गये तो 'जिस भावयुक्त' यानी जिस पर्यायरूप से परिणमित हुये हैं, वैसे उस जीव ने **ग्रहण किये** हैं। इसका अर्थ ऐसा है कि किसी एक समय में, जीव ने औदारिकशरीर संबंधी परमाणुओं का ग्रहण किया; अनंत परमाणु ग्रहण किये; उन अनंत परमाणुओं की अपनी-अपनी कुछ न कुछ पर्यायें होंगी, यह नक्की है न ?

अब कहते हैं **पुनश्च वे द्वितीयादि समयों में निर्जरारूप किये।** 'वे' यानी सभी नहीं; पहले समय में जो औदारिकशरीर, अभी औदारिक की बात करेंगे। औदारिकशरीर का समयप्रबद्ध ग्रहण किया, उसकी निषेक रचना हुयी। सौ साल की आयु होगी तो उसके जितने समय हैं उतने निषेक बनेंगे और अगर हम बड़ी करोड़ पूर्व की आयु लेते हैं तो उसके जितने समय होंगे उतने निषेक बनेंगे। दूसरे समय में क्या सभी निर्जरारूप होंगे ? नहीं उसका एक निषेक निर्जरारूप हुआ, बाकी तो उसकी सत्ता में पड़े हैं। अब कहते हैं तो ये जो निर्जरारूप किये वे कहां चले जाते हैं ? वह भी एक जानने जैसी बात है। क्योंकि द्वितीय समय में और भी ग्रहण करेंगे और वहां पर भी वह अगृहीत वगैरह की बात की, तो वह तो हम जानेंगे। पर ये जो छोड़े हैं, वे छोड़े हुये परमाणु जाते कहां हैं ? उनकी भी बात हम ज़रा पढ़ लेते हैं, है न ? यह 'धवला' पुस्तक चौदहवीं में बताया है, पेज नंबर ४४०। ये जो पांचों शरीरों से मुक्त हुये परमाणुओं का क्या होता है ? कार्माणशरीर के भी निकल रहे हैं, तेजसशरीर के भी निकल रहे हैं, आहारकशरीर के भी निकलेंगे, वैक्रियिक और औदारिक के भी निकलते हैं। तो ये पांचों शरीरों से मुक्त हुये परमाणु जो शरीररूप से थे, प्रत्येक समय में एक-एक निषेक और वह एक-एक समयप्रबद्ध छूटा जा रहा है तो उसको कहेंगे

मुक्त हुये परमाणु। उसका क्या होता है? तो उन परमाणुओं को 'सव्वलोगगदा' कहा है। 'सव्वलोगगदा' का अर्थ होता है समस्त लोकाकाश व्याप्तकर रह जाते हैं।

हो सकता है वहीं पर पड़े रहें और हो सकता है वह परमाणु, कोई एक परमाणु, कोई द्व्यणुक का स्कंध, कोई ऐसे के ऐसे ही परमाणु के स्कंध जैसे हम कहें यहां खरोंच आ गयी; यहां से निकल गये परमाणु। नख निकाल दिये, उनके परमाणु; बाल उड़ गये, उनके परमाणु; कहां जा कर गिरेंगे? ये तो हमें दिखायी देते हैं इनकी बातें हैं। हर समय में जो अनंत परमाणु खिर रहे हैं, वे कहां चले जाते हैं? कितने वहीं पर पड़े रहेंगे और कितने तो पूरे लोक में कहीं पर भी जा सकते हैं क्योंकि पुद्गलपरावर्तन पूर्ण हुआ तब कहेंगे जब वह पूरा का पूरा लॉट उन्हीं पर्यायों के साथ हम ग्रहण करेंगे तब। क्योंकि एक-एक समय में बंधा हुआ पूरा लॉट है और वह जिस पर्यायरूप से लिया है, उसको याद में रखकर आगे की बात हमको पढ़नी है। तो ये जो मुक्त हुये परमाणु पूरे लोकाकाश को व्याप्त कर रहे हैं, तो उसके लिये, ये वही हमको ॲव्हेलेबल होंगे यह कोई गॅरंटी नहीं है। उनको कोई दूसरा जीव ग्रहण करेगा, वे अन्य किसी स्कंधरूप से परिणमित हो जायेंगे, ख्याल में आती है बात?

तो हम आगे देखते हैं क्या करेंगे उसको? तो **'द्वितीयादि'** द्वितीय यानी, दूसरे समय **में निर्जरा हुयी**, तीसरे समय में खिर गया, चौथे समय में खिर गया, इसतरह से वे निकलते चले गये। **अनंत बार अगृहीतों को ग्रहण करके छोड़े** अब यहां तीन शब्द आयेंगे 'अगृहीत', 'गृहीत' और 'मिश्र'। तो अगृहीत किसको कहना? गृहीत किसको कहना और मिश्र किसको कहना? अब जो परमाणु उस परावर्तन में हमने पहले लेकर छोड़े थे, उनको हम 'गृहीत' कहेंगे। जो उस पर्टिक्युलर पुद्गलपरावर्तन में नहीं लिये हैं, उनको हम 'अगृहीत' कहेंगे और कुछ गृहीतवाले और कुछ अगृहीतवाले उनको 'मिश्र' कहेंगे। नहीं समझे? जैसे हमारे निलेशभाई ने बँक में जाकर दस लाख रुपये जमा कर दिये। तो दूसरे ही दिन फिर उनको पैसों की जरूरत पड़ी। तो दस लाख रुपये निकालने के लिये गये। तो जो नोट उन्होंने बँक में जमा किये थे, वे के वे ही नोट उनको उसी नंबर के साथ, वापस मिलेंगे कि नहीं मिलेंगे? *श्रोता: नहीं मिलेंगे।* तीन पॉसिबिलिटीज़ हैं। *श्रोता: मिल सकते हैं।* पूरा लॉट मिल सकता है – हम कहेंगे गृहीत को उन्होंने फिर पाया, या

कुछ उस लॉट में से उस नंबर के नोट और कुछ दूसरे नोट मिलकर; हां भले ही उनको दस लाख की व्हॅल्यू मिल गयी, परंतु कुछ दूसरे नोट उसमें आ गये; तो उसे मिश्र कहेंगे और सब के सब दूसरे ही नंबरवाले जो उन्होंने दिये हुये नहीं सब के सब नये कुछ अलग ही नोट मिले, तो उसको क्या कहेंगे? *श्रोता: अगृहीत।* अगृहीत।

ऐसे ही जीव ने एक बार ग्रहण किये थे – उस विशिष्ट पुद्गलपरावर्तन में पहले ग्रहण किये हुये परमाणुओं की बात हम कर रहे हैं, वे पहले जो परमाणु लिये थे और जो छोड़े थे; फिर कुछ काल के बाद किसी एक समयप्रबद्ध में वह पूरा का पूरा लॉट ग्रहण करके छोड़े हुये में से उनको मिल गया, तो हम कहेंगे वह गृहीत का ग्रहण हुआ। सब के सब जहां नये होंगे, कुछ जो ग्रहण करके नहीं छोड़े हुये, उनको हम कहेंगे वे सारे अगृहीत हैं। वे भी छूटने पर वहीं तो पड़े रहते हैं विस्रसोपचय में। उसमें से बहुत बार ग्रहण होता है, इसलिये कितनी बार तो गृहीत का ही ग्रहण होगा परंतु उनकी पर्यायें वैसी नहीं रहेंगी। तो कितनी बार क्या होगा? मिश्र होगा, कुछ छोड़े हुये और कुछ नये। क्योंकि पहले समय में जो बंधा है, उसकी तो निषेक रचना हुयी है आयु के अंत तक। उस आयु में पूरा वह लॉट तो मिलनेवाला नहीं है, क्योंकि हर समय वह कुछ न कुछ छोड़ रहा है और हर समय नये भी बंध रहे हैं और एक तो मरण तक वह लॉट तो रहेगा ही वहां। दूसरे भव में चला जायेगा, तो दूसरे भव में चला जायेगा तो वह लॉट उसको ॲव्हेलेबल होना चाहिये न। भले उसने एक-एक समय करके पूरे भव तक छोड़े हैं और बाकी तो यहां जलकर राख हो गये हैं, है न? दूसरे भव में चला जायेगा तो वहां वह नये कोई और ग्रहण करेगा। कंडिशन क्या है? वह हम अब आगे देखेंगे। यानी, हर समय जो ग्रहण कर रहा है, कभी गृहीतों का ग्रहण करता है, कभी अगृहीतों का करता है और कभी मिश्र का करता है। अब आगे बढ़ेंगे।

श्रोता: आपने पहले बताया था कि विस्रसोपचय से ही परमाणु ग्रहण होते हैं? 'ही' नहीं लगाया मैंने। बहुतांशी होते हैं ऐसा कहेंगे हम, क्योंकि विस्रसोपचयरूप जो परमाणु वहां पड़े हैं... देखो क्या कहते हैं? *श्रोता: मतलब कि जब ज्यादा परमाणु, गृहीत परमाणु में उसको लेंगे कि अगृहीत को लेंगे?* गृहीत, पर सबके सब गृहीत होने चाहिये न! पूरा एक समयप्रबद्ध का लॉट गृहीत होना चाहिये। वह विस्रसोपचय में से ग्रहण करेंगे पर बाकी तो शरीररूप से बने पड़े हैं न वहां पर? नहीं समझे? पहले समय में जो ग्रहण किये हैं, मान

लेते हैं सौ साल की आयु है तो उसके सौ साल के जितने समय हैं उतनी निषेक रचना बनी। तो एक ही समयप्रबद्ध उसका छूटा या एक ही निषेक छूटा; दूसरा निषेक छूटा; इसतरह से कुछ छूटे हैं, सब तो नहीं छूटे हैं? तो बहुतांशी तो उसमें से छूटे हुये में से ही लेंगे; पूरे के पूरे नहीं, उसके साथ दूसरे भी लेने पड़ेंगे कि नहीं? पूरा समयप्रबद्ध जितना लॉट होना चाहिये। अकेले उतने परमाणुओं में से पूरा लॉट नहीं होगा। होगा भी, तो भी उसकी पर्याय बदली हुयी है। तो इसको हम थोड़ासा समझेंगे और पढ़ेंगे, फिर उसका बहुत विस्तार से वर्णन है – उसको तब पढ़ेंगे हम, चार्ट के द्वारा भी पढ़ेंगे। एक पॅरेग्राफ तो पढ़ लेते हैं पहले।

पहले तो हमने देखा कि एक समयप्रबद्ध प्रमाण ग्रहण किये, उसकी अपने-अपने गुणों की, अलग-अलग पर्यायें थी; यहां तक बात हमने सोच ली। बाद में वे एक-एक समय में खिरते गये। अब क्या कहते हैं? **अनंत बार** – अनंत बार की बात है – **अगृहीतों को ग्रहण करके छोड़े** बीच में तो कितने ये गृहीतवाले लिये थे, कितने मिश्रवाले लिये थे उनको कन्सिडर नहीं करना पर उनका समय कॅल्क्युलेट करना। नहीं समझे? अब यहां जो टेबल बताने जा रहे हैं तो पहले में पहले अनंत बार तो अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत जब-जब लिया था, तभी उनको सोच लो। जो पहले कभी नहीं लिये थे, उनका जब-जब ग्रहण होगा, तब उनको हम अगृहीत का ग्रहण कहेंगे। पहले ग्रहण करके छोड़े हुये में से कुछ लिये तो मिश्र कहलायेंगे। तो विस्रसोपचय में से ही बहुतांशी लिये जाते हैं क्योंकि उनमें, उसको कहते हैं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के संस्कार उस शरीररूप से वे रहते हैं तो मेजॉरिटी तो उनमें से ग्रहण होगा। सब का सब लॉट तो उसमें से नहीं आ सकता है तो उसमें मिश्र का भी होगा बहुत बार। परंतु वह मिश्र का बहुत बार ग्रहण हुआ भी, तो उनको यहां गिनना नहीं। किसको गिनना? जब-जब अगृहीत का ग्रहण होगा; तो एक बार अगृहीत का ग्रहण हुआ तो उसको गिनना, बीच में वह मिश्र का हुआ, कभी गृहीत का हुआ उनको नहीं गिनना। जब अगृहीत का हुआ दूसरी बार उसको गिनना, फिर अन्य-अन्य का होता रहा उनको नहीं गिनना। जब तीसरी बार जब अगृहीत का हुआ, उसको गिनना – ऐसे कितने बार अगृहीत को गिनना? तो अनंत बार। तो अनंत समय में कितने भव चले जायेंगे? तो अगृहीत का ग्रहण, अगृहीत का ग्रहण, अगृहीत का ग्रहण ऐसा जब अनंत बार हो जायेगा तो बीच में अन्य का ग्रहण किया था न? ग्रहण किया था और उसके लिये

जितना काल गया है, उस काल को गिनना, परंतु उस समयप्रबद्ध को नहीं गिनना। जब-जब अगृहीत का ग्रहण होगा तब उसको टिकमार्क करो-गिनो। बीच में वह विस्रसोपचय में से लिया, मिश्र को लिया? हां लिया। हो सकता है कि एक भव तक उसने वह मिश्रवाले ही लिये, अगृहीत मिला ही नहीं, तो कहते हैं वह काल तो गिनो उसका। जब कभी अगृहीत का ग्रहण होगा, पूरा लॉट, उसमें एक परमाणु भी छोड़ा हुआ मिला है, तो वह तो नहीं चलेगा।

तो अगृहीत का ग्रहण हुआ, अगृहीत का ग्रहण हुआ, अगृहीत का – लगातार जब अनंत बार हो जायेगा; अनंत बार का अर्थ होता है अनंत समय तो चले जायेंगे कि नहीं चले जायेंगे? और बीच में अन्यत्र मिश्रवाले लेंगे तो उनको तो कन्सिडर नहीं करना है। तो अनंतकाल तो इसीमें चला जायेगा, अनंत समय यानी अनंतकाल। उसके बाद क्या करना? देखो। अगृहीतों को... **अनंत बार अगृहीतों को ग्रहण करके छोड़े, अनंत बार मिश्रों को ग्रहण करके छोड़े**... अब यहां तो सामान्य कथन है, फिर उसका रेग्युलर सीक्वेन्स बाद में बतायेंगे। *श्रोता: यहां पर परमाणुओं में उनकी पर्याय को काउंट करेंगे?* अगृहीत ही है तो उसकी पर्याय काउंट करना ही नहीं। क्योंकि हमें वे ही परमाणु, उसी स्पर्श, रस, गंधरूप से वगैरह-वगैरह परिणमित हुये, जब दुबारा जीव ग्रहण करेगा तो उसके बीच में कितना काल जाता है? उसकी यहां चर्चा चल रही है। परमाणु वे ग्रहण किये हैं फिर भी उनकी पर्यायें कुछ अलग होगी। वैसे ही बिलकुल उस स्पर्श, रस, गंध, वर्ण में थोड़ा भी अविभागप्रतिच्छेदों का डिफरन्स नहीं चाहिये; वैसे का वैसे चाहिये पूरा लॉट। वैसे परमाणु भी नहीं; वे के वे परमाणु और वैसी की वैसी पर्याय के साथ। परमाणु भी एक कम-ज्यादा वह भी नहीं चलेगा। तो हम कहेंगे ऐसा होगा ही नहीं – हां, होगा ही नहीं फिर भी ऐसा जब होगा – तो कितना काल जायेगा? उसका यहां माप है हमारे पास। *श्रोता: बीच में कोइन्सिडन्स से हो सकता है?* कोइन्सिडन्स से नहीं हो सकता है। तो कहते हैं कोइन्सिडन्स से इतना छोटे ही काल में पुद्गलपरावर्तन हो गया ऐसा कभी नहीं होगा। पुद्गलपरावर्तन का जो जघन्यकाल और उत्कृष्टकाल है उसमें थोड़ा व्हेरिएशन है; तो उतना ही फर्क हो सकता है, ज्यादा नहीं हो सकता।

श्रोता: यह सीक्वेन्स दिखाने का परपज़ क्या है? सीक्वेन्स इसलिये कि कितना काल चला जायेगा? *श्रोता: उसको एक्स्प्लेन करने के लिये।* उसीको एक्स्प्लेन करने के लिये;

इसी सीक्वेन्स से जब-जब होगा तब उसको हम कन्सिडर करेंगे, टिकमार्क करेंगे। जब इस सीक्वेन्स से, अलग पद्धति से ग्रहण तो होगा, उसको कन्सिडर नहीं करना है – *श्रोता: मगर उसका काल गिनना है।* उसका काल गिनना है। *श्रोता: खाली अगृहीत का लेना है?* अब शुरुआत में अगृहीत का लेना, वह सीक्वेन्स बतायेंगे अभी; वह सीक्वेन्स का टेबल हम देखने जा रहे हैं, अभी तो दूसरे क्लास में हम देखेंगे उसको। हं, बीच में थोड़ी सांस लेंगे न!

तो इसको जरा पढ़ लेते हैं, हं? **अनंत बार अगृहीतों को ग्रहण करके छोड़े, अनंत बार मिश्रों को ग्रहण करके छोड़े, बीच में गृहीतों को अनंत बार ग्रहण करके छोड़े।** गृहीतों को भी नहीं ग्रहण किया ऐसी बात नहीं थी, उसको भी ग्रहण करके छोड़े; **ऐसे होनेपर पश्चात्** ये बहुत शॉर्ट में लिखा है, **जो पहले समय पुद्गल ग्रहण किये,** देखो **वे ही पुद्गल** पुद्गल वे ही चाहिये **वैसे ही स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण, गंधादि से** आदि में सब गुणों की पर्यायें ले लेना **उसी जीव के नोकर्मभाव को प्राप्त होते हैं।** ये तो इसको कहेंगे, बहुत शॉर्ट में बता दिया। वह अगृहीतों को कैसे लिया? गृहीतों को कैसे लिया? वह कितनी बार लिया? किस सीक्वेन्स से लिया? वे सीक्वेन्स भी बदलते चले, चार अलग-अलग सीक्वेन्स बतायेंगे और उसको टेबल भी बनाया है और शॉर्ट में उसको समझाया है, उसकी संदृष्टि बनाकर उसको समझाया है। तो वह टेबल कैसे पढ़ना, उसका अर्थ क्या है? उसको भी हम देखेंगे।

तो यहां कहते हैं कि **जीव द्वारा पहले ग्रहण किये हुये ऐसे परमाणु जिन समयप्रबद्धरूप स्कंधों में होते हैं, उन्हें गृहीत कहते हैं।** क्या कहा? जिसे पहले समय में जो हमने कन्सिडर किया था, किसी एक समय में बंधे हुये उन्हें शुद्ध गृहीत कहेंगे। परंतु अगृहीत को लेकर छोड़ता है वे भी सारे गृहीत ही कहलायेंगे। **जीव द्वारा पहले ग्रहण नहीं किये हुये परमाणु जिनमें होते हैं, उन्हें अगृहीत** कहेंगे। पूरा का पूरा समयप्रबद्ध तब अगृहीतवाला होना चाहिये। **गृहीत और अगृहीत दोनों जाति के परमाणु जिनमें हो, उन्हें मिश्र कहते हैं।** तो यह अगृहीत किसको कहना? क्या है? उसकी चर्चा हम थोड़ी देर के बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१२. द्रव्यपरावर्तन का यंत्र

षट्खण्डागम के आधार से हम काल अनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं और यह काल को गिनने के जो अलग-अलग यूनिट्स हैं, जो प्रकार हैं, उनकी यहां अपनी चर्चा चल रही है। तो यह जीव अनादि से इस संसार में भटक रहा है, जन्म-मरण करते आया है, तो अनादि से आज तक उसने कितना काल बिताया है, उसकी यहां जो हम थोड़ी गिनती कर रहे हैं। तो यह गिनती के लिये एक छोटासा माप हमने लिया है जो अनंतकाल का है उसका नाम है पुद्गलपरावर्तन, उसीका दूसरा नाम है द्रव्यपरावर्तन। तो यह द्रव्यपरावर्तन को कैसे गिनना? यह बात चल रही है। तो जिस समय से हम यह द्रव्यपरावर्तन गिनना शुरू करेंगे, तब ऐसा मान लेंगे कि सभी परमाणु जो उस समय ग्रहण करेंगे, वे अगृहीत हैं। उस पर्टिक्युलर, उस विवक्षित पुद्गलपरावर्तन के लिये उनको अगृहीत कहेंगे; वैसे पहले बहुत बार लेकर छोड़े होंगे उनकी यहां गिनती नहीं करनी, क्योंकि हम यहां बात कर रहे हैं, उस विशिष्ट पुद्गलपरावर्तन की – द्रव्यपरावर्तन की।

उस द्रव्यपरावर्तन की जिस समय हम शुरुआत करेंगे यानी हम वहां से कन्सिडर करेंगे कि यहां से हम काल गिनेंगे। उस समय हम ऐसा समझेंगे कि सभी उसके लिये अगृहीत हैं; फिर जिस समय हम काउंट करना, गिनना शुरू करेंगे, हमने वहां अपना मीटर ऑन कर दिया; तो वहां पहले समय में जो ग्रहण किये हैं, वे ग्रहण करके जब छोड़ेगा उन छोड़े हुये परमाणुओं को हम गृहीत कहेंगे। अभी तक जो नहीं ग्रहण किये हैं उनको अगृहीत कहेंगे। छोड़े हुये में से कुछ और अगृहीत में से कुछ मिलकर जो समयप्रबद्ध होगा उसको हम मिश्र कहेंगे। इन तीन के बारे में कोई प्रश्न है तो पूछना। तीन प्रकार से यहां कथन होगा, एक अगृहीत यानी उस विशिष्ट पुद्गलपरावर्तन में जो ग्रहण करके नहीं छोड़े हैं; उनको क्या कहेंगे? अगृहीत और जो ग्रहण करके छोड़े हैं – पहले जो अगृहीत थे उनको भी ग्रहण करके छोड़ने के बाद वे गृहीत कहलायेंगे और छोड़े हुये में से ही पूरा समयप्रबद्ध ग्रहण किया तो हम उसको गृहीत कहेंगे और ऐसा समयप्रबद्ध जिसमें कुछ गृहीत हैं, कुछ अगृहीत हैं उसको मिश्र कहेंगे। यहां तक ख्याल में आयी बात कि यह गृहीत, अगृहीत क्या होता है? अब हम आगे देखेंगे कि इसका विशिष्ट क्रम से ही ग्रहण होगा तब उसको गिनना है, अक्रम से ग्रहण तो जरूर होगा; क्रम या अक्रम से तो होता रहेगा परंतु उनके बताये हुये

क्रम से जब-जब ग्रहण होगा तब उसको हम टिक करेंगे, उसको काउंट करेंगे; उस क्रम को हम ख्याल में लेंगे, लक्ष्य में लेंगे; अक्रम से होनेवाले को वहां लक्ष्य में नहीं लेंगे, कन्सिडर नहीं करेंगे, छोड़ देंगे; परंतु उसके लिये जितना काल बिताया है उस काल को गिनेंगे। *श्रोता: समय को गिनेंगे?* समय को बिलकुल गिनेंगे।

देखो, यही बात यहां लिखी है अक्रम और क्रम की ६४१ पेज है, **विशेषार्थ** लिखा है न? वहां पर, चार-पांच लाइन का, चार लाइन का। मिला? देखो क्या लिखते हैं, **विवक्षित परावर्तन में** यानी जो हम कहेंगे कि पहला यहां शुरू हुआ है, तो **विवक्षित परावर्तन में जिस क्रम की बात हो** – अब यह क्रम बतायेंगे किस क्रम से होगा, **उसी क्रम से जब प्रवर्तन हो** – उसी क्रम से जब यहां परमाणुओं का ग्रहण हो, **तभी उसे गिनना, बीच में अक्रमरूप से प्रवर्तन होता है परंतु उसे क्रम में नहीं गिनना परंतु क्रमरूप या अक्रमरूप प्रवर्तन में जो काल व्यतीत हो जाय उस संपूर्ण काल को परावर्तन के काल में गिनना।** उनके कहे हुये क्रम से ही यह जब प्रवर्तन होगा, तब उसको गिनना। वे कहेंगे अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार होना चाहिये और बीच में गृहीत हो जाये, बीच में मिश्र हो जाये – होना ही है, होगा ही, परंतु उसको क्रम में नहीं गिनेंगे। परंतु उसमें जितना काल व्यतीत हो जायेगा, हां, उस काल को गिनना, परंतु उनको क्रम में नहीं गिनना। तो यह कौनसा क्रम है? उसके लिये अभी हम निकालते हैं पृष्ठ संख्या ६३८, यहां लिखते हैं पहली लाइन से, ६३८, जीवकाण्ड की पुस्तक दूसरी; पहली पुस्तक में यह पेज नंबर नहीं मिलेगा। दोनों पुस्तकों के पेज नंबर एक के बाद एक हैं।

पुद्गलपरावर्तन का काल तीन प्रकार का है। वहां अगृहीत के ग्रहण का काल, वह अगृहीतग्रहण काल है जब-जब अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत ग्रहण करेंगे तब उसको जो काल इकट्ठा करके समझेंगे तो उसको कहेंगे – अगृहीतग्रहण काल। **गृहीत के ग्रहण का काल, वह गृहीतग्रहण काल है,** और **मिश्र के ग्रहण का काल, वह मिश्रग्रहण काल है। सो इनका परावर्तन अर्थात् पलटना कैसे होता है? वह अनुक्रम यंत्र द्वारा दिखाते हैं।** यंत्र यानी टेबल। *श्रोता: टेबल?* हां, हमारी भाषा में टेबल यानी यह जो चार्ट है। **यंत्र में** यानी यह जो अभी यहां टेबल हम देखने जा रहे हैं उसमें **अगृहीत की सहनानी**

सहनानी यानी उसका चिन्ह, उसका सिम्बॉल, क्या लिखा है? देखो, बोर्ड पर देखो अब। यह द्रव्यपरावर्तन का यंत्र बताया है, जो पृष्ठ संख्या ६३८ पर आपकी पुस्तकों में है, वही यहां पर बड़ा करके बताया है क्योंकि हम बोलेंगे और आपको पुस्तक में कहां देखना है वह ख्याल में नहीं आयेगा, इसीलिये उसको ऐसा बड़ा करके यहां लगाया है।

द्रव्यपरावर्तन का यंत्र

एक समय में ग्रहण किये हुये परमाणु

अगृहीत (०) गृहीत (१) मिश्र (+)

	1	2	3	4	5	6
A	० ० +	० ० +	० ० १	० ० +	० ० +	० ० १
B	+ + ०	+ + ०	+ + १	+ + ०	+ + ०	+ + १
C	+ + १	+ + १	+ + ०	+ + १	+ + १	+ + ०
D	१ १ +	१ १ +	१ १ ०	१ १ +	१ १ +	१ १ ०

तो जहां (०) लिखेंगे, तो उसका अर्थ क्या है? – अगृहीत यानी अगृहीत के लिये यह बिंदी यानी (०) की साइन बनायी है। जहां-जहां (०) लिखा उसका अर्थ क्या है? यह अगृहीत का ग्रहण है। गृहीत के लिये वहां (१), इसको कहेंगे संदृष्टि, यानी उसका चिन्ह क्या है? (१)। जहां (१) लिखा है उसका अर्थ क्या है? यह गृहीत का ग्रहण है और मिश्र के लिये यहा (+) की साइन इसको हंसपद कहते हैं। पुस्तक में क्या लिखा है? देखो – **अगृहीत की सहनानी (०) शून्य जानना और मिश्र की सहनानी हंसपद** यानी **अधिक का चिन्ह (+) जानना और गृहीत की सहनानी एक का अंक (१) जानना।**

लेक्चर में तो यंत्र के कोठे और पंक्तियां बोर्ड पर लकड़ी से – डंडे से छूकर बताये थे। वाचकों को समझने में आसान हो इसलिये यहां आड़ी पंक्तियों को A, B, C, D और व्हर्टिकल कॉलम के लिये 1, 2, ... 6 नंबर लिखकर यहां बताया जा रहा है। दूसरी बात क्या है? जहां-जहां कंटिन्युअस दो बार लिखा हुआ है उसका अर्थ है अनंत बार। देखो पूरा यंत्र तो बाद में समझेंगे, यहां अभी मेरे हाथ का डंडा वहां A1 तक पहुंच नहीं रहा, इसलिये मैं यहां उसीके समान A4 बताऊंगी, यहां (० ० +) लिखा है। (०) एक बार लिखा है और

फिर (०) दूसरी बार लिखा है, उसका अर्थ क्या होता है? दो बार का अर्थ क्या है? अनंत बार। (०) यानी अगृहीत, जब-जब अगृहीत का ग्रहण करेंगे, तब उसको कन्सिडर करो। एक बार हुआ, दो बार हुआ, तीन बार हुआ, चार बार हुआ, कितनी बार लेना है? अनंत बार, अनंत। कोई भी भव भले वह नरक का ३३ सागर का भी क्यों न हो, उसमें तो असंख्यात ही समय होते हैं। तो अनंत बार अगृहीत के लिये कितना काल चला जायेगा? अनंत समय यानी अनंतकाल चला जायेगा। ख्याल में आती है बात? तो जब-जब अगृहीत का ग्रहण होगा तब-तब तो उसको काउंट करना। इसमें कितनी ही बार बीच में, क्योंकि छोड़े हुये सभी गृहीत हो जाते हैं, वे तो वहीं विस्रसोपचयरूप से पड़े रहते हैं, तो मेजॉरिटी तो उसीमें से लिया जायेगा। परंतु उसको कन्सिडर ही नहीं करना है तब। जब अनंत बार अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत का ग्रहण हो जाय, तब उसके पश्चात् एक ही बार मिश्र को लिया है, उसको काउंट करना है, एक ही बार। फिर दुबारा मिश्र होगा तो उसको उस समय क्रम में नहीं लेना। फिर अनंत बार अगृहीत को काउंट करना।

अभी उस कोने से –A1 से शुरू करते हैं। वहां लिखा है (० ० +) उसका अर्थ क्या है? अनंत बार अगृहीत। अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार हो जाय, तब एक ही बार जब मिश्र का लिया है तो हम उसको टिकमार्क करेंगे यानी गिनेंगे। एक बार मिश्र के बाद फिर क्या करना? फिर अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत ग्रहण होने चाहिये। हां, बीच में तो कितनी बार वहीं पर पड़े हुये विस्रसोपचय में से लेंगे न, जो ग्रहण करके छोड़े हैं, उनको कन्सिडर नहीं करेंगे। उनको जब हम गृहीतों का नंबर आयेगा, तब कन्सिडर करेंगे। यानी पहले अनंत बार अगृहीत को लेकर छोड़े; एक बार मिश्र को लेकर छोड़ा; उसको हमने उस समयप्रबद्ध में ग्रहण किया – छोड़ने की बात नहीं है; फिर अनंत बार अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत को लिया, फिर एक बार मिश्र को लिया।

अब उस कोने से देखना, यह प्लस (+) साइन कितनी बार आ गयी? वह पहले कॉलम A1 में एक बार और यहां A2 में दूसरी बार। दो बार का अर्थ क्या है? अनंत बार। यानी जो अगृहीत-अगृहीत अनंत बार, फिर एक बार मिश्र; फिर अगृहीत अनंत बार, फिर एक बार मिश्र; फिर अगृहीत अनंत बार, फिर एक बार मिश्र; फिर अगृहीत अनंत बार, फिर एक बार मिश्र; ऐसे जब मिश्र के भी अनंत बार हो जायेंगे तब; दो बार मिश्र हैं न यहां पर? यहां तो मिश्र के चिन्ह दो ही बार दिख रहे हैं, उसका अर्थ क्या है? –

अनंत बार; तब जाकर फिर सीक्वेन्स में क्या लेना? फिर, अनंत बार अगृहीत और फिर एक बार गृहीत को लेना A3 में (००१); यह पूरा सीक्वेन्स है।

अभी जो पहले A1, A2, A3 तीन कॉलम हैं वैसे ही यहां पर A4, A5, A6 हैं। A4 में (०० +) अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार फिर एक बार मिश्र; A5 में (०० +) अगृहीत-अगृहीत अनंत बार, दूसरी बार मिश्र; यह दूसरी बार मिश्र का अर्थ होता है – यही सीक्वेन्स अनंत बार होगा; यानी अनंत बार इसी पद्धति से जब मिश्र लेंगे, तब जाकर A6 में (००१) फिर अनंत बार अगृहीत का लेकर एक बार गृहीत का होगा। यहां A1, A2, A3 में (१) एक बार आया और यहां A4, A5, A6 में यह पूरा सीक्वेन्स दूसरी बार आया, यानी (१) दो बार आया न? उसका अर्थ (१) जो चिन्ह है यानी गृहीत है वह अनंत बार होना चाहिये; दो का अर्थ है अनंत बार। देखो, आचार्यों ने तो शॉर्ट में लिखा है पर उस एक टेबल में इतना अर्थ होता है।

श्रोता: यह सीक्वेन्स हमारी रिक्वायरमेंट है कि ऐसा होगा? जब ऐसा होगा तभी कन्सिडर करना। *श्रोता: तभी कन्सिडर करना?* हां, बीच में... *श्रोता: बीच में मान लो वे ही परमाणु जैसे के तैसे हमारे पास फिर से आ गये तो?* वैसे आयेंगे ही नहीं, आयेंगे तो वे बता देते कि परावर्तन पूरा हुआ। इतने काल के बाद ही आयेंगे। हां, क्योंकि प्रथम समय में ग्रहण किये थे वे ही और बिलकुल वैसे ही स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि के साथ वे होंगे कि नहीं? वे ही परमाणु और उसी पद्धति से जब ग्रहण होंगे तब उसको हम कहेंगे परावर्तन पूरा हुआ। तो वे होंगे ही नहीं इनके बीच में। गृहीत का भले ग्रहण होगा, परंतु उनकी पर्याय वैसी नहीं होगी; उनमें एक भी परमाणु की अलग पर्याय नहीं चाहिये; उसका जैसा वर्ण है, जैसे स्पर्श है, वैसे सब-सब वैसा ही वैसा चाहिये।

तो देखो यह सीक्वेन्स कैसा है? (०० +) का अर्थ क्या होता है? अनंत बार अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत, बीच में जो अलग से, अक्रम से आयेंगे तो? आयेंगे ही, आते ही हैं, उनको गिनना नहीं। *श्रोता: टाइम गिनना।* टाइम उसका गिनना है, उसमें जितना समय व्यतीत होगा, उस टाइम को तो गिनना ही है। यह तो जब-जब अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार हो जाये तो एक बार मिश्र; फिर अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार फिर दूसरी बार मिश्र; फिर अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार, फिर तीसरी बार मिश्र; ऐसे

मिश्र भी जब अनंत बार हो जायेंगे, फिर अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार लेकर, फिर एक बार गृहीत।

तो इन A1, A2, A3 तीन कॉलम में जितना हमने वह पूरा सीक्वेन्स बताया है, वैसे ही तीन कॉलम यहां A4, A5, A6 बताये हैं; यानी यह A1, A2, A3 एक बार हुआ, ऐसे ही पूरा झमेला – पूरी वह ट्रेन लाना उसकी; फिर यह दूसरी बार हुआ, फिर तीसरी बार हुआ, फिर चौथी बार हुआ; ऐसे यह गृहीत, जो (१) आंकड़ा है वह भी जब अनंत बार होगा तो हम यहां A6 तक आ गये हैं। यानी यह पहला जो सीक्वेन्स है वह पूरा होगा। वहां ऐसे चार अलग-अलग सीक्वेन्स हैं (A1, A2, A3-A4, A5, A6; B1, B2, B3-B4, B5, B6; C1, C2, C3-C4, C5, C6 और D1, D2, D3-D4, D5, D6)। अब यह सीक्वेन्स दूसरी पंक्ति में पलट जायेगा। जरा पढ़ लेते हैं, फिर आगे इसका अर्थ देखेंगे।

श्रोता: इसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण वे नहीं लेना, खाली गृहीत, अगृहीत, मिश्र वह ही लेना? हां, उसमें तो वे स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आनेवाले ही नहीं हैं, वह पूरा यह सीक्वेन्स के बाद यानी यहां की चार पंक्तियों के बाद यहां जो ग्रहण होगा तब वे आयेंगे। तब वह उसका द्रव्यपरावर्तन पूरा होगा। *श्रोता: खाली इसमें गृहीत, अगृहीत इतना ही लेना?* हां, बस इसमें गृहीत, अगृहीत इतना ही लेना। उसकी वह पर्याय ऐसे होने ही वाली नहीं है बीच में। *श्रोता: अनंत – यह कौनसावाला अनंत?* सक्षयवाला ही होगा। *अन्य श्रोता: सक्षयवाला होता है।* सक्षयवाला ही होता है। अनंत बार मिनिमम अनंत भी ले लो तो भी उसको अनंत तो होना ही है न!

हां, देखो हम इसको पुस्तक में से पढ़ेंगे थोड़ा, यह ६३८ पेज है। फिर वह सहनानी देखते हैं: अगृहीत के लिये (०) है, मिश्र के लिये वह (+) वाली साइन है, और गृहीत के लिये (१) लिखा है और जब दो-बार लिखेंगे तो उसका अर्थ है अनंत बार। देखो यहां A3 में (००१) एक बार आया, यहां A6 में (००१) एक बार आया, तो दो बार हुआ; उसका अर्थ क्या लेना? वह जब अनंत बार होगा तब उसका यह एक नंबर का सीक्वेन्स A1 से A6 तक का पूरा हो जायेगा; खाली दो बार आने से नहीं पूरा होगा। अनंत बार जब गृहीत होगा तब यह सीक्वेन्स – पहलेवाला सीक्वेन्स A1,A2,A3-A4,A5,A6 कम्प्लीट हो जायेगा। फिर दूसरे सीक्वेन्स B1,B2,B3-B4,B5,B6 पर हम चले जायेंगे। तो यहां

हम पहला सीक्वेन्स पहले देख लेते हैं। वह द्रव्यपरावर्तन का जो यंत्र लिखा है उसीको, हम यहां देख रहे है, उसीका वर्णन उसके नीचे लिखा है।

वहां विवक्षित – विवक्षित यानी पर्टिक्युलर जिस परावर्तन की बात कर रहे हैं, **नोकर्मपुद्गलपरावर्तन के पहले समय से लेकर, प्रथम बार समयप्रबद्ध में अगृहीत का ग्रहण करे, दूसरी बार अगृहीत ही का ग्रहण करे, तीसरी बार अगृहीत ही का ग्रहण करे ऐसे निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण होकर रहे, तब एक बार मिश्र का ग्रहण करे।** यह इतना लिखा, इतना लिखने के बदले शॉर्ट में लिख दिया (० ० +) उसमें से इतना अर्थ गर्भित हो जाता है। **इसलिये यंत्र में पहले कोठे में दो बार बिंदी, एक बार हंसपद लिखा है।** अब दूसरा कोठा, दूसरा कोठा यानी यह व्हर्टिकल दूसरा कॉलम, ऊपर की लाइन (A2) (० ० +)।

उसीप्रकार, **उसके पश्चात् उसीप्रकार निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करके एक बार मिश्र का ग्रहण करे,** वहां पर भी (० ० +) लिखा है, दूसरे कॉलम A2 में भी। **ऐसे अनुक्रम से अनंत अनंत बार अगृहीत का ग्रहण कर कर के एक-एक बार मिश्र का ग्रहण करे, इसप्रकार मिश्र का भी ग्रहण अनंत बार होता है।** देखो, (० ० +) (० ० +); यहां (+) चिन्ह जो दो बार बताया है – तो हर बार बीचमें अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करके एक बार मिश्र; अनंत बार अगृहीत का फिर एक बार मिश्र; फिर अनंत बार अगृहीत का फिर एक बार मिश्र; ऐसा जब मिश्र का भी ग्रहण, इसी परिपाटी से अनंत बार होगा, तब हमने (० ० +) और (० ० +) यहां तक हमने जाना। **इसलिये अनंत बार की सहनानी के लिये यंत्र में जैसा पहला कोठा A1 था वैसा ही दूसरा कोठा A2 लिखा है।**

उसके पश्चात् उसीप्रकार निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करके एक बार गृहीत का ग्रहण करता है, यानी फिर कहां तक आ गये? A3 (० ० १) यहां तक। **इसलिये तीसरे कोठे में** A3 (० ० १) यहां पर तीसरे कोठे में, दो कोठे हो गये A1, A2, अब इस तीसरे में आ गये। **उसीप्रकार निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करके एक बार गृहीत का ग्रहण करता है, इसीलिये तीसरे कोठे में दो शून्य और एक का अंक लिखा है।** यानी यह पूरा A1 से A3 तक आकर एक बार गृहीत का ग्रहण

हुआ, वैसे ही पूरी वही की वही परिपाटी करके यानी A4 से A6 तक करके यह दूसरी बार गृहीत का ग्रहण हुआ। तीसरी बार गृहीत का ग्रहण हुआ, चौथी बार हुआ, तो यहां दो बार लिखा उसका अर्थ क्या है? अनंत बार हुआ। तो **उसी अनुक्रम से एक-एक बार गृहीत ग्रहण करके अनंत बार गृहीत ग्रहण होता है। इसीलिये जैसे तीन कोठे पहले लिखे थे वैसे ही अनंत की सहनानी** सहनानी यानी चिन्ह, **उसके लिये दूसरे तीन कोठे लिखे हैं।** यानी ये जो तीनों कोठे A1,A2,A3 एक बार हुये, वैसे ही ये दूसरी बार हुये A4,A5,A6 यानी ये पूरी परिपाटी दूसरी बार यानी, तीसरी बार, चौथी बार, कितनी बार हो गये? अनंत बार। समझ में आता है? यह ज्ञानमार्गणा में भी ऐसा एक यंत्र था वहां पर्यायसमास ज्ञान में वृद्धि के यंत्र में (उ उ ४) (उ उ ४) वगैरह लिखा है (जीवकाण्ड पहली पुस्तक, पृष्ठ संख्या ४४२)। वहां तो दो बार का अर्थ था असंख्यात बार, यहां तो अनंत बार लिया है।

अब दूसरी पंक्ति का अर्थ दिखाते हैं – यह दूसरी पंक्ति है, यह हॉरिझॉन्टल दूसरी पंक्ति B, उसमें भी ऐसे ही कोठे होंगे; अब उसका सीक्वेन्स कुछ चेंज हुआ है। **पूर्वोक्त अनुक्रम होने के पश्चात्** इतना अनुक्रम से होने के पश्चात् अब दूसरा सीक्वेन्स है, **निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करे, तब एक बार अगृहीत का ग्रहण करता है।** अब ये सीक्वेन्स पलट गया; जब-जब मिश्र का ग्रहण होगा तब उसको कन्सिडर करना और अनंत बार होने के बाद एक बार अगृहीत को लेना है; जब लेगा तब उसको कन्सिडर करना है। **इसलिये प्रथम कोठे B1 में दो हंसपद और एक शून्य (++ ०) लिखा है। पुनश्च निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करके एक बार अगृहीत ग्रहण करे, सो उसी क्रम से अनंत बार अगृहीत ग्रहण करे, इसलिये पहले कोठे जैसा दूसरा कोठा लिखा है।** इसमें B1 में (++ ०), B2 में (++ ०) उसका अर्थ क्या है? (+) का अर्थ क्या होता है? मिश्र। मिश्र का ग्रहण, मिश्र का ग्रहण, मिश्र का ग्रहण अनंत बार होगा; तब एक बार (०) यानी अगृहीत का ग्रहण होगा; फिर अनंत बार मिश्र-मिश्र-मिश्र-मिश्र-मिश्र ग्रहण होगा तो दूसरी बार (०) यानी अगृहीत का ग्रहण होगा; वैसे ही तीसरी बार, चौथी बार, कितनी बार करना है? अनंत बार। यानी अनंत बार यही सीक्वेन्स यहां पर होगा B1, B2 तब फिर B3 में (+ + १) यानी मिश्र-मिश्र अनंत बार होकर, एक बार गृहीत का ग्रहण होगा। समझ में आती है बात?

B1 (+ + ०), B2 (+ + ०) यानी (०) दो बार हुआ यानी अनंत बार हुआ। फिर B3 (+ + १), तो यहां (१) एक बार आया। जैसे ये तीन कोठे B1, B2, B3 हैं, फिर दोबारा ऐसे ही ये तीन कोठे B4, B5, B6 उसी ऑर्डर से हैं; यानी यह (+ + ०), (+ + ०), (+ + १) यहां B1, B2, B3 में एक बार आया और यहां B4, B5, B6 में दूसरी बार आया; तो उसका अर्थ होता है अनंत बार आया। तब जाकर दूसरा सीक्वेन्स, दूसरी रो, दूसरी पंक्ति समाप्त होगी। इसी ऑर्डर से, इसी क्रम से जब-जब ग्रहण होगा तब हम उसको टिकमार्क करेंगे; बिना क्रम के होगा ही बीच में; पर बिना क्रम का हो उसका काल गिनना, उसको क्रम में नहीं गिनना; यही क्रम होगा तब-तब गिनना और एक-एक विशिष्ट ग्रहण तो अनंत बार होगा यानी अनंतकाल तो उसीमें चला जायेगा। कोई भी चीज़ दो बार आती है यानी अनंत बार आनी चाहिये, तो कितनी बार अनंत हो रहे हैं वह बीच-बीच में!

पुनश्च उसके पश्चात्, यह लगता है न? नेव्हर एण्डिंग स्टोरी! बचपन में हम मराठी में खतम नहीं होनेवाली कथा – 'कधीही न संपणारी गोष्ट' बताते थे। क्यों गाडेकरजी, आपने बतायी कि नहीं बच्चों को? एक कोठार भरा हुआ था अनाज का-धान का, कोठार-कोठार; तो एक चिड़िया आयी दाना चुगकर भुर्र करके उड़ गयी – उडून गेली। फिर दूसरी चिड़िया आयी, उसने चोंच में दाना लिया और वह भी भुर्र करके उड़ गयी। ऐसी बातें चलती रही-चलती रही तो आगे क्या हुआ? फिर वह तीसरी चिड़िया आयी क्योंकि किसी राजा ने ऐलान किया था कि जो न संपणारी, यानी नेव्हर एण्डिंग कोई स्टोरी बतायेगा तो उसको प्राइज मिलेगा। तो फिर बेचारा थक गया स्टोरी सुन-सुन कर; वैसे ही यहां अनंत बार-अनंत बार-अनंत बार की बात चल रही है। *श्रोता: फिर राजा ने थककर सम्यग्दर्शन कर लिया।* यह द्रव्यपरावर्तन तो हम करते आ रहे हैं अनादि से तो कुछ नहीं लगा, उसको पढ़ते हैं तो इतनी तकलीफ हो रही है।

उसके पश्चात् देखो दूसरा पॅरेग्राफ पढ़ रहे हैं **निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करके एक बार गृहीत ग्रहण करे, इसलिये तीसरे कोठे में दो हंसपद और एक बार एक का अंक लिखा है।** यानी B3 में (+ + १), **सो मिश्र ग्रहण आदि पूर्वोक्त सर्व अनुक्रम सहित** जब वह (१) लिखा है तो उसके पहले का पूरा अनुक्रम फिर दोबारा

शुरुआत से सब कुछ ले लेना। यानी यहां एक बार लिख दिया है (१); B3 में (+ + १), तो यह (१) आने के लिये ये पूरा ही सीक्वेन्स होगा (+ + ०) (+ + ०) फिर (+) (+) यानी अनंत बार होकर, एक बार यहां (१) आ गया B3 में (+ + १); (१) यानी गृहीत। फिर यह B4, B5, B6 पूरा सीक्वेन्स होकर दूसरी बार गृहीत B6 में (+ + १); केवल दूसरी बार नहीं, ऐसा जब पूरे सीक्वेन्स सहित अनंत बार होगा तब यह हमारी दूसरी पंक्ति, दूसरा आड़ा कॉलम B पूरा होगा; ऐसे चार हैं सीक्वेन्स अलग-अलग। पहला सीक्वेन्स देखा हमने, तो कितनी बार बीच-बीच में अनंत-अनंत-अनंत बार हमने देखा है। जब हम कहते हैं कि उसके एक पुद्गलपरावर्तन के क्या, आधा पुद्गलपरावर्तन के भी अनंतवें भाग में अनंत उत्सर्पिणियां, अवसर्पिणियां चली जाती हैं यानी यह कितना बड़ा अनंतकाल है फिर भी सभी परिवर्तनों में यह छोटा है! तो एक बार, **एक-एक बार गृहीत ग्रहण होता है, सो ऐसे गृहीत ग्रहण भी अनंत बार होता है।** यानी जो (१) और (१) दो बार लिखा उसका अर्थ हुआ अनंत बार। **इसलिये जैसे पहले तीन कोठे लिखे थे वैसे ही दूसरे तीन कोठे लिखे। ऐसा होनेपर दूसरा परावर्तन हुआ।** यानी यह दूसरा सीक्वेन्स पूरा हुआ। पहला कैसा था? (A1 :००+, A2 :००+, A3 :००१); फिर (A4 :००+, A5 :००+, A6 :००१) यह पहला सीक्वेन्स हुआ। दूसरा क्या था? (B1 : + + ०, B2 : + + ०, B3 : + + १), यानी (१) एक बार हुआ। फिर (B4 : + + ०, B5 : + + ०, B6 : + + १), यहां (१) दो बार हुआ का अर्थ होता है अनंत बार हुआ। यह तो दूसरी पंक्ति हमारी यानी दूसरा सीक्वेन्स B समाप्त हुआ।

श्रोता: दूसरी पंक्ति कम्प्लीट होने के लिये, दुबारा फिर पहली पंक्ति से चलना पड़ेगा? नहीं-नहीं-नहीं-नहीं, यह पूरा सीक्वेन्स ही अलगसा है। *श्रोता: यानी पहली पंक्ति हो गयी तो उसका मतलब?* उसका कुछ नहीं, वह सीक्वेन्स पूरा हुआ यहां (A6) पर; यह जब अनंत बार हो चुका, तब जाकर अभी इसका (रो B का) क्रम बदल जायेगा। जो अनुक्रम लेना है – जिसको अनंत बार कन्सिडर करना है वह क्रम पलट जाता है। यह पूरा सीक्वेन्स यहां B6 तक ही है। अब यह तीसरा सीक्वेन्स वहां से शुरू हो जायेगा C1 वाला (+ + १) ।

अब तीसरी पंक्ति का अर्थ दिखाते हैं – यह केवल इतना ही शॉर्ट टेबल बना

कर छोड़ दिया है, उसमें तो कितना अर्थ गर्भित है, कितना अनंतकाल उसमें बताया है जो उन्होंने एक छोटी संदृष्टि बनाकर लिख दी है। तो देखिये तीसरी पंक्ति का अर्थ देखते हैं। यह हम पढ़ते हैं तो भी कंटाला आता है, है न? यह क्या चल रहा है! **पूर्वोक्त क्रम होने के पश्चात्** अब कौनसा क्रम लेना है? **निरंतर अनंत बार मिश्र का ग्रहण करके एक बार गृहीत का ग्रहण करे,** यानी उसको (+ + १) कहेंगे; **इसलिये प्रथम कोठे में C1 में दो हंसपद और एक बार एक का अंक लिखा है। सो अनंत-अनंत बार मिश्र ग्रहण कर करके एक-एक बार गृहीत ग्रहण करके अनंत बार गृहीत ग्रहण होता है।** अनंत बार गृहीत ग्रहण कैसे हुआ? (C1 : + + १) फिर (C2 : + + १), तो (१) दो बार हुआ, दो बार का अर्थ क्या है? अनंत बार। तब जाकर (C3 : + + ०) होगा; यानी अनंत बार मिश्र का ग्रहण करके एक बार अगृहीत का ग्रहण करेंगे। **इसलिये पहले कोठे के समान दूसरा कोठा लिखा। पुनश्च अनंत बार मिश्र का ग्रहण करके एक बार अगृहीत का ग्रहण करता है। इसलिये तीसरे कोठे में दो हंसपद और एक शून्य लिखा है।** यानी (C3 : + + ०) यह समझ में आ रहा है कहां तक आये हम? – तीसरे कोठे में आये, तीसरी पंक्ति के तीसरे कोठे में। **सो जैसे मिश्र ग्रहण आदि अनुक्रम से एक बार अगृहीत का ग्रहण हुआ वैसे ही एक-एक बार करके अनंत बार अगृहीत का ग्रहण होता है। इसलिये पहले तीन कोठे थे C1, C2, C3 वैसे ही दूसरे तीन कोठे लिखे हैं, C4, C5, C6 ऐसा होनेपर तीसरा परावर्तन हुआ।**

देखो क्या हुआ तीसरे परावर्तन यानी यहां तीसरी पंक्ति में? (C1 : + + १); (+) का अर्थ होता है मिश्र। मिश्र-मिश्र-मिश्र-मिश्र अनंत बार होगा तब जाकर एक बार गृहीत का ग्रहण किया; फिर मिश्र-मिश्र-मिश्र दूसरी बार गृहीत, फिर तीसरी बार, चौथी बार जब ऐसे अनंत बार गृहीत भी हो जावे, तब फिर मिश्र-मिश्र-मिश्र अनंत बार करके एक बार अगृहीत को लिया (C3)। ये तीन (C1, C2, C3) जो कॉलम हैं उसीको यहां (C4, C5, C6 में) रिपीट कर दिया है। यहां (C3 : + + ०) एक बार (०) आया उसी क्रम से और उसी पूरे अनुक्रम से यहां (C6 : + + ०) दूसरी बार आया; यानी दूसरी बार अगृहीत आया, यह केवल दूसरी बार नहीं समझना, इसी क्रम से जब अनंत बार हो जाये तब अभी हम चौथे सीक्वेन्स तक पहुंचेंगे। अब चौथे सीक्वेन्स में कैसे करना है? देखो – **आगे चौथी पंक्ति का अर्थ दिखाते हैं –** यह परावर्तन आज ही पूरा करना है न। तो **पूर्वोक्त**

क्रम होने के पश्चात् अभी सीक्वेन्स पलट गया; **अनंत बार गृहीत का ग्रहण करके** यह अनंत बार गृहीत का ग्रहण करेंगे तो लगातार तो नहीं कर सकते, क्योंकि जो ग्रहण किया हुआ है, वे तो इसको ॲव्हेलेबल होना चाहिये न? समझ में आता है? वे जो छोड़े हुये परमाणु, इसके लिये थोड़े ही वहां इंतजार में बैठे हैं कि वह कब हमको ग्रहण करता है। किसी दूसरे जीव ने ग्रहण किये, उसके समयप्रबद्ध में चले गये, उसके औदारिक शरीररूप से परिणमित हुये; उसका अन्य कुछ हो गया; वे परमाणुरूप से या जिस वर्गणारूप से थे, वे अन्य-अन्य वर्गणारूप हो गये। कुछ भी हुआ उनका, तो उसी जीव के लिये वे वहां हाजिर होने चाहिये; उसके एक क्षेत्र में होंगे तब उनका ग्रहण होगा, वे कहीं दूर चले गये तो उनका ग्रहण नहीं होगा; तो बहुत सारी बातें हैं वहां पर।

तो पूर्वोक्त क्रम होने के पश्चात् निरंतर अनंत बार गृहीत का ग्रहण करके एक बार मिश्र का ग्रहण करे, इसलिये प्रथम कोठे में दो बार एक अंक और एक हंसपद लिखा है। सो अनंत अनंत बार गृहीत का ग्रहण कर करके देखो, गृहीत नहीं लिये थे वह बात नहीं थी, अनंत बार गृहीत को लिया है, तो बीच में मिश्र कितनी बार लिया होगा? पण उसको कन्सिडर नहीं करना है। अनंत बार लगातार गृहीत-गृहीत-गृहीत ही होने के लिये बीच में कितना काल चला जायेगा? चौथे सीक्वेन्स के लिये बीच में कितना काल चला जायेगा? देखो। जब अनंत बार हो जायेगा तब एक बार उसको वह मिश्रवाला हम सोचेंगे। ऐसे ही **एक-एक बार मिश्र का ग्रहण करके अनंत बार मिश्र का ग्रहण होता है।** यानी (D1 : ११+) और (D2 : ११+) ऐसे हैं न? तब जाकर (D3 : ११०) हो जायेगा, (०) का अर्थ होता है अगृहीत।

श्रोता: यह चौथी पंक्ति के लिये ऊपर की पंक्तिवाले गृहीत में आयेंगे कि अगृहीत में? वे जो पहले समय से अभी तक जो ग्रहण करके छोड़े हैं वे सब गृहीत होंगे। *श्रोता: सिर्फ वे ही गृहीत होंगे?* हां, वह बीच में जो ग्रहण करके, बीच में जो अगृहीत थे न, वहां वे अगृहीत थे, अब वह ग्रहण करके छोड़ दिये, वे गृहीत हो जायेंगे। परंतु वह पूरा लॉट अगृहीत, पूरा लॉट जो नया ग्रहण करेगा, जो उस द्रव्यपरावर्तन में पहले कभी नहीं ग्रहण किया तभी उसको अगृहीत कहेंगे।

इसलिये प्रथम कोठे के समान दूसरा कोठा लिखा है। पहले कोठे के समान

दूसरे कोठे का अर्थ क्या है? (D1 : ११+) (D2 : ११+) (१) का अर्थ क्या है? गृहीत-गृहीत-गृहीत-गृहीत अनंत बार हो जायेगा, तब एक बार मिश्र को लेगा। गृहीत-गृहीत-गृहीत-गृहीत अनंत बार हो जायेगा तब दूसरी बार मिश्र होगा। दूसरी बार का अर्थ क्या है? ऐसा, यही क्रम अनंत बार हो जायेगा तब फिर गृहीत-गृहीत अनंत बार करके एक बार अगृहीत को लेना (D3 : ११०)। यहां तक हम आ गये, हम पृष्ठ ६४० पर पढ़ रहे हैं। **पुनश्च उसके पश्चात् अनंत बार गृहीत का ग्रहण करके एक बार अगृहीत का ग्रहण करे,** यानी (११०) **इसलिये तीसरे कोठे में दो बार एक का अंक और शून्य लिखा है।** यहां तक बात ख्याल में आ रही है कि नहीं? यह संदृष्टि कैसी बनायी है उसको कैसे पढ़ना? यह यहां नीचे पूरा खोलकर बताया है। किसने? पं. टोडरमलजी साहब ने।

श्रोता: यह जो हमने पहली बार में जो लिया न (०० +) तो उसमें जो पहला + लिया है अनंत बार के बाद एक बार पहला ही लेना न उसको? उसको अनंत बार में लेना या दोबारा जो (+) आयेगा तब उसको अनंत बार में लेना? दोबारा लेगा तब नहीं, अनंत बार। दोबारा लेगा, तीसरी बार लेगा, चौथी बार लेगा, पांचवी बार लेगा ऐसे अनंत बार करना। *श्रोता: हमारा यह कहना है कि जो पहली बार (+) लिखा है वह पहली बार ही समझना न? कि अनंत बार का समझना?* ना-ना, पहली बार का है न! हां। एक बार जब (+) लिखे तो पहली बार का, ऐसे दूसरी बार, तीसरी बार – वह अनंत लिख नहीं सकते तो उन्होंने दूसरी बार लिखा यानी हमें समझना चाहिये कि अनंत बार हुआ; दूसरी बार यानी अनंत बार। यानी बीचवाले सारे अनंत भेद वहां उसी क्रम से होंगे। समझ में आया न? हर बार जैसे (००१) कहा तो (०) (०) कितनी बार होने चाहिये? अनंत बार तब जाकर एक बार (१) कन्सिडर करना। *श्रोता: यह चारों परावर्तन पूरे होने के बाद अर्धपुद्गलपरावर्तन पूर्ण होगा?* अर्ध नहीं, पूरा पुद्गलपरावर्तन। अभी हम पढ़ेंगे न, अभी थोड़ा ही बाकी है। हां-हां फिर पढ़ेंगे न – देखो।

चौथी लाइन में यहां D3 तक आ गये हैं, चौथी लाइन आधी हो गयी है। **पुनश्च चतुर्थ परावर्तन के आदि से –** चतुर्थ परावर्तन, यह चतुर्थ-चौथा सीक्वेन्स, उसके स्टार्टिंग से D1 यहां D3 तक हम आ गये हैं यानी तीन कोठे हमने लिये हैं। **जिस अनुक्रम से यह**

एक बार अगृहीत का ग्रहण हुआ यानी पूरा अनुक्रम पार करके एक बार यानी D3 में वह (०) आया। वैसे पूरा अनुक्रम करके दूसरी बार D6 में (०) आ जायेगा। फिर ऐसे ही अनुक्रम से दूसरी बार, तीसरी बार, चौथी बार, पांचवीं बार – यहां दो बार लिखा है – उसका अर्थ क्या है? अनंत बार। तो **उसी अनुक्रम से अनंत बार अगृहीत ग्रहण होता है, इसलिये पहले तीन कोठे किये थे, वैसे ही आगे अनंत बार की सहनानी** यानी चिन्ह **के लिये दूसरे तीन कोठे किये हैं। ऐसा होने पर चतुर्थ परावर्तन हुआ। पुनश्च उस चतुर्थ परावर्तन के अनंतर समय में** – समय बता दिया एक्झॅक्ट – **विवक्षित नोकर्मद्रव्यपरावर्तन के पहले समय में जो पुद्गल जिस स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण, गंधादि भावों सहित ग्रहण किये थे,** उनकी जो कोई पर्यायें थी वे ही पुद्गल, वैसे ही पुद्गल नहीं, उस पर्यायवाले अन्य पुद्गल नहीं चलेंगे, वे ही परमाणु चाहिये, **वे ही पुद्गल उसी स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण, गंधादि भावों सहित शुद्ध गृहीतरूप ग्रहण करता है।** शुद्ध गृहीत यानी? पहले समय का पूरा समयप्रबद्ध उन्हीं और उतने ही परमाणुओं का और उसी स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि की जो कुछ विशेषतायें थी, उतनी ही संख्या में, वे ही पुद्गल परमाणु ग्रहण करेंगे। **सो यह सब मिला हुआ संपूर्ण नोकर्मद्रव्यपरावर्तन जानना।**

श्रोता: यानी अविभागप्रतिच्छेद अंश पूरे एक्झॅक्टली वैसे ही होने चाहिये? वैसे ही होने चाहिये और परमाणु भी तो वे ही होने चाहिये। *श्रोता: वह कभी होगा यह पूरा सीक्वेन्स?* पूरे चार सीक्वेन्स होने के बाद अनंतर समय में वह पहलावाला समयप्रबद्ध लेगा। परंतु वह बीच में कितनी बार अनंत-अनंत-अनंत जो देखेंगे हम, एक-एक कांडक अनंतों का है, वह कितनी बार हो जायेगा? *श्रोता: वह एक बार होगा न?* ऐसे यह पूरा झमेला पूरा हो जायेगा। *श्रोता: अनंतर समय में?* अनंतर समय में वह जो पहले समय में, नोकर्मपुद्गलपरावर्तन के पहले समय में जो पुद्गल परमाणु जिस स्पर्श, रस, गंध आदि भावों सहित ग्रहण किये थे, वे ही परमाणु उसी भाव सहित ग्रहण होंगे। उसको एक पुद्गलपरावर्तन कहेंगे या द्रव्यपरावर्तन कहेंगे यानी इसको नोकर्मद्रव्यपरावर्तन कहते हैं। *श्रोता: अगर वे नहीं मिले तो?* वे मिलेंगे ही, इतना अनंतकाल के बाद वह नक्की है कि वे मिलेंगे। यह लौटकर उस पोझिशन पर आयेगा ही। क्या प्रश्न है आपका? *श्रोता: उस पोझिशन में आने के लिये ईक्वल टाइम जायेगा या अलग-अलग?* चार जो सीक्वेन्स हैं न? अनंतकाल है बस इतना ही लेना है क्योंकि गृहीत-गृहीत कहो या अगृहीत कहो, वह

अनंत बार लेना है तो उसमें अनंत समय ऐसे भी तो चले जाने हैं। *श्रोता: बीच में अन्य-अन्य भी होंगे?* अन्य भी होते हैं न। तो अलग से उसका, उसको ऐसा लिखते हैं तो इसमें देखो सबसे ज्यादा कौनसे हैं? (०) ज्यादा बार आये हैं कि (+) ज्यादा बार आयें हैं कि (१) ज्यादा बार आ गये हैं? *श्रोता: (१) ज्यादा बार आया है।* काउंट करो, काउंट करो। आपका प्रश्न सुनायी नहीं दे रहा, आप लोग आपस में बहुत बातें कर रहे हो।

श्रोता: नित्यनिगोद से निकला जीव मनुष्य होकर मोक्ष चला जाये तो उसको फिर परावर्तन कैसे काउंट करेंगे? हां-हां, आपका बहुत अच्छा प्रश्न है, देखिये आपने क्या पूछा है? आप सुनना चाहते हो, जरा हमको सुनो, बाद में आप फिर सुनाओ। *अन्य श्रोता: उनका क्या प्रश्न है?* आपका प्रश्न ऐसा है, कोई अनादि से निगोद पर्याय में पड़ा है और वहीं पर जन्म-मरण करता आया है और एक बार मनुष्य होगा और उसी भव में मोक्ष चला जायेगा, हं? तो उसका यह परावर्तन कैसे काउंट करेंगे? तो ६५० पृष्ठ निकालना, अंत से दूसरी लाइन – इनके प्रश्न का उत्तर पं. टोडरमलजी साहब ने पहले ही दिया है। उनको पता था यह प्रश्न पूछा जानेवाला है, तो उसकी बात यहां हम करेंगे।

देखो, नीचे से दूसरी लाइन – **जिसप्रकार स्वर्गादि में दिन-रात्रि का अभाव है, वहां मनुष्य क्षेत्र की अपेक्षा से वर्ष आदि का प्रमाण करते हैं** – हम यह जो दिन और रात और फिर इतने ३६५ दिनों का एक साल वगैरह गिनते हैं, स्वर्गों में तो ऐसी बात है नहीं, क्योंकि सूर्य का ऊगना और अस्त होना यह तो मनुष्यक्षेत्र में चल रहा है। मनुष्यक्षेत्र के बाहर असंख्यात द्वीपसमुद्र हैं न? वहां पर भी जो सूर्य जहां पर हैं वहीं पर स्थित हैं – वे घूमते नहीं हैं। ये घूमनेवाले चांद और सितारे वे अपने मनुष्यक्षेत्र में, ढाई द्वीप में ही हैं, वे बाहर नहीं होते। वे जहां के तहां स्थित होते हैं, जहां सूर्य है वहां सतत दिन ही है, दिन-रात का भेद ही नहीं है और जहां अंधेरा है वहां तो पूरे समय में अंधेरा है। कहां? ढाई द्वीप के बाहर असंख्यात द्वीप-समुद्रों में। स्वर्गों में तो वहां कोई सूर्य आदि नहीं हैं, सूर्य-चांद तो स्वर्गों के नीचे हैं, वे स्वर्ग तो ऊपर हैं इसलिये कहते हैं हम जो स्वर्गों में इतने दिन या इतने सालों की बात करते हैं तो हमारी अपेक्षा से हमने उसका कथन किया। यह तो दृष्टांत दिया, तो कहते हैं **वैसे जहां निगोदादि जीवों में** आदि का अर्थ है अन्य भी पर्यायों में – **परावर्तन का अनुक्रम नहीं पाया जाता, वहां अन्य जीवों की अपेक्षा से परावर्तन का**

काल ग्रहण करते हैं। *श्रोता: मतलब?* मतलब नित्यनिगोद जीवों ने अनादि से अब तक कितने परावर्तन किये? पांचों परावर्तन? तो हम कहेंगे अनंत किये हैं। वे तो अन्य-अन्य पर्यायों में गये ही नहीं। तो हम-आपने, अन्य जीवों ने इन परावर्तनों में जितना काल बिताया उतना काल उन्होंने उसी पर्याय में बिताया है। *श्रोता: एक ही पर्याय में?* एक ही यानी वैसी ही पर्याय में बिताया। समझ में आयी न बात?

तो जितना काल, जैसे हम, हम कहां-कहां घूमकर आये? तो हम धर्मचक्र यात्रा करके पूरे हिंदुस्तान में घूमकर आये। हम गये थे इ.स. १९७५ में, आप थे न साथ में? रजनीभाई भी थे। १९७५ में गये थे, कितने दिन तक घूमे? तो १०० दिन घूमे। तो हमने १०० दिन में पूरी यात्रा की, पूरे हिंदुस्तान की। सारे पंडित हमारे साथ थे – पं. बाबूभाईजी मेहता, पं.हुकमचंदजी भारिल्ल, पं. ज्ञानचंदजी थे और पं. नेमिचंदजी पाटनी थे, पं. नेमिचंद रखियालवाले पता है न? ऐसे बहुत सारे विद्वान थे। रोज उनके प्रवचन होते थे, डेली हां? पं. हेमचंदजी भी थे साथ में। तो पूरी यात्रा भी और प्रवचन भी, तो कितने दिन बिताये हमने? १०० दिन बिताये। तो १०० दिन में हमने यात्रा की, उन १०० दिनों में जो घर में रहे उन्होंने उतना ही काल कहां बिताया? *श्रोता: घर में।* घर में बिताया। ऐसा ही, हमने यह जो एक पुद्गलपरावर्तन पूरा किया, उस काल में वह निगोद कहां था? वह निगोद में ही पड़ा था, उसने वहीं जन्म-मरण किया। काल तो उसने भी उतना ही बिताया है, जितना काल अनादि से हमने बिताया अन्य-अन्य पर्यायों में घूमते हुये उतना ही काल उसने निगोद पर्याय में ही बिताया है; उसीमें, उसी पर्याय में जन्म-मरण किया। काल नहीं बिताया यह बात कहां आयी? काल तो उतना ही बिताया उसने। यह आपके प्रश्न का उत्तर पं. टोडरमलजी साहब ने दिया यहां पर।

श्रोता: यह गणित लागू पड़ेगा कि नहीं निगोदवाले जीवों को? निगोद में ऐसा एक्झॅक्ट कथन लागू नहीं होगा क्योंकि वहां छह पर्याप्तियों की बात की है। निगोद में छह पर्याप्ति नहीं होती हैं, चार ही पर्याप्ति होती हैं। उसके योग्य जो कोई परमाणु वहां ग्रहण होंगे। *श्रोता: यहां पहली लीटी (पंक्ति) में आपने जो अगृहीत परमाणुओं से हमने शुरुआत की, पहली पंक्ति में अगृहीत से शुरुआत की।* अगृहीत से शुरुआत की, हां, शुरुआत में। *श्रोता: तो उसके बाद वह गृहीत हो गये, बराबर न?* हां, जो ग्रहण करके छोड़े हैं उनको गृहीत कहेंगे। *श्रोता: तो लास्ट लीटी तक वह गृहीत अगर ग्रहण करेंगे, अगर वे परमाणु ग्रहण करते हैं तो*

वे गृहीत की गिनती में ही आयेंगे न? हां, गृहीत की गिनती में आयेंगे – हां, परंतु वे पहले समयवाले शुद्ध गृहीत नहीं कहलायेंगे। पहले समय में जो लॉट लिया था – वह जिस स्पर्श, रस, गंध, रूप से लिया था वह तो नहीं रहा। वह लॉट तो चारों सीक्वेन्स के अनंतर समय में मिल जायेगा, हं। यहां बताया न अगृहीत कैसे?

यह हमने आपको पूछा था कि यह (+) साइन ज्यादा है कि (०) साइन ज्यादा है कि (१) ज्यादा है? *श्रोता: मिश्र ज्यादा है। अन्य श्रोता: (+) बत्तीस बार है...* अच्छा, (+) कितनी बार है? बत्तीस और (०)? *श्रोता: बीस बार।* बीस बार... *श्रोता: (१) भी बीस बार।* (१) भी बीस बार है, अच्छा! अब यह संदृष्टि, यहां क्या लिखते हैं? देखते हैं जरा देखो-देखो। यहां ६४२ पृष्ठ निकालना – उसके पहले ६४१ को भी देख लेते हैं, ६४१ निकालना, हं। – **यहां द्रव्यपरावर्तन में काल का प्रमाण कहते हैं।** नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ, उस श्लोक के ऊपर, हां – **वहां अगृहीत ग्रहण का काल अनंत है;** अगृहीत के लिये क्या लिखा है हमने? *श्रोता: (०)।* (०), **तथापि यह सबसे अल्प है। क्योंकि जिन पुद्गलों में से द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावों के संस्कार नष्ट हुये हैं वे पुद्गल बहुत बार ग्रहण में नहीं आते।** अगृहीत यानी पहले ग्रहण करके छोड़े हुये नहीं हैं। *श्रोता: संस्कार।* संस्कार यानी वे आहारवर्गणारूप से बने रहेंगे। तो अगृहीत परमाणु बहुत कम बार ग्रहण होते हैं। क्योंकि जिन पुद्गलों में से – वह तो हो गया। विवक्षित पुद्गल परावर्तन के **इसीलिये विवक्षित पुद्गलपरावर्तन के मध्य गृहीत पुद्गलों का ही बहुत बार ग्रहण होता है।** क्या कहा? जो एक बार ग्रहण करके छोड़े हैं उन्हींका ग्रहण बहुत बार होगा क्योंकि उनमें उस शरीररूप होने के जो संस्कार हैं; उनमें जो कोई द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावरूप जो कोई परिणमन है वह उनमें ज्यादा दिन तक, ज्यादा मेजॉरिटी में रहते हैं। यहां उसके लिये एक श्लोक भी लिखा है –

सुहुमट्ठिदिसंजुत्तं आसण्णं कम्मणिज्जरामुक्कं।
पाएम एदि गहणं दव्वमणिद्दिट्ठसंठाणं।।

जो पुद्गल कर्मरूप परिणत थे, ऑलरेडि जो कर्मरूप हुये थे; यहां कर्मरूप कहने से नोकर्मरूप भी समझना **और जिनकी स्थिति थोड़ी थी और निर्जरा होनेपर कर्म अवस्था से रहित हुये हैं और जीव के प्रदेशों से एकक्षेत्रावगाहीपनेरूप से रहते हैं;**

यानी वहीं पर रहते हैं, छोड़कर बाहर नहीं गये हैं; **और संस्थान-आकार जिनका कहा न जाय और विवक्षित पुद्गलपरावर्तन के पहले समय में जिस स्वरूप से ग्रहण में आये थे उससे रहित हो –** उनकी वे ही पर्याय नहीं हैं, वे भले गृहीत हैं, छोड़े हुये हैं, परंतु वे पहले समय में जिसरूप से ग्रहण किये थे वैसे नहीं, उससे रहित हैं – **ऐसे पुद्गल जीव द्वारा अधिकांशपने से** यानी **बहुलता से समयप्रबद्धों में ग्रहण किये जाते हैं।** यानी वह गृहीत का ही ग्रहण बहुत बार होता है, अगृहीत का कम बार होता है फिर भी उसको अनंत बार लेना है – यह कहना चाहते हैं; यानी अक्रम से आनेवाले बहुत बार होंगे परंतु उसको क्रम में नहीं गिनना है। उन्होंने बताया हुआ क्रम जब-जब होगा तब उसको हम लेंगे। काल का मीटर तो चालू है।

जैसे हमने टॅक्सी हायर की और जा रहे हैं, मीटर ऑन कर दिया, फिर घर में कुछ भूल गये, टिकट घर में भूल गये हैं, हं? तो फिर एक राउंड मारकर फिर आ गये और टॅक्सीवाले को रुकाया; हम टिकट लेकर आते हैं; फिर टिकट लेकर आये, फिर और आगे आ गये तो और कुछ याद आया तो फिर वहां कुछ उतरकर उस दुकान से लिया; सिग्नल पर रुक गये तो वहां फिर रुके तो यह क्या? मीटर कैसा है? चालू है। ऐसे ही उन्होंने जब-जब जो क्रम बताया है उसी क्रम से जब वहां प्रवर्तन होगा या परिणमन होगा तब-तब उसको कन्सिडर करना, बिना क्रम के होगा वह मीटर अपना चालू है; काल तो गिनेंगे उसका, उसको क्रम में नहीं गिनेंगे। वह अक्रम से तो बहुत बार होगा, अक्रम से होने में तो अनंतकाल उसीमें चला जायेगा। तो अनंतकाल तो उसीमें – अक्रम से होने में चला जायेगा और फिर क्रम से होने के लिये भी हमको अनंत-अनंत बार लेना है। क्रम और अक्रम से जो कोई वहां हुआ है उस सबको गिनकर जो काल बिताया है उस पूरे काल को गिनना है; इतना काल जब पूरा हो जायेगा जो इतना अनंतकाल, तब जाकर हम एक पुद्गलपरावर्तन कहेंगे।

श्रोता: यह निगोद का जो द्रव्यपरावर्तन है, जो जीव को बाहर का संयोग रहता है उसको नोकर्म कहते हैं? नहीं-नहीं, यहां नोकर्मशरीर की बात है। नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में नोकर्मशरीर यानी औदारिक, वैक्रियिक की मुख्यता से बात कर रहे हैं, क्योंकि आहारकशरीरवालों का तो अर्धपुद्गलपरावर्तन में ही मोक्ष होना है, उससे तो ज्यादा नहीं होगा उनका संसार में भटकना और उसमें तो वे रेअर्ली वे ही परमाणु लेंगे। तो बाहर के

संयोगों को भी नोकर्म कहते हैं। नोकर्म जो शब्द है वह अलग-अलग अर्थों में अलग-अलग जगह आता है। जैसे जिसमें हमारी मेरेपने की ममत्वबुद्धि होती है उस सबको भी नोकर्म कह देते हैं, है न? या ज्ञानावरणादि कर्मों के जो बाह्य निमित्त होते हैं; जैसे ज्ञानावरणकर्म का क्षयोपशम कम हुआ; ज्ञान की हीनता होने का समय आया और उसके लिये बाह्य निमित्त क्या बना? तो ऑपरेशन करने गये, ॲनेस्थेशिया दिया और हम बेहोश हो गये; ऑपरेशन हुआ पता नहीं चला। यह ज्ञान की हीनता हुयी न? क्यों हुयी? तो हम कहेंगे वह इंजेक्शन दिया, ॲनेस्थेशिया दिया इसलिये – वे तो बाह्य निमित्त हैं; कर्मों का निमित्त यानी नियमरूप निमित्त क्या है? तो ज्ञानावरण कर्मों का क्षयोपशम। उस जीव का ज्ञान हीन हुआ यानी आवरण ज्यादा हो गया। तो यह कर्मों के बाहर के एजंट है मेरी भाषा में – कर्मों के उदय में कोई अन्य बाहरी चीज निमित्त होती है; हमें वह चीज करती हुयी भासित होती है; हमें लगता है उसके कारण हुआ, परंतु वह तो कर्म की जो अवस्था है उसका वह बाहर का निमित्त है। उसको भी कर्मों का नोकर्म कहते हैं, हर एक कर्म के नोकर्म होते हैं। सातावेदनीय से डायरेक्ट आपको सुख नहीं मिल रहा है, किसी वस्तु का लक्ष्य करके हम उसमें सुखबुद्धि करते हैं तो वह सातावेदनीय का नोकर्म कहलायेगा। हं, यह नोकर्म शब्द अनेक अर्थों में आता है, ज्यां ज्यां जे जे योग्य छे, *श्रोता: तहां समझवुं तेह।* तहां समझवुं तेह।

तो इसमें कौनसा काल, कितना अनंतगुणा है? देखो, यह बात ६४२ पृष्ठ पर चल रही थी। **पुनश्च अगृहीत के ग्रहण के काल से मिश्र ग्रहण का काल अनंतगुणा है। पुनश्च उस मिश्र ग्रहण के काल से गृहीत ग्रहण का जघन्य काल** – अभी उसमें भी जघन्य-उत्कृष्ट काल होगा वह **अनंतगुणा है। उससे संपूर्ण पुद्गलपरावर्तन का जघन्य काल कुछ अधिक है।** अभी यह पढ़ने से तो कुछ ख्याल में नहीं आया। देखो, मैं अपनी भाषा में समझाती हूं आपको। यह जो गृहीत ग्रहण जब-जब होगा न, क्रम से या अक्रम से जब-जब गृहीत का ग्रहण होगा वह सब मिलकर हम काउंट करेंगे; जब-जब गृहीत का ग्रहण होगा, उन-उन समयों को काउंट करेंगे हम; तब पूरा मिलकर उसको कहेंगे गृहीत ग्रहण काल; जब-जब अगृहीत-अगृहीत का ग्रहण हुआ है, तब-तब हम उसको इकट्ठा काउंट करेंगे तो टोटल मिलकर वह हो जायेगा अगृहीत ग्रहण काल; और जब-जब मिश्र का ग्रहण होगा वह सबका मिलकर कहेंगे मिश्र का ग्रहण काल।

तो कहते हैं अगृहीत का ग्रहण काल सबसे कम बार है; क्योंकि हमने देखा जिन परमाणुओं में वे संस्कार रह जाते हैं उन्हीं परमाणुओं को बहुत बार लिया जाता है; तो जब अगृहीत का ग्रहण हुआ उससे मिश्र का ग्रहण बहुत बार होगा, अधिक बार होगा, अनंतगुणा बार होगा; और मिश्र से भी गृहीत का ग्रहण अधिक बार होगा; क्योंकि मिश्र में भी क्या होता है? कुछ अगृहीत हैं और कुछ गृहीत हैं न? तो उसके भी यानी उसके भी बार कम बार आयेंगे और जो लेकर छोड़े हुये हैं, जो वहीं पर पड़े हुये हैं उन्हीं का ग्रहण अधिक बार होगा। परंतु वे उस स्पर्श, रस, गंधरूपवाले नहीं थे इसलिये इतना पूरा सीक्वेन्स पार होने के बाद वह पूरा पुद्गलपरावर्तन का काल पूरा हो जायेगा; जो अनंत-अनंत-अनंतकाल है। उसमें भी जघन्य और उत्कृष्ट ऐसे व्हेरिएशन्स हैं; फिर भी वे हैं तो अनंत ही, थोड़ा कुछ फर्क है। तो इन सबको क्या कहते हैं? हं? पुद्गलपरावर्तन। उसके लिये यहां लिखा है, देखो, गाथा के नीचे –

पहला – **अगृहीत, मिश्र, गृहीतरूप; दूसरा** सीक्वेन्स – **मिश्र, अगृहीत, गृहीतरूप; तीसरा** सीक्वेन्स – **मिश्र, गृहीत, अगृहीतरूप**; और **चौथा – गृहीत, मिश्र, अगृहीतरूप परावर्तन होने पर द्रव्यपरावर्तन होता है सो विशदरूप से पहले कहा ही है।** इसलिये कहा है यह हमने गाथा पढ़ी थी पहले कि **एक जीव पुद्गलपरावर्तन संसार में यथायोग्य सर्व पुद्गल बारंबार अनंत बार ग्रहण करके छोड़ता है।** यहां तो प्रश्न उठाया है, धवला में उठाया है कि इस गाथा में तो यहां लिखा है कि **सर्वेऽपि पुद्गलाः खलु** तो सभी पुद्गल ग्रहण करके छोड़े हैं और हम सादि-अनादि पुद्गल में कहते हैं कि सभी पुद्गलों के अनंतवें भागप्रमाण पुद्गल सभी जीवों ने ग्रहण करके छोड़े हैं तो इसमें यह कैसे घटित हो सकता है? तो कहते हैं, सर्व पुद्गल के अनंतवें भाग को भी उपचार से सर्व पुद्गल कह देते हैं; जैसे समयप्रबद्ध के एक निषेक को भी समयप्रबद्ध कह देते हैं वैसे संपूर्ण पुद्गलों के अनंतवें भाग को ही लेकर छोड़ा है; उसको भी सब पुद्गल कह देते हैं, पर यह उपचार से कथन है। इसतरह से यहां तक हमने पुद्गलपरावर्तन की बात पढ़ी है और उसके प्रश्न के बाद कुछ चर्चा कल करेंगे हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१३. कर्मपुद्गलपरावर्तन

षट्खण्डागम के आधार से, हम यहां काल अनुयोगद्वार-कालानुगम की चर्चा कर रहे हैं। यहा हमें काल की गिनती करनी है। हमने देखा था, काल को जानना क्यों आवश्यक है? क्योंकि हमें पदार्थों का, गुणस्थानों का, मार्गणास्थानों का यथार्थ निर्णय करना है और हमने तत्त्वार्थसूत्र में पढ़ा था कि वस्तु को यथार्थ रीति से जानने के लिये सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव, अल्पबहुत्व इत्यादि अनुयोगद्वारों से जानना ज़रूरी है। तो हमें उस संबंधी सर्वांगीण ज्ञान हो जाता है, निर्णय हो जाता है, उस संबंधी भ्रांति टल जाती है। इसलिये यहां हमने काल के भी छह प्रकार देखे थे। कितने दिन हुये देखकर? बारह घंटे हुये न! तो कौन-कौनसे छह प्रकार देखे हमने? *सभी श्रोता: गुणस्थितिकाल।* गुणस्थितिकाल। दूसरा? *सभी श्रोता: भवस्थितिकाल।* भवस्थितिकाल। तीसरा? *सभी श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* कर्मस्थितिकाल। चौथा? *सभी श्रोता: कायस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल। पांचवां? *सभी श्रोता: उपपादकाल।* उपपादकाल। छठा? *सभी श्रोता: भावस्थितिकाल।* भावस्थितिकाल।

गुणस्थितिकाल में हमने यह देखा किसी विशिष्ट गुणस्थान में रहने का जघन्य और उत्कृष्ट काल। जब जघन्य बता देते हैं और उत्कृष्ट बता देते हैं तो बीच में एक-एक समयवाले सभी विकल्प वहां हो सकते हैं। केवल दो एक्स्ट्रीम बताते हैं – जघन्य यानी सबसे कम-मिनिमम और उत्कृष्ट यानी मॅक्झिमम इतना बता देते हैं, तो बीचवाले कुछ भी हो सकते हैं। इसतरह से मिथ्यात्व की बात देखी हमने, अलग-अलग गुणस्थानों की, वह तो हमने विस्तार से देख लिया है। मार्गणाओं में भी जो गुणस्थान होते हैं – मार्गणाओं में गुणस्थान का अर्थ क्या है? जैसे नरकगति है, तो उसमें चार गुणस्थान होंगे और अन्य-अन्य जो मार्गणायें हैं, उनमें कितने गुणस्थान होते हैं? जैसे हम आपको पूछेंगे, पुरुषवेदी जीव है, उसके कितने गुणस्थान होंगे? *श्रोता: चौदह।* चौदह होंगे? *अन्य श्रोता: नहीं, नौ होंगे।* पुरुषवेदी हम तब तक कहेंगे जब तक पुरुषवेद का उदय है। हां, तो नौवें गुणस्थान तक है। बाद में *श्रोता: क्या यह भाव की बात है?* यह भाववेद की ही बात चल रही है और नौवें के प्रथम भाग के बाद में वे अपगतवेदी कहलायेंगे और स्त्रीवेदी कब तक है, कौनसे गुणस्थान तक? *श्रोता: वह भी नौवें।* वह भी नौवें; नपुंसकवेदी भी। यह भाववेद की बात चल रही है, है न? द्रव्य से स्त्रीवेदी जीव पांचवें गुणस्थान तक का पुरुषार्थ कर सकता है, उससे ऊपर

का नहीं। यह जानने से हमारी उस संबंधी जो कुछ भ्रांतिया चलती हैं या हमारे में नहीं भी हो, बाहर में समाज में भी चलती रहती है, जैसे कोई मानते हैं कि स्त्री भी मुक्त हो सकती है यानी स्त्रीपर्याय का जीव द्रव्यस्त्रीवाला वह भी मुक्त हो सकता है, तो वह बात कैसी गलत है, यह हमारे ख्याल में आ जाता है।

श्रोता: यह करणानुयोग पढ़ने से समझता है? करणानुयोग पढ़ने से बहुत कुछ समझता है। *श्रोता: सही बातें समझ में आती हैं। अन्य श्रोता: कालद्रव्य है ही नहीं करके बोलते हैं।* कालद्रव्य है नहीं ऐसा कहनेवाले और माननेवाले भी हैं, है न? तो कालद्रव्य के बिना व्यवहारकाल आयेगा कहां से? यह पर्याय तो कालद्रव्य की है। क्योंकि कोई ऐसे भाई हैं हमारे, जो कालद्रव्य को नहीं मानते हैं और बस व्यवहारकाल को ही काल कह देते हैं। ये सारी भ्रमणायें इससे टल जाती हैं। यहां तो केवल हम यह काल की प्ररूपणा देख रहे हैं, वैसे तो हर प्ररूपणा जानना उतना ही आवश्यक है। हमने तो केवल इसमें से एक छोटा प्रकरण यहां लिया है।

श्रोता: करणानुयोग ही मत पढ़ो ऐसा बोलते हैं। अभी कहनेवाले तो बहुत सारे हैं। कहते हैं करणानुयोग मत पढ़ो कुछ फायदा नहीं है; विकल्प बहुत होते हैं। देखो, भेदविज्ञान के लिये जो हम स्थूलरूप से कहेंगे मैं भिन्न हूं, यह पूरी दुनिया भिन्न है, इसीमें सब कुछ आ गया है – परंतु क्या यह हमने माना है? नहीं माना न? तो इसलिये, इसको विस्तार करके समझायेंगे तो उसकी बहुत क्लॅरिटी हो जाती है। शरीर से मैं भिन्न हूं, इतना कहने से कोई नहीं मान रहे हैं। अब यहां तो हम देख रहे हैं कि हर समय जीव शरीर के अनंत परमाणु ग्रहण कर रहा है और वह भी उसकी विशिष्ट स्थिति बनी रहती है, उसमें से हर एक-एक समय में एक-एक निषेक, एक-एक निषेक करके समयप्रबद्ध प्रमाण खिर रहे हैं। यानी यहां जिसको हम आईने में सुबह उठकर सब ठीक-ठाक है कि नहीं है, कल जैसा है कि नहीं, देख लेते हैं, हां, तो रातभर में क्या हुआ है? हर समय में अनंत परमाणु नये आये हैं, पुराने अनंत खिर गये हैं। तो हम बर्थडे किसका मनाते हैं? क्योंकि उसमें से कितना तो चला गया है। अरे! वहां कायम रहनेवाला तो मैं अकेला हूं, बाकी यह तो सारी धूल आती-जाती है, चली जाती है। परंतु हमने इसीको अपना स्वरूप माना है, यही मेरा स्वरूप है, इतना मात्र ही मेरा एक्झिस्टन्स है, अस्तित्व है ऐसा मानकर उस अस्तित्व के लिये हम सब कुछ कर रहे हैं।

हम अपनी स्वयं की बात देखते हैं; जन्म से लेकर आज तक हमने क्या किया? बच्चे थे तो कुछ अक्ल नहीं थी। मां-बाप ने स्कूल में डाला तो वहां गये तो पढ़ते गये, पढ़ते गये। क्यों पढ़ रहे हैं पता नहीं था फिर उसके बाद पढ़ाई पूरी हुयी, अब पूरी हुयी तो कमायी भी तो करनी चाहिये कि नहीं चाहिये? फिर कमाते गये, शादी भी की, यह सब चलता रहा है। तो कमाया है तो कुछ भोगना तो चाहिये कि नहीं चाहिये? तो उसको भोगते गये। इतना होते-होते बुढ़ापा आया, फिर थोड़ी अक्ल आयी फिर ख्याल आया कि इतना सारा किया और ये सब छोड़कर जाना है, तो मैंने क्या कमाया? कुछ नहीं कमाया। हमारे कोई ऐसे कलीग है डॉक्टर, कि जो अमेरिका में जाकर सेटल हुये थे। वहां पैंतीस साल-चालीस साल बिताये, बहुत कुछ कमाया, दस-दस मर्सिडीज रखी हैं, कितनी एकड़ ज़मीन खरीदी है और सब कुछ है। फिर उनको विचार आया व्हॉट इज़ नेक्स्ट? इसके आगे क्या? सभी कार चालू रहें इसलिये उनको रोज़ एक नयी कार निकाल कर बाहर घूमना पड़ता है। हां-हां सच है, नहीं तो वह बंद करके रखेंगे तो क्या फायदा? यह सच बात है। डॉक्टर शहा उनका नाम है, *श्रोता: महावीर शहा।* डॉक्टर महावीर शहा।

एक दिन उनके हॉस्पिटल में एक फादर यानी पाद्री अमेरिकन-ख्रिश्चन आये थे; उन्होंने पूछा आप जैन हैं, तो आपने समयसार पढ़ा है? तो कहते हैं समयसार क्या होता है? फिर इंडिया में फोन किया, मुझे समयसार भेजो, उनके भाई हंसने लगे। इनको द्रव्य-गुण-पर्याय की कुछ मालूमात नहीं है और समयसार पढ़ने चले हैं। बहुत सारी पुस्तकें मंगायी उन्होंने, अमेरिका में पांच हजार रुपये की पुस्तकें मंगायी और जैनिझम पढ़ना चाहते थे। बहुत कुछ कोशिश की परंतु कुछ नहीं समझ में आया, तो उनके हाथ में जैनतत्त्व परिचय पुस्तक पड़ी, तो पढ़कर इतने खुश हो गये, तो कहने लगे अरे! यह तो मराठी में पढ़ रहा हूं, मुझे तो इसकी अंग्रेजी बनानी है। फिर वहां से उन्होंने हमें कॉन्टॅक्ट किया कि इसकी अंग्रेज़ी बनाओ। वे तो बाद में भूल गये, हम तो यहां अंग्रेज़ी बनाने की कोशिश में ही लगे रहे। आप सब हंस रहे हैं मगर यह बात सच है। बहुत जैन विद्वानों को भी कॉन्टॅक्ट किया जो अंग्रेज़ी अच्छी तरह से जानते थे। कोई कहते हम इसको अच्छा जस्टिफिकेशन नहीं कर सकते। ऐसी सिम्पल, सीधी भाषा है, हम इसका अनुवाद नहीं कर सकते।

फिर हमें एक हिंदू मिला। क्या करें इस पंचमकाल में हिंदुओं को ही..., क्योंकि महावीर भगवान के समय में भी यही परेशानी थी; सामने कोई जैन नहीं था। जिसकी

योग्यता होती है उसका आना होता है, उसे मार्ग सहज मिल जाता है। इनका- दिनेशजी का मित्र, मधुसूदन जोशी नाम है उनका। उन्होंने कहा क्यों परेशान हैं? क्या बात है? क्यों? आजकल कुछ दिखायी नहीं देते? तो यह परेशानी है कि इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद करनेवाला कोई नहीं मिल रहा है। उन्होंने बोला एक कंडिशन पर मैं इसका ट्रान्स्लेशन करूंगा। आप मुझे इसको पढ़ाना, हां, सामने बैठकर; मैं पढूंगा, समझूंगा फिर लिखूंगा। तो रोज चार घंटे वे हमारे घर आते थे, कभी हम उनके घर जाते थे। चार-पांच लाइन हम पढ़ाते थे, दोनों मिलकर उनको अकेले को पढ़ाते थे। सिंह पर्याय में महावीर को भी ऐसे ही दो जन मिले थे। तो वे इतने अड़ियल कि जब तक नहीं समझते थे, आगे नहीं बढ़ते थे। हम चार लाइन उनको पढ़ावें; बहुत विस्तार से; वे पूछते रहते थे ऐसा क्यों लिखा, यह ऐसा क्यों लिखा? एक जगह लिखा था एक, शुद्ध, त्रिकाली वगैरह-वगैरह, तो 'एक' पहले क्यों लिखा? 'शुद्ध' दूसरे, नंबर पर क्यों लिखा? तो उनको एक-एक चीज़, चार-चार लाइन, आठ-आठ, दस-दस घंटे पढ़ायें, तब जाकर वे दस-पंद्रह लाइन लिखते थे।

फिर वह हम चेक करें, तब तक तो हमारी रसोई कुछ जल जाती थी, कुछ क्या होता था! इसतरह से वह अंग्रेजी ट्रान्स्लेशन बनी। वह केवल ट्रान्स्लेशन नहीं है, क्योंकि हम राग कहेंगे तो समझ जाते हैं, द्वेष कहेंगे तो समझ जाते हैं। हम कहते हैं कि जीव के परिणाम अलग हैं, यह शरीर की क्रिया अलग है-जड़ की क्रिया अलग है, है न और जीवों के अभिप्राय अलग हैं। यानी परिणाम अलग हैं, उसके अभिप्राय अलग हैं और जड़ की क्रिया अलग है। अंग्रेजी में क्या लिखेंगे? पाप के लिये क्या लिखेंगे? सब अंग्रेजीवाले हैं न? *श्रोता: सिन!* सिन-सिन और पुण्य के लिये? पुण्य नहीं करते क्या वे? एक शब्द नहीं है और सिन भी वे क्रिया में बताते हैं। *श्रोता: गुड डीड?* डीड-डीड, वह तो शरीर की क्रिया हो गयी; *श्रोता: क्रिया हुयी।* क्रिया हुयी, परिणाम नहीं हुआ; परिणाम अलग है, क्रिया अलग है। ख्याल में आया? तो इसके लिये एक-एक चीज़ पांच-पांच, दस-दस लाइन में उन्होंने लिखी है।

पूरी जैनतत्त्व परिचय पुस्तक ट्रान्स्लेट होने के बाद उन्होंने बताया, अभी मुझे शब्दज्ञान हुआ है, आत्मज्ञान कब होगा? यह एक हिंदू, अजैन की बात है। *श्रोता: क्या बात है!* उन्होंने कहा, हमने वीतराग शब्द कभी सुना ही नहीं था। दो-चार साल हो गये, फिर वे

अमेरिका जाने निकले थे अपने बच्चों के यहां, उन्होंने कहा – आपने प्यासे को जल दिखाया और वापस ले जा रहे हैं। मुझे जैनिझम के और डीपर सिद्धान्त जानना है। अब मैं ढाई महीने के लिये जा रहा हूं, मैं वापस आने के पहले मुझे एक पुस्तक तैयार चाहिये जिसका मैं अंग्रेजी बनाऊंगा। उनके लिये मैंने कारण कार्य रहस्य पुस्तक लिखी है, जिसमें जैनदर्शन के सभी मर्म, सारे सिद्धान्त उनको बता दिये। ऐसे भी जीव होते हैं, जिसको मार्ग मिलता है न तो उसको ऐसा लगता है कि मैं इसमें से और अधिक जानूं। इसमें कोई जन्म से जैन होने की आवश्यकता नहीं है। तो यह बात कहां से निकली? हां? करणानुयोग पढ़ने से; *श्रोता: भाव से।* भाव-भाव।

देखो, यह कालों की बात चली थी अपनी। हमने ये छह प्रकार के काल भी देखे हैं और उसमें हम यहां तक आये हैं कि यह पुद्गलपरावर्तन क्या होता है? क्योंकि ऐसे पांच प्रकार के परावर्तन जीव अनादि से करता आया है। यह काल नापने का एक यूनिट है, माप है; फिर पुद्गलपरावर्तन यानी क्या? उसकी बात हम देख रहे थे। तो पुद्गलपरावर्तन दो प्रकार से बताया जाता है। नोकर्मद्रव्यपरावर्तन जो शरीर के परमाणुओं के ग्रहण के संबंध में है और कर्मद्रव्यपरावर्तन जो कर्म के परमाणुओं के ग्रहण के संबंध में है। बात एक किसी विशिष्ट पॉइंट से हम शुरू करेंगे। मान लेते हैं किसी एक दिन के आठ बजे से हम शुरुआत करेंगे। वहां से हम गिनना शुरू करेंगे, तो उसके पहले जो कुछ ग्रहण करके छोड़े हैं उनको अभी हम भूल ही जायेंगे। उस समय से लेकर हम जो नया पुद्गलपरावर्तन वहां से गिन रहे हैं, तो सभी परमाणु उसके लिये अगृहीत कहलायेंगे। यह पहले हमने सादि-अनादि पुद्गल देखे थे, वह बात अलग है वहां हम अलग अपेक्षा से बात कर रहे थे।

एक पुद्गलपरावर्तन जब गिन रहे हैं तो उसके पहले उसने कभी लेकर छोड़े थे, उनको अभी गौण करना। अब वे सभी परमाणु उसके लिये अगृहीत हो जाते हैं तो उस पर्टिक्युलर समय में, उस विशिष्ट समय में उसने परमाणु ग्रहण किये। कितने किये? तो अनंत किये। कितने अनंत किये? तो एक समयप्रबद्धप्रमाण किये। उसका प्रमाण क्या है? परमाणुओं का? तो कहते हैं कि सिद्धराशि के अनंतवें भाग और अभव्यों से अनंतगुणे, ऐसा जो विशिष्ट अनंत है, उतनी कार्माणवर्गणायें उसने ग्रहण की; या उतने परमाणु एक कार्माणवर्गणा में होते हैं और ऐसी अनंतानंत कार्माणवर्गणायें जीव एक समय में ग्रहण

करता है। ये सारे उसने एक समय में ग्रहण किये। उस ग्रहण किये हुये परमाणुओं की प्रत्येक की अपनी-अपनी कुछ न कुछ पर्यायें हैं, क्योंकि स्पर्श, रस, गंध, वर्ण तो समझाने के लिये चार गुणों की बातें होती हैं, परंतु उसमें तो अनंत गुण हैं। चार गुणों की भी हम समझाने के लिये बात करेंगे तो हर एक का जो स्पर्श गुण है, उसकी जो पर्याय है वह अलग-अलग होगी, हर परमाणु की अपनी-अपनी पर्याय कुछ न कुछ विशेष होगी।

हर एक का कोई न कोई वर्ण होगा क्योंकि कर्म कौनसे वर्ण का होता है? कर्म के परमाणु कौनसे वर्ण के होते हैं? सफेद होते हैं, लाल होते हैं, पीले होते हैं? हं? क्या कहते हैं? हां-हां? *श्रोता: सूक्ष्म हैं, हमारे जानने में नहीं आते।* हमने कहां कहा कि आप जान रहे हैं। हमने कहा कौनसे वर्ण के होते हैं? हम तो आगम से समझ रहे हैं। हमारे जानने में नहीं आ रहे हैं, हम उसको नहीं देख रहे हैं, परंतु उसमें कोई वर्ण होगा कि नहीं होगा? *सभी श्रोता: होगा।* तो कौनसा होना चाहिये? *श्रोता: पांचों वर्ण।* पांचों वर्ण! नहीं तो ज्ञानावरण कुछ काला होगा? मोहनीय बहुत काला होगा? तो क्या ऐसा है? पांचों ही प्रकार के वर्ण होंगे। सभी अनंत परमाणु हैं, उनमें ये पांच वर्ण – पांच वर्ण तो मुख्य हैं। उनमें भी हीनाधिकता होगी, वर्ण के सभी प्रकार उनमें पाये जायेंगे। तो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और अन्य भी जो अनंत गुण हैं उनमें, उनकी अपनी-अपनी हर एक की कुछ न कुछ पर्यायें चल रही हैं। तो वे ही परमाणु, उन्हीं स्पर्श आदि की जो उनकी पर्यायें हैं, उन पर्यायों सहित जब दुबारा ग्रहण होंगे, तब जाकर एक पुद्गलपरावर्तन पूरा होगा।

कंडिशन क्या है? ऐसा ही समयप्रबद्ध होगा कि जिसमें वे ही सारे के सारे परमाणु होने चाहिये। एक भी कम-ज्यादा नहीं चलेगा और उनकी पर्यायें भी डिफरंट नहीं चलेगी; वैसी की वैसी होनी चाहिये, अविभागप्रतिच्छेदों में भी। तो यह कब, कितने काल के बाद पॉसिबल होता है? उसका मिनिमम काल कितना है? तो कहते हैं कि अनंतकाल है। यानी वह भले ही गृहीतवाले परमाणु भी फिर से गृहीत यानी ग्रहण करेगा, उसकी वे पर्यायें वहां पॉसिबल ही नहीं होगी इतने काल के पहले। वे परमाणु दुबारा ग्रहण नहीं किये थे, वह बात नहीं थी क्योंकि जो एक बार ग्रहण करता है एक समय में, तो उसके औदारिकशरीर की हम बात करेंगे तो उसकी निषेक रचना हो जाती है। जितनी आयु बांधकर आया है उतने प्रमाण में उसके निषेक बनते हैं और हर समय उसमें से एक-एक निषेक खिरने लगता है।

एक-एक समय में खिरे हुये निषेक के परमाणु कभी तो वहीं पर विस्रसोपचयरूप से पड़े रहते हैं या हो सकता है पूरे लोक में कहीं पर भी फैल जाये। फिर दूसरा निषेक खिरेगा, फिर तीसरा निषेक खिरेगा। जितनी आयु बंधी है, आयु के अंत समय में पूरे के पूरे उसके निषेक खिर गये। परंतु बाय दॅट टाइम वह तो उनमें से कितने ग्रहण भी करता रहता है। यानी वे विस्रसोपचयरूप से पड़े रहते हैं क्योंकि जो शरीररूप से थे वे छूट गये हैं; वे वहीं पर पड़े भी रहेंगे, अपने स्निग्धत्व-रुक्षत्व के कारण चिपके हुये पड़े रहेंगे, कुछ तो निकल जायेंगे। उन्हीमें से बहुतांशी तो लिये जायेंगे यानी अगृहीत का ग्रहण अभी कम बार होगा, जो लेकर छोड़े हुये हैं ऐसे गृहीत और मिश्र ही अधिक बार लिये जायेंगे।

फिर भी सबसे पहले हमने जो सीक्वेन्स देखा था, चार्ट यहां है क्या, या निकाला? हां है, '०० +' का अर्थ क्या है? '०' क्या अर्थ क्या देखा था? *श्रोता: अगृहीत।* अगृहीत। यानी अगृहीत एक बार ग्रहण किया। हां, हो सकता है पहले समयप्रबद्ध जो हमने जो बांधा था, एक ही निषेक खिरा है, दूसरे समय में तो अगृहीत ही लेगा। तीसरे समय में क्या होगा? चौथे समय में क्या होगा? परंतु हमें अगृहीत कितनी बार लेना है? अनंत बार। बीच में तो कितनी बार विस्रसोपचय में से ही लेता रहेगा। अब जो उसने लेकर छोड़े हैं, उनकी वे पर्यायें नहीं रहेगी; कौनसी? स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और अन्य गुणों की; वे तो चेंज होती चली जायेगी क्योंकि एक ही पर्याय बहुत काल तक कॉन्स्टन्ट नहीं रहती है। तो जीव गृहीत भी कभी लेते हैं, फिर भी उन्हीं पर्यायवाले तो नहीं हैं; परमाणु वे ही भले हों परंतु उनकी पर्यायें बदल गयी हैं। तो यह, इसी सीक्वेन्स से अभी वह जब-जब लेगा तब उसको गिनना। अगृहीत लिया, फिर बीच में उसने मिश्र लिये, गृहीत लिये उसको काउंट नहीं करना। उसका काल तो गिनना। फिर दूसरी बार लिया अगृहीत, फिर तीसरी बार अगृहीत यानी सभी के सभी परमाणु अगृहीत होने चाहिये। एक मिश्रवाला आयेगा, एक ग्रहण करके छोड़ा हुआ आ गया वह नहीं चलेगा। उसके लिये जितना काल चला जायेगा उसको तो गिनना है हमें। तो इसतरह से जब-जब अगृहीत हुआ यानी जब-जब अगृहीत का ग्रहण हुआ तब-तब उसको काउंट करना, ऐसे अनंत बार हो जायेगा तब जाकर एक बार मिश्र लेना है। फिर अगृहीत-अगृहीत-अगृहीत अनंत बार हो गया तो दूसरी बार मिश्र। ऐसे हर बार अनंत बार अगृहीत करके एक-एक बार मिश्र करके मिश्र भी अनंत बार हो जायेगा, फिर भी अगृहीत अनंत बार करके फिर एक बार गृहीत हो जायेगा। यानी इतना होने के

लिये, इतना एक सीक्वेन्स होने के लिये; वह पूरी लाइन भी नहीं, हमने आधी लाइन ली वह ऊपर की – तो इतने के लिये कितना अनंतकाल चला जायेगा!

यह पूरा सीक्वेन्स हमने कल देखा था किसतरह से होता है। क्योंकि इतने बहुत बार वह गृहीत भी ग्रहण करेगा, जो पहले छोड़े हुये थे, क्योंकि जो एक बार अगृहीत ग्रहण किया और वह छूट गया, वह क्या कहलायेगा अभी? गृहीत कहलायेगा। वह पहले समयवाला गृहीत वह अलग, परंतु जो-जो उसने ग्रहण करके छोड़े हैं वे सारे गृहीत ही कहलायेंगे। अब वह उस भव में मर गया, अन्यत्र चला गया, यहां तो औदारिक के परमाणु लिये थे, अब वे अन्यत्र वैक्रियिक के हो गये; वह कहां-कहां लोकाकाश में भटकेगा? वहां के अन्य भी परमाणु ले लेगा और वे विस्रसोपचयरूप से हैं, वह उनमें से भी लेता रहेगा, तो दोबारा पूरा लॉट वही होना चाहिये और उस ही स्पर्श, रस, गंध आदि ये अन्य भी जो गुण हैं, वे सभी पर्यायें वैसी की वैसी होनी चाहिये। यह जिसको कहेंगे न, इम्पॉसिबल जैसा हमें लगता है – तो वह भी कब पॉसिबल होगा? तो इतने अनंतकाल के बाद। ये सभी सीक्वेन्स जब पूरे होंगे चारों लाइन के, यह हमने देखा था, यह बहुत विस्तार से हमने कल समझा था। यहां आते हैं D6 में तो अंत में जाकर उसने अगृहीत ग्रहण किया, उसके अनंतर समय में; व्हेरी नेक्स्ट समय में; वह जो ग्रहण करेगा वह पहले समयवाले समयप्रबद्ध के वे ही परमाणु, उन्हीं पर्यायों के साथ वह ग्रहण करेगा, तब जाकर एक पुद्गलपरावर्तन या परिवर्तन कहो, पूरा हुआ ऐसा हम कहेंगे, जिसमें अनंत-अनंत-अनंतकाल चला जाता है। क्योंकि यह दो-दो बार लेता है उसका अर्थ है अनंत बार लेता है। अनंत समय में अनंतकाल चला गया है। यह तो हमने नोकर्मद्रव्यपरावर्तन देखा। इसी पद्धति से कर्मद्रव्यपरावर्तन को भी देख लेते हैं। आपका प्रश्न है? हां,

श्रोता: अगृहीत का काल हमने अल्प देखा तीनों में; इससे ज्यादा हमने मिश्र का देखा और इससे ज्यादा हमने गृहीत का जघन्य काल देखा। तो यहां बोर्ड पर चार्ट में जो बताया है, उसमें मिश्र का काल ज्यादा दिखाया है? नहीं-नहीं, यहां तो क्या है वह अनंत बार-अनंत बार होता है न, परंतु वह तो दिखाया, यह क्रम दिखाया है और अक्रम से आयेंगे वे तो... *श्रोता: तो इसके अंदर वह...* वे अक्रम से आये हुये हैं, वे ज्यादा बार आ जाते हैं। ख्याल में आया न? और एक बार जो अगृहीत लेकर छोड़े वे गृहीत में चले जाते

हैं, उन्हीं का ग्रहण अधिक बार होता है। यहां तो हम ०० काउंट करेंगे तो वे ज़्यादा दिख रहे हैं, परंतु दो बार लिखे तो उसके बीच में अधिक बार वे मिश्र हो गये, कभी गृहीत हो गये, तो इसलिये कहा था कि अगृहीत का काल सबसे कम बार आता है, यह हमने कल पढ़ा था देखो; हां, ६४२ पेज। देखो पढ़ लेते हैं, क्योंकि एक बार सुनने से थोड़े ही याद हो जाता है? देखो, ६४२ पृष्ठ पर, तीसरी लाइन, यहां लिखा है **अगृहीत ग्रहण के काल से मिश्र ग्रहण का काल अनंतगुणा है**, यानी जब-जब अगृहीत का ग्रहण हुआ, ऐसे सभी समयों को इकट्ठा करके हम गिनेंगे, वह लगातार की बात नहीं है, जब कभी अगृहीत का ग्रहण किया है, तब उन-उन समयों को गिनकर हम सुनेंगे या समझेंगे, भले वह अनंत बार है, परंतु वह सबसे कम बार है। इसको यानी सबका इकट्ठा हुआ काल उसको कहेंगे – अगृहीत ग्रहण का काल।

उससे मिश्र ग्रहण का काल अनंतगुणा है। क्योंकि मिश्र क्यों अनंतगुणा है? क्योंकि वे छूटे हुये वहीं पर पड़े हैं और वह अगृहीत कुछ और गृहीत कुछ ऐसे दोनों मिलकर मिश्र का ग्रहण काल अधिक बार होता है, यानी अनंतगुणा बार होता है। *श्रोता: गृहीत और अगृहीत के साथ विस्रसोपचय में गृहीत या अगृहीत बाहर से ही ग्रहण करता है?* देखो आपका प्रश्न है अगृहीत क्या बाहर से ही ग्रहण करता है? पहले हमने कंडिशन देखी कि जीव एकक्षेत्रावगाही स्थित पुद्गलों का ही ग्रहण करता है। हां, वह ज़रूरी नहीं कि विस्रसोपचयरूप से ही हो, परंतु उसी क्षेत्र में रहनेवाले पुद्गलों का ही ग्रहण होगा, बाहर से तो, कोई एक परमाणु भी बाहर से जीव ग्रहण नहीं कर सकता। यह तो हमने पहली कंडिशन देखी थी कि जीव ये परमाणु कहां से ग्रहण करता है? तो उसी प्रदेशों में पड़े हुये परमाणुओं में से ग्रहण करता है और विस्रसोपचय में भी अनंतवां भागप्रमाण ही उसमें से लिये हुये होंगे। उसमें से कितने तो बिना लिये हुये भी है। परंतु यह लेकर छोड़े हुये को क्यों अधिक बार ग्रहण करता है? तो उसमें जो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावरूप जो संस्कार पड़े हैं, उसके कारण उसीको अधिक बार लिया जाता है। तो अगृहीत का ग्रहण काल सबसे छोटा है, उससे मिश्र ग्रहण काल अनंतगुणा है और उससे भी गृहीत का ग्रहण का काल अनंतगुणा है। भले ही वह गृहीत का ग्रहण अनंत बार हुआ है क्योंकि वे परमाणु लेकर छोड़े हुये हैं, परंतु वे परमाणु वे ही नहीं हैं जो पहले समय में लिये थे और उन्हीं पर्यायों के साथ थे। इसके लिये, इतना जब होगा, इस सीक्वेन्स से जब काल पूरा होगा, तब जाकर वे ही परमाणु और उन्हीं पर्यायों के साथ जीव

दोबारा ग्रहण करेगा। उसमें एक भी पर्याय इधर की उधर नहीं है और एक भी परमाणु की संख्या हीनाधिक नहीं है।

श्रोता: औदारिकशरीर का तो वह आयु पूरी होने के साथ खत्म हो जायेगा न? हां, औदारिकशरीर और उसका विस्रसोपचय तो एक आयु पुरते होते हैं, सब छूट जाते हैं। *श्रोता: तो नया विस्रसोपचय औदारिक का कब आयेगा?* अभी नया शरीर धारण करेगा तब उसका विस्रसोपचय भी नया होगा। उसका विस्रसोपचय अलग है। इसलिये पहलेवाले विस्रसोपचय के वे गृहीत परमाणु फिर दोबारा उसके प्राप्त होने में वे ॲव्हेलेबल होने चाहिये न? हां, दूसरे किसीने लिये तो क्या करेंगे। *श्रोता: सात प्रकार के जो समुद्घात हैं उनमें बाहर के भी ग्रहण हो जायेंगे?* हां, उसमें एकक्षेत्रावगाहरूप से होते हैं न, परंतु वह एकक्षेत्रावगाही ही कहेंगे। बाहर से यानी, वहां पर भी विस्रसोपचय है उसके साथ। आपका प्रश्न है समुद्घात अवस्था में बाहर से भी परमाणु ग्रहण होंगे? बाहर से कहां होंगे, आत्मा के प्रदेश ही फैले हैं; वहां पर भी उसके विस्रसोपचय भी फैलेंगे उसके साथ। नहीं तो ऐसा नहीं कि समुद्घात करता है तो कर्म इधर रह गये केवल आत्मा के प्रदेश सिर्फ बाहर जायेंगे, तो उतना जीव मुक्त कहलायेगा। जो बाहर समुद्घात किया है, उतना मुक्त है और बाकी प्रदेश बंधे हुये है, ऐसा तो है नहीं है। उसीमें से जीव ग्रहण करेगा यानी समुद्घात अवस्था में भी उसका ग्रहण तो चलता ही रहेगा। *श्रोता: एकेन्द्रियपर्याय में जायेगा तो असंख्यात?* हां एकेन्द्रियपर्याय में जायेगा। मान लेते हैं वैक्रियिक से हमने शुरू किया और एकेन्द्रिय पर्याय में गया तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल वहां चला जायेगा हां, परंतु उसकी बात यहां नहीं लेना कौनसे परमाणु लेता है उसकी बात है। तो उन परमाणुओं को वैक्रियिक जाति की आहारवर्गणारूप से ग्रहण नहीं करेगा, औदारिकवाली आहारवर्गणारूप से ग्रहण करेगा। एक पुद्गलपरावर्तन में भी गृहीत को अनंतों बार ग्रहण करेगा परंतु परावर्तन पूरा होने के लिये वे उन्हीं स्पर्श, रस, गंध, वर्णादिरूप से परिणत हुये होने चाहिये।

श्रोता: एक औदारिकशरीर का हमने जब स्टार्ट किया; पुद्गलपरावर्तन का यह औदारिकशरीर के परमाणु को ग्रहण करने का स्टार्ट किया अगृहीत का; फिर वह औदारिकशरीर के परमाणु को छोड़कर देवगति में गया, तो वहां उसने वैक्रियिक शरीर बनानेवाले परमाणुओं को ग्रहण किया, तो वे जब औदारिकवाले छोड़े थे तो वे परमाणु

छूटकर फिर, मतलब की वापिस उसने वैक्रियिक में भी ग्रहण किया तो उसके लिये गृहीत गिना जायेगा? हां, देखो यह औदारिक और वैक्रियिक ऐसे कोई परमाणु की बात नहीं है, यह तो आपको समझाने के लिये बताया; वह सारी आहारवर्गणा ही है। परंतु आहारवर्गणा होते हुये भी, जो आहारवर्गणा औदारिकरूप परिणमती है उनकी वर्गणा में परमाणुओं की संख्या कम है और जो आहारवर्गणा वैक्रियिकरूप से परिणमती है, कल हमने देखा था न? उसमें तो वे परमाणु असंख्यातगुणा हैं। यानी उसमें कुछ भेद हो तो है, परंतु परमाणु एक वर्गणा से दूसरी वर्गणारूप होकर वहां ग्रहण हो सकते हैं। *श्रोता: मतलब कि वह कार्माणवर्गणा भी जो आहारवर्गणा है, तो वह औदारिकशरीर बनकर फिर छूट गया तो फिर आहारवर्गणारूप से परिणमित हो सकता है?* उसकी अन्य कोई भी वर्गणा हो सकती है; वह अन्य वर्गणारूप हो सकता है।

श्रोता: दोबारा वह अगर कार्माणवर्गणारूप ग्रहण करता है तो उसके लिये यहां गृहीत गिना जायेगा? नहीं, यहां हम केवल नोकर्म देख रहे हैं; नोकर्म में वह कर्मरूप से ग्रहण करके छोड़े हुये परमाणुओं को गृहीत नहीं कहेंगे। यहां तो मात्र आहारवर्गणारूप से जब-जब ग्रहण होगा, तभी उसको गिनना है। जब हम नोकर्मद्रव्यपरावर्तन देख रहे हैं तो वे ही परमाणु यदि हम कर्मवर्गणारूप से ग्रहण करते हैं तो उनको कन्सिडर नहीं करना है। इसलिये वे परमाणु ॲव्हेलेबल तो होने चाहिये न, वे किसी भी वर्गणा में चले जायेंगे, किसी भी स्कंधरूप से वे हो जायेंगे, तो फिर दोबारा उसी जीव ने ग्रहण करने चाहिये। जीव तो अनंत हैं, कोई भी उनको ग्रहण कर सकता है, ऐसा नहीं कि ये परमाणु मेरे हैं आप नहीं ले सकते। *श्रोता: फिर यह पूरा सीक्वेन्स खत्म होते ही फिर अनंतर समय में जो वापस वे ही के वे ही परमाणु – वापस वही औदारिकशरीर होना नियम से?* हां, उस समय वह वैसा ही औदारिकशरीर वगैरह, वैसी की वैसी बातें होगी। यह समझने के लिये ही तो कहते हैं न कि ऐसा का ऐसा ढांचा मिलेगा फिर, परंतु एक समयप्रबद्ध की वह बात है। यानी उसमें जितना सूक्ष्मता से विचार करो तो उतना उसमें से हमें सही ज्ञान हो जाता है।

देखो यह पृष्ठ ६४२ का हम पढ़ लेते हैं, अभी जो हमने पढ़ा न तीसरी लाइन से। **अगृहीत ग्रहण के काल से मिश्र ग्रहण का काल अनंतगुणा है। उस मिश्र ग्रहण के काल से गृहीत ग्रहण का जघन्य काल अनंतगुणा है**। उसमें भी जघन्य, उत्कृष्ट भेद

होंगे, व्हेरिएशन होगा। **उससे संपूर्ण पुद्गलपरावर्तन का जघन्य काल कुछ अधिक है**। क्योंकि गृहीत ग्रहण भी बहुत बार हुआ न, इसलिये उसमें तीनों मिलकर पूरा परावर्तन का काल होगा – गृहीत भी, अगृहीत भी और मिश्र भी। **जघन्य गृहीत ग्रहण काल को** – अभी उन्होंने ऐसा दिखाया उसका भाव मैं अपनी भाषा में समझाती हूं, उसका अनंतवां भाग करना और वह उसीमें मिला देना **जघन्य गृहीत ग्रहण काल को अनंत का भाग देकर जो प्रमाण आये, उतना जघन्य गृहीत ग्रहण काल में मिलाने पर, पुद्गलपरावर्तन का जघन्य काल होता है**। यानी जघन्य गृहीत ग्रहण काल से पूरा पुद्गलपरावर्तन का जघन्य काल थोड़ा अधिक है। कितना अधिक है? तो उसका अनंतवां भाग उसीमें मिला दो तो इतना अधिक है। **उससे गृहीत ग्रहण का उत्कृष्ट काल अनंतगुणा है। उससे संपूर्ण पुद्गलपरावर्तन का उत्कृष्ट काल कुछ अधिक है**। वहां पर भी ऐसे उत्कृष्ट गृहीत ग्रहण काल का अनंतवां भाग उसमें मिला दो, तो उत्कृष्ट पुद्गलपरावर्तन का काल हो जायेगा। **यहां अगृहीत ग्रहण काल और मिश्र ग्रहण काल** का जघन्य और उत्कृष्ट ऐसा अलग-अलग नहीं बताया **क्योंकि परंपरा सिद्धान्त में उनके जघन्य-उत्कृष्टपने के उपदेश का अभाव है**। देखो, जो मूल ग्रंथों में, मूल सूत्रों में जो उपदेश बताया जाता है उसीको आगे के आचार्य उसको एक्स्प्लेन करके लिखते हैं, अपने मन से उसमें कुछ ॲड नहीं करेंगे। जहां उपदेश नहीं है, वहां लिख देंगे कि इसका उपदेश नहीं है।

यह तो आगे के हमने दोनों ही श्लोक पढ़े थे, अभी थोड़ा कर्मपुद्गलपरावर्तन देख लेते हैं ६४० पृष्ठ पर, यह हमने अभी तक जो देखा है वह नोकर्मपुद्गलपरावर्तन है। इसका जितना काल है उतना ही कर्म की अपेक्षा गिनने पर उतना ही काल होगा। एक बार नोकर्मपुद्गलपरावर्तन गिनो फिर कर्मपुद्गलपरावर्तन गिनो और दोनों को मिलाकर एक पुद्गलपरावर्तन हो जाये ऐसा है नहीं। *श्रोता: पॅरलल।* पॅरलल है, उसको गिनने का ही दूसरा तरीका है। काल तो उतना ही होगा। तो **आगे कर्मपुद्गलपरावर्तन कहते हैं** पृष्ठ ६४० में। **किसी जीव ने एक समय में आठ प्रकार के कर्मरूप जो पुद्गल ग्रहण किये**, हमने वहां क्या देखा था? देखो, इसके साथ कम्पेअर करेंगे। आपके सामने ६३७ पृष्ठ निकालना एक बाजू और एक बाजू हम ६४० पृष्ठ पर से पढ़ेगे। नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में क्या देखा था? **किसी जीव ने औदारिकादि तीन शरीरों में से किसी भी शरीर संबंधी छह पर्याप्तिरूप परिणमने के योग्य पुद्गल किसी समय में ग्रहण किये**। यहां

पृष्ठ ६४० पर क्या लिख रहे हैं? देखो, **किसी जीव ने एक समय में आठ प्रकार के कर्मरूप जो पुद्गल ग्रहण किये**, यहां तक हम पढ़ेंगे।

तो प्रत्येक समय में जीव जो कार्माणवर्गणा ग्रहण करता है उसका भी प्रमाण उतना ही है। कहने के लिये एक वर्गणा में परमाणुओं का प्रमाण वह सिद्धों के अनंतवें भाग और अभव्यों से अनंतगुणा कहेंगे और उतनी ही वर्गणा एक समयप्रबद्ध में होती हैं, फिर भी औदारिक के जितने परमाणु हैं, उनसे वैक्रियिक के परमाणु असंख्यातगुणे होंगे क्योंकि वह सूक्ष्म शरीर है। कार्माण के परमाणु तो उससे अनंतगुणा होंगे क्योंकि औदारिक से वैक्रियिक और उससे आहारक के असंख्यातगुणे हैं और उससे तेजस के और उससे कार्माण के अनंतगुणे हैं, तो वहां जितने परमाणु ग्रहण किये उससे अनंतगुणा परमाणु यहां होंगे; एक बात। ये जो परमाणु ग्रहण करता है उसमें से तो आठ प्रकार के कर्म में विभाजित हो जाता है। कार्माणवर्गणा जो यह लेता है तो एक समय में कितनी लेता है? एक समयप्रबद्धप्रमाण और उसीका आठ में विभाजन हो जाता है।

वे एक समय अधिक आवलीप्रमाण आबाधाकाल जाने के पश्चात् – देखो यह क्या लिखा है यहां पर? आप कहेंगे कभी ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया तो आवलीप्रमाण काल के बाद कैसे निकलेंगे? क्या लिखा फिर यह वाक्य पढ़ेंगे। **वे** यानी वे परमाणु जो बंधे थे **आठ कर्मरूप वे** परमाणु **एक समय अधिक आवलीप्रमाण आबाधाकाल जाने के पश्चात्**, यानी आबाधाकाल कितना कहा यहां? एक आवली और हमने कितना गिना था कल? मिथ्यात्व का सात हजार वर्ष देखा, ज्ञानावरणादि का तीन हजार वर्ष देखा। वह जब बंधा था तो इतनी आबाधा के बाद ऊपर निषेक रचना हुयी थी, यानी पहला निषेक वहां पर है। ७० कोड़ाकोडीसागरवाले मिथ्यात्व कर्म में तो सात हजार वर्ष और एक समय पर पहला निषेक है। परंतु उन निषेकों में से; एक निषेक में से नहीं – जितने सभी असंख्यात निषेक तैयार हुये हैं उन प्रत्येक निषेक में से एक आवली काल के बाद नियम से, कुछ न कुछ परमाणु नीचे आयेंगे। बंधे हुये परमाणुओं में एक आवली तक कुछ परिवर्तन यानी अवस्था का बदलना नहीं होता, उसको कहते हैं बंधावली। आवली यानी आवलीप्रमाण काल। बंधने के बाद किसी भी कर्म में आवली काल तक कुछ परिवर्तन यानी चेंज नहीं होता, न उसमें उत्कर्षण होता, न अपकर्षण होता, न संक्रमण होता, कुछ नहीं होता है, इसको कहेंगे बंधावली। परंतु एक आवली के जाने के पश्चात्, नियम से

उसमें अपकर्षण भी होता है, उदीरणा भी होती है, वे उदयरूप भी हो सकते हैं, यानी होते भी हैं, क्योंकि पुराने बंधे हुये का उदय चल रहा था, उसके साथ ये भी कुछ-कुछ परमाणु निकल जाते हैं। वहां अनंतानंत पड़े हैं परंतु उसके असंख्यातवें भागप्रमाण तो उदीरणा से उदय में आना चालू हो जाता है, यह नियम है। यानी ऐसा नहीं कि अभी कुछ भी पाप करते रहो और आगे देखो किसने देखा है नेक्स्ट भव, भोगेंगे बाद में जाकर, ऐसा नहीं है। आवली काल में उसमें से कुछ परमाणु तो उदय में आते ही रहेंगे, यहां यही लिखा है। **वे**, यानी वे बंधे हुये परमाणु **एक समय अधिक आवलीप्रमाण आबाधाकाल जाने के पश्चात् द्वितीयादि समयों में निर्जरारूप किये**, क्योंकि आवली के बाद एक समय में वे तो उदयरूप हैं और दूसरे समय में निर्जरारूप कहेंगे। *श्रोता: फिर आबाधाकाल उतना क्यों कहते हैं? आबाधाकाल एक आवली प्रमाण ही कहना चाहिये न?* आपका कहना है, आबाधाकाल क्यों कहा इतना? आवलीप्रमाण कहना था। वह तो उदय की अपेक्षा कहा और यहां उदीरणा की अपेक्षा एक आवली कह रहे हैं। उस समयप्रबद्ध के निषेक नीचे नहीं आते परंतु उनमें से कुछ परमाणु पूर्व में बंधे हुये सत्ता में पड़े हुये जो निषेक उदयरूप हो रहे हैं उनके साथ मिलकर उदय में आते हैं। कर्म का ऐसा ही स्वभाव है। जीव ने कुछ किया, पुरुषार्थ किया, ऐसा कुछ है ही नहीं है, यह तो नियम है। बंधने के बाद, एक आवली काल के बाद उनमें से अपकर्षण, उदीरणा आदि सब चलता ही रहता है, यह नियमरूप से है, हर कर्म में।

श्रोता: आयु को छोड़कर? आयु को छोड़कर हर कर्म में। आयु में भी उदीरणा होती है, कब? जब उसका उदय प्रारंभ होता है क्योंकि अभी हम आयु नेक्स्ट भव की बांध रहे हैं, उसका उदय नहीं है, तो उसकी उदीरणा भी नहीं हो सकती। जब हम मनुष्यायु पूरी होकर हम चले गये नेक्स्ट भव में, वहां नयी आयु चालू हो गयी; तो जिस समय आयु का उदय चालू हो गया, ऊपर के निषेकों में से कुछ-कुछ परमाणु उदीरणा होकर उदय में आते ही रहते हैं। यानी आयु की उदीरणा ऐसी पूरी लाइफ टाइम तक चलती है। अंतिम आवली में नहीं होती, क्योंकि उदयावली के ऊपर के निषेक के परमाणु उदयावली में आते हैं। अभी आवलीप्रमाण जब निषेक बाकी रहेंगे, तो उदीरणा होने के लिये ऊपर कोई निषेक ही नहीं हैं, तो तब तक यह नियम से उदीरणा होती है। यह भी नियम है कि छठे गुणस्थान के बाद आयु की उदीरणा नहीं होती।

श्रोता: आपने अभी कहा उदयकाल और निर्जराकाल में अंतर है? उदयकाल? *श्रोता: और निर्जरा।* हां, यह कहने की दो पद्धतियां हैं। जिस समय उदयरूप है, उदयरूप है यानी वे जीव के हैं और वे जीव को फल दे रहे हैं। जीव की सत्ता में हैं और वे जीव की सत्ता में कब नहीं हैं? तो दूसरे समय में नहीं है। पहले समय में उदयरूप थे, दूसरे समय में वे हैं ही नहीं हैं, तो निर्जरा कब हुयी कहेंगे? दूसरे समय में। इसके लिये कहने के लिये दो पद्धतियां हैं, उनको हम कहेंगे द्रव्यार्थिक नय पर्यायार्थिक नय लगा लो। उदयरूप होते हुये भी निर्जरा कहेंगे; फल देकर खिर गये कहेंगे क्योंकि दूसरे समय में है ही नहीं है। हां, तो जहां है, वहीं पर गये ऐसा कहने की पद्धति है। हां, जैसे बंधव्युच्छित्ति में भी ऐसा ही है। हम-आप सब कहां मिले हैं? कोई सागर से आये, कोई होशंगाबाद से आये, कोई इटारसी से आये और आप लोग कहां से? पूना से आये, सातारा से आये, कहां-कहां से आये। आप कहां से आये? बम्बई से आये। कहां हम बिछुड़े? *सभी श्रोता: देवलाली में।* कहां मिले थे? *सभी श्रोता: देवलाली में।* कहां बिछुड़ गये? *सभी श्रोता: देवलाली में।* अरे! देवलाली में कहां बिछुड़े? देवलाली में तो साथ में थे! परंतु जहां थे लास्ट में, वहीं पर बिछुड़ गये कहेंगे; बिछुड़े तो यहां से जाने के बाद, देवलाली छोड़ा तब हम बिछुड़ गये; देवलाली में तो साथ में थे। ऐसे ही यह कथन के दो प्रकार हैं कि जहां हैं वह वहीं पर खिर गये कहेंगे, तो वहां तो थे, खिरकर कहां गये? तो नेक्स्ट समय में खिर गये, यह कथन पद्धति दो हैं।

श्रोता: उदय और निर्जरा में समय भेद नहीं है? जो उदयरूप होते हुये भी, वह उस समय तो उदय में यानी सत्ता में हैं, वे जीव के हैं कहेंगे और दूसरे में वे हैं नहीं जीव के अभी, तब उसको खिर गये अभी ऐसा भी कहेंगे। यह कहने की दो पद्धतियां हैं। अभी समझना यही है कि उदयरूप यानी जीव के कहलायेंगे और जब खिर गये तो अभी जीव से कोई संबंध नहीं उसका, इसलिये दूसरे समय में कह दिया। *श्रोता: इसी नियम से आस्रव-बंध में भी घट जायेंगे?* आस्रव में कैसे घटित करेंगे? *श्रोता: द्रव्यसंग्रह में कहा है आस्रवपूर्वक बंध।* हां, आस्रवपूर्वक बंध। वे आ रहे हैं यानी कहीं बाहर से आते नहीं हैं, यहीं पर हैं। हां, जीव के मोह-राग-द्वेष परिणाम हुये, अभी तो कार्माणवर्गणा थी, अब वह कर्मरूप हो गयी, तो उसीको कहेंगे कि जीव ने ग्रहण किया; उसीको कहेंगे कि उसका बंध हुआ। वह तो एक ही समय में हो जायेगी बात। हां? वह जिस समय हमने बंध कहा, तो दूसरे समय में उसको

सत्ता कहेंगे। क्योंकि, जो बंधे हुये वे जीव के तो हो ही गये, फिर भी उनको सत्ता में दूसरे समय से कहेंगे। यह कथन पद्धति अलग-अलग होती है।

श्रोता: निर्जरा और उदीरणा दोनों समय में क्या होता है? देखो, उदीरणा तो, उसका प्रोसेस क्या हुआ उसको उदीरणा कहते हैं, वहां सत्तावाला निषेक तो उदयरूप था; परंतु यह उदीरणा किसकी होती है? जो ऊपर के निषेकों में परमाणु पड़े थे उन्होंने अपनी जगह छोड़ी यानी उनकी स्थिति कम हुयी और वे उदयावली में आकर मिले। कभी-कभी क्या होता है? अपकर्षण होकर उदयावली के ऊपर आकर मिलते हैं, तो उसका उदय तो नहीं होगा, वे फिर दोबारा उत्कर्षण होकर ऊपर भी जा सकते हैं। तो जो उदयवाली में आकर मिलते हैं, वे नियम से एक-एक करके उदय की तरफ जाकर उनका उदय होता ही है नियम से। तो उदयावली में आकर मिलते हैं और उदय में आते हैं उसको उदीरणा कहेंगे और उदय तो रेग्युलर है और जो खिर जाते हैं उसको निर्जरा कहेंगे। उदय कहो या निर्जरा कहो, वैसे तो एक है, परंतु जो संवरपूर्वक निर्जरा कहते हैं, वह अलग बात है।

श्रोता: सविपाक निर्जरा-अविपाक निर्जरा। अभी वह उसके भेदों में मत जाना। अपना फल देता है तो उसको सविपाक कहेंगे। अविपाक में यानी फल नहीं देता, परंतु फल दिये बिना तो कोई कर्म खिरता ही नहीं है। जो-जो कर्म बंधा है, वह फल दिये बिना जायेगा ही नहीं। तो आप कहेंगे, अविपाक कैसे होगा फिर? फल दिये बिना तो खिर जाते हैं न? वे अपनेरूप से फल नहीं देते, पररूप से होकर उदय में आकर ही खिरेंगे। कोई भी, एक भी परमाणु उदय में आये बिना खिरेगा ही नहीं। आप कहेंगे – क्या कहते हैं? क्षायिक सम्यग्दर्शन हो जाता है तो मिथ्यात्व के परमाणुओं का क्या हो गया? वे मिथ्यात्वरूप से उदय में आते हैं क्या? नहीं, वे सम्यक् प्रकृतिरूप से होकर उदय में आकर खिर जाते हैं। ख्याल में आया? यह सब क्षय का प्रोसेस भी ऐसा ही है, अपने यहां लब्धिसार शिबिर में हुआ था। नौवें गुणस्थान में जाकर वहां पहले नरकगति, एकेन्द्रिय जाति आदि बंधी हुयी थी, उनका क्षय हो जाता है। क्षय हो जाता है यानी क्या हो जाता है? *श्रोता: संक्रमण हो जाता है।* संक्रमण होता है; संक्रमण किसमें होगा? *श्रोता: जिस गति का उदय होगा उस समय?* उदय में नहीं, जिनका बंध है ऐसी स्वजाति की प्रकृतियों में संक्रमण होता है। तो उसके जो कुछ नियम हैं उसके अनुसार। अन्यरूप होकर अगर उदय में आ रहे हैं तो एक

ही निषेक थिउक्क संक्रमण होकर उदयरूप प्रकृति में जायेगा। संक्रमण होता है तो सत्ता में पड़ी हुयी प्रकृति बंधनेवाली प्रकृति में टर्न होती है-संक्रमित होती है। तो उसके कुछ अलग नियम हैं।

श्रोता: पुण्य पापरूप खिरता है, पाप पुण्यरूप खिरता है ऐसा है क्या? नहीं, नहीं, खिरता है ऐसा कुछ नहीं है। उसके नियम अलग हैं और ऐसा नहीं है कि पाप और पुण्य प्लस मायनस होकर नष्ट होते हो। जैसे हम प्लस संख्या में से मायनस संख्या घटा देते हैं वैसा यहां कर्मों में नहीं होता। तो उसके विशिष्ट कौनसे गुणस्थान में कौनसी प्रकृति कौनसे प्रकृति में संक्रमित होती है ये सारे नियम हैं। थोड़ा पढ़ना, आपको इतनी विशेष रुचि है, संक्रमण के ऊपर पूरी एक पुस्तक है। धवला में अभी मुझे याद नहीं उसके भाग का नंबर, पुस्तक का नंबर मुझे याद नहीं है। जयधवला, धवला में हैं ये सारी बातें। अभी हम आगे बढ़ेंगे, अपना यह विषय चल रहा है यहां पर, फिर देखते हैं हम कर्मपुद्गलपरावर्तन।

किसी जीव ने एक समय में आठ प्रकार के कर्मरूप जो पुद्गल ग्रहण किये, वे एक समय अधिक आवलीप्रमाण आबाधाकाल जाने के पश्चात् – अभी इसमें से आयुकर्म बंधने के बाद आवली में तो खिरनेवाला नहीं है, न उदय होनेवाला है। उसका उदय तो नेक्स्ट भव में जाकर होनेवाला है, वह तो अभी सत्ता में पड़े रहनेवाला है – तो **द्वितीयादि समयों में निर्जरारूप किये**। क्योंकि, आवली काल तक तो उदय नहीं था, उसके पश्चात् उदय हुआ और उसके बाद वे नहीं रहे, उसीको हम यहां निर्जरा कह रहे हैं। **पश्चात् जैसा अनुक्रम आदि से लेकर अंत तक नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में कहा**, जो हमने यहां देखा है – अगृहीत को अनंत बार ग्रहण करेगा, फिर एक बार जाकर मिश्र को ग्रहण करेगा; ये सभी जो चार पंक्तियां यहां बतायी हैं – जिस सीक्वेन्स से; जिस क्रम से वैसे लेना। यहां भेद-विशेषता क्या है? यहां कर्म के परमाणु ग्रहण कर रहा है। वहां औदारिकशरीर की निषेक रचना तो एक भवप्रमाण थी, एक आयुप्रमाण थी और कर्मों की निषेक रचना में तो अलग-अलग आठों प्रकार के कर्म बांधे हैं तो उनकी स्थितियां भी अलग-अलग बंधती हैं। मॅक्झिमम भी हम देखते हैं तो कोई ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक बंधा है, कोई ३० कोड़ाकोड़ी सागर तक, कोई २० कोड़ाकोड़ी सागर तक और यह ज़रूरी नहीं कि इतना उत्कृष्ट बंध हो। वह ७० कोड़ाकोड़ी सागर बांधनेवाला भी कभी अंत:कोड़ाकोड़ी का

बांधे, यह भी हो सकता है न? तो जिसकी जितनी अलग-अलग स्थिति पड़ सकती है। यानी यह भी नहीं है कि वह एक साथ कैसे आयेगी? क्या होगा? तो उसमें भी यह सभी व्हरायटी हो जायेगी। ऐसा अनुक्रम उनमें भी बनेगा, तब जाकर चार लाइन्स के सभी सीक्वेन्स पूरे होने के बाद उसका कर्मपुद्गलपरावर्तन पूरा हो जायेगा।

यहां लिखा है न, **पश्चात् जैसा अनुक्रम आदि से लेकर अंत तक**... यानी जैसा स्टार्टिंग से एण्ड तक – **नोकर्मद्रव्यपरावर्तन में कहा, वैसा ही अनुक्रम सर्व चारों परावर्तन संबंधी**, चारों परावर्तन यानी चार सीक्वेन्स जो बताये हैं, उन संबंधी इस **कर्मद्रव्यपरावर्तन में जानना। विशेष इतना** का अर्थ है, डिफरन्स इतना है, अंतर इतना है, **वहां नोकर्मसंबंधी पुद्गल थे**, यानी शरीरसंबंधी थे और **यहां कर्मसंबंधी पुद्गल जानने। अनुक्रम में कोई अंतर नहीं है। पश्चात् पहले समय में जैसे पुद्गल ग्रहे थे**, यहां कर्म की बात चल रही थी; आठों में, **वे ही पुद्गल**, पुद्गल वे ही होने चाहिये, **उसी भाव सहित** यानी उनकी पर्यायें भी वैसी ही होनी चाहिये; **चतुर्थ परावर्तन के अनंतर समय में ग्रहण होते हैं** – यह सब से लास्ट जो है, अंतिम चतुर्थ परावर्तन का अंत समय यहां पर है, उसके पश्चात् ग्रहण होते हैं – **सो यह सर्व मिला हुआ, संपूर्ण कर्मद्रव्यपरावर्तन जानना।**

श्रोता: यहां आठों कर्मों को लेना क्रम से, ऐसा कुछ है? क्रम से नहीं, आठ कर्मों का मिलकर जो कर्म का पुंज ग्रहण किया यानी कार्माणवर्गणा जो ग्रहण होकर आठ कर्मरूप हुयी उसके बारे में यह बात चल रही है। यहां तो वे पुद्गलपरमाणु जिस स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि पर्यायों सहित लिये थे यह उसकी बात चल रही है। *श्रोता: एक समयप्रबद्ध में कितना?* एक समयप्रबद्ध पूरा का पूरा। *श्रोता: द्रव्यकर्मपरावर्तन।* हां, कर्मद्रव्यपरावर्तन कहते हैं उसको यानी कर्म यानी द्रव्यकर्म की बात है और पहले हमने शरीर के परमाणु की बात देखी। *श्रोता: नोकर्म।* नोकर्म। *श्रोता: वहां एक ही शरीर को एक बार में लिया था औदारिक की बात हो रही है तो औदारिक के ही परमाणु?* परमाणु वही थे, यह समझाने के लिये हमने आपको औदारिक, वैक्रियिक के नाम लेकर बताया, हां। *श्रोता: लेकिन वहां से यहां परमाणु तो अनंतगुणे हैं तो काल भी अनंतगुणा लेना चाहिये?* नहीं-नहीं, काल अनंतगुणा नहीं लेना क्योंकि एक समय में अनंत उतने ही परमाणु ग्रहण करता है न जीव; और ऐसा स्थूलरूप से देखेंगे तो उदयरूप परमाणु में भी ऐसा है न? वैसा उदय होगा तो उस

जाति के परमाणु भी लिये जायेंगे। परंतु वे ही परमाणु लेने का कोई नियम नहीं है, उसमें कितना काल जाता है बस इतना बताना है। तो कर्मद्रव्यपरावर्तन के लिये भी इतना ही काल चला जाता है।

श्रोता: उसमें ऐसा भी समझ सकते हैं कि जैसे उन्होंने औदारिक कहा था कि वे ज्यादा परमाणु हैं, कर्म के ज्यादा परमाणु हैं, लेकिन उसका समयप्रबद्ध भी बड़ा है तो ज्यादा... वही तो, ज्यादा परमाणु तो ग्रहण होते ही हैं हर समय, काल तो उतना ही है। उसको गिनने के लिये दो तरीके हैं – या तो नोकर्म की तरफ से गिनो या कर्म की तरफ से गिनो। काल तो उतना ही कहने में आयेगा, वह उतना ही है। *श्रोता: कहां से, वह वन इज टू एट (१ : ८) हो गया, नोकर्म और कर्म?...* नहीं। यहां पर पूरा समयप्रबद्ध गिनना है हमको, एक-एक का अलग-अलग नहीं गिनना है; एक-एक कर्म का अलग नहीं गिनना है। वैसे तो उसकी अपेक्षा यह अनंतगुणा है, फिर भी भले ही अनंत हो, पर अनंत एक साथ ग्रहण कर रहा है न वह। *श्रोता: एक समयप्रबद्ध में आठ भाग होते हैं?* हां, एक समयप्रबद्ध में ग्रहण करने के पश्चात् हम कहेंगे वे अलग-अलग जाति की जो कार्माणवर्गणायें हैं उनके आठ कर्म बंधते हैं। परंतु... *श्रोता: परंतु वे अनंत होंगे न?* वह होने दो न, परंतु उसके हम, यहां तो केवल हम उसको कर्म की तरफ नहीं देखो, उन परमाणुओं की तरफ देखो। कौनसे परमाणु ग्रहण किये हैं? उनकी तरफ से देखो और वहां पर भी शरीर के उन परमाणुओं की तरफ से हमने देखा। हां, वे ही परमाणु उसी स्पर्श, रस, गंधादि के साथ ग्रहण होने चाहिये, यह बात वहां लेनी थी। क्योंकि, वहां भी तीन शरीर के हैं परंतु उन सबको आहारवर्गणा के रूप में हम देखेंगे। परमाणु वे ही के वे ही होने चाहिये।

श्रोता: हम सभी का काल समान बताते हैं, नोकर्मपरावर्तन और कर्मपरावर्तन का दोनों का काल समान बताते हैं। समान है। *श्रोता: तो ऐसा समझना कि जब वे परमाणु, नोकर्मपरमाणु, जब फिर से पूरा राउंड लेकर जब वे ही ग्रहण करेंगे उसी समय आठों ही कर्म, ये जो कर्म परमाणु हैं, मतलब आठ कर्मवाले वे भी वहां पर ऐसे के ऐसे ही आयेंगे?* हां, वहां पर ऐसे के ऐसे ही आयेंगे। दोनों को; क्योंकि जिस समय पुद्गलपरावर्तन शुरू किया था उस समय कर्म को गिनो या नोकर्म को गिनो, उनके परमाणुओं को यहां द्रव्य या पुद्गल कहा है। तो लौटकर जिस समय में फिर दोबारा वैसा संयोग हो जायेगा, *श्रोता: दोनों एक साथ में, मतलब?* हां, यह तो गिनने की दोनों पद्धति हैं। हां, गिनने का यह

तरीका है। एक साथ होते हैं का अर्थ क्या है? उतना ही काल इसको भी लगता है। *श्रोता: दोनों की वर्गणायें अलग-अलग हैं? एक में आहारवर्गणा है, एक में कार्माणवर्गणा है?* कार्माणवर्गणा है। पुद्गलपरमाणु की तरफ से हम उसको देख रहे हैं। *श्रोता: जिसके कार्माणवर्गणा है, उसकी पर्याय को हम गौण करते हैं। उसका अनुभाग जो है वह भी पर्याय में आयेगा, लिया जायेगा?* हां, वह सब लिया जायेगा उसके अंदर; हां, क्योंकि वैसे ही उसी जाति के उसमें स्पर्श, रस, गंध तो लेना ही लेना, अन्य भी सभी, क्योंकि सभी पर्यायें लेंगे न हम उसमें। *श्रोता: उसकी गिनती कहां से शुरू करें हम? कार्माणवर्गणा की?* कार्माणवर्गणा कभी भी ले सकते हैं हम। विग्रहगति में तो आठ कर्म नहीं बंधते हैं। *श्रोता: पहला समय।* विग्रहगति में? पहला समय यानी उस परावर्तन का काउंट करने का पहला समय। पहला समय कहीं से भी ले तो आठ कर्म तो नहीं होंगे। आयु कर्म का बंध तो न विग्रहगति में होता है, न दो तिहाई बीतने तक होता है। अगर हमें आठ कर्म कहना है तो जब आयु का बंध होता है तब कहना पड़ेगा। ख्याल में आयी बात?

आगे की बात हमने पढ़ी थी फिर भी देख लेते हैं। **पुनश्च यहां इतना जानना** – यह डॅश है मिला क्या? वह 'न्ह' छपा है वहां डॅश है। पुरानी पुस्तकों में डॅश है, नयी पुस्तकों में वहां 'न्ह' अक्षर आया है। पुरानी पुस्तक ट्रेसिंग के ऊपर से प्रिंट हुयी थी, इस बार उसकी पीडीएफ बनाकर प्रिंट की है तो उसमें डिफरन्स आया था। (तीसरी आवृत्ति में उसे भी सुधारा है।) **पहले जो क्रम कहा** वैसे जैसे **पहले** जो **अनंत बार अगृहीत का ग्रहण कहा, वहां बीच-बीच में गृहीत ग्रहण और मिश्र ग्रहण भी होता है, परंतु अनुक्रम में तो पहली बार, दूसरी बार आदि जो अगृहीत ग्रहण हो, वही गिनने में आता है**। यह क्लिअर हुआ न? बीच में तो गृहीत और मिश्रवाला ही बहुत बार हुआ होगा, परंतु उसको क्रम में नहीं गिनना। अनुक्रम तो जो उन्होंने बताया वही, जब वही आयेगा तभी उसको गिनना। बाकी अक्रम से आयेगा तो उसका काल गिनना, उसको क्रम में नहीं गिनना। **तथा काल प्रमाण में गृहीत, मिश्र ग्रहण के समयों सहित सर्व काल गिनने में आता है। जिन समयों में गृहीत का ग्रहण है, वे समय गृहीत ग्रहण के काल में गिनने में आते हैं। जिन समयों में मिश्र का ग्रहण होता है, वे समय मिश्र ग्रहण के काल में गिनने में आते हैं। जिन समयों में अगृहीत ग्रहण होता है, वे समय अगृहीत ग्रहण के काल में गिनने में आते हैं। सो यह उदाहरण कहा है, ऐसे ही सर्वत्र जानना। क्रम में**

तो जैसा अनुक्रम कहा है, वैसा हो तभी गिनने में आता है। यह मुख्य बात ख्याल में आयी ?

यह तो क्रम और अक्रम सभी होते रहेंगे, पर जब-जब उन्होंने बताया हुआ क्रम होगा तब हम उसको गिनेंगे और अक्रम में, अक्रम का काल गिनेंगे और अनुक्रम में तो केवल उनके अनुक्रम जैसा अनुक्रम होगा तभी उसको गिनेंगे। *श्रोता: ये अनंत हैं तो गिनती ही नहीं होगी, अनंत की ?* हां, अनंत हैं, गिनती नहीं होती है फिर भी अनंत यह तो केवलज्ञानी के प्रत्यक्षज्ञान का विषय है। अनंत हैं उसकी हम-आप गिनती नहीं कर सकते। केवलज्ञानी के ज्ञान में वह गिनती न हो, यह बात तो हो ही नहीं सकती। ख्याल में आती है बात ? नहीं तो वह सर्वधारा बनेगी नहीं। यह सर्वधारा क्या होती है ? क्या पता! पहली पुस्तक – समय हो गया अभी दो ही मिनट बाकी हैं। पर्याप्तिप्ररूपणा निकालना। पेज नंबर है २२६। देखो, संख्या कहां से कहां तक है ? एक से लेकर, दो, तीन, चार, पांच, छह... । कब तक होगी ? *श्रोता: केवलज्ञान तक।* केवलज्ञान तक! केवलज्ञान के जो अविभागप्रतिच्छेद हैं वह सर्वोत्कृष्ट संख्या है, उसमें कुछ ॲड नहीं हो सकता, कुछ मल्टिप्लिकेशन नहीं होता, सबसे बड़ी संख्या वही है।

तो कहते हैं **यह सभी संख्यातादि भेद** – संख्यातादि यानी संख्यात, असंख्यात और अनंत के सभी भेद। *श्रोता: पेज कौनसा है ?* २२६, सर्वधारा लिखा है, यह चौदह धारा में से एक धारा। **वे एक से लेकर ऐसे सर्व संख्याविशेषरूप वह सर्वधारा है**, यहां लिखा है न ? कि **इस धारा का प्रथम स्थान एक प्रमाण**, दूसरा पॅरेग्राफ है, **द्वितीय स्थान दो प्रमाण, तृतीय स्थान तीन प्रमाण** है, यानी तीन का अंक। **इसतरह एक-एक से बढ़ते हुये केवलज्ञान तक जानना**। यानी सभी अनंतानंत भेद आयेंगे न ? उसमें एक-एक से बढ़ेंगे कि नहीं बढ़ेंगे ? तो केवलज्ञान में उसकी जानकारी तो होगी ? अवश्य होगी, हां। चलो, अपना यहां विषय समाप्त होता है, समय भी।

श्रोता: एक प्रश्न है। ज़रा आप लिखकर देना। अपने दूसरे लेक्चर में उसकी विशेष चर्चा करेंगे। अब यहीं रुकेंगे हम ।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१४. क्षेत्रपरावर्तन – जीवों की अवगाहना

षट्खण्डागम के आधार से यहां अपनी काल अनुयोगद्वार की कुछ चर्चा चल रही है, उसमें पंच परावर्तन का अपना विषय चल रहा है क्योंकि यह काल गिनने का एक माप है। यह जीव, यह जीव कहने से हम-आप सब, वर्तमान में हैं न हम? मैं हूं कि नहीं यह क्या पूछना पड़ता है किसीको? देखो, मैं हूं यह एहसास हर जीव को है; वह किसीसे पूछना नहीं पड़ता कि मैं हूं कि नहीं हूं। भ्रमणा कहां है? – मैं कौन हूं, इसके बारे में भ्रमणा है। क्योंकि हर समय जीव को ज्ञान हो रहा है और अपने को ज्ञान होता है कि नहीं होता है वह बाजूवाले को नहीं पूछना पड़ता। मुझे भूख लगी, मुझे रोना आया, मुझे यह विषय बहुत कठिन लगता है – यह किसको समझ में आता है? अपने को ही समझ में आता है। तो कहते हैं यह तो ज्ञान यानी मैं हूं, और मैं जान रहा हूं या जान रही हूं यह हर एक के अनुभव की बात है। भ्रमणा कहां हो गयी? मैं कौन हूं? जब तक यह भ्रमणा चल रही है तब तक इस जीव का इस संसार में परिभ्रमण चल रहा है।

जिनके सम्यग्दर्शन हुआ है वे तो कुछ काल के अंदर मोक्ष चले ही जाते हैं नियम से, उसके लिये मॅक्झिमम लिमिट कितनी देखी हमने? *श्रोता: अर्धपुद्गलपरावर्तन।* अर्धपुद्गलपरावर्तन; वह भी किसके कि जो कोई सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में चला जाये तो की बात है। यह कोई जरूरी नहीं कि उसको मिथ्यात्व में जाना पड़े और इतना घूमना पड़े। तो यह अर्धपुद्गलपरावर्तन क्या है? वह देखने के लिये हम पूरा परावर्तन क्या है उसको देख रहे थे। यह तो सम्यग्दृष्टि की बात हुयी, परंतु मिथ्यादृष्टि अनादि से आज तक कितने परावर्तन पार करके आये हैं? तो पांचों ही परावर्तन। तो उसमें से जिसका सबसे छोटे में छोटा घूमने का यानी परावर्तन का काल है वह है पुद्गलपरावर्तन अर्थात् द्रव्यपरावर्तन। उसका तो हमने विस्तार से स्वरूप देख लिया है; आप कहेंगे अभी कंटाला आ गया है; जरा दूसरा भी परावर्तन करें। पांचों एक साथ कर रहे हैं हम। तो अभी हम क्षेत्रपरावर्तन को देखने जा रहे हैं।

यह क्षेत्र क्या होता है? उसकी भी बात करेंगे, क्षेत्र किसको कहना? *श्रोता: आकाश के प्रदेश को।* आकाश के प्रदेश को, क्या जीव को अपना क्षेत्र है कि नहीं है? *श्रोता: है,*

है। आकाश का प्रदेश वह तो हमारे लिये परक्षेत्र हुआ। हम कहां रहते हैं? तो हम अपना ॲड्रेस बताते हैं। परंतु हम कहां रह रहे हैं? हम अपने क्षेत्र में रह रहे हैं। यह बाहर के क्षेत्र में रहते हैं यह तो रिलेटिव्ह टर्मिनॉलॉजि है, यह तो आकाश की अपेक्षा हम कहां रह रहे हैं वह कहते हैं; परंतु हम आकाशद्रव्य में रहते हैं या आकाश ने हमें अवगाहना दी ऐसा कहने में आता है; हम लोकाकाश में रहते हैं ऐसा कहेंगे परंतु हमारा क्षेत्र क्या है यानी प्रत्येक जो द्रव्य है उसका अपना कुछ सब्स्टन्स है कि नहीं? वह कितना बड़ा है? प्रत्येक द्रव्य का अपना व्हाल्यूम, उसका अपना विस्तार कितना है? *श्रोता: शरीर जितना।* पुद्गल के कितने शरीर हैं? हम प्रत्येक द्रव्य की बात कर रहे हैं, जीव की नहीं। प्रत्येक द्रव्य का अपना विस्तार है; धर्मद्रव्य का विस्तार कितना है? *श्रोता: लोकप्रमाण असंख्यात। अन्य श्रोता: लोकाकाश जितना।* तो शरीरप्रमाण कहेंगे कि नहीं कहेंगे? *श्रोता: नहीं।* नहीं कहेंगे।

जीवद्रव्य का विस्तार कितना है? अब शरीरप्रमाण कहेंगे तो सिद्ध भगवान को शरीर नहीं है। यहां तो हम द्रव्य की अपेक्षा बात कर रहे हैं। तो हर एक द्रव्य का अपना-अपना जो क्षेत्र है, अपना-अपना जो विस्तार है वह कितना है? उसको नापने का क्या तरीका है, तो उसको नापेंगे किसमें, उसका यूनिट क्या है? तो प्रदेशों में नापेंगे। प्रदेश कितना बड़ा है? जितना एक परमाणु का आकार है; जितना वह बड़ा है वही एक प्रदेश का आकार है। एक परमाणु जितना क्षेत्र रोकता है उसको एक प्रदेश कहेंगे हम। तो यह प्रदेश कितना सूक्ष्म है? परमाणु जितना है न, तो कालद्रव्य का आकार कितना है? *श्रोता: एक प्रदेश।* एक प्रदेश; आकार कहो, क्षेत्र कहो यहां आकार यानी शेप की बात नहीं है; आकार यानी उसका विस्तार, उसका क्षेत्र कितना है? तो इस विश्व में छह द्रव्य हैं तो छहों द्रव्यों का अपना-अपना कुछ न कुछ विस्तार है। तो हम पहले अपनी बात करेंगे।

हम जीवद्रव्य हैं तो हमें अपना कुछ विस्तार, अपना कुछ क्षेत्र है कि नहीं? हमारा अपना जो आत्मद्रव्य उसके जो प्रदेश हैं वे कितने हैं? तो आत्मा कितने प्रदेशों में फैला हुआ है या उसके अपने प्रदेश कितने हैं? *श्रोता: असंख्यात।* हां, असंख्यात। तो कितने असंख्यात हैं? *सभी श्रोता: लोकप्रमाण असंख्यात।* लोकप्रमाण असंख्यात। लोकाकाश में जितने प्रदेश हैं, एक जीव के प्रदेश पूरे फ़ैल जाये; कभी फैलते हैं क्या इतने बड़े? *सभी श्रोता: केवली समुद्घात में।* केवली समुद्घात में, तो लोकाकाश के सभी प्रदेशों पर वह

पूरा आत्मा यानी पूरे वह ३४३ घनराजूरूप जो लोकाकाश है; सर्वत्र उसके प्रदेश फैले रहते हैं। एक जीव के प्रदेश कितने हैं? तो जितने लोक में प्रदेश हैं उतने एक जीव के अपने आत्मा के प्रदेश हैं, यह ख्याल में आती है बात? प्रत्येक द्रव्य का अपना स्वयं का विस्तार है। तो एक-एक जीव का विस्तार, एक-एक जीव के आत्मप्रदेश कितने हैं? तो लोकप्रमाण असंख्यात हैं। लोकप्रमाण कहने का कारण यह है कि लोक में जितने असंख्यात प्रदेश हैं उतने ही असंख्यात प्रदेश प्रत्येक जीव के अपने हैं। वह जीव का जो सब्स्टन्स है, आत्मप्रदेश जिसको हम कहेंगे वह इतना बड़ा है। ऐसे कितने जीव हैं? *श्रोता: अनंत।* अनंत जीव हैं, हर एक में कितने प्रदेश हैं? असंख्यात। यानी एक-एक जीव के प्रदेश लोक जितने हैं और ऐसे अनंत जीव, हर एक के लोक जितने प्रदेश और रहते कहां हैं? लोक जितने क्षेत्र में। तो सब इतने प्रसरे हुये हैं क्या? तो नहीं। क्या होता है? *श्रोता: संकोच-विस्तार।* संकोच विस्तार होता है यानी अभी जो देहधारी हैं उनके आत्मप्रदेश जो हैं वे कितने क्षेत्र रोकते हैं? अभी ये कितना क्षेत्र रोकते हैं यह हम पूछेंगे यानी आकाश का कितना क्षेत्र रोकते हैं? कितने स्पेस में अभी वे फिट हैं, कितना क्षेत्र वे ऑक्युपाय करते हैं? तो आप क्या कहेंगे? *श्रोता: असंख्यात प्रदेश।* असंख्यात प्रदेश, परंतु देहप्रमाण अभी कहेंगे हम उसको।

देहधारी जीव ने अभी कितना क्षेत्र रोका है? तो देहप्रमाण। चींटी है तो उसने इतना क्षेत्र रोका है, हाथी है तो इतना क्षेत्र रोका है। तो चींटी कितना क्षेत्र रोकती है? वह आकाश का कितना क्षेत्र रोकती है? *श्रोता: असंख्यात प्रदेश।* असंख्यात प्रदेश और हाथी? *श्रोता: असंख्यात प्रदेश।* ये दोनों असंख्यात समान हैं या अलग-अलग हैं? *श्रोता: समान हैं। अन्य श्रोता: अलग अलग।* समान कैसे हैं? यह चींटी का आकार इतनासा है और यह हाथी का आकार भी उतना? हम आकाश के प्रदेशों की बात कर रहे हैं। चींटी एक मिलिमीटर जितनी एरिया में रहती है और हाथी इतनी बड़ी एरिया में रहता है ये दोनों समान हैं कि अलग हैं? *कुछ श्रोता: समान हैं। अन्य श्रोता: अलग-अलग।* समान हैं? हम आकाश के प्रदेशों की बात कर रहे हैं। देखो, वह कितनी जगह व्याप रहा है? जगह कह रहे हैं हम; आत्मा के कितने प्रदेश हैं ऐसा नहीं पूछा। *श्रोता: आकाश के प्रदेश।* फिर से सुनना – चींटी के आत्मा के प्रदेश कितने हैं तो लोकप्रमाण असंख्यात हैं और हाथी के कितने हैं? उतने ही, लोकप्रमाण असंख्यात हैं; दोनों के आत्मप्रदेशों की संख्या में कोई डिफरन्स नहीं

है। संख्या में डिफरन्स नहीं है, परंतु वे जगह कितनी रोक रहे हैं? तो चींटी तो इतनीसी है वह इतनासा क्षेत्र यानी जगह रोक रही है और हाथी तो इतना बड़ा क्षेत्र रोकता है। क्योंकि हमने जिनको देखा है ऐसे उन दोनों को लेना है न? निगोद भी हमने नहीं देखा और महामत्स्य भी हमने नहीं देखा इसलिये हमने हाथी की और चींटी की बात की, हं? यह बात समझ में आती है? इसको अवगाहना कहेंगे।

जीव ने कितना क्षेत्र वर्तमान में रोका है तो उसको हम उसकी अवगाहना कितनी है ऐसा कहेंगे और उसके प्रदेश कितने हैं? तो असंख्यात; कितने असंख्यात? तो जितने लोक में हैं उतने हैं संख्या में; परंतु अभी कैसे हैं वे? संकुचित हैं; कितने क्षेत्र में? अपने देहप्रमाण में। तो इसमें जो प्रदेशों का संकोच-विस्तार होता है, क्यों होता है? ऐसी कोई आत्मा में शक्ति है क्या संकोच-विस्तार करनेवाली? *श्रोता: असंकुचितविकासत्व शक्ति।* हां, मुझे यही एक्पेक्टेड था; आपका कहना है असंकुचितविकासत्व शक्ति है; आत्मा की शक्ति क्योंकि हमने ४७ शक्तियों में नाम गिना है उसका, है न! ४७ शक्तियां मालूम हैं कि नहीं? हं? नहीं मालूम? कौनसी हैं? जीवत्व, चिति, दृशि, ज्ञान, सुख, वीर्य, प्रभुत्व, विभुत्व, सर्वदर्शित्व, सर्वज्ञत्व, स्वच्छत्व, प्रकाशत्व, असंकुचितविकासत्व – वही इन्होंने कही है। *श्रोता: नहीं।* अभी आगे देखिये न। असंकुचितविकासत्व, अकार्यकारणत्व, परिणम्यपरिणामकत्व, त्यागोपादानशून्यत्व, अगुरुलघुत्व, उत्पादव्ययध्रुवत्व, परिणाम शक्ति, अमूर्तत्व, अकर्तृत्व, अभोक्तृत्व, निष्क्रियत्व, नियतप्रदेशत्व, स्वधर्मव्यापकत्व, साधारण-असाधारण-साधारणासाधारणधर्मत्व, अनंतधर्मत्व, विरुद्धधर्मत्व, तत्त्व, अतत्त्व, एकत्व, अनेकत्व, भाव, अभाव, भावअभाव, अभावभाव, भावभाव, अभावअभाव, भाव शक्ति, क्रिया शक्ति, करण शक्ति, कर्तृ शक्ति, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण और संबंध। ये सब आत्मा की कैसी शक्तियां हैं? शुद्ध परिणमनेवाली हैं।

इनमें से आप कहते हैं असंकुचितविकासत्व से प्रदेशों का संकोच विस्तार होता है – क्या यह बात सही है या नहीं है? *श्रोता: नहीं है।* हं? *श्रोता: 'अ' यानी नहीं।* 'अ' यानी नहीं; तो असंकुचितविकासत्व शक्ति क्या बताती है? *श्रोता: आत्मा के प्रदेश घटते नहीं और बढ़ते नहीं।* नहीं; आत्मा के प्रदेश घटते भी नहीं हैं और बढ़ते भी नहीं हैं यह उसका कार्य नहीं है। असंकुचितविकासत्व का कार्य यह है कि संकोच वगरनो (बिना का) विकास किसका? सभी गुणों का। ज्ञान गुण है तो उसका विकास कितना होगा? कितना विकास

करने की आत्मा में शक्ति है? अमर्यादित यानी केवलज्ञान प्राप्त करने की शक्ति है। प्रत्येक गुण में जितनी अमर्याद शक्ति है वह पर्याय में पूर्णपणे विकसित हो ऐसी असंकुचितविकासत्व शक्ति आत्मा में है। अविकासत्व नहीं; संकोच वगरनो विकास यानी अमर्याद जो उसकी शक्ति है वह प्रगट हो ऐसी आत्मा में ही शक्ति है। हमारे ज्ञान में कितनी शक्ति है वह पर्याय में पूरी-पूरी प्रगट हो ऐसी हमारे में ही शक्ति है, इसलिये यहां से ही केवलज्ञान की उत्पत्ति होनेवाली है। यहां जो प्रदेश संबंधी बात है, यह जो संकोच विस्तार होता है यह कौनसी शक्ति है? *श्रोता: नियतप्रदेशत्व।* आप कह रहे हैं नियतप्रदेशत्व, नियतप्रदेशत्व का कार्य यह नहीं है। यह संकोच और विस्तार होना यह आत्मा का विभाव है। ४७ शक्तियों में कोई उसकी शक्ति नहीं है। *श्रोता: असंकुचितविकासत्व शक्ति?* असंकुचितविकासत्व का कार्य नहीं है वह, हां।

श्रोता: इसके लिये कोई गुण नहीं है? हां, यह गुण का कार्य नहीं है। यह तो संसार अवस्था में संकोच-विस्तार होता रहता है। अगर वह गुण का कार्य होता तो सिद्ध भगवान में भी संकोच-विस्तार होता रहता परंतु सिद्धों में तो होता नहीं। आत्मप्रदेशों के संकोच और विस्तार में कर्म के उदय का जो निमित्त बनता है, उसकी हम चर्चा नहीं करेंगे। तो यहां जो देह धारण किया है उस देहप्रमाण, आत्मा के प्रदेश उसमें समा जाते हैं। तो प्रदेश छोटे होते हैं कि नहीं होते हैं? *श्रोता: नहीं।* यहां तो लिखा है न, प्रदेशों का संकोच होता है; तो क्या होता होगा? *श्रोता: ओव्हरलॅप।* ओव्हरलॅप होता है। आत्मा के प्रदेश अपने आपको अवगाहना देंगे कि नहीं एक दूसरे को? नहीं तो कैसे समा जायेंगे? देखो, प्रदेश तो उसीको कहते हैं जो छोटे में छोटा है उसको प्रदेश कहेंगे। वह प्रदेश और छोटा हो जाये यह तो बन नहीं सकता और आत्मा के प्रदेश जितने हैं उतने तो कायम रहते हैं। आत्मा के प्रदेशों में एक प्रदेश भी हीनाधिक नहीं होता, क्यों नहीं होता? अब आप बताना – वह नियतप्रदेशत्व शक्ति है; जितने असंख्यात प्रदेश हैं वे अनादि से उतने ही हैं और उतने ही रहनेवाले हैं कायम, भले वह कितनी छोटी-बड़ी देह धारण करे – प्रदेशों की संख्या तो उतनी ही रहती है। हां, वे कम जगह में समा जाते हैं यानी क्या? तो कहेंगे वहां ओव्हरलॅप हो गये यानी सुपरइंपोज हो गये, ख्याल में आया?

यानी उन्होंने अपने प्रदेशों को भी एक दूसरे में अवगाहना दी। ऐसे स्प्रेड थे और फिर अवगाहना देकर एकमेक में समा गये। यह तो आकाश के प्रदेशों की ऐसी शक्ति है।

हम उदाहरण देखते हैं, यह हाथरुमाल हमने फोल्ड किया; फोल्ड किया फिर भी उसका एक-एक लेअर सेपरेट है। ऐसा नहीं है कि वे एकमेक हुये हो। जैसे एक ही प्रदेश में समा जाते हैं यानी आत्मा के प्रदेश अपने स्वयं के अन्य प्रदेशों को भी अवगाहना तो देंगे। जैसे एक निगोद शरीर इतना छोटा है – मान लेते हैं, सूई की नोंक जितना है – उसमें जीव कितने रहते हैं? *श्रोता: अनंत।* अनंत, तो वहां एक जीव के प्रदेश दूसरे जीव के प्रदेशों को अवगाहना देते हैं कि नहीं देते हैं? तभी तो अनंत जीव एक ही जगह में समा जायेंगे। ऐसे ही वह निगोद का शरीर इतना छोटा है तो प्रत्येक जीव के प्रदेश उतने में समा जाते हैं, वे तो पूरे लोकाकाश जितने हैं और अभी इतनी छोटीसी जगह में आ गये। आ गये यानी क्या हो गये? वह उसने अपने ही प्रदेशों को एक दूसरे में अवगाहना दी कि नहीं दी?

मान लेते हैं पूरा लोकाकाश एक हजार प्रदेशवाला है; मान लेते हैं हं, आपको समझाने के लिये; यानी जीव के प्रदेश भी एक हजार मानेंगे और लोकाकाश को भी एक हजार प्रदेशी मानेंगे। अभी उस जीव को दस प्रदेश में समा जाना है। पूरा कितना प्रदेशी है? एक हजार प्रदेशी है। लोकाकाश भी एक हजार प्रदेशी है मान लेते हैं और जीव भी एक हजार प्रदेशी है क्योंकि लोकाकाश जितना वह बड़ा है। अब उसको दस प्रदेश रोकना है तो क्या होगा? आकाश के एक-एक प्रदेश में उसके कितने प्रदेश आयेंगे? *श्रोता: सौ प्रदेश।* सौ आयेंगे न? क्योंकि एक हजार का दस यह कितना भाग है, तो सौवां भाग है। अभी दस की बात छोडो, बहुत गहरी हो रही है। अभी इतना बड़ा लोकाकाश था देखो हाथरुमाल जितना, हं, और उसके आधे प्रमाण जीव की अवगाहना होती, देखो यह हाथरुमाल हम आधा फोल्ड करते हैं तो एक-एक प्रदेश पर जीव के कितने-कितने प्रदेश आ जाते? *श्रोता: डबल-डबल। अन्य श्रोता: दो-दो।* दो-दो; हां हाथरुमाल और आधा फोल्ड करते हैं यानी $\frac{१}{४}$ करेंगे तो? *श्रोता: चार-चार।* चार-चार प्रदेश। हाथरुमाल और आधा फोल्ड करते हैं यानी $\frac{१}{८}$ करेंगे तो? *श्रोता: आठ-आठ।* आठ-आठ; हं $\frac{१}{१०}$ करेंगे तो? दस-दस। $\frac{१}{\text{असंख्यात}}$ करेंगे तो? *श्रोता: असंख्यात प्रदेश।* असंख्यात प्रदेश। तो जीव कितनी भी छोटी अवगाहना धारण करे तो एकप्रदेशी तो नहीं होता। जीव की छोटे में छोटी अवगाहना घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण है; वह भी असंख्यात प्रदेश व्यापता है। लोकाकाश में भी असंख्यात प्रदेश हैं। परंतु उस पूरे लोकाकाश के असंख्यात का; हम इस पेपर क्लिप

को लेते हैं; यह असंख्यातप्रदेशी है वह कितना भाग है? असंख्यातवां भाग है। हमारी-आपकी देह है वह लोकाकाश की अपेक्षा उसके कितने भागप्रमाण है? असंख्यातवें भाग प्रमाण है। तो आकाश के एक-एक प्रदेश पर हमारे कितने प्रदेश स्थित हैं? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात प्रदेश, ख्याल में आती है यह बात?

यदि जीव पूरा फ़ैल जाता है तो पूरे लोकप्रमाण हो जाता है जैसे केवली समुद्घात में होता है अब उसके असंख्यातवें भागप्रमाण हमारी देह है तो उस आकाश के एक-एक प्रदेश पर हमारे असंख्यात-असंख्यात प्रदेश हैं यानी हमने ही अपने ही असंख्यात प्रदेशों को एक प्रदेश में अवगाहना दी है। यह भी होता है न उसमें? समझ में आती है न यह बात? क्योंकि प्रदेश तो छोटा नहीं होता है। जिसे प्रदेशों का संकोच-विस्तार कहते हैं उसका अर्थ है वे प्रदेश कितने क्षेत्र में फैलते हैं, कितने छोटे या बड़े क्षेत्र में समा जाते हैं, परंतु इसका अर्थ ऐसा नहीं है कि प्रदेश छोटे या बड़े होते हों। प्रदेश ही हम उसको कहते हैं जो सबसे छोटे में छोटा अंश है। इसीको नियतप्रदेशत्व शक्ति में स्वामीजी ने इसको बहुत विस्तार से खोलकर बताया है। उन्होंने भी ऐसे ही उदाहरण देकर कि लोकाकाश का आधा करो, $\frac{१}{४}$ करो यह सब उसमें बताया है। *श्रोता: नियतप्रदेशत्व शक्ति?* नियतप्रदेशत्व शक्ति – वह आत्मवैभव पुस्तक में भी है, आत्मप्रसिद्धि पुस्तक है उसमें भी है; प्रवचनरत्नाकर का ग्यारहवां भाग है उसमें भी है। यह नियतप्रदेशत्व शक्ति की बात ४७ शक्तियों के जो-जो प्रवचन हैं, उन सब जगह यह बात आपको मिलेगी।

श्रोता: हम तो समझते थे कि आप करणानुयोग की ही जानकार हैं पर द्रव्यानुयोग की भी बात बोल रही हैं? देखो, द्रव्यानुयोग को पूरा निचोड़कर फिर हम करणानुयोग की तरफ मुड़े हैं। हां, इ.स. १९७५ से हमारा जैन तत्त्वज्ञान का अभ्यास शुरू हुआ था। इ.स. १९९२ तक तो ऐसा एक भी शास्त्र नहीं रहा है द्रव्यानुयोग का और उन पर हुये स्वामीजी के प्रवचनों का; जो हमने अनेकों बार नहीं पढ़ा हो। इ.स. १९९२ से हम दोनों ने रिटायरमेंट ली है स्वाध्याय के लिये और डेली साढ़े आठ घंटे हम दोनों का स्वाध्याय चलता रहा। पहले तो हम अपने लिये ही करते थे, फिर लोग जबरदस्ती करने लगे तो औरों के लिये भी करना पड़ा। क्यों? उसमें भी, दूसरों को सिखाने में भी हमारा कल्याण है क्योंकि उसमें हमारे उपयोग की भी सूक्ष्मता होती है और उसमें गहरायी से हम विचार भी करते हैं क्योंकि आप लोग प्रश्न पूछेंगे तो उसके उत्तर भी सोचने पड़ेंगे कि नहीं पड़ेंगे? हं?

श्रोता: संकोच-विस्तार जीव का विभाव है और जीव का ॲक्चुअल साइझ जो है वह लोकप्रमाण असंख्यातप्रदेशी है; हां, *सिद्ध जो हैं वे भी किंचित् न्यून पुरुषाकार हैं; वह भी विभाव है?* आपका प्रश्न बहुत अच्छा है। उन्होंने क्या पूछा सुनायी दिया आपको? कि संकोच होना और विस्तार होना यह तो जीव का विभाव है और सिद्ध अवस्था में तो उनका किंचित् न्यून पुरुषाकार है, उनकी जो अंतिम देह थी उस देहप्रमाण से किंचित् न्यून प्रमाण है तो क्या उनके भी यह विभाव कहलायेगा? क्योंकि स्वभावरूप होंगे तो लोकाकाशप्रमाण हो जाते। यह जो विभाव है उसमें निमित्त कौन होता है? तो कर्म का उदय है। उनकी अंतिम देहप्रमाण जो अवगाहना थी उससे किंचित् न्यून अवगाहना हो जाती है क्योंकि आत्मप्रदेश सर्वत्र नहीं फैले हुये हैं उसकी अपेक्षा वह आकार तो किंचित् न्यून हो गया, परंतु अब वह आकार बदलने के लिये वहां कोई प्रयोजन नहीं रहा। यह पूरा फ़ैल जाये तो ही स्वभाव है और छोटा-संकुचित है तो विभाव है ऐसा नहीं है। कर्म के उदय के अनुसार, संस्थान नाम का नामकर्म है उसके अनुसार हमारे जो आकार छोटे-बड़े होते हैं तो वहां सिद्धों में तो ऐसा कोई प्रयोजन, कोई निमित्तरूप से भी कुछ नहीं रहा है। इसलिये अंतिम देह के आकार से जो किंचित् न्यून जो आत्मप्रदेशों का अपना आकार है उसरूप से वे रहते हैं वह उनकी स्वभावपर्याय ही है। उसको हम प्रदेशत्व गुण का स्वभाव यानी स्वभावव्यंजनपर्याय कहेंगे। अरिहंत अवस्था के अंतिम समय तक वह विभावव्यंजनपर्याय थी, सिद्ध होते ही उसको स्वभावव्यंजनपर्याय कहेंगे। आकार में तो बहुत ज्यादा कुछ बदलाव नहीं आया है फिर भी जब तक देहप्रमाण थे तब तक तो विभाव था क्योंकि कर्म का उदय भी वहां निमित्तरूप से होता था। तो यह नियतप्रदेशत्व की भी बात हमने देखी है। यह जानना बहुत जरूरी है क्योंकि प्रदेश छोटे-बड़े नहीं होते हैं; वे कम स्पेस में या अधिक स्पेस में आ जाते हैं, इसे अवगाहना कहते हैं। जीव जितने आकाश के प्रदेश रोकता है उसको उसकी अवगाहना कहने में आती है और अभी हम संसारी जीवों की बात कर रहे हैं।

अब यह क्षेत्रपरावर्तन जब देखने जा रहे हैं उसमें भी स्वक्षेत्रपरावर्तन और परक्षेत्रपरावर्तन – दो प्रकार से इसको समझायेंगे। स्वक्षेत्र यानी जीव ने जो अवगाहना धारण की है उसको स्वक्षेत्र कहेंगे और परक्षेत्र में आकाश के किस प्रदेश में वह उत्पन्न हुआ है, कहां उसका जन्म हुआ है उसकी अपेक्षा परक्षेत्र को हम देखेंगे और दोनों ही पद्धति से इसकी यानी

काल की गिनती करेंगे। ख्याल में आया? पुद्गलपरावर्तन में तो हमने परमाणु कौनसे ग्रहण करते हैं? उनकी क्या अवस्था है? उसकी बात देखी थी। अब यहां तो केवल क्षेत्र कितना रोकता है; अवगाहना क्या है; उसकी अपेक्षा इसकी बात चलेगी। यह अवगाहना किसको कहते हैं उसको भी जरा देख लेते हैं हम, हं! जीवकाण्ड ९४ गाथा, पेज नंबर है १७७, पहली पुस्तक। अब दोपहर से जैन भूगोल की भी पुस्तक साथ में लाना हां, क्योंकि सब लोग आकुलित हो रहे हैं, हमने जैन भूगोल पुस्तक तो ले ली, इन्होंने ऐसे ही पटक दी हमारे हाथ में। तो कहते हैं नहीं, अभी वह बहुत काम आनेवाली है। आपको बहुत बोझा नहीं उठाना पड़े इसलिये हमने दो दिन तो उसको नहीं लाने को बोला था, अभी आपको लाना है। *श्रोता: जीवकाण्ड भी लाना?* हां, यह जीवकाण्ड भी साथ में रखना है। हं? अभी दो-दो पुस्तकों के वजन से तो आप परिचित होंगे। अभी एक जरा थोड़ीसी-हलकीसी, तीसरी पुस्तक भी लाना साथ में। ९४ गाथा के ऊपर लिखते हैं देखो –

आगे शरीर की अवगाहना के आश्रय से जीवसमासों को कहने का मन है जिसका, ऐसे आचार्य, क्या कहते हैं? शरीर की अवगाहना अभी बतायेंगे और किसको कहेंगे? जीवसमासों को। यह जीवसमास क्या होता है? यह तो मालूम नहीं है न हमको? तो जीवों के ग्रुप्स बनायेंगे; समास यानी उसका समूह। किसी विशिष्ट अपेक्षा से हम जीवों को एकत्रित करेंगे – समानधर्म की अपेक्षा से, उसको जीवसमास कहेंगे। देखो, यह जीवसमास की ही प्ररूपणा है, प्ररूपणा यानी विशेष व्याख्यान है जो यहां शुरू हुआ है १६० पृष्ठ पर। देखो, यहां देखते हैं जीवसमास किसको कहना? क्योंकि हम ऐसे ही पढ़ जायेंगे, तो आप सोचोगे कि जीवसमास क्या होता है? होता होगा कुछ तो! क्योंकि जब हम शास्त्र पढ़ने को लेते हैं, तब कुछ शब्द, कुछ गणित ख्याल में नहीं आते तो हम उनको ऐसा ही छोड़ देते हैं। होगा कुछ, तो चलो आगे, तो क्या लिखते हैं हम देखेंगे, समझेंगे। यह जीवसमास क्या है? उसको देखेंगे। ७० गाथा की टीका – "***यै:* अर्थात् जिन समान पर्यायरूप धर्मों द्वारा *जीवा:* अर्थात् जीव हैं, *वे अनेके अपि* अर्थात् यद्यपि बहुत हैं; *बहुविधा:* अर्थात् बहुत प्रकार के हैं तथापि *तज्जातय:* अर्थात् विवक्षित सामान्यभाव द्वारा इकट्ठा करने से एक जाति में प्राप्त किये हुये *ज्ञायंते* अर्थात् जाने जाते हैं *ते* अर्थात् समान पर्यायरूप जीव *धर्मसंगृहितार्था:* अर्थात् अंतर्भूत की है अनेक व्यक्ति जिन्होंने ऐसे *जीवसमासा:* अर्थात् जीवसमास हैं, ऐसा जानना।**

कुछ नहीं समझे! इसलिये पं. टोडरमलजीसाहब ने यहां भावार्थ लिख दिया। क्या कहते हैं, यह भावार्थ जो लिखे हैं न? पं. टोडरमलजीसाहब ने लिखे हैं। **जैसे, एक गाय जाति में** – जाति अपेक्षा उसको एक गाय जाति, एक गाय नहीं है – गाय बहुत हैं उनकी सबकी जाति एक है; जैसे हम जीव बहुत हैं फिर भी हम कहेंगे एक जीव ऐसा कहने से वे सभी जीव उसमें गर्भित हुये। ऐसे **एक गाय जाति में अनेक खांडी, मुंडी, सांवरी गायरूप व्यक्ति** – यह खांडी, मुंडी यानी उसके अलग-अलग रंग भी होते हैं न? अलग-अलग; कोई लाल है, सफेद है, काली है – गायरूप व्यक्ति; व्यक्ति यानी अलग-अलग गाय; **सास्नादिमत्व समान धर्म द्वारा अंतर्गर्भित होती हैं** – ये सास्नादिमत्व क्या होता है मालूम है? यह गांव के लोग तो समझेंगे, *श्रोता: गले में झालर...* हां, हां, बोलो, झालर-झालर, गाय कैसी होती है? उसको कैसे पहचानना? *श्रोता: उसके गले में...।* उसको सास्नाखाल-गलकंबल, सास्नादिमत्व कहते हैं। आपने तो गाय देखी है, बम्बईवालों ने देखी है कि नहीं देखी? *श्रोता: वह बांधकर रखते हैं मंदिर .....,* हां, मंदिर के बाहर बांधकर रखते हैं और उसको चारा खिलाते हैं तो पुण्य करते हैं; बम्बईवालों ने इतना ही देखा है। तो यह उनके लिये समान धर्म है, सभी गायों में वह पाया जाता है। **वैसे**, यह तो उदाहरण हुआ – दृष्टांत हुआ। **एकेन्द्रियत्वादि जाति में** – एकेन्द्रियत्व यानी एकेन्द्रिय जाति; यह जाति कौन-कौनसी होती है? यह हिंदू-मुस्लिम उस जाति की बात नहीं है यहां। एकेन्द्रिय जाति, द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति और पंचेन्द्रिय जाति इनको जाति कहते हैं।

तो **एकेन्द्रिय जाति में अनेक पृथ्वीकायादि व्यक्ति** – व्यक्ति यानी उसके जो डिफरन्स है, उसके जो भेद हैं। जाति की अपेक्षा सभी एकेन्द्रिय समान हैं; क्या समानता है? एकेन्द्रियत्व सबमें पाया जाता है। एकेन्द्रियत्व यानी बस स्पर्शनइन्द्रिय संबंधी ज्ञान का उघाड़ है और उनके द्रव्यइन्द्रिय अपेक्षा भी एक स्पर्शनइन्द्रिय ही पायी जाती है। यह सबमें समान धर्म है; फिर भी, उनमें डिफरन्स कुछ है कि नहीं है? हां, कोई पृथ्वीकायिक हैं, कोई जलकायिक हैं, कोई अग्निकायिक हैं, कोई वायुकायिक हैं, कोई वनस्पतिकायिक हैं तो यह उनकी व्यक्ति हुयी, ये उनके डिफरन्सेस हुये। समान जाति क्या है? समानत्व क्या है? सभी एकेन्द्रिय हैं, तो एकेन्द्रियपना की अपेक्षा वे सभी समान हैं और व्यक्ति की यानी भेदों की अपेक्षा जुदे-जुदे हैं, उनमें भेद हैं; कोई पृथ्वीकायिक हैं, कोई जलकायिक हैं। तो

कहते हैं कि **जिन एकेन्द्रियत्वादि** यानी एकेन्द्रियपनादि **युक्त लक्षणों द्वारा अंतर्गर्भित करते हैं, उनका नाम जीवसमास है**। एक लाइन छोड़कर नीचे पढ़ेंगे – **अर्थात् जिन समान धर्मों द्वारा संग्रहरूप किये जाते हैं** – समूहरूप किये जाते हैं, उनके ग्रुप्स बनाये जाते हैं; जिन समान धर्मों द्वारा यानी उन धर्मों की अपेक्षा उनको एक ग्रुप में हम ला सकते हैं, कन्सिडर कर सकते हैं। **जिन समान लक्षणों में वे समानरूप लक्षण जीवसमास हैं ऐसी निरुक्ति** यानी ऐसे यह शब्द तैयार हुआ है।

जीवसमास कितने हैं? तो सामान्य से चौदह हैं, सामान्य से चौदह जीवसमास हैं। कौन-कौनसे हैं? देखो, हमें तो पांच इन्द्रियों की पांच जाति मालूम हैं न? एकेन्द्रिय में दो भेद होते हैं – सूक्ष्म एकेन्द्रिय और बादर एकेन्द्रिय। फिर द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय; पंचेन्द्रिय में भी दो भेद हैं – असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय। कितने हुये? *श्रोता: सात।* सात हुये सभी में अपर्याप्त भी होते हैं और पर्याप्त भी होते हैं तो चौदह हो गये; तो हम तो यहां इन चौदह की बात करेंगे। ये चौदह जीवसमास हैं, इनकी बात यहां चलेगी। अलग-अलग अपेक्षा से जीवसमास के भी बहुत सारे भेद शास्त्र में बतायें हैं परंतु वह अभी हमारा यहां पर विषय नहीं है। तो हम यहां देखेंगे; उसकी अन्य चर्चा तो करनी नहीं है क्योंकि हमारा जीवसमास विषय नहीं है, हमारा विषय तो अवगाहना संबंधी है; तो अवगाहना की बात तो ९४ गाथा से यहां शुरू हुयी थी। अभी हमने आपको १७७ पृष्ठ बताया था यहां तो इस गाथा में जघन्य अवगाहना किसके होती है? उत्कृष्ट अवगाहना किसके होती है? इसकी चर्चा है। हम अवगाहना क्या है उसको पहले देख लेते हैं।

जितना आकाशक्षेत्र शरीर रोकता है उसका नाम यहां अवगाहना है। अवगाहना यानी जिस शरीर में वह जीव स्थित है वह शरीर आकाश का कितना क्षेत्र रोकता है? चींटी ने कितना क्षेत्र रोका है? तो उसने बहुत छोटा क्षेत्र रोका है। हम-आप कितना क्षेत्र रोकते हैं? अभी हम जैसे बैठे हैं उतना क्षेत्र रोककर बैठे हैं और अभी हमने हाथी को देखा वह कितना क्षेत्र रोकता है? तो इतना बड़ा और महामत्स्य जो हमने आगम में पढ़ा है वह कितना? तो साढ़े बारह करोड़ *श्रोता: घन योजन।* घन योजन इतना क्षेत्र रोकता है। तो इसको क्या कहेंगे? उस जीव की अवगाहना। देहप्रमाण इसकी यहां अवगाहना कह रहे हैं। वैसे देह के बाहर भी आत्मप्रदेश कभी-कभी फैलते हैं कि नहीं फैलते हैं? *श्रोता: फैलते हैं।* उसको क्या कहते हैं मालूम है? *श्रोता: समुद्घात।* समुद्घात कहते हैं; समुद्घात का

अर्थ होता है कि मूल शरीर छोड़े बिना आत्मप्रदेशों का बाहर निकलना, उसको कहेंगे समुद्घात। तो वे समुद्घात भी अलग-अलग टाइप के होते हैं, मालूम है कौनसे-कौनसे होते हैं? *श्रोता: मारणांतिक।* मारणांतिक सुना है, और? *अन्य श्रोता: वेदना।* देखो, क्षेत्र के लिये दस पद बताये जाते हैं। अभी तो अपनी काल की प्ररूपणा चल रही है, जब क्षेत्र की प्ररूपणा कभी आप सीखेंगे तो उसमें दस अपेक्षायें लगाकर वहां बात होती है।

जीव जिस क्षेत्र में रहता है वह उसका स्वस्थान कहलाता है। अभी अगर हम कहेंगे मनुष्य जीव, तो सभी मनुष्य कितने क्षेत्र में रहते हैं उसको कहेंगे वह उसका स्वस्थान। अभी तो हम एक जीव की अवगाहना की बात कर रहे हैं तो एक जीव की अवगाहना उसके अपने देहप्रमाण होगी। अनेक जीवों की बात करेंगे ते उस जाति के अनेक जीव कितने क्षेत्र में रहते हैं, उसको कहेंगे वह उसका स्वस्थान। यहां हम अनेक जीवों की बात पहले आपको बतायेंगे फिर एक-एक जीव की अवगाहना को देखेंगे अलग से। इसको स्वस्थान कहेंगे या स्वस्थानस्वस्थान भी कहेंगे। जैसे, पंचेन्द्रिय तिर्यंच कहां रहते हैं? *श्रोता: त्रसनाली में।* त्रसनाली में पूरे चौदह राजू में रहते हैं? *श्रोता: मध्यलोक।* मध्यलोक में; मध्यलोक में रहते हैं न। तो मध्यलोक में क्या है? असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं। *श्रोता: तिर्यंच तो पूरे लोकाकाश में रहते हैं?* तिर्यंच नहीं पूछे, पंचेन्द्रिय तिर्यंच पूछे। तिर्यंच पूरे लोक में होते हैं एकेन्द्रिय की अपेक्षा, हम पंचेन्द्रिय तिर्यंचों की बात कर रहे हैं। तो असंख्यात द्वीप-समुद्रों में सर्वत्र रहते होंगे न? *श्रोता: नहीं।* तो? *श्रोता: स्वयंभूरमण समुद्र में।* देखो, ढाई द्वीप जो मनुष्यक्षेत्र है वहां तो समुद्रों में भी पंचेन्द्रिय तिर्यंच हैं और द्वीपों में भी हैं; अंतिम जो समुद्र है स्वयंभूरमण वहां पर भी हैं। उसके पहलेवाले द्वीप के-स्वयंभूरमण द्वीप के आउटर हाफ में – बाहर की ओर जो आधा द्वीप है उसमें भी हैं; परंतु बीचवाले जो द्वीप हैं उन द्वीपों में तो हैं, वहां तो तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि हैं; परंतु समुद्रों में कोई पंचेन्द्रिय तिर्यंच नहीं हैं। हां, तो इसको क्या कहेंगे हम? स्वस्थान यानी उनका रहने का ठिकाना कितना है।

हम क्या देख रहे थे? स्वस्थान कितना है? मनुष्यों का रहने का ठिकाना कितना है? तो कहेंगे ढाई द्वीप है, उससे बाहर मनुष्य नहीं पाये जायेंगे। हां, आगे जो हम मारणांतिक वगैरह देखेंगे न उसकी अपेक्षा लगायेंगे तो वे बाहर भी पाये जायेंगे उसकी बात तो बाद में करेंगे। उनका अपना रहने का जो ठिकाना है तो उसको कहेंगे स्वस्थानस्वस्थान। दूसरा होता है विहारवत्स्वस्थान यानी विहार करके कहां-कहां जा सकते हैं? आप लोग विहार

करके कहां-कहां जाते हो? आप कहेंगे अभी हम देवलाली में आये हैं विहार करके, हं? तो मनुष्य जीव विहार करके मनुष्यक्षेत्र में जायेंगे; बाहर तो नहीं जायेंगे। तो हमें तो अचरज लगता है चांद पर गये। अरे! वाह-वाह-वाह! तो वह मनुष्यक्षेत्र के बाहर है कि अंदर है? *श्रोता: अंदर है।* हां-हां, तो गये कि नहीं वह अलग बात है परंतु जायेंगे तो लाख योजन ऊपर तक जाते हैं; पूरे मेरु तक, मेरु के शिखर तक। तो यहां हम यह बात देख रहे हैं कि एक होता है स्वस्थानस्वस्थान, दूसरा होता है विहारवत्स्वस्थान।

सभी जीव तो अपने-अपने क्षेत्र में ही रहेंगे परंतु देव विहार करके जा सकते हैं, देव विहार करके कहां तक जा सकते हैं? *श्रोता: तीसरे नरक तक।* नीचे तीसरे नरक तक ही जाते हैं उसके नीचे नहीं जाते; तीसरा नरक-तीसरी पृथ्वी दो राजू नीचे है और देव ऊपर कहां तक जा सकते हैं? तो सोलहवें स्वर्ग तक। सोलहवें स्वर्ग के ऊपर के देव कहीं विहार नहीं करते; गमनशक्ति भले हो, परंतु उनके कभी ऐसा विकल्प नहीं आयेगा कि नीचे पंचकल्याणकों में भी जावे; यानी वे ग्रैवेयकवासी कभी नहीं आते पंचकल्याणकों में, सोलहवें स्वर्ग तक के आते हैं। कितने सोलह इन्द्र आयेंगे कि नहीं? *श्रोता: बारह।* बारह, इन्द्र बारह ही होते हैं, सोलह नहीं होते हैं, ये पंचकल्याणकों में सोलह इन्द्र-इन्द्राणि बनाते हैं वह बात अलग है। सोलह स्वर्गों में बारह ही इन्द्र होते हैं, हां, हमें मालूम नहीं था, है न? और हम बन गये सोलहवें इन्द्र! यह तो विहार यानी देव विहार करके जाते हैं और वह भी, ये जो सहस्रार तक के जो देव हैं न? वे तो विहार करके मध्यलोक के नीचे दो राजू तक चले जायेंगे, परंतु शुक्ललेश्यावाले जो देव हैं; आणत-प्राणत, आरण-अच्युतवाले; वे तो मध्यलोक तक ही विहार करके आयेंगे, वे नीचे भी नहीं जायेंगे। ऐसी वह विहार की अपेक्षा बात होती है।

एक होता है वेदना समुद्घात। अत्यंत तीव्र वेदना में जीव के आत्मप्रदेश थोड़े बाहर निकल सकते हैं, फिर रेग्युलर हो जाते हैं तो अधिक से अधिक कितने फैलते हैं? तीनगुणा ऐसा आगे-पीछे हो सकते हैं; ऐसा व्हर्टिकल तीनगुणा नहीं होता, ऐसा साइड में हॉरिझॉन्टल तीनगुणा और ऐसा आगे पीछे तीनगुणा यानी नौगुणा होते हैं, तो यह वेदना समुद्घात है। कषाय समुद्घात में भी इतना ही तीनगुणा-तीनगुणा उसके प्रदेश फ़ैल सकते हैं। ये फैलते हैं यानी बहुत कम काल के लिये, अंतर्मुहूर्त या कुछ समयों के लिये फैलेंगे।

वैक्रियिक समुद्घात, जो देवों के मूल शरीर हैं वे तो वहीं पर स्वर्गों में विराजमान हैं यानी देव तो वहीं रहते हैं और विक्रिया से वे नीचे आते हैं। जैसे यहां ऐरावत हाथी आता है न, कितना बड़ा होता है वह? *श्रोता: एक लाख योजन।* एक लाख योजन; कितना बड़ा? जितना जम्बूद्वीप है उतना बड़ा और आता है अयोध्या में। तो वह इतना बड़ा हाथी वहां-कहां बांधते होंगे स्वर्गों में? ये वाहन जाति के देव होते हैं। स्वर्गों में कोई पशु नहीं हैं, कोई तिर्यंच नहीं हैं वहां पर। *श्रोता: देव हैं।* देवों के जो वाहन हैं वे भले ही कोई सिंह है, कोई ऐरावत है। सभी इन्द्रों के वाहन ऐरावत नहीं है। उनके वाहन अलग-अलग होते हैं।

दिल्ली में पंचकल्याणक में गये थे हम; वहां क्या हुआ? सबने समानरूप से वहां आर्थिक योगदान दिया था, तो सबने कहा हमारे लिये एक-एक हाथी चाहिये। आपको मालूम होगा जिसने दिल्ली पंचकल्याणक अटेंड किया था; चार-चार हाथी मंगवाये थे और जन्मकल्याणक के अवसर पर चारों ने एकसाथ मेरु की-पांडुकशिला की प्रदक्षिणा लगायी थी। अगर मुझे पूछते तो मैं उसका उत्तर दे देती क्योंकि सबका वाहन तो हाथी है नहीं है। *श्रोता: सौधर्म का?* हां, सौधर्म का हाथी है और फिर किसीके सिंह है, किसीके; तो वहां के जो देव हैं, वाहन जाति के देव; वे उसका रूप लेकर यहां आते हैं। अब भले वहां से निकले तो लाख योजन का और हजार सूंड़ का और उसके ऊपर उतने जलाशय उसमें उतनी अप्सरायें, वे इतने वाद्य बजाती हैं – ये इतना सब वैभव लेकर यहां आते हैं परंतु यहां आकर फिर वे तो *श्रोता: छोटा।* हां, छोटा रूप धारण करते हैं और यहां वे अयोध्या में आते हैं, प्रदक्षिणा देते हैं वे सब बातें बनती हैं। यानी यहां ये हम क्या देख रहे हैं? वैक्रियिक समुद्घात की बात देख रहे हैं यानी विक्रिया से अन्य शरीर धारण करके वे आते हैं; क्योंकि उनके आत्मप्रदेश वहां से यहां तक फैले रहते हैं। विक्रिया से जो दूसरा शरीर बनता है, जैसे हमने देखा आहारक से बनता है वैसे विक्रिया से जो दूसरा शरीर बनाया जाता है वहां आत्मप्रदेश मूल शरीर में और उस शरीर में कंटिन्युएशन में फैले रहते हैं। ऐसी विक्रिया से एक से अनेक भी शरीर बनते हैं क्योंकि देवों में तो हजारों की, लाखों की सेना तैयार होगी। एक ही देव है और विक्रिया से इतने रूप धारण कर सकते हैं। *श्रोता: चक्रवर्ती का कैसे होता है?* चक्रवर्ती भी औदारिकशरीर की विक्रिया करते हैं। *श्रोता: छियानवे हजार?* नहीं, छियानवे हजार ऐसा कुछ नहीं आता है, वे अनेक रूप धारण कर सकते हैं। यह हुआ वैक्रियिक समुद्घात।

मारणांतिक समुद्घात सुना होगा सबने, है न? मरण के एक अंतर्मुहूर्त पहले क्योंकि आयुकर्म तो बंधा है और जहां जन्म लेना है वह भी निश्चित है, उस कर्म के कारण सहजरूप से ऐसी बातें बनती हैं। जैसे हम देखते हैं न? विग्रहगति में कैसा जाता है? मोड़ से जाता है वैसे ही मारणांतिक समुद्घात में उसी रूट से जायेगा; वैसे ही मोड़ से उसी मार्ग से वह मरण के बाद जानेवाला था उसी पूरी पद्धति से आत्मप्रदेश फैले रहते हैं। मूल शरीर में तो हैं ही हैं, कुछ आत्मप्रदेश निकलकर उसीरूप से, उसी डायरेक्शन में जाकर उसी मोड़ को लेते हुये वहां फैले रहते हैं बस। कब तक? अंतर्मुहूर्त तक। जैसे यहां से कोई नरक में जानेवाला है, कोई महामत्स्य मरकर नरक में जानेवाला है सातवें नरक में, तो उसके प्रदेश कहां तक फैले रहेंगे? *श्रोता: सातवें नरक तक।* छह राजू नीचे तक, सातवां नरक छह राजू नीचे है। तो मध्यलोक से छह राजू नीचे तक उसके इतने सारे आत्मप्रदेश ऐसे फैले रहते हैं – इसको कहेंगे मारणांतिक समुद्घात और मरण होने पर फिर यह एक-एक मोड़ तक उसके आत्मप्रदेश आगे-आगे बढ़ते चले जाते हैं और फिर वहां जन्मस्थान में पहुंच जाते हैं।

एक होता है आहारक समुद्घात – जो हमने कल देखा था आहारकशरीर बनता है। *श्रोता: मुनि महाराज के।* हां, मुनि महाराज के वह आहारकशरीर बनकर वहां चला जाता है। तो उस समुद्घात में भी आत्मप्रदेश मूल शरीर में तो हैं ही हैं, उस शरीर में भी हैं और वे फैले रहते हैं वहां तक; जहां तक उनका गमन होगा वहां तक आत्मप्रदेश फैले रहते हैं; अंतर्मुहूर्त में फिर वापस मूलशरीर में आते हैं। एक होता है तेजस समुद्घात, आपने तो सुना होगा न? वह द्वीपायन मुनि की कथा तो मालूम है सबको। उनके तो अशुभ तेजस समुद्घात था; एक शुभ तेजस भी होता है। अशुभ तेजस वह तो *श्रोता: बायें हाथ।* बायें कंधे से निकलता है, सिंदूर के समान उसका वर्ण होता है वह बिलाव के आकार का होता है वह तो पूरी एरिया जलाकर वापस मुनि के शरीर में प्रवेश करता है; मुनि भी भस्म हो जाते हैं और जो शुभ तेजस है वह राइट आर्म-दायें कंधे से निकलता है, नीले वर्ण का होता है; कोई बीमारी है, कोई महामारी है या ऐसे अन्य जो कुछ है; तो अनुकंपा के वश वह निकलता है और फिर वापस वह मूल शरीर में प्रवेश करता है उसको कहेंगे तेजस समुद्घात। *श्रोता: यह शरीर आहारकशरीर धारण करता है तेजस समुद्घातवाला जीव या?* ना-ना-ना, तेजसवाला अलग है। *श्रोता: तेजस कार्माणवर्गणा?* वह तेजसशरीर है; हां,

तेजसवर्गणा का बना हुआ है। परंतु वहां पर भी आत्मप्रदेश फैलते हैं उसकी बात लेनी है हमें। *श्रोता: यह जो तेजसशरीर निकलता है वह भावलिंगी संत को ही निकलता है या द्रव्यलिंगी को भी होता है?* तेजस समुद्घात भावलिंगी के ही होगा, द्रव्यलिंगी के नहीं। *श्रोता: जैसे आहारकशरीरवाले मुनिराज आहारवर्गणा उसतरह का ग्रहण करते हैं, ऐसे तेजसशरीरवाले?* तेजसशरीर भी दो प्रकार का होता है एक अनि:सरणात्मक जो सभी संसारी जीवों में होता है और एक है नि:सरणात्मक – जिसे तेजस समुद्घात कहते हैं। तेजस समुद्घात में भी अशुभ तेजस और शुभ तेजस ऐसे दो प्रकार हैं। आहारकशरीर के समान तेजसवर्गणा को ग्रहण करके अलग नया तेजसशरीर बनाने का कथन शास्त्र में कहीं आया नहीं है। तेजसशरीर ऑलरेडि है, आहारकशरीर जैसा और दूसरा शरीर वहां नहीं बनता।

एक होता है उपपाद, उपपाद का अर्थ होता है जन्म का पहला समय। जैसे कोई एकेन्द्रिय है, त्रसनाली के बाहर रहता है और त्रस में उत्पन्न होता है तो उसके उपपाद में आत्मप्रदेश कहां तक फैलेंगे? वहां से लेकर त्रसनाली तक। देखो, त्रस जीव कहां रहते हैं? *श्रोता: त्रसनाली में।* त्रसनाली में। क्या ऐसा कोई त्रस है जो त्रसनाली के बाहर पाया जाता है? हं? *श्रोता: समुद्घात में।* केवली समुद्घात में तो जाते ही हैं, पूरे लोक में फैलते हैं। एक तो केवली समुद्घात में। दूसरा, कोई त्रस है वह मारणांतिक कर रहा है, कहां? एकेन्द्रिय में, तो जाहिर है उसके प्रदेश फैले रहेंगे अंतर्मुहूर्त तक; और तीसरा यह उपपाद – कोई त्रसनाली के बाहर का जो एकेन्द्रिय है और वह मर गया और वह त्रस में जन्म ले रहा है। तो मर गया तो वहां बाहर था और वहां से उसके विग्रहगति के पहले समय में प्रदेश तो ऐसे फैले हुये रहेंगे तो उसको त्रस जीव कहेंगे हम। एकेन्द्रिय तो मर गया है और वह त्रस हुआ है। त्रस हुआ है तो उसके आत्मप्रदेश अभी त्रसनाली के बाहर हैं, एक समय के बाद वे अंदर आयेंगे तो उसको भी हम उपपाद की अपेक्षा त्रसनाली के बाहर त्रस है ऐसा कहेंगे। तो यह उपपाद है। यहां तो हम जीवों के क्षेत्र यानी उनके प्रदेश कहां-कहां तक फैले हैं उसकी अपेक्षा इसको लेना है। ये अनेक जीवों की अपेक्षा अतीतकाल की अपेक्षा जब बात करते हैं तब इन सारे दस पदों की अपेक्षा लगाकर वहां सोचना पड़ता है। हां?

श्रोता: यह उपपाद और मारणांतिक में क्या फर्क है? देखो, जब हम तिर्यंच मारणांतिक कर रहे हैं कहेंगे तो तिर्यंच, पंचेन्द्रिय तिर्यंच कहां तक मारणांतिक करेंगे? हां, आप कहेंगे

एकेन्द्रिय में भी कर सकते हैं परंतु देवों में करनेवाले हैं उनकी बात पूछेंगे। तो सम्यग्दृष्टि हैं, पंचम गुणस्थानवर्ती हैं तो सोलहवें स्वर्ग तक कर सकते हैं। हैं न? यह तिर्यंच में रहते हुये यानी वे हैं तिर्यंच और उन्होंने मारणांतिक किया सोलहवें स्वर्ग तक। कौनसी पर्याय चल रही है? तिर्यंच की। अब उपपाद की अपेक्षा करेंगे। तिर्यंच मरकर वहीं पर उपपाद कर रहे हैं। वे कौन कहलायेंगे? तिर्यंच कहलायेंगे कि देव कहलायेंगे? *श्रोता: देव।* देव कहलायेंगे। उपपाद वह नेक्स्ट भव की बात है और मारणांतिक वह पूर्वभव में ही है यानी मारणांतिक किया वे पंचम गुणस्थानवर्ती थे; वही जीव उपपाद अवस्था में चतुर्थ गुणस्थानवर्ती कहलायेगा क्योंकि देव में उपपाद हुआ है, वहां तो पांचवां गुणस्थान नहीं होगा।

केवली समुद्घात तो सबको मालूम है, कल हमने उसकी चर्चा भी की थी। ये जो ऐसे दस अलग-अलग प्रकार हैं उनकी अपेक्षा क्षेत्र को यानी परक्षेत्र को यानी नाना जीवों की अपेक्षा कितना क्षेत्र रोक सकते हैं उसको हम देखते हैं, उसकी चर्चा होती है। हमारा वह विषय यहां नहीं है। यहां अलग-अलग जीवों की जघन्य अवगाहना कितनी है, उत्कृष्ट कितनी है, उनकी अवगाहना के क्या-क्या भेद हैं उसकी यहां अपनी चर्चा चलेगी। तो यहां हम पढ़ रहे हैं, १७७ पृष्ठ पर। *श्रोता: आपने दस भेद बताये और जगह सात आते हैं। अन्य श्रोता: आठ।* स्वस्थानस्वस्थान, फिर विहारवत्स्वस्थान, वेदना, कषाय, वैक्रियिक, मारणांतिक, आहारक, तेजस, केवली समुद्घात और उपपाद। दस हो गये न? इसको दस पद कहेंगे; इन दस पदों की अपेक्षा वह क्षेत्र और स्पर्शन का विषय अलग है। उसमें इसकी बात आती है कि इस विशिष्ट मार्गणा के जीवों ने कितना क्षेत्र रोका है। अभी तो हम काल देख रहे हैं और काल में हमें क्षेत्रपरावर्तन देखना है; उसमें स्वक्षेत्रपरावर्तन और परक्षेत्रपरावर्तन ऐसे दो शब्द आयेंगे। स्वक्षेत्र यानी जीवों की अपनी अवगाहना और परक्षेत्र यानी उसने कहां जन्म लिया उस क्षेत्र की बात होगी।

श्रोता: स्वस्थान और स्वस्थानस्वस्थान में क्या फर्क है? नहीं-नहीं, स्वस्थानस्वस्थान में स्वस्थान को दो-बार कहते हैं। एक होता है स्वस्थानस्वस्थान और एक होता है विहारवत्स्वस्थान। उसका नाम ही ऐसा है यानी केवल स्वस्थान नहीं कहते, स्वस्थानस्वस्थान कहते हैं। ऐसे केवली को भी कहते हैं न? स्वस्थान केवली और समुद्घात केवली, ऐसे उनके भी दो नाम आते हैं। यानी रेग्युलर जो केवलज्ञानी हैं और जो समुद्घात करनेवाले हैं उनको भी ऐसा कहते हैं स्वस्थान केवली और समुद्घात केवली।

देखो, गाथा ९४ की टीका – **जितना आकाशक्षेत्र शरीर रोकता है**; शरीर रोकता है यानी अभी जीव और शरीर हैं न वहां पर; केवल शरीर रोकता है ऐसा नहीं लेना है – **उसका नाम यहां अवगाहना है। सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जीव** – देखो क्या-क्या लिखा है? कितना बड़ा नाम? पदवी उसकी क्या-क्या है? एक तो सूक्ष्म। हमने देखे एकेन्द्रिय दो प्रकार के होते हैं – सूक्ष्म भी होते हैं और बादर भी होते हैं। यह सूक्ष्म और बादर में क्या अंतर है? सूक्ष्म यानी छोटे, बादर यानी बड़े? *श्रोता: नहीं।* नहीं, अच्छा देखो, सूक्ष्म यानी जिनके शरीर सूक्ष्मरूप से परिणत हैं; उनका टाइप अलग होता है तो वे कैसे होते हैं? तो कहते हैं वे प्रतिघात से रहित होते हैं यानी वे दूसरे को अटकाव नहीं करते। यानी जैसे अभी कोई एक बादर जीव है, दूसरा बादर है तो उसके थ्रू ॲण्ड थ्रू नहीं जा सकता। परंतु सूक्ष्म जीवों के ऐसा कोई अटकाव नहीं है, वे तो सर्वत्र पूरे लोक में रहते हैं। बादर जीव हैं वे आधार से रहते हैं और सूक्ष्म जीवों को किसी के आधार की जरूरत नहीं है।

ये सूक्ष्म पांचों ही कायिकवाले होते हैं; सूक्ष्म जीव मात्र एकेन्द्रिय में होते हैं, द्वीन्द्रियादि में नहीं होते। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक में सूक्ष्म टाइप भी होते हैं और बादर भी होते हैं। सूक्ष्म वनस्पतिकायिक में तो मात्र निगोद ही होते हैं और बादर में? बादर में निगोद भी होते हैं और प्रत्येक शरीरवाले भी होते हैं। ये वनस्पतिकायिक के भेद हैं, यहां अपना बहुत बार यह विषय चला है। तो ये सूक्ष्म जीव जो हैं, पांचों ही प्रकार के सूक्ष्म जीव पूरे लोकाकाश में फैले हुये हैं। किसीने पूछा था कि हम तो ऐसा ही समझते थे कि मात्र सूक्ष्म निगोद ही पूरे लोक में हैं। पांचों ही प्रकार के सूक्ष्म जीव पूरे लोक में फैले हुये हैं; उनको आधार की जरूरत नहीं होती और बादर जीव आधार से रहते हैं। जैसे निगोद की बात करेंगे, बादर निगोद जीव हैं वे किसीके आधार से रहेंगे; किसके आधार से रहते हैं? *श्रोता: वनस्पति के।* प्रत्येक वनस्पति के आधार से रहेंगे या द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य इनके शरीरों के आधार से रहेंगे। द्वीन्द्रियादि के जो शरीर हैं उनको मांस क्यों कहते हैं? तो उनमें निगोद जीव हैं। निगोद जीव उसके आधार से रहते हैं, वे अनंतों में हैं और अनंत वहां हमेशा पैदा होते रहते हैं इसलिये उसको मांस कहते हैं और मांसभक्षण का निषेध किया है क्योंकि

अनंत जीवों की वहां उत्पत्ति और विनाश होता है और वे उसको खानेवाले जीवों द्वारा बादर निगोदों का कदलीघात से मरण भी होता है।

सूक्ष्म जीव काटने से नहीं कटते हैं, न जलाने से जलते हैं, न वे पानी से गलते हैं – ये तो बादर जीवों की बातें हैं। बादर तो किसीके आधार से रहते हैं और वे प्रतिघात से सहित होते हैं। प्रतिघात समझते हैं न? जैसे हम पुद्गल में भी देखते हैं – अभी यह जो कांच लगी है, कांच में से हम उंगली डालेंगे तो वह आरपार जायेगी क्या? *श्रोता: नहीं।* नहीं जायेगी, तो कांच में से कोई जायेगा क्या? *श्रोता: सूक्ष्म जीव।* सूक्ष्म जीव उसके अंदर होंगे। कांच में से आपको कोई ऐसा मालूम है – अन्य पुद्गल जो कांच में से आरपार जा सकता है? *श्रोता: नहीं।* प्रकाश जाता है कि नहीं जाता? हमने पुद्गल पूछा न? पुद्गल, वे तो एक्स-रे जायेंगे और फिर उनके लाइट रेज जायेंगे और रेडिएशन हैं वे भी चले जायेंगे। वे भी पुद्गल हैं, यह भी पुद्गल है, बात ख्याल में आती है? तो पुद्गल-पुद्गल में जो व्हेरिएशन्स हैं, ऐसे इनके शरीरों में हैं। तो ये सूक्ष्म जीव हैं; दूसरा क्या इन्होंने लिखा है? **सूक्ष्म निगोद** – निगोद जो पर्याय उसकी हमने चर्चा की थी।

निगोद वनस्पतिकायिक जीव हैं और वे कैसे हैं? साधारण वनस्पतिकायिक को ही निगोद कहते हैं। साधारण क्यों? उनका शरीर एक है और उस शरीर में जीव अनंत रहते हैं। उसमें यह जो सूक्ष्म निगोद है और आगे क्या लिखा है? **लब्धिअपर्याप्त**। हमने पर्याप्ति के प्रकरण में देखा था कि कोई जो जीव हैं उनकी सब पर्याप्ति तो शुरू होती हैं, परंतु एक भी पर्याप्ति पूरी होने के पहले, वे श्वास के अठारहवें भाग में मर जाते हैं, उनका लाइफस्पॅन इतना छोटा है; उनको कहेंगे लब्धिअपर्याप्त जीव। ऐसे लब्धिअपर्याप्त जीव सूक्ष्म में भी होते हैं; बादर में भी होते हैं; द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय – असंज्ञी, संज्ञी; मनुष्य में भी होते हैं। यहां बात किसकी हो रही है? **सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जीव**। यह सबसे छोटी अवगाहनावाला जीव है। सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त में भी एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना की रेंज बहुत है। सबसे छोटी अवगाहना किसकी होगी वह यहां बता रहे हैं। तो कहते हैं **उस पर्याय में** यानी उस सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त पर्याय में, **ऋजुगति से उत्पन्न हुआ**। यह ऋजुगति क्या होती है? हमने तो मनुष्यगति देखी, देवगति देखी, तिर्यंचगति देखी। देखो, यह विग्रहगति सुना है न नाम हमने? विग्रह देह को कहते हैं – एक पर्याय से मरकर जीव दूसरा देह धारण करने के लिये जो गमन करता है उसको

विग्रहगति कहते हैं। विग्रह शब्द के बहुत अर्थ हैं; विग्रह यानी निरोध भी होता है यानी वह शरीर के परमाणुओं को ग्रहण नहीं करता उस गति में इसलिये भी उसको विग्रहगति कहते हैं। विग्रह का तीसरा अर्थ है मोड़ – जो मोड़वाली गति होती है उसको कहते हैं विग्रहगति और जो मोड़ रहित होती है उसको कहते हैं अविग्रह। तत्त्वार्थसूत्र में है न कथन – उसका सूत्र है। तो यह बिना मोड़ से जानेवाले को *श्रोता: ऋजुगति।* ऋजुगति कहते हैं। वह या तो पूर्व में जा सकता है, पश्चिम में या दक्षिण में या उत्तर में या नीचे या ऊपर। एक ही समय में वहां पहुंच जाता है तो उसको कहेंगे ऋजुगति या इषुगति।

हमने आहारमार्गणा में आहारक के प्रकरण में इसको देखा था कि यहां भी मरण के समय तक, अंतिम समय तक वह शरीर के परमाणु ग्रहण कर रहा था और जो ऋजुगति से पहुंचता है वह उसी समय में नये शरीर का ग्रहण वहां जाकर चालू करता है। बीच में अनाहारक नहीं रहता – यह बात हमने पहले देखी थी। तो इसको ऋजुगति कहते हैं। अन्य कौनसी हैं? जो एक मोड़वाली होती है उसको क्या कहते हैं? *श्रोता: पाणिमुक्ता।* पाणिमुक्ता, दूसरी, दो मोड़वाली? *श्रोता: लांगलिका।* लांगलिका और तीन मोड़वाली? *श्रोता: गोमुत्रिका।* गोमुत्रिका। ये उनके नाम रखे हैं। जीव जब एक भव से दूसरे भव में जाता है तब या तो ऋजुगति से जाता है या एक मोड़वाली गति से – एक मोड़ लेकर जाता है; या दो मोड़ लेकर जाता है; या त्रसनाली के बाहर जो सूक्ष्म से सूक्ष्म में जानेवाले जीव हैं वे तीन मोड़ भी ले सकते हैं। तो इसतरह से यह मोड़वालों की बात है। यहां किस जीव की बात चल रही है? **सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त, उस पर्याय में ऋजुगति से उत्पन्न हुआ**। कहीं से मरकर सीधी लाइन में आकर वहां जन्म लिया, बिना मोड़ लिये आया है।

उसके तीसरे समय में – देखो, यह केवलज्ञानी ने जानी हुयी बात है; तीसरे समय में उसकी अवगाहना सबसे जघन्य होगी। तो **उसके तीसरे समय में घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण प्रदेशों की अवगाहनाविशेष धारी शरीर होता है। यह अन्य सर्व अवगाहना भेदों से जघन्य है**। सबसे मिनिमम पॉसिबल अवगाहना सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की होती है। सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्तों में भी अवगाहनाओं के बहुत भेद हैं। इससे एक प्रदेश अधिकवाली अवगाहना, दो प्रदेश अधिकवाली, तीन प्रदेश अधिकवाली, चार प्रदेश अधिकवाली ऐसे अवगाहना के बहुत सारे भेद हैं। असंख्यात भेद हैं। इससे असंख्यातगुणा हो जाये तब जाकर सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना का नंबर आयेगा।

फिर उसके आगे असंख्यातगुणा करेंगे; गुणा हो, यानी उतने एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के भेद होंगे। तो हम देखेंगे उसका कैसा, क्या विस्तार है, कैसे हैं? उसको हम पढ़ेंगे।

तो यहां कहते हैं यह तो जघन्य बताया और दूसरी बात? **पुनश्च स्वयंभूरमण समुद्र के मध्यवर्ती जो महामत्स्य** – यह स्वयंभूरमण समुद्र क्या होता है? *श्रोता: अंतिम समुद्र।* हमनें देखा जो मध्यलोक है, उसमें असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं। हम कहां रह रहे हैं? *श्रोता: जम्बूद्वीप में।* हां, जम्बूद्वीप में भरतक्षेत्र में रहते हैं। यह जम्बूद्वीप, उसको सराउंडेड? *श्रोता: लवणसमुद्र।* लवणसमुद्र; फिर एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र, जो द्वीप है उससे दोगुणा समुद्र, समुद्र से दोगुणा द्वीप, उससे दोगुणा समुद्र, उससे दोगुणा द्वीप – ऐसे डबल-डबल-डबल-डबल अंत तक करते जाओ; अंतिम समुद्र का नाम क्या है? *सभी श्रोता: स्वयंभूरमण समुद्र।* स्वयंभूरमण समुद्र; तो वह कितना बड़ा होगा? हं? *श्रोता: आधा राजू।* आधा राजू दोनों तरफ मिलकर, एक तरफ वन फोर्थ राजू तक चला जायेगा। हमें तो यह दोगुणा-दोगुणा देखना है। नंदीश्वर द्वीप कितने नंबर पर है? *श्रोता: आठवें नंबर पर।* आठवें नंबर पर, वहां आठवें नंबर पर उसका कितना लाख योजन विस्तार है? हम गाते तो हैं जोर-जोर से – एक सौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा। लाख चौरासिया एक दिश में लहा। यानी कितने हुये? १६३८४ लाख यानी १६३ करोड़ और ८४ लाख।

श्रोता: यह दूरी अपने यहां से है। नहीं-नहीं-नहीं, जैन भूगोल पुस्तक है हाथ में? अभी तो समय हुआ, हम उसको दोगुणा-दोगुणा कॅल्क्युलेट करके देखेंगे। *श्रोता: स्टार्टिंग पॉइंट क्या है? अन्य श्रोता: यहां पर जो अभी फोटो लगाया है नया उसमें मानुषोत्तर पर्वत की बात है वहां तक बताया है।* उस चार्ट को नहीं लेना, हमें आगम को देखना है। चार्ट तो हम-आपने बनाये हैं, जो सही है उसको ग्रहण करना चाहिये और इसका कॅल्क्युलेशन हम दोपहर में पहले करके फिर आगे बढ़ेंगे। अभी अपना विषय और समय दोनों ही समाप्त हो गये हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१५. जीवों की जघन्य, उत्कृष्ट अवगाहना

षट्खण्डागम के आधार से हम काल अनुयोगद्वार में से कुछ विषय यहां चला रहे हैं। पांच परावर्तन का विषय चल रहा है। हम अनादि से हैं क्योंकि जो-जो द्रव्य है वह अनादि से होता है और कितने काल तक टिकता है? अनंतकाल तक टिकता है; उसकी पर्याय बदलती रहती है। यहां जीव की भी और पुद्गल की भी पर्यायें बदलती रहती हैं। पुद्गल में तो विभाव से स्वभाव और स्वभाव से विभावरूप परिणमन होता रहता है। पुद्गल परमाणुओं का जब बंध होकर वे स्कंधरूप हो जाते हैं तो उनके वह विभाव परिणमन हो जाता है और फिर वे विभाव से छूटकर फिर स्वभावरूप होते हैं। स्वभाव से छूटकर फिर विभावरूप होते हैं। परंतु जीवद्रव्य में ऐसी विशेषता है – अनादि से तो विभावरूप है ही है, स्वभावरूप होते-होते सिद्ध दशा एक बार प्रकट हो जाये तो दुबारा वे विभावरूप नहीं होते।

अभी मनुष्यपर्याय में हमने जन्म लिया है यानी जीव का इन पुद्गलों के साथ संबंध हुआ है। कौन-कौनसे पुद्गल हैं तो कर्म के हैं, तेजसशरीर के हैं, औदारिक आदि शरीर के हैं। तो इसने यह संबंध किया है और उसके मोह-राग-द्वेष के परिणाम भी चलते रहते हैं और उनके कारण यह जन्म-मरण, जन्म-मरण अनादि से चला आ रहा है। आज तक हमने अनंतानंत जन्म-मरण किये हैं। हर भव में ऐसा ही हुआ; जन्म लिया है, वहां जो कुछ उस भव की योग्य बातें की, वैसे जो परिणाम थे वे करते आये। फिर दूसरे भव में चले गये। फिर तीसरे भव में, फिर चौथे भव में। अभी तक हम थके नहीं हैं। यानी अभी अनंतकाल हमें बिताना है तो क्या इसीप्रकार से बिताना है या नहीं, यह प्रत्येक को अपने में नक्की करना है और यदि इसीप्रकार से नहीं बिताना चाहते, जन्म-मरण से मुक्त होना चाहते हैं, तो उसका उपाय भी सोचना पड़ेगा। किसी भाई ने प्रश्न पूछा था कि अभी इस आयु के बीस साल बाकी हैं, है न? तो क्या करना? यह सही प्रश्न है क्योंकि जब हम यह संसार का स्वरूप देखते हैं, जन्म-मरण का स्वरूप देखते हैं, तो यह ऐसा विचार आना ही चाहिये कि करने योग्य एक ही बात है इस विश्व में।

हम मनुष्यपर्याय में आये हैं तो उस मनुष्यपर्याय का जो प्रयोजन है, यही सच्चा प्रयोजन है। तभी सहीरूप से हमने मनुष्यपर्याय सफल की कही जायेगी कि जब हम अपना

स्वरूप पहचानकर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति करके आगे बढ़ेंगे, यदि नहीं, तो जितने भव आये और गये वैसा एक और चला जायेगा; अनंतों में और एक मिलाया जायेगा और फिर ऐसे कितने अनंत भव चले जायेंगे और यहीं पर हम संसार में ही जन्म-मरण, जन्म-मरण करते रह जायेंगे। क्योंकि इस भव में तो हमने क्या-क्या पाया ऐसा अगर हम देखेंगे, बचपन में तो हम बहुत गरीब थे, फिर हमने एज्युकेशन लिया, फिर हम सेल्फ-मेड हो गये और हमने बहुत कुछ कमाया है। यह हमने इतना सारा वैभव, एम्पायर खड़ा कर दिया है। तो यह खड़ा कर दिया है तो यह साथ में ले भी जायेंगे कि नहीं जायेंगे? इसके पहले के भव में ऐसे एम्पायर खड़े किये थे कि नहीं किये थे? *श्रोता: याद भी नहीं।* याद भी नहीं। क्या करें? क्योंकि जीव को अपनी सच्ची पहचान नहीं है और इस मनुष्यभव की दुर्लभता की भी उसको पहचान नहीं है। यह अनादि कहने से, हम अनादि से हैं, हम अनादि से हैं कहता है परंतु उसका भावभासन नहीं है। किसीको जेल हो गयी चौदह साल की तो अरे बाप रे! ऐसा लगता है और आप कब से हैं? अनादि से। उसमें अरे बाप रे! लगता है क्या? तो यह हम जो देख रहे थे, अभी तो हमने पुद्गलपरावर्तन की बात तो देख ली है, आप कहेंगे वह इतना सारा गृहीत-अगृहीत, मिश्र करके क्या फायदा? इसको जानने से फायदा क्या हुआ? यह काल कैसे काउंट करना है वह उसका हिसाब बताया था। यहां कोई प्रश्न आये हैं उसके बारे में।

प्रश्न: पर्याय वैसी की वैसी, वैसी की वैसी नहीं होती ऐसा नियम है। यह किसने नियम बनाया? पर्याय वही की वही नहीं होती, वैसी की वैसी हो सकती है। नॉट दे सेम बट कॅन बी सिमिलर क्योंकि केवलज्ञान-केवलज्ञान-केवलज्ञान पर्याय वैसी की वैसी तो हो रही है। वही की वही नहीं है, वैसी की वैसी है। नॉट दे सेम बट सिमिलर कॅन हॅपन। यहां प्रश्न ऐसा है, *प्रश्न: पर्याय वैसी की वैसी नहीं होती ऐसा नियम है। जब ग्रहण किये हुये परमाणु वे के वे ग्रहण करेंगे तो परावर्तन पूरा होता है। तो वह ही वह पर्याय कैसे आयेगी?* वह पर्याय कहां? वह तो द्रव्य है; परमाणु तो द्रव्य है। वे द्रव्य जो हैं, उनका जीव के साथ संयोग हुआ है। उनकी जो पर्यायें थी वैसी पर्यायें फिर उन्हीं परमाणु में हुयी हैं। वे ही परमाणु फिर आये, वह पर्याय वही की वही कहां हुयी है? यह कुछ कन्फ्यूजन बहुत चल रहा है। जिसका प्रश्न है वह समझ लेवे हो। थोड़े प्रश्न लेकर फिर आगे बढ़ेंगे क्योंकि अपना विषय भी अभी अलग से चलेगा।

प्रश्न: प्रतिसमय आनेवाले समयप्रबद्ध में कार्माणवर्गणा के अनंत परमाणुओं का जीव के परिणाम के साथ किस प्रकार का निमित्त-नैमित्तिक संबंध है? जीव के मोह-राग-द्वेष के परिणाम के कारण एक समयप्रबद्धप्रमाण ये जो परमाणु बंधे हैं, बंधनेवाले के साथ संबंध पूछा न? बंधा है, क्यों बंधा है? जीव के परिणामों के कारण। योग के कारण उनकी संख्या बनी और राग-द्वेष के कारण वे कौनसी जाति के, किस प्रकृति के, कितने काल के लिये बंधेंगे, कितना अनुभाग बंधेगा उसमें, वह संबंध बनेगा। यहां उदय की बात नहीं है। *प्रश्न: उदीरणा में आनेवाले कर्म और उदय में आनेवाले कर्म की फलदान शक्ति में अंतर होता है क्या?* नहीं होता है क्योंकि एक वर्तमान निषेक में जो कोई उदीरणा होकर आये हैं, यानी ऊपर के निषेकों में से उदय में आये हैं और निषेक के परमाणु क्रम से नीचे आते-आते, उदय में आये हैं। कैसे भी उनका उदय तो हो ही रहा है और उनके जो जिस अनुभाग का जैसा फल होगा, वैसा उसका निमित्त बनेगा। *प्रश्न: योगों का हलन-चलन, मन, वचन और काय का, ठंड बजना, कंपकंपी होना इन सब बाह्य कारणों से,* इसको योगों का हलन-चलन नहीं कहते। आत्मप्रदेशों का कंपन जो है, भले वह स्थिर रहा है, कोई कोमा में है, अभी वनस्पति कहां हिल रही है, यह पृथ्वी कहां हिलडुल रही है, तो वहां योगों का कंपन है कि नहीं है? तो बाह्य हलन-चलन होना यह योगों का कंपन नहीं है। *प्रश्न: तो उसके कारण आत्मा में कंपन हो सकता है क्या? क्या वह भी बंध का कारण है क्या?* नहीं है।

प्रश्न : अवगाहना मतलब जैसे एक ग्लास दूसरे ग्लास में चला जाता हैं। ऐसे दस-दस ग्लास चले जाते हैं और क्षेत्र एक ग्लास से कुछ ज्यादा ही घेरा। या जैसे परफ्युम की एक बूंद है मगर पूरे हॉल में फैल जाती है। परफ्युम की एक बूंद यानी उसका जो स्मेल पूरे हॉल में आया है, उसके परमाणु पूरे में स्प्रेड हो गये हैं। उसके बिना यह इन्द्रियज्ञान जो है, वे परफ्युमवाले जो कोई परमाणु हैं, वे परमाणु फैलकर जब तक वे घ्राणेन्द्रिय को टच नहीं हो जायेंगे तब तक उनका ज्ञान नहीं होगा। यह भले वह एक बूंद है परंतु उसमें से वे अन्य जो अनंत परमाणु स्प्रेड होकर सब जगह चले गये हैं तो उनके कारण वहां उसका ज्ञान हुआ है। यह अवगाहना यानी क्षेत्र कितना रोकता है उसको अवगाहना कहते हैं। यह एक क्षेत्र में अवगाहना जो एकक्षेत्रावगाह कहा था न? एक में दूसरे को अवगाहना देना। हमने क्या देखा था? आत्मा के प्रदेश इतने फैल सकते हैं और फिर संकोच होकर एक दूसरे को अवगाहना देते हैं। जैसे यह रुमाल ऐसा लंबा-चौड़ा फैला है, फिर हमने उसको

फोल्ड किया, उसको समेटा। परंतु यहां भी एक लेअर से दूसरा लेअर अलग-अलग जगह है। ऐसा नहीं है वे एक ही प्रदेश में सुपरइंपोज़ हो जाते हैं। आकाश की अवगाहना ऐसी है, एक ही आकाश के प्रदेश में अनेक चीजें, अनेक अलग-अलग द्रव्यों के प्रदेश एक दूसरे को अवगाहना देकर स्थित हो जाते हैं। यानी छहों द्रव्य आपस में एक-दूसरे को अवगाहना देते हैं। फिर भी आकाश की अवगाहना शक्ति इतनी बड़ी है तो उसके कारण अवगाहना गुण जो है, वह आकाश का कहते हैं। क्या एक जीव दूसरे जीव को अवगाहना नहीं देता? जीव कर्म के परमाणुओं को अवगाहना तो देता है क्योंकि जीव जहां है वहीं पर कर्म के परमाणु हैं।

श्रोता: वह तो आकाशद्रव्य है। आकाशद्रव्य तो है पर हम जीव हैं। हमारे प्रदेश जहां हैं वहीं पर कर्म भी स्थित है। वहीं पर औदारिक के परमाणु भी स्थित हैं। तो जीव ने भी उनको अवगाहना दी कि नहीं दी? जहां हमारे प्रदेश हैं वहां धर्मद्रव्य के प्रदेश हैं कि नहीं हैं? अधर्मद्रव्य के हैं कि नहीं हैं? कालद्रव्य के हैं कि नहीं है? तो हमने यानी जीवद्रव्य ने भी उन सबको अवगाहना दी है। *श्रोता: यह तो आकाश का कार्य है?* आकाश ने सबको अवगाहना दी है। *श्रोता: फिर जीव ने कैसे दी है?* जीव ने भी दी है अगर जीव नहीं देता तो जीव कहेगा, नहीं यह मेरा क्षेत्र है; हम धर्मद्रव्य को जगह नहीं देंगे। तो वे सुपरइंपोज़ हुये कि नहीं हुये? जिस आकाश के क्षेत्र में जीव है, उसी आकाश के क्षेत्र में धर्मद्रव्य के भी प्रदेश हैं, अधर्मद्रव्य के भी हैं, कालद्रव्य के भी हैं, पुद्गलद्रव्य भी हैं अनंतानंत। एक-दूसरे को छहों द्रव्य अवगाहना देते हैं। परंतु स्थूलरूप से परिणमित पुद्गलों के बारे में हम कहेंगे न कि इसने इसको अवगाहना नहीं दी क्योंकि यह इसको टकरा गया। परंतु जहां यह पुद्गल है, तो वहीं पर उसके अंदर वहां पर धर्मद्रव्य के प्रदेश हैं, अधर्मद्रव्य के प्रदेश हैं, कालद्रव्य के प्रदेश हैं। सूक्ष्म जीव वहां होंगे कि नहीं होंगे? तो सूक्ष्म जीवों के भी कर्म परमाणु वहां होंगे कि नहीं होंगे? तो ये सभी छहों द्रव्य आपस में एक दूसरे को अवगाहना देकर स्थित होते हैं। *श्रोता: अवगाहना का कार्य तो आकाशद्रव्य का है।* बिलकुल, क्योंकि वह सबको अवगाहना देता है। *श्रोता: जीव का तो केवल जानना होता है।* जीव का स्वभाव केवल जानना-देखना है, जीव भी और पुद्गल भी एक दूसरे को अवगाहना देते हैं, क्योंकि जिस आकाश के एक प्रदेश में एक पुद्गल परमाणु है, वहीं पर दूसरे अनंत परमाणु हैं। वहीं पर दूसरे अनंत स्कंध हैं। क्या वहीं पर जीव के प्रदेश नहीं हैं क्या?

श्रोता: सब द्रव्यों में अवगाहना शक्ति है? सब द्रव्यों में हैं। परंतु आकाशद्रव्य ऐसा द्रव्य है कि उसमें अवगाहन शक्ति इतनी है कि उसके अनंतवें भाग में सभी द्रव्य समा जाते हैं। सभी द्रव्य, अन्य सभी द्रव्य कहां रहते हैं? लोकाकाश में। लोकाकाश यह पूरे आकाशद्रव्य का कितना भाग है? अनंतवां भाग है। यानी आकाश में इतनी अवगाहना शक्ति है कि उसके अनंतवें भाग में सभी द्रव्य समा जाते हैं – अनंत जीव हैं, अनंतानंत पुद्गल हैं, ये सब। ख्याल में आता है न? तो यह अवगाहनाहेतुत्व किसका गुण है? तो हम कहेंगे कि आकाशद्रव्य का। वह उसका विशेष गुण कहेंगे हम। परंतु ऐसी अवगाहना देने की सामर्थ्य सभी द्रव्यों में नहीं होती तो जीव कर्मों को भी अवगाहना नहीं दे सकता था। जीव और कर्म में कौनसा संबंध है? एकक्षेत्रावगाही; एक क्षेत्र में एक-दूसरों को अवगाहना देना। एक जीव दूसरे जीव को अवगाहना देता है कि नहीं देता है? ४५ लाख योजन क्षेत्र में अनंत सिद्ध भगवान विराजमान हैं। तो उनके प्रदेश एक-दूसरे को अवगाहना देंगे कि नहीं? अवगाहना दी की नहीं दी उन्होंने? एक निगोदशरीर में अनंत जीव हैं और हर एक जीव का कार्माणशरीर अलग, हर एक जीव का तेजसशरीर अलग; फिर भी स्पेस वही। उसी स्पेस में, उसी आकाशक्षेत्र में, ये सभी वहां ठहरे हैं। तो उन्होंने एक-दूसरे को अवगाहना दी है।

श्रोता: एकक्षेत्रावगाही और अवगाहना में क्या फर्क है? अवगाहना यानी अवगाहना देना, यानी उसने एक क्षेत्र अवगाहा है न? एकक्षेत्र में अवगाहना। दोनों सर्वथा एक नहीं है। अवगाहना ऐसा भी हम कहेंगे – जघन्य अवगाहना यानी कितना क्षेत्र रोका है? उसको भी अवगाहना कहेंगे। यानी यह बहुत मोटा है तो हम कहेंगे कि उसने ज्यादा स्पेस रोकी है तो उसकी अवगाहना बड़ी है। यह महामत्स्य की अवगाहना बड़ी है और चींटी की अवगाहना छोटी है यानी उसका साइझ वहां देखेंगे। अवगाहना शब्द का अर्थ उसी अर्थ में लिया है और यहां एक दूसरे को अवगाहना देना – यह अवगाहनत्व गुण है। दूसरे द्रव्य को उसी द्रव्य के स्पेस में, क्षेत्र में समा देना फिर भी वह सर्वथा भिन्न द्रव्य है। एक द्रव्य ने दूसरे द्रव्य को अवगाहना दी इसका अर्थ उन दोनों के प्रदेश मिल नहीं गये हैं। एक क्षेत्र में रहते हुये हर एक का अस्तित्व बिलकुल भिन्न-भिन्न है। एक द्रव्य के कारण दूसरे द्रव्य में कुछ हेरा-फेरी नहीं होती है। उसकी जो कुछ अपनी-अपनी पर्यायें हैं, अपना-अपना जो कोई स्वरूप है, वह सब अपनेरूप से ही रहता है। एक क्षेत्र में रहते हैं उसका अर्थ उसके कारण दूसरे द्रव्य में कुछ चेंजेस हो जायें, कुछ प्रभाव पड़े ऐसा बिलकुल है नहीं। यहां एकक्षेत्रावगाह

यानी एक ही क्षेत्र में अनेक द्रव्य रहते हैं, तब उसको हम कहेंगे एकक्षेत्रावगाह संबंध। *श्रोता: दूध-पानी की तरह समझ ले?* हां दूध-पानी की तरह, फिर भी दोनों अलग-अलग हैं।

श्रोता: आत्मा है तो जैसे कि ज्ञान गुण ठोस है। तो ऐसा ठोस होने के बाद भी, मतलब बाकी के द्रव्य भी उसके अंदर – हां, बिलकुल ऐसा ही है। ज्ञानघन हम कहेंगे वह ठोस द्रव्य है, आत्मा में अन्य कुछ नहीं घुस जाता है फिर भी उसकी अवगाहना शक्ति ऐसी है कि उसी प्रदेश में अन्य भी द्रव्य रहते हैं। फिर भी वे परस्पर बिलकुल अत्यंताभावरूप से रहते हैं। एक क्षेत्र में रहे फिर भी सभी द्रव्यों में आपस में अत्यंताभाव है। यहां तक बात ख्याल में आयी? *श्रोता: आकाशद्रव्य के एक ही प्रदेश में पुद्गलद्रव्य के दो या तीन अणु रह सकते हैं क्या?* आकाशद्रव्य के एक ही प्रदेश में? आकाश के एक प्रदेश में सिंगल एक-एक अनंत परमाणु रहते हैं। द्व्यणुकवाले एकप्रदेशी स्कंध-अनंत। तीन अणुओं के एकप्रदेशी स्कंध-अनंत। चार अणुओं के एकप्रदेशी स्कंध-अनंत। ऐसे उत्कृष्ट संख्यात तक चले जाओ। फिर असंख्यात तक चले जाओ। अनंत तक चले जाओ। अनंत परमाणुओं के एकप्रदेशी स्कंध वे भी अनंत, उसी आकाश के एक प्रदेश में रहते हैं। *श्रोता: इसीलिये उसको अवगाहनत्व कहा?* इसीलिये अवगाहनहेतुत्व को आकाशद्रव्य का गुण कहा न!

हम जब सुबह अपना क्लास हुआ तभी एक प्रश्न आया था, हां। यह नंदीश्वर द्वीप के बारे में कुछ चर्चा आयी थी न? आपका कहना था सेंटर से गिनेंगे? कहां से? *श्रोता: एक लाख योजन का जैसे आपने जम्बूद्वीप बताया। उसके बाद दो लाख योजन, चार, आठ, सोलह...* हां, बराबर। *श्रोता: तो यहां से एक करोड़ त्रेसठ लाख चौरासी हजार योजन की भूमि के ऊपर यह है नंदीश्वर द्वीप और इस नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई भी इतनी ही है?* अभी मैं आपको बताती हूं। किसी भी द्वीप की चौड़ाई उसके अंदर के सभी द्वीप और समुद्रों की अगर हम चौड़ाई को गिनेंगे सेंटर पॉइंट से, तो डेढ़ लाख योजन अंदरवाले कम होते हैं और वह द्वीप डेढ़ लाख योजन अधिक होता है। एक सौ त्रेसठ करोड़ चौरासी लाख योजन यह अकेले नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई यानी विड्थ है। परंतु आप उसको सेंटर से उतना बताते थे। *श्रोता: वही थोड़ा कुछ आपने देखा पचास हजार योजन। यही कम हो जायेगा यहां पर?* देखो, एक बात यह जम्बूद्वीप एक लाख योजन है, परंतु सेंटर से गिनेंगे

तो एक बाजू पचास हजार योजन होता है और दूसरा जो लवणसमुद्र है वह दो लाख योजन। आगे दोगुणा-दोगुणा-दोगुणा होता है। जैन भूगोल पुस्तक निकालना पेज नंबर १९५ से शुरू होता है, लास्ट लाइन।

मध्यलोक में हमने असंख्यात द्वीप एवं समुद्र देखे थे। जम्बूद्वीप से लेकर यह आठवें नंबर का द्वीप है। कौनसा? नंदीश्वर द्वीप **अर्थात् सात द्वीप और सात समुद्र के बाद यह पंद्रहवें नंबर पर आता है**। यह तो ठीक है? हां, **पहला एक लाख, दूसरा २ लाख**, यानी दूसरे से डबल होना शुरू हुआ, **तीसरा ४ लाख, चौथा ८ लाख, पांचवां १६ लाख, छठवां ३२ लाख, सातवां ६४ लाख, आठवां १२८ लाख, नौवां २५६ लाख, दसवां ५१२ लाख, ग्यारहवां १०२४ लाख, बारहवां २०४८ लाख, तेरहवां ४०९६ लाख, चौदहवां ८१९२ लाख और पंद्रहवां १६३८४ लाख योजन का है। दूसरी भाषा में १६३ करोड ८४ लाख योजन इसका विस्तार है**। विस्तार यानी उसकी विड्थ इतनी है, चौड़ाई इतनी है। सेंटर से अगर उसके बीचवाले सभी समुद्र और द्वीपों को गिनेंगे हम, उनको इकट्ठा करेंगे तो कितना होगा? *श्रोता: आधा हो जायेगा?* आधा नहीं होता है। १६३८४ मायनस डेढ़ लाख इतना होगा, काउंट करो। काउंट करेंगे सबका? कॅल्क्युलेटर नहीं लाया? *श्रोता: डेढ़ लाख कम कैसे?* बताती हूं। *श्रोता: वैसे ही आप बोलिये समझ जायेंगे। चार्ट बताना है तो।* हां, जरा मुझे लिखना है। .५) २) ४) ८) १६) ३२) ६४) ... ८१९२) ऐसा-ऐसा करते जाना है डबल-डबल-डबल, हां। डबल-डबल-डबल करते हुये चौदहवें नंबर पर होगा? *श्रोता: ८१९२।* बराबर है? यहां तक की हमको टोटल करनी है। *श्रोता: जी हां।* अब यह जम्बूद्वीप का पॉइंट फाइव्ह छोड़ दो। २ से लेकर ८१९२ तक की टोटल कर दो, करो।

दोगुणा-दोगुणा है न? यह आधे मिनट का काम है, आप इतना ज्यादा टाइम ले रहे हैं? हमारे पास सूत्र है। **अंतधणं गुणगुणियं** सुना है कि नहीं यह? *श्रोता: हमें सिखाया है।* सिखाया है, अच्छा। यह दो-दो से गुणित है न? दो-दो से गुणित कहां तक पहुंचे? ८१९२ यह अंतिम धन यानी लास्ट फिगर है। उसको डबल करो। दो का गुणकार यानी गुणक है इसलिये उसे डबल करो। सौमिल कर रहे हो न? कितना हुआ? *श्रोता: १६३८४।* १६३८४, बराबर है? *श्रोता: बराबर।* १६३८४ मायनस आदिधनं २ स्टार्टिंग फिगर,

डिव्हायडेड बाय गुणकार २ मायनस १, यानी १। कितना हुआ? *श्रोता: १६३००।* नहीं, यह १६३८२ हो जायेंगे न? *श्रोता: हां।* १६३८२ और यह आधा हमने छोड़ा था वह उसमें मिला दो। तो अभी तक के सभी जो द्वीप और समुद्र हैं उनकी टोटल कितनी होती है? १६३८२.५ लाख योजन। यह अकेले नंदीश्वर द्वीप के वलयव्यास यानी चौड़ाई से डेढ़ लाख योजन कम है। अभी हम इतने तक नहीं जायेंगे। शुरुआत में बता देंगे। किसी भी द्वीप की चौड़ाई देखो। इस पुष्कर द्वीप की चौड़ाई कितनी है? १६ लाख योजन है। उसके पहले के सभी द्वीप-समुद्रों की कुल चौड़ाई गिनो। ८ + ४ + २ + ०.५ = १४.५ लाख योजन। वह १६ लाख योजन से कितना कम है? डेढ़ लाख योजन। अब धातकीखंड की बात करो। ४ लाख योजनवाले धातकीखंड के पहले क्या है? २ लाख योजन का लवणसमुद्र और ०.५ लाख योजन का जम्बूद्वीप कुल हुआ २.५ लाख योजन। ४ से २.५ कितना कम है? १.५ लाख योजन। कहीं पर भी चले जाओ। ६४ के पूर्व के सभी एक साथ ले लो। ३२, १६, ८, ४, २, ०.५। यहां ६४ है तो उसके पहले के सभी की चौड़ाई निकालने के लिये उसमें से डेढ़ लाख योजन कम कर दो। *श्रोता: ६२.५ लाख योजन।*

स्वयंभूरमण समुद्र तक भी चले जाओ। उसकी जितनी चौड़ाई है, बीचवाले सभी द्वीप-समुद्र एक साथ ले लो। उसमें डेढ़ लाख योजन कम हो जायेंगे। ख्याल में आती है बात यह? *श्रोता: प्रॅक्टिकल से।* हां? *श्रोता: प्रॅक्टिकल से आ गयी।* प्रक्टिकल से आ गयी, अच्छा। यानी यह जो चौड़ाई है न १६३८४ हमने देखी है, वह केवल नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई है। उसमें पहले के द्वीप-समूह नहीं गिनना है। वह सेंटर से दूरी है ऐसा नहीं कहना। आपने कहा कि चार्ट में ऐसा लिखा है कि बीच में उन्होंने, चार्ट में क्या किया है? बीच में मेरु दिखाना था। इसलिये उन्होंने बीच में मनुष्यक्षेत्र बता दिया, ढाई द्वीप और बाद में नंदीश्वर ड्रॉ किया है।

आप यहां का चार्ट निकालो जो मैंने स्वयं बनाया है। जैन भूगोल पुस्तक में शुरुआत में जो चार्टस् हैं न, उसमें चार्ट नंबर है ११। *श्रोता: पेज नंबर?* पेज नंबर ११। पहले के फोटो हैं न? ११ नंबर का फोटो। *श्रोता: रंगीन फोटो है।* रंगीन फोटो। बीच में जो ब्लू सर्कल-सर्कल निकाले हैं, एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र। तो सातवां द्वीप और

सातवां समुद्र ऐसा लिखा है वहां पर और उसके बाद यह नंदीश्वर द्वीप है और केवल नंदीश्वर द्वीप को यह १६३८४ और आगे वह लाख के झिरो-झिरो बताये हैं। यह अकेले उसकी चौड़ाई है। मनुष्यक्षेत्र के बाहर की चौड़ाई नहीं है यह। *श्रोता: बराबर है... मानुषोत्तर पर्वत बीच में निकाला है।* वह मानुषोत्तर पर्वत बीच में निकाला ही क्यों? पता नहीं। अगर मेरे चार्ट ऊपर से वह चार्ट बनाया है तो गलत हुआ है। *श्रोता: नहीं, यह सही है, उन्होंने बोला है। उसको हम जम्बूद्वीप से लेते हैं आपने जो भी बताया १९६ पेज पर, वह भी बराबर ओके आयेगा।* कैसे आयेगा? *श्रोता: पहला एक लाख, दूसरा फिर दो लाख।* एक लाख, तो एक लाख अगर जोडेंगे तो आपने पॉइंट फाइव्ह ज्यादा जोड़ दिया। *श्रोता: नहीं, वह डिस्टन्स की बात कह रहा हूं।* डिस्टन्स ही की बात मैं भी कह रही हूं। डिस्टन्स डेढ़ लाख योजन कम हो जाता है। *श्रोता: जम्बूद्वीप का आधा पॉइंट फाइव्ह लेंगे?* हां, बिलकुल पॉइंट फाइव्ह ही लेंगे। पूरा भी लेंगे तो एक लाख का डिफरन्स पड़ेगा। १६३८३ हो जायेंगे, १६३८४ नहीं हो सकते। ख्याल में आती है न बात? यह एक बाजू का डिस्टन्स नहीं है, यह केवल नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई है। क्योंकि दोगुणा-दोगुणा हमने यहां माप कर देखा है न? अभी डायरेक्ट निकालना है उत्तर आपको।

कितने नंबर का है यह द्वीप? पंद्रहवें नंबर का। दोगुणा-दोगुणा कबसे किया हमने? पहला तो लाख योजन था, एक बार दोगुणा फिर दोगुणा, यानी कितनी बार? चौदह बार दो-गुणा किया। यह गणित कैसा है? चौदह बार दोगुणा किया है। २ × २ × २ × २ ... १४ बार करना है यानी $२^{१४}$। यानी जिसका अर्धच्छेद चौदह है ऐसी संख्या निकालना है। अर्धच्छेद किसको कहते हैं? *श्रोता: दो से भाग हो जाये।* हां, देखो चार संख्या है। उसको दो से भाग दो। तब तक भाग देते जाना जब तक एक संख्या नहीं आवे। कितनी बार भाग देना पड़ेगा? *श्रोता: दो बार।* तो दो उसका अर्धच्छेद है। १६ को कितनी बार दो से भाग देंगे तो एक आयेगा? *श्रोता: चार बार।* चार बार। तो १६ का अर्धच्छेद ४ है। २५६ का अर्धच्छेद ८ है। पणट्ठी का अर्धच्छेद १६ है और हमें ऐसी संख्या चाहिये जिसका अर्धच्छेद १४ होगा। ख्याल में आयी न बात? १५ अर्धच्छेदवाली संख्या होगी तो पणट्ठी का आधा होगा। और १४ अर्धच्छेदवाली संख्या लेंगे तो पणट्ठी का चौथा भाग होगा। ६५५३६ का चौथा भाग करो तो १६३८४ आ जायेंगे। आप किसी भी तरह से निकालो उत्तर तो यही आनेवाला है। देखो, *श्रोता: अगर हम जम्बूद्वीप के सेंटर से न ले और पूरा व्यास लेकर एक*

लाख योजन पूरा जोड़ दें तो उत्तर आ ही जायेगा? फिर भी एक लाख कम ही हो जायेगा न? जम्बूद्वीप को पूरा लाख लेंगे तो भी। *श्रोता: एक डायरेक्शन से लेंगे तो एक लाख कम होगा अंदर से दूसरी डायरेक्शन से लेंगे तो सही होगा।* नहीं, एक डायरेक्शन में सेंटर से लेते हैं तो डेढ़ लाख का डिफरन्स है और जम्बूद्वीप पूरा लेंगे तो एक लाख का डिफरन्स होगा। *श्रोता: उधर दो का, दूसरी साइड को दो का।* कहीं से भी ले लो परंतु एक दिश यानी वह सेंटर से दूरी नहीं कही है। यह नंदीश्वर द्वीप की पूजन में जो लिखा है न, **एक सौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा, लाख चौरासिया एक दिश में लहा**। एक दिश का अर्थ एक दिशा में उसका डिस्टन्स-दूरी ऐसा नहीं लेना। एक दिश यानी उसका विस्तार कितना है? क्योंकि वह ऐसा पूरा ही राउंड है, सर्क्युलर है और उसकी विड्थ है कुछ। *श्रोता: चारों दिशा में।* हां, चारों दिशाओं में यानी पूरे सर्क्युलर में वैसा ही वैसा है। *श्रोता: मंदिर बताये हैं न चारों दिशा में?* हां चारों दिशाओं में १३-१३ मंदिर हैं। यह आप जो चार्ट देख रहे हैं न, उसमें वह सहीरूप से बताये हैं। ये जो ड्रॉइंग बनाये थे वे बिलकुल अनुपात में यानी जिसको कहेंगे एक्झॅक्टली प्रपोर्शनेट हैं। सेंटीमीटर-सेंटीमीटर काउंट करके वे बड़े-बड़े चार्टस् बनाये थे। उनके ये फोटो लेकर फिर बाद में कॉम्प्यूटर पर उनको थोडा पॉलिश किया है। ओरिजिनल चार्टस् तो मेरे हाथ के बनाये हुये हैं। हां, आप तो थे न जैन भूगोल के शिबिर में, तब सभीको उनके १२" × १६.५" के कलर झेरॉक्स विनामूल्य दिये थे। हां, *श्रोता: अभी भी हमारे पास मौजूद हैं।* हां, हैं न?

श्रोता: ये असंख्यात द्वीप-समुद्र एक्झॅक्टली कितने हैं? कौनसा असंख्यात? ये असंख्यात द्वीप-समुद्र कितने हैं किसीको याद है क्या? २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य यानी अढ़ाई उद्धारसागर। *श्रोता: उसके जितने समय हैं इनका काल?* नहीं-नहीं-नहीं। *श्रोता: पच्चीस यह जो हम लिखे हैं तो उसका मतलब?* ढाई उद्धारसागर। उद्धारपल्य किसको कहते हैं? व्यवहारपल्य हमने देखा था। वह गड्ढा करना, वह रोमखंड से भरना। उसके जितने रोमखंड हैं उस एक-एक रोमखंड के और कितने खंड करना? असंख्यात करोड़ वर्षों के जितने समय हैं उससे उसको मल्टिप्लाय करो, उतने उद्धारपल्य में रोमखंड होंगे और उतने उसमें समय होंगे – और संख्या गिननी है तो उतनी संख्या गिननी। पूरे मध्यलोक में ऐसे २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्यप्रमाण द्वीप और समुद्र हैं। यह तो उनकी संख्या है।

देखो, यह बात १९७ पृष्ठ पर लिखी है, सेकंड लाइन देखो। **नंदीश्वर द्वीप जो कि आठवां द्वीप है और द्वीप समुद्रों में उसका पंद्रहवां नंबर लगता है, इतनी बार दोगुणा-दोगुणा करते-करते हम थक गये**। क्योंकि वह १९६ पेज पर पूरा दोगुणा-दोगुणा करके लिख दिया है। **अब एक छोटे से करणसूत्र द्वारा हम इसके विस्तार का प्रमाण निकालेंगे। एक लाख से शुरू होकर दूसरा दो लाख, तीसरा चार लाख, चौथा आठ लाख। अर्थात् दूसरे के लिये दोगुणा किया, तीसरे के लिये दोगुणा (२ × २) दो बार किया, चौथे के लिये दोगुणा-दोगुणा-दोगुणा किया**, यानी चौथे के लिये तीन बार दोगुणा किया। पांचवें के लिये चार बार दोगुणा करेंगे, **तो पंद्रहवें के लिये** कितनी बार करना पड़ेगा? **चौदह बार दो संख्या लिखकर आपस में गुणा करनी पड़ेगी। करणानुयोग की भाषा में कहना हो तो १४ जिसका अर्धच्छेद है ऐसी संख्या १६३८४ है, वही हमारा प्रमाण है**, किसका? नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई का। अभी वह अर्धच्छेद किसको कहना? वगैरह-वगैरह बातें बतायी है। यह अपना अभी जैन भूगोल का प्रकरण नहीं है, अभी तो हम अवगाहना को देख रहे हैं, है न? इस पर आयेंगे बाद में, हां-हां।

तो हम यह बात देख रहे थे अवगाहना के संबंध में, जघन्य अवगाहना सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की होती है इस बात को हमने देखना शुरू किया था। यह सूक्ष्म क्या होता है। अपर्याप्त क्या होता है? उसकी बात हमने देखी थी। फिर पढ़ते हैं, देखो पृष्ठ १७७, जीवकाण्ड भाग १। **जितना आकाशक्षेत्र शरीर रोकता है उसका नाम यहां अवगाहना है**। यहां हम इस प्रकरण में अवगाहना किसको कह रहे हैं? यह एक दूसरों को अवगाहना देना वह बात अलग और यहां अवगाहना के प्रकरण में छोटी अवगाहना, बड़ी अवगाहना यह किसके लिये कहते हैं? शरीर जितनी जगह रोकता है उसको यहां अवगाहना कहेंगे। यानी हम अपनी भाषा में कहेंगे उसका साइझ कितना है? **सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जीव, उस पर्याय में** यानी निगोद पर्याय में **ऋजुगति से उत्पन्न हुआ, उसके तीसरे समय में घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण प्रदेशों की अवगाहनाविशेष धारी शरीर होता है**। यानी कितने प्रदेश रोकता है? तो विशिष्ट प्रदेश। उसका नाम क्या है? घनांगुल का असंख्यातवां भाग। **यह अन्य सर्व अवगाहना भेदों से जघन्य है**। जघन्य यानी मिनिमम है। **पुनश्च स्वयंभूरमण समुद्र के मध्यवर्ती जो महामत्स्य**, यहां से हम नंदीश्वर

द्वीप में चले गये थे, है न? यह स्वयंभूरमण समुद्र जो है वह अंतिम है। **उसकी उत्कृष्ट अवगाहना है, वह सर्वोत्कृष्ट अवगाहनाविशेष धारी शरीर है**। अब **यहां तर्क**, प्रश्न पूछ रहे हैं स्वयं पं. टोडरमलजीसाहब, **उपजने के तीसरे समय में सबसे जघन्य अवगाहना कैसे संभव है?**

पहले समय में कहो न, तीसरे समय में क्यों कहते हो? **वहां समाधान-निगोदिया जीव के शरीर उपजने के पहले समय में तो लंबा बहुत, चौड़ा थोड़ा, ऐसा चौकोर होता है**। जिसको हम कहेंगे लंबा बहुत, चौड़ा थोड़ा, इसतरह से आयत। **दूसरे समय में लंबा-चौड़ा थोड़ा, समान ऐसा चौकोर होता है**। वह तो चौकोर हो जायेगा। लंबाई और चौड़ाई दोनों ही समान हो जाती हैं। **तीसरे समय में कोण दूर करने से गोल आकार होता है**। अभी चारों कोणों को दूर करके ऐसा गोल हो जायेगा, चारों कोण कम हो जायेंगे तो उसकी अवगाहना और कम हो जायेगी। **तभी उस शरीर की अवगाहना का प्रमाण अल्प होता है, क्योंकि लंबे चौकोर और सम चौकोर से गोल क्षेत्रफल अल्प होता है**। नहीं तो निकालकर देखना, हां? गणित के अभ्यासु हो तो। आप कहेंगे स्कूल छोड़ा है तबसे उसको देखा नहीं है। **पुनश्च तर्क – जो ऐसा है तो ऋजुगति से उपजे हुये ही के होता है – ऐसा क्यों कहा**? हमने ऋजुगति क्या है उसको देखा था। अब यहां फिर समाधान करते हैं।

जीव जब परभव को गमन करता है तब उसकी विदिशाओं को छोड़कर, विदिशा समझते हैं? आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान्य। अंग्रेजीवालों को नहीं समझेगा; नॉर्थ ईस्ट, साउथ ईस्ट वह सब जो कुछ लगा लेना; इनको विदिशा कहते हैं यानी उपदिशा। तो उनमें गमन नहीं होता है, विदिशाओं में गमन नहीं होता। तो कहां होता है? **तो पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर ऐसी दिशाओं में होता है। ऊर्ध्व में गमन क्रिया होती है, और अधो में भी होती है**; ऊपर या नीचे। वह चार प्रकार की है, यह जो गमन क्रिया है **वह चार प्रकार की है – ऋजुगति, पाणिमुक्तागति, लांगलगति और गोमूत्रिकागति। वहां सीधा गमन हो, वह ऋजुगति है**। सीधा यानी बिना मोड़वाला। **जिसमें बीच में एक बार मुड़ता है वह पाणिमुक्तागति है**, यह मोड भी नाइंटी डिग्रीज् में होगा, उससे कम या ज्यादा नहीं होगा। **जिसमें बीच में दो बार मुड़ता है, वह लांगलगति है। जिसमें बीच में**

तीन बार मुड़ता है वह है गोमूत्रिकागति है। सो मुड़नेरूप जो विग्रहगति है, उसमें जीव योगों की वृद्धि से युक्त होता है। उससे शरीर की अवगाहना भी वृद्धिरूप होती है। इसलिये ऋजुगति से उपजे हुये जीव की जघन्य अवगाहना कही, यह सर्व जघन्य अवगाहना का प्रमाण है।

अब आगे की बात मत पढ़ना, हां, क्योंकि उसमें वह संदृष्टि बतायी है। देखो, यह जघन्य अवगाहना बतायी है। उसके बहुत सारे भेद होकर फिर वायुकायिक की जो जघन्य अवगाहना है, वह इससे असंख्यातगुणा है। जितनी बार गुणा होते-होते हम पंचेन्द्रिय तक पहुंचेंगे न, उसके उलटे यहां भाजकरूप में इसमें ले लिया है उसको भागहार कहते हैं। उतना गुणा करेंगे तो उसको कॅन्सल करेंगे इसतरह से यहां गणित बताया है। हम उस गणित के झमेले में अभी यहां नहीं जायेंगे। तो ये जो कुछ इन्द्रियों के यानी जाति के आश्रय से उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण यहां हम देखेंगे यानी और किसकी-किसकी जघन्य अवगाहना और उत्कृष्ट अवगाहना होती है उसे देखेंगे। एकेन्द्रियों में तो हमने देखी; जघन्य अवगाहना किसकी होती है देखा अभी? सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की और द्वीन्द्रियों में जघन्य अवगाहना किसकी होती है? अनुंधरी नाम की पर्याय है द्वीन्द्रिय पर्याप्त की, यह बात १८२ पेज पर है। हमें जघन्य देख रहे हैं न? उत्कृष्ट की बात बाद में देखेंगे।

पहले जघन्य की बात देखेंगे। द्वीन्द्रिय जीवों में जघन्य अवगाहना किसकी होती है? ९६ नंबर की गाथा है। उसके ऊपर लिखा है, **आगे पर्याप्त द्वीन्द्रियादि जीवों की जघन्य अवगाहना का प्रमाण और उनके स्वामी इनके निर्देश को कहते हैं**। उनका कथन करते हैं। **टीका – पर्याप्त द्वीन्द्रियों में अनुंधरी**, यह नाम है उस जीव का। **त्रीन्द्रियों में कुंथु, चतुरिन्द्रियों में कानमक्षिका, पंचेन्द्रियों में तंदुलमच्छ** इसका नाम तो सुना है सबने, है न? तंदुलमच्छ कौन है? *श्रोता: महामत्स्य के।* कौन है महामत्स्य के? *श्रोता: कान में रहते हैं।* कान में रहते हैं? अच्छा। और कहां चले जाते हैं? *श्रोता: सातवें नरक में।* सातवें नरक में? हां, कितनी मछली खायी? *श्रोता: एक भी नहीं।* भावों के-परिणामों के कारण जाते हैं। वह देखता है न? दूसरे बड़े-बड़े मत्स्य ऐसे मुंह फाड़कर सो रहे हैं और हजारों मछलियां अंदर जाती हैं और बाहर चली जाती हैं। वह सोचता है मैं होता तो इनको मुंह बंद करके निगल जाता। ऐसे परिणाम के कारण वह भी सातवें नरक में पहुंच जाता

है। तो देखो, इतनी छोटी अवगाहना है फिर भी उसके वज्रवृषभनाराच संहनन होगा तभी तो सातवें नरक में जायेगा वह। *श्रोता: ये सभी तो पर्याप्त हैं न?* यह पर्याप्तों की बात है। *श्रोता: तो इसमें अपर्याप्त की काउंटिंग?* होगी न? परंतु पर्याप्तों में उसका नंबरिंग किसके होगा, उस जीव को बताया है।

अपर्याप्तों में तो सबकी जघन्य अवगाहना उतनी हो सकती है न? अपर्याप्त अवस्था में। वह लब्धिअपर्याप्त की बात अलग है। उसका नंबरिंग, उसकी अवगाहना कितनी होती है, उसकी अवगाहना का नंबर कहां होता है वह हम बाद में देखेंगे, टेबल में। इन द्वीन्द्रियादि पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना कितनी होती है? तो घनांगुल का संख्यातवां भाग होती है। अब उसके डिटेल में हम नहीं जायेंगे, यह तो हमने जघन्य अवगाहना के भेद देखे। अब थोड़ी उत्कृष्ट अवगाहना भी देखेंगे और वह कहां पायी जाती है उसको भी देखेंगे। यह बात १७९ पृष्ठ पर लिखी है, ९५ नंबर की गाथा की टीका। एकेन्द्रियादि यानी एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय आदि में उत्कृष्ट अवगाहना किसकी पायी जाती है, उसका यहां कथन है। देखो, **एकेन्द्रियों में स्वयंभूरमण द्वीप के मध्यवर्ती जो स्वयंप्रभ नामक पर्वत**, अभी इसको देखना है। निकालो जैन भूगोल लाये ही हैं, तो उसका जरा उपयोग करेंगे। पहले वह चार्ट यानी फोटो निकालना है आपको। यह तीन नंबर का चार्ट जहां तिर्यक्लोक लिखा है। देखो, बाहर जो चौकौन है न? सबसे बाहरी ओर, तो देखो, मैं आपको बताती हूं। यहां आपको जितना दिखे उतना देख लो यहां पर। यह ब्लू पूरा है, उसके बाजू में चार कोनों में वह ग्रीन कलर है। पूरा एक राजू और एक राजू यह स्क्वेअर एरिया जो है, उसको हम तिर्यक्लोक कहेंगे। उसमें राउंड निकाला है वह तो स्वयंभूरमण समुद्र की आउटर बॉर्डर है। उसके बाहर चार कोन जो हैं यहां उसे चतुष्कोण भूमि कहते हैं। वहां पर भी ऐसी ही परिस्थिति है। पंचमकाल है वहां पर, वह भी कर्मभूमि का ही प्रदेश है।

यह स्वयंभूरमण समुद्र है, उसकी चौड़ाई कितनी लिखी है? कोई वहां देखकर बतायेंगे? हां, कितनी लिखी है? *श्रोता: $\frac{१}{८}$ एक बटा आठ।* $\frac{१}{८}$ यानी एक बटा आठ राजू, वह तो स्वयंभूरमण द्वीप की है। चार्ट में देखकर बताना है आपको। *श्रोता: $\frac{१}{४}$ यानी एक बटा चार है।* हां, एक बटा चार राजू। लेफ्ट साइड में लिखा है न? स्वयंभूरमण समुद्र की

चौड़ाई $\frac{१}{४}$ राजू यानी एक बटा चार राजू करीबन होगी। वैसे अंदर की कम है डेढ़ लाख योजन। मध्यबिंदू से अंत तक यानी पूरे हाफ साइड आधा राजू है। आधा राजू में अंदर के सारे द्वीप-समुद्र, कितने? कितने बताये थे? *श्रोता: २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य।* २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य में से वह एक मायनस करो स्वयंभूरमणसमुद्र को। बाकी सभी मिलकर उससे डेढ़ लाख योजन कम हैं। आधे राजू में सब हैं, आधे राजू में सब हैं एक बाजू के; उसमें आधा तो स्वयंभूरमणसमुद्र का। यह नियरली वन फोर्थ राजू और बाकी द्वीप-समुद्र वन फोर्थ राजू परंतु दोनों समान नहीं है। बाहर का और अंदर का उसमें डिफरन्स कितना है? डेढ़ लाख योजन का। उसके अंदर एक स्वयंभूरमण द्वीप बताया है। स्वयंभूरमण समुद्र से वह आधा है क्योंकि बाहर से अंदर आयेंगे तो आधा-आधा-आधा होगा।

तो स्वयंभूरमण द्वीप जो वन एट्थ राजू लिखा है, उसके बीच में झिगझॅग ऐसे पूरा राउंड दिखाया है, वह क्या है? स्वयंप्रभ पर्वत है। तो स्वयंप्रभ पर्वत की बाहरी ओर कर्मभूमि है और स्वयंभूरमण द्वीप का स्वयंप्रभ पर्वत के अंदर का भाग जो है, वहां तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि है। उसके अंदर के सभी द्वीपों में तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि है, मनुष्यलोक को छोड़कर; ढाई द्वीप को छोड़कर; यानी ढाई द्वीप के बाहर यानी मानुषोत्तर पर्वत के बाहर और स्वयंप्रभ पर्वत के अंदर, जितने द्वीप हैं उन सबमें संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच होंगे, वे जघन्य भोगभूमिवाले हैं। वहां कोई द्वीन्द्रिय आदि जीव नहीं हैं बीच में, समुद्र में कोई जलचर नहीं हैं। कोई त्रस जीव वहां नहीं होंगे, जलचर वगैरह। हां, पंछी जो उड़कर आते हैं या कोई देव किसी तिर्यंच को पटककर समुद्र में डालेगा, उसकी बात अलग है। तो हम जहां उत्कृष्ट अवगाहना देख रहे हैं वह स्वयंप्रभ पर्वत के बाहरी ओर देख रहे हैं। या तो वह द्वीप की बात करेंगे या तो समुद्र की बात करेंगे। अब हम इसको पढ़ेंगे।

एकेन्द्रियों में स्वयंभूरमण द्वीप के मध्यवर्ती जो स्वयंप्रभ नामक पर्वत, उसके परभाग में, यानी बाहरी ओर के भाग **संबंधी कर्मभूमिरूप क्षेत्र में उपजा हुआ कमल**, यहां जो हम वनस्पति वगैरह देखते हैं, तो भले वह प्रत्येकशरीरी है, पण प्रत्येकशरीर की भी अवगाहना इतनी छोटी-छोटी हो सकती है कि अनेक प्रत्येकशरीर जुड़-जुड़कर हमें एक बड़ा पेड़ दिखायी देता है। पूरा एक पेड़ एक जीव नहीं हो सकता। परंतु वहां इतनी

उत्कृष्ट अवगाहना है तो एक पूरा कमल, उसकी कितनी है अवगाहना? *श्रोता: एक हजार योजन।* हां, **कुछ अधिक एक हजार योजन लंबा, एक योजन चौड़ा ऐसा उत्कृष्ट अवगाह है**। यहां उन्होंने कमल का क्षेत्रफल कैसे निकालना वगैरह पूरा गणित बताया है। त्रिलोकसार में तो बहुत सारी, इतनी विस्तार से और इतनी सूक्ष्म विधि से ये सारी बातें बतायी हैं। उसमें तीन-तीन प्रकार से, एक स्थूलरूप से, एक मध्यमरूप से, एक सूक्ष्मरूप से क्षेत्रफल कैसे निकालना इन सबका वर्णन है। *श्रोता: कमल द्वीप में है कि समुद्र में है?* द्वीप में है। *श्रोता: यह पृथ्वीकायिक है?* यह अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतिकायिक है, जो एक हजार योजन लंबा है और उसका घनफल होता है ७५० घनयोजन। वह कैसे निकालना है वह आगे लिखा है, उसको हम छोड़ देते हैं।

जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना

जीव	नाम	लंबाई	घनफल
एकेन्द्रिय	कमल	१००० योजन	७५० घनयोजन
द्वीन्द्रिय	शंख	१२ योजन	३६५ घनयोजन
त्रीन्द्रिय	रक्तबिच्छू	$\frac{३}{४}$ योजन	$\frac{२७}{८१९२}$ घनयोजन
चतुरिन्द्रिय	भ्रमर	१ योजन	$\frac{३}{८}$ घनयोजन
पंचेन्द्रिय	महामत्स्य	१००० योजन	१२५००००० घनयोजन

फिर आगे देखते हैं द्वीन्द्रियों में शंख है न? वहां पर। यह कहां से शुरू हुआ? *श्रोता: १८० पेज।* १८० पेज में मिला न आपको? हां, देखो ऊपर। *श्रोता: बीच में।* हां, कमल हो गया। हां, एक जो श्लोक है न, उसके ऊपर। मिला सबको? **द्वीन्द्रियों में उसी स्वयंभूरमण समुद्रवर्ती शंख में बारह योजन लंबा, योजन का पांच चौथा भाग प्रमाण चौड़ा, चार योजन मुख व्यास से युक्त, ऐसा उत्कृष्ट अवगाह है**। अब उसका घनफल कितना है? तो ३६५ घनयोजन है। वह कैसे निकालना? वह पूरा गणित बताया है, घर जाकर उसको देखना आप।

त्रीन्द्रियों में देखते हैं, पेज नंबर १८१। **स्वयंभूरमण द्वीप के परभाग में जो कर्मभूमि संबंधी क्षेत्र है, वहां रक्तबिच्छू जीव हैं। उनमें योजन का तीन चतुर्थ भागप्रमाण** $\left(\frac{३}{४}\right)$ **लंबा, लंबाई के आठवें भाग** $\left(\frac{३}{३२}\right)$ **चौड़ा और चौड़ाई से आधा** $\left(\frac{३}{६४}\right)$ **ऊंचा, ऐसा उत्कृष्ट अवगाह है** और उसका घन क्षेत्रफल, नीचे लिखा है लास्ट लाइन में। $\frac{२७}{८१९२}$ **घनयोजन** रक्तबिच्छू। **चतुरिन्द्रियों में स्वयंभूरमण द्वीप के परभागवर्ती कर्मभूमि संबंधी क्षेत्र में भ्रमर हैं। सो उनमें एक योजन लंबा, पौन योजन** $\left(\frac{३}{४}\right)$ **चौड़ा और आधा योजन** $\left(\frac{१}{२}\right)$ **ऊंचा उसका अवगाह है।** और उसका घनफल $\left(\frac{३}{८}\right)$ घनयोजन है। लास्ट लाइन में आया। **पंचेन्द्रियों में स्वयंभूरमण समुद्र के**, अभी समुद्र को लिया, अभी इतनी देर तक तो हमने द्वीप को लिया था। **स्वयंभूरमण समुद्र के मध्यवर्ती महामत्स्यों में हजार (१०००) योजन लंबा, पांच सौ (५००) योजन चौड़ा, अढ़ाई सौ (२५०) योजन ऊंचा उत्कृष्ट अवगाह है**। और उसका हम आपस में गुणा करेंगे तो घनफल मिलेगा, वह कितना है? **साढ़े बारह करोड़ (१२५००००००) घनयोजन है**। इतना उसका अवगाह है, एक जीव का।

श्रोता: एक योजन यानी कितना किलोमीटर? हां, एक योजन यानी कितना? एक योजन यानी चार कोस। एक कोस यानी दो माइल; माइल, किलोमीटर नहीं। यानी एक योजन में ८ माइल्स यानी १२.८७ किलोमीटर हो गये। *श्रोता: यह छोटा योजन लेना न?* छोटा योजन है; शरीर की अवगाहना है और जब द्वीप और समुद्रों की बात करेंगे तो महायोजन लेना है। *श्रोता: एकेन्द्रिय कमल लिया वह द्वीप में लिया, समुद्र में नहीं?* द्वीप में लिया; वह अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतिकायिक है। हमारा जम्बूवृक्ष है न? वह पृथ्वीकायिक है। जम्बूद्वीप नाम क्यों पड़ा मालूम है कि नहीं? *श्रोता: जम्बूवृक्ष है।* जम्बूवृक्ष, क्या है वह? *श्रोता: पृथ्वीकायिक है।* वह रत्नमयी है। हां, बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना ४७ नंबर पर है और यह कमल ६३ नंबर पर है। *श्रोता: यह एक ही है इस अवगाहना के या और भी जीव हैं? अन्य श्रोता: बहुत हैं।* हां, यह इस अवगाहना के असंख्यात हैं क्योंकि वह कितना $\frac{१}{४}$ राजू चौड़ा समुद्र है यह तो। *श्रोता: असंख्यात महामत्स्य होंगे।* असंख्यात महामत्स्य हैं। आपने गुरुदेवश्री के प्रवचन में बहुत बार सुना

होगा। असंख्यात महामत्स्य पंचम गुणस्थानवर्ती हैं स्वयंभूरमण समुद्र में। वह समुद्र की बात है वहां के। अन्य अवगाहनावाले भी होंगे वहां पर। परंतु ये बड़ी-बड़ी अवगाहनावाले वहां समुद्र के बीच में होंगे न? सेंटर में। यह तो बड़ी अवगाहना की बात हो गयी। यहां तो हम जीवों के कितने अवगाह हो सकते हैं यह बात देख रहे हैं। क्योंकि हमें जघन्य अवगाहना से उत्कृष्ट अवगाहना तक के सभी भेदों को देखना है।

यहां क्षेत्रपरावर्तन चलेगा। जघन्य अवगाहना से चालू करेंगे और जब-जब एक प्रदेश अधिक अवगाहना मिलेगी तब उसको गिनना। अब पढ़ेंगे थोड़ा, फिर आगे जायेंगे। अपनी दूसरी पुस्तक निकालना है – फिर अवगाहना के भेद क्या है? वे सब देखेंगे क्रम से हम। पहले क्षेत्रपरावर्तन कहना किसको? उसको देखेंगे, फिर अवगाहना के भेदों पर आ जायेंगे। *श्रोता: पेज नंबर?* हां, पेज नंबर ६४२, पुस्तक दूसरी, नीचे से तीसरी लाइन। **आगे क्षेत्रपरावर्तन कहते हैं – वह क्षेत्रपरावर्तन दो प्रकार का है। एक स्वक्षेत्रपरावर्तन, एक परक्षेत्रपरावर्तन**। स्वक्षेत्र यानी स्वयं कितनी अवगाहना को धारण किये हुये जन्म लेता है, वह स्वक्षेत्र है। परक्षेत्र यानी लोकाकाश के कौनसे प्रदेश पर जन्म लेता है उसको हम परक्षेत्र कहेंगे। **वहां स्वक्षेत्रपरावर्तन कहते हैं – कोई जीव सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना को धारण करके उत्पन्न हुआ**, जो अभी हमने देखा था, सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जीव ऋजुगति से उत्पन्न होनेपर तीसरे समय में वह जघन्य अवगाहनावाला हुआ। **श्वास के अठारहवें भागप्रमाण अपनी आयु को भोगकर मरा, पुनश्च उससे एक प्रदेश अधिक अवगाहना को धारण कर...** । यह क्या जरूरी है वह निगोद ही होगा और इतने एक अधिक प्रदेशवाला होगा?

वह निगोद में से मरकर वायुकायिक हो जायेगा तो उसकी अवगाहना असंख्यातगुणी हो जायेगी। हां, हो सकता है मनुष्य हो जायेगा; हां, उसके बाद हो सकता है वह नरक में चला जायेगा; स्वर्ग में जायेगा; फिर आयेगा; फिर एकेन्द्रिय में चला जायेगा; परंतु निगोद नहीं होगा। अन्य पर्यायों में भटकता रहेगा। फिर चला जायेगा मनुष्य वगैरह में। फिर वह उस निगोद की जघन्य अवगाहना से एक प्रदेश अधिक अवगाहनावाला जब कभी जन्मेगा तब उसको उस क्रम में लेना। बीच में अन्य अवगाहनाओं के साथ अनंतकाल भी चला जाये तो वह काल तो गिनना परन्तु अक्रमवाली उन अवगाहनाओं को नहीं गिनना। फिर दो

प्रदेश अधिक अवगाहना का क्रम इसी पद्धति से चलेगा आगे, क्योंकि वह एक ही प्रदेश बढ़कर अवगाहना के साथ जन्मना चाहिये। भले ही वह निगोद में जन्मेगा परंतु क्रम छोड़कर दस प्रदेश अधिक अवगाहना के साथ जन्मेगा तो? आप कहेंगे उसको टिकमार्क करते चले जाओ, तो नहीं, वह नहीं चलेगा। जब क्रम से आयेगा तभी लेना है। अक्रम से आये तो ऐसा नहीं कि इसको भी वह फिल इन द ब्लँक्स कर दो, इधर जो-जो आ गये उसके उतने प्रदेश को टिकमार्क करते जाओ, ऐसा नहीं चलेगा। क्रम से जब नंबर आयेगा तभी उसे क्रम में ले लेना; अक्रम से जितनी बार जहां कुछ भी पर्याय धारण करें, जितनी अवगाहनावाला होकर जन्मे, उसका काल गिनना, उसको क्रम में नहीं गिनना।

देखो, **पुनश्च एक प्रदेश अधिक अवगाहना को धारण कर, पश्चात् दो प्रदेश अधिक अवगाहना को धारण कर, ऐसे अनुक्रम से एक-एक प्रदेश बढ़ते-बढ़ते, महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना तक, संख्यात घनांगुल प्रमाण अवगाहना के भेदों को वही जीव प्राप्त होता है। अवगाहना के जितने भेद हैं,** असंख्यात भेद हैं; **उन सब को एक जीव अनुक्रम से जितने काल में धारण करता है, उतना सब काल मिलकर समुदायरूप से स्वक्षेत्रपरावर्तन जानना**। आप कहेंगे आसान है न? पढ़ने के लिये आसान है क्योंकि वह उसका सारा टेबल (० ० +), (० ० +) करते-करते थक गये हम। तो अभी हम यह अवगाहना की बात यहां देखेंगे कि अवगाहना क्या होती है, वगैरह-वगैरह यहां हम देखेंगे। तो उसके लिये यहां हम यह टेबल फॉलो करेंगे, पृष्ठ संख्या १८८ पर, *श्रोता: पहली पुस्तक में?* हां, पहली पुस्तक में। यह १८८ कहा न, पहली पुस्तक में कहां तक पेजेस हैं? ५६० तक कुछ हैं। हां, उसके आगे के नंबर दूसरी पुस्तक में हैं। देखो, यह टेबल समझने के पहले हम थोड़ा उसको पहले पढ़कर वहां तक जायेंगे। देखो, यह टेबल समझाया है पेज नंबर १८२ से। ९७ गाथा के ऊपर जो लिखा है, वहां से हम पढ़ेंगे। अभी दो मिनट है और उसको चालू करेंगे और फिर उसका विस्तार बाद में देखेंगे।

आगे सबसे जघन्य अवगाहना से लेकर, अभी हमने जो सूक्ष्म निगोद की बात देखी थी **उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत शरीर की अवगाहना के भेद, उनके स्वामी** यानी किसको वे होते हैं, **अल्पबहुत्व** यानी किसकी अवगाहना किससे कितनी गुणा है या थोड़ी अधिक है यानी विशेष अधिक है या असंख्यातगुणा है, वह बात यहां बतायेंगे। **और क्रम**

से गुणकार यानी कितने गुणा है? क्या आवली के असंख्यातवें भागगुणा है या पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है, यह बात **पांच गाथाओं के द्वारा** यहां दिखायेंगे। तो यह जो टेबल है, १८८ पेज पर, इस टेबल का अर्थ क्या है, उसको कैसे पढ़ना है, उसका पूरा ही विवरण यहां १८२ पृष्ठ से शुरू होकर आगे बढ़ेगा। उसको हम क्रम से देखेंगे और समझेंगे, तो ये अवगाहना के कितने असंख्यात भेद हो सकते हैं उसकी थोड़ी हमें आयडिया आ जायेगी। इस संबंधी कोई प्रश्न है तो अभी दो मिनट हैं। *श्रोता: एक प्रश्न है।*

प्रश्न: जैसा कर्म का उदय हो, वैसा ही जीव परिणाम करें, ऐसी पराधीनता नहीं है तो एक जीव कर्म परमाणुओं के अनुभाग की हीनाधिकता में कैसे परिणाम करता है? यह जीव जैसा परिणाम करता है तो एक समयप्रबद्ध में रहनेवाले परमाणु के अनुसार कैसे परिणाम होते हैं? देखो, समयप्रबद्ध तो बंधनेवाले का नाम है और यहां जीव के परिणामों की बात होती है वह उदय में आनेवाले के साथ निमित्त बनता है। उदय में आनेवाले कर्मों के साथ वह निमित्त बनता है जीव के भावों का। कार्य में, निमित्त नियामक है या उपादान नियामक है? *श्रोता: उपादान।* जीव जैसे परिणाम करता है उस समय कथन होगा कि ऐसे कर्म का उदय है। वह उसमें निमित्त है या निमित्त पहले आता है और वह जीव को वैसा परिणाम कराता है?

पहले हमें यह निमित्त-नैमित्तिक संबंध क्या है और उसमें उपादान से कार्य होता है कि निमित्त से कार्य होता है? यह नक्की करना पड़ेगा। कार्य तो उपादान से ही होता है, 'ही' लगा लो उसमें। वहां निमित्त हाजिर होता है और जो हाजिर होता है, निमित्त की तरफ से कथन किया जाता है। परंतु जीव स्वयं अपने, स्वयं के परिणाम से, देखो, यहां उदयरूप जो निषेक हैं, उसमें हीन से लेकर उत्कृष्ट तक अनंत अलग-अलग अनुभाग पड़े हैं। जीव अत्यंत क्रोधरूप से परिणमित होगा तो हम कहेंगे तीव्र क्रोध का उदय है। हीन क्रोधरूप परिणमन करेगा तो कहेंगे मंद का उदय है। वहां क्रोध, मान, माया, लोभ, सभी परमाणु पड़े हैं। जीव जो परिणाम करेगा, उसका उदय कहलायेगा। इसकी और चर्चा बाद में करेंगे। अभी हम यहीं रुकते हैं, अपनी समय की स्थिति पूरी हुयी है यहां पर।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१६. अवगाहना के ६४ स्थान

षट्खण्डागम के आधार से हम कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं यहां पर। हमारा प्रकरण यहां अवगाहना संबंधी चलेगा क्योंकि हम यहां स्वक्षेत्रपरावर्तन का स्वरूप देखने जा रहे हैं। अवगाहना का अर्थ होता है देह की अवगाहना। देह जितना क्षेत्र रोकता है, शरीर जितना क्षेत्र रोकता है उसको यहां अवगाहना कहा है क्योंकि अभी जीव उस देहप्रमाण है। उसकी अपेक्षा से यहां बात चलेगी।

अभी जो अपना प्रकरण चला था, उसके बारे में अभी बहुत डिस्कशन चल रहा है, है न? यह डेढ़ लाख का डिफरन्स पड़ा कैसे? स्टार्टिंग में जम्बूद्वीप की चौड़ाई कितनी है? *श्रोता: एक लाख है।* एक लाख योजन उसका डायमीटर है और उसकी त्रिज्या यानी एक बाजू देखेंगे तो सेंटर से आधा लाख योजन है और दूसरा लवणसमुद्र? दो लाख योजन है। मूल में ही डेढ़ लाख योजन का डिफरन्स है। उसके आगे चले जायें, यह आधा और दो मिलकर तो ढाई होता है और उसके आगेवाले द्वीप की चौड़ाई चार लाख योजन है। डेढ़ लाख योजन का डिफरन्स है। कितने भी असंख्यात द्वीप-समुद्र आगे चले जाओ तो भी यह डेढ़ लाख का डिफरन्स तो होगा ही। सेंटर से वहां तक के पूर्व के सभी द्वीप-समुद्र मिलकर जितने होते हैं उसमें डेढ़ लाख योजन मिला दो तो नेक्स्टवाला द्वीप या समुद्र हो जायेगा। कहीं पर भी काउंट करना। *श्रोता: एक ही साइड में?* हां, एक ही साइड में है और मान लेते हैं पांच नंबर का, पंद्रह नंबर का जो नंबर का हमको गिनना है, उसमें से एक कम करो उतनी बार २ संख्या लिखकर आपस में गुणा करो, तो उस विशिष्ट द्वीप या समुद्र की चौड़ाई का प्रमाण आयेगा। यह तो बात ख्याल में आयी न? इसके बारे में कोई कन्फ्यूजन नहीं रहना चाहिये। एक प्रश्न और भी आया था।

प्रश्न: द्वीपों में इतना पानी है क्योंकि एक द्वीप-एक समुद्र है। इतना पानी है वह जम्बूद्वीप, भरतक्षेत्र में आ सकता है कि नहीं? ऐसा प्रश्न क्यों उठा है? क्योंकि उन्होंने, किसीने, किसीके द्वारा सुना है। उनको ऐसा किसीने किसी उपदेश में ऐसा बताया था कि देवों ने पानी को रोक रखा है। *श्रोता: व्यंतर जाति के देवों ने पानी रोक रखा है।* कौनसे पानी को रोका है? *श्रोता: श्वास लेते हैं तो ऊपर उठता है पानी, फिर नीचे गिरता है –*

ऐसा कुछ है। उन्होंने कहा ये जो लहरें उठती हैं, इतने असंख्यात समुद्रों में बड़ी-बड़ी लहरें उठेगी। अन्य समुद्रों में लहरें कहां से उठेगी? ये ज्वार-भाटा कहो, वह कहां होता है? *श्रोता: समुद्र में।* कौनसे समुद्र में? मात्र लवणसमुद्र में; क्यों? इतना पानी आता कहां से है? क्या अमेरिका का पानी यहां ज्वाररूप आता है और वह फिर भाटेरूप वैसा चला जाता है क्या? ज्वार यानी भरती, फ्लड टाइड; भाटा यानी ओहोटी-एब टाइड। *श्रोता: विवर बने हुये हैं और उन विवरों के अंदर से वह पानी आता है।* ये पाताल बड़े-बड़े बने हुये हैं, एक लाख योजनवाले पाताल बने हैं, चार तो बड़े हैं और फिर ऐसे एक हजार आठ तो पाताल हैं। *श्रोता: आपके भूगोल में है न।* हां, हमारे भूगोल में है।

देखो-देखो, उसका चार्ट भी देख लो, सात और आठ नंबर का चार्ट देखो। यह दो लाख योजन ऐसी लवणसमुद्र की चौड़ाई है, उसके सेंटर में, सेंटर से नीचे की ओर, लाख योजन ऐसे बड़े-बड़े कुंड जैसे जो हैं, पाताल उनको कहते हैं; तो पानी उनके अंदर भरा है। ऊपर पानी है और नीचे पवन है और बीच में दोनों मिश्र हैं। तो वहां सहजरूप से वह पवन का ऊपर चढ़ना और नीचे आना हो जाता है। तो पानी भी बाहर की ओर चला आ जाता है, परंतु अन्य और द्वीपों और समुद्रों में ऐसे कोई पाताल नहीं हैं, बस यहीं पर हैं और अभी जब उसका विशेष प्रकरण आयेगा जैन भूगोल में तो पढ़ लेना आप। यानी देवों ने रोक रखा है वगैरह ऐसी बातें सही नहीं हैं। *श्रोता: कभी आया था ऐसा, व्यंतर जाति के ऐसा नाम भी याद है मुझे।* वहां वे देव होते होंगे परंतु ऐसा उन्होंने रोका है या वे बाहर आते हैं, ऐसी कोई बात नहीं है। ऐसी वह सहजरूप से प्रक्रिया होती है।

अभी देखो, यहां पर, हम यहां अवगाहना के भेद देखने जा रहे हैं। यह जो १८८ नंबर पेज पर जो टेबल है, उस टेबल को हमें समझना है। जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक की अवगाहनाओं का यह टेबल है, इसको यंत्र कहते हैं। उस यंत्र को कैसे पढ़ना यह बात पं. टोडरमलजी ने १८२ पृष्ठ से बताना शुरू की है। देखो, यह ९७ गाथा की टीका, वहां से हम पढ़ेंगे। एक बाजू आप १८८ पृष्ठ हाथ में रखना और एक बाजू १८२। जब चाहे तब हम बतायेंगे, तब उलटकर-पलटकर आपको उसको देखना है। तो हाथ में दोनों ही पेज ऐसे पकड़कर रखना। पेज नंबर अभी १८२ नीचे से चौथी लाइन। **यहां नाम का एकदेश, वह संपूर्ण नाम में वर्तता है**। क्या कहा है? नाम का एकदेश कहां से आया है?

तो इसलिये गाथा पढ़ेंगे देखो,

सुहमणिवातेआभूवातेआपुणिपदिट्ठिदं इदरं।
बितिचपमादिल्लाणं एयाराणं तिसेढीय ।।९७।।

सूक्ष्मनिवातेआभूवातेअपृनिप्रतिष्ठितमितरत्।
द्वित्रिचपमाद्यानामेकादशानां त्रिश्रेणयः ।।९८।।

यहां लिखा है न सुहमणिवातेआभू ये क्या है? णि यानी निगोद, वा यानी वायुकायिक, ते यानी तेजसकायिक, आ यानी अप्कायिक, भू यानी पृथ्वीकायिक। देखो, **नाम का एकदेश**, हम भी करते हैं न? नाम का एकदेश यानी शॉर्ट-फॉर्म; ऐसा भी कहते हैं न हम? हमारे भतीजे का नाम विशाल है उसको 'विश' कहते हैं। किसी एक का नाम है संगीता उसको 'सँग' कहते हैं। ऐसे शॉर्ट फॉर्म हमने बना दिये हैं। तो यहां पर भी, सुदर्शन मेरु को क्या कहते हैं हम? सुमेरु। तो **नाम का एकदेश, वह संपूर्ण नाम में वर्तता है। इस लघुकरण** न्याय से, **न्याय के आश्रय से गाथा में कहा हुआ णिवा इत्यादि**। ऊपर लिखा है न? सूक्ष्मनिवातेआभू इत्यादि **प्रथम अक्षरों के द्वारा** उससे क्या गर्भित होता है? कि **निगोद, वायुकायिक आदि जीवों का ग्रहण करना** चाहिये। देखो, सेकंड लाइन में भी क्या है? बितिचप आदि, संस्कृत में देखो-देखो, सूक्ष्मनिवातेआभू और फिर आगे बादर के लिये वातेअपृनिप्रतिष्ठितमितरत्। नीचे भी द्वित्रिचप, ये क्या हैं सारे? द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय क्योंकि गाथा में छोटीसी दो लाइन में उनको इन सबको इकट्ठा करके बताना था। तो इसतरह से बताते हैं। यह कैसे पढ़ना गाथा? उसका यह शॉर्ट-फॉर्म में, उसका क्या अर्थ होता है? यह यहां बता दिया। अब यंत्र को कैसे पढ़ना यह बात देखेंगे।

देखो, तो यह यंत्र निकालना १८८ पेज पर उसमें १२ कोठे बनाये हैं, उसमें एक करेक्शन है चौथे कोठे में, जो वहां नीचे लिखा है शुद्धिरूप से, चौथे कोठे में अपर्याप्तों की जगह पर्याप्त चाहिये। इन पांच अपर्याप्तों की लिखा है न? **इन पांच पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना है**। वह अ निकाल दो वहां से अपनी-अपनी पुस्तक में से और ११ नंबर के कोठे में जहां अप्रतिष्ठित लिखा है न? वहां **अप्रतिष्ठित** के आगे **प्र** लिखो। प्र यानी प्रत्येक, **अप्रतिष्ठित प्र**। अभी ये जो १२ कोठे हैं, मूल में जो पं. टोडरमलजी के लिखे हुये थे, उसमें – कोठों में कोई नंबरिंग नहीं किया था। तो वह पढ़ते समय बहुत कन्फ्यूजन

हो रहा था इसलिये मैंने उसके ऊपर नंबर डाले हैं। देखो, क्रम से ३ कोठे हैं, फिर चौथा है, चौथे के नीचे पांचवां है और पांचवें के नीचे छठा है फिर उसके आगे चौथे के आगे सातवां है उसके नीचे आठवां है उसके नीचे नौवां है फिर सातवें के आगे दसवां, ग्यारहवां और बारहवां एक लाइन में हैं। ख्याल में आया?

(१) सक्ष्म निगोद १ वायु २ तेज ४ अप् ४ पृथ्वी ५ इन पांच अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(२) बादर वायु ६ तेज ७ अप् ८ पृथ्वी ९ निगोद १० प्रति. प्रत्येक ११ इन छह अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(३) अप्रति. प्रत्येक १२ द्वीन्द्रिय १३ त्रीन्द्रिय १४ चतुरिन्द्रिय १५ पंचेन्द्रिय १६ इन पांच अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(४) सूक्ष्म निगोद १७ वायु १८ तेज १९ अप् २० पृथ्वी २१ इन पांच पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(७) बादर वायु २२ तेज २३ अप् २४ पृथ्वी २५ निगोद २६ प्रति. प्रत्येक २७ इन छह पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(१०) अप्रति. प्रत्येक ५० द्वीन्द्रिय ५१ त्रीन्द्रिय ५२ चतुरिन्द्रिय ५३ पंचेन्द्रिय ५४ इन पांच पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(११) त्रीन्द्रिय ५५ चतुरिन्द्रिय ५६ द्वीन्द्रिय ५७ अप्रति. प्रत्येक ५८ पंचेन्द्रिय ५९ इन पांच अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।	(१२) त्रीन्द्रिय ६० चतुरिन्द्रिय ६१ द्वीन्द्रिय ६२ अप्रति. प्रत्येक ६३ पंचेन्द्रिय ६४ इन पांच पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।
			(५) सूक्ष्म निगोद २८ वायु २९ तेज ३० अप् ३१ पृथ्वी ३२ इन पांच अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।	(८) बादर वायु ३३ तेज ३४ अप् ३५ पृथ्वी ३६ निगोद ३७ प्रति. प्रत्येक ३८ इन छह अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।			
			(६) सूक्ष्म निगोद ३९ वायु ४० तेज ४१ अप् ४२ पृथ्वी ४३ इन पांच पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।	(९) बादर वायु ४४ तेज ४५ अप् ४६ पृथ्वी ४७ निगोद ४८ प्रति. प्रत्येक ४९ इन छह पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।			

अब इसको कैसे पढ़ना, उसको हम यहां देखते हैं १८३ पेज पर।

वहां सूक्ष्म निगोदिया, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म तेजसकायिक, सूक्ष्म अप्कायिक, सूक्ष्म पृथ्वीकायिक नाम धारक पांच सूक्ष्म उस यंत्र के प्रथम कोठे में लिखे हैं। अब निकाल कर देखो। यह जो सूक्ष्म शब्द है वह सबके लिये ॲप्लिकेबल है। इसको क्या कहते हैं? एक बार सूक्ष्म लिखा वह सबके लिये आ गया; इसको आदिदीपक कहते हैं। तो सूक्ष्म निगोद, वायु, तेज, अप, पृथ्वी लिखे हैं न पहले कोठे में? अब उनकी कौनसी अवगाहना है वह तो बाद में बतायेंगे। इनके अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना यहां लेना है वह तो बाद में बतायेंगे। १८३ पेज निकालना। **पुनश्च उसके ठीक आगे** यानी दूसरे नंबर के कोठे में **बादर**, अभी ये सब बादर हैं।

बादर में किस-किसको लेना है? **वायु**, अब बादर निगोद का पहला नंबर नहीं लिया है, वायु को लिया है। तो **बादर-वायु, तेज, जल, पृथ्वी**, फिर **निगोद** और उसके बाद **प्रतिष्ठित प्रत्येक**। पहले कोठे में कितने आये थे? पांच! और दूसरे में छह हैं क्योंकि वहां वनस्पतिकायिक के दो भेद आ गये। एक निगोद आया और प्रतिष्ठित प्रत्येक भी आया। **नामधारक छह बादर पूर्ववत् अनुक्रम से दूसरे कोठे में लिखे हैं। पहले जिनके नाम लिये थे, उनके ही फिर से लिये, क्योंकि प्रयोजन की समर्थता से प्रथम कोठे में सूक्ष्म कहे थे, दूसरे कोठे में बादर हैं**। यह बात ख्याल में आयी? पहले दो कोठे समझ में आये? पहले कोठे में सभी सूक्ष्म लिये हैं। पांचों स्थावरकायवाले, दूसरे कोठे में उनकी ऑर्डर चेंज है, वहां वायुकायिक से शुरू है। वायुकायिक फिर तेजकायिक, फिर अप्कायिक, पृथ्वीकायिक फिर निगोद और बाद में प्रतिष्ठित प्रत्येक, पहिले पांच और ये छह, अब आगे बढ़ते हैं।

तीसरे कोठे में क्या है? उसको पढ़ेंगे १८३ पेज **उसके आगे अप्रतिष्ठित प्रत्येक**। यह प्रतिष्ठित प्रत्येक और अप्रतिष्ठित प्रत्येक क्या होता है? देखो, वनस्पतिकायिक के दो प्रकार हैं – प्रत्येक वनस्पतिकायिक और साधारण वनस्पतिकायिक। साधारण वनस्पतिकायिक का ही दूसरा नाम है निगोद। प्रत्येक वनस्पतिकायिक का अर्थ होता है एक जीव और उसका एक शरीर यानी एक शरीर का स्वामी एक जीव। उसको कहेंगे प्रत्येक वनस्पति। अब उस प्रत्येक वनस्पति के आधार से जहां निगोद रहते हैं, यानी निगोद के शरीर उसके आधार से रहेंगे उसको क्या कहेंगे? प्रतिष्ठित प्रत्येक। सप्रतिष्ठित कहो या

अकेला प्रतिष्ठित कहो एक ही बात है और अप्रतिष्ठित यानी उसके आधार से निगोद नहीं हैं; वह मात्र प्रत्येक वनस्पति है। *श्रोता: यह जमीकंद वगैरह साधारण में लेंगे?* जमीकंद वगैरह जो हैं, वे प्रतिष्ठित प्रत्येक हैं। साधारण तो उसके आधार से रहते हैं। बादर निगोद जो हैं उनको किसी आधार की जरूरत हैं, वे आधार से रहते हैं। *श्रोता: जितनी भाजी हैं वे सारी सप्रतिष्ठित प्रत्येक में आयेगी?* नहीं, कौनसी? *श्रोता: कोई भी जैसे पालक भाजी है, पतरवेलिया है?* पत्ता भाजी? पत्ता भाजी में त्रस जीवों की संभावना होती है। त्रस जीवों के शरीरों में निगोद होते हैं उस अपेक्षा से उसको लेना है। मात्र पत्ते हैं इसलिये उनके आधार से निगोद रहते हैं ऐसा नहीं है।

किसी भी झाड़ के पत्ते जब बहुत कोमल होते हैं, जिनकी सिरायें दिखायी नहीं देती, जैसे इमली के छोटे-छोटे लाल पत्ते, अन्य वृक्षों के कोंपल, अंकुर आदि वे प्रतिष्ठित होते हैं यानी उनके आधार से निगोद शरीर रहते हैं और जब वे पत्ते आदि बड़े हो जाते हैं तब अप्रतिष्ठित हो जाते हैं। *श्रोता: ये नीम वगैरह के पत्ते में भी ऐसा लगाना?* उन सबमें ऐसा समझना और वह ककड़ी वगैरह जब बहुत छोटी होती है, तब तक तो सभी प्रतिष्ठित हैं। कैरी है, ककड़ी है, आपके बेबीकॉर्न है, फॅशन चलती है न उसकी? वह पूरा फल मॅच्युअर नहीं है न? ये कॅक्टस् जाति की वनस्पतियां हैं वे क्या हैं? ॲलोव्हेरा पूरा ही निगोद से भरा है। हर्बल-हर्बल करके हम उसको स्वीकारते हैं परतु उस हर्बल में अनंत जीव हैं। क्या करें? पता नहीं है न? बाल और खाल के लिये लगाते रहते हैं हम उसको; ॲलोव्हेरा; उसकी फॅशन चलती है ॲलोव्हेरा-ॲलोव्हेरा थुवर-थुवर क्या कहते हैं गवारफाटा-गवारफाटा; हिंदी में उसको गवारफाटा कहते हैं न? गुवारफाटा गुजराती में, *श्रोता: फाटो,* अच्छा गुवारफाटो। हां, देखिये आगे बढ़ेंगे, इसके आगे अभी तीसरे कोठे की बात है। अप्रतिष्ठित प्रत्येक यह समझ में आया? इसका अर्थ क्या है यह भासित होना चाहिये।

अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय नामधारक ये पांच बादर तीसरे कोठे में लिखे हैं। ये द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय आदि तो बादर ही होते हैं और ये प्रत्येक वनस्पति भी बादर ही होती हैं। प्रतिष्ठित हो या अप्रतिष्ठित हो वे बादर ही होती हैं। सूक्ष्म वनस्पति में तो केवल निगोद का ही अंतर्भाव हो जाता है। तो ये तीन पंक्तियां हो गयी। **इन सोलह में आदि के सूक्ष्म निगोदादि ग्यारह, उनकी आगे तीन पंक्तियां**

करनी। वहां अभी इसका अर्थ कहेंगे हम, **एक-एक पंक्ति में दो-दो कोठे जानना। कैसे? वह कहते हैं। पूर्व में तीसरा कोठा कहा था उसके आगे दो कोठे करना।** देखो, पहले तीसरा कोठा कहा था उसके आगे दो कोठे करने, है न? **उनमें जैसे पहले व दूसरे कोठे में पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे थे, वैसे यहां भी लिखे हैं।** पहले मैं पढ़ लेती हूं फिर आपको कोठों के ऊपर १८८ पेज पर समझाऊंगी। **पुनश्च उन दो कोठों के नीचे की पंक्ति में दो कोठे और करने। वहां भी उसीप्रकार पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हैं। पुनश्च उनके नीचे की पंक्ति में दो कोठे और करना, वहां पर भी उसीप्रकार पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हैं।**

देखो, अभी पेज नं १८८ पर आना, अभी पहले कोठे में पांच सूक्ष्म हैं; वहां पर्याप्त की जघन्य है या अपर्याप्त की जघन्य है आदि नीचे की लाइन मत पढ़ना। पहिले कोठे में पांच सूक्ष्म हैं, दूसरे कोठे में छह बादर हैं और तीसरे कोठे में वे अप्रतिष्ठित और द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय – ये पांच हैं। यानी ५ + ६ + ५ = १६ हो गये न? अभी उसके बाद चार और सात नंबर के दो कोठे किये चौथे कोठे में वे सूक्ष्मवाले ५ लिये और सातवें वें कोठे में वे बादर वायु उसी ऑर्डर से वे ६ लिये। पहले कोठे में जो थे वे चौथे कोठे में आये। दूसरे कोठे में थे वे सातवें कोठे में आये, बराबर? अब उसके बाद जो चौथे कोठे में हैं, वे ही पांचवें कोठे में हैं और वे ही उसी ऑर्डर में छठे कोठे में हैं। मिला? जो सातवें में हैं वे ही आठवें में हैं और वे ही नौवें में हैं। ख्याल में आयी बात? जो पहले कोठे में थे वे ही चौथे में हैं, पांचवें में हैं और छठें में हैं। जो दूसरे कोठे में थे वे ही सातवें में हैं, आठवें में हैं और नौवें में हैं। अब जो तीसरे कोठे में हैं वे जाकर दसवें कोठे में आयेंगे, वे ही ग्यारहवें में आयेंगे, वे ही बारहवें में आयेंगे। हां, ऑर्डर थोडी चेंज है वहां पर।

जीवों की अवगाहना

(१)	सूक्ष्म एकेन्द्रिय	नि	वा	ते	आ	भू	
(२)	बादर एकेन्द्रिय	वा	ते	आ	भू	नि	प्रति. प्र
(३)	बादर	अप्रति. प्र	द्वी	त्री	चतु	पंचे	

		कोठा क्रमांक		
इनमें क्रम से	**अपर्याप्त की जघन्य**	१	२	३
	पर्याप्त की जघन्य	४	७	१०
	अपर्याप्त की उत्कृष्ट	५	८	११
	पर्याप्त की उत्कृष्ट	६	९	१२

फिर से पढ़ेंगे इसको देखो, इसको थोड़ा समझाने के लिये मैंने आपके लिये एक चार्ट बनाया है। चार्ट को देखो आप-इसमें तीन अलग-अलग ग्रुप्स बनाये हैं।

हमेशा जीव के हम चौदह जीवसमास बनाते हैं, परंतु यहां सोलह में उनको विभाजित किया है। पहला ग्रुप – सूक्ष्म एकेन्द्रिय और वे ही नाम दिये हैं शॉर्ट-फॉर्म जिसको हम कहेंगे नि, वा, ते, आ, भू। नि यानी निगोद, वा यानी वायुकायिक, ते यानी तेजसकायिक, आ यानी अप्कायिक और भू यानी पृथ्वीकायिक। फिर बादर एकेन्द्रियवाला दूसरा ग्रुप, बादर एकेन्द्रिय में उसकी ऑर्डर कैसी ली है? वा यानी वायुकायिक, तेजसकायिक, अप्कायिक, पृथ्वीकायिक यहां से यहां तक यही ऑर्डर है पहला निगोद था वह यहां पर आ गया निगोद, इसमें एक और ले लिया प्रतिष्ठित प्रत्येक। तीसरे ग्रुप में तो बादर हैं परंतु मात्र एकेन्द्रिय नहीं हैं अप्रतिष्ठित प्रत्येक हैं, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय हैं। ये तीन ग्रुप हैं और उन्हींकी अवगाहना चलेगी सर्वत्र। उनमें से क्या-क्या बतानेवाले हैं? तो इन सबकी क्रम से इनके अपर्याप्तों की जघन्य होगी, १ ले कोठे में पहले ग्रुप के अपर्याप्तों की जघन्य। २ रे कोठे में दूसरे ग्रुप के अपर्याप्तों की जघन्य और ३ रे कोठे में तीसरे ग्रुप के अपर्याप्तों की जघन्य। ये सब उसीमें आनेवाले हैं। यानी इनमें क्या-क्या बतानेवाले हैं? अपर्याप्त की जघन्य, पर्याप्त की जघन्य, अपर्याप्त की उत्कृष्ट और पर्याप्त की उत्कृष्ट। यानी अपर्याप्तों की जघन्य से लेकर अपर्याप्तों की उत्कृष्ट तक जो रेंज है; मान लेते हैं १०० यह अपर्याप्त की जघन्य है – किसी एक ग्रुप की अपर्याप्त की जघन्य और १००० यह है अपर्याप्त की उत्कृष्ट। पर्याप्त की जघन्य मान लेते हैं ५०० जो इनके बीच में आ जाती है और फिर १०,००० यह है पर्याप्त की उत्कृष्ट। यानी वे कैसे हैं?

अपर्याप्त की जघन्य और फिर आगे जाकर पर्याप्त की जघन्य, फिर आगे जाकर अपर्याप्त की उत्कृष्ट, फिर लास्ट में पर्याप्त की उत्कृष्ट। हर ग्रुप के लिये ऐसा लेना है।

अब आपके सामने १८८ पेज है, उसके साथ अभी इसको कम्पेअर करो। अपर्याप्त की जघन्य से पर्याप्त की उत्कृष्ट तक इनमें क्रम से देखो। यानी हमारे जो ऊपर १, २, ३ जो ग्रुप हैं – ग्रुप नंबर १, ग्रुप नंबर २ और ग्रुप नंबर ३ इनमें क्रम से देखो। तो ग्रुप नंबर १ के अपर्याप्तों की जघन्य कहां हैं? ग्रुप नंबर १ के अपर्याप्तों की जघन्य यहां कोठा नंबर १ में है। फिर ग्रुप नंबर १ के पर्याप्तों की जघन्य कोठा नंबर ४ में है। अब देखो आपका १८८ पेज निकालो, उसमें पहला ग्रुप है सूक्ष्म एकेन्द्रियवाले पांच, वहां लास्ट लाइन में क्या लिखा है? इन पांचों के अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना – कोठा नंबर १ में है। अब इन्हीं के पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना कहां पर है? कोठा नंबर ४ में हैं न? यह सूक्ष्म निगोद वगैरह पांच पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना है। इनके अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना कहीं दिखती है क्या? *श्रोता: ५ नंबर कोठे में है।* देखो, हमने देखा सूक्ष्म एकेन्द्रियों की बात, १ नंबर के कोठे में क्या था? अपर्याप्तों की जघन्य। आपके हाथ में जो पुस्तक है वहां आपको देखना है, ४ नंबर के कोठे में क्या लिखा है नीचे? पर्याप्तों की जघन्य! वह करेक्शन बताया था आपको, यह पर्याप्तों की जघन्य है। उनके अपर्याप्तों की उत्कृष्ट कहां पर है? ५ नंबर के कोठे में यानी ४ के नीचे ५ नंबर का कोठा है वहां पर है और उनके पर्याप्तों की उत्कृष्ट कहां है? ६ नंबर के कोठे में हैं, बराबर? यह ख्याल में आया?

अब दूसरे ग्रुप की बात करते हैं हम। २ नंबर का ग्रुप जो २ नंबर के कोठे में था; २ नंबर के कोठे में क्या था? उनके अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना थी। उसी ग्रुप के पर्याप्तों की जघन्य कहां पर आ गयी है? ७ नंबर के कोठे में। उन्हींके अपर्याप्तों की उत्कृष्ट ८ नंबर के कोठे में। उन्हींके पर्याप्तों की उत्कृष्ट ९ नंबर के कोठे में। ख्याल में आयी बात यह? बाद में फिर पढ़ेंगे तो यह ईझी हो जायेगा आपको समझने के लिये। अब तीसरा ग्रुप – अप्रतिष्ठित प्रत्येक वगैरह-वगैरह, उनके अपर्याप्तों की जघन्य ३ नंबर के कोठे में थी। उनके पर्याप्तों की जघन्य १० नंबर के कोठे में है। पुस्तक में कोठों का नंबरिंग किया है न, वहां देखना। उन्हींके अपर्याप्तों की उत्कृष्ट ११ नंबर के कोठे में है और उन्हींके पर्याप्तों की उत्कृष्ट १२ नंबर के कोठे में है। इसतरह से तीन ग्रुप्स में पहला

पांच का ग्रुप, दूसरा बादर एकेन्द्रियों का छह का ग्रुप और तीसरा है वह अप्रतिष्ठित प्र., द्वीन्द्रिय आदि जो हैं उन पांच का ग्रुप यानी कुल १६ में विभाजित किये हैं, १६ के तीन ग्रुप्स बनाये हैं, १६ अलग-अलग जीवसमास बतायें हैं। इन जीवसमासों के अपर्याप्तों की जघन्य, पर्याप्तों की जघन्य, अपर्याप्तों की उत्कृष्ट, पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना बतायी है। इन १६ के एक-एक के कितने कोठे हैं? चार-चार। तो यहां टोटल कितनी नंबरिंग है? १६ × ४ = ६४। देखो, नंबर १, २, ३... तो लास्ट नंबर ६४ है। इसको कहते हैं अवगाहना के ६४ भेद। अब इसको थोड़ा पढ़ेंगे तो ख्याल में आयेगा कि इस टेबल को कैसा पढ़े। देखो, हम गाथा ९८ के ऊपर की बात पढ़ेगें तो ख्याल में आयेगा कि वहां क्या कहना चाहते हैं।

वहां पढ़ लिया तो कुछ समझ में नहीं आता था, है न? इसलिये उन कोठों के नंबर डालकर छपवाया है। मूल ढूंढ़ारी में ऐसे कोठों के नंबर नहीं थे। **उसके आगे अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय नामधारक ये पांच बादर तीसरे कोठे में लिखे हैं। इन सोलह में** कौनसे १६? ५ सूक्ष्म एकेन्द्रिय, ६ बादर एकेन्द्रिय, बाकी अन्य ५। **इन सोलह में आदि के सूक्ष्म निगोदादि ग्यारह**, यानी सब एकेन्द्रिय हैं। **उनकी आगे तीन पंक्तियां करनी। वहां एक-एक पंक्ति में दो-दो कोठे जानना**। तीन पंक्तिया **कैसे** करना? चार, सात, फिर उनके नीचे पांच, आठ और उनके नीचे छह, नौ। आप पुस्तक में टेबल देख लो। ये तीन-तीन पंक्तियां की हैं, पहलेवाला जो सूक्ष्म निगोदवाला कॉलम है, दूसरेवाला जो बादर वायुवाला है उनके आगे दो-दो कोठे ऐसे करना। आपकी पुस्तक में देखना – चार और सात, पांच और आठ, छह और नौ, ख्याल में आयी बात? हां।

अब **पूर्व में तीसरा कोठा कहा था उसके आगे दो कोठे करना**। यानी चार और सात नंबर के। **उसमें जैसे पहले व दूसरे कोठे में पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे थे, वैसे यहां भी लिखे हैं**। देखो, आप उसमें, लिखे हैं न वहां पर? चौथे कोठे में वही सूक्ष्म निगोद, वायु, तेज, अप्, पृथ्वी वही ऑर्डर है और सातवें में बादर वायु, तेज, अप्, पृथ्वी निगोद और प्रतिष्ठित प्रत्येक हैं। **पुनश्च उन दो कोठों के नीचे की पंक्ति में दो कोठे और करने। वहां भी उसीप्रकार पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हैं**। वहां पर भी ऐसे ही लिखा है, उसके नीचे और दो कोठे करने और उनमें भी उसी प्रकार लिखना है। **इसतरह**

सूक्ष्म निगोदादि ग्यारह स्थानों के दो-दो कोठों से संयुक्त तीन पंक्ति हुयी। कौनसी तीन पंक्ति? चार-सातवाली, पांच-आठवाली और छह-नौवाली, यहां तक ख्याल में आयी बात? उसमें और क्या लिखा है? उसकी बात हम बाद में पढ़ेंगे गाथा ९८ की टीका...।

पुनश्च उन तीन पंक्तियों के आगे ऊपर की पंक्ति में दसवां कोठा करना। यह सातवें कोठे के बाद वह दसवें नंबर का कोठा है ऊपर की आड़ी लाइन में, **उसमें अप्रतिष्ठित प्रत्येक**, यानी जो तीसरे कोठे में लिखे हैं, वे ही नाम दसवें में भी हैं। वे ही नाम ग्यारहवें में भी हैं। अब उनकी ऑर्डर थोडी उलट-पुलट है आगे, उसका कारण भी बतायेंगे। तो **उसमें अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय नामधारक पांच बादर लिखे हैं। उसके आगे ग्यारहवें कोठे में** अभी यहां **त्रीन्द्रिय** का नाम पहले लिया है। फिर **चतुरिन्द्रिय** का, फिर **द्वीन्द्रिय** का, फिर **अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति** का, फिर **पंचेन्द्रिय नामधारक पांच बादर लिखे हैं। उसके आगे बारहवें कोठे में त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय**, फिर **द्वीन्द्रिय**, फिर **अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति**, और फिर **पंचेन्द्रिय नामधारक पांच बादर लिखे हैं**। तो ऐसा उलटा-पुलटा क्यों किया? लास्ट कोठे में, बारहवें कोठे में नीचे की लाइन में क्या लिखा है? इन पांच पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।

हमने आपको जो उत्कृष्ट अवगाहनावाला टेबल बताया था, है न? उसमें उत्कृष्ट अवगाहना कितनी-कितनी थी याद है क्या? देखो, एकेन्द्रिय की कितनी? एकेन्द्रिय तो उसमें अप्रतिष्ठित प्रत्येक है वह ७५० घनयोजन था। उनमें से सबसे कम कौनसी थी? जो त्रीन्द्रिय लिया है। $\frac{२७}{८१९२}$ त्रीन्द्रिय की उत्कृष्ट यानी मॅक्झिमम अवगाहना सबसे कम थी। फिर चतुरिन्द्रिय की ली थी, भ्रमर की $\frac{३}{८}$ घनयोजन थी। फिर द्वीन्द्रिय की ली थी जो ३६५ घनयोजन की थी। फिर अप्रतिष्ठित प्रत्येक की ली थी जो ७५० घनयोजन थी और फिर पंचेन्द्रिय की थी जो साढ़े बारह करोड़ घनयोजन थी, हमने ये उत्कृष्ट अवगाहना देखी थी, उसी ऑर्डर में यहां लिखे हैं उन्होंने। यहां तक तो पढ़ा है, अब आगे पढेंगे। यह कैसे पढ़ना? उसका अर्थ कैसे लगाना? बस इसमें कोई केवल पढ़ जाते तो क्या लिखा है पता नहीं लगता। टेबल के साथ आप पढ़ेंगे तो ख्याल में आ रहा है या नहीं कि क्या कहना चाहते है? तो हम १८४ पेज पर आये हैं।

इसतरह ये चौंसठ जीवसमासों की अवगाहना के भेद हैं। यानी जीवसमासों में ये अवगाहना के चौंसठ भेद हैं। अवगाहना के ये चौंसठ भेद कहे जाते हैं। **उनमें से ऊपर की पंक्ति के आठ कोठों में प्राप्त ऐसे जो बयालीस जीवसमास, उनकी अवगाहना के स्थान गुणित क्रम से हैं। अनुक्रम से पूर्वस्थान को यथासंभव गुणकार से गुणित करने पर उत्तरस्थान होता है**। अब इसका अर्थ क्या है? कितने स्थान बताये उन्होंने? *श्रोता: बयालीस स्थान।* हां, अवगाहना के बयालीस स्थान गुणित क्रम से हैं। अब देखो, ये सोलह हो गये न – पहले तीन कोठों में सोलह हो गये। दूसरे दो कोठों में कितने हो गये? ग्यारह। ऊपर की पूरी हॉरिझॉन्टल लाइन देखनी है आपको। पहले कोठे में पांच हैं, दूसरे में छह हैं, तीसरे में पांच हैं – सोलह यहां हो गये। चौथे में पांच हैं, पांचवें में छह हैं – ग्यारह यहां हो गये। तो सोलह और ग्यारह कितने हो गये? सत्ताईस हुये। सत्ताईस के बाद ये आगेवाले ५, ६, ८, ९ नंबर के कोठे विशेष अधिकवाले हैं। उनको छोड़कर उनके आगेवाले १०, ११, १२ नंबर के कोठे गुणित क्रम से लेना है, बयालीस हैं वे गुणित क्रम से लेना है। हां-हां, सत्ताईस और पंद्रह बयालीस, हां, बयालीस। ऊपर की पंक्ति में आड़े कोठे जो हैं वे गुणित क्रम से हैं। फिर से देखते हैं, कोठा नंबर १, २, ३ मिलकर सोलह हुये। ४, ७ और १० मिलकर सोलह हुये। बत्तीस हुये और आगे कोठा नंबर ११, १२ के दस, बयालीस; ये कैसे हैं? गुणित क्रम से हैं। अब कहां असंख्यात का गुणकार है, कहां संख्यात का गुणकार है वह बतायेंगे। ये सारे एक लाइन में लिखे हैं। ऊपर के जो कोठे हैं उनमें प्रत्येक स्थान एक से दूसरा गुणित क्रम से है। कहीं असंख्यातगुणा है, कहीं संख्यातगुणा है।

उसको देखेंगे यहां पर। देखो, **अनुक्रम से पूर्व स्थान को यथासंभव गुणकार से गुणित करने पर** यहां गुणकार का अर्थ होता है गुणक। जिस संख्या से गुणा करना है उसको गुणक कहते हैं हमारी भाषा में और यहां सर्वत्र उसको गुणकार कहा है। मराठी में जिसको हम गुणाकार कहते हैं यानी जिस प्रोसेस को गुणाकार कहते हैं वह बात यहां नहीं है। गुण्य और गुणक जैसे हमने १६ को ४ से गुणा किया; ४ गुणा हुआ तो गुणकार कितना है? १६ का गुणकार ४ है। उसको यहां गुणकार कह रहे हैं। ऐसे ही यहां पर यह जो गुणकार है, उससे गुणित करने पर **उत्तरस्थान होता है**। उत्तर यानी नेक्स्ट, पूर्वस्थान यानी पहले का स्थान। जैसे अभी यह कोठे देखो, १ नंबर के कोठे में जहां १ नंबर दिया

है कहां दिया है? सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना को और २ नंबर पर वायु लिखा है। उसका अर्थ होता है सूक्ष्मवायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना यानी सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना से सूक्ष्मवायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणा है। यहां तो गुणित प्रमाण में अभी उसकी उन्होंने व्हॅल्यू नहीं बतायी है फिर भी मैं कह रही हूं आपको, वह असंख्यातगुणा है। २ नंबर पर वायुकायिक की जघन्य है और ३ नंबर पर तेजसकायिक की जघन्य अवगाहना है। तो वायुकायिक की जघन्य अवगाहना से तेजसकायिक की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणा होगी, उसका अर्थ क्या है? एक-एक प्रदेश से बढती हुयी अवगाहना के कितने स्थान हो जायेंगे? दो गुणा होने के लिये असंख्यात स्थान चले जायेंगे फिर ३ गुणा, ४ गुणा, असंख्यातगुणा तक, यह सूक्ष्म वायुकायिक की जघन्य अवगाहना नहीं प्राप्त होती तब तक वह सूक्ष्म निगोद के एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के स्थान चले ही आ रहे हैं। नहीं समझे?

यह सूक्ष्म निगोद की अवगाहना यहां से शुरू हो गयी, जघन्य अवगाहना; इस स्थान पर सूक्ष्म वायुकायिक की चालू हो गयी, वह सूक्ष्म निगोद से असंख्यातगुणा है; परंतु सूक्ष्म निगोद इसके साथ चल ही रहा है न आगे। यहां ३ नंबर पर जाकर सूक्ष्म तेजसकायिक की जघन्य अवगाहना शुरू हो गयी। आगे चलकर सूक्ष्म अप्कायिक की, सूक्ष्म पृथ्वीकायिक की परंतु इसमें सूक्ष्म निगोद की अवगाहना के भेद अभी चल ही रहे हैं। जब तक सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्टवाला भेद नहीं प्राप्त होगा तब तक सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की अवगाहना यहां से यहां चल ही रही है। जरा पूरा टेबल देखकर सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना कितने नंबर पर है फाइंड आउट करो। जरा देख लो, आपको सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना देखनी है। *श्रोता: अठ्ठाईस नंबर पर।* अठ्ठाईस नंबर, पांच नंबर के कोठे में; तब तक सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तों की एक-एक प्रदेश से बढती हुयी अवगाहना के सभी व्हेरिएशन्स होंगे। ख्याल में आयी बात? सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना से शुरू हुआ था; एक प्रदेश अधिक अवगाहना, दो प्रदेश अधिक अवगाहना, तीन प्रदेश अधिक अवगाहना, वह डबल हो जायेगी, फिर ३ गुणा हो गयी, ४ गुणा हो गयी, जब असंख्यातगुणा हुयी तब वहां से सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना शुरू हो गयी। परंतु सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तों की तो चल ही रही है न, आगे चलकर सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्तों की असंख्यातगुणा हो जाती है तब जाकर सूक्ष्म

तेजसकायिक अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना शुरू हुयी। परंतु वहां तो सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तों की भी अवगाहना चल ही रही है और सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्तों की भी चल रही है। यानी जो आगे-आगेवाला नंबर आता है तो पहलेवाले की अवगाहना चल ही रही है। उनमें एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के इतने-इतने भेद हैं।

प्रदेश इतना सूक्ष्म है क्योंकि अंगुल के असंख्यातवें भाग में इतने प्रदेश हैं। हमने देखा था, कितने हैं? उसको हम समयों में कन्व्हर्ट करेंगे तो असंख्यातासंख्यात कल्पकाल चले जायेंगे। **आ** यानी अप्कायिक यानी जलकायिक; **भू** यानी पृथ्वीकायिक, पृथ्वी के लिये भू कहते हैं; **नि** का अर्थ होता है निगोद। देखो, हम यह टेबल देख रहे थे, हमने क्या देखा था कि सूक्ष्म निगोद से बात चालू हुयी थी, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना; उसमें एक प्रदेश ज्यादा, दो प्रदेश ज्यादा, तीन प्रदेश ज्यादा, ऐसे करते-करते हम कहेंगे दोगुणा हो जायेंगे, दसगुणा हो जायेंगे, असंख्यातगुणा हो जाते हैं; तब जाकर सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त की अवगाहना वहां से शुरू होती है। अब वायुकायिकों की अवगाहना शुरू हुयी तो निगोद की बंद हो गयी क्या? नहीं, निगोद के भी बढ़ती हुयी अवगाहना के इतने भेद चालू ही हैं। फिर ३ नंबर पर तेजसकायिक यानी अग्निकायिक की जघन्य अवगाहना शुरू हुयी वह बढ़ते-बढ़ते चली जायेगी। वहां वायुकायिक भी है उसके साथ निगोद भी है। तेजसकायिक के बाद नंबर आता है जलकायिक का, अप्कायिक जिसको कहा है। उसकी जघन्य से शुरुआत होती है वहां ये नि, वा, ते सब चल ही रहे हैं। अप्कायिक के आगे पृथ्वी, भू यानी पृथ्वीकायिक शुरू हो गये। वहां पर ये पांचों की अवगाहना भी चल ही रही है। सबके एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के भेद होंगे।

फिर आगे वे छह प्रकार के बादर बताये हैं, वे भी, अभी तो इनको हम कहेंगे ये सब आपस में असंख्यातगुणा हैं। सूक्ष्म से सूक्ष्म जो हैं वे असंख्यातगुणा हैं, वहां कहेंगे आवली के असंख्यातवें भागगुणा। सूक्ष्म से बादर कितने गुणा हैं? तो कहेंगे पल्य के असंख्यातवें भागगुणा, इसको कहेंगे परस्थान गुणकार।

पहलेवाला था वह स्वस्थान गुणकार। ये सब गुणित प्रमाण में आगे-आगे के भेद होंगे। ऊपर के पूरे जो आड़े कोठे हैं उनमें वे सभी गुणकार के रूप में यानी गुणित प्रमाण में हैं। उनमें कहां तक असंख्यातगुणा है और कहां से संख्यातगुणा है वह बाद में कहेंगे हम आपको। समझ में आया? अभी यह कैसे पढ़ना है इसको देखेंगे। तो हम आये थे पेज

१८४ पर। देखो, हमने क्या देखा था कि जो ऊपर की आड़ी पंक्ति में जो आठ कोठे हैं, कौनसे आठ कोठे हैं? १, २, ३, ४, ७, १०, ११ और १२ इन सबमें मिलकर बयालीस स्थान हैं। वे सभी स्थान गुणित क्रम से हैं। वहां गुणकार का यानी गुणक का प्रमाण कहीं असंख्यात है, कहीं संख्यात है। असंख्यात में भी कहीं आवली का असंख्यातवां भाग है, कहीं पल्य का असंख्यातवां भाग है वह बाद में कहेंगे। तो ऊपर के सारे गुणित क्रम से हैं यानी **अनुक्रम से पूर्व स्थान को** यानी जो नंबरिंग किया है न १, २, ३, ४ **पूर्व स्थान को यथासंभव गुणकार**, यथासंभव यानी जो बतायेंगे वह, गुणकार यानी गुणक, **से गुणित करने पर उत्तरस्थान** यानी नेक्स्ट स्थान **होता है**। यानी १ नंबर की अवगाहना को इस संख्या से गुणा करेंगे तो २ नंबर की अवगाहना आ जायेगी इसतरह।

पुनश्च इसके नीचे की दो पंक्तियों में प्राप्त हुये बाईस स्थान, नीचे की दो पंक्तियों में यानी कौनसे? ५, ८ और ६, ९। वहां ५, ८ में ग्यारह हुये और ६, ९ में ग्यारह हुये, ये जो बाईस स्थान हैं **वे 'सेढिगया अहिया तत्थेकपडिभागो' इस वचन से अधिकरूप हैं**। यानी कुछ अधिक हैं, ऊपर की अवगाहना के भेद हैं उनसे वे विशेष अधिक हैं। **वहां एक प्रतिभाग का अधिकपना जानना। पूर्वस्थान को यथासंभव भागहार** यानी भाजक **का भाग देकर एक भाग को पूर्व स्थान में अधिक करने पर उत्तरस्थान होता है; ऐसा सूचित किया है**। जैसे हमने दस को पांच से भाग दिया तो दो आये। वह दस में मिलाये तो हम क्या कहेंगे? विशेष अधिक और यदि दस को पांच से गुणा करेंगे तो क्या होगा? पांच गुणा कहेंगे, है न? गुणा का प्रमाण गुणित प्रमाण में यानी वह मल्टिप्लिकेशन में होगा और विशेष अधिक यानी उसका कुछ भाग उसमें मिलाना – इतना होगा।

श्रोता: जो चौथा कोठा है और पांचवां कोठा है, जो चौथे कोठे की जो अवगाहना है उससे कुछ अधिक पांचवां ऐसा लेना और ऊपर का जो कोठा चल रहा है वह असंख्यात या संख्यात गुणित है? ऊपर के कोठों के जो नंबर्स हैं वे सारे आपस में गुणित प्रमाण में हैं और जो चौथे से पांचवां और पांचवें से छठा है वे कैसे हैं? विशेष अधिक हैं। अब उसमें भी ऐसा लेना – सूक्ष्म निगोद है १७ नंबर पर, उससे सूक्ष्म निगोद २८ नंबर वह विशेष अधिक होगा और उससे सूक्ष्म निगोद ३९ पर वह विशेष अधिक होगा। कुछ अधिक वह अपने-अपने में यानी निगोद का निगोद के साथ, वायुकायिक का वायुकायिक के साथ

वगैरह। *श्रोता: फिर छठे से सातवें में कैसे लेना? ऊपर जायेगा न वह कोठा?* फिर तो, वह तो मल्टिप्लिकेशन में चला जायेगा। *श्रोता: छठेवाले से मल्टिप्लिकेशन करना है? श्रोता: छठे से मल्टिप्लिकेशन करना सातवें में कि चौथे से सातवें में?* देखो-देखो, मैं आपको बताती हूं। यहां लिखा हुआ, यहां तो विशेष अधिकवाले हैं न? उसको क्रम से हम पढ़ेंगे, आपके इस प्रश्न का उत्तर आनेवाला है क्योंकि हम जम्प करेंगे तो बीचवाला छूट जायेगा।

देखो, गाथा ९९ की टीका – **पहले तीन कोठों में प्राप्त सोलह जीवसमासों की अपर्याप्त संबंधी जघन्य अवगाहना जाननी**। हमने क्या देखा था? सभी अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना कोठा नंबर १, कोठा नंबर २, कोठा नंबर ३, ऐसा बता रहे हैं हम अभी आपको। **उससे आगे ऊपर से पहली, दूसरी और तीसरी पंक्ति में एक-एक पंक्ति में दो-दो कोठे किये थे, वे क्रम से पर्याप्त जीवों की जघन्य, अपर्याप्तों की उत्कृष्ट और पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना हैं। वे इसप्रकार हैं – ऊपर की प्रथम पंक्ति के दो कोठों में** ऊपर की पंक्ति के दो कोठे यानी ४ और ७ में **पांच सूक्ष्म** और **छह बादर** यह यहां जो लिखा है, वहां क्लिअर नहीं होता है इसलिये मैं आपको नंबरिंग बता रही हूं। **इन ग्यारह पर्याप्त जीवसमासों की जघन्य अवगाहना के स्थान हैं**। आप पढ़ना वह कोठा नंबर ४ पढ़ो, सूक्ष्म निगोद वगैरह-वगैरह वहां पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना लिखी है और ७ नंबर में बादर वायु, तेज, अप् वगैरह छह पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना लिखी है। यह बात ख्याल में आ गयी? ४ और ७ की बात चल रही है यहां पर, पर्याप्तों की जघन्य। **उसीतरह नीचे दूसरी पंक्ति में प्राप्त उन्हीं ग्यारह अपर्याप्त जीवसमासों की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान हैं**। जो हमने यहां लिखा है, पर्याप्तों की जघन्य के बाद अपर्याप्तों की उत्कृष्ट। जो कोठा नंबर ५ और ८ में बतायी है। **उसीतरह तीसरी पंक्ति में**, तीसरी पंक्ति यानी ६ और ९ में, **उन्हीं ग्यारह पर्याप्त जीवसमासों की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान हैं**। यहां तक कोई प्रश्न हैं? यह तो ख्याल में आया न? किस कोठे में किसकी बात चल रही है? *श्रोता: यह अवगाहना कैसे?* अवगाहना यानी उसका साइझ। *श्रोता: नहीं-नहीं, कैसे देते हैं?* कैसा देते हैं? जो केवली भगवान ने जाने हैं वैसे उनकी ऑर्डर किससे, कौनसी, कितनी बड़ी अवगाहना है उसकी बात चल रही है।

आगे दसवें कोठे में प्राप्त पर्याप्त पांच जीवसमासों की जघन्य अवगाहना के स्थान हैं। पर्याप्त पांच यानी कौनसे देखे थे? याद है न? अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय,

त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय इन पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना। **ग्यारहवें कोठे में उन्हींके अपर्याप्तों की उकृष्ट अवगाहना और बारहवें कोठे में उन्हींके पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना, इसतरह कहे हुये स्थानों में प्रथम कोठे में प्राप्त सूक्ष्म अपर्याप्त निगोदिया जीव की जघन्य अवगाहना से लेकर दसवें कोठे में प्राप्त**, देखो, दसवें कोठे में देखना, **बादर पर्याप्त द्वीन्द्रिय की जघन्य अवगाहना पर्यंत** नंबर कितना मिला आपको? ५१ डाला है उसके लिये। बादर पर्याप्त द्वीन्द्रिय की जघन्य अवगाहना, द्वीन्द्रिय के आगे ५१ नंबर लिखा है, पुस्तक में देखा आपने? वहां तक ये जो स्थान हैं, **ऊपर की पंक्ति संबंधी उनतीस अवगाहना के स्थान**, सत्ताईस तो क्रम से नंबरिंग है और बाद में ५० और ५१ मिलकर उनतीस स्थान हो गये। समझ में आयी बात? सत्ताईस तो लगातार नंबरिंग है और ५० नंबर और ५१ नंबर मिलकर ये जो उनतीस स्थान हैं वे क्या हैं? **असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा क्रम सहित हैं**। १ से २ असंख्यातगुणा, २ से ३ असंख्यातगुणा, ३ से ४ असंख्यातगुणा इसतरह २७ तक है और २७ से वह ५० का भी असंख्यातगुणा और ५० से ५१ नंबर का भी असंख्यातगुणा है।

पुनश्च उसके आगे बादर पर्याप्त पंचेन्द्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत तेरह अवगाहना के स्थान संख्यातगुणा-संख्यातगुणा अनुक्रम सहित हैं. यानी उसके आगे ५१ से ५२ है वह संख्यातगुणा है, ५२ से ५३, ५३ से ५४ ऐसे ६४ तक हैं वे संख्यातगुणा-संख्यातगुणा हैं और पहले सारे असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा हैं। इसमें क्या वह बात समझ में आती है कि देखो, एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के कितने सारे भेद होने चाहिये। हमें सूक्ष्म निगोद वह तो आंखों से भी क्या, माइक्रोस्कोप से भी नहीं दिखेगा और वह साढ़े बारह करोड़ घनयोजनवाला कितना बड़ा होगा? और एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के ये स्थान हमें देखने हैं। ये सूक्ष्म निगोद के ही कितने सारे स्थान हो गये! सूक्ष्म वायुकायिक की अवगाहना तक पहुंचते-पहुंचते एक-एक-एक प्रदेश की वृद्धि कितनी हो जायेगी? ओरिजिनल से असंख्यातगुणा होना है न? तो उतनी असंख्यात बार वह भी क्रम से एक-एक प्रदेश बढ़कर जब कभी उसका भव धारण करेगा तब उसको गिनना चाहिये। जब अक्रम से बढ़ेंगे, कभी हीनाधिक होंगे, तब उसको नहीं गिनना, उसके काल को गिनते जाना । इसलिये और ज्यादा रेअर होते चला जाता है। आगे बढ़ेंगे, इसको देखो, गाथा १०१ की टीका।

यहां उनतीस स्थान असंख्यातगुणे कहे, याद है न? १ से २७, ५० और ५१। **उनमें से जो सूक्ष्म जीवों की अवगाहना के स्थान हैं, वे आवली के असंख्यातवें भाग से गुणित जानने**। यानी सूक्ष्म के जो पहले पांच थे, १ से २, २ से ३, ३ से ४ – ये कितने गुणा हैं? आवली के असंख्यातवें भागगुणा। **घनावली के असंख्यात भाग करके उनमें से एक भाग से पूर्व स्थान को गुणित करने पर उत्तर स्थान होता है** और जहां **बादर जीवों की अवगाहना हैं, वे पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणित हैं**। *श्रोता: यह आवली और घनावली में क्या अंतर है?* आवली कितनी है उसे हमने देखा न? आवली में कितनी संख्या होती है? जघन्य युक्तासंख्यात उसकी संख्या है और घनावली किसको कहते हैं? दो का घन कितना होता है? २ × २ × २ = ८, वह दो का घन आठ होता है, ऐसा आवली × आवली × आवली उसको कहेंगे घनावली। घन के लिये वर्ग को फिर एक बार गुणा करना। जैसे तीन का घन कितना होता है? २७; ३ × ३ × ३ = २७; चार का घन? ४ × ४ × ४ = ६४; ऐसे यहां आवली का घन, आवली × आवली × आवली है। आवली × आवली को प्रतरावली कहेंगे और उसको और एक बार आवली से गुणा करेंगे तो घनावली कहेंगे। यहां सर्वत्र आवली का असंख्यातवां भाग लिखा है। परंतु वह घनावली का है। यह क्यों लिखा है? देखो, यहां नीचे लास्ट लाइन देखो, इसी पेज की –

यहां सर्वत्र आवली कहने से घनावली समझना चाहिये। देखिये पं. टोडरमलजी लिखित अर्थसंदृष्टि क्योंकि अर्थसंदृष्टि में आवली की साइन अलग है, घनावली की साइन अलग है। आवली के लिये २ लिखते हैं और घनांगुल के लिये ६ लिखेंगे, घनावली के लिये ८ लिखेंगे। देखो, संदृष्टि बताऊं आपको? देखनी है? घबराना मत। दो नंबर की पुस्तक में, अभी मुझे भी निकालना पड़ेगा जीवसमास का प्रकरण, यहां पर भी प्रत्येक पृष्ठ के ऊपर हमने प्रकरण के नाम डाले हैं आसान करने के लिये। जीवसमास पेज नं. ९०९ से शुरू हुआ है, अवगाहना के ६४ स्थान, देखो ९११ पेज, ये अवगाहना के भेद अलग-अलग हैं।

देखो, देखो, यह द्वी के नीचे ६ लिखा है। ६ साइन है घनांगुल की और उसको संख्यात से भाग दिया, वह संख्यात की साइन है नृ जैसी द्वी ६ नृनृनृ उसके नीचे की लाइन में मैं पढ़ रही हूं। **पुनश्च जीवों की अवगाहना के चौंसठ स्थानों में प्रथम सूक्ष्म निगोद**

लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना ऐसी होती है। अब उसको भूल जाओ। **यहां घनांगुल की संदृष्टि ऐसी ६**, यानी ये पूरे फिगर में जो **६** लिखा है ऊपर, वह है घनांगुल। **उसके आगे गुणकाररूप आवली (घनावली) का असंख्यातवां भाग बाईस बार लिखा है**। यानी ८ है, ८ यानी घनावली और उसके नीचे जो इंग्लिश स्मॉल लेटर '**a**' जैसा है, वह असंख्यात की साइन है, असंख्यात का चिन्ह है। $\frac{८}{a}$ का अर्थ होता है घनावली डिव्हाइडेड बाय असंख्यात, उसके आगे २२ लिखा है $\frac{८}{a}|^{२२}$ यानी २२ बार आवली डिव्हाइडेड बाय असंख्यात ऐसा लिखना चाहिये। उसके बदले २२ लिख दिया, खड़ी लाइन लिखी है उसका अर्थ होता है, गुणा करना। भागाकार के लिये अंश और छेद के बीच में आड़ी लाइन नहीं लिखते, डायरेक्ट नीचे लिखते हैं। तो इससे क्या सिद्ध हुआ? संदृष्टि से तो सिद्ध होता है, यह आवली है या घनावली है, क्योंकि आवली की साइन है २ और घनावली की है ८, यह बताना चाहती हूं मैं। वैसे तो एक बार संदृष्टि समझ में आती है न तो बहुत आसान हो जाता है; परंतु वह विषय अलग है, कठिन नहीं है। अभी यह कठिन लग रहा है परंतु एक बार उसके साइन यानी चिन्ह समझ में आते हैं तो इतना हम डिस्क्रिप्शन पढ़ते हैं न, उसके बदले वह फिगर डायरेक्ट हम देखेंगे तो ख्याल में आता है, ऐसा क्यों?

श्रोता: यह कौनसी भाषा में है, संदृष्टि? यह संदृष्टि, संदृष्टि की भाषा में है। यह किसी भाषा के लेटर्स नहीं हैं, ये चिन्ह बनाये हैं। जैसे 'अ' कैसे लिखते हैं? ऐसा 'अ' लिखते; 'क' कैसे लिखते हैं? ऐसा 'क' लिखते हैं; हिंदी की बात कर रहे हैं। गुजराती का 'क' अलग है। तो यह कौनसी भाषा है? तो असंख्यात कैसे लिखते हैं? तो किसी भाषा में असंख्यात नहीं लिखते। यह तो अंकों की भाषा है। यह तो गणित की भाषा है। तो असंख्यात के लिये एक साइन बतायी है। संख्यात के लिये वह ऐसी ৭ साइन बतायी है। यह तो सब साइन, किसको क्या कहना वह सब लिखा है इसमें अंदर, संदृष्टि अधिकार में। इससे तो समझना आसान हो जाता है। परंतु अभी हम उससे परिचित नहीं हैं न? इसलिये वह देखकर डर लगता है। यहां मैंने घनावली शब्द क्यों डाला है और उसको भी बोल्ड क्यों लिखा है? क्योंकि आवली-आवली कहने से कोई गलत नहीं समझे क्योंकि शॉर्ट में घनावली को आवली कह देंगे, वह कोई मिस्टेक नहीं है, परंतु यह घनावली होना चाहिये।

तो जहां सूक्ष्म से सूक्ष्म का गुणकार है, वहां आवली का असंख्यातवां भाग यानी घनावली का असंख्यातवां भाग गुणकार है। बादर से बादर की बात करेंगे तो पल्य का असंख्यातवां भाग गुणकार है। यहां देखो, आगे ब्रॅकेट में लिखा है, पहले पॅरेग्राफ के लास्ट में तीन लाइन की ब्रॅकेट **सूक्ष्म का सूक्ष्म के साथ गुणकार है**, गुणकार यानी गुणक जो है, **वह स्वस्थान गुणकार है। बादर का बादर के साथ गुणकार है वह भी स्वस्थान गुणकार है** और **सूक्ष्म का जो बादर के साथ** होगा न, सूक्ष्म का बादर के साथ कैसा होगा? देखो, ५ नंबर पर सूक्ष्म पृथ्वीकायिक है और ६ नंबर पर कौन है? निकालकर देखना टेबल, बादर वायुकायिक है। यानी इस सूक्ष्म पृथ्वीकायिक से बादर वायुकायिक है वह क्या होगा? परस्थान होगा और बादर वायुकायिक से बादर तेजसकायिक वह उसका अपना स्वस्थान होगा और सूक्ष्म से सूक्ष्म वह उसका अपना स्वस्थान होगा **सूक्ष्म का बादर के साथ परस्थान होता है**। आपका जो प्रश्न था न? उसकी बात मैं यहां आपको बताती हूं – यह विशेष अधिक की बात जो होती है उसको हमें नहीं लेना है यहां पर क्योंकि यह पूरा पढ़ जाते हैं तो इसमें बहुत सारी बातें बतायी हैं, एक्स्ट्रॉ भी। आपका जो प्रश्न था न? उसके बारे में पुस्तक में रेफरन्स अभी नहीं मिल रहा है। मैं निकालकर रखूंगी। शाम को उसकी बात करूंगी आपसे। अभी इसके बारे में कोई प्रश्न हैं क्या? दो-तीन मिनट बाकी हैं अभी। हां? *श्रोता: स्वस्थान तो आवली का असंख्यातवां भाग बताया और परस्थान वह पल्य का असंख्यातवां भाग। इसका लास्ट और इसका फर्स्ट?* हां, वही परस्थान हुआ न। *श्रोता: वह कितना है?* वह पल्य का असंख्यातवां भाग। *श्रोता: नहीं, तो जो बादर जीव है उसका जो स्वस्थान है?* वह भी पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है। देखो यहां लिखा है, **बादर जीवों की अवगाहना के स्थान हैं, वे पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणित हैं**। ऐसा स्वस्थान के साथ है और परस्थान में भी ऐसा ही पल्य का असंख्यातवां भाग है। वह बात हम शाम को फिर दोबारा पढ़ेंगे तो क्लॅरिटी हो जायेगी अपनी। किसीके और कोई प्रश्न नहीं हैं न? मेरे पास आये हुये सभी प्रश्नों के उत्तर तो दे दिये। हां, यहीं रुकेंगे अभी।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१७. अवगाहना का अल्पबहुत्व, मत्स्यरचना

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं, उसमें जो परावर्तन शब्द आता है कि यह मिथ्यादृष्टि जीव अनादि से ये पांचों ही परावर्तन करते आया है, तो वे कितनी बार उसने किये हैं? *श्रोता: अनंत बार।* तो अनंतों बार किये हैं। सभी परावर्तन उसने अनंतों बार किये हैं और उसीका यहां हम वर्णन देख रहे हैं। हमने द्रव्यपरावर्तन यानी पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप विस्तार से देखा। अभी क्षेत्रपरावर्तन को देखने जा रहे हैं। क्षेत्रपरावर्तन दो प्रकार से बताया जाता है, एक स्वक्षेत्रपरावर्तन और एक परक्षेत्रपरावर्तन। स्वक्षेत्र में क्या लेना? तो जीव की अवगाहना लेना क्योंकि संसारी जीवों की बात है; देहधारी जीव है, तो देह ने जितनी स्पेस – आकाश का जितना क्षेत्र रोका है उसको कहते हैं अवगाहना। वह कितनी बड़ी या छोटी है उसकी बात यहां चलेगी।

इसको कैसे गिनना? तो सबसे छोटी अवगाहना से शुरू करेंगे। यानी कोई जीव, सबसे छोटी कम से कम अवगाहना के साथ उसने जन्म लिया, फिर वह जन्म यानी भव चला गया। फिर दुबारा जब उसने जन्म धारण किया तो उस अवगाहना से एक प्रदेश अधिकवाली अवगाहना के साथ ही उसको जन्म लेना है – उससे हीन या उससे अधिक हो जाये तो हम उसका काल तो गिनेंगे परंतु हम उसको अनुक्रम में नहीं गिनेंगे। हो सकता है कि उतनी ही अवगाहना उसको अनंतकाल तक न भी प्राप्त हो, यह भी संभव है; पर जब कभी प्राप्त होगी तब उसको अनुक्रम में लेंगे हम। बिना अनुक्रम से कितनी ही अलग-अलग अवगाहना उस जीव को प्राप्त होगी क्योंकि यह तो संभव बात है। एक ही प्रदेश बढ़कर दूसरी बार, दूसरी अवगाहना से जन्म लेना यह तो असंभव जैसी बात है। क्रम से ही एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना मिलनी चाहिये। तो बीच में भटक-भटककर अन्य-अन्य अवगाहना के साथ जन्म-मरण, जन्म-मरण करके जब उस जघन्य से एक अधिक प्रदेशवाली अवगाहना मिलेगी तब उसको हम अनुक्रम में ले लेंगे। उसके बाद फिर वह जन्म चला गया। अब तीसरी बार जन्म लेना है तो दो प्रदेश अधिकवाली अवगाहना चाहिये। इसतरह से यह पूरा ही सायकल उसको पूरा करना है। कब तक, कहां तक? उत्कृष्ट अवगाहना तक; महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना तक। फिर लौटकर उसे जघन्य अवगाहना के साथ सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त में आना चाहिये। परावर्तन करने के लिये पहले

पॉइंट पर फिर दुबारा लौटना चाहिये तब जाकर उस जीव का एक स्वक्षेत्रपरावर्तन पूरा होता है, एक जीव की ही बात चल रही है यहां पर; नाना जीवों की बात नहीं, एक ही जीव की बात है।

श्रोता: सूक्ष्म एकेन्द्रिय से लेकर महामत्स्य तक? हां। सूक्ष्म एकेन्द्रिय में कौनसा? सूक्ष्म लब्धिअपर्याप्त, वह भी निगोद और उसकी भी जघन्य अवगाहना। क्योंकि हर पर्याय में यानी अकेले निगोद में भी, वह भी सूक्ष्म निगोद में भी, अवगाहना के कितने सारे असंख्यात भेद हैं यह इस टेबल के द्वारा हमें पता चलता है। दोपहर में बहुत भारी हो गया था, अभी मात्र टेबल के आधार से हम पढ़ेंगे। वह बीच में उसका वर्णन पढ़ते हैं तो कहां की बात, क्या चल रही है वह ख्याल में नहीं आती, है न? तो उसको थोड़ा सरल करके फिर समझेंगे हम। यहां यह बात है कि हमने इसमें १२ कोठे बनाये थे। उन कोठों के नंबर तो पृष्ठ १८८ पर लिखे हैं। उन कोठों में जीवसमासों के नाम शॉर्ट-फॉर्म में लिखे हैं। यानी वहां तो सूक्ष्म यह भेद एक बार लिखा है। उसके बाद 'नि' लिखा, 'नि' का अर्थ होता है निगोद। 'वा' का अर्थ होता है सूक्ष्म वायुकायिक, क्योंकि सूक्ष्म शब्द हर एक के साथ लगा लेना। यहां बोर्ड पर लिखा था न, हां – है न अभी तक!

पहले कोठे में जो पांच नाम लिखे हैं – वे सारे सूक्ष्म एकेन्द्रिय हैं वे कैसे हैं? लब्धिअपर्याप्त हैं। सूक्ष्म एकेन्द्रिय में निगोद पहले स्थान पर है। 'नि' यानी निगोद, 'वा' का अर्थ होता है वायुकायिक, 'ते' का अर्थ होता है तेजसकायिक यानी अग्निकायिक। उसके बाद 'आ' यानी अप्कायिक यानी जलकायिक और उसके बाद 'भू' यानी पृथ्वीकायिक, ये पांच प्रकार के सूक्ष्म जीव हैं, अभी आप पेज नंबर १८८ निकालो। उसमें १ नंबर का कोठा है, उसमें ये ही पांच नाम हैं। देखो सूक्ष्म निगोद लिखा है, उसके बाद एक नंबर डाला है। नाम के पश्चात् नंबर डाला है यानी नंबरिंग नाम के पश्चात् है। जब हम आपको कोई नंबर देखने को बोलेंगे या कोई नाम देखने को बोलेंगे, उसका नंबर पूछेंगे तो यह ख्याल में रखना कि पहले नाम लिखा है, बाद में उस नाम का नंबर लिखा है। तो सूक्ष्म निगोद एक नंबर पर है; दो नंबर किसका है यहां पर? *सभी श्रोता: सूक्ष्म वायुकायिक।* सूक्ष्म वायुकायिक का; तीन नंबर? *सभी श्रोता: सूक्ष्म तेजसकायिक।* सूक्ष्म तेजसकायिक यानी अग्निकायिक का; चार नंबर? *सभी श्रोता: सूक्ष्म अप्कायिक।* सूक्ष्म अप्कायिक का। पांचवां नंबर?

सभी श्रोता: सूक्ष्म पृथ्वीकायिक। सूक्ष्म पृथ्वीकायिक का। अब इन सबकी यानी पांच अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना इस पहले कोठे में लिखी है। उसका अर्थ क्या है और इसको क्या कहा था कि वे असंख्यातगुणा क्रम से हैं। पहले नंबर से; अभी हम इसको निगोद वगैरह नाम नहीं लेंगे; पहले नंबर से दूसरे नंबर की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणा है। उसके लिये नाप क्या बताया था? आवली के असंख्यातवें भागगुणा है।

यहां एक प्रश्न आया था कि आवली क्या है? आवली समय है कि क्षेत्र है कि क्या है? क्योंकि आवली तो हमने देखा था कि जघन्य युक्तासंख्यात इतने समयों को आवली कहा था और आप यहां कुछ अलग बात बता रहे हैं – अवगाहना आवली के असंख्यातवें भागगुणा वगैरह-वगैरह। तो प्रश्न था कि आवली काल है या क्षेत्र है? इसका उत्तर हम देखेंगे २५१ पृष्ठ पर। *श्रोता: इसी पुस्तक में?* इसी पुस्तक में है, पेज २५१, जहां वह बोल्ड लेटर में श्लोक लिखा है, उसके आगे का एक पॅरेग्राफ छोड़ देना, उसके नीचे से पढ़ेंगे।

इसतरह मान का वर्णन किया – यह मान क्या होता है – क्रोध, मान, मायावाला मान या मराठी में मान यानी गर्दन, गुजराती में डोक, अंग्रेजीवाली नेक, उस मान की बात यहां नहीं है। मान शब्द के बहुत अर्थ होते हैं और कोई अर्थ मालूम है? मान यानी मेझरमेंट, माप और कोई? *श्रोता: ज्ञान?* ज्ञान, हां, मान यानी ज्ञान। अमृतचन्द्राचार्य ने लघुतत्त्वस्फोट में लिखा है, वहां भगवान को माता कहा, क्यों? वे ज्ञाता हैं इसलिये! मान से माता – जैसे ज्ञान से ज्ञाता होता है, वैसे मान से माता शब्द हुआ है, माता यानी हमारी माता जन्म देती है उसकी बात यहां नहीं है। तो यहां मान का अर्थ क्या है? मेझरमेंट – माप। इसतरह मान का वर्णन किया। यानी इस पर्याप्ति प्ररूपणा में, शुरुआत में मान यानी उसको संख्यामान कहते हैं; संख्याओं के भेद जैसे संख्यात, असंख्यात और अनंत आदि इनका वर्णन किया। तो उनको संख्याओं में भी बताया। फिर कहीं-कहीं उपमा देकर संख्याओं को बताया है, जैसे-गड्ढा यानी पल्य किया उसको रोमखंडों से भर दिया वगैरह और उसकी उपमा देकर समझाया है उसको कहेंगे – उपमामान। पल्य है, सागर है, लोक है – ये क्या हैं सारे? उपमामान हैं। तो कहते हैं, इसतरह मान का वर्णन किया। वह यहां तक कर चुके हैं। **इस प्रकार मान के भेदों द्वारा** मान यानी ये जो संख्या आदि हैं उनके भेदों के द्वारा **द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का प्रमाण करते हैं।**

द्रव्यों को बताने के लिये कोई मेझरमेंट यानी संख्या बतायेंगे। जैसे हम कहेंगे – यहां उदाहरण जो दिया है कि हजार लोग इकठ्ठे हुये हैं। यानी हजार लोग अलग-अलग हैं न? वे पदार्थ जुदे-जुदे हैं। जैसे हम कहेंगे हमारे पास, क्या? पांच सौ क्या हैं? रुपये हैं। परंतु वहां पांच सौ रुपये की एक नोट भी हो सकती है। परंतु एक-एक रुपये के कॉइन्स से अगर हम कहेंगे, तो पांच सौ अलग-अलग हैं। देखो, यहां से पढ़ेंगे तो आपको ख्याल आयेगा। **जहां द्रव्य का प्रमाण हो, वहां उतने पदार्थ जुदे-जुदे जानने।** यानी हम कहते हैं जीव कितने हैं? तो अनंत हैं। तो अनंत जीव जुदे-जुदे हैं। कालद्रव्य कितने हैं? असंख्यात हैं। तो वे असंख्यात कालाणु जुदे-जुदे हैं। इसतरह यह द्रव्य का मान यानी पदार्थों का प्रमाण जब कहेंगे वहां वे पदार्थ अलग-अलग हैं। हम कहेंगे न? हमारे क्लास में कितने बच्चे हैं? सौ बच्चे हैं। तो वे सौ अलग-अलग हैं। तो यह हुआ द्रव्य का प्रमाण।

जहां क्षेत्र का प्रमाण हो, वहां उतने प्रदेश जानने। जब हम कहेंगे, जीव कितने प्रदेशी है? तो कहते हैं, असंख्यातप्रदेशी है। तो असंख्यातप्रदेशी कहने पर वहां असंख्यात जुदे-जुदे हैं कि नहीं हैं? *श्रोता: नहीं हैं।* यह हॉल कितना बड़ा है? कितने स्क्वेअर फीटवाला है? स्क्वेअर फीट में पूछा हमने। *श्रोता: दो हजार।* दो हजार। कुछ भी कहो न हमें क्या? हमें थोड़े ही गिनना है? तो उसमें दो हजार टुकड़े हैं कि नहीं हैं? *श्रोता: नहीं हैं।* नहीं हैं, वह अखंड है। क्षेत्र हम भले प्रदेशों मे नापेंगे या इंचों में नापेंगे या तो स्क्वेअर फीटों में नापेंगे। वहां टुकड़े नहीं हैं। द्रव्यों को जब कहेंगे संख्या में, तो वह प्रत्येक द्रव्य जुदा-जुदा है। जब क्षेत्र को हम किसी यूनिट में बतायेंगे तो वह क्षेत्र पूरा अखंड है, उसके यूनिट्स बनाकर, उसके नाप बनाकर हमने उसको स्क्वेअर फीट या स्क्वेअर मीटर कहो, जो कुछ भी है उसमें हमने बताया। देखो यहां लिखते हैं – **जहां द्रव्य का प्रमाण हो, वहां उतने पदार्थ जुदे-जुदे जानने। जहां क्षेत्र का प्रमाण हो, वहां उतने प्रदेश जानने** और **जहां काल का प्रमाण हो वहां उतने समय जानने।** यह काल भी अखंड है, उसमें भी काल के टुकड़े-टुकड़े नहीं हैं। जैसे क्षेत्र अखंड है, उसको हमने प्रदेशों का यूनिट बनाकर बताया, वैसे काल भी अखंड है। कितना काल बीत गया? हमारा एक लेक्चर एक घंटे का हुआ। तो अखंड एक घंटे तक चला न काल, कि टुकड़े-टुकड़े हुये उसके? फिर भी काल को हम ऐसा नीचे से ऊपर बताते हैं – ऊर्ध्व और क्षेत्र को ऐसा बताते हैं – आड़ा फैला हुआ, है न? और **जहां भाव का प्रमाण हो, वहां उतने अविभागप्रतिच्छेद जानने।** भाव यानी

जो पर्याय में जो प्रगट उसकी शक्ति बतायी जाती है वहां उसको अविभागप्रतिच्छेदों में गिनते हैं। इसीका दृष्टांत दिया उन्होंने। **जैसे, हजार मनुष्य हैं कहते हैं वहां वे हजार जुदे-जुदे जानना, वैसे द्रव्यप्रमाण में जुदे-जुदे पदार्थ प्रमाण जानना।**

अब क्षेत्र की बात करते हैं। **जैसे, वस्त्र बीस हाथ है, कहते हैं।** या बीस मीटर कहेंगे हम। **वहां उस वस्त्र में बीस अंश जुदे जुदे नहीं हैं, परंतु एक हाथ जितना क्षेत्र रोकता है, उसकी कल्पना करके बीस हाथ कहते हैं।** उस ज़माने में हाथ का माप चलता था। **उसीप्रकार क्षेत्रप्रमाण में परमाणु जितना क्षेत्र रोकता है उसको प्रदेश कहते हैं, उसकी कल्पना करके क्षेत्र का प्रमाण कहते हैं।** एक परमाणु एक प्रदेश रोकता है न? तो उस एक प्रदेश का हम यूनिट बनायेंगे, उसकी कल्पना करेंगे। तो आत्मा कितने प्रदेशी हैं? तो कहेंगे असंख्यातप्रदेशी है, पर है वह आत्मा एक अखंड द्रव्य। उसके टुकड़े-टुकड़े नहीं हैं वहां पर।

आगे काल की बात करते हैं। **जैसे एक वर्ष के तीन सौ पैंसठ दिन-रात्रि कहते हैं, वहां अखंडित काल प्रवाह में अंश नहीं है, परंतु सूर्य के उदय-अस्त की अपेक्षा कल्पना करके कहते हैं। वैसे काल प्रमाण में जितने काल में परमाणु मंद गति से एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश को जाता है, उस काल को समय कहते हैं। उस अपेक्षा कल्पना करके काल का प्रमाण कहते हैं** और भावों में वहां उन्होंने सोने का उदाहरण दिया। वह वान यानी पहले सोलह आने का एक रुपया होता था। तो सोलह आने में बताते थे। १००% के लिये सोलह आने या सोलहवान कहते थे। आज के ज़माने में हम २४ कॅरट कहते हैं, बात एक ही है। तो यह भाव के लिये वह बताया जाता है। यहां तो ये अविभागप्रतिच्छेद जो केवलज्ञानगम्य बातें हैं, उसमें भाव गिने जाते हैं। हमारे क्वेश्चन का यानी प्रश्न का उत्तर तो आगे आता है। देखो – **जहां क्षेत्र प्रमाण में आवली का प्रमाण कहते हैं** – यही प्रश्न था न? अभी किसने पूछा था? हां, आपका प्रश्न था। तो जहां क्षेत्र में कहेंगे आवलीप्रमाण क्षेत्र है **वहां आवली के जितने समय होते हैं उतने वहां प्रदेश जानना** और जहां काल गिनने के लिये आवली कहेंगे तो वहां जघन्य युक्तासंख्यातप्रमाण समय जानना। सबमें ऐसे ही समझना। जब हम कहेंगे असंख्यात लोक, तो असंख्यात लोक कहने से क्षेत्र भी होता है और काल भी होता है। जब असंख्यात लोकप्रमाण क्षेत्र

कहेंगे तो उतने प्रदेश जानना और जब असंख्यात लोकप्रमाण काल कहेंगे तो वहां उतने समय जानना। असंख्यात लोक यह तो एक संख्या है।

जैसे ४ यह हमारी संख्या है। तो ४ यह संख्या है और हमने कहा कि वह ४ गुणा है तो ४ गुणा क्या है? तो हम कहेंगे हमारा घर आपके घर से ४ गुणा बड़ा है या यह हॉल हमारे घर से ४ गुणा बड़ा है। यह ४ गुणा बड़ा हमने क्षेत्र के लिये कह दिया। तो काल के लिये भी कह सकते हैं कि हमने तो ६ दिन का शिबिर किया, इससे ४ गुणा बड़ा करेंगे! तो क्या हुआ? हमने काल बताया। आप कहेंगे इतना ही बस हो गया! यह कोई भी आवली हो या जो कोई यूनिट हम यूज़ कर रहे हैं, ये तो संख्या बतानेवाली बातें हैं और इतनी संख्या में प्रदेश कहो तो क्षेत्र हो जाता है। इतनी संख्या में समय कहो तो काल हो जाता है। भाव में तो अविभागप्रतिच्छेद अनंतों में होते हैं इसलिये उसको आवली वगैरह शब्द नहीं लगाते हैं। अब यह अपने प्रश्न का उत्तर हुआ। किसीने और भी एक प्रश्न पूछा था वह भी देख लेते हैं।

यह प्रश्न पूछा था कि यह कमठ अभी कहां है? आप ही कहो कि कमठ का जीव अभी कहां है? *श्रोता: मोक्ष गया?* मोक्ष गया? अरे वाह! बहुत अच्छा! *श्रोता: स्वर्ग में है।* कहां का था वह? यक्ष था न? वहीं पर होगा न? भवनवासी था या कौन था वह? *श्रोता: व्यंतर था।* व्यंतर था। व्यंतरों की आयु कितनी होगी? कम से कम दस हजार वर्ष की तो होगी। भगवान पार्श्वनाथ होकर कितने दिन हो गये? *श्रोता: लगभग तीन हजार वर्ष।* तीन हजार वर्ष। तो हो सकता है कि वह कमठ की पर्याय में हो, है न? तीन हजार वर्ष में तो मरेगा नहीं वह। *श्रोता: देव पर्याय में?* हां, वही-वही। वह संवर नाम का जो देव था, कमठ की नहीं कहेंगे, हम संवर देव की पर्याय में कहेंगे।

अभी हम अपना टेबल देखेंगे। यह हमने पहले कोठे की बात देखी। पहले नंबर के कोठे की बात क्लिअर हुयी? सूक्ष्म निगोद की जो जघन्य अवगाहना है, उसमें एक प्रदेश बढ़कर दूसरी अवगाहना होगी। दो प्रदेश बढ़कर तीसरी होगी। चार प्रदेश बढ़कर; बढ़ाओ-बढ़ाओ-बढ़ाओ-बढ़ाओ। वह दोगुणा होगी, चारगुणा होगी। कितने ही गुणा होते-होते असंख्यातगुणा हो जाती है। अभी भी निगोद की अवगाहना के भेद चल रहे हैं तब जाकर सूक्ष्म वायुकायिक की जघन्य अवगाहना वहां से शुरू होगी। परंतु अभी निगोद की अवगाहना के भेद चलते ही रहेंगे उसके साथ-साथ। यानी उस पर्टिक्युलर अवगाहनावाले वायुकायिक

भी हो सकते हैं और सूक्ष्म निगोद भी हो सकते हैं। अभी उन दोनों में एक-एक प्रदेश की वृद्धिवाली अवगाहना के भेद चलते रहेंगे। कहां तक? उससे भी असंख्यातगुणा तक। गुणा समझते हैं न? मल्टिप्लिकेशन में। हां, उसको आवली के असंख्यातवें भागगुणा कहा है। हम उसको केवल असंख्यातगुणा कह रहे हैं क्योंकि वह आवली वगैरह समझते हैं न तो थोड़ा टेन्शन आ जाता है। है न? तो समझना है, तो सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना से सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना आवली के असंख्यातवें भागवाला जो असंख्यात है उतने गुणा है। तो ऐसे १ से २ असंख्यातगुणा हुआ। २ से ३, ३ का अर्थ क्या है? सूक्ष्म तेजसकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना। वह उससे असंख्यातगुणा हो गयी। उससे ४ नंबर पर क्या है यहां पर? अप्कायिक यानी जलकायिक की जघन्य अवगाहना। कौनसे? सूक्ष्म जलकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना उससे असंख्यातगुणा है। ५ नंबर पर सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना, उससे भी असंख्यातगुणा है। यहां तक समझ में आयी बात? बिलकुल आसान है और इसमें जो असंख्यात का प्रमाण है वह आवली के असंख्यातवें भागवाला असंख्यात है।

श्रोता: शुरुवाले का या लास्टवाला? वही-वही। पहले से दूसरा आवली के असंख्यातवें भागगुणा। दूसरे से तीसरा आवली के असंख्यातवें भागगुणा। मल्टिप्लिकेशन में-मल्टिप्लिकेशन में; एक के जघन्य से दूसरे का जघन्य मल्टिप्लिकेशन में है। परंतु इन दो के बीच में पहले नंबर के ही अवगाहना के भेद चलेंगे क्योंकि, उसके एक-एक प्रदेश से बढ़नेवाले सभी अवगाहना के भेद पाये जायेंगे। ऐसा नहीं है कि एकदम जम्प करके उसकी असंख्यातगुणावाली वह अवगाहना पायी जायेगी – ऐसा नहीं है। हम जब कहेंगे कि एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के भेद सहित वह जन्म लेगा तो अभी शुरू में असंख्यात बार तो यह अकेले निगोद की ही अवगाहना चलेगी न? असंख्यातगुणा बढ़ने तक और वह भी एक-एक प्रदेश से वृद्धि होनी चाहिये। भले वह निगोद का निगोद में रहा, परंतु उसकी अवगाहना एक प्रदेश से बढ़कर उतनी ही मिलेगी यह तो कुछ कह नहीं सकते हम। यह बात ख्याल में आ रही है कि नहीं आ रही है?

श्रोता: निगोद की अवगाहना पूरी करेगा तभी दूसरा स्थान चालू होगा न? निगोद की पूरी नहीं होगी। निगोद की अवगाहना होते-होते-होते उसके असंख्यात भेद चले जायेंगे, तब जाकर वायुकायिक की शुरू होती है परंतु वहां निगोद की भी चल ही रही है। हां, वहां वह

वायुकायिक होता है कि निगोद होता है उससे कुछ मतलब नहीं है। वहां हमको तो सिर्फ अवगाहना की तरफ देखना है। क्योंकि, कितने ही अवगाहना के भेद ऐसे होंगे जो वायुकायिक के भी होंगे और निगोद के भी होंगे। *श्रोता: इनकी अवगाहना कितनी होती है?* घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण। *श्रोता: सूक्ष्म निगोद की?* सूक्ष्म निगोद की। हमने पढ़ा न? अब यह ५ नंबर से ६ नंबर पर आना। ६ नंबर पर किसका नाम लिखा है? देखकर बताना आप। *श्रोता: बादर वायुकायिक?* बादर वायुकायिक। कौन है वह? पर्याप्त है कि अपर्याप्त है? *श्रोता: अपर्याप्त है।* अपर्याप्त है। लास्ट लाइन में लिखा है न? उसी कॉलम में।

श्रोता: सूक्ष्म पृथ्वीकायिक का उदाहरण देंगे? कैसा है? सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पूरे विश्व में यानी पूरे लोकाकाश में फैले हुये हैं। वे सूक्ष्म हैं न? आंखों से तो दिखायी नहीं देते तो उसका हम उदाहरण कैसे देंगे आपको? सूक्ष्म पृथ्वीकायिक, सूक्ष्म अग्निकायिक, सूक्ष्म जलकायिक भी। ये जो बादर जलकायिक हैं वे अनेक बादर जलकायिकों के शरीरों का समूह हमें एक बूंद के रूप में दिखायी देता है। एक जो बूंद है उसमें क्या है? तो एक बूंद पानी में बादर जलकायिक प्रत्येक शरीरवाले जीव असंख्यात हैं और इतने सारे असंख्यातों का समूह मिलकर एक बूंद होती है। एक बूंद यानी एक शरीर नहीं है; वहां असंख्यात शरीर हैं, अलग-अलग; प्रत्येक शरीर में जीव अलग-अलग हैं। *श्रोता: चिंगारी।* हां, चिंगारी जो दिखायी देती है अग्नि की, वहां बादर अग्निकायिक जीवों के असंख्यात शरीरों की मिलकर एक चिंगारी दिखायी दे रही है यानी इनकी अवगाहना इतनी सूक्ष्म है। वह तो अभी बादर की बात चल रही है। अपर्याप्तों की नहीं, पर्याप्तों की है। *श्रोता: शरीर असंख्यात हैं, जीव कितने?* असंख्यात। *श्रोता: एक बूंद में?* हां, क्योंकि एक जीव का एक शरीर ऐसे असंख्यात जीवों के असंख्यात शरीर एक बूंद में होते हैं। इनकी अवगाहना इतनी छोटी है।

तो हमने जो ५ नंबर पर देखा था उससे और भी सूक्ष्म पृथ्वीकायिक को देखना है? पूरा जो महास्कंध है, वह कौनसे कायिक से बना है? सूक्ष्म और बादर पृथ्वीकायिकों का मिलकर पूरा एक महास्कंध बना है, लोकाकाश प्रमाण। यह ५ नंबर पर थे हम, वहां से ६ नंबर कितने गुणा होगा? तो असंख्यातगुणा। परंतु यहां असंख्यात का प्रमाण बड़ा है, पल्य के असंख्यातवें भागवाला असंख्यात है। *श्रोता: आवलीवाला नहीं?* आवलीवाला नहीं, पल्यवाला है। फिर ६ से ७, ये सारे बादर-बादर हैं। तो ६ से ७ – पल्य के असंख्यातवें

भागगुणा। ७ से ८ – ऐसे ही बादर से बादर हैं। *श्रोता: स्वस्थान हैं?* स्वस्थान हैं परंतु बादर का है इसलिये पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है। हम उसको असंख्यात कहेंगे तो ६ से ७ असंख्यातगुणा, ७ से ८ असंख्यातगुणा, ८ से ९ असंख्यातगुणा, ९ से १० असंख्यातगुणा, १० से ११ असंख्यातगुणा। अब यहां से फिर हम जायेंगे तीसरे ग्रुप की तरफ। वह भी असंख्यातगुणा है क्योंकि, ये सब बादर ही हैं। ये १२ से १३, १४, १५, १६ ये सब असंख्यात-असंख्यातगुणा हो जायेंगे क्योंकि हमने देखा ऊपर के आड़े कॉलम में सभी जो हैं वे तो गुणितप्रमाण में हैं। अभी देखो १६ तक आये न हम? तो पहला, दूसरा, तीसरा कोठा पूरा हुआ।

अब ४ नंबर के कोठे में हमको देखना है। अब इससे आगे थोड़ी विशेष बात है समझने जैसी। ऐसा ही हम नहीं कहेंगे हर कोठे में। अब १६ के बाद नंबर है १७ का। वहां किसका नाम लिखा है १७ नंबर पर? सूक्ष्म निगोद और वह भी कौन है? पर्याप्त है। वहां का हमने उस कॉलम का 'अ' निकाल दिया था। सबने अपनी-अपनी पुस्तक में दुरुस्त किया कि नहीं पता नहीं है, करना चाहिये। तो यह सूक्ष्म निगोद जो १७ नंबर पर है वह १६ नंबर से असंख्यातगुणा है। यहां तक बात ख्याल में आयी न? अब १७ नंबर के बाद – नंबर किसका है? २८ नंबर है। २८ नंबर पर कौन है जरा देख लो। *श्रोता: सूक्ष्म निगोद।* अभी जो ये व्हर्टिकल कॉलम ४, ५, ६ हैं न? जिस किसी पर्याय की बात करेंगे हम। सूक्ष्म निगोद को चौथे कोठे में लेना। फिर सूक्ष्म निगोद को पांचवें कोठे में लेना और सूक्ष्म निगोद को ही छठे कोठे में लेना। यानी अब ऐसा हम कहेंगे; १७ नंबर जो सूक्ष्म निगोद है वह कौनसा है? वहां उसके पर्याप्त की जघन्य अवगाहना थी। उससे पांचवें कोठे में सूक्ष्म निगोद जो २८ नंबर पर है, वह क्या है? अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना है। उसके बाद छठे कोठे में सूक्ष्म निगोद ३९ नंबर है, वह पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना है। इसके, यानी निगोद के तीन लिये न हमने?

अब फिर जाना वायुकायिक की तरफ, १८ नंबर पर। वह कितने गुणा होगा, तो असंख्यातगुणा। *श्रोता: लेकिन वह किससे असंख्यातगुणा लेना है?* ३९ से। हम नंबर देखेंगे, देखो। सूक्ष्म निगोद के हमने तीन नंबर देखे। चौथे कोठे में १७ नंबर, पांचवें कोठे में २८ नंबर और छठे कोठे में ३९ नंबर। सबको मिला? *श्रोता: हां।* ये कैसे हैं? विशेष अधिक-विशेष अधिक हैं। अभी तक हम कैसे देखते थे? असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा।

हमने १६ से १७ असंख्यात गुणा कह दिया। अभी ४, ५ और ६ कोठे में जिसका नाम ले रहे हैं हम सूक्ष्म निगोद का; फिर नीचे आना सूक्ष्म निगोद और फिर और नीचे आना सूक्ष्म निगोद। वे कैसे हो गये? विशेष अधिक, विशेष अधिक। बाद में फिर ऊपर जाना, वहां वायुकायिक का नंबर आ जायेगा यानी १८ नंबर। अब सूक्ष्म निगोद से, यानी सूक्ष्म निगोद पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना से चौथे कोठे में सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्त की जघन्य अवगाहना, वह असंख्यातगुणा है। देखो, फिर से। हमने क्या देखा? निगोद की उत्कृष्ट ली न? उसके पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना से ऊपर १८ नंबर पर जाना। वह क्या है? वायुकायिक की। कौनसे? सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना असंख्यातगुणा है। फिर वायुकायिक को पांचवें कोठे में लेना है। निगोद से वायुकायिक असंख्यातगुणा है। अब वायुकायिक से वायुकायिक की पांचवें में और छठे में विशेष अधिक-विशेष अधिक है।

देखो, जिसका नाम ले रहे हैं; पहले हमने सूक्ष्म निगोद का नाम लिया चौथे कोठे में; तो सूक्ष्म निगोद जो पांचवें कोठे में है वह उससे विशेष अधिक है। सूक्ष्म निगोद जो छठे कोठे में हैं वह उससे भी विशेष अधिक है। हम फिर चौथे कोठे में जायेंगे वायुकायिक की बात करेंगे, वह असंख्यातगुणा होगा। *श्रोता: तो इसका मतलब यह हुआ, सूक्ष्म निगोद से दूसरे सूक्ष्म निगोद जैसे १७ से अपन २८ में आये तो उसे विशेष अधिक लेना और दूसरे जो वायुकायिक जीव में जायेंगे तो वहां असंख्यातगुणा?* हां, परंतु छठे कोठे के बाद फिर चौथे कोठेवाले वायुकायिक में जाना। इसलिये वे कोठे नीचे-नीचे लिखे हैं। ४, ५ और ६ कोठे जो हैं, पहले निगोद के तीनों ले लेना – विशेष अधिक, विशेष अधिक। फिर वायुकायिक पर जाना, तब कहेंगे असंख्यातगुणा। फिर वायुकायिक के ही तीन भेद ले लेना यानी १८ वाला वायुकायिक है। फिर १८ वाले वायुकायिक से २९ वाला जो वायुकायिक वह विशेष अधिक। फिर नीचे उसका नंबर क्या है? *श्रोता: ४०/४०।* वह विशेष अधिक। अब इसके बाद कौन कहेगा? ४० के बाद नंबर किसका आयेगा? *श्रोता: १९/* हां, तेजसकायिक जो १९ नंबर पर है, वह कितना होगा? *श्रोता: असंख्यातगुणा।* हां, असंख्यातगुणा। *श्रोता: वायु-वायु में विशेष अधिक और बदल गया तो असंख्यातगुणा?* पर किसके? यहां आने पर ४, ५ और ६ कोठे के लिये यह बात है। *श्रोता: विशेष अधिक का अर्थ क्या है?* विशेष अधिक का अर्थ है थोड़ा ज्यादा।

देखो, हम कहां पर आये थे? वायुकायिक १८ नंबर पर। वह कौन था? पर्याप्त की जघन्य अवगाहना थी वहां पर। उससे अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना कितनी है? थोड़ी ज्यादा है। पहले हम कैसे कहते थे? असंख्यातगुणा कहते थे। थोड़ी ज्यादा यानी दोगुणा भी नहीं है। दोगुणा भी होती तो दोगुणा कह देते, संख्यातगुणा कहते। यहां उतनी भी नहीं हैं, थोड़ी ज्यादा है यानी दोगुणा से भी कम है – इसका अर्थ क्या है? उसको विशेष अधिक कहेंगे। विशेष अधिक यानी थोड़ी अधिक। *श्रोता: संख्यात में ही आयेगी वह थोड़ी अधिक? कि असंख्यात में भी आयेगी? विशेष अधिक हम जो कहते हैं, ऊपर से नीचे विशेष अधिक, तो फिर वह विशेष अधिक में जो संख्या – जो थोड़ा भी बढ़ा।* वह उसका असंख्यातवां भाग लेकर उसमें मिला देना है। वह असंख्यात में ही होगी, असंख्यातप्रदेशों में ही होगी वह। *श्रोता: मतलब ॲड जो होगा वह असंख्यात में ही होगा?* हां, दो-चार प्रदेश नहीं होंगे क्योंकि, ओरिजिनल में असंख्यात है। ओरिजिनल में असंख्यात है, उसके दोगुणा नहीं करते हुये थोड़ा अधिक करना है। उसका कोई भाग उसमें मिला देना है, वह तो असंख्यात में ही होगा। *श्रोता: मतलब यह अपर्याप्त की रेंज तो बहुत बड़ी है।* हां, कितनी बड़ी होगी? देखो, अब आपको ढूंढ़ना है।

पहले नंबर पर सूक्ष्म निगोद था वह उसकी अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना थी। अब आप सबको सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना कौनसे नंबर पर है वह देखना है। *श्रोता: २८ नंबर पर।* २८ नंबर पर, बराबर है। २८ नंबर पर है न? यानी सूक्ष्म निगोद की रेंज कहां से कहां तक है? *श्रोता: १ से लेकर २८ तक।* १ से लेकर २८ तक। तो १ से लेकर १७ तक तो कितनी बार असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा हैं, मल्टिप्लिकेशन में। १७ के आगेवाले छोड़ दो। १७ तक तो हम कंटिन्युअस आये थे और १७ के बाद हमने २८ को लिया था। तो १ से लेकर १७ तक तो अवगाहना असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा में चली गयी और १७ से २८ विशेष अधिक में चली गयी। यानी सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य से उत्कृष्ट तक की इतनी रेंज होगी। *श्रोता: अवगाहना कितने प्रकार की है?* तो अवगाहना के एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये कितने भेद होंगे, यह ख्याल में लेना है हमको। *श्रोता: असंख्यात भेद होंगे?* ओरिजिनल ही असंख्यात था। ओरिजिनली ही दस-पांच होते तो हम कहेंगे थोड़े ज्यादा; पर ओरिजिनली ही वह असंख्यात से शुरुआत हुयी थी, छोटावाला असंख्यात था और उसको हमने कितनी बार

असंख्यात-असंख्यात-असंख्यातगुणा करते-करते, वह हम सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना तक आ गये। इसे कैसे लेना है, उसको कन्सिडर करना है।

अब सूक्ष्म वायुकायिक की जघन्य से उत्कृष्ट तक देखो। सूक्ष्म वायुकायिक जघन्य है २ नंबर पर। तो देखो १६ तक तो असंख्यातगुणा हुआ। फिर सूक्ष्म निगोद १७ नंबर पर असंख्यातगुणा हुआ, फिर सूक्ष्म निगोद विशेष अधिक, विशेष अधिक हुये। फिर वायुकायिकवाला वह पर्याप्त की जघन्य वह असंख्यातगुणा हुआ और फिर जाकर २९ नंबर पर जो है वह विशेष अधिक हुआ। यानी वायुकायिक के भी जघन्य से उत्कृष्ट तक इतने भेद हो जायेंगे। २ नंबर से लेकर फिर १७ तक आना, १७ के बाद २८ लेना, २८ के बाद ३९ लेना, ३९ के बाद १८ लेना, १८ के बाद २९ लेना। ख्याल में आती है न बात, यह कैसे पढ़ना इस टेबल को? यहां तो केवल उन्होंने नंबरिंग कर दिया है और कैसे पढ़ना वह उन्होंने डिस्क्रिप्शन किया। पर वह पढ़ने जाते हैं तो यह छूट जाता है और यह देखते हैं तो वह छूट जाता है और कहां पढ़ रहे हैं? क्या हो रहा है? कुछ पता नहीं चल रहा है। *श्रोता: यह टेबल भी आप समझा रही हैं तो समझ में आता है, ऐसे नहीं समझ में आता।* अरे! हमने कितनी बार समझने की कोशिश की तब जाकर कहीं घुस गया दिमाग में।

अभी तेजसकायिक की जघन्य देखेंगे। जघन्य कहां पर है अपर्याप्तों की? सूक्ष्म तेजसकायिक अपर्याप्त की जघन्य? ३ नंबर पर। अब ३ नंबर से १७ तक तो कंटिन्युअस असंख्यातगुणा चले जायेंगे। १७ के बाद वह निगोदों की अवगाहना बीच में लेनी पड़ेगी; १७, २८, ३९। फिर वायुकायिक की १८ पर असंख्यातगुणा होकर १८ के बाद २९ और ४० हो जायेगी। *श्रोता: अभी किसकी पूछा आपने?* तेजसकायिक की। *श्रोता: तीसरे नंबर पर?* हां, तीसरे पर जघन्य थी। तो इसतरह से इनके अपर्याप्तों की अवगाहना की रेंज कहां से कहां तक है? फिर इनके पर्याप्तों की अवगाहना की रेंज कहां से कहां तक है? यह सब हमें इसमें से पता चलता है और वह हमको कैसे काउंट करना है? किसके बाद कौनसा नंबर लेना है? यह बात इससे पता चल जाती है। यानी जो ४, ५ और ६ जो कोठे हैं, उसमें जिसका जो-जो नाम आता है, जैसे सूक्ष्म निगोद का नाम आया तो फिर चौथे में एक बार लेना, पांचवें में विशेष अधिक लेना, छठे में विशेष अधिक लेना। फिर ऊपर ४ थे कोठे में चले जाना वायुकायिक की तरफ, वह असंख्यातगुणा। फिर

वायुकायिक के क्रम से वे तीनों लेना। फिर आगेवाला तेजसकायिक असंख्यातगुणा। फिर तेजसकायिक के विशेष अधिक लेना। फिर आगेवाली देखना। इसतरह से इसको गिनने का तरीका है। तो ऐसे ही ये सब विशेष अधिक-विशेष अधिक हो जायेंगे न?

अब ४९ के बाद किसका नंबर आयेगा? ५० का नंबर आयेगा! *श्रोता: नहीं!* क्यों नहीं? अरे! ४९ के बाद नंबर किसका आयेगा? अप्रतिष्ठित प्रत्येक – उसका नंबर ५० है। वह ५० नंबर का है। उससे द्वीन्द्रिय भी असंख्यातगुणा है, वह ५१ नंबर पर है। यहां तक ही असंख्यातगुणा है। यहां तक असंख्यातगुणा है, बराबर? आगे जो है, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय वह ५२, ५३ वगैरह क्या होंगे? संख्यातगुणा होंगे। आगे लास्ट तक सभी संख्यातगुणा-संख्यातगुणा हैं। ५१ तक असंख्यातगुणा हैं। फिर संख्यातगुणा। *श्रोता: ५१ से संख्यात?* ५१ तक असंख्यातगुणा। *श्रोता: फिर?* फिर संख्यातगुणा। *श्रोता: क्यों?* क्यों – ऐसा है इसलिये। द्वीन्द्रिय से त्रीन्द्रिय की अवगाहना कितनी गुणा है? संख्यातगुणा कहेंगे हम। *श्रोता: आवली प्रमाण भी नहीं आयेगा?* नहीं-नहीं, कोई नहीं। असंख्यातवाली बात निकल गयी। संख्यातगुणा, संख्यातवाली भले वह ४ गुणा हो कि १००० गुणा हो। उसको संख्यातगुणा ही कहेंगे हम। *श्रोता: मनुष्य लेंगे तो पहले दो फीट फिर दो फीट एक इंच ऐसे-ऐसे?* नहीं-नहीं, वे तो उसके एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये सब स्थान होंगे। परंतु यहां हम एकदम उत्कृष्ट की बात कर रहे हैं न? किसी एक पर्याय की उत्कृष्ट से दूसरे पर्याय की उत्कृष्ट। यानी त्रीन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय की कंपॅरिझन करेंगे या पंचेन्द्रिय की कंपॅरिझन करेंगे। उसकी बात यहां है। *श्रोता: ५१ तक संख्यात है?* असंख्यातगुणा है। *श्रोता: फिर संख्यात?* हां। देखो अभी जरा एक बात मैं और बताना चाहती हूं। वैसे है तो इंटरेस्टिंग।

सूक्ष्म निगोद के कितने स्थान हमने देखे? आपको देखना है। सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त के जघन्य से सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त के उत्कृष्ट तक। अभी देखो। १६ स्थान तो कंटिन्युअस हो गये न? यानी वह १ नंबर छोड़कर आगे हमको गिनना है। अंतराल कितने हो गये? तो हम कहेंगे न १ से २, ३, ४ आगे ऐसे १७ तक तो कंटिन्युअस आ गये। १७ के बाद किसका नंबर आया? २८। यानी उसमें कितने अंतराल चले जायेंगे? १ से १७ तक सोलह अंतराल हो गये और आगे १७ से २८ तक एक अंतराल ऐसे सत्रह अंतराल हो गये। तो हम कहेंगे १७ स्थान हुये। हमको इतना ही गिनना है। सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त के

कितने स्थान हो गये? सत्रह। उसमें तो कितने ही असंख्यातगुणा है, कोई विशेष अधिक है उसकी बात छोड़ देंगे हम। कितने गुणा है या विशेष अधिक है उसकी बात छोड़ेंगे। सूक्ष्म निगोद के कितने मिले हमको? १७ मिले यानी लास्ट में से वह पहला मायनस करना; अंतराल को गिनना है हमको, १ को नहीं गिनना है। १ से १७ तक कितने स्थान हुये? वे १६ और यह २८ वाला, वे सत्रह हुये न? अब वायुकायिक के गिनो, वह २ नंबर पर है; २ नंबर से १७ तक गिनेंगे, १५ हुये। फिर सूक्ष्म निगोद के भी बीच में गिनने पड़ेंगे। *श्रोता: क्यों?* क्योंकि, वे बीचवाले हैं इसलिये। यानी २ से १७ तक तो कंटिन्युअस है। १७ के बाद २८ आ जायेगा, ३९ आ जायेगा। फिर १८ आ जायेगा और फिर २९ का नंबर आयेगा। तो कितने हुये स्थान? *श्रोता: सेम नंबर।* सेम नंबर कैसे आये? *श्रोता: कुछ अधिकवाले तो इग्नोर कर सकते हैं न?* कौनसे? कुछ अधिकवाले स्थानों को भी गिनना है, वह कुछ अधिक हो या मल्टिप्लिकेशन में हो। हमको स्थान गिनना है। २ से आगे हमें गिनना है। यानी ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६ हो गये; फिर १७, फिर २८, फिर ३९; यानी २ से १७ तक तो कंटिन्युएशन में है। उसके बाद निगोद के और दो लेना। फिर वायु का और एक लेना और फिर २९ को लेना। तो कितने हो गये सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त के? *श्रोता: १९।* हां, *श्रोता: १९।* १९ हो गये। बराबर है, आगे के भी गिनना है? हां, गिनो। यह गिनना मैं क्यों बता रही हूं आपको? हां? आपको वह मत्स्यरचना समझनी थी न? इसीलिये मैं आपको ये स्थान गिना रही हूं। जरा सूक्ष्म तेजसकायिक अपर्याप्त के ३ नंबर से गिनो। ३ से लेकर १७ तक तो कंटिन्युअस चौदह अंतराल आ जायेंगे; फिर १७ के बाद २८ और ३९ दो अंतराल; फिर १८, २९ और ४० तीन अंतराल; फिर तेजसकायिक का १९ और फिर ३० ऐसे दो अंतराल हुये। १४ + २ + ३ + १ + १ ऐसे कुल इक्कीस अंतराल अर्थात् २१ स्थान हुये। अभी जो हमने यह देखे, अभी निगोद के कितने हमने १७ देखे, बराबर है न? और वायुकायिक के १९ देखे थे अैर तेजसकायिक के २१ स्थान देखे। तो हर एक के दो-दो स्थान आगे बढ़ जायेंगे।

तो यह देखो पेज नं २१२ निकालना है। यह जो पेज है जीवसमास के बीच में वह खोलना। क्योंकि इन स्थानों की चर्चा करते हुये, उसको मत्स्यरचना के रूप में आचार्यों ने ग्रंथों में क्या लिखा है, उसका थोड़ा अंदाजा तो लेंगे। उन्हें तो आत्मा में स्थिर होना था। वह

छोड़कर क्यों यह लिखने बैठे? टाइमपास नहीं हो रहा था इसलिये? *श्रोता: विकल्प ज्यादा थे!* विकल्प ज्यादा थे, हां-हां, कि हमको तक़लीफ देने के लिये लिखा? छठे-सातवें गुणस्थानवर्ती जीव हैं, आचार्य हैं, इतने उच्चकोटि के हैं, बारंबार आत्मानुभूति भी कर रहे हैं तो यह लिखने की क्या जरूरत थी? न उनका माथा दुखता, न हमारा दुखता! *श्रोता: उनके लिये बहुत सहज है, हमारे लिये कठिन है ।* कुछ कठिन नहीं, आपने कठिन मानकर रखा है। देखो, शिखरजी का पहाड़ आपने चढ़ा की नहीं चढ़ा? कितना आसान था? बचपन में तो हम दौड़कर गये थे। फिर और जरा बड़े हो गये, तो हांफते-हांफते फिर भी वंदना तो पूरी कर ली हमने। अभी बूढ़े हो गये, जॉइंट हमारे काम नहीं करते तो भी क्या करते हैं? डोली में बैठकर भी जाते हैं वहां पर। तो वहां ऊपर जाकर क्या मिला आपको? अरे! यह भी हम पढ़ रहे हैं, इसमें भी कुछ कष्ट हो रहा है, है न? तो डोली में बैठकर आपको तो बस सुनना है और कुछ नहीं करना है! *श्रोता: मेहनत तो आपने की है।* अरे! हमने कोई मेहनत नहीं की। आप जो जान रहे हैं, अपने-अपने उपादान से जान रहे हैं। हमने कुछ नहीं किया आपमें। हमने आप में कोई हेराफेरी नहीं की। आप स्वयं अपनी स्वयं की योग्यता से समझ रही हो। *श्रोता: अगर नहीं समझ रहे हो तो?*

देखो, यह मत्स्यरचना में क्या बताया है उन्होंने? यह जो सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त के अभी हमने स्थान कितने गिने? तो १७ गिने। तो एक स्थान के लिये दो बिंदियां लिखेंगे और उसको हम आड़ी लाइन में १७ × २ = ३४; ३४ बिंदियां एक के आगे एक लिखेंगे। तो अभी देखो यह मत्स्यरचना का पेज निकालना, २१२ के आगेवाला पेज।

जीवों की अवगाहना स्थानों के प्रमाण में

मत्स्यरचना

यह सर्व अवगाहना स्थानों की मत्स्यरचना है। यहां जघन्य अवगाहना की ज, उत्कृष्ट अवगाहना की उ, निगोद की नि, वायुकायिक की वा इत्यादि आदिअक्षररूप सहनानी जानना। चौंतीस आदि बिंदियों की संख्या जानना। पांचवीं पंक्ति तक सूक्ष्म अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना है इसलिये सूक्ष्म अपर्याप्त (सूअज) लिखकर आगे आडी रेषा खींचकर पांचवीं पंक्ति लिखी है। इसी तरह ग्यारहवीं और सोलहवीं पंक्ति तक बादर अपर्याप्तों की सहनानी (बाअज) जानना।

निज.....उ ३४ अ
वाज.....उ ३८ अ
तेज.....उ ४२ अ
अज.....उ ४६ अ
सूअज-पृज.....उ ५० अ
वाज.....उ ५४ अ
तेज.....उ ५८ अ
अज.....उ ६२ अ
पृज.....उ ६६ अ
निज.....उ ७० अ
बाअज-प्रज.....उ ७४ अ
अप्रज.....उ ९२ अ
द्वीज.....उ ८८ अ
त्रीज.....उ ८२ अ
चज.....उ ८२ अ
बाअज-पंज.....उ ८६ अ
सूपज-निज....वाज....तेज....अज....पृज....बापजवाज....तेज....अज....पृज....निज....प्रज....अज.....उ २६ अ
द्वी.ज.....उ २२ अ
त्री.ज.....उ १६ अ
चज.....उ १६ अ
पंज.....उ २० अ

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि – भाग १ – पृष्ठ २१२

तो ऊपर क्या लिखा है? **जीवों की अवगाहना स्थानों के प्रमाण में मत्स्यरचना।** यह आचार्यों की बनायी हुयी है, आचार्यों ने लिखी हुयी है। ऊपर लिखते हैं – **यह सर्व अवगाहना स्थानों की मत्स्यरचना है।** अवगाहना के स्थानों की; अवगाहना के भेद तो एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये हैं; उनकी नहीं। एक-एक स्थान को हमने एक-एक नंबर दिया है।

यहां जघन्य अवगाहना की 'ज'। यानी 'ज' जहां लिखेंगे उसका अर्थ होता है जघन्य अवगाहना। **उत्कृष्ट अवगाहना** के लिये लिखेंगे **'उ'। निगोद** के लिये **'नि' वायुकायिक की 'वा' इत्यादि आदिअक्षररूप सहनानी जानना।** सहनानी यानी चिन्ह, सिम्बॉल। **चौंतीस आदि बिंदियों की संख्या जानना।** यानी जहां चौंतीस वगैरह – अभी यहां पहली लाइन में ३४ बिंदियां हैं। दूसरी लाइन में? ३८ बिंदियां हैं। **पांचवीं पंक्ति तक सूक्ष्म अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना है इसलिये सूक्ष्म अपर्याप्त जघन्य (सू अ ज) लिखकर आगे आड़ी रेखा खींचकर पांचवीं पंक्ति लिखी है। इसीतरह ग्यारहवीं और सोलहवीं पंक्ति तक बादर अपर्याप्तों की सहनानी (बा अ ज) जानना।**

अभी हम पहली लाइन ऊपर से पढ़ेंगे। लेफ्ट साइड में क्या लिखा है? **निज** – निगोद की जघन्य और राइट में लिखा है **उ** यानी उसी निगोद की उत्कृष्ट और आगे लिखा

है **अ** यानी अपर्याप्तों की है। यानी निगोद अपर्याप्तों की, कौनसे? सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक अवगाहना के ये अलग-अलग जो बीचवाले स्थान हैं वे कितने? हमने १७ गिने थे। एक स्थान के लिये दो बिंदियां लिखना। तो यह आप गिन लो बराबर है कि नहीं? जरा देख लो, ये ३४ बिंदियां हैं।

अभी आगे क्या है? विनोदभाई, याद है न? कितनी मेहनत की है? ये हमारे विनोदभाई ने बनाया है यह चार्ट। एक-एक बिंदी गिनकर, कहां कितनी लिखनी है, कहां से शुरू करना? देखो, **वाज** जो लिखा है यानी वायुकायिक जघन्य। वायुकायिक जघन्य २ नंबर था। २ नंबर पर था इसलिये पहले स्थान की दो बिंदियां छोड़कर आगे से शुरू हुआ है। इसलिये सेकंड लाइन, ऊपर की तीसरी बिंदी के नीचे से सेकंड लाइन स्टार्ट हुयी। ख्याल में आयी न बात? और वहां से लेकर... *श्रोता: दो बिंदियां क्यों बनायी?* एक स्थान के लिये दो बिंदियां। यह संदृष्टि है, ऊपर बताया न। ३४ आदि बिंदियों की संख्या। परंतु यहां एक स्थान के लिये दो बिंदियां बनायी हैं। यह कहां पर लिखा है? २१२ पेज निकालो। २१२ पेज पर उसी लेफ्ट साइड पर देखना, सेकंड पॅरेग्राफ, मिला? उसी मत्स्यरचना के आगे। पुरानी पुस्तक में मत्स्यरचना अलग जगह है और यह जो नयी पुस्तक है न? यह सेकंड एडिशन है। पहली एडिशन खत्म होकर पांच साल बीत गये थे। बहुत डिमांड थी और छापने का हमने ढाढ़स नहीं था, क्योंकि सारे वे हमारे ट्रेसिंग वगैरह सब कुछ यानी वे बराबर नहीं रहे थे। इसलिये फिर दुबारा पूरी डीटीपी वगैरह करके बहुत मेहनत के बाद – यह सारी मेहनत हमारे विनोदभाई ने संभाली है, इसलिये तो यह पुस्तक आपके हाथ में आ गयी है। यह सेकंड एडिशन है। बहुत सारा सुधार करके उसमें कहीं-कहीं मिस्टेक्स थी उनको भी सुधारा है। तो देखो यह सेकंड पॅरेग्राफ।

प्रथम सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त के जघन्य अवगाहना स्थान से लेकर उसीके उत्कृष्ट पर्यंत सत्रह स्थान हैं, जो हमने-आपने गिने थे। *श्रोता: कौनसा पेज?* २१२ पेज, मिला? बीच का पेज। पुराने में मिला कि नहीं? हां, **उसमें से सोलह गुणितस्थान हैं** यानी गुणकाररूप में और **एक अधिकस्थान है। सो प्रथमादि** यानी एक से लेकर **एक-एक स्थान की दो-दो बिंदियों की संदृष्टि करनेपर,** इसको संदृष्टि कहते हैं। एक-एक स्थान के लिये दो बिंदियां लिखेंगे। वहां पुद्गलपरावर्तन के चार्ट में हमने दो बार लिखा था तो उसका अर्थ हुआ था अनंत बार। यहां एक स्थान होता है वहां दो बार बिंदी लिखेंगे।

एक के आगे एक ऐसी चौंतीस बिंदियां ऊपर की पंक्ति में लिखनी। यहां मत्स्यरचना की पहली लाइन में चौंतीस बिंदियां लिखी हैं। **यहां सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त का जघन्य स्थान पहला है, उत्कृष्ट स्थान अठारहवां है तथापि गुणकारपनारूप और अधिकपनारूप अंतराल सत्रह ही हैं।** यानी उनके बीच के अंतराल नापने हैं। **इसलिये सत्रह ही स्थान लिये हैं। इसीतरह आगे भी जानना।**

तो सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त के जघन्य से उत्कृष्ट तक सत्रह स्थान हमने गिने हैं। १७ × २ = ३४; ३४ बिंदियां यहां लिखी हैं। दूसरी पंक्ति में लेफ्ट साइड में सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना बतायी है। देखो १, २, ३, ४, फिफ्थ लाइन में क्या लिखा है? 'सूअज' तक यानी वहां तक सभी के सूक्ष्म अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना है। तो 'वाज' से 'उ' तक की ३८ बिंदियां हैं, यानी वे स्थान कितने हैं उसमें? १९ स्थान हैं, अंतरालवाले। फिर सूक्ष्म तेजसकायिक अपर्याप्तों के कितने स्थान हैं? यहां ४२ बिंदियां हैं तो २१ स्थान उसके हुये। कैसे काउंट करना, कैसे गिनना यह हमने आपको बताया था। फिर 'अज' यानी अप्कायिक की जघन्य से उत्कृष्ट तक ४६ बिंदियां है। देखो, वह हर एक का स्टार्टिंग ऊपर के लाइन की तीसरी बिंदी से है, वहां से स्टार्ट हुआ है, क्योंकि वह आगे-आगे के नंबर पर स्टार्ट हुआ है। इसलिये सबको एक ही के नीचे एक नहीं लिखा है। पहले स्थान की दो बिंदियां छोड़कर आगे लिखा है। देखो, 'निज' है, वह जहां से शुरू हुआ है, वायुकायिक का जघन्य सेकंड स्थान पर है; तो पहले स्थान की दो बिंदियां छोड़कर वहां से शुरू हुआ है, *श्रोता: क्यों?* क्योंकि वह सेकंड स्थान पर है, है न? जो थर्ड स्थान पर है, उसके आगे दो बिंदियां छोड़कर तेजसकायिक का वहां से शुरू हुआ है। हर एक की शुरुआत दो-दो बिंदियां पहले छोड़कर चालू हुयी है। ऐसे निगोद 'नि वा ते अ भू' वहां तक तो ऐसे ही बढ़ते हुये स्थान हैं; राइट साइड में उनकी संख्या देखो। पहली पंक्ति में ३४ बिंदियां हैं, दूसरी पंक्ति में ३८ बिंदियां हैं, तिसरी पंक्ति में ४२ बिंदियां हैं, चौथी पंक्ति में ४६ बिंदियां हैं, पांचवीं पंक्ति में ५० बिंदियां हैं। फिर उसके बाद वे बादर के स्थान चालू हो गये। ६ पंक्तियां तो बादर एकेन्द्रियों की आ गयी। यह ५० के बाद ५४, ५८, ६२ इसतरह से बिंदियां बढ़ती-बढ़ती गयी; ७४ तक तो बढ़ती गयी। बादर अपर्याप्त में प्रतिष्ठित की जघन्य से उत्कृष्ट तक तो बढ़ती-बढ़ती ७४ हुयी। फिर उसके बाद अप्रतिष्ठित की जघन्य से उत्कृष्ट तक लेंगे। अप्रतिष्ठित, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय

और पंचेन्द्रिय इनके स्थानों की पांच पंक्तियां हैं उनमें उनके स्थान हीनाधिक हैं इसलिये उसका शेप कैसा अलगसा हो गया। यह मछली जैसी रचना दिखती है, इसलिये उसका मत्स्यरचना ऐसा नाम है। तो जिसके जितने स्थान हैं उन्हें गिनकर जितनी बिंदियां आयेगी उसको यहां बताया है।

तो यह बीचवाली जो पंक्ति है न? अप्रतिष्ठित की, वहां ९२ बिंदियां हैं और फिर आगे द्वीन्द्रिय की कम हैं; त्रीन्द्रिय की कम हैं; परंतु कम यानी यहां जघन्य की ओर से भी तीन नंबर पर शुरू हुयी और वहां उत्कृष्ट की ओर भी थोड़ी कम हैं, उसके बाद सबसे लास्ट लाइन यानी सत्रहवीं लाइन में, एक ही लाइन में विशेष अधिक-विशेष अधिक स्थान लिये हैं। यानी विशेष अधिक में देखो – सूक्ष्म पर्याप्त की जघन्य निज, वाज हर एक के लिये चार-चार बिंदी लिखते-लिखते आगे चले गये। इसतरह इसका अर्थ समझना और यह जो टोटल रचना दिखायी देती है वह मछली जैसे आकार की रचना दिखायी देती है इसलिये उसको कहेंगे मत्स्यरचना। कैसे उसको काउंट करना है? कुछ ख्याल में आयी बात वह बनाने में बहुत मेहनत पड़ी है। मेरे ख्याल से पहली एडिशन में नीचेवाली बिंदियों में कुछ घोटाला है। वह सेकंड एडिशन में ठीक कराया है। तो यह हो गयी मत्स्यरचना। तो इसे जानने से हमें क्या फायदा?

तो देखो, इसमें एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के भेद कितने हो सकते हैं? सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जिसकी घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण अवगाहना है, उसमें एक-एक-एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना को गिनना है। यानी अभी स्वक्षेत्रपरावर्तन जहां से प्रारंभ होता है, तो किसी जीव ने सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना प्राप्त की; अपनी आयु भोगकर मरा। जब जन्मा तो कौनसी पर्याय में जन्मा? कहीं पर भी जन्म ले सकता है, है न? सूक्ष्म निगोद मरकर कहां-कहां जा सकता है? एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के तिर्यंचों में जा सकता है। मनुष्य में भी जन्म ले सकता है। मनुष्य में पर्याप्त भी हो सकता है, अपर्याप्त भी हो सकता है। हां, देव-नारकी नहीं होगा परंतु इनमें से किसी भी पर्याय में उत्पन्न हो सकता है। उसको कौनसी पर्याय में उत्पन्न होना है? सूक्ष्म निगोद की पर्याय में ही और वह भी एक प्रदेश बढ़कर। एक प्रदेश बढ़कर अवगाहना के साथ उत्पन्न होना है और बीच में अन्य-अन्य पर्याय में चला जायेगा और जब तक उसको वह अवगाहना नहीं मिलेगी, तब तक का वह पूरा काल गिनना है। परंतु उन

अन्य अवगाहनावाली पर्यायों को क्रम में नहीं गिनना है। क्रम तभी गिनेंगे जब उस विशिष्ट उतनी ही अवगाहना के साथ जन्म लेगा। उसके बाद फिर और एक ही प्रदेश बढ़कर अवगाहनावाला भव प्राप्त होना चाहिये। अब प्रदेश कितना सूक्ष्म है और बस उतनी ही अवगाहना के साथ वह उत्पन्न होना चाहिये। फिर कहां चला जायेगा, क्या पता? किसी भी पर्याय में किसी भी अवगाहना के साथ घूमकर, फिर वापस उस विशिष्ट अवगाहना के साथ वह जन्म लेगा तभी उसको क्रम में गिनना।

तो इसतरह से हमने देखा कि अवगाहना के इन ६४ स्थानों का अर्थ क्या होता है? आप कल्पना कीजिये कि सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना से लेकर महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना तक एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के कितने भेद होंगे और उस एक-एक अवगाहना को क्रम से प्राप्त होना कितनी दुर्लभ बात है। ऐसे ये स्वक्षेत्रपरावर्तन हमने कितनी बार किये हैं, याद है? *श्रोता: अनंत बार।* अनंत बार। तो हमने ये सभी अवगाहना के भेद पाये कि नहीं पाये? *श्रोता: पाये।* सभी अवगाहना के भेद पाये फिर भी हम क्या चाहते हैं? बहू लानी है तो क्या करना? हमारा बेटा बहुत ऊंचा है। कहां गयी वैशाली हमारी? वह हमें कहती है हमारा बेटा बहुत हाइटवाला है। बहू कैसी लायेंगे हम? *श्रोता: हाइटवाली लायेंगे हम।* हाइटवाली चाहिये? अरे वाह, अरे वाह! छोटी नहीं चलेगी? मैंने स्टोरी बतायी थी मेरी मौसी की। याद है कि नहीं है? *श्रोता: नहीं याद है।* नहीं याद है? मेरी मौसी है एक, मेरे से दो साल छोटी है। हां, उस ज़माने में ऐसा चलता था। उसके लड़के की हाइट है ५ फीट ११ इंच; ६ फीट समझो न। तो घरवालों ने बहुत लड़कियां देखी, पर पसंद नहीं आ रही थी। तो ऐसे करते-करते एक दिन मेरी उस मौसी का फोन आया कि उज्ज्वला एक प्रॉब्लेम है। क्या प्रॉब्लेम है? मेरे लड़के ने लड़की पसंद कर ली है। मैंने कहा इसमें प्रॉब्लेम क्या है? बहुत बड़ी प्रॉब्लेम है, वह लड़की है ४ फीट १० इंच की! तो अब हम क्या करें? क्यों, उसमें करना क्या? करना क्या चाहती हो? नहीं, नहीं, वह कैसे होगा, क्या होगा? तो मैंने उसको बोला कि लड़के को लड़की पसंद है, एक फूट ज्यादा मांस और हड्डी लेकर तू क्या करनेवाली है? *श्रोता: क्या हुआ फिर आगे? अन्य श्रोता: फिर शादी हो गयी क्या?* हां, हो गयी शादी, दो बच्चे भी हो गये और अभी वे कॅलिफोर्निया में मज़े से रह रहे हैं। ये सारे हैं न मेरे रिश्तेदार इसलिये उनको पता है सब क्या है।

तो हमने अवगाहना के कारण, हाइट के कारण अपने को थोड़ा बड़ा माना और किसीको हाइट के कारण हीन मानते हैं। हम भी अपने को हाइट या अन्य जो अवगाहना के कारण; कोई मोटा होगा तो? अरे! अरे! मैं कैसा हूं? छोटा होगा तो? यानी इसीमें हमने अपना स्वरूप मान लिया है कि मैं शरीररूप हूं और यह अवगाहना इतनी होगी तो अच्छा है और यह कम होगी तो बुरा है। क्षेत्रपरावर्तन में तो हमने अवगाहना के सभी भेद प्राप्त कर ही लिये हैं, परंतु अभी भी हम इस अवगाहना के द्वारा ही अपना स्वरूप निश्चित करते हैं और उसीके कारण अपने को हीन या बड़ा मानते हैं। *श्रोता: जब जन्म लेता है तब अवगाहना छोटी रहती है। बाद में अवगाहना बड़ी हो जाती है?* बड़ी हो जाती है। जघन्य अवगाहना में भव के तीसरे समय में लिखा था यहां तो भव के विशिष्ट समयवाली अवगाहना ले लेना है। *श्रोता: महामत्स्य की जन्म की?* जन्म की यानी उस भव की होगी उसके। सम्मूर्च्छन होते हैं तो वहां पर भी जन्म के समय तो अवगाहना छोटी होगी बाद में बड़ी हो जायेगी। तो इसतरह से ये हमने अवगाहना के भेद देखे हैं। स्वक्षेत्रपरावर्तन में क्रम से एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना को जब-जब यह जीव प्राप्त होगा उसको गिनना; बीच-बीच में अनंत-अनंत-अनंतकाल अन्यथा चला जायेगा, उसको भी गिनना परंतु उन अन्य अवगाहनाओं को क्रम में नहीं गिनना। इसतरह यह स्वक्षेत्रपरावर्तन हमने देखा है।

श्रोता: यह जन्मवाली, आपने कहा कि जन्मवाली अवगाहना लेना। जन्मते समय अवगाहना छोटी होगी, उस एक भव में एक विशिष्ट अवगाहना लेना। *श्रोता: तो महामत्स्य जो पैदा होता है, वह जन्म से ही छोटा होता है?* वह जन्म से तो इतना छोटा नहीं होगा परंतु उस भव की मॅक्झिमम अवगाहना लेना। तो उसमें भी कहते हैं, इतनी सब अवगाहनाओं के भेदों को पा लिया। अभी उसमें यथायोग्य समझ लेंगे हम। यहीं अपनी बात पूरी होती है। बाकी परक्षेत्रपरावर्तन की बात हम थोड़ी देर के बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१८. परक्षेत्रपरावर्तन

षट्खण्डागम के आधार से हम कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं और उसमें पांच परावर्तन या परिवर्तन जिसको कहते हैं, उसका हम स्वरूप देख रहे हैं। कुछ प्रश्न है उसको देखकर हम आगे बढ़ेंगे। प्रश्न है कि, *अगर जीव की अवगाहना शुरू हो तो सूक्ष्म निगोद से हुयी थी, बराबर है न? एक-एक प्रदेश बढ़ते-बढ़ते असंख्यातगुणा होकर सूक्ष्म वायुकायिक जितनी हो गयी। जब एक प्रदेश बढ़कर अवगाहनावाला जीव हुआ, तो उसे वायुकायिक को इसी अनुक्रम में लेना कि नहीं लेना? क्या निगोद को ही लेना?* यह इनका प्रश्न है। वहां तो हमें केवल अवगाहना को कन्सिडर करना है। उसमें वायुकायिक को भी लेना और निगोद को भी लेना। वह चाहे जिस पर्याय में उत्पन्न हो, उसकी अवगाहना कितनी है उसकी बात है। उसके आगे अवगाहना असंख्यातगुणा बढ़ जायेगी तब 'नि वा ते' यानी तेजसकायिक भी उसके अंदर आ जायेंगे। तो वहां वह तेजसकायिक भी हो सकता है, वायुकायिक भी हो सकता है, निगोद भी हो सकता है। उतनी अवगाहनावाला होना चाहिये। शुरू के ही भेद वे सारे निगोद के होंगे।

श्रोता: कोई भी स्थान में अवगाहना ज्यादा होनी चाहिये? अवगाहना एक-एक प्रदेश से बढ़नी चाहिये, तभी उसको क्रम से लेना है। बिना क्रम से जो-जो अवगाहना होगी, उसमें जितना समय गया है उस समय को तो बिलकुल गिनना; अक्रम से जो-जो अवगाहना प्राप्त होगी उसमें जितना भी काल चला जाये, बीच में भले अनंतकाल भी बीत जाये, उस सब काल को गिनना, परंतु अनुक्रम में वही अवगाहना लेनी जो एक प्रदेश से बढ़कर होगी। तो यह कितनी रेअर पॉसिबिलिटि होती चली जाती है और उसे मात्र एक प्रदेश ज्यादा चाहिये। मात्र एक प्रदेश बढ़कर अवगाहना के साथ जन्म लेने में अनंत-अनंतकाल चला जायेगा न? क्योंकि चाहिये उससे छोटी भी अवगाहना होगी कितनी बार। कोई बीचवाली मध्य अवगाहना तक आ गया है तो छोटी या बड़ी कुछ भी अवगाहना हो सकती है उसकी। एक्झॅक्टली एक प्रदेश ज्यादा होना चाहिये, यह बहुत असंभव जैसी बात लगती है, परंतु वह जब कभी इस क्रम से आयेगा, तब ही उसको गिनना, अन्यथा उसका तो टाइम तो चालू है गिनने का।

प्रश्न: प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित का अर्थ। यहां पर्याप्ति वह क्या लेना? कोई जीव जन्म के बाद, बड़ा होने के बाद उसका ऑक्सिडेंट होता है और उसका हाथ-पैर कट जाता है तो उसकी अवगाहना कम हो जाती है तो उसे गिनना चाहिये?

यह जन्म के समय कितनी अवगाहना थी, उसकी बात हमने देखी थी या उसको बढ़ते-बढ़ते कितनी हो जायेगी? कम हो गयी तो हमें तो बढ़ती हुयी अवगाहना चाहिये हाथ-पैर टूटने से अवगाहना कम होती है, वह नहीं गिननी है। नहीं तो उस जन्म में जो-जो एक-एक प्रदेश से बढ़ता जायेगा, सभी अवगाहना को लेना पड़ेगा। एक भव की अवगाहना एक बार ही लेनी है। हम कहेंगे थोड़ा-थोड़ा बढ़ रहा है उसको सबकी काउंट करो, तो वह नहीं चलेगा। जिस भव में उत्कृष्ट अवगाहना को प्राप्त होगा वहां उसने जन्म लिया ऐसा समझेंगे।

तो यहां परक्षेत्रपरावर्तन की अपनी बात चलेगी, यहां पर उसको पढ़कर फिर आगे बढ़ेंगे। जीवकाण्ड पुस्तक नंबर २। *श्रोता: सूक्ष्मनिगोद और बादर निगोद को अलग से क्यों कहा?* ऊपर सूक्ष्म निगोद थे, नीचे बादर निगोद हैं, तो उनकी अवगाहना का क्रम अलग है। इसलिये उसको अलग से कहा। देखो, यह अपना पेज नंबर निकालना ६४३। **अब परक्षेत्रपरावर्तन कहते हैं – सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त**। अब यह कौनसा जीव है? वह हमारा परिचित हो गया है। *श्रोता: पेज नंबर?* ६४३। **सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जघन्य अवगाहनारूप शरीर का धारक**, जो हमने जघन्य अवगाहना की बात की थी उसीकी बात है। **वह लोकाकाश के मध्य में जो आकाश के आठ प्रदेश हैं**... अभी इतना ही पढ़ेंगे। सूक्ष्म निगोद क्या है, उसकी अवगाहना कितनी वह अभी हमने देखी थी। यह बहुत छोटी अवगाहना है जिसको हम घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण कहेंगे। वह तो ठीक परंतु वह कहां जन्मा? तो कहते हैं कि लोकाकाश के मध्य में जो आठ प्रदेश हैं। यह लोकाकाश के मध्य में आठ ही प्रदेश हैं यह कैसे जाना? यह लोकाकाश है क्या और उसके मध्य प्रदेश होते कहां हैं और मध्य के प्रदेश आठ ही क्यों होते हैं? ऐसे बहुत सारे प्रश्न हमें हैं, तो उसके हम उत्तर ढूंढ़ेंगे। अभी आपको जैन भूगोल पुस्तक चाहिये। थोड़ी हलकी पुस्तक लेने में अच्छा रहेगा न? हां, यह लोकाकाश क्या है उसको पहले देखेंगे हम। पृष्ठ संख्या है ७। यह लोक कहां है और वहा क्या है उसको हम देखेंगे। *श्रोता: पेज नंबर?* पेज नंबर है ७। देखो एक गाथा है त्रिलोकसार की ३ नंबर की और एक है कार्तिकेयानुप्रेक्षा की ११५ नंबर की। देखो, पहले हम त्रिलोकसार की गाथा पढ़ेंगे।

सव्वागासमणंतं तस्स य बहुमज्झदेसभागम्हि।
लोगोसंखपदेसो जगसेढिघणप्पमाणो हु।।३।।

उसके बाद यह कार्तिकेयानुप्रेक्षा की जो गाथा है,

सव्वागासमणंतं तस्स य बहुमज्झसंठिओ लोओ।
सो केण वि णेय कओ, ण य धरिओ हरिहरादीहिं।।११५।।

देखो ऊपर क्या लिखा है? सर्व जो आकाश है, आकाश एक द्रव्य है कि दो द्रव्य हैं? *श्रोता: एक द्रव्य है।* संपूर्ण अखंड एक ही द्रव्य है; पर जिस क्षेत्र में अन्य पांच द्रव्य पाये जाते हैं उसको लोकाकाश कहेंगे। उसको लोक कहेंगे या लोकाकाश कहेंगे और उसके बाहर जो अलोकाकाश है; वहां मात्र आकाशद्रव्य ही है, अन्य द्रव्य वहां नहीं पाये जाते। तो कहते हैं, जो पूरा अखंड थ्री डायमेन्शनवाला जो आकाशद्रव्य है, उसके बहु मध्यभाग में, बीचोबीच में, सेंटर में, उसके अनंतवें भागप्रमाण प्रदेशों में; क्योंकि असंख्यात प्रदेश जो लोकाकाश के हैं, वह संपूर्ण आकाश का कितना भाग है? अनंतवां भाग है। यह तो ख्याल है न? क्योंकि आकाश अनंत-अनंतप्रदेशी है। आकाशद्रव्य में कितने अनंत प्रदेश हैं? *श्रोता: जीवराशि से अनंतगुणा।* हां, जीवराशि से अनंतगुणा। *श्रोता: तीन काल के समय से।* हां, तीन काल के। कहां लिखा है? यह लिखा है न? यह जो हमने देखा था न? संख्यामान वगैरह वहां निकालना। संख्या की बात थी; पर्याप्ति प्ररूपणावाला प्रकरण है उसमें वे अनंतों के जो भेद बताये हैं, पहले नंबर की पुस्तक में है। *श्रोता: पेज नंबर?* पेज नंबर बता रहे हैं आपको क्योंकि अनंतों की जहां बात शुरू होती है न? वहां आपको बताना है। धारायें तो २२६ पर हैं, पुद्गलों का प्रमाण उस दिन आपको बताया था न? हां, जीवराशि से, हां, २३१। देखो, २३१ पर जो नया पॅरेग्राफ है, पुद्गलों का प्रमाण हमने यहां से देखा था।

जीवराशि से अनंतानंत वर्गस्थान जानेपर। द्विरूपवर्गधारा में हमने ये बातें देखी थी। द्विरूपवर्गधारा याद है न? दो का वर्ग चार – पहला स्थान; चार का वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग... यह जो धारा है वह कहां तक चलेगी? केवलज्ञान तक। उसको कहेंगे द्विरूपवर्गधारा। इस धारा में जहां जीवराशिवाली अनंत संख्या आयेगी, उससे आगे अनंतानंत वर्गस्थान जानेपर **पुद्गल परमाणुओं का प्रमाण** आता है। जितना पुद्गल परमाणुओं का

प्रमाण है अनंत, उसका वर्ग, वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग करो तो ऐसे अनंतानंत वर्गस्थान जाने पर तीन काल के समयों का प्रमाण आता है। इससे अनंतानंत वर्गस्थान जाने पर श्रेणीरूप आकाश के प्रदेशों का प्रमाण है। श्रेणीरूप यानी तीन डायमेन्शन में से एक डायमेन्शन; श्रेणी यानी सिंगल लाइन, एक पंक्ति। जैसे हमारे पास कोई बॉक्स है, तो उसके तीन डायमेन्शन्स हैं न? चौकोर ऐसा सम प्रमाण में होगा। तो हम क्या कहेंगे? जैसे लोकाकाश को ऐसे सम करेंगे तो कैसे गिनेंगे? ७ राजू ऐसा आड़ा, ७ राजू ऐसा ऊंचा, ७ राजू ऐसा चौड़ा तो यह क्या हो जायेगी? लोकाकाश की श्रेणी हो जायेगी यानी उसको हम जगत्श्रेणी कहेंगे। यहां किसकी श्रेणी है? पूरे आकाशद्रव्य की श्रेणी यानी आकाशद्रव्य जो घनस्वरूप है उसमें एक डायमेन्शनवाली एक सिंगल लाइन उसको क्या कहेंगे? आकाश की श्रेणी। वह कितनी है? तो कहते हैं तीन काल के समयों का जो प्रमाण है, अनंत है, उसका अनंतानंत बार वर्ग-वर्ग-वर्ग-वर्ग करो, तो आकाश के प्रदेशों का प्रमाण, कौनसे? श्रेणीरूप आकाश के प्रदेशों का प्रमाण आता है और उसका घन करने पर पूरे आकाश के प्रदेशों का प्रमाण आ जायेगा; घनरूप करने पर। यह बात आयी न यहां? तो आकाश में इतने प्रदेश हैं, आकाश इतना बड़ा है, उसका क्षेत्र इतना बड़ा है। अब इतने बड़े आकाश के बीचोबीच उसके अनंतवें भाग में यह लोकाकाश है।

श्रोता: यह आकाश के घन का भी कोई मेथड निकाला है कि पूरे आकाश का घनफल कितना होगा? आकाश के घन का क्या शेप होगा पूरे का? आकाश का तो अनंतप्रदेशी आकार कहेंगे जो केवलज्ञान में जानने में आया है। तो एक श्रेणी में जो आप देखते हैं संख्या लेकिन अगर हमें घन को निकालना है तो? श्रेणी का घन करो। श्रेणी का घन करो तो घनरूप आकाश का क्षेत्र आयेगा यानी... *श्रोता: पर श्रेणी का घन तो शेप से करेगा, वह शेप कौनसा है?* अच्छा, शेप कौनसा है, यानी क्युबिकल? उसको इमॅजिन भी करें कोई भी शेप को तो भी वह अनंतप्रदेशी है। जैसे लोकाकाश का शेप हीनाधिक अलग है, परंतु हमने उसको सब जगह से ऐसा समान करके उसका ७ राजू × ७ राजू × ७ राजू गिन लिया। यहां तो केवलज्ञानगम्य ही बात है। इसलिये वे तो जो अनंत है उसे बतायेंगे; श्रेणीरूप आकाश अनंत है और उसका घन है वह तो घनरूप आकाश का क्षेत्र है। क्षेत्र यानी उसके तीन डायमेन्शन्स को गुणा करने पर उसके प्रदेशों की संख्या आती है।

श्रोता: यानी लेंथ, विड्थ, हाइट समान लेना है? हां, अभी हम ऐसा ही मानेंगे, बस वही है। तो यहां देखो, कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा है न? उसके नीचे लिखा है।

सर्व आकाश अनंतप्रदेशी है, उसके बहुमध्यभाग में-बीचोबीच लोक है। जैन भूगोल पुस्तक है, पेज नंबर ७, आपको जैन भूगोल पुस्तक के सातवें पृष्ठ पर देखना है। **यह लोक असंख्यातप्रदेशी है**। हमने बहुत बार देखा न? लोक कितना है? तो असंख्यातप्रदेशी है ये सब बातें हमें मालूम हैं। **घनस्वरूप है**। घनस्वरूप यानी? हम केवल उसका चित्र ऐसा देखते हैं और बीचमें एक हाथ देखते हैं। वैसा हाथ है क्या लोकाकाश में? यह तो हमने उसका जो कोई सिम्बॉल बनाया है, उसकी बात नहीं है। परंतु वह तो केवल फ्रंट व्ह्यू है। परंतु लोकाकाश घनस्वरूप है। यह कैसा घनस्वरूप है? देखो, चार्ट निकालो यहां, १नंबर होगा। *श्रोता: १ पर तो यह भगवान की फोटो है।* १ नंबर का चार्ट – जहां लोकाकाश लिखा है।

तो हमें जो मालूम है – लोकाकाश का ऐसा आकार वह लेफ्ट साइड में दिख रहा है और सर्वत्र वह ७ राजू ऐसा दक्षिणोत्तर है वह उसकी तीसरी डायमेन्शन है; हमें जो आकार मालूम है उसको हम पूर्व-पश्चिम जैसा स्प्रेड है उसको हम बताते हैं और वह सर्वत्र दक्षिणोत्तर ७ राजू प्रमाण फैला हुआ है। इसलिये उसको ऐसा आड़ा बताया है और वह त्रसनाली कहां है? बीचोबीच है, अंदर है, सेंटर में है; इसलिये उसको ऊपर से नीचे तक बतायी है। तो किसीने पूछा बीच में लटकती क्यों है? लटकती नहीं है। यह थ्री-डायमेन्शन में ऐसा ही दिखेगा न? जहां से शुरू हुयी है वहां से १४ राजू गिन करके बनायी है। यहां तो १ राजू के लिये ४ सेंटिमीटर ऐसा माप लेकर बड़े-बड़े चार्ट बनाये थे और उनके वे कलर झेरॉक्स बनाये थे। यानी वह एक्झॅक्ट प्रपोर्शन में ड्रॉइंग किया हुआ है। तो यह लोकाकाश का ऐसा जो शेप है वह थ्री डायमेन्शन्सवाला – त्रिमितिवाला है। वह कहां है? तो पूरे आकाश के सेंटर में है। देखो ७ पेज पर मैं फिर पढ़ रही हूं। एक बाजू आप वह फिगर सामने रखो और यहां हम पढ़ेंगे, पेज नंबर ७।

हमने अभी कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा ११५ देखी है। देखो, कार्तिकेयानुप्रेक्षा में तो बारह भावना है, यानी बारह अनुप्रेक्षा का वर्णन है। लोकभावना का कितना सारा वर्णन है – मेजॉरिटी तो उसका ही है। *श्रोता: मेजॉरिटी तो लोकभावना का वर्णन है।* हां, मेजॉरिटी

लोकभावना का वर्णन है। ये भावनायें कौन भाते हैं? *श्रोता: मुनिराज।* मुनिराज और उनके लिये इन भावनाओं को आनंद की जननी कहा है! है न? तो यह भूगोल जानकर उनको क्या फायदा होगा? *श्रोता: कार्तिकेयानुप्रेक्षा?* कार्तिकेयानुप्रेक्षा, कार्तिकेय मुनि ने लिखा है और वे बारंबार उसकी भावना करते हैं, हैं न? तो उसके स्वरूप का चिंतवन होता है। उनके तो इसके कारण संस्थानविचय धर्मध्यान होता है क्योंकि लोक का जैसा स्वरूप है उसको जानना, वैसा ही जानना, इसमें राग-द्वेष का कोई काम ही नहीं है। पर हम अगर उसका स्वरूप देखेंगे तो हमें जरूर उसमें राग द्वेष की उत्पत्ति होती है। जब हमारा यहां भूगोल का शिबिर हुआ था, ऐसा ही ६-६ घंटेवाला शिबिर, तो हमने मेरु पर्वत की बात उठायी थी। तो जब कहा कि वह पूरा सोने का बना हुआ है तो सबकी आँखें चमकने लगी थी। तो फिर पूछने लगे मेरु पर्वत कहां है? हमें जाना है! देखो, मिथ्यादृष्टि रागी जीव को ये बातें सुनकर भी राग की ही उत्पत्ति होती है।

हां गाथा का अर्थ देखिये, **सर्व आकाश अनंतप्रदेशी है, उसके बहुमध्यभाग में-बीचोबीच में लोक है। यह लोक असंख्यातप्रदेशी है-घनस्वरूप है – लंबाई, चौड़ाई, मोटाईरूप घन है** यानी अपनी भाषा में **थ्री डायमेन्शनवाला है। उसका प्रमाण जगत्श्रेणी के घन प्रमाण है** जिसकी चर्चा हम बाद में करेंगे। यहां क्या लिखा है? देखो, उस गाथा में दूसरी लाइन में? **सो केण वि णेय कओ, ण य धरिओ हरिहरादीहिं** उसको किसीने बनाया नहीं है और उसको धारण करनेवाला कोई वहां शेषनाग पर बैठा है, सोया है और शेषनाग ने पृथ्वी को धारण किया है ऐसा बिलकुल नहीं है। वह तो बस है, लोक अनादि से है। यहां लिखा है देखो नीचे। **जैनाचार्यों की ऐसी विशेषता है कि जिनमत का कथन करते हुये उसी कथन द्वारा वे परमत का यानी अन्यमतियों की भ्रामक-कल्पनाओं का खंडन-निराकरण करते हैं।** दो ही लाइन में उन्होंने बताया परंतु वहां अन्यमतियों की भ्रामक कल्पना का खंडन कर दिया। **लोक है कहने से उसके अस्तित्व की सिद्धि होती है**। 'है' कह दिया न? देखो आगम में जहां पर भी सत्प्ररूपणा जो होती है न? जो सब आगम में, धवला में, जयधवला में महाधवला में पहले 'है' इतना कहेंगे। जब गुणस्थानों की चर्चा चलेगी, पहला गुणस्थान 'है', दूसरा गुणस्थान 'है' यानी उसकी पहले सिद्धि करते हैं। जो-जो है उसको बताते हैं वह सत् प्ररूपणा हो गयी उसकी। **'लोक है' कहने से उसके अस्तित्व की सिद्धि होती है और शून्यवादी का निराकरण होता है**; क्योंकि

सब शून्य है ऐसा माननेवाले भी हैं। **एक ब्रह्म ही है, बाकी कुछ नहीं है कहनेवालों के मत का खंडन हो जाता है।** दूसरा क्या लिखा है – **अकृत्रिम है। अकृत्रिम है – किसीने बनाया नहीं** है। यह कहां लिखा है? अभी हमने ऊपर श्लोक पढ़ा नहीं था वहां लिखा है।

लोगो अकिट्टिमो खलु अणाइणिहणो सहावणिवत्तो।
जीवाजीवेहिं फुढो सव्वागासवयवो णिच्चो।।

इसका ही अर्थ हो रहा है। **अकृत्रिम है** – अकिट्टिमो लिखा था न? **किसीने बनाया नहीं कहने से ईश्वरकर्तावाद का निराकरण होता है**। वे सब मानते हैं कि यह सब ईश्वर ने ही बनाया है। वे कहते भी हैं कि ईश्वर की इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिलता, इतने सारे जो पत्तों के, फूलों के आकार हैं उनको ईश्वर बनाता है, हमें सुख-दु:ख देता है वह ईश्वर ही देता है, ईश्वर ही सबका कर्ता है। तो उसको कितना काम का बोझा होगा? और फिर भी वह सब कैसे करता है? ऑनररि वर्क करता है। तो मेरी भाषा में ऑनररि सर्व्हंट हो गया सबका। वे लोग मानते हैं कि ईश्वर ने इस सृष्टि को बनाया। तो मनुष्य को भी ईश्वर ने बनाया। आप पूछो तो मेरी भाषा में उस ईश्वर को मनुष्य ने बनाया है। *श्रोता: सही बात है।* क्योंकि मनुष्यों की कल्पना है न वह? वह तो है ही नहीं ऐसी कोई वस्तु, ऐसा कोई ईश्वर। शास्त्र में ऐसा लिखा है कि मिथ्याज्ञान का विषय नहीं होता इस विश्व में। *श्रोता: असत् है।* मिथ्याज्ञान का विषय ही इस विश्व में नहीं होता है; तो उनकी जो ईश्वर संबंधी मान्यता है कि सबका करनेवाला, धरनेवाला ऐसा ईश्वर है, ऐसा ईश्वर इस विश्व में एक्झिस्टन्स में ही नहीं है। यह उनकी कल्पना से बनायी हुयी बात है। यानी यह उनकी मान्यता में जो ईश्वर है वह कल्पना से निर्मित वस्तु है। ऐसा कोई व्यक्ति तो है ही नहीं।

यहां कहते हैं कि, **किसीने धारण किया नहीं कहने से इस विश्व को शेषनाग ने धारण किया है ऐसे मत का खंडन होता है। अनादिनिधन है कहने से इस सृष्टि का संहार होगा माननेवालों का निराकरण होता है। जीव और अजीव द्रव्यों से यह लोक भरा हुआ है कहने से सर्व छह द्रव्यों का अस्तित्व सिद्ध होता है**। जीव और अजीव द्रव्य हैं न? अजीव द्रव्य में बाकी सभी पांच द्रव्य आ गये। **लोक को मायामयी कहनेवालों का निराकरण होता है**। क्योंकि छह द्रव्य हैं, जैसे मैं हूं वैसे अन्य द्रव्य भी हैं और कुछ अन्यमती कहते हैं बस एक ब्रह्म ही है बाकी कुछ है ही नहीं है और जो है वह सब

मोह है, माया है। बस ऐसा ही कहते-रहते हैं कि मोह है, माया है। **सर्व आकाश का अवयव कहने से अलोकाकाश की सिद्धि होती है। नित्य शाश्वत कहने से क्षणिकवाद का खंडन होता है**। ऊपर लिखा है न **'णिच्चो'**। **आकाश के जितने क्षेत्र में धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य व्याप्त हैं, जहां जीव और पुद्गल तथा कालाणु पाये जाते हैं उतने क्षेत्र को लोक कहते हैं**। यह लोक नाम कैसे आया? **क्योंकि यहां छह द्रव्य लोक्यते यानी अवलोकने में आते हैं-पाये जाते हैं**। लोक धातु है न? संस्कृत शब्द है। लोक्यते यानी यहां दिखायी देते हैं ऐसा हम अपनी भाषा में कहेंगे।

अब यह हमने जो अभी पढ़ा था परक्षेत्रपरावर्तन में कि यह सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहनावाला जीव लोकाकाश के बीचोबीच यानी मध्य में, लोकाकाश के मध्य में उत्पन्न हुआ है। तो यह लोकाकाश के भी बहुत सारे भेद होते होंगे? हां, लोकाकाश के ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक ऐसे तीन भेद होते हैं। तीन विभाग होते हैं उनको भी हम देखते हैं। यह लोकाकाश कितना बड़ा है मालूम है न? असंख्यात तो हमने प्रदेशों में गिने, पर उसका अन्य भी कोई नाप होगा? तो राजू ही उसका नाप है। जो असंख्यात-असंख्यात योजनों का १ राजू होता है, ऐसी १४ राजू उसकी हाइट है। दक्षिणोत्तर सर्वत्र ७ राजू है और पूर्व-पश्चिम अलग-अलग है। सबसे ऊपर १ राजू है; बीच में बढ़कर ब्रह्म स्वर्ग के पास ५ राजू होता है; मध्यलोक में फिर १ राजू होता है; फिर सबसे नीचे ७ राजू होता है। इसतरह से घनस्वरूप है। उसके तीन भेद बताये जाते हैं – तीन भाग। अभी हमने देखा न? नीचे का वह अधोलोक, अधो यानी नीचे का; ऊपर का यानी ऊर्ध्वलोक और बीच का मध्यलोक। यह पेज नंबर९ पर लिखा है देखो – अभी यहां राजू का प्रमाण कैसे निकालना है, उसका गणित बताया है, परंतु उसको छोड़कर...। *श्रोता: पढ़िये।* नहीं, क्योंकि क्या है वह बहुत बड़ा गणित है न?

जैसे हमने पल्य नाम पढ़ा है। पल्य देखा न? वह गड्ढा करना वगैरह वगैरह। वहां हमने तीन प्रकार के पल्य देखे थे। उसमें से कौनसा पल्य लेना है? तो अद्धापल्य। तो देखो, यहां लिखा है ९ पेज पर बीच में। **पल्य × पल्य × पल्य** ऐसे ही लिखते रहो; कितनी बार? तो **पल्य के अर्धच्छेद बार**। तो क्या प्रमाण आया? क्या मिलेगा? **सूच्यंगुल**। अर्धच्छेद हमने देखा था, आपको बताया था; जैसे ४ का अर्धच्छेद २ है, १६ का अर्धच्छेद ४ है, उसको अर्धच्छेद कहते हैं। तो पल्य को कितनी बार लिखना है और

आपस में गुणा करना है? पल्य के अर्धच्छेद बार लिखकर आपस में गुणा करेंगे तो आयेगा सूच्यंगुल; सूचि अंगुल; अंगुल का प्रमाण आयेगा। लिनिअर लाइन में, सिंगल लाइन में अंगुल का प्रमाण आयेगा। अभी अंगुल × अंगुल × अंगुल घनांगुल होगा और **घनांगुल × घनांगुल × घनांगुल** करते रहो, कितनी बार? तो कहते हैं **कि पल्य के अर्धच्छेदों के असंख्यातवें भाग बार**, तो जाकर **जगत्श्रेणी** यानी ७ राजू का प्रमाण आयेगा और यह ७ राजू को हम ७ से भाग देंगे तो १ राजू का प्रमाण आयेगा। यह तो जिसको और डिटेल में जानना है उसके लिये यहां जानकारी लिखी है। हमारी भाषा में असंख्यात-असंख्यात योजनों का १ राजू है।

श्रोता: मध्यलोक में जो असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं, वैसा? हां, जो मध्यलोक में हमने देखा न? असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं। कितनी एरिया में फैलै हैं? आज दोपहर में हमने नाप निकाला था कि जो जम्बूद्वीप है वह एक लाख योजनवाला है । फिर वे आगेवाले २ लाख, ४ लाख, ८ लाख ऐसा करते-करते अंतिम जो स्वयंभूरमण समुद्र है वह कितना बड़ा हुआ था? कितने लाखवाला हो जायेगा? तो कहते हैं वह तो वन फोर्थ $\left(\frac{१}{४}\right)$ राजू हो जाता है। तो उसको ४ गुणा करो यानी सभी असंख्यात द्वीप-समुद्र जितनी एरिया में हैं, उसका डायमीटर निकालो यानी स्वयंभूरमण समुद्र का आउटर डायमीटर यानी आउटर एज से आउटर एज तक, वह हो जायेगा १ राजू। उसके अंदर अभी द्वीप-समुद्र समा गये। इतना उसका बड़ा प्रमाण है। अब लोकाकाश के तीन भाग हैं। अभी हमने देखे थे उसीको पढ़ रहे हैं, देखो।

इस लोक के तीन भेद हैं जिन्हें हम तीन लोक-तीन भुवन-त्रिलोक नाम से जानते हैं – ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। पूर्व-पश्चिम जहां मध्य में एक राजू चौड़ाई है वहां से नीचे ७ राजू अधोलोक है, ऊपर ७ राजू ऊर्ध्वलोक है। बीच में पूर्व-पश्चिम एक राजू और दक्षिणोत्तर सात राजू मध्यलोक है जिसकी ऊंचाई एक लाख योजन है। यह ऊंचाई कहां से गिननी है? *श्रोता: १००० योजन नीचे से।* यानी पहली पृथ्वी में जमीन के नीचे १००० योजन अंदर जाकर जहां मेरु पर्वत की नींव है, उसका बेस-तल है वहां लोकाकाश का मध्य आता है यानी उससे नीचे **७ राजू** अधोलोक है, ऊपर **७ राजू** ऊर्ध्वलोक है और सेंटर से एक लाख योजन ऊपर हम गिनेंगे तो कहते हैं

कि मध्यलोक की ऊंचाई कितनी है? जितनी मेरु की है। कौनसा मेरु है? *श्रोता: सुदर्शन मेरु।* सुदर्शन मेरु। क्यों? बाकी के मेरु क्यों नहीं लेना? वे कितनी हाइटवाले हैं? *श्रोता: वह मध्य में है।* मध्य में है इसलिये नहीं, उनकी हाइट कितनी है? बाकी के मेरु की हाइट ८४ हज़ार योजन है। यह सुदर्शन मेरु एक लाख और चालीस योजन ऊंचा है; ४० योजनवाली ऊपर की चूलिका है। यह सुदर्शन मेरु की ऊंचाई है, जमीन के अंदर १००० योजन और ऊपर ९९००० योजन तथा ४० योजन की उसकी चूलिका है।

श्रोता: यह योजन प्रमाणयोजन है? हां, यह प्रमाणयोजन है। यहां जो योजन लिया है वह प्रमाणयोजन लेना और हमने वह जो महामत्स्यवाला योजन लिया था वह तो ऑर्डीनरि योजन लेना। *श्रोता: यह प्रमाणयोजन कितना बड़ा होता है?* वह बात आयी थी न? ऑर्डीनरि योजन जो चार कोसवाला है उससे यह महायोजन ५०० गुणा बड़ा है। ४ × ५०० यानी एक प्रमाणयोजन के २००० कोस हो जायेंगे अर्थात् ४००० मील हो जायेंगे। *श्रोता: यह प्रमाणयोजन व्हॉल्यूम की यूनिट है या लिनिअर लाइन की यूनिट है?* लिनिअर लाइन की। *श्रोता: व्हॉल्यूम की नहीं है?* व्हॉल्यूम की नहीं है, लाइन की है क्योंकि हम यहां हाइट वगैरह देख रहे हैं न? ऊंचाई देख रहे हैं। देखो, यहां आगे देखते हैं।

मेरुतल से सात राजू ऊंचा ऊर्ध्वलोक है और सात राजू नीचे अधोलोक है। इसका अर्थ यह है कि मध्यलोक की हमने जो एक लाख योजनवाली हाइट देखी वह मध्यलोक की हाइट ऊर्ध्वलोक में ही समा जाती है। तो यह ७ राजू × ७ राजू × ७ राजू कितने हुये अर्थात् लोकाकाश की घन एरिया कितनी हुयी? *श्रोता: ३४३ घनराजू।* ३४३ घनराजू। उसको घन में कहेंगे और हम उसको प्रदेशों में गिनते तो कैसा कहते हैं? तो असंख्यातप्रदेशी है। *श्रोता: लोकप्रमाण है।* हां, उसको लोकप्रमाण इसलिये कहते हैं क्योंकि असंख्यात के भी असंख्यात भेद होते हैं। तो कौनसेवाला असंख्यात समझना? क्योंकि आवली में भी असंख्यात समय होते हैं। *श्रोता: पल्य में भी।* हां, पल्य में भी असंख्यात होते हैं; सागर में भी असंख्यात होते हैं; जगत्श्रेणी में भी असंख्यात होते हैं। *श्रोता: अंगुल में भी होते हैं।* हां, अंगुल में भी असंख्यात होते हैं। तो कैसे समझना? कौनसावाला असंख्यात? तो उसको कहेंगे लोकप्रमाण असंख्यात।

यहां यही बात लिखी है, देखो, दसवें पेज पर। **असंख्यात के भी असंख्यात**

प्रकार हैं। आवली, पल्य, अंगुल, जगत्श्रेणी आदि असंख्यात के ही भेद हैं। यह तो मोटे-मोटे तौर पर भेद बताये। इसमें एक-एक-एक-एक की गिनती बढ़ाते चले जाओ तो वे सारे असंख्यात के भेद हो जायेंगे। **जैसे लखपति के लाखों भेद होते हैं**। यह हमने बहुत बार सुना, है न? **एक लाख रुपये जिसके पास है वह लखपति, अब उसमें एक-एक पैसा ज्यादा करते जाओ तो वे भी लखपति कहलायेंगे**। कब तक? जब तक करोड़ नहीं हुये तब तक। यानी निन्यानवे लाख निन्यानवे हजार नौ सो निन्यानवे पॉइंट नाइंटी नाइन। वे सभी क्या हैं? लखपति के भेद हो जाते हैं। ऐसे असंख्यात में भी; मिनिमम असंख्यात से लेकर मॅक्झिमम असंख्यात तक सभी; एक-एक से बढ़ते हुये जो सभी भेद हैं वे सारे असंख्यात के भेद हैं। इसलिये हम इस लोक को जब असंख्यातप्रदेशी कहेंगे तो वह कौनसावाला असंख्यात है? तो यह लोकप्रमाण असंख्यात है।

एक जीवद्रव्य में भी कितने असंख्यात प्रदेश हैं? हमने देखे थे, **लोकप्रमाण असंख्यात**। यानी लोक में जितने प्रदेश हैं वैसे जीव के अपने आत्मा के प्रदेश उतने हैं उसकी बात हमने देखी थी। आत्मप्रदेशों का संकोच विस्तार होता रहता है और जीव प्राप्त देहप्रमाण असंख्यात प्रदेश रोकता है। हमने सूक्ष्म निगोद की अवगाहना देखी थी, वह घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण है। उतने छोटे क्षेत्र में वह पूरे लोक में जितने प्रदेश फैल सकते हैं इतने हैं, वे सब एक-दूसरे में सिमट जाते हैं। प्रदेश छोटा नहीं होगा, उसका संकोच होता है उसका अर्थ क्या है? हां, वह एक-दूसरे में अवगाहना देकर; एक-दूसरे के ऊपर सुपरइंपोझ होकर इतने छोटे से सूक्ष्म निगोद के शरीर में समा जायेंगे। अवगाहना की यह विशेषता है, जीव में ऐसी संकोच और विस्तार होने की योग्यता है। *श्रोता: ये असंख्यात लोकप्रमाण जो बोलते हैं कषाय के भेद वे भी असंख्यात हैं?* हां, देखो। एक शब्द आता है लोकप्रमाण असंख्यात और एक आता है असंख्यातलोकप्रमाण। लोक यानी एक यूनिट बनाया जिसमें असंख्यात हैं; ऐसा एक लोक, दो लोक, लाख लोक, करोड़ लोक ऐसे असंख्यात लोक। जैसे हमारे पास एक कटोरी है, उसमें कितने, १००० चावल आते हैं, मान लो न? हम कुछ भी कहेंगे! तो हमने १००० के लिये कटोरी यह नाप बनाया। तो हम कहेंगे कटोरी प्रमाण कितने होते हैं? तो हजार होते हैं और पांच कटोरी प्रमाण कितने होंगे? *श्रोता: पांच हजार।* पांच हजार और १००० कटोरी? १००० × १०००, है न? ऐसे ही, असंख्यात लोक का अर्थ क्या है? असंख्यात × लोकवाला असंख्यात। अब

कौनसे असंख्यात से गुणा करते हैं? इस पर उसकी व्हॅल्यू हो जायेगी। लोकवाले असंख्यात को अन्य किसी असंख्यात से गुणा करेंगे तो उसका वह प्रमाण होगा; उसको हम असंख्यातलोक कहेंगे। तो कषाय के भेद कितने होते हैं? *श्रोता: असंख्यातलोक।* यह आपने कहा न? असंख्यातलोक।

श्रोता: परक्षेत्र अवगाहना की बात चलायी है तो आठ मध्य प्रदेश हो गये न? हां, आठ मध्यप्रदेश हमें गिनने हैं। तो लोक का मध्य कहां है वही हमें गिनना है। क्या? तो यह लोक का मध्य हम देखते हैं और वह आठ ही प्रदेश क्यों हैं यह भी देखना है। तो हम डायमेन्शन्स देख रहे थे। लोक की मध्य में चौड़ाई १ राजू है; ऐसी लंबाई १४ राजू है और मोटाई आगे-पीछे ७ राजू है। इसका सेंटर हमें निकालना है। तो किसी समसंख्या का सेंटर निकालना है। विषम ऐसे ९ उंगलिया हम बतायेंगे तो इस तरफ ४ गयी, उस तरफ ४ गयी और इस एक उंगली को सेंटर कहेंगे और जब दस उंगलियां होगी तो सेंटर में क्या होगा? *श्रोता: दो।* दो उंगलियां सेंटर में आ जायेगी। वैसे लोकाकाश को पूर्वपश्चिम देखेंगे तो मध्य में दो प्रदेश आयेंगे क्योंकि १ राजू में प्रदेशों की समसंख्या है। उसीप्रकार दक्षिणोत्तर और ऊपर से नीचे यानी व्हर्टिकली देखेंगे तो भी सेंटर में दो-दो प्रदेश आयेंगे। दोनों हाथों की चार-चार उंगलियों के नाखून हम एक साथ पकड़ेंगे तो जैसे दिखते हैं वैसे लोकाकाश के सेंटर के आठ प्रदेश दिखायी देंगे। ये मध्य में आठ ही प्रदेश क्यों हैं? तो देखो, इसका उत्तर भी हम देते हैं यहां पर आपको। इसी पुस्तक में लिखा है। *श्रोता: १५ पेज नंबर पर है।* हां, १५ पर, देखो ये मध्यवाले कैसे हैं? यह पेज नंबर १४ पर है, १४ नंबर पेज पर आना।

प्रश्न यह है, नीचे मिला? तीसरा पॅरेग्राफ। **कि लोक के मध्य में-सेंटर में आठ प्रदेश हैं ऐसा कहते हैं वह क्या है? यह लोकाकाश आकाशद्रव्य के बीचोबीच है। जो सम्पूर्ण आकाशद्रव्य का मध्य यानी सेंटर है, वही लोकाकाश का सेंटर है। परंतु यह सेंटर एक बिंदु यानी एक प्रदेश नहीं है, परंतु यहां सेंटर में आठ प्रदेश आते हैं। किसी समसंख्या का सेंटर निकालना हो तो वह एक संख्या नहीं होगी, पूर्णांकों में बताना हैं, तो दो संख्यायें सेंटर में आयेगी**। अभी जो मैंने दोनों हाथ की उंगलियां बतायी वही वहां पर बतायी हैं। तो एक ही लेव्हल पर अगर बताना है, केवल एक लाइन का सेंटर बताना है तो एक बिंदु आ जायेगा और इसमें समसंख्या हो तो दो बिंदु आ

जायेंगे। अभी यदि वह ऐसे पेपर जैसा होगा तो पेपर जैसे का सेंटर निकालना है तो लंबाई भी सम और ऐसी चौड़ाई भी सम है, तो कितने पॉइंट्स आयेंगे बीच में? *श्रोता: ४ पॉइंट्स।* ४ पॉइंट्स आयेंगे। अब यह लोक कैसा है? घनरूप है; ऐसी लंबाई में भी समसंख्या है, वहां भी बीचवाले हैं २ प्रदेश। ऐसे चौड़ाई में भी २ प्रदेश और ऐसे मोटाई में भी २ प्रदेश मिलकर ८ प्रदेश सेंटर में आते हैं। तो यहां लास्ट लाइन, देखो, नीचे से दूसरी। **लोक थ्री डायमेन्शनवाला** यानी **तीन भुजाओंवाला है-घन है और उसकी तीनों भुजायें समसंख्या में हैं। ऊंचाई १४ राजू हैं यह समसंख्या है। ७ राजू में ७ संख्या मत देखना वह एक जगत्श्रेणी है वह भी समसंख्या है-वर्गरूप संख्या है**, क्योंकि वह वर्गधाराओं में आती हैं। **वर्गधारायें समसंख्या हैं।**

वर्गधारायें समझते हैं? हमने केवल एक द्विरूपवर्गधारा देखी थी। २ का वर्ग ४, ४ का वर्ग १६, १६ का वर्ग... वे सारी समसंख्यायें हैं। ऐसी एक द्विरूपघनधारा भी है। यह द्विरूपघनधारा क्या होती है? २ का घन ८ और यह धारा ८ के वर्ग से शुरू हो जायेगी। ८ के वर्ग से यह धारा चालू होगी। पहले २ का घन ८ है, ८ यह तो वर्गरूप संख्या नहीं है, वह तो घनरूप है। परंतु उसका वर्ग करना। ८ का वर्ग ८ × ८ = ६४। तो ६४ यह पहली संख्या हो जायेगी। फिर उसका वर्ग, उसका वर्ग, उसका वर्ग ये सभी समसंख्या हो जायेगी। एक होती है घनाघनधारा। आप कहेंगे हमारे माथे में घनाघन हो रहा है! २ का घन है ८ और ८ का घन कितना है? *श्रोता: ५१२ है।* ५१२ होगा न? यह धारा ५१२ के वर्ग से शुरू हो जायेगी, इसमें भी सारी समसंख्यायें होगी इसलिये जब यहां जगत्श्रेणी कहते हैं, वह तो द्विरूपघनधारा में आती है, तो वह भी समसंख्या है। इसलिये ये सारी समसंख्यायें हैं यह निश्चित होता है। तो इन वर्गधाराओं में समसंख्यायें हैं यानी लोकाकाश के तीनों डायमेन्शन्स में समसंख्या में प्रदेशों की संख्या होगी इसलिये सेंटर में दो-दो प्रदेश आते हैं। तीन डायमेन्शन के तीन सेंटर लेंगे तो आठ प्रदेश हो जाते हैं। इसलिये मध्य के आठ प्रदेश बताये और यहां एक चित्र भी बनाया है वे आठ प्रदेश कैसे होते हैं उनका। ये मध्य के आठ प्रदेश कहां हैं? देखो।

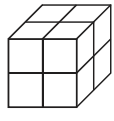

ये मध्य के आठ प्रदेश सुमेरु पर्वत के तल में पाये जाते हैं। क्योंकि हमने देखा न? वहां से नीचे ७ राजू है और ऊपर ७ राजू है और वह तल कहां है? तो जमीन के नीचे

वह १००० योजन अंदर वहां पर है; उसका भी सेंटर लेना, मध्य लेना। **त्रसनाली के बीचोबीच अथवा मध्यलोक के जम्बूद्वीप के मध्य में सुमेरु पर्वत** – जिसका नाम है सुदर्शन मेरु पर्वत **१ लाख ४० योजन ऊंचाईवाला है। इसकी एक हजार योजन जमीन में नींव है और वहां का जो सेंटर है वह लोक का सेंटर है। केवली समुद्घात के समय उस जीव के मध्य प्रदेश भी लोक के इन्हीं मध्य प्रदेशों पर आ जाते हैं। भले ही वह केवली कहीं पर भी विराजमान हो, भरतक्षेत्र में शिखरजी पर स्थित हो या विदेहक्षेत्र या ऐरावतक्षेत्र में हो परंतु यदि वह जीव केवली समुद्घात करता है तो पूरे लोक में उसके प्रदेश फैलेंगे। लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर उस जीव का एक-एक प्रदेश स्थित होगा। इसकारण उस जीव के सेंटर के प्रदेश लोकाकाश के सेंटर पर ही आयेंगे**। यह किसीने प्रश्न पूछा था उसका उत्तर है।

तो देखो, यहां तो हमें परक्षेत्रपरावर्तन में कहां से शुरू करना है? कि सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना कितनी है? तो कहते हैं घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण, उसमें भी असंख्यात प्रदेश होते हैं। यानी इतने असंख्यात प्रदेश लेकर वह लोक के बहुमध्यभाग में उत्पन्न हुआ। यहां तक बात ख्याल में आयी? वह मध्य कहां है, वह अभी हमने नक्की कर लिया है। अब हम उसको जरा आगे पढ़ते हैं। आगे क्या होगा उस जीव का? *श्रोता: लोकाकाश के सेंटर पर ही सेंटर कोइन्साइड करेगा?* हां, लोकाकाश के उस सेंटर पर जीव के प्रदेशों का सेंटर कोइन्साइड होना चाहिये। यह फिर वही मैं आपको पढ़कर बताना चाहती हूं। देखो, यह जो क्षेत्रपरावर्तन में परक्षेत्रपरावर्तन; पेज नंबर ६४३, पुस्तक दूसरी; यह परक्षेत्रपरावर्तन लिखा है जहां पर, वहां से पढ़ेंगे। **सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त जघन्य अवगाहनारूप शरीर का धारक, वह लोकाकाश के मध्य में जो आकाश के आठ प्रदेश हैं उनको अपने शरीर की अवगाहना के मध्यवर्ती आठ प्रदेश करके**, शरीर की अवगाहना इसलिये कहां क्योंकि वहां तो जीव है ही न? तो उसके भी मध्य प्रदेश वहीं पर होंगे। तो जो लोकाकाश के मध्य प्रदेश हैं उस पर इस जीव के आठ मध्य प्रदेश रोककर उसने वहां जन्म लिया। यह तो बात ख्याल में आयी? *श्रोता: फर्स्ट टाइम?* फर्स्ट टाइम। वहां से हम काउंट करेंगे परक्षेत्रपरावर्तन।

तो **उनको अपने शरीर की अवगाहना के मध्यवर्ती आठ प्रदेश करके, अवशेष**

उनके निकटवर्ती अन्य प्रदेशों को रोककर उत्पन्न हुआ। यह तो समझने में सरल है। यानी जहां लोकाकाश का मध्य है, उन्हीं मध्य प्रदेशों में उस जीव की अवगाहना के मध्य प्रदेश बनाकर उस जीव ने जन्म लिया। आठ प्रदेशों में तो पूरा जीव नहीं आ सकता, वह तो मिनिमम असंख्यात प्रदेश तो रोकेगा ही रोकेगा। यह बात हमने देखी थी पहले कि जीव कितना भी छोटा क्यों न हो, मिनिमम अवगाहनावाला जीव भी असंख्यात प्रदेशों को रोकेगा ही। कौनसा असंख्यात? वह घनांगुल के असंख्यातवें भागवाला असंख्यात। तो वहां वह उत्पन्न हुआ। **श्वास के अठारहवें भागमात्र क्षुद्रभव काल तक जीकर मरा**। यानी वह लब्धिअपर्याप्त है इसलिये अपनी आयु पूर्ण करके मर गया। **पुनश्च वही जीव** क्योंकि एक जीव की अपेक्षा यह काउंट करना है, **उसी अवगाहना को धारण कर** – कितनी? वह घनांगुल के असंख्यातवें भागवाला जो असंख्यात है उतनी ही अवगाहना। मान लेते हैं उसमें लाख प्रदेश हैं, हैं तो असंख्यात प्रदेश, परंतु उसके लिये हम मानेंगे लाख प्रदेश हैं। तो उसी अवगाहना के साथ, उन्हीं प्रदेशों पर लाख बार जन्म लेना चाहिये। *श्रोता: लाख बोलने से डर जाता है!* हां, लाख बोलने से तो आपको आश्चर्य होता है! इसमें तो असंख्यात प्रदेश हैं। निगोद की अवगाहना में भी असंख्यात प्रदेश हैं। तो जिस अवगाहना के साथ वह लोकाकाश के मध्य में उत्पन्न हुआ है, उसी अवगाहना को लेकर, उन्हीं प्रदेशों पर, उसे उतनी ही असंख्यात बार जन्म लेना चाहिये जितने असंख्यात प्रदेश उसने रोक रखे हैं। देखो...

श्रोता: वह ६४ अवगाहना का पहला ही भेद स्टार्ट होगा? हां पहला भेद और वह कहां? वह केवल सूक्ष्म निगोद होकर जन्मा ऐसा नहीं है, वह लोकाकाश के कौनसे पॉइंट पर जन्मा था यह बात है। *श्रोता: परक्षेत्र की बात है?* परक्षेत्रपरावर्तन की बात है। अब वह कितनी अवगाहना? वह बाद में देखेंगे। अभी स्टार्टिंग में तो उसने जघन्य अवगाहना के साथ वहां जन्म लिया है, सूक्ष्म जीव ने। **वही जीव उसी अवगाहना को धारण कर, उसी क्षेत्र में दूसरी बार उत्पन्न हुआ, इसतरह जघन्य अवगाहना के प्रदेश** – जो अभी हमने देखे थे – **घनांगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं, उतनी बार वैसे ही उत्पन्न हुआ**। यह स्टार्टिंग में ही इतनी बार वहां उत्पन्न हो गया, तो उसमें क्या नवाई है? उतनी बार होने दो न? अरे परंतु वह वहीं पर उत्पन्न होगा यह थोड़ी बात है? लोकाकाश के किसी भी प्रदेश पर जाकर जन्म लेगा। फिर दोबारा वहीं पर जन्म लेने के लिये भी उसके बीच में हो

सकता है अनंतकाल चला जावे। *श्रोता: उसी अवगाहना से तो जन्म नहीं लेगा?* वहां जन्म लेगा तो भी बड़ी अवगाहना होगी। हो सकता है कि दो-चार प्रदेश भी ज्यादा हो जावे, तो वह नहीं चलेगा। *श्रोता: वह काउंट नहीं होगा।* वह नहीं काउंट होगा। *श्रोता: काल काउंट होगा?* काल को तो हमें काउंट करना है।

पश्चात् अभी ऐसे असंख्यात बार हो भी गया – जितने उसके अवगाहना के प्रदेश हैं जितने उसने रोक रखे थे उतनी बार उसी जगह उसी अवगाहना के साथ उत्पन्न हुआ। फिर क्या हुआ? **पश्चात् उसके निकटवर्ती आकाश के एक प्रदेश** यानी वे सभी असंख्यात प्रदेशों को लेकर उन्हीं प्रदेशों में असंख्यात बार उत्पन्न हुआ यानी दूसरी भाषा में उसका एक-एक प्रदेश हमने काउंट कर लिया। हमने पहले लाख माने थे न और लाख अवगाहना के साथ उन लाख प्रदेशों पर उत्पन्न हुआ यानी उन्हीं लाख प्रदेशों को लेकर उन्हीं प्रदेशों में लाख बार उत्पन्न हुआ। यथार्थ में तो उतने ही असंख्यात प्रदेश की अवगाहना लेकर वहीं पर असंख्यात बार उत्पन्न हुआ। तो सभी प्रदेश एक-एक बार करके काउंट हुये हमारी भाषा में। फिर क्या हुआ? उसके बाजू का कोई एक प्रदेश अपने शरीर की अवगाहना में लेता हुआ उसने जन्म लिया। अभी वह सूक्ष्म निगोद होता है कि अन्य कुछ होता है उससे कुछ मतलब नहीं है। उसने कहां जन्म लिया? तो उसके बाजू के यानी नेक्स्ट प्रदेश को अपने शरीर की अवगाहना में रोकते हुये, शामिल करके उसने जन्म लिया। एक बार जन्म लेता है तो एक ही प्रदेश को लेना है। आप कहेंगे कि इतने सारे प्रदेश ऑक्युपाय करके जन्मा न? नहीं, उसमें से एक ही ॲड्जेसन्ट प्रदेश को ले लेंगे। ॲट अ टाइम।

श्रोता: एक प्रदेश अगर बढ़ाते हैं तो भी समझने के लिये वह सूक्ष्म निगोद लब्धि-अपर्याप्तवाले का ही भेद निकलेगा न? क्योंकि वह असंख्यातगुणा वायुवाले का है। हां, परंतु यहां अन्य भी कोई जीव जन्मा मान लेते हैं, परंतु उसने वह वहां का प्रदेश अपनी अवगाहना में ले लिया। बस इतना ही लेना है। *श्रोता: अच्छा।* वह अपनी अवगाहना का एक भेद करके भले ही वह निगोद नहीं हुआ; अन्य भी हुआ, बड़ी अवगाहनावाला हुआ; परंतु उसने उस आकाशप्रदेश को, जो सिंगल प्रदेश है, उसको भी अपनी अवगाहना में रोककर वहां के आकाशप्रदेशों पर जन्म लिया। *श्रोता: तो ऐसा जरूरी नहीं है कि वह*

पहली अवगाहना में ही होना चाहिये? पहली अवगाहना में होना चाहिये यह अभी जरूरी नहीं है। स्टार्टिंग पॉइंट में उसको लिया था अब उसकी जरूरत नहीं है, क्योंकि वह लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर क्रम से जन्मनेवाला है। ३४३ घनराजू तो बहुत बड़ी एरिया है। उसके एक-एक प्रदेश को, एक-एक बार क्रम से उस प्रदेश को अपने शरीर की अवगाहना में लेते हुये उसको जन्म लेना चाहिये। देखो यहां लिखा है न? *श्रोता: अवगाहना सेम है लेकिन प्रदेश अलग हैं?* वह तो पहले असंख्यात बार उतनी अवगाहना से वहीं पर जन्मा; बाद में वह कंडिशन नहीं है।

पश्चात् देखो, **पश्चात् उसके निकटवर्ती आकाश के एक प्रदेश को रोककर उत्पन्न हुआ, ऐसे अनुक्रम से एक-एक प्रदेश से सर्व लोकाकाश के प्रदेशों को अपना जन्मक्षेत्र करता है, यह सर्व परक्षेत्रपरावर्तन है**। उसने अपना जन्मक्षेत्र बनाया। लोकाकाश का ऐसा एक भी प्रदेश नहीं रहा जिस पर हमने क्रम से भी अनंत बार जन्म न लिया हो; अक्रम से तो लिया ही होगा सर्वत्र। फिर भी हमारा जी भरा नहीं है तो साइट सीइंग करने के लिये कहां-कहां चले जाते हैं? तो हमने कहां-कहां जन्म लिया था वह देखने के लिये जाते हैं। हां, प्रश्न फिर रिपीट करना। *श्रोता: लोकाकाश में जो हम स्वर्ग कहते हैं तो ग्रैवेयक से ऊपर जो सर्वार्थसिद्धि है वहां जो लोकाकाश के प्रदेश हैं वहां तो जन्म नहीं लिया होगा?* आपका प्रश्न है कि सर्वार्थसिद्धि में तो जन्म नहीं लिया होगा? क्योंकि वहां कोई मिथ्यादृष्टि जाते नहीं हैं। परंतु वहां पांचों प्रकार के सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव तो हैं! सिद्धशिला इटसेल्फ पृथ्वीकायिक है। सिद्धशिला के ऊपर भी वायुकायिक है, वातवलय है और जहां सर्वार्थसिद्धि में भले देव हैं वहां पर, परंतु वहां पर भी पांचों सूक्ष्म जीव तो सर्वत्र हैं। पूरे लोकाकाश में ठसाठस भरे हुये हैं। पांचों प्रकार के सूक्ष्म जीव वहां भरे पड़े हैं। *श्रोता: वह काउंट होगा?* वह जरूर काउंट होगा। *श्रोता: तो हम सिद्धालय जाकर भी आये हैं?* हां, सिद्धालय-सिद्धशिला रिटर्ण्ड हैं; निगोदिया हैं, अन्य सूक्ष्म जीव हैं, उसके रूप में वहां चले गये थे। *श्रोता: परावर्तन का काल एक ही है?* हां, स्वक्षेत्रपरावर्तन और परक्षेत्रपरावर्तन दोनों ही परावर्तन का काल उतना ही होगा।

यानी इस लोकाकाश में एक भी प्रदेश ऐसा नहीं है जहां हमने क्रम से जन्म न लिया हो! जन्म लिया हो यह कहना तो ठीक है, परंतु क्रम से जन्म लेने की कंडिशन जो डाली

है वह कंडिशन पूरी होना कितनी रेअर बात है और एक-एक प्रदेश कितना सूक्ष्म है! अपने इतने नाखून जितने क्षेत्र में अगर एक-एक प्रदेश कव्हर करना है तब सोचो कितने भव होंगे? और उसी क्षेत्र में जन्म लेना है। कहीं पर भी जन्म लेगा वह! यह कोई जरूरी नहीं है कि उसी क्षेत्र में जन्म लेगा। बाजू का एक प्रदेश भी चूककर अगर उसमें जन्म ले तो वह नहीं चलेगा। उसी क्षेत्र में उस प्रदेश को अपनी अवगाहना में कहीं ना कहीं रोककर उसको उत्पन्न होना चाहिये और एक समय में बहुत सारे प्रदेश रोककर उत्पन्न होता है, उसमें से एक बार एक ही प्रदेश काउंट करना है। पूरे के पूरे प्रदेश उसमें नहीं काउंट करेंगे। *श्रोता: एक-एक प्रदेश जो बढ़ायेंगे तो थ्री डायमेन्शन में काउंटिंग कैसे स्टार्ट करना है?* अभी कैसे भी ले लो न? एक-एक-एक-एक करते उसको सराउंडिंग करते जाओ। पहले हमने सेंटर में ये पूरे प्रदेश कव्हर किये, क्योंकि सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना असंख्यातप्रदेशी है। असंख्यात बार यहां जन्म लिया तो असंख्यात प्रदेश तो कव्हर हुये। बाद में इसके बाजू का एक प्रदेश, उसके बाजू का एक प्रदेश किसतरह से भी कर दो, वह अभी उसके ॲड्जेसन्ट होना चाहिये, बस। *श्रोता: काउंटिंग कौन करेगा?* यह केवलज्ञानी के ज्ञान में आया है।

ऐसा जीव ने जब ॲड्जेसन्ट करते-करते जब कभी जन्म लिया था तब उसको काउंट करते-करते पूरे लोकाकाश के सभी प्रदेशों पर जन्म हुआ, तब जाकर अंत में जब वह पहलेवाले सेंटर में उत्पन्न होगा; लास्ट में, जब-सब पूरा करके लास्ट में, तब उसका एक परक्षेत्रपरावर्तन पूरा होगा। यानी रेअरेस्ट पॉसिबल बातें भी होती हैं, जिसमें एक बार वहां जन्म लेने के बाद दोबारा वहां जन्म लेने में भी अनंतकाल बीत जायेगा और ऐसे लोकाकाश के प्रदेश कितने हैं? असंख्यात। ख्याल में आता है न? यानी कहां-कहां जन्म लिया, कितनी अवगाहना से, उससे कुछ मतलब नहीं है, कभी मनुष्य हुआ, देव हुआ, नारकी हुआ; देव भी हुआ तो इसमें परावर्तन में अगर देव होता है तो कहां तक लेना है उसको? कहां तक का देव लेना? *श्रोता: नौवें ग्रैवेयक तक।* हां, नौवें ग्रैवेयक का लेना और वह कहां उत्पन्न होता है उसकी अपेक्षा से बात करना। पर यहां तो एकेन्द्रिय जीव तो सर्वत्र हैं न लोकाकाश में, इसलिये उसकी अपेक्षा लेना। वहां कोई अवगाहना की कंडिशन नहीं है, केवल कहां जन्म लेता है उसकी कंडिशन है।

श्रोता: ॲड्जेसन्ट जन्म लेने के लिये हमें अनंत बार जन्म लेना होगा न? हां, अनंत बार। *श्रोता: एक ही क्षेत्र में जो प्रदेश बढ़ता जायेगा तो स्वक्षेत्रवाला भव ऐसे ही पड़ा रहा?* नहीं-नहीं, स्वक्षेत्र का हम जब गिनेंगे वह अलग गिनेंगे। *श्रोता: उसकी अवगाहना जैसे बढ़ाते हैं जो एक प्रदेश से बढ़ती है, तो वह जन्म ऐसे ही इसमें गिनना या इसका अलग गिनना?* उसको अलग गिनना है; पर दोनों के काल की गिनती तो वैसे ही उतनी ही आयेगी। स्वक्षेत्रपरावर्तन कहो या परक्षेत्रपरावर्तन कहो, उतना ही अनंतकाल उसमें लगनेवाला है। वह काल को मापने का मेझरमेंट है न? यही लिखा है न? देखो उक्तं च लिखा है...

सर्वत्र जगत्क्षेत्रे देशो न ह्यस्ति जंतुनाऽक्षुण्णः।
अवगाहनानि बहुशो बंभ्रमता क्षेत्रसंसारे।।

क्षेत्रसंसार में भ्रमण करनेवाले जीव द्वारा इसको क्षेत्रसंसार कहा **जिसको अपने शरीर की अवगाहना द्वारा स्पर्श न किया हो ऐसा सर्व जगत्श्रेणी के घनप्रमाण लोक** जगत्श्रेणी का घन यानी पूरा लोक **में कोई प्रदेश नहीं है**। यानी क्रम से जिसको स्पर्श नहीं किया है **तथा जिसको बहुत बार अंगीकार न किया हो ऐसा कोई अवगाहना का भेद नहीं है**। इसतरह से यह स्वक्षेत्र और परक्षेत्र की अपेक्षा हमने यह तो क्षेत्रपरावर्तन देखा है। उसमें और भी कुछ प्रश्न हैं?

श्रोता: इसमें सिर्फ जन्म लेना या वहां एक-एक क्षेत्र मरण भी करेगा ऐसा भी कुछ आयेगा? नहीं-नहीं, इसमें नहीं है। बस, जन्म करेगा, यहां जन्म लेना है। यह क्षेत्रपरावर्तन में मरण की बात नहीं है। यहां मात्र अवगाहना के; स्वक्षेत्र में अवगाहना लेना और परक्षेत्र में कहां जन्म लेता है उतना ही लेना। *श्रोता: जन्मेगा तो मरेगा भी तो सही?* मरेगा पर उसका दूसरा भव फिर काउंट करना है। अभी हम यहीं रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

१९. अवगाहनास्थान – गुणकार विधान

षट्खण्डागम के आधार से कालानुयोग की बात चल रही है अपनी। कालानुगम का अर्थ क्या देखा हमने? यह पदार्थों के काल संबंधी यहां वर्णन चल रहा है, इसको यहां कालानुगम कहा गया है। काल के अनुयोग में हम पांच परावर्तन की बात देख रहे थे। इसके पहले हमने छह प्रकार के काल देखे थे; छह प्रकार के काल याद है न, कि भूल गये? हां निलेशभाई? हां, *श्रोता: गुणस्थितिकाल।* गुणस्थितिकाल; देखो अब एक-एक को फिर दोबारा थोड़ा रिपीट करते हैं। गुणस्थितिकाल का अर्थ हमने क्या देखा था? *श्रोता: गुणस्थान में रहने का काल।* गुणस्थान में रहने का काल। उसमें हमने नाना जीवों की अपेक्षा भी बात देखी; एक जीव की अपेक्षा भी बात देखी यानी एक जीव किसी गुणस्थान में कितने काल तक रहता है, उसकी बात हमने देखी। अलग-अलग गुणस्थानों में हमने विस्तार से देखा था।

नाना जीव यानी अनेक जीवों की अपेक्षा जब बात करते हैं, तो जैसे हमने देखा ऐसे कौनसे गुणस्थान हैं कि जिनमें कोई न कोई जीव हमेशा ही पाये जायेंगे? *श्रोता: पहला, चौथा, पांचवां, छठा।* वे गुणस्थान हैं पहला, चौथा, पांचवां, छठा, सातवां और तेरहवां, यानी तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव हमेशा पाये जायेंगे। तो मात्र अरिहंत ही होंगे कि तीर्थंकर भी हमेशा होंगे? *श्रोता: होंगे।* तीर्थंकर भी हमेशा ही होंगे। जैसे पहले गुणस्थानवाले यानी मिथ्यादृष्टि जीव हमेशा होंगे; वैसे चौथे, पांचवें, छठे, सातवें गुणस्थानवाले यानी मोक्षमार्गी जीव भी हमेशा होंगे और मोक्षमार्ग बतानेवाले अरिहंत यानी तीर्थंकर भी हमेशा इस विश्व में विद्यमान होंगे। वे के वे नहीं; वे जो अरिहंत होंगे, वे तो मोक्ष चले जायेंगे। दूसरे कोई मिथ्यादृष्टि थे वे मोक्षमार्ग पर आरूढ़ होकर उनमें से कोई तीर्थंकर होकर उपदेश देंगे। यानी हमें जो डर-भय है कि इस जिनधर्म का क्या होगा; लोप हो जायेगा; यह बात तीन काल में नहीं हो सकती। किसी विशिष्ट क्षेत्र में जिनधर्म को जाननेवाले कुछ कम हो गये, इसका अर्थ उसका लोप हो जायेगा यह बात नहीं है। तो हम क्या सोचते हैं कि इस जिनधर्म को हम बचायेंगे, नहीं तो उसका क्या होगा?

हम यह कभी नहीं सोचते कि मेरा क्या होगा? जिनधर्म का स्वरूप समझकर यानी

वस्तुस्वरूप समझकर हम जब तत्त्व का निर्णय करते हैं, अपने स्वयं के स्वरूप का निर्णय करते हैं, अपने को जानने लगते हैं, सम्यग्दर्शन प्राप्त करते हैं तब हमारा यह जो अनादि से भवभ्रमण चल रहा है; वह जरूर मिटेगा। हम जो जन्म-मरण, जन्म-मरण, जन्म-मरण करते आये हैं अभी तक, हमने इस पर कभी विचार नहीं किया था। इस भव में हम पूर्वभव की सारी बातें भूल गये हैं; इतने सारे हमने चक्कर काटे हैं यह भी बात भूल गये हैं; इसलिये हमें तो ऐसा ही लगता है बस इस भव जितना ही हमारा अस्तित्व है और इतना मात्र हमारा अस्तित्व है ऐसा समझने के कारण बस इस भव के लिये जितना कार्यकारी है, उस पर ही हम विचार करते हैं। इसलिये यह सारा डिटेल में क्यों जानना क्योंकि सादा-सिम्पल बतायें तो उसका विश्वास नहीं होता। किसीको बता दी न कोई सीधी-सादी बात; कोई बीमार है, उसको बता दिया कि ठीक हो जाओगे कोई दवा की जरूरत नहीं है, तो उसे कभी विश्वास नहीं होगा। फिर दूसरे डॉक्टर के पास जायेगा क्योंकि मुझे अनुभव है; तीस साल मैंने मेडिकल प्रॅक्टिस की है, हां। तो किसीको बताया अरे! कोई जरूरत नहीं है, दो दिन में ठीक हो जाओगे। नहीं, फिर वह स्पेशॅलिस्ट के पास जायेगा और वह एक्स-रे, एम आर आय, और भी जो कुछ डॉक्टर कहते हैं वह सब कुछ कर लेगा और बाद में लौटकर उसे जरा ठीक लगने लगता है, क्योंकि जब इतना कुछ होता है तो बाय दॅट टाइम नॅचरली यानी नैसर्गिक रीति से रोग तो थोड़ा ठीक तो होना ही है। ऐसे अनेक रोग ठीक होते हैं फिर भी उसका विश्वास नहीं होता। कोई इंजेक्शन देगा, बहुत भारी दवाई देगा तो उसको विश्वास होता है।

हमारे यहां एक रिश्तेदार आये थे, कहने लगे मुझे बहुत तकलीफ है। मैं सोता हूं तब मेरे सिर में बहुत टिंगलिंग-नंबनेस हो जाता है। गुजराती में क्या कहते हैं? खाली चढ़ जाती है; मराठी में मुंग्या येतात; हिंदी में झुनझुनी और सुन्नता हो जाती है। मैंने पूछा, तो आपने क्या किया? मैं न्यूरॉलॉजिस्ट के पास गया हूं, एम आर आय निकाला, एक्स रे निकाला, स्कॅनिंग किया। ये इतने सारे रिपोर्ट हैं। अब मुझे जरा बताओ अभी मैं क्या करूं? अभी और कोई स्पेशॅलिस्ट का नाम बता दो। मैंने पूछा कि आप सिर के नीचे कितने तकिये लेकर सोते हैं? मैं दो-दो तकिया लेकर सोता हूं। मैंने बोला आज से तकिया लेकर नहीं सोना, बस, बिलकुल लेनी है तो पतली तकिया लेकर सो जाओ। तो चौबीस घंटो में उनका फ़ोन आया, अभी मैं एकदम नॉर्मल हो गया हूं। उनको कोई बहुत बड़ी-बड़ी

मेडिसिन वगैरह दे देते, तो अच्छा लगता, है न? जीव का ऐसा ही है; अगर उसको सादे-सरल शब्दों में बता दिया, अरे! तेरा स्वरूप भिन्न है और यह सारा भिन्न है; यह कुछ शरीर की क्रिया करने से मोक्ष होनेवाला नहीं है। फिर भी उसको उस पर रंचमात्र भी विश्वास नहीं होता है।

आप कहते हैं कि इतनी सब डिफिकल्ट बातें आप क्यों सुनाती हैं? क्योंकि आप सीधी-सादी बातें नहीं सुन रहे हैं न, इसलिये। यह सत्य है; ये कोई ऐसी मनगढ़ंत बातें नहीं हैं। देखो, हम इन्द्रियज्ञान के द्वारा बाह्य चीज़ों को जानने में लगे रहे हैं। कभी हमने अपने आपको जाना नहीं है क्योंकि यहां मैं हूं यह तो प्रतिभासित हो रहा है और इन्द्रियों के द्वारा यहां देखने का प्रयत्न किया तो क्या, शरीर दिख गया, तो शरीर ही मैं हूं ऐसी इस जीव की भ्रमणा हो गयी। अब शरीर कब से है? तो हम कहेंगे कि हम इतने साल से हैं। तो यह शरीर कब तक रहना है? तो जो ८०-१०० साल हैं। तो इतना मात्र हमारा लाइफस्पॅन है या इतना ही हमारा अस्तित्व है ऐसा मानकर उसके लिये जो कोई अनुकूल चीज़ें होती हैं वे हासिल करने के पीछे हम लगे रहे। जिसमें हम मैंपना स्थापित करेंगे, हमारी सारी विचारधारा उसके अनुसार होगी। उस 'मैं' के लिये जो ठीक है, उसको हासिल करने के लिये हम कुछ भी करने के लिये तैयार हो जायेंगे। जब 'शरीर मैं हूं' मान लिया है, तो शरीर के लिये जो कोई अनुकूल है उसीके पीछे हम भागते रहते हैं और उसके लिये साधन क्या है? पैसा। परंतु हमने उसको साधन नहीं बनाया, साध्य बना लिया। परंतु इस शरीर के लिये जो पैसा कमाना था, उस पैसे के पीछे ही इतने पागल की भांति दौड़ रहे हैं कि खाने की भी इस जीव को फुरसत नहीं है और उसमें ही बड़प्पन मानता है। वह तो कहता है कि देखो, मुझे खाने के लिये भी फुरसत नहीं है! अरे! मरने के लिये भी फुरसत नहीं है। जैसे कि फुरसतवाले ही मरते होंगे!

इसका अर्थ क्या है? तो यह हमारी भ्रमणा जो अनादि से चल रही है और इस भव में आते हैं तो हमें ऐसे आपस में पढ़ानेवाले मिलते हैं; ऐसा करो, वैसा करो और हम भी वैसा ही करते रहते हैं और हमने कभी भी सिरिअस्लि यानी गंभीरता से अपना स्वरूप क्या है उसपर विचार नहीं किया। अपने स्वरूप को तो बस ज्ञान में लेना है, ज्ञान में नक्की करना है और कुछ नहीं करना है। हमने तो मान लिया कि कुछ करें, कुछ करें, कि क्या करें? मैं कहती हूं जो कर सकते हो वही करो। क्या कर सकते हैं आप? अरे! जान ही सकते

हैं, पर में तो हम कुछ कर ही नहीं सकते। न शरीर में कुछ कर सकते हैं, न परपदार्थ में कुछ कर सकते हैं; बस हम जान ही सकते हैं। तो आप कहेंगे हां हम जान ही तो रहे हैं, हम बहुत इंटरेस्ट लेकर पूरी दुनिया को जान रहे हैं। तो पूरी दुनिया में क्या चल रहा है वह जानने के लिये सबसे पहले सवेरे उठकर क्या वे न्यूज़ चॅनल्स चलते हैं न? पहले तो न्यूज़ पेपर होता था, अभी तो क्या है, सब न्यूज़ चॅनल्स हमारे घर-घर में आ गये हैं, वे चलते रहते हैं। यानी पूरी दुनिया की खबर रखनेवाला यह जीव अपने से बेखबर है। यहां हम कौन हैं? क्या हो रहा है? यह शरीर की रचना भी क्यों हो रही है? राग-द्वेष के परिणाम भी क्यों हो रहे हैं? कुछ इसके बारे में पता नहीं है यानी कर्म संबंधी भी उसको ज्ञान नहीं है। भले हम भिन्न हैं, कर्म भिन्न हैं परंतु अभी वर्तमान में कर्म के साथ जो संबंध है, उसका जो निमित्त-नैमित्तिकपना बन रहा है और पर्याय में हम दुखी हैं, तो इस दुःख को दूर करने का उपाय भी तो सोचना है हमें। दुःख है हमारे में, उपाय हम स्वयं कर सकते हैं, परंतु उपाय कहीं और हो रहा है और दुःख नहीं मिट रहा है; इस बात का दुःख है इसको। क्योंकि हमने सही उपाय नहीं किया न? जहां करना था वहां तो किया ही नहीं है।

मैंने अपने बचपन की एक स्टोरी बतायी थी आपको। मैं कॉलेज में सायकल लेकर जाती थी। तो एक बार क्या हुआ? मेरे सायकल के पीछे के पहिये की हवा कम हो गयी, तो मैं गयी एक सायकल रिपेअरर् के पास। वहां एक लड़का बैठा था उसको बताया, देखो इसमें जरा हवा भरकर दे दो। वह भी झट से उठा, उसने वह पंप लगा दिया और जोर-जोर से हवा भरने लगा; भरता था और बार-बार देखता था कि हवा ही उसमें नहीं जा रही थी तो और जोर-जोर से हवा भरने लगा, और जोर-जोर से भरने लगा। तो थोड़े टाइम में क्या हुआ? आगेवाला वह टायर जो था जिसमें वह हवा भर रहा था वह बर्स्ट हो गया! हवा गयी थी पीछे के पहिये की और उसने पंप की ट्यूब लगायी थी आगे के पहिये को; जोर-जोर से हवा भरते रहा, भरते रहा और देखता रहा पीछे के पहिये में हवा क्यों नहीं भरी जा रही है? तो इतने में आगे का पहिया बर्स्ट हो गया, फूट गया। *श्रोता: आप भी नहीं देख रही थी?* हम भी नहीं देख रहे थे।

हमारी ऐसी ही अवस्था है, है न? दुःख कहीं और है, उसका इलाज कहीं और करना है और हम कर रहे हैं परवस्तुओं में; यानी कर रहे हैं ऐसा मान रहे हैं, परवस्तु में कुछ कर ही नहीं सकते। तो यह कैसे करना, क्या करना? यह उपदेश तो हम रोज सुन रहे हैं परंतु

सुनकर भी हां एक घंटा सुन लिया बस अच्छा हो गया, फिर हमारा दिन अच्छा गया। बहुत अच्छा लगता है सुनने के लिये यानी हमने उसको भी सुनने का विषय बना दिया है कर्णेन्द्रिय का; उसको हम सिरिअस्लि नहीं लेते हैं। हम क्या कर रहे हैं? कहां दौड़ रहे हैं? उसकी बात है। इसलिये परावर्तन का जब स्वरूप समझ में आता है तो ख्याल आता है; अरे, मैं अनादि से हूं और मैं अभी हूं तो अनादि से हूं। जो है; प्रत्येक द्रव्य है; तो हैरूप जिसका जो अस्तित्व होता है, उसका अस्तित्व तीन काल में रहता है। अनादि से है-है-है-है-है; वर्तमान में है और भविष्य में अनंतकाल तक वह है-है-है; हैरूप से रहनेवाला है। तो इतना मेरा अस्तित्व है अनादि से अनंतकाल तक। तो अभी तक हमारा अस्तित्व, ऐसी अन्य-अन्य पर्यायों में हमने गुमा दिया। अभी तो हम अपने को मनुष्य मान रहे हैं और मनुष्य जैसा व्यवहार चल रहा है। इसके पहले कौन थे? किसी अन्य पर्याय में थे कोई पशु था। ये बाहर जो कुत्ते वगैरह घूम रहे हैं, वे अपने को उसी पर्यायरूप से मान रहे हैं और उसके अनुसार उनकी सब विचारधारा, उनके अनुसार उनकी सब बिहेविअर चल रही है। हम किसी अन्य पर्याय में चले जायेंगे तो हम अपने को वैसा मानेंगे। तो यह बात तो कब से चल रही है? अनादि से चल रही है।

इसके लिये पहले में पहले हमने पुद्गलपरावर्तन का स्वरूप देखा है। यह जीव हर समय में पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण कर रहा है, किस रूप में? कार्माणवर्गणा को भी ग्रहण कर रहा है, तेजसवर्गणा को भी ग्रहण कर रहा है और जो कोई शरीर है औदारिक या वैक्रियिक, उसके लिये आहारवर्गणा का भी ग्रहण हर समय चल रहा है। फिर जो परमाणु उसने एक बार किसी स्पर्श, रस, गंध, वर्णादिरूप से लिये हैं, दुबारा वे ही परमाणु उसीरूप से लेने के लिये, बीच में कितना काल चला जाता है, उसको बताने के लिये पूरा यह द्रव्यपरावर्तन का चार्ट हमने देखा था। उसमें भी हमने वह गृहीत, अगृहीत, मिश्र की बात की थी। *श्रोता: क्या ऐसा लेना पड़े?* लेना पड़ेगा की बात ही नहीं, हमें तो टाइम देखना है। तो उस विशिष्ट क्रम से जब-जब वह लेगा, तब हम उसको अनुक्रम में लेंगे। बिना अनुक्रम के बहुत बार, अनंतों बार, बीच में उसका अन्य प्रकार से ग्रहण होगा; उसको तो गिनना नहीं; उसके काल को गिनना है। इसतरह से बहुत बड़ा अनंतकाल बीत जाता है, तब जाकर एक पुद्गलपरावर्तन या परिवर्तन कहो, समाप्त होता है जो अन्य परावर्तनों की अपेक्षा सबसे छोटे में छोटा काल है।

उसके बाद हमने कौनसा परावर्तन देखा? क्षेत्रपरावर्तन देखा। तो क्षेत्रपरावर्तन में हमने क्या देखा? उसको भी समझाने के दो तरीके हैं; एक स्वक्षेत्रपरावर्तन है और एक परक्षेत्रपरावर्तन है। अभी स्वक्षेत्रपरावर्तन में हमने क्या-क्या बातें देखी? वहां तो अवगाहना की बातें हैं यानी जीव भले वह असंख्यातप्रदेशी है, परंतु यह जो संसार अवस्था में एक भव से दूसरा भव धारण करता है तो अन्य-अन्य शरीर धारण करता है तो उसकी अवगाहना यानी उसका साइझ छोटा-बड़ा उसकी अपनी योग्यता के अनुसार अलग-अलग हो जाता है। तो हमने देखा जघन्य में जघन्य अवगाहना से उत्कृष्ट में उत्कृष्ट अवगाहना तक के जो अवगाहना के भेद हैं, इनके लिये हमने वे सारे यंत्र के कोठे देखे थे। तो हमने देखा था न, देखो, १८८ पृष्ठ पर हमने टेबल देखा था। इसको समझना जरूरी है क्योंकि केवल हमने कहा कि छोटी से बड़ी तक की सभी अवगाहना प्राप्त की, तो उसकी विशालता-उसकी मॅग्निट्यूड ख्याल में नहीं आती इसलिये ये सारे भेद यहां बताये हैं। कल आपने जो पूछा था न कि जन्म के समय अगर हम लेंगे तो वह बड़ी अवगाहना है या छोटी अवगाहना, वह ऐसे कैसे काउंट करेंगे? तो हम कहेंगे कि उस पर्याय की जो उत्कृष्ट अवगाहना है, उसको हम ले लेंगे। जब हम अवगाहना का जघन्य भेद देखेंगे, तो उसके जन्म का समय लेंगे या वह तीसरा समय लेंगे। परंतु हम जब कहेंगे, महामत्स्य तक की अवगाहना यानी वह जो कोई उस पर्याय की उत्कृष्ट अवगाहना है, उस हिसाब से उसको लेंगे हम; तभी यह बात घटित होगी।

श्रोता: उसमें भी जन्म का ही देखेंगे हम? उसने जन्म लिया महामत्स्य की पर्याय में, जो वह बड़ा होनेवाला था। जैसे हम आपको पूछेंगे, आदिनाथ भगवान की अवगाहना कितनी थी? *श्रोता: ५०० धनुष।* ५०० धनुष थी। मां के गर्भ में आये, तब इतनी थी? *श्रोता: नहीं।* समझ में आया? यानी हम उसको फुल ग्रोन जो अवगाहना देखते हैं, उसकी अपेक्षा यह बात होनी चाहिये, तभी यह बात ठीक घटित हो जाती है; परंतु वह उसका एक भव लेना है। उत्कृष्ट अवगाहना के लिये बढ़ती हुयी बीचवाली अवगाहना काउंट नहीं करनी है। जब जिसको हम कहेंगे उसकी पूर्ण वृद्धि हुयी यानी जवान हो गया हम कहेंगे अपनी भाषा में, तब काउंट करना। देवों में तो जवान नहीं कहेंगे; वहां के सारे वे जवान ही होते हैं, वहां कोई बालक नहीं होते। इसतरह से हम अवगाहना सोच सकते हैं। *श्रोता: महामत्स्य का लास्ट उसका जन्म हुआ तो भले छोटी अवगाहना हो लास्ट तक ही गिन लेंगे?* महामत्स्य

की उत्कृष्ट अवगाहनावाला उसको भव मिला। *श्रोता: जन्म मिला, वह जन्म हुआ, उसके लास्ट अवगाहना तक उसके गिन लेंगे?* हां, लास्ट अवगाहनावाले महामत्स्य में उसका जन्म हुआ है। उसके बाद उसको फिर जघन्य अवगाहनावाले निगोद में जन्म लेना है, तभी तो परावर्तन पूर्ण होगा। *श्रोता: लेकिन वहां भी स्टार्टिंग पॉइंट से लेकर बीचवाली सभी अवगाहना लेनी है न?* एक भव में एक ही अवगाहना लेनी है। बीचवाली भी ऐसी-ऐसी अवगाहना थी, जो फुल्ली ग्रोन जिसको हम कहेंगे। उसकी पूर्ण वृद्धि हो गयी है, तब की अवगाहना हम काउंट करते जायेंगे क्योंकि महामत्स्य में भी बहुत सारी अवगाहनायें हो गयी न? जैसे हम-आप सब मनुष्य हैं, कोई ६ फीटवाला है और कोई शॉर्ट है, उसमें भी भेद होंगे; इसतरह से वहां पर भी होंगे।

श्रोता: एक ही भव गिनना? एक ही भव, एक ही भव लेना, एक अवगाहनावाला एक ही भव लेना। *श्रोता: तो फिर हर जन्म में मनुष्य, देवगति का एक ही भव लेना?* एक ही भव लेना। जिस अवगाहना की बात होगी, तो एक ही भव लेना; यानी उतनी अवगाहनावाला वह एक भव; फिर वह पूरा भव पार करके फिर दूसरी बार जन्मेगा, तब उसकी जो अवगाहना होगी उस भव की उत्कृष्ट उसको लेंगे तभी यह बात घटित हो सकती है। *श्रोता: नहीं, हम तो एक-एक प्रदेश आगे अवगाहना लेते हैं।* बिलकुल। *श्रोता: स्टार्टिंग से तो फिर महामत्स्य का स्टार्टिंग पॉइंट से एण्ड तक का कैसे लेंगे?* महामत्स्य में स्टार्टिंग में कैसे लेंगे यानी अकेले महामत्स्य ही अपनी अवगाहना का भेद नहीं है। *अन्य श्रोता: जनरल सभी के। पहला श्रोता: वहां के स्टार्टिंग पॉइंट लिया तो मिनिमम अवगाहना होगी तो लास्ट तक की अवगाहना में एक ही भव ले लेंगे या उसमें एक-एक अलग-अलग भव लेंगे?* नहीं-नहीं, उसमें अलग-अलग भव लेंगे। महामत्स्य के भी अवगाहना के जो भेद होंगे, हम अंत में महामत्स्य को रखेंगे। तो उसके जो कोई हज़ार से पांच हज़ारवाले भेद होंगे, मान लेते हैं, तो हज़ार अवगाहनावाला एक भव हुआ; फिर बीच में हज़ार और एकवाला भव चाहिये जो दूसरा भव जब होगा, तब लेना। एक बार तो एक ही भव लेना; किसी अवगाहना के साथ एक ही भव लेना क्योंकि उसी भव में अवगाहना को काउंट करेंगे तो, वृद्धि होते-होते अनेक भेद प्राप्त होंगे उनको नहीं ले सकते, तब यह बात घटित हो जायेगी।

श्रोता: उसका एक-पहले नंबर के कोठे में; उसका निगोद में जन्म हुआ पहला, तो वहां उसकी माने जो जघन्य अवगाहना; उससे असंख्यातगुणा वायुकायिक की; तो वहां

तक तो माने निगोद का जीव का जन्म लिया; प्लस बढ़ते-बढ़ते, फिर आगे वायुकायिक का लेना कि निगोद का भी लेना? दोनों लेना। हां देखो, यह फिर सुनते हैं – पहला कोठा निकालो, आप सब लोग पेज नंबर १८८ निकालिये। तो यह कहां से शुरुआत होगी? सबसे जघन्य अवगाहनावाले कोई, कौनसी पर्याय है, कौनसा जीवसमास है? तो कहेंगे सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त। पहले कोठे में सभी लब्धिअपर्याप्त हैं और सभी सूक्ष्म हैं और उनकी ऑर्डर हमने कैसी देखी थी? सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त। उसके अवगाहना के कितने भेद हैं? तो हमने जघन्य से शुरुआत की। फिर और एक प्रदेश अधिक, दो प्रदेश अधिक, तीन प्रदेश अधिक, होते-होते-होते दोगुणा, तीनगुणा आदि होते जायेगी। हम सूक्ष्म की जघन्य अवगाहना 'ज' समझेंगे। जघन्य के लिये 'ज' समझेंगे। तो ज + १, ज + २, ज + ३, एक-एक प्रदेश बढ़ेगा; बढ़ते-बढ़ते कितने हैं ज में? असंख्यात प्रदेश हैं, तो वह २ ज हो गये, दोगुणा हो गये न? यानी असंख्यात प्रदेश बढ़कर, जितने मिनिमम असंख्यात थे, ज नाम दिया हमने, उतने ही और असंख्यात – एक-एक बढ़ते हुये असंख्यात हुये, तब ज + ज = २ ज हो गये; और भी एक-एक बढ़ते-बढ़ते ३ ज हो गये; फिर एक-एक बढ़ते-बढ़ते ४ ज हो गये; ऐसे संख्यात-ज हो गये, ऐसे असंख्यात-ज हो गये। कौनसा असंख्यात? तो आवली के असंख्यातवें भागवाला असंख्यात। तब जाकर वह निगोद की जितनी वहां की अवगाहना होगी, उतनी सूक्ष्म वायुकायिक लब्धिअपर्याप्त जीव की जघन्य अवगाहना होगी। इसके आगे सूक्ष्म निगोद में भी एक-एक प्रदेश बढ़ती हुयी अवगाहना होगी और वायुकायिक में भी एक-एक प्रदेश बढ़ती हुयी अवगाहना होगी।

अब यह वायुकायिक की जो है न उससे आगे; अभी उसको वायुकायिक की कहो या सूक्ष्म निगोद की कहो बात एक ही है; उनकी अवगाहना भी एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी चलेगी आगे। ऐसे जितनी वायुकायिक की जघन्य है उससे दोगुणा हुयी; दस गुणा हुयी; संख्यातगुणा हुयी; वह असंख्यातगुणा हो गयी तब जाकर तेजसकायिक यानी अग्निकायिक की जघन्य अवगाहना वहां से शुरू हो गयी। यानी उस पॉइंट से अभी अग्निकायिक भी आ गये, वायुकायिक भी आ गये, निगोद भी आ गये। *श्रोता: मतलब तीनों में जन्म करना कि एक ही काउंट करना?* किसी भी, किसी भी एक को काउंट करना। हमें अवगाहना को काउंट करना है; उसने कौनसी पर्याय ली उससे अपने को कोई मतलब नहीं है; परंतु वह जघन्य से शुरू करना था, इसलिये हमने निगोद को पहले लिया। यानी उसमें ही कितने

एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना को दो गुणा होने के लिये उसको असंख्यात बार एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना के भव लेने पड़ेंगे। तो मूल जो हमने, ज जिसको नाम दिया उसको असंख्यातगुणा करते हुये, तो यह असंख्यातगुणा कितना बड़ा हो जायेगा? तब जाकर वह आगेवाली वायुकायिक की जघन्य अवगाहना चालू हो जायेगी। वह असंख्यातगुणा हो जाये, तब जाकर तेजसकायिक की जघन्य अवगाहना चालू हो जायेगी, वह ३ नंबर पर है। वह असंख्यातगुणा हो जाये, तब वहां से लेकर अप्कायिक यानी जलकायिक की जघन्य अवगाहना शुरू होगी। यह सब सूक्ष्म लब्धिअपर्याप्तों की बात चल रही है। वह असंख्यातगुणा हो जाये, तो सूक्ष्म पृथ्वीकायिक लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना वहां से शुरू हो जायेगी।

वह असंख्यातगुणा हो जाये; पहले तो हमने कितना असंख्यातगुणा किया? तो आवली के असंख्यातवें भागवाला असंख्यातगुणा। ५ नंबर के बाद अब नंबर किसका आयेगा, जिसको हमने ६ नंबर दिया है; यह अभी बादर वायुकायिक है, वह भी अपर्याप्त है। *श्रोता: आवली में घनावली लेना?* घनावली लेना, यहां आवली लिखा है वहां घनावली समझना। क्यों ऐसा लेना? लिखा तो है आवली परंतु घनावली इसलिये लिया कि, हमने कल आपको संदृष्टि अधिकार बताया था, संदृष्टि में तो चिन्ह होते हैं। यहां घनावली को आवली कह देना, यह तो हो सकता है हां, परंतु चिन्हों में तो कोई फर्क नहीं हो सकता। आवली का चिन्ह है २, सहनानी उसकी २ लिखते हैं और घनावली के लिये ८ लिखते हैं, ६ तो घनांगुल के लिये लिखेंगे; तो उससे सिद्ध होता है यह घनावली है। देखो, वहां किसतरह से बताया है कि घनांगुल का असंख्यातवां भाग उनको बताना था। तो हमने निगोद से वायुकायिक कितना है? तो असंख्यातगुणा है कह दिया। तो निगोद की अवगाहना बताने के लिये उस घनांगुल को हम पहले असंख्यात से भाग देंगे और वायुकायिक के बताना है तो? उसको असंख्यात से गुणा करेंगे, तो वह असंख्यात-असंख्यात कट हो जायेंगे। इसलिये यहां हमने इसको पढ़ा नहीं है।

उसमें ऐसा लिखा है १९ बार वह इतना करो, २२ बार पल्य के असंख्यातवें भाग से भाग दो; इतना-इतना बड़ा-बड़ा करके समझाया, क्योंकि जितनी बार हम असंख्यातगुणा करेंगे न तो उतनी बार उसका गुणा करेंगे, तो जो भागहार में था वह कॅन्सल हो जायेगा, नहीं समझें? जैसे हम फॉर एक्झाम्पल लेते हैं। ६४ को हमने २ से ४ बार भाग दिया; २

से, २ से, २ से, २ से, तो कितना हुआ? २ दूनी ४ दूनी ८ दूनी १६; १६ से भाग दिया ऐसा हुआ न? ६४ को १६ से भाग दिया; ४ आ गये। तो हमने डायरेक्ट वह ४ नहीं लिखा, हमने ६४ को ४ बार २ से भाग दिया, ऐसा कहेंगे। हम समझेंगे न, आपको समझाने के लिये कोई बात हम मान लेते हैं, निगोद की यह जघन्य अवगाहना हम कहेंगे और फिर हम कहेंगे वायुकायिक की उससे दोगुणा है तो अभी कैसा लिखेंगे? यानी २ गुणा करने से २ का भाग कॅन्सल हो गया अब कहेंगे ६४ को ३ बार २ से भाग दिया है। आगेवाला स्थान जब बताना है तो कहेंगे उससे वह और दोगुणा है, तो हम कहेंगे ६४ को २ बार २ से भाग दिया; उसके आगेवाला स्थान दोगुणा है, ६४ को १ ही बार २ से भाग दिया; उसके आगे दोगुणा है, तो ६४ ही रखेंगे, उसके आगे २ गुणा करेंगे तो हम ६४ को २ गुणा करेंगे। यही पद्धति है, यही पद्धति यहां अपनायी है। देखो आपको देखना है? वह मैंने इसलिये नहीं पढ़ा था कि आप लोग घबरा नहीं जाये एक ही दिन में सब सुनकर।

जहां सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना कितनी है वह बताया है, वहां से उन्होंने वह स्थान गिनना शुरू किये थे। हां, देखो, यहां यह बात शुरू होती है पेज १८६ पर। देखो, ऊपर से वह तीसरा पॅरेग्राफ – **अब कहे हुये**। मिला? **अब कहे हुये अवगाहना के स्थानों का गुणकार विधान कहते हैं**। ये जो अवगाहना के स्थान बताये हैं; पहले वह बात बतायी थी। पहला कौनसा है और दूसरी पंक्ति में क्या है वगैरह-वगैरह। **सूक्ष्म निगोदिया लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना का स्थान** वह जो पहला भेद हमने देखा था, उसको यहां स्थान कहा। **वह आगे कहेंगे गुणकार, उनकी अपेक्षा निम्नप्रकार है**। देखो, जो हमने टेबल देखा है न? १८८ पेज पर, वहां हमने सूक्ष्म निगोद को एक बार आवली के असंख्यातवें भाग गुणा किया, तो वायुकायिक की अवगाहना आयी। दूसरी बार आवली के असंख्यातवें भाग गुणा किया, तेजसकायिक आया; तीसरी बार किया इसतरह से हमने कितनी बार किया? देखो इसमें; फिर पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा किया तब ६ नंबर आया और एक बार पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणा किया तो ७ नंबर आया; तो कितनी बार कौनसी संख्या से गुणा किया? जो जितनी बार आगे-आगे गुणकाररूप से गुणा किया था, उसके पहले हम इसको भागहार में डाल देंगे। जैसे हमने ६४ को ४ बार २ से भाग दिया था; तो आगे चलकर जिन-जिन से गुणा करके आगे की संख्या-अवगाहना बतानेवाले हैं, उन सभी गुणकारों को भागहार में डालेंगे। गुणकार यानी गुणक, यहां सब

जगह गुणकार ऐसा लिखा है न? उसका मतलब होता है गुणक। जिस संख्या से हम गुणा करते हैं, उस संख्या को मराठी में हम गुणक कहते हैं, यहां उसको ही पं. टोडरमलजी ने गुणकार कहा है और जिस संख्या से भाग देते हैं उसे भागहार कहा है यानी भाजक।

तो जितनी बार हम गुणा करने जा रहे हैं; जिन संख्याओं से, उतनी बार पहले उनको भागहार में ले लिया उन्होंने यानी नीचे छेद में; समझ में आती है यह बात? आगे हम जितनी बार गुणा करने जानेवाले हैं, उन सभी संख्याओं को भागहाररूप में यहां पहले लिख लिया उन्होंने, उसके नीचे; ऊपर अंश लिखते हैं, नीचे छेद लिखते हैं; तो छेद में उन सबको ले लिया। जब-जब एक बार आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा करेंगे तो छेद में जो आवली का असंख्यातवां भाग है उसको कॅन्सल कर देंगे। जब-जब पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणा करेंगे तो हमने छेद में पल्य के असंख्यातवें भाग को लिया था उसको कॅन्सल करेंगे; उसको अपवर्तन कहते हैं। ऊपर का और नीचे का हम कॅन्सल कर देंगे। इसीतरह आगे की सभी बातें बतायी यानी जितनी बार हम गुणा करेंगे, उन सभी संख्याओं को यहां हम छेद में लिखेंगे, इसलिये यहां जो घनांगुल का असंख्यातवां भाग लिख दिया है, देखो यहां पर, ब्रॅकेट में क्या लिखा है? देखो, ब्रॅकेट में मैंने अपनी तरफ से लिखा है। **आगे के स्थान जितनी बार गुणकार के रूप में आयेंगे**, यानी गुणित प्रमाण में आयेंगे, **उन गुणकारों को** यानी उन गुणक संख्याओं को, जैसे आवली का असंख्यातवां भाग हो या पल्य का असंख्यातवां भाग हो, उनको **यहां घनांगुल के छेदस्वरूप स्थापन किये हैं। जब आगे आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा कहेंगे, तब छेद में से उसको एक बार घटाकर ९ बार के बदले ८ बार कहेंगे। जब आगे का स्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा कहेंगे, तब छेद में पल्य का असंख्यातवां भाग १९ बार लिखा है उसको १८ बार कहेंगे; इसीतरह अन्य गुणकारों के बारे में भी समझना**। यह बात ख्याल में आयी?

जितनी बार आगे जाकर जिस संख्या से गुणा करनेवाले हैं, उतनी बार वह संख्या यहां छेद में लिखेंगे। *श्रोता: ऐसा करने का उद्देश क्या है?* इसलिये कि हमें वह समझने के लिये आसान हो जाये। जैसे किसीकी अवगाहना ४ थी और वह दोगुणा होकर किसीकी ८ हुयी; दुसरी बार दोगुणा करने पर १६ हुयी; तीसरी बार दोगुणा करे पर ३२ हुयी और चौथी बार दोगुणा करने पर ६४ हुयी। तो हम शुरू की अवगाहना बताने के लिये ६४ को

चार बार २ से भाग देंगे। उसको दोगुणा करेंगे तो छेद में से एक २ कॅन्सल होकर तीन बार २ रह जायेंगे। अब अवगाहना का तीसरा भेद उससे दोगुणा है तो हम दूसरे भेद को दोगुणा करेंगे तब ६४ तो तीन बार २ से भाग दिया था, उसे २ से गुणा करने पर अब छेद में दो बार २ रह गये। उसे और दोगुणा करेंगे तो छेद में एक बार २ रह जायेंगे और ४ बार २ से गुणा करेंगे तो ६४ हो जायेंगे। यह बात समझ में आती है? नहीं आयी? फिर से देखेंगे। देखो, अभी यहां उसके नीचे का पॅरेग्राफ पढ़ेंगे तो ख्याल में आयेगा। आगे पढ़ेंगे हम, यह समझ में नहीं आयेगा ऐसी बात नहीं हो सकती, भले उसको समय लग सकता है। हमारे पास पुस्तकें हैं, तो हम जरूर उसको पढ़कर समझेंगे न? हमें न रटना है, न याद में रखना है; हमें तो केवल समझना है उसका अर्थ।

देखो यहां पर, पहले सुन लो, आपके पास सामने पुस्तक है, १८६ पृष्ठ है, नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ आपको पढ़ना है अभी। **उन्नीस बार पल्य का असंख्यातवां भाग** अब हम यह सभी का भाग किसको दे रहे हैं? तो कहते हैं घनांगुल को; घनांगुल को हम इन संख्याओं का भाग देने जा रहे हैं। तो **उन्नीस बार पल्य का असंख्यातवां भाग, नौ बार आवली का असंख्यातवां भाग, बाईस बार एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग** यह बाईस बार एक अधिक का मैंने अभी आपको अर्थ नहीं बताया है, उसकी बात बाद में करेंगे। पहले जो उन्नीस बार और नौ बार जो लिखा है, उसका अर्थ देखेंगे क्या लिखा है? उसको पहले पढ़ लेते हैं **और नौ बार संख्यात, इनका तो जिसको भाग दिया है तथा बाईस बार आवली के असंख्यातवें भाग से जिसको गुणा किया है ऐसा जो घनांगुल उस प्रमाण है। सो उसको प्रथम स्थानरूप से स्थापित करना**। यह है निगोद की अवगाहना, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना। अब इसको समझने के लिये देखो, बोर्ड पर हम बाद में देखेंगे अभी पहले जरा यहां देखते हैं। **यहां बाईस बार एक अधिक घनावली के असंख्यातवें भाग का भाग दिया है और उतनी ही बार घनावली के असंख्यातवें भाग से गुणा किया है**। यह अधिक और उसकी बात हम बाद में देखेंगे। पहले वह उन्नीस बार पल्य के असंख्यातवें भाग से भाग दिया था और नौ बार आवली के असंख्यातवें भाग से भाग दिया था, उसकी बात हम करेंगे। *श्रोता: नहीं समझा।* कोई बात नहीं, कोई बात नहीं, मैं समझाऊंगी।

हम घनांगुल के लिये 'घ' लिखते हैं आपके लिये, वैसे उसकी संदृष्टि ६ है। हमने 'घ' लिखा है घनांगुल के लिये, अब उसको क्या करना है? बाईस बार पल्य के असंख्यातवें भाग से भाग देना है। अभी सुनना, देखो यह 'प' यानी पल्य और जो अंग्रेजी 'A' का स्मॉल लेटर जो ə होता है, वह असंख्यात की साइन है। तो यह 'घ' को भाग देने के लिये यहां बीच में लाइन नहीं लिखते परंतु हम यहां आपको समझने के लिये लाइन भी डालेंगे, क्योंकि ऐसा हम अपने लौकिक गणित में डालते हैं न? देखो, 'घ' यानी घनांगुल डिव्हाइडेड बाय पल्य का असंख्यातवां भाग, यह तो ख्याल में आयी बात? $\frac{\text{घ}}{\text{प}_{\text{ə}}}$।

कितनी बार लिखा है? उन्नीस बार, तो हम इसके आगे १९ लिखेंगे। इसका अर्थ होता है उन्नीस बार, इतनी बार हमने घनांगुल को पल्य के असंख्यातवें भाग से भाग दिया है। $\frac{\text{घ}}{\text{प}_{\text{ə}}|१९}$। अब और किससे भाग देना है? नौ बार आवली के असंख्यातवें भाग से, यहां आवली यानी घनावली है। उसकी संदृष्टि यानी उसका चिन्ह है ८ और उसका असंख्यातवां भाग ə, यह हो गया आवली का असंख्यातवां भाग, समझ में आयी बात? वह कितनी बार है? नौ बार, तो यहां हम ९ लिखेंगे। $\frac{\text{घ}}{\text{प}_{\text{ə}}|१९|\text{८}_{\text{ə}}|९}$ आगेवाली संख्या हम बाद में लिखेंगे। पहले इसका हम हिसाब करते हैं क्योंकि वह कैसे समझना, उसको हम देखेंगे। यह सूक्ष्म निगोद की जघन्य अवगाहना चल रही है, सूक्ष्म वायुकायिक की जघन्य अवगाहना उससे कितनी गुणा है? *श्रोता: असंख्यात।* कौनसा असंख्यात? *श्रोता: आवली का असंख्यात।* आवली के असंख्यातवें भागगुणा है। अब यह सूक्ष्म निगोद की अवगाहना है और हमें सूक्ष्म वायुकायिक की निकालना है। तो कितनी गुणा है? आवली के असंख्यातवें भागगुणा यानी अपनी इस राशि को आवली डिव्हाइडेड बाय असंख्यात से गुणा करेंगे। $\frac{\text{घ}}{\text{प}_{\text{ə}}|१९|\text{८}_{\text{ə}}|९} \times \frac{\text{८}}{\text{ə}}$ यह समझ में आयी बात? अभी क्या करेंगे? अंश और छेद में जो-जो समान है, उसको कॅन्सल करेंगे, अपवर्तन कहते हैं जिसको। नीचे ९ बार था उसको क्या करेंगे? ८ बार करेंगे ९ का ८ हो जायेगा। $\frac{\text{घ}}{\text{प}_{\text{ə}}|१९|\text{८}_{\text{ə}}|\text{८}}$ तो अब इसको क्या कहेंगे? यह सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना है। ख्याल में आयी बात? उसके आगे किसका नंबर है?

तेजसकायिक का। उसके लिये और १ बार आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा करो। इसको कैसे लिखेंगे? हम नहीं लिखेंगे, तो उसको क्या करेंगे? अपवर्तन होकर ७ बार हो जायेगा। नीचे ८ का ७ हो जायेगा अपवर्तन के बाद। $\overset{\text{घ}}{\overline{\underset{\text{ग}}{\text{प}}|१९|\underset{\text{ग}}{८}|७}}$ यह सूक्ष्म तेजसकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना हुयी।

उसके आगे? अप्कायिक का नंबर है। वह उससे आवली के असंख्यातवें भागगुणा है, तो उसमें कितनी बार करेंगे उसको? ६ बार हो गये; इसको ६ बार किया। फिर से सुनो, आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा करेंगे, तो नीचे कितनी बार हो जायेगा? नीचे ६ हो जायेगा। $\overset{\text{घ}}{\overline{\underset{\text{ग}}{\text{प}}|१९|\underset{\text{ग}}{८}|६}}$ यह सूक्ष्म अप्कायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना हुयी। बाद में? पृथ्वीकायिक का नंबर है। पृथ्वीकायिक में उसको कितना करेंगे? ५ बार करेंगे। $\overset{\text{घ}}{\overline{\underset{\text{ग}}{\text{प}}|१९|\underset{\text{ग}}{८}|५}}$ अब उसको पढ़कर सुनाऊं आपको पुस्तक में से? देखो। आगेवाली कुछ संख्या हमने नहीं लिखी इसमें, कुछ अधिकवाली। वह कुछ अधिकवाली कॅन्सल करने के लिये जो छेद में लिखना था, वह हमने अभी नहीं लिखा है, आपको केवल शुरू के कुछ स्थान बताये हैं। *श्रोता: यह सूक्ष्म निगोद की जो जघन्य अवगाहना होती है, यह घनावली का असंख्यातवां भाग का इलॅबोरेट करके...* हां, यह इलॅबोरेशन है, असंख्यातवां भाग यानी कितना असंख्यातवां भाग? यह ऊपर, घनावली नहीं घनांगुल है और यह सारा नीचे कितना असंख्यातवां भाग है, उसकी बात बतायी है और इससे आगेवाली अवगाहना गुणित प्रमाण में है, इसलिये वह जो गुणित प्रमाण में होनेवाला है, पहले हमने उसको भाग दिया है। इसलिये जब आगे इतनी बार गुणा करेंगे तो, ९ बार में से १ बार कॅन्सल करेंगे, फिर ८ बार होगा, ७ बार होगा, ६ बार होगा, ५ बार होगा। जब हम बादर वायुकायिक, बादर 'वा' से शुरू होता है न? 'वा ते' इत्यादि, तो उसकी बात करेंगे, वह पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है। इसलिये उसके लिये हम छेद में १९ के बदले वहां १८ करेंगे। $\overset{\text{घ}}{\overline{\underset{\text{ग}}{\text{प}}|१८|\underset{\text{ग}}{८}|५}}$ जब बादर में वायुकायिक के बाद तेजसकायिक का नंबर है, तब १७ बार होगा। ये कुछ अधिकवाली बातें छोड़ दी हैं, उनको हम बाद में समझेंगे, पहले इसको समझेंगे पुस्तक के आधार से, देखो। हां, यह जो हमने अभी देखा यहां पर, पेज नंबर

१८७। पेज १८६ पर हमने क्या देखा था? उन्नीस बार पल्य का असंख्यातवां भाग, नौ बार आवली का असंख्यातवां भाग, आगे भी कुछ संख्या बतायी है, उसको हम बाद में एक्स्प्लेन करेंगे; पहले इतना समझते हैं। यानी घनांगुल को इस संख्या से भाग दिया, यह सूक्ष्म निगोद की अवगाहना हुयी। अब यहां १८७ पृष्ठ पर, जहां नया पॅरेग्राफ शुरू होता है।

इस आदिभूत स्थान से, आदिभूत यानी प्रथम स्थान से; प्रथम स्थान यानी जघन्य स्थान से; किसका था वह जघन्य स्थान? सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्त का; इससे **सूक्ष्म अपर्याप्त वायुकायिक जीव का** यानी नंबर २ का **जघन्य अवगाहना स्थान आवली के असंख्यातवें भाग से गुणित है, सो इसका गुणकार** यानी गुणक **आवली का असंख्यातवां भाग और पूर्व में आवली के असंख्यातवें भाग का भागहार नौ बार कहा था**। यानी छेद में ९ बार हमने लिखा था और यहां उसको १ बार आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा किया, **उसमें एक बार आवली का असंख्यातवां भाग सदृश देखकर** यानी अंश में और छेद में समान देखकर; **दोनों का अपवर्तन करने पर** हमारी भाषा में दोनों को कॅन्सल कर दिया हमने; **पूर्व में जहां नौ बार कहा था, उसके बदले यहां आठ बार आवली के असंख्यातवें भाग का भागहार जानना**। यह बात ख्याल में आयी? **इसीतरह आगे भी गुणकार, भागहार को समान देखकर दोनों का अपवर्तन करना**। गुणकार यानी गुणक, भागहार यानी भाजक; जिससे भाग देते हैं वह भागहार; जाननहार ऐसे ही यह भागहार। अब **इससे सूक्ष्म अपर्याप्त तेजसकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली के असंख्यातवें भागगुणा है**।

यहां भी पूर्वोक्त प्रकार से अपवर्तन करने पर आठ बार की जगह सात बार आवली के असंख्यातवें भाग का भागहार होता है। यहां तक ख्याल में आयी बात? आसान है, कल इसलिये नहीं पढ़ा था क्योंकि कल और भी कुछ अन्य बातें बतानी थी। **पुनश्च इससे सूक्ष्म अपर्याप्त अप्कायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली के असंख्यातवें भागगुणा है। यहां पूर्ववत् अपवर्तन करना**। अपवर्तन करना का अर्थ समझते हैं न? जेसे हम लौकिक में गणित करते हैं; छेद में ४ है और ऊपर अंश में भी ४ है; तो वहां ऊपर भी ४ एके ४ करके और नीचे भी ४ एके ४ करके हम उसको कॅन्सल करते हैं, वहां १-१ लिखते हैं, हैं न? झिरो नहीं लिखते वहां, नहीं तो झिरो का गुणकार

होगा तो झिरो हो जायेगा सब। **पुनश्च इससे सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली के असंख्यातवें भागगुणा है। यहां भी पूर्ववत् अपवर्तन करना। इसतरह यहां आवली के असंख्यातवें भाग का भागहार तो पांच बार रहा।** बाकी के वहां जो कोई गुणकार-भागहार थे वे वैसे ही रहे, ख्याल में आयी न बात? यानी हमने तो केवल दो ही संख्या ली थी; आवली का असंख्यातवां भाग और पल्य का असंख्यातवां भाग। **पुनश्च यहां तक सूक्ष्म से सूक्ष्म का गुणकार हुआ।** यानी यहां हम हर बार कौनसी संख्या से गुणा कर रहे थे? तो आवली के असंख्यातवें भाग से। अब कहां जाना है? ६ नंबर पर जहां बादर वायुकायिक अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना है। तो वह कितने गुणा है? पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है। **यहां तक स्वस्थान गुणकार था। अब सूक्ष्म से बादर का गुणकार कहते हैं, यह परस्थान गुणकार है। आगे भी सूक्ष्म से बादर, बादर से सूक्ष्म का जहां गुणकार है वह परस्थान गुणकार है, ऐसा विशेष जानना। तो इस सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकायिक के जघन्य अवगाहना स्थान से स्वस्थान गुणकार को उल्लंघ कर परस्थानरूप बादर अपर्याप्त वायुकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है।**

तो हमने छेद में कितनी बार पल्य का असंख्यातवां भाग कहा था? उन्नीस बार; हमने देखा न? १८६ पेज पर देखा था हमने, नीचे के पॅरेग्राफ में। तो यहां क्या करेंगे? उन्नीस बार था उसमें से एक बार का अपवर्तन कर दिया, तो कितनी बार रह जायेंगे अभी? *श्रोता: अठारह बार।* अठारह बार रहेंगे। बाकी वे आवली के असंख्यातवें भाग भागहार में पांच बार रखे थे वे ऐसे ही रखना अभी। जब आगे आवली के असंख्यातवें भाग का जब कभी गुणकार होगा तब हम उनको कॅन्सल करेंगे। **पुनश्च इससे बादर तेजसकायिक** देखो, ७ नंबर पर तेजसकायिक है न? बादर तेजसकायिक **अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है। यहां भी पूर्ववत् अपवर्तन करना। इसीतरह पल्य के असंख्यातवें भागगुणा अनुक्रम से अपर्याप्त बादर अप्** यानी अप्कायिक, **पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक के जघन्य अवगाहना स्थान** और उसके आगे भी, वह भी पल्य के असंख्यातवें भागगुणा है; **और अपर्याप्त अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय के जघन्य अवगाहना स्थान इन नौ स्थानों को प्राप्त कर** यानी ९ बार उसको ऐसे हम अपवर्तन करते चले जायेंगे। **पूर्ववत्**

अपवर्तन करने पर हम कहां तक आ जायेंगे? वह पंचेन्द्रिय १६ नंबर के स्थान पर; **अपर्याप्त पंचेन्द्रिय के जघन्य अवगाहना स्थान में आठ बार पल्य के असंख्यातवें भाग का भागहार रहता है** यहां तक ख्याल में आयी बात?

जब-जब आवली के असंख्यातवें भागगुणा किया, तो हमने वह ९ बार का ८ बार, फिर ७ बार, फिर ६ बार, ऐसा करते-करते ५ बार तक आ गये। पल्य का असंख्यातवां भाग हमने १९ बार लिखा था उसको एक-एक बार कम करते-करते-करते-करते जब यह १६ नंबर के पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना तक आ गये तब कितनी बार रहा वह? *श्रोता: ८ बार रहा।* ८ बार रहा। यहां तक तो बात समझी – क्लिअर हुयी या बहुत डिफिकल्ट जा रहा है? हां रजनीभाई? *श्रोता: ये १९ बार है तो यह उसी तरह १९ बार कम करना?* हां, उतना गुणा करना था न? इसलिये भागहार में से हमने उतनी बार मायनस कर दिया यानी अपवर्तन किया *श्रोता: अधिकवाले में वह २२ बार है तो २२ बार करना?* वह अधिकवाली बात हमने अभी नहीं समझायी वह कैसे लेना है? *श्रोता: पर ८, १९, २२ ले लिया वहां पर...* देखो, हमने १९ और ९ की बात समझायी है, जहां-जहां गुणित प्रमाण में है वह बात आपको समझा दी। तो हम तो १६ तक आ गये न अभी तक; उसके बाद नंबर किसका होगा १६ के बाद? १७ का। देखो, अभी यहां देखेंगे। १८९ पेज नया पॅरेग्राफ। *श्रोता: हमें कैसे पता कि वह घनांगुल का असंख्यातवां भाग वह सेम संख्या आ गयी होगी? या अन्य गुणकार लेना?* यह तो जो कुछ है वह केवली के द्वारा जानकर बताया हुआ है और यह आगम में आचार्यों ने जो बताया है। तो वहां वह जिस गुणित प्रमाण में है उसकी बात यहां बतायी है; हम उसीके अनुसार यहां देख रहे हैं। *श्रोता: यह घनांगुल प्रमाणांगुलवाला है कि सूच्यंगुलवाला है?* नहीं, जहां शरीर की अवगाहना होती है वहां उत्सेधांगुलवाला सूच्यंगुल होता है। ये अंगुल के भी हम भेद देखेंगे; प्रमाणांगुल और उत्सेधांगुल क्या होता है? पहले इसको अवगाहना को यानी कोष्टक को समझेंगे अच्छी तरह से, हं, भागहार और गुणकार में क्या-क्या रखा है? क्यों रखा है? तो अभी हम १६ नंबर तक आये, यहां तक तो समझ में आयी बात? अभी १७ नंबर होगा, यह परस्थान होगा।

पुनश्च इससे सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान, कोठा नंबर ४ पहला स्थान। **सो परस्थानरूप आवली के असंख्यातवें भागगुणा है** क्योंकि यह सूक्ष्मवाला

है इसलिये, भले परस्थान है परंतु सूक्ष्मवाला है; **सो पूर्व में आवली के असंख्यातवें भाग का भागहार पांच बार रहा था**; जब पृथ्वीकायिक तक आये थे तब पांच बार रहा था, याद है न? अभी उसको एक बार और कम कर देना; **उसमें से एक बार भागहार द्वारा इस गुणकार का अपवर्तन करना**, यानी वह ४ बार रह जायेगा। अब देखो, **पुनश्च इससे सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहना स्थान** कोठा नंबर ५; उसका कितना नंबर है? *श्रोता: २८/२८ नंबर;* अभी यह **विशेष अधिकवाला है**। यह विशेष अधिक की बात उसके लिये किससे गुणा करना और किससे भाग देना है इसकी बात हमने देखी नहीं थी, वह यहां पर देखेंगे। उसके लिये विशेषार्थ निकालो – पेज नंबर १८६, नीचे जो ब्रॅकेट में लिखा है। यानी इसमें क्या किया है देखो –

उसके ऊपर के पॅरेग्राफ की दो-तीन लाइन पढ़कर हम फिर इस पर आते हैं। जहां हमने १९ बार पल्य का असंख्यातवां भाग देखा था और ९ बार आवली का असंख्यातवां भाग देखा था और आगे किससे भाग दिया था और किससे गुणा किया था उसकी भी बात देख लेते हैं। तो कहते हैं, **बाईस बार आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा किया है**, और ऊपर एक रह गया सेकंड लाइन में; १९ बार की बात हुयी, ९ बार की बात हुयी; वह तो समझ में आ गयी। सेकंड लाइन उसकी; **बाईस बार एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग** इससे तो भाग दिया था, वह आगे की संख्यात की बात भूल जाओ; यह बाईस बार की बात देखते हैं। बाईस बार क्या था? एक अधिक आवली के असंख्यातवें भाग से भाग दिया था **और बाईस बार आवली के असंख्यातवें भाग से जिसको गुणा किया** था। क्या किया? **बाईस बार** क्या किया है? **एक अधिक आवली के असंख्यातवें भाग से भाग दिया और बाईस बार आवली के असंख्यातवें भाग से जिसको गुणा किया**। ऐसा क्यों लिखा है? उसको हम विशेषार्थ में देखेंगे, नीचे ब्रॅकेट में देखेंगे। वहां तो हमारी रेग्युलर संख्या लेकर समझाया है। मिला नीचे से दूसरी लाइन में? **यहां बाईस बार एक अधिक घनावली के असंख्यातवें भाग का भाग दिया है और उतनी ही बार घनावली के असंख्यातवें भाग से गुणा किया है**। क्या किया है? भागहार में किसको लिया? एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग; आवली यानी घनावली और मल्टिप्लिकेशन में? आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा किया है। अब यही हम समझेंगे।

आगे के पृष्ठ पर, **उसका कारण यह है कि जहां विशेष अधिक का प्रमाण**

असंख्यातवें भाग से अधिक बताना हो उसकी अपेक्षा निगोद की अवगाहना उतनी हीन बतायी है। देखो, जहां हम कहेंगे असंख्यातगुणा, निगोद से वायुकायिक असंख्यातगुणा है; तो हमने निगोद के लिये उससे भाग दिया था; तो आगे जब गुणा करेंगे तब भागहार का अपवर्तन करेंगे। अब हम कहेंगे हमने जैसे पहले देखा था कि शुरू की अवगाहना को जितनी बार २ से गुणा करने पर ६४ संख्या आयी थी तो वह शुरू की अवगाहना बताने के लिये हमने ६४ को उतनी बार २ से भाग दिया था यानी अंश में ६४ संख्या लिखकर छेद में उतनी बार २ लिखा था। अब जहां आगेवाली अवगाहना ४ से अधिक होनेवाली है तो पूर्व अवगाहना के लिये हम ६४ मायनस ४ लिखेंगे; यानी ४ हीन करके बतायेंगे। यहां मान लेते हैं ६४ – ४ हमने पर्याप्त निगोद की जघन्य अवगाहना के लिये बताया है तो अपर्याप्त निगोद की उत्कृष्ट के लिये कहेंगे ६४ – ४ + ४ तो ६४ हुये न? अर्थात् ६४ – ४ से ६४ यह क्या हुआ? ४ से अधिक हुआ। यही मेथड है तो यह कैसे लिखते हैं? देखो।

मान लेते हैं असंख्यात का प्रमाण १०० है। यह १०० संख्या समझने के लिये तो आसान है। **उसका १००० को भाग देने पर १० आते हैं** यानी १००० का हमें असंख्यातवां भाग निकालना है; असंख्यात के लिये हमने कितने माने? १००। १००० का असंख्यातवां भाग यानी १०० वां भाग कितना आता है? १०। **उसे १००० में मिलाने पर १०१० होंगे**; जब १००० का १०० वां भाग १००० में मिलायेंगे तब हम कहेंगे १०० वां भाग अधिक; यानी १० अधिक; यानी १००० का १०१० हुआ। यानी इतनी हम वृद्धि कहेंगे – १०० वें भाग की वृद्धि, यानी **असंख्यातभाग की वृद्धि**। उसको लाने की विधि ऐसी है; हमें १००० का १०० वां भाग करके १००० में मिलाना है; तो हम क्या करेंगे? १००० का १०० वां भाग निकालेंगे फिर उसमें प्लस करेंगे। हमें डायरेक्ट उत्तर चाहिये तो क्या करना है? १००० को १०० का भाग दे दो और १०० प्लस १ अर्थात् १०१ से गुणा करो। १००० डिव्हाइडेड बाय १०० मल्टिप्लाइड बाय १०१; क्या होगा? करो सब, करके देखो। यहां आगे लिखा है $\left(\frac{१०००}{१००} \times १०१\right)$। *श्रोता: उसके लिये १.०१ से मल्टिप्लाय किया तो वही आया।* पर हमें तो १०० का भाग देना है न पहले? तो १०० का भाग देंगे तो १० आयेंगे उसको

मिलाते रहने के बदले जिस संख्या से भाग देते हैं, उसमें १ मिलाकर उससे गुणा करो; तो वह जो आनेवाला भाग उसमें मिला दिया इतना उत्तर डायरेक्ट मिलेगा। यह यहां हमें ॲडिशन नहीं करनी है, मल्टिप्लिकेशन और डिव्हिजन ही करनी है।

१००० को १०० से भाग दे दो और १०१ से गुणा करो; तो डायरेक्ट उत्तर आता है १०१०। १००० को १०० का भाग दे दो, १० आये; फिर उस १० को १००० में मिला दो; इतना लंबा प्रोसेस नहीं करना है। तो हमने १००० को १०० का भाग दिया और (१०० + १) से गुणा किया। ठीक है, यह जो छोटी संख्या है उसका आप और हम कॅल्क्युलेशन कर सकते हैं। जहां असंख्यातवें भाग से अधिक करना है तो क्या लिखेंगे हम? डिव्हाइडेड बाय असंख्यात मल्टिप्लाइड बाय असंख्यात प्लस १, ख्याल में आती है बात? जहां असंख्यात का तो ऐसा हम डिव्हिजन मल्टिप्लिकेशन नहीं कर सकते हैं; तो हम कैसा लिखेंगे? यह घ को हम लिखेंगे $\frac{\text{घ}}{\text{असंख्यात}} \times (\text{असंख्यात} + १)$ तो क्या आयेगा हमें? असंख्यातवां भाग उसमें मिला दिया ऐसा आयेगा, ख्याल में आती है बात? जैसे अभी इसको जितना समझे उतना समझे फिर और समझेंगे। इसकी बात हम बाद में करेंगे फिर दुबारा।

हमें किसी संख्या को, मान लेते हैं '**x**' संख्या है और उसको असंख्यात से भाग देना है। यह **x** डिव्हाइडेड बाय असंख्यात $\frac{x}{\text{ञ}}$ और वह असंख्यातवां भाग **x** में मिलाना है। तो हम कैसे लिखेंगे? **x** डिव्हाइडेड बाय असंख्यात, मल्टिप्लाइड बाय असंख्यात प्लस वन। अब यह प्लस वन की साइन ऐसी होती है; उसके माथे पर आड़ी लाइन लिखो और लाइन के ऊपर एक लिखो; यह है वन प्लस की साइन। इसको कहेंगे असंख्यात प्लस वन। $\frac{x}{\text{ञ}} \times \overline{\frac{१}{\text{ञ}}}$ यह असंख्यात से भाग दिया; असंख्यात प्लस वन से गुणा किया। इसे अपनी भाषा में देखेंगे हम, हं? हम किसी संख्या को; कोई भी दूसरी संख्या लेते हैं; हमने १०० को ४ से भाग दिया; ४ से भाग देने पर संख्या कितनी आती है? २५, वह १०० में मिलाना है तो कितने हो जायेंगे? १२५। तो इसको डायरेक्ट करना है तो क्या करेंगे? १०० डिव्हाइडेड बाय ४ और मल्टिप्लाइड बाय ४ प्लस १। तो ४ प्लस १ कितने होते हैं? ५, तो डायरेक्ट इसको निकाल सकते हैं हम, १०० डिव्हाइडेड बाय ४ तो २५ आया; २५ इन टु ५ इज ईक्वल टु १२५। वही उत्तर आया न? उसकी संख्या निकालो फिर उसमें

मिला दो इसके बदले क्या करना है? जिस संख्या से भाग देते हैं उसी संख्या में एक मिलाकर उससे गुणा कर दो तो हमने उतना भाग उसमें मिला दिया इतनी संख्या आ जाती है। जब यहां विशेषाधिक कहेंगे, आगेवाली संख्या को तो विशेष अधिक कहा यानी कितनी अधिक है? तो आवली के असंख्यातवें भाग से भाग देकर जो संख्या आयेगी वह विशेष का प्रमाण है, उससे अधिक है।

तो यदि हम ऐसा लिखते हैं तो विशेष अधिक हो गया। यह आगे जाकर विशेष अधिक होना है, इसलिये यहां हम विशेष हीन करके लिखेंगे। बात ख्याल में आयी न? यह १०० का १२५ होना है इसलिये हमने इसतरह से लिखा है। तो इसमें हम ऐसा करेंगे कि आगे उसको विशेष अधिक बतायेंगे इसलिये यहां हम उलटा करके लिखेंगे। यानी ४ से गुणा करेंगे और ५ से भाग देंगे। आगे जब विशेष अधिक बताना हो तब ५ से गुणा करेंगे और ४ से भाग देंगे। देखो अभी १०० है यानी $\frac{१२५}{५} \times ४$, आगे बढ़नेवाला है तब ऐसा करेंगे – $\frac{१२५}{\cancel{५}} \times \cancel{४} \times \frac{\cancel{५}}{\cancel{४}} = १२५$।

श्रोता: तो जितनी बार विशेष अधिक आता है उतनी बार भाग देना है? हां, देखो यहां आगे लिखा है – **यदि हमें आगे के १०१० की अपेक्षा १००० को बताना है** क्या कहते हैं? आगे १०१० होनेवाला है; १००० से लेकर १०१० होनेवाला है तो इसलिये हमें १०१० की अपेक्षा बतानी है, १०१० की अपेक्षा अब बताना है। तो १०१० को हम १०१ से भाग देंगे और १०० से गुणा करेंगे। आगे आनेवाले उत्तर की अपेक्षा हम इसको उतना हीन बतायेंगे; ख्याल में आती है बात? १०१० हमारा आगेवाला उत्तर आनेवाला है उसकी अपेक्षा हमें यहां हीन बताना है तो कैसा बतायेंगे? १०१० को; देखो-देखो यह विशेष हीन-अभी बताना है। अभी तो समय हो गया, चलो हम बाद में बतायेंगे इसको। यह फिर दुबारा लेंगे, हमें कोई जल्दी नहीं है भागने की, हां, समझेंगे नहीं तो पुस्तक पढ़ने से भी कोई फायदा नहीं होगा और यह समझेंगे तो बहुत आनंद आयेगा। अब यहीं रुकते हैं हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२०. अवगाहना के भेद, अधोलोक रचना

षट्खण्डागम के आधार से हम कालअनुगम यानी अनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं, उसमें यह जीव अनादि से इस विश्व में, इस संसार में जन्ममरण करता हुआ-भटकता हुआ आज यहां मनुष्यपर्याय में आया है, तो उसने अभी तक कितना काल बिताया है इसका हम यहां गणित देख रहे हैं। वैसे गणित से तो हमें अरुचि है ही, है ना? स्कूल में कैसे कैसे करके हमने स्कूल निपटाकर गणित को छोड़ दिया था और यहां हम कुछ धर्म की बात सीखने आये तो धर्म में गणित कहां से आया? तो लोग घबरा गये गणित सुनते सुनते कि अभी आगे बढ़ो। इसको थोड़ा छोड़ दो और आगे बढ़ो। छोड़ देना है ना? नहीं लेना? हमने जो विषय लिया था उसमें थोड़ा समझाकर हम आगे बढ़ेंगे, आपकी तसल्ली के लिये उसमें अधिक समय नहीं बितायेंगे।

हमने यह बात देखी थी किसी संख्या का कोई विशिष्ट भाग–हमने चौथा भाग किया। सौ का चौथा भाग किया और उसीमें मिलाया। तो सौ का चौथा भाग कितना होता है? *श्रोता: पच्चीस।* पच्चीस। उसको उसीमें मिलायेंगे तो कितना होगा? एक सौ पच्चीस। उसका हमें डायरेक्ट उत्तर निकालना है तो क्या करेंगे हम? १०० डिव्हायडेड बाय ४, मल्टिप्लाइड बाय ४ प्लस १ यानी ५। देखो, १०० का चौथा भाग २५ होता है; उसे उसीमें मिलायेंगे तो १२५ होता है। यही उत्तर डायरेक्ट निकालना है तो जिस संख्या से हमने भाग दिया था, ४ से, तो १०० को ४ से भाग देंगे और ४ अधिक १ जो ५ होते हैं उससे मल्टिप्लाय करेंगे, यानी डायरेक्ट उत्तर आयेगा हमको १२५। $\left(\frac{१००}{४} \times ५ = १२५\right)$। यहां ४ प्लस १ क्यों कह रही हूं, छोटी संख्या तो हमें मालूम है, वह समझना आसान है परंतु जब मान लेते हैं कि किसी असंख्यात का भाग देना है, असंख्यात का भाग देकर वह असंख्यातवां भाग उसी संख्या में मिलाना है। तो कैसे कहेंगे हम? तो यहां केवल हम उनकी संदृष्टि यानी चिन्ह बनायेंगे कि वह विशिष्ट संख्या डिव्हायडेड बाय असंख्यात – वह असंख्यात की हमने आपको चिन्ह यानी साइन बतायी और मल्टिप्लाइड बाय क्या करेंगे? असंख्यात प्लस वन। यह बात ख्याल में आयी? यहां जो विशेष अधिक विशेष अधिक है, वहां उसका प्रमाण कितना था? कि सूक्ष्म निगोद की अवगाहना जो हमने चौथे नंबर के

कोठे में देखी थी उससे पांचवें नंबर के कोठे में उसकी अवगाहना विशेष अधिक थी। विशेष अधिक थी यानी असंख्यातवां भाग अधिक थी और उसके नीचे के कोठे में उससे भी विशेष अधिक थी तो उसका भी असंख्यातवां भाग अधिक थी। यह आगे चलकर अधिक अधिक होनेवाली है, तो पहले हम क्या करेंगे? उसको विशेष हीन में बतायेंगे। यहां जो सूक्ष्म निगोद की अवगाहना बतायी है उसमें हमने वह उन्नीस बार भागहार में देखा ना यानी छेद में पल्य का असंख्यातवां भाग उन्नीस बार लिखा है क्योंकि आगे हम उसको उन्नीस बार पल्य के असंख्यातवें भाग से मल्टिप्लाय करनेवाले हैं। इसलिये अभी उसको डिव्हाइडेड, डिव्हिजन में बताया। ऐसे ही हमने नौ बार आवली का असंख्यातवां भाग डिव्हिजन में बताया, क्योंकि आगे वह नौ बार मल्टिप्लिकेशन में जानेवाला है। ऐसे ही जहां विशेष अधिक बतानेवाले हैं वह संख्या भी विशेष हीन में बता दो। उसको हम छोटे से उदाहरण द्वारा समझेंगे। जैसे हमारे पास आगे चलकर तीन बार विशेष अधिक विशेष अधिक होकर ५०० संख्या होनेवाली है – अभी हम उसको तीन बार विशेष हीन बतायेंगे। तो विशेष हीन के लिये देखो हम ऐसा बतायेंगे कि ५०० को हम तीन बार ५ से भाग देंगे और तीन बार ४ से गुणा करेंगे। $\frac{५०० \times ४ \times ४ \times ४}{५ \times ५ \times ५}$।

देखो, जब हमने ४ से भाग देकर ५ से गुणा किया था तो वह विशेष अधिक में चला गया था। उलटा करो, ५ से भाग देकर ४ से गुणा करो, वह विशेष हीन में चला जायेगा। यह ठीक है न? क्योंकि जब हमने ५०० को ५ से भाग दिया तो कितने आये? १०० आये और उसको ४ से गुणा किया तो ४०० आये। विशेष हीन में चले गये ना। पहले विशेष अधिक में थे अब विशेष हीन में हैं – तो हम उलटी संख्या से उसको अभी हम भाग देंगे तो इसकी व्हॅल्यू निकालते हैं। ५०० को तीन बार ५ से भाग देकर तीन बार ४ से गुणा किया था। एक बार किया तो $\frac{५००}{५} \times ४ = ४००$ आये। दूसरी बार किया तो $\frac{४००}{५} \times ४ = ३२०$ आये और तीसरी बार किया तो $\frac{३२०}{५} \times ४ = २५६$ आये अर्थात् $\frac{५०० \times ४ \times ४ \times ४}{५ \times ५ \times ५} = २५६$। अब आगे चलकर उसमें विशेष अधिक होनेवाला है, जब विशेष अधिक होनेवाला है, तो उसको एक बार ५ से गुणा करो और ४ से भाग दो, उलटी संख्या से।

पहले हमने ५ से भाग देकर ४ से गुणा किया था अब आगे विशेष अधिक की बात आनेवाली है तब हम इसको कितना गुणा करेंगे? तो हम उसको ५ से गुणा करेंगे और ४ से भाग देंगे तो विशेष अधिकवाली बात होगी। तो इसमें से हम एक बार कॅन्सल करेंगे, आगे विशेष अधिक आनेवाला है और पहले हमने विशेष हीन में बता दिया है। पहले हमने क्या किया था तीन बार ५ से भाग देकर तीन बार ४ से गुणा किया था। आगे जब विशेष अधिक होना है तो हम एक बार ५ से गुणा करके ४ से भाग देंगे। तो यह ४ और यह ५ दोनों कॅन्सल हो गये इसके साथ – यह ख्याल में आयी बात?

$\frac{५००\,|\,४\,|\,४\,|\,\cancel{४}}{५\,|\,५\,|\,\cancel{५}} \times \frac{\cancel{५}}{\cancel{४}}$ गुणा करके विशेष अधिक बताने के लिये इसतरह लिखने की पद्धति है। यह बात ख्याल में आती है कि नहीं आती? इसकी व्हॅल्यू कितनी हुयी? यानी अब ५०० को दो ही बार ५ से भाग हुआ है और दो बार ४ से गुणा हुआ है। कितनी आ जायेगी? यहां आ जायेगी २० और गुणा १६ = ३२० आ गये। यानी २५६ से ३२० विशेष अधिक हुये ना। हमने उसके उलटे रूप में पहले लिखकर रखा है और इसके लिये विशेष अधिक हो जायेगा तो उसका उत्तर आ जायेगा। अब आगे एक बार और हम करेंगे $\frac{५००\,|\,४\,|\,\cancel{४}}{५\,|\,\cancel{५}} \times \frac{\cancel{५}}{\cancel{४}}$ तो यह भी कॅन्सल हो जायेगा। तो कितना आ जायेगा? ४०० आयेगा उत्तर, वह ३२० से विशेष अधिक होगा। आगे इसको भी कॅन्सल कर दो $\frac{५००\,|\,\cancel{४}}{\cancel{५}} \times \frac{\cancel{५}}{\cancel{४}}$ तो कितना आ जायेगा? ५०० आ जायेगा।

ऐसे ही पहले हमने उसको विशेष हीन-विशेष हीन करने के लिये $\frac{४}{५}$ से गुणा किया था उसीको हम आगे विशेष अधिक करने के लिये उसको उलटा करके $\frac{५}{४}$ से गुणा करेंगे। जो हमने यहां आवली के असंख्यातवें भाग प्लस वन से भाग दिया था और ऊपर के अंश में आवली के असंख्यातवें भाग से गुणा किया था। अब उलटा करके आगे गुणा करेंगे तो उतना उसमें अधिक हो जायेगा। बस यह पद्धति है, यानी इसका क्या तरीका है उसको हमें देखना है। ये हमने अवगाहना के भेद देखे। है न! अब आगे बढ़ना है हमको। अवगाहना के भेदों में यही देखना है कि सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना से लेकर महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना तक कितने भेद होते हैं, उसमें अलग-अलग जीवसमासों

के–अपर्याप्तों का जघन्य, पर्याप्तों का जघन्य, अपर्याप्तों का उत्कृष्ट, पर्याप्तों का उत्कृष्ट ये सारी जो रेंज हैं उनकी यहां बातें बतायी हैं। तो उसको देखकर हमें पता चलता है कि सूक्ष्म निगोद की रेंज कहां से कहां तक है, सूक्ष्म वायुकायिकों की रेंज कहां से कहां तक है, फिर बादरों की रेंज कहां से कहां तक है ये सभी बातें यह टेबल देखने के कारण हमें ख्याल में आती हैं।

इसमें तो शुरुआत के जो कुछ असंख्यात भेद हैं वे सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त में ही घटित होंगे। जब वायुकायिक की और उसकी समान अवगाहना चलेगी तो उसका भी जन्म हम उसमें ले लेंगे। जहां से अग्निकायिक भी उसमें शामिल हो जाते हैं तो उसके भी भव उसमें गिनेंगे। केवल यहां अवगाहना को देखना है, पर्याय को अभी देखना नहीं है। ये सारे अवगाहना के भेद हैं, ये कैसे गिनना? एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना जब-जब प्राप्त करेगा तब उसे गिनो, उसको अनुक्रम में ले लो। बिना अनुक्रम का तो अनंत बार अन्य-अन्य अवगाहना के साथ वहां जन्म होगा, आयु भोगेगा तो उसको नहीं गिनना है, उसके काल को गिनना है। यानी यह आगे-आगेवाली यानी एक-एक जो प्रदेश है वह एक प्रदेश बढ़कर ही अवगाहना होनी चाहिये तभी उसको हम कन्सिडर करेंगे, अन्यथा नहीं करेंगे। तो यह क्रम, क्रम से होना बहुत काल के बाद होगा। ऐसी कोई न कोई अवगाहना तो हो रही है परंतु जब जो कोई होगी तब उसको टिक करते जाओ ऐसा नहीं है। क्रम से है तभी उसको ले लेना है, इसके लिये ये सारे अवगाहना के भेद हमने देख लिये हैं। तो यह क्या हुआ? स्वक्षेत्रपरिवर्तन।

श्रोता: पर यहां पर जो लब्धिअपर्याप्तों की बात चल रही है तो वहां अपर्याप्तों की जो है यानी २८ नंबर तक, तो उसमें पंचेन्द्रिय जीव भी आते हैं तो क्या उनकी अवगाहना भी छोटी होगी? हां, देखो-देखो – पेज नंबर १८८ – देखो टेबल निकालना है आप सबको – पहली पुस्तक में १८८ पृष्ठ। आपका प्रश्न यह है – हां आप पंचेन्द्रिय की बात पूछ रहे हैं, कौनसे कोठे की बात पूछ रहे हैं? *श्रोता: पांचवां, सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की बात।* सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तों की ना? *श्रोता: हां।* उत्कृष्ट अवगाहना, हां? *श्रोता: क्या वह अवगाहना पंचेन्द्रिय अपर्याप्तों से भी बड़ी होगी?* हां, ये क्या प्रश्न पूछ रहे हैं – कोठा नंबर ३ में १६ नंबर पर कौन है?

(१) सक्ष्म निगोद १ वायु २ तेज ४ अप् ४ पृथ्वी ५ इन पांच अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(२) बादर वायु ६ तेज ७ अप् ८ पृथ्वी ९ निगोद १० प्रति. प्रत्येक ११ इन छह अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(३) अप्रति. प्रत्येक १२ द्वीन्द्रिय १३ त्रीन्द्रिय १४ चतुरिन्द्रिय १५ पंचेन्द्रिय १६ इन पांच अपर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(४) सूक्ष्म निगोद १७ वायु १८ तेज १९ अप् २० पृथ्वी २१ इन पांच पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(७) बादर वायु २२ तेज २३ अप् २४ पृथ्वी २५ निगोद २६ प्रति. प्रत्येक २७ इन छह पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(१०) अप्रति. प्रत्येक ५० द्वीन्द्रिय ५१ त्रीन्द्रिय ५२ चतुरिन्द्रिय ५३ पंचेन्द्रिय ५४ इन पांच पर्याप्तों की जघन्य अवगाहना।	(११) त्रीन्द्रिय ५५ चतुरिन्द्रिय ५६ द्वीन्द्रिय ५७ अप्रति. प्रत्येक ५८ पंचेन्द्रिय ५९ इन पांच अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।	(१२) त्रीन्द्रिय ६० चतुरिन्द्रिय ६१ द्वीन्द्रिय ६२ अप्रति. प्रत्येक ६३ पंचेन्द्रिय ६४ इन पांच पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।
			(५) सूक्ष्म निगोद २८ वायु २९ तेज ३० अप् ३१ पृथ्वी ३२ इन पांच अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।	(८) बादर वायु ३३ तेज ३४ अप् ३५ पृथ्वी ३६ निगोद ३७ प्रति. प्रत्येक ३८ इन छह अपर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।			
			(६) सूक्ष्म निगोद ३९ वायु ४० तेज ४१ अप् ४२ पृथ्वी ४३ इन पांच पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।	(९) बादर वायु ४४ तेज ४५ अप् ४६ पृथ्वी ४७ निगोद ४८ प्रति. प्रत्येक ४९ इन छह पर्याप्तों की उत्कृष्ट अवगाहना।			

पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना वहां लिखी है – नंबर १६ पर। उससे १७ नंबर कितने गुणा है? असंख्यातगुणा, १६ से १७ असंख्यातगुणा है। फिर १७ से २८ विशेष अधिक है, तो आप यह बात पूछ रहे थे कि यह २८ नंबर पर सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना है और १६ नंबर पर हमने पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना देखी। तो प्रश्न यही है कि उस पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की जघन्य अवगाहना से सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यातगुणा है; थोड़ी ज्यादा नहीं, असंख्यातगुणा

है। यानी यह तो पंचेन्द्रिय और वह तो निगोद है, ख्याल में आती है बात? इससे तो हमें इस बात का पता चलता है कि सूक्ष्म यानी छोटा और ये दूसरे हैं तो बड़े हैं यानी ये बादरवाले की अवगाहना बहुत बड़ी है इसलिये उसे बादर कहते हैं और सूक्ष्म की बहुत छोटी है इसलिये उसे सूक्ष्म कहते हैं - ऐसा नहीं है। उसमें भी जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक अवगाहना की रेंज है। इससे यही तो बात पता चलती है हमें, इसलिये यह प्रश्न था।

श्रोता: यह निश्चित नहीं है न कि कौनसी अवगाहना होगी? यह निश्चित है क्या?

निश्चित यानी? जीव अपनी अपनी अवगाहना लेकर जन्म लेगा। निश्चित यानी क्या? कभी छोटी अवगाहना, कभी बड़ी अवगाहना लेकर उत्पन्न होता है उसमें सारे नामकर्म के उदय निमित्त हैं। *श्रोता: लेकिन इनसे बड़ी है?* देखो, १६ नंबर पर जो है वह पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की मिनिमम अवगाहना है। मॅक्झिमम की बात नहीं है, उत्कृष्ट जो है पंचेन्द्रिय अपर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना जो है वह तो यहां पर चली गयी – पंचेन्द्रिय अपर्याप्तों की उत्कृष्ट *श्रोता: ग्यारहवें कोठे में है।* – ५९ नंबर पर चली गयी। कोठा नंबर ११ में – ५९ नंबर पर चली गयी, यानी उसकी रेंज उतनी होगी। पंचेन्द्रिय अपर्याप्तों की जघन्य से उत्कृष्ट तक इतनी बड़ी रेंज होगी। ये हरेक जीवसमास के जघन्य से उत्कृष्ट तक के अवगाहना के भेद हम उसमें देख सकते हैं।

श्रोता: पहले नंबर से लेकर दूसरे नंबर तक – पहला कोठा सूक्ष्म निगोद का है और उसमें दूसरा नंबर है वायु का तो सूक्ष्म निगोद से लेकर वायुकायिक तक असंख्यात भेद हो जायेंगे? हां। *श्रोता: तो बीच में अगर भव की अपेक्षा से बात करें तो बीच में सारे भव सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्तवाले ही होंगे?* उसके ही होंगे मतलब उसीको कन्सिडर करना। *श्रोता: हां उसीको कन्सिडर करना, ऐसे ही अगर १२वें नंबर के कोठे में चले जावें तो ६३ और ६४ नंबर के बीच में असंख्यात भेद हो जायेंगे तो उसके सारे भव महामत्स्य के ही होंगे?* महामत्स्य के नहीं, उसके नजदीकवाले यानी अप्रतिष्ठित प्रत्येक के ऊपर की अवगाहनावाले अन्य पंचेन्द्रिय जीव भी होंगे उनको वहां ले सकते हैं। *श्रोता: हां तो इसमें भव अगर देखते हैं तो महामत्स्य के ही आते हैं कि और भी आयेंगे?* ही यानी महामत्स्य अकेला नहीं और भी मत्स्य होंगे या अन्य भी जो कोई होंगे उस अप्रतिष्ठित प्रत्येक से ज्यादा अवगाहनावाले होंगे। आप उसमें डायनासॉर को ले लो और क्या क्या ले लो, हं।

यानी वहां भी एक एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना चाहिये। अवगाहना की ही बात चल रही है, हां। क्योंकि बीच में अन्य पर्याय तो प्राप्त होगी ही होगी, निश्चितरूप से होगी परंतु उनको हमें क्रम में नहीं गिनना है। बात क्या है, हम क्रम उसीका लेंगे जिस क्रम से यहां अवगाहना का एक एक प्रदेश से बढ़ता हुआ भेद है उसको लेंगे।

श्रोता: मतलब एक निगोद शरीर के आश्रय से अनंत निगोदिया जीव रहते हैं तो फिर सभी की एक ही अवगाहना कही जायेगी तो जन्म के बाद मतलब कि इस निगोद शरीर के मतलब जैसे अपनी बढ़ती है ऐसी उनकी भी बढ़ती होगी श्वास के अठारहवें भाग में? अवगाहना में, हां, क्योंकि अभी हमने देखा था न कि तीसरे समय में उनकी अवगाहना कम हो जाती है... *श्रोता: तो जैसे अपने में बढ़ती होती है ऐसी निगोदिया जीवों में भी शरीर की बढ़ती होगी?* अभी कितनी बढ़ती होगी ऐसा तो क्या है ऐसा कहीं विशेष मेरे पढ़ने में नहीं आया है। *श्रोता: और जो एक साथ जन्मते हैं तो सारे के सारे जीवों की विग्रहगति होगी?* ये जरूरी नहीं, कोई ऋजुगति से आयेगा कोई मोड़ से आयेगा... *श्रोता: जिसने वहीं का वहीं जन्म लिया, तो उसको तो ऋजुगति नहीं होगी वहीं जन्म लिया है तो?* हां नहीं होगी, और वहीं का वहीं जन्म लिया यह भी जरूरी नहीं है। *श्रोता: इन केस लिया तो उसको तो ऋजुगति का भी समय नहीं होगा ना?* यानी वही समय कह लेंगे ना? ऋजुगति का भी एक समय होता है। ऋजुगति में मान लो यहां से उसको दस माइल जाना है तो भी एक समय और वहीं पर जन्म लेना है तो भी एक समय। *श्रोता: बराबर।* समय तो वही काउंट होगा क्योंकि वहां बीच में उसके अनाहारक नहीं था बस इतनी बात है।

श्रोता: यह जो महामत्स्य १००० योजन की उत्कृष्ट अवगाहनावाला है उससे कम बाकी के जो महामत्स्य की अवगाहना बची उसमें महामत्स्य के एक एक प्रदेश से बढ़ते हुये महामत्स्य में जन्म लेना पड़ेगा?

हां, उसमें लेना पड़ेगा क्योंकि लास्टवाले अवगाहना के सभी भेद महामत्स्य के ही होंगे। तो उतनी बार उसको महामत्स्य में ही जन्म लेना पड़ेगा और हो सकता है कोई महामत्स्य है, मिथ्यादृष्टि है और हो सकता है सातवें नरक में चला गया तो वह अवगाहना का भेद बदल गया। अब सातवें नरक में से मरकर कोई हिंस्र श्वापद हुआ तिर्यंच में। नरक में से कोई महामत्स्य में उत्पन्न नहीं होता, क्या कहा? महामत्स्य है वह नरक में

उत्पन्न होता है परंतु नारकी वह महामत्स्य में उत्पन्न नहीं होगा। क्यों नहीं होगा? *श्रोता: क्योंकि वह सम्मूर्च्छन है।* क्योंकि वह सम्मूर्च्छन है और नारकी मरकर गर्भज तिर्यंचों में ही जन्म लेते हैं, संज्ञी पंचेन्द्रियों में। यानी उस जीव को फिर दुबारा सातवें नरक में जाना है तो फिर महामत्स्य होकर फिर जाना पड़ेगा, डायरेक्ट नहीं जा सकता वह गर्भजवाला। *श्रोता: अच्छा, कोई भी गर्भज सातवें नरक में...* गर्भज तिर्यंच नहीं जाता है, मनुष्य जाता है।

तो इन अवगाहनाओं के भेदों में और कुछ जानना है या आगे बढ़ेंगे? थोड़ी परक्षेत्र की बात करेंगे। स्वक्षेत्र की बहुत हो गयी, हम कहेंगे हमें पर में ज्यादा रुचि है इसलिये परक्षेत्र को भी जरा समझाओ। यह लोक क्या है, इसमें कहां क्या है ये बातें मालूम नहीं हैं तो हमने कहां कहां जन्म लिया है उसको बताओ तो सही। केवल पूरे लोक में लिया है इतना कहने से समाधान नहीं होता है। है न! तो हम देखते हैं, कल हमने देखा था लोक क्या है तो पूरे आकाश द्रव्य के सेंटर में, बहुमध्यभाग जिसको कहा था, आकाश के अनंतवें भाग में यह लोक है, लोकाकाश है। लोक यानी यहां आकाश के साथ अन्य पांच द्रव्य देखने में आते हैं इसलिये इसका नाम है लोक। लोक कहने से ये सभी छह द्रव्य आ गये न उसमें? लोकाकाश में आकाश इटसेल्फ भी है और बाकी पांच द्रव्य भी हैं। तो ये छह द्रव्यों का समूह जो है उसको लोक कहेंगे और केवल लोकाकाश भी कहेंगे तो वह आकाश का पार्ट है ऐसा हम उसको समझेंगे। तो लोक कहो, विश्व कहो एक ही बात है। तो यहां जहां लोक है उसकी जो भौगोलिक रचना है जिसको हम कहेंगे कहां क्या है। हमने देखा था उसका हम तीन लोक में डिव्हिजन करते हैं ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक। लोकाकाश का आकार तो हमने देखा था। देखो जैन भूगोल पुस्तक में चार्ट नंबर १।

यहां हमें लोक की रचना भी इसलिये देखनी है क्योंकि आगे चलकर कौन जीव कहां उत्पन्न होते हैं वह भी देखना है। इसलिये अभी इसका थोड़ा क्षेत्र देख लेते हैं तो हमें आगे के विषय के लिये ठीक रहेगा। *श्रोता: बहुतों का प्रश्न है कि यह त्रसनाली आपने नीचे तक क्यों नहीं दिखायी है?* हां, कल इसकी बात हुयी थी न। *श्रोता: नहीं आयी समझ में।* फिर से-दुबारा सुनना। चार्ट निकालो तो प्रश्न समझ में आयेगा। १ नंबर का चार्ट मिला न सबको? यह पूरा लोकाकाश का एक चित्र बनाया है। वह काले रंग की बॉर्डर है न। यह

जो लोकाकाश का आकार हम ऐसा ऐसा हीनाधिक देखते हैं वह तो १ नंबर के चार्ट में लेफ्ट साइड में ऊपर से नीचे तक दिखाया है। आप २ नंबर का चार्ट देखो तो आपको समझ में आयेगा। हमेशा हम ऐसा लोकाकाश का आकार देखते आये हैं और यहां जो १ नंबर के चार्ट में बताया है उसको ऐसा पीछे की तरफ ऐसा तिरछा बताया है, ऐसा क्यों? क्योंकि यह तो लोकाकाश ऐसा ही है, जिसको हम थ्री डायमेन्शनल कहेंगे। यह जो वातवलयवाला चित्र है आपके सामने २ नंबर के चार्ट में, वह तो फ्रंट व्ह्यू है। वह केवल उसकी एक साइड हमको दिख रही है परंतु थोड़ा उसको तिरछा करेंगे तो वह पीछे कहां तक फैला है यह हमें पता चलता है। वह पीछे कहां तक फैला है तो सर्वत्र ७ राजू फैला हुआ है।

यह जो १ नंबर का चार्ट, १ नंबर का चित्र आपको दिख रहा है उसमें क्या है, तो उसमें बीच में ब्लू कलर का एक चौकोर ऊपर से नीचे तक फैला है। इसे त्रसनाली कहते हैं। इसकी हाइट कितनी है, तो चौदह राजू। तो लोगों को क्या लगता है कि यह नीचे तक क्यों नहीं लायी है? तो आप गिनना–जहां से ईषत् प्राग्भार लिखा है न, वहां से नीचे ७ राजू लिखा है उसके नीचे की लाइन–वहां तक की जो हाइट है आपके पास पेन्सिल है या अन्य जो कुछ है उससे आप नापो, ऐसा पकड़ो, इतनी है, उतनी ही लाइन वह त्रसनाली के ऊपर के छेड़े से नीचे तक नापो, वह उतनी है कि नहीं देखो। क्योंकि उसको ऊपर से शुरू की थी, नहीं समझे? ऊपर का जो भाग है न ईषत् प्राग्भार पृथ्वी का वह ऐसा आड़ा फैला है। पूर्व-पश्चिम ऐसा एक राजू और दक्षिणोत्तर ऐसा सात राजू। एकदम ऊपर लोकाकाश का टॉप जो है वह ऐसा पूर्व-पश्चिम एक राजू है, बराबर है? और ऐसा अंदर दक्षिणोत्तर कितना फैला है? सात राजू। और त्रसनाली कहां से शुरू हुयी? इसके बीचोबीच में से। फ्रंट में त्रसनाली नहीं है सेंटर में है। ऊपर जो १ राजू बाय ७ राजू एरिया है लोकाकाश की, उसके बराबर बीच में से वह त्रसनाली शुरू होकर नीचे तक गयी है तो चित्र में कैसी दिखेगी वह?

यह देखो चार्ट नंबर १, यहां लोकाकाश ऊपर से नीचे तक १४ राजू है। बराबर है? अब यह त्रसनाली थोड़ा ऊपर जाकर यहां से शुरू हुयी है और इसको भी आप नापो, जहां नीचे तक लाकर चित्र में दिखाया है वह भी १४ राजू है। आप किसी भी मेझरमेंट से

उसको नापो वह भी उतनी ही है हाइट में जितनी यह लोकाकाश की हाइट है। क्योंकि थ्री डायमेन्शन में बताते हुये ऐसा पीछे की बाजू से शुरू हुयी है ऊपर जाकर तो वहीं पर जाकर वह रुकेगी। यह नीचे के बेस को चिपकी है यानी कि उसमें आकर स्थित हुयी है, बेस जो है उसका, तल जो है। क्योंकि तल का चित्र नहीं बताया है ऐसे। क्योंकि वह उस साइड में है न, वह सामने से नहीं दिखेगा। परंतु वह है तो उतनी ही एक्झॅक्ट, लोकाकाश के अंत को स्पर्श करती हुयी, ऊपर भी और नीचे भी। यानी यह पूरा जो लोक है तो लोक की आउटर बॉर्डर में क्या है? ऊपर नीचे सब जगह? तो कहते हैं वातवलय है। ऐसा नहीं है कि लोक के बाहर वातवलय है, वातवलय भी लोक का ही पार्ट ॲण्ड पार्सल है। वह तो आउटरमोस्ट लिमिट है उसकी। नीचे भी, ऊपर भी और साइड में भी। तो ये ऊपर नीचे और साइड में कैसे हैं? उसके लिये आप २ नंबर का चार्ट देखना। अब इसके लिये पहले पृथ्वियां देख लो फिर मैं उसको समझाऊंगी।

लोक में अधोलोक में क्या है? तो हम जिस पर रहते हैं, हम मध्यलोक में रहते हैं, हम पृथ्वी के ऊपर रहते हैं। पृथ्वी यानी हमारी वह स्कूलवाली गोल पृथ्वी नजर के सामने नहीं लाना। हमने समझाया था कि हरेक के पारिभाषिक शब्द अलग होते हैं – यहां पृथ्वी का अर्थ क्या है? जो लोकाकाश के एक एज से-बाजू से दूसरे एज तक-बाजू तक, एक एण्ड से दूसरे एण्ड तक फैली हुयी है उसको हम पृथ्वी कहेंगे। तो लोकाकाश कैसा है तो नीचे तल में ७ राजू पूर्व पश्चिम और ७ राजू दक्षिण-उत्तर है, वहां कोई पृथ्वी नहीं है। परंतु मध्यलोक की बात हम करेंगे। मध्यलोक में पहली पृथ्वी पूर्व-पश्चिम एक राजू है और दक्षिण-उत्तर ऐसी सात राजू फैली हुयी है। यानी मध्यलोक में जो पृथ्वी है वह ऐसी पूर्व-पश्चिम एक राजू और ऐसी दक्षिण-उत्तर सात राजू है और उसकी जो कुछ मोटाई-चौड़ाई है वह वहां पर लिखी है। लोकाकाश नीचे कैसा होता चला जाता है? ऐसा फैलता हुआ। तो नीचे-नीचे की जो पृथ्वियां हैं वे पूर्व-पश्चिम लेंथ में भी बड़ी-बड़ी होती चली जाती हैं परंतु दक्षिण-उत्तर सर्वत्र ७ राजू ही रहती है। परंतु उनकी मोटाई जो है वह पतली-पतली होती चली जायेगी। तो यहां १ नंबर के चार्ट में देखना। सेंटर में जो लिखा है एक राजू और वह जो ब्लॅक लाइन है उसके नीचे लाल लाइन है और उसके नीचे पीली लाइन है, वे तीनों मिलकर पहली पृथ्वी एक पृथ्वी है। वह ऐसी पूर्व-पश्चिम तो एक राजू है और पीछे तक दक्षिण-उत्तर फैली हुयी है। वह पीछे तक कितनी फैली हुयी है? सात राजू,

क्योंकि सर्वत्र सात राजू है। यानी यह जो पहली पृथ्वी है वह लोकाकाश के पूर्व से पश्चिम तक और दक्षिण से उत्तर तक फैली है उसको पृथ्वी कहते हैं।

देखो हम लौकिक में जिसको पृथ्वी कहते हैं वह गोल है उसका क्या हुआ ऐसा प्रश्न है। अभी वह प्रश्न मत उठाना, पहले क्या है उसको समझ लो फिर वह क्यों गोल दिखती है, हमें क्यों नहीं दिखता है बिना चश्मे के या चश्मा लगाकर क्यों ऐसा दिखता है, हमें सूर्य ऐसा यूं ऊपर से नीचे आता दिखता है, हमें रेल की पटरियां जो पॅरलल है वे मिलती हुयी दिखती हैं; ये सब ऐसे क्यों दिखते हैं वह तो बाद में देखेंगे हम। हमें जो इन्द्रधनुष दिखता है, उसका फोटो भी हमने लिया है तो आज तक कोई इन्द्रधनुष पर गया है क्या? क्यों नहीं गया? अरे वह आपके अँगल से दिख रहा है, दूसरे अँगल में जाकर देखो वह नहीं दिखेगा। वे विशिष्ट जो कुछ बातें दिखायी दे रही हैं, हम फोटो भी ले रहे हैं, वह ऐसा क्यों दिखता है उसका कुछ अलग कारण है, कारण नहीं है यह बात नहीं है। परंतु अभी हम वस्तुस्थिति क्या है उसको समझेंगे, त्रिलोक की रचना कैसी है उसको समझेंगे। हमें क्या दिखायी देता है? हमने क्या फाइंड आउट किया है? हमारे सायंटिस्ट ने क्या देखा है वह बात अभी गौण रखना। पहले हम सर्वज्ञ की बात सीखेंगे क्योंकि आज का सायंटिस्ट जो कहता है, अभी हजार साल की बात नहीं पचीस साल के बाद का नया सायंटिस्ट कहेगा कि ये बातें झूठी हैं, हम कहते हैं वह सत्य हैं।

तो हम सर्वथा जो सत्य है, जो सर्वज्ञ ने बताया है उसको पहले देखेंगे। इसको हमारे नॉलेज के साथ कम्पेअर नहीं करना है, हमारी बुद्धि कैसी है? जैसे एक छोटा कप है हाथ में और हमें नापना है समुद्र का पानी, तो ऐसा मत करना। अभी जो बातें सर्वज्ञ ने बतायी हैं, जो आज तक हमारे आचार्यों के द्वारा हमें प्राप्त हुयी हैं उनको हम पहले समझेंगे। उनमें से कुछ बातें हैं वे टॅली होती हैं कुछ बातें नहीं होती हैं। जो नहीं होती हैं उनका अगर उत्तर मिल जाये तो अच्छा है, उनके बारे में अपने दिमाग के बहुत चक्कर चलाने की जरूरत नहीं है। ख्याल में आती हैं बातें? उनके उत्तर नहीं हैं वह बात नहीं है, परंतु पहले ये पूरी सत्य बातें हम सुन लेंगे और फिर उनके साथ आप कम्पेअर करते रह जाओ। तो जो पृथ्वी – पृथ्वी किसको कहना? लोकाकाश के एक सीरे से दूसरे सीरे तक, एक एण्ड से दूसरे एण्ड तक जो फैली है वह पृथ्वी कहलाती है। स्वर्गों के विमान कहलाते हैं, वे भी पृथ्वी के

खण्ड हैं। वे भी पृथ्वीकायिकों से बने हैं, वे पृथ्वी के खण्ड हैं इसलिये उनका नाम विमान है। विमान यानी हम हवाई जहाज में जाते हैं और देव विमानों में बैठकर नंदीश्वर द्वीप जाते हैं वे विमान उनके वाहन हैं और ये ऊपर जो विमान कहेंगे हम, सोलह स्वर्गों के विमान हैं वे उनके रहने के ठिकाने हैं।

तो ये आठ पृथ्वियां हैं। हम जिस पर रह रहे हैं वह पहली पृथ्वी है। वह एक राजू बाय सात राजूवाली है और उसकी मोटाई साइड में लिखी है, १ लाख ८० हजार योजन की है। लेफ्ट साइड में योजनों में मोटाई लिखी है देखो, एक ही चार्ट में सब लिखने का प्रयत्न किया है। उस पहली पृथ्वी का नाम क्या है? उसके दो प्रकार से नाम हैं, उसका नाम है रत्नप्रभा पृथ्वी, उसीका दूसरा नाम है घर्मा। उसमें ये जो पटल होते हैं अलग-अलग, उन पटलों की बात हम बाद में करेंगे, क्योंकि नरक कहां हैं, वे पटल कहां हैं – वह सब बात हम बाद में करेंगे। अभी केवल पृथ्वियां कौन-कौनसी हैं उसकी बात करेंगे हम। अब उसके नीचे दूसरी पृथ्वी है, हम जिस पर रहते हैं वह पहली पृथ्वी है। नीचे जायेंगे तो लोकाकाश नीचे ऐसा फैलता हुआ जाता है तो उसकी जो दक्षिणोत्तर चौड़ाई है वह सात राजू ही रहेगी परंतु पूर्व-पश्चिम में उसकी चौड़ाई जो है ऐसी आड़ी वह बढ़ जायेगी। वह कितनी हो जाती है? अभी इसके गणित हम नहीं बतायेंगे। वहां कैसा लिखा है? १३ बटे ७ उसका अर्थ क्या है? एक पूर्णांक छह सप्तमांश। क्योंकि छह राजू तक नीचे जाना है और उसमें वह समान रूप से बढ़ती चली जायेगी। अभी इसके गणित को गौण करो, केवल हम उसकी मोटाई देखेंगे।

पहली पृथ्वी की मोटाई कितनी थी? १ लाख और ८० हजार योजन, दूसरी की कितनी है? ३२ हजार योजन। अब तीसरी की? वह और फैलेगी और बड़ी होगी, उसकी मोटाई २८ हजार योजन की है, चौथी की २४ हजार योजन, पांचवीं की २० हजार योजन, छठी की १६ हजार योजन और सातवीं पृथ्वी की मोटाई ८ हजार योजन है। इन पृथ्वियों के अंदर क्या है? *श्रोता: नरकों के बिल हैं।* हां, नरकों के बिल हैं। पर पूरी ये पृथ्वी ऐसी फैली है उसमें हैं? नहीं, त्रसनाली का जो भाग है उसके अंदर हैं। तो देखो पहली पृथ्वी के अंदर ऊपर १६ हजार योजन है और फिर ८४ हजार योजन है, फिर ८० हजार योजन है। जो ८० हजार योजनवाली मोटाई है उसीमें नरक के बिल हैं। १६ हजार

योजनवाले को क्या कहते हैं मालूम है? *श्रोता: खरभाग।* खरभाग, और ८४ हजार योजनवाला बीचवाला है वह? *श्रोता: पंकभाग।* पंकभाग और नीचे का ८० हजार योजनवाला है वह? *श्रोता: अब्बहुलभाग।* अब्बहुलभाग। उस अब्बहुलभाग में तेरह पटल हैं, पटल यानी लेअर्स हैं अलग-अलग और उनमें नरकों के बिल पाये जाते हैं। यहां तक बात ख्याल में आयी? कितने बिल हैं? तो बिलों की संख्या राइट साइड में लिखी है देखो, ३० लाख बिल हैं। पहले नरक के तेरह पटलों में मिलकर ३० लाख बिल हैं। अब दूसरी पृथ्वी में, उसका नाम क्या है? शर्कराप्रभा, उसका दूसरा नाम है वंशा, उसमें ग्यारह पटल हैं और वहां २५ लाख बिल हैं।

बिल समझते हैं? नारकी जिसमें रहते हैं ऐसी जो अंदर से पोली रचना-कॅव्हिटीज् हैं, हां, वे जमीन के अंदरवाले यानी पृथ्वी के अंदरवाले ऐसे स्थान हैं, अनेक योजनों के होते हैं बड़े-बड़े, असंख्यात योजनों के भी होते हैं तो उसके अंदर नारकी रहते हैं। यह सब हम जो नरकों का वर्णन पढ़ते हैं न, वह वहीं पर अपने अपने बिलों में सब होता है। *श्रोता: पृथ्वी के नीचे के भाग में होते हैं जन्मस्थान? बिल?* ऐसी जो कॅव्हिटी होती है जैसे हमारा हॉल है, हॉल जैसी कॅव्हिटी होगी उनकी, तो उसके वहां छत में उनके जन्मस्थान होते हैं। उसके अंदर भी ऐसे नुकीले शस्त्र जैसी बातें होती हैं, छह पर्याप्ति वहीं पूर्ण होकर उस नारकी के शरीर की पूर्ण रचना हो जाती है, कटते कटते वहीं से नीचे जमीन पर, वहां बिलों की जमीन पर, बिलों का जो तल होगा, हां, वह जो अंदर कॅव्हिटी है उसका जो वहां पर तल होगा उसमें जो नुकीले शस्त्र आदि होते हैं, उस पर वे गिरते हैं जोर से, इतने तीन-तीन सौ योजन ऊपर से टपकेंगे नीचे, तो टपकते हैं तो जैसे बॉल उछलता है वैसे वे उछलते हैं। फिर नीचे टपकते हैं और फिर वे कटते रहते हैं; यानी वहीं से ये तकलीफवाली बातें वहां की चालू हो जाती हैं। *श्रोता: बिलों के अंदर ही?* अंदर ही अंदर टपकना है। *श्रोता: नीचे नहीं जाते?* नीचे क्यों? पृथ्वी तो उसके बाहर है। ये जो अंदर उनके जो कोई कॅव्हिटीज् हैं, उनके नीचे कोई तो बेस तो हैं न उनका, जैसे हमने हॉल यह बनाया है। हॉल तो हमने रचना करके बाद में किया है वहां तो उसके अंदर बना है जैसे हमारे यहां बोगदा, क्या कहते हैं उसको? *श्रोता: टनल।* टनल बनाते हैं, यह पहाड़ के अंदर से जो टनल बनी है, टनल में कुछ बेस है कि नहीं वहां पर? यह पूरी पृथ्वी जितनी मोटी है उसके नीचे के तल को टच नहीं करते कोई बिल। नीचे हजार योजन छोड़कर और ऊपर से हजार योजन छोड़कर

बीच में जो कुछ पृथ्वी है उसके अंदर उन बिलों की रचना है। उसमें भी सेंटर में एक-एक होता है उसको इन्द्रक बिल कहते हैं, फिर उसमें श्रेणीबद्ध, फिर प्रकीर्णक। उनके विस्तार में अभी नहीं जायेंगे हम, तो उन पृथ्वियों में ऐसे नरकों के बिल होते हैं।

श्रोता: नरकों के बिल इंटरकनेक्टेड हैं क्या? नहीं, नरकों के बिल इंटरकनेक्टेड नहीं हैं, वे असंख्यात योजनों के बिल हैं सारे वहां तो। *श्रोता: तो जिस बिल में जन्मता है उधर ही रहता है?* हां, जिस बिल में जन्मता है उधर ही रहता है। तो कहते हैं वे भवनवासियों के भवन भी ऐसे ही हैं, नहीं सुना आपने? भवनवासियों के भवन भी ऐसे ही हैं जमीन के अंदर, तो उनको तो भवन कहते हैं और नारकियों के जो रहने के स्थान हैं उनको बिल कहते हैं। ऐसा क्यों? ऐसी पार्शलिटि क्यों? अरे... *श्रोता: वे देव हैं, ये नारकी।* हं वे देव हैं, ये नारकी; हम रहते हैं वह महल और कोई गरीब रहते हैं वह झोंपड़ी, यह चूहे का है वह बिल। ऐसा है न, वहां पाप के उदय में, जो पाप भोगने के स्थान हैं वहां पर उन स्थानों में ऐसी ही कुछ रचनायें होती हैं इसलिये उनका नाम भी बिल है। उनके पाप का उदय है न, यहां पाप करके भोगने के लिये गये हैं वहां पर। हां, यहां तो करोड़ों की संपत्ति इकट्ठी करने के लिये बहुत सारा पाप किया, तो बहुत पाप किया तो वह भोगना भी तो पड़ेगा कि नहीं पड़ेगा? हां तो उसके लिये वहां चले जाते हैं। तो उन बिलों की रचना बहुत विस्तार से अभी नहीं देखेंगे, हम केवल यहां पृथ्वियों की रचना देखेंगे।

तो त्रसनाली के अंदर जो पृथ्वी का भाग है उसमें ऊपर और नीचे हजार - हजार योजन छोड़कर बीच में जो एरिया है पृथ्वी की, वह सॉलिड है पूरी भरी हुई, उसमें जो कॅव्हिटी, अंदर जो बिल जैसी रचना है तो उसमें नारकी रहते हैं। उनको कहेंगे नरकों के बिल। तो उनकी संख्या कहां कितनी है वह राइट साइड में लिखी है, देखो २५ लाख यह दूसरे नरक के बिलों की संख्या है। पहली पृथ्वी से दूसरी पृथ्वी के बीच में अंतराल है, कितना है? तो कहते हैं असंख्यात योजनों का है। असंख्यात योजन यानी कितना है? तो दूसरी पृथ्वी कितनी नीचे है हमारे से? कहते हैं एक राजू।

श्रोता: बीचमें क्या है वहां? अंतराल, यानी वहां तो सूक्ष्म जीव रहेंगे सारे। *श्रोता: नारकी भी रहेंगे?* नारकी बीच में नहीं रहते, नारकी तो पृथ्वी के – यह पृथ्वी सॉलिड है उसके अंदर उनके बिल हैं उनमें रहते हैं। एक पृथ्वी से दूसरी पृथ्वी एक राजू नीचे है।

श्रोता: बीच में क्या है? स्पेस है? स्पेस है, वहां सूक्ष्म जीव सब रहेंगे। *श्रोता: यह ग्राऊंड फ्लोअर है, यह फर्स्ट फ्लोअर है, यह सेकंड फ्लोअर है ऐसे आप करते जायेंगे तो बीच में क्या रहेगा?* देखो, जब एक ही पृथ्वी है उसके अंदर जो लेअर्स होंगे उसमें तो पृथ्वी होगी बीच में। परंतु एक पूरी पृथ्वी जैसे पहली पृथ्वी और नीचे दूसरी पृथ्वी उनके बीच में अंतराल है, गॅप है। *श्रोता: वातवलय है।* वातवलय तो पृथ्वी के नीचे है, बीच में, बीच में यानी वे वायुकायिक वगैरह सूक्ष्म होंगे, बादर नहीं होंगे, यानी उसको वातवलय नहीं कहेंगे हम। बस, वहां सूक्ष्म जीवों के रहने के ठिकाने हैं। *श्रोता: एकेन्द्रिय बादर होंगे बीच में बीच में?* बीच में बादर जीव नहीं रहते, बादर जीव वे पृथ्वियों के आधार से ही रहते हैं, बीच में जो-जो पृथ्वियां हैं उनके आधार से। *श्रोता: सूक्ष्म होंगे?* सूक्ष्म तो पूरे लोक में हैं, सूक्ष्म जीव पूरे लोक में रहते हैं और बादर जीव ये पृथ्वियों के आधार से रहेंगे। *श्रोता: लेकिन दूसरी जो पृथ्वी है उसके आधार से तो रहेंगे नीचे?* आधार से नीचे नहीं रहेंगे, उसके ऊपर रहेंगे या बीच में रहेंगे। *श्रोता: लेकिन बीच में ऐसा गॅप में नहीं रह सकते?* गॅप में नहीं रहेंगे – बादर जीव बीच में-अंतराल में नहीं रहेंगे। बादर जीव तो पृथ्वियों के आधार से ही रहेंगे। तो यह जो दूसरी पृथ्वी और पहली पृथ्वी यानी दूसरी पृथ्वी यहां से कितनी नीचे है? तो एक राजू नीचे है, दूसरी से तीसरी पृथ्वी और कितना नीचे जाना? एक राजू और नीचे। ऐसे एक-एक राजू के अंतराल से ये पृथ्वियां हैं इसलिये असंख्यात योजन कह दिया। *श्रोता: बड़ा, प्रमाण योजन लेना?* प्रमाण योजन लेना यहां पर, बड़ा योजन।

श्रोता: उन पृथ्वियों के बीच में जो स्पेस है वहां आकाश है? आकाश है न वहां पर, आकाश तो सर्वत्र है, पूरा लोकाकाश तो आकाश ही है, वह तो आकाश का ही पार्ट ॲण्ड पार्सल है, परंतु वहां पांचों प्रकार के सूक्ष्म जीव हैं, सूक्ष्म वायुकायिक, अग्निकायिक, जलकायिक ये सभी हैं वहां पर, सूक्ष्म निगोद भी हैं। *श्रोता: पंचेन्द्रिय तो त्रसनाली में ही है बाकी तो...* हां, त्रसनाली में ही होते हैं पंचेन्द्रिय और देव विहार करके जा सकते हैं। देव तीसरे नरक तक जाते हैं न, दो राजू नीचे तक जाते हैं यानी तीसरे नरक तक जाते हैं देव। *श्रोता: जैसे वायु अपने इधर होता है वैसा ही वहां होता है?* जो कुछ यथायोग्य होता होगा क्योंकि ये तो बादर हैं न वायु, सूक्ष्म वायुकायिक तो सर्वत्र होंगे और सूक्ष्म वायुकायिक आदि एकेन्द्रियों में तो विहायोगति नामकर्म का उदय नहीं है और यहां पर भी जो हम कहते हैं वायु बहती है वह तो फिजिकल जो उसके कॅरॅक्टर है उसके कारण होता है, जैसे

जल बहता है, तो जल बहता है तो क्या वह स्वयं गमन करता है? जैसे चींटी स्वयं गमन करके जाती है वैसे जल गमन करता है - चलता है? ढलान की ओर बहना तो जल का कॅरॅक्टर है यानी उस कायिक की ऐसी रचना है जैसे अग्नि की शिखा ऐसे ऊपर उठती है तो क्या अग्निकायिक जीव चलते हैं? ऊपर बढ़ते हैं? क्या होता है? वायु बहती है उसमें भी जहां गर्मी है उस ओर जाती है परंतु वायुकायिकों में और अग्निकायिकों में विक्रिया होती हैं।

श्रोता: श्वेतांबरों में इसको गति त्रस कहते हैं। अन्य श्रोता: सूक्ष्म वायुकायिक में नहीं रहेगी? उसमें विक्रिया नहीं रहेगी। *श्रोता: त्रसनाली के बाहर कुछ नहीं है?* त्रसनाली के बाहर स्थावर जीव हैं। *श्रोता: नहीं, नहीं, ये पृथ्वियां नहीं है?* पृथ्वियां तो हैं, पूरी फैली हैं, पृथ्वी लोकाकाश के अंत तक फैली है परंतु त्रसनाली के बाहर त्रस जीव नहीं हैं। नारकी भी सारे जो त्रसनाली के अंदर पृथ्वी का भाग है उसीके अंदर उनके बिल बने हैं। *श्रोता: त्रसनाली के बाहर पटल भी नहीं हैं, कुछ नहीं हैं?* नहीं, पटल तो नरकों के जो बिलों के लेअर्स हैं उनको हमने कहा था। अलग-अलग लेअर्स में जो नारकियों के बिल पाये जाते हैं उनको यहां पटल कहते हैं। ऐसे पटल हरेक पृथ्वी में कितने हैं तो पहली पृथ्वी में हमने देखा तेरह पटल हैं, दूसरी में ग्यारह पटल हैं, तीसरी में नौ हैं, चौथी में सात हैं, पांचवीं में पांच हैं, छठी में तीन हैं और सातवीं नरक तो एक ही सतह पर, एक ही लेव्हल पर यानी उसका एक ही पटल है, उसमें केवल पांच बिल हैं।

श्रोता: ये पटल त्रसनाली के अंदर हैं? नारकियों के बिल जो हैं वे त्रसनाली के अंदर जो पृथ्वी का हिस्सा है उसीमें होंगे। त्रसनाली के बाहर उनके बिल नहीं होंगे। *श्रोता: उनका कहना है पटल खाली त्रसनाली में हैं कि बाहर भी हैं?* नहीं, पटल तो बिलों के लेअर्स को ही कहेंगे न? पटल यानी जहां बिल एक लेव्हल पर हैं उसको एक पटल कहेंगे। उसके नीचे के लेव्हल पर जो हैं उसको दूसरा पटल कहेंगे। जैसे... *श्रोता: नारकी त्रसनाली के अंदर रहते हैं या बाहर?* अंदर, अंदर – नारकी त्रस हैं कि नहीं? तो त्रसनाली के बाहर तो रह ही नहीं सकते, ये सारे जो... देखो हमारे मध्यलोक में... *श्रोता: यह लाइन जो बतायी है?* कौनसी कलर? *श्रोता: नीचे कलर लाइन में बतायी है नरक?* कलर लाइन इसलिये बतायी है कि वह पूरी पृथ्वी है, पूरी पृथ्वी ऐसी मध्यलोक में ऐसी पूर्व-पश्चिम एक राजू

और ऐसी दक्षिणोत्तर सात राजू है, पृथ्वी। परंतु नारकी उसमें एक राजू बाय एक राजू एरिया में ही होंगे, बीच में उसीके अंदर सेंटर में, जहां वह ब्लू ऊपर से नीचे बताया है वह त्रसनाली है। पृथ्वी भले ही पूरी फैली है, पूरी पृथ्वी में नारकी नहीं हैं, बस उसके त्रसनाली की जो एरिया है बीचवाली, सेंटरवाली, एक राजू बाय एक राजू, उसीके अंदर ये सब रचना होंगी।

श्रोता: त्रसनाली के अंदर है कि बाहर? हां, बिल भी – देखो जहां नारकी के बिल हैं वहीं नारकी रहते हैं – त्रसनाली के बाहर कोई रचना ही नहीं है जहां कि त्रस रहते हैं वैसी। देवों के विमान भी सारे त्रसनाली के अंदर हैं, देव विहार करके भी त्रसनाली के बाहर नहीं जा सकते। विहार करके जो आयेंगे, त्रसनाली एक राजू बाय एक राजू एरिया जो ऊपर से नीचे तक है, तो मध्यलोक में भी यहां आयेंगे, स्वयंभूरमण समुद्र तक विहार करके जा सकते हैं, परंतु वह एक राजू की एरिया में है न, त्रसनाली के अंदर है वह। उसके बाहर तो देव भी नहीं जायेंगे विहार करके। नरकों की सारी जो कुछ रचनायें हैं बिलों की वगैरह वह भी उसके अंदर ही है। उसके बाहर ना बिल हैं ना नारकी हैं। *श्रोता: त्रसनाली लिमिटिंग फॅक्टर है।* हां, लिमिटिंग फॅक्टर है। *श्रोता: त्रसनाली भी बनी हुयी है किसी चीज की? जाली की?* किसी चीज से नहीं, जाली बीली कुछ नहीं है। हां मतलब बाहर नहीं जा सकते तो वहां तो कुछ तो होना चाहिये तो बाहर जायेंगे नहीं वे।

श्रोता: ये सूक्ष्म जीव जो आपने कहा कि विहायोगति नामकर्म का उदय नहीं होता है तो पूरे लोक में जहां जहां सूक्ष्म जीव हैं, वे गमन नहीं करते हैं?

हां, गमन यानी उनका इधर से उधर जो कुछ जाना होता है, मैंने कहा ना, फिजिकल उनके जो कुछ कॅरॅक्टर्स हैं उनके कारण जो कुछ होता होगा परंतु वे स्वयं गमन करके नहीं जायेंगे। जैसे हमने हाथ इधर से उधर ऐसा घुमाया, हमने हाथ ऐसा किया तो सूक्ष्म जीव जहां के वहां रहे, तो हमारे हाथ के आरपार हो गये वे। समझ में आयी ना? वे ऐसा गमन करके नहीं जायेंगे भले, परंतु हमारा हाथ ऐसा हुआ तो यहां पर रहनेवाले सूक्ष्म जीव वहीं पर रहेंगे, क्योंकि वे हमारे हाथ से कुछ बाधित नहीं होते हैं। जैसे आपको लाइट की किरण ऐसी आ रही है और बीच में आपने कांच जो ऐसी आड़ी थी उसको सीधी की, तो क्या होगा? वो किरणें जहां की तहां रहेगी और कांच में से आरपार भी चली जायेगी। ऐसे सूक्ष्म

जीव जहां के तहां रहेंगे। *श्रोता: वे ठसाठस भरे हैं तो जगह नहीं है?* जगह ही नहीं है यानी पूरे लोक में ही हैं न ठसाठस भरे हुये। गमन करने की यानी देखो देखो, त्रस जीव किसको कहना? *श्रोता: जिसको त्रस नामकर्म का उदय है।* जिनको त्रस नामकर्म का उदय है, जो त्रसनाली में रहते हैं उनको त्रस कहेंगे तो हमने पूछा कि त्रसनाली के बाहर भी त्रस पाये जाते हैं या नहीं पाये जाते? पहले बात हुयी थी एक बार। *श्रोता: जब मारणांतिक समुद्घात करते हैं।* जब मारणांतिक समुद्घात करते हैं और जब बाहर का जीव उपपाद करके अंदर आ रहा है त्रस होकर, विग्रहगति में भी हमने देखा, उपपाद में भी देखा। वैसे केवली समुद्घात में भी आत्मप्रदेश पूरे लोक में फैल जाते हैं।

श्रोता: हवा है कि नहीं है नरक में? नरक में हवा है कि नहीं है, हं? *श्रोता: उपपाद से जन्म होता है तो बाहर भी वहीं से निकलेगा? यानी वहां मरण हो गया नरक में...* नरक में मरण हुआ तो ऊपर मध्यलोक में आयेगा क्योंकि नारकी मरकर कहां जाता है? एकेन्द्रिय में नहीं जाता तो नारकी मरकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच होगा या मनुष्य होगा। सातवें नरक का नारकी तिर्यंच होगा, अन्य सभी जो नारकी हैं वे या तो मनुष्यपर्याय या तिर्यंचपर्याय में आयेंगे तो ऊपर ही आयेंगे कि नहीं आयेंगे? *श्रोता: एक ही बिल में नारकी कितने होते हैं?* असंख्यात, सातवें नरक में पांच ही बिल हैं और नारकी तो असंख्यात हैं। जितने सातवें नरक में हैं उनसे असंख्यातगुणे छठे नरक में, जितने छठे नरक में हैं उनसे असंख्यातगुणे पांचवें नरक में हैं ऐसे ऊपर चले आओ, दूसरे से सातवें में मिलकर जो संख्या है उनसे असंख्यातगुणे पहले नरक में नारकी हैं। *श्रोता: सांस लेने के लिये हवा है?* हां, सब है सांस लेने के लिये – कोई मर नहीं जानेवाला बिना सांस का।

श्रोता: हम वर्तमान में जो बादर वायुकायिक कहते हैं, नरक में भी बादर वायुकायिक जीव, नरक में – वह बीच के गॅप में नहीं, नरक में रहेंगे? उनका, अभी जो यथायोग्य होगा परंतु सभी नरकों की मिलकर एरिया लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण है और जहां बादर वायुकायिकों का जो रहने का ठिकाना बताया जाता है, वायुकायिकों का इटसेल्फ तो पांच राजू, पहली पृथ्वी से लेकर ऊपर तक बताया जाता है, उसके बाहर भी नहीं। हां, पांच राजू तक, इसलिये उसको लोक के संख्यातवें भाग में रहते हैं ऐसा कहते हैं। *श्रोता: तो हम जो रह रहे हैं वे क्या रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर रहे हैं?* हां, ऊपर। *श्रोता: ये पंकभाग और*

खरभाग ये पृथ्वी के अंदर हैं या नीचे हैं? पृथ्वी के अंदर हैं, पहली पृथ्वी की जो मोटाई है, उसका ऊपर का भाग है १६ हजार योजन का वह खरभाग है, उसके भी सोलह पटल हैं अलग-अलग, सब रत्नमयी हैं। *श्रोता: आकाश होगा उसके बीच में?* गॅप कुछ नहीं है। एक लेअर है उसके बाद दूसरा लेअर और उसके बाद तीसरा लेअर, परंतु उसमें बीच में कोई गॅप-स्पेस नहीं है। बीचवाला जो है वह पंकभाग है वहां असुरकुमार जाति के देव रहते हैं और नीचे के अस्सी हजार योजन में वहां पर नरक के बिल हैं। *श्रोता: नरकों के बिलों में कई पटल मतलब आज की भाषा में इतनी मल्टिस्टोरीड बिल्डिंग है क्या?* हां, ऐसा ही है। *श्रोता: नरक के जीवों के श्वासोच्छ्वास हैं या नहीं?* इसका हम आप निर्णय करेंगे – किसके आधार से करेंगे? नारकी पर्याप्त हैं या अपर्याप्त हैं? *श्रोता: पर्याप्त हैं।* उनकी छह पर्याप्ति भी हो जाती हैं, श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति भी होगी और उनके श्वासोच्छ्वास नामका प्राण भी है क्योंकि पंचेन्द्रिय हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय हैं – तो उनके भी श्वासोच्छ्वास होगा ही होगा। *श्रोता: हवा भी होगी?* होगी, होगी, सब कुछ होगा।

अभी सुनना और नीचे के नरकों में जाना है कि नहीं जाना? तो हमने पहली पृथ्वी देखी, फिर दूसरी पृथ्वी देखी। तीसरी पृथ्वी और नीचे है वह और पतली है, वालुकाप्रभा उसका नाम है। देखो, हम क्रम से उनके नाम देखते हैं – पहले एक ऑर्डर देखते हैं फिर ब्रॅकेटवाले नाम अलग से पढ़ेंगे। पहले रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमप्रभा और महातमप्रभा। इन्हींके दूसरे क्या नाम हैं? घर्मा, वंशा, मेघा, अंजना, अरिष्टा, मघवी और माघवी ये इनके नाम हैं। इनमें से कहीं किसीका नाम लिया जाता है, कहीं कभी किसीका नाम लिया जाता है। इनकी जो मोटाई है वह क्रम से पतली-पतली होगी नीचे तक। ये तो सात पृथ्वियां हुयी। आठवीं पृथ्वी कहीं दिखायी देती है क्या इस चार्ट में? एकदम ऊपर देखो, लोकाकाश के ऊपरी भाग में, उसका नाम है ईषत् प्राग्भार। *श्रोता: मोक्ष।* मोक्ष नहीं है, पृथ्वी में मोक्ष नहीं है। *श्रोता: सिद्धशिला में है।* आप कहते हैं सिद्धशिला में तो मोक्ष है न?

सिद्धशिला देखो यह जो त्रसनाली लिखी है ऊपर जहां दिखायी है, उसके बीच में एक डॉट लिखा है ब्लॅक ऐसा, आड़ी लाइन है वह ऐसी क्यों? हम तो बिलकुल उसको चंद्राकार दिखाते हैं, ऐसा नहीं है। क्योंकि सिद्धशिला की लंबाई कितनी है? उसका

डायमीटर है ४५ लाख योजन और ईषत् प्राग्भार की पूरी मोटाई कितनी है? मात्र ८ योजन। तो यह सिद्धशिला वह उसका सेंटरवाला पीस है, ईषत् प्राग्भार पृथ्वी का यह पार्ट ॲण्ड पार्सल है सेंटर का, इसको हम एक रॉक कहेंगे, एक उसकी शिला कहेंगे। यह कितनी मोटी है? ८ योजन ऐसी मोटी और ऐसी लंबाई-व्यास ४५ लाख योजन। मिलिमीटर में ट्रान्स्फर करो उसको और बताओ।

८ मिलिमीटर मोटाई, ४५ लाख मिलिमीटर लंबाई के किलोमीटर बनाओ – *श्रोता: यह किसका माप है?* यह तो हमें सिद्धशिला का डायमेन्शन देखना है, प्रपोर्शन देखना है। *श्रोता: ४५ हजार किलोमीटर।* ४५ हजार किलोमीटर कैसे हो गया? कितने मिलिमीटर का एक किलोमीटर होता है? १००० मिलिमीटर का १ मीटर और १००० मीटर का १ किलोमीटर, तो कितने हुये? १० लाख मिलिमीटर का एक किलोमीटर होता है तो ४५ लाख मिलिमीटर के? *श्रोता: ४.५ किलोमीटर।* ४.५ यानी साढ़े चार किलोमीटर ऐसी लंबाई है और मोटाई कितनी है? ८ मिलिमीटर। तो कितना कर्व्हेचर आयेगा? *श्रोता: दिखेगा ही नहीं।* दिखेगा ही नहीं, ऐसा यहां पर है। हां उसको हम थोड़ासा अतिशयोक्ति करके समझाते हैं, हम बिलकुल उसको सिद्धशिला यानी ऐसा चंद्राकार दिखाते हैं।

श्रोता: तो ऐसा सोच सकते हैं कि कांच का जो पेपरवेट आता है उसको ऐसा – उतना पोर्शन... यानी ऊपर से फ्लॅट है और नीचे से ऐसा गोलाकार – आपके ये मिट्टी उठाते हैं ना, घमेला घमेला। परंतु इतना बडा ऐसा कर्व्हेचर नहीं है, नहीं के बराबर है, फिर भी है तो कहेंगे उसको। समझाने के लिये ऐसा उसको और थोड़ा ज्यादा करके बताते हैं। परंतु सिद्धशिला में कितने सिद्ध जीव हैं? बोलो बहन। *श्रोता: अनंत।* अनंत? एक भी नहीं। अरे सिद्ध जीव ने सिद्धशिला को टच भी नहीं किया है। *श्रोता: वे तो ऊपर वातवलय में हैं।*

सिद्धशिला के ऊपर तीन वातवलय हैं। देखो यह दो नंबर का चार्ट देखो वातवलय का, वहां सिद्धशिला लिखा है व्हाइट में, राइट साइड का चार्ट। नीचे जो व्हाइट जिसके अंदर सिद्धशिला लिखा है, वहां सिद्धशिला को बताया है। उसके ऊपर २ कोसवाला घनोदधिवातवलय है जो ब्लू में दिखाया है, उसके ऊपर १ कोस है वह घनवातवलय है। और यह जो कोस है वह महाकोस है, महायोजनवाला कोस है और उसके ऊपर कितना

लिखा है, १५७५ धनुष यानी पूरा कोस नहीं है, उसमें ४२५ धनुष कम हैं। यह सिद्धशिला के ऊपर क्या है? वातवलय हैं, तीन वातवलय हैं। देखो, हर पृथ्वी के नीचे तीन-तीन वातवलय हैं – अभी तक हमने आठ पृथ्वियां देखी, सात पृथ्वियां एक के नीचे एक हमने देखी, आठवीं पृथ्वी ऊपर देखी। सभी पृथ्वियों के नीचे वातवलय हैं – तीन-तीन वातवलय। हर पृथ्वी के नीचे जो वातवलय हैं उनकी मोटाई २० हजार, २० हजार और २० हजार योजन मोटी है, यानी टोटल ६० हजार योजन।

देखो सातवीं पृथ्वी छह राजू नीचे है, केवल वातवलय का चार्ट नंबर २ है उसमें देखना। पहली पृथ्वी यहां ब्लॅक दिखायी है पूरी और उसके नीचे तीन पट्टे तीन कलर में हैं ब्लू, येलो और रेड – वे हैं २०, २० और २० हजार योजन मोटे तीन वातवलय। दूसरी पृथ्वी है वह ब्लॅक कलर लाइन उसके नीचे भी तीन कलरवाले वे तीन वातवलय हैं। तीसरी, चौथी, पांचवीं, छठी और सातवीं में भी ऐसा ही है – सातवीं पृथ्वी के नीचे निगोद लिखा है और निगोद के नीचे फिर ऐसे तीन वातवलय बताये हैं। वे भी २०, २०, २० हजार योजन मोटाई के हैं और वे तो कितने, पूरे नीचे तक फैले हैं यानी सात राजू ऐसे लंबाई में और सात राजू ऐसे चौडाई में – पूरा चौकोर है नीचे के बेस में। वे बेस में जो हैं वे साइड में भी २०, २०, २० हजार योजनवाले १ राजू तक साइड में भी वही उनकी डायमेन्शन्स हैं, वातवलयों की। उसके ऊपर देखो – उसके ऊपर वह लाइन एकदम थिन-पतली हो गयी है और वहां लिखा है ७, ५, ४ यानी वहां वातवलयों की मोटाई मात्र ७ योजन, ५ योजन और ४ योजन है। वे भी टेपरिंग होते होते मध्यलोक के पास – पृथ्वी के साइड्स में, पृथ्वी के नीचे तो २०, २०, २० हजार योजन हैं और साइड में मोटाई ५, ४ और ३ योजन इतनी थिन होती हैं फिर ऊपर थोड़ी ब्रॉड होती हैं और ब्रह्म स्वर्ग के पास साइड में वह ७, ५ और ४ योजन हो जाती हैं। ये इसलिये तीन कलर बताये हैं कि जो ब्लू है वह घनोदधिवातवलय है, येलो है वह घनवातवलय है और रेड है वह तनुवातवलय है।

अब वे फिर टेपरिंग होते हैं ऊपर, आठवीं पृथ्वी के साइड में वे कितने हो जाते हैं ५, ४ और ३ योजन – ये तो साइड्स की बातें हैं। अकेली ऊपरकी आठवीं पृथ्वी ऐसी है कि उसके नीचे तो २० हजार, २० हजार, २० हजार योजन मोटाईवाले तीन वातवलय हैं और ऊपर कितने हैं? तो ऊपर तीनों मिलकर १ योजन से भी कम है, क्यों? २ कोस,

१ कोस और १ कोस में कुछ कम। इतनी ऊपर के वातवलयों की डायमेन्शन्स हैं। ऊपर २०, २०, २० हजार नहीं है जैसा किन्हीं पुस्तकों में छप चुका है गलती से। आठवीं पृथ्वी के ऊपर २०, २०, २० हजार योजन के वातवलय नहीं है। यह पहले के तत्त्वार्थसूत्र – मोक्षशास्त्र की पुस्तक के पीछे की कव्हर पर छपा है वहां २०, २०, २० हजार योजन दिखाया है वह गलत है।

श्रोता: सिद्ध भगवान कहां रहते हैं वह बात रह गयी। सिद्ध भगवान जो हैं वे सबसे ऊपर, कौनसा वातवलय है सबसे ऊपर का? तनुवातवलय, कितना बड़ा है वह? १५७५ धनुष और वहां सिद्धों की सबसे बड़ी अवगाहना कितनी होती है? *श्रोता: ५२५ धनुष।* वे ५२५ धनुष हैं वे छोटेवाले धनुष हैं और ये तनुवातवलयवाले १५७५ हैं वे महाधनुष हैं। अभी समय नहीं है फिर भी जरा देख लेते हैं हम। देखो, यह वातवलयों का चार्ट वें बहुत बड़े वातवलय हैं और वे हैं महायोजनवाले।

श्रोता: वहां सिद्ध रहते नहीं है तो फिर सिद्धशिला नाम क्यों है? सिद्धशिला नाम इसलिये हैं क्योंकि सिद्ध जिस क्षेत्र में रहते हैं उसी आकारवाली वह सिद्धशिला है – जो हमारा ढाईद्वीप है ४५ लाख योजन, वहीं से जीव ऊपर चले जाते हैं, सीधी लाइन में जाते हैं और सिद्धशिला में से थ्रू अँड थ्रू होकर ऊपर चले जायेंगे, सिद्धशिला में कोई भी सिद्ध जीव नहीं है। पेज नंबर २२ पर है, जो बाद में दोपहर में देखेंगे इसको, कि जो यहां महायोजन है – २००० कोस का महायोजन होता है और वहां सिद्धों की अवगाहना बहुत छोटी है। उत्कृष्ट अवगाहना भी तनुवातवलय के १५०० वें भाग जितनी है वह हम देखेंगे। अभी तो हमारा समय हो चुका है, अब यही रुकेंगे हम।

श्रोता: सिद्धशिला बादर पृथ्वीकायिक की बनी है? हां, ये बादर पृथ्वीकायिक हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२१. तीन लोक – रचना

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालानुगम यानी काल अनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। उसीके अंतर्गत पांच परावर्तनों का स्वरूप विस्तार से समझाया गया है। उसमें से क्षेत्रपरावर्तन की अपनी बात चल रही है। स्वक्षेत्रपरावर्तन में जीव कौन-कौनसी अवगाहना के साथ उत्पन्न होता है उसकी बात हमने देखी थी। जघन्य से लेकर उत्कृष्ट अवगाहना तक के एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना जीव ने क्रम से जब-जब प्राप्त की, तब-तब हमने उसको गिना। बीच में अक्रम से अनंतों बार किसी अन्य अवगाहना से उत्पन्न तो होगा; उसका समय यानी उसका टाइम तो गिनना, परंतु उसको क्रम में नहीं गिनना। इसतरह से जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक की सभी अवगाहना प्राप्त करके दोबारा फिर सूक्ष्म निगोद में जघन्य अवगाहना के साथ जन्म लेगा, तब एक स्वक्षेत्रपरावर्तन पूरा होगा।

अब यहां हम परक्षेत्र की बात कर रहे हैं। लोकाकाश के किस प्रदेश पर उत्पन्न होता है उसकी बात है। इसके लिये लोकाकाश क्या है, उसका क्षेत्र कितना बड़ा है और कहां क्या रचना है उसकी हम यहां बात देख रहे हैं। उसके लिये हम चार्ट के द्वारा यहां देख रहे हैं। पहले नंबर का चार्ट हमने देखा जैन भूगोल पुस्तक की शुरुआत में। लोकाकाश का आकार, उसके डायमेन्शन्स हमने देख लिये हैं। हमने यह भी देखा है कि मध्यलोक में जो पृथ्वी है पहली पृथ्वी, जिसके ऊपर हम रहते हैं और पहली, दूसरी, तीसरी ऐसे एक के नीचे एक, ऐसी सात पृथ्वियां हैं। आठवीं पृथ्वी लोकाकाश के ऊपरी भाग में है; इसका नाम है ईषत्प्राग्भार। *श्रोता: तो आठवीं ऊपर है?* हां, आठवीं पृथ्वी ऊपर है। *श्रोता: नहीं।* हां, क्यों नहीं? उसको आठवां नंबर दिया हुआ है क्योंकि क्रम से हम नीचे सात पृथ्वियां कहेंगे। सात पृथ्वियों के आधार से सात नरक हैं और ऊपर जो आठवीं पृथ्वी है, जिसके अंतर्गत सबसे बीचोबीच सिद्धशिला नाम की एक शिला है; पत्थर है; उसकी भी बात हमने देखी थी। उसमें तो कोई सिद्ध भगवान नहीं हैं। हां, फिर भी उसको सिद्धशिला क्यों कहते हैं? क्योंकि इस मनुष्यक्षेत्र से ही जीव अरिहंत अवस्था पार करके सिद्ध होता है। आकाश की सीधी श्रेणी में ऊपर चला जाता है और सिद्धशिला के ऊपर जो तीन वातवलय हैं, उसमें से सबसे अंतिम वातवलय के ऊपरी भाग में लोकाकाश का जो एण्ड है वहां उनके आत्मप्रदेश यानी जो पूर्वाकार की अपेक्षा हम कहेंगे सिर के प्रदेश, वे सबके एक लेव्हल

पर हैं। सिद्धों की हर एक की अवगाहना अलग-अलग है। कोई ५२५ धनुषवाले हैं तो कोई सात हाथ हाइटवाले हैं, सिद्धों की कम से कम हाइट साढ़े तीन हाथ हैं। तो उनके तो अलग-अलग आकार हो गये यानी कोई पद्मासनस्थ हैं, कोई खड्गासनस्थ हैं। पर सबके जो ऊपर के प्रदेश हैं, जिसको हम कहेंगे मस्तक के-सिर के, वे सब एक लेव्हल पर हैं और वे कहां हैं? तो अंतिम वातवलय के अंत में हैं। जिसको हम तनुवातवलय कहते हैं। *श्रोता: अनंतर प्रदेश से ही अलोकाकाश चालू हो जायेगा?* उसके अनंतर प्रदेश से अलोकाकाश शुरू हो जाता है। *श्रोता: अंतिम वातवलय का सबसे ऊपरी भाग है न?* तनुवातवलय। *श्रोता: तनुवातवलय?* हां तनुवातवलय उसका नाम है न! देखो, जैन भूगोल पुस्तक का २२ नंबर का पेज निकालना।

हमने यह बात देखी थी कि आठों पृथ्वियों के नीचे बीस हजार, बीस हजार और बीस हजार योजन मोटाईवाले तीन वातवलय हैं। ख्याल में आयी न बात? यह बात यहां लिखी है देखो और जो ऊपर की आठवीं पृथ्वी है उसके ऊपर तीन वातवलय हैं। अन्य पृथ्वियों के ऊपर नहीं, केवल नीचे ही वातवलय हैं। अब यहां हम पढ़ते हैं २२ पेज पर जो दूसरा नंबर का पॅरेग्राफ है। **आठवीं पृथ्वी के ऊपर पृथ्वी को लगते हुये घनोदधिवातवलय २ कोस चौड़ाईवाला** है। यह हमने चार्ट में देखा था, दो नंबर के चार्ट में। **बीच में घनवातवलय १ कोस चौड़ाईवाला और अंत में बाहरी ओर तनुवातवलय १५७५ धनुष चौड़ाईवाला है। ये सर्व नाप महाधनुष, महाकोस और महायोजनों के होते हैं जो सामान्य धनुष, कोस और योजनों से पांच सौ गुणा बड़े होते हैं।** इसका अर्थ ख्याल में आया न? जब हम वहां सिद्धों की अवगाहना कहेंगे तो वह ऑर्डिनरि धनुष में है और यहां जो वातवलयों की चौड़ाई है वह महाधनुष या महायोजनों में है। **सामान्य योजन चार कोस का है, यह महायोजन २००० कोस का होता है। दो हजार धनुष का एक कोस होता है। यहां १५७५ धनुष कहा, यह महाधनुष है। यह सामान्य धनुष से पांच सौ गुणा होने से,** समझ में आ रही है न बात यह? **यह तनुवातवलय १५७५ × ५००** कितना हुआ? = **७,८७,५०० धनुष है। यहां सिद्ध भगवान अंत में विराजमान हैं। सब सिद्धों के आत्मप्रदेश ऊपर से एक लेव्हल में हैं।**

परंतु उनकी अवगाहना, यानी **लंबाई-चौड़ाई, तथा खड़गासन-पद्मासन आदि आकार अलग-अलग होते हैं। कोई पूर्वाभिमुख होते हैं तो कोई उत्तराभिमुख होते**

हैं। सिद्धों की अधिक से अधिक अवगाहना ५२५ धनुष होती है। यह सामान्य धनुष है, महाधनुष नहीं है। यानी तनुवातवलय के कितने भाग में बड़ी से बड़ी अवगाहनावाले सिद्ध भगवान रहेंगे? यह बात अभी बतायेंगे। **तनुवातवलय के बाहुल्य** यानी **मोटाई के पंद्रह सौ खण्ड करेंगे, तो एक खण्ड प्रमाण भाग में सिद्धों की उत्कृष्ट अवगाहना जानना।** क्योंकि ७८७५०० को हम १५०० से भाग देंगे तो ५२५ आ जाता है। **तथा उस मोटाई के नौ लाख खण्ड करेंगे तो एक खण्ड प्रमाण सिद्धों की जघन्य अवगाहना का प्रमाण जानना।** यहां हम उसीको नौ लाख से भाग देंगे तो **सात बटे आठ ७/८ धनुष प्रमाण अर्थात साढ़े तीन हाथ प्रमाण अवगाहना होती है।** ख्याल में आया न? ये क्या कहना चाहते हैं। हमने जो १५७५ धनुष कहा वह महाधनुष है और जो हम सिद्धों की अवगाहना कहते हैं, वह ५२५ धनुष जो कहा है, वह ऑर्डिनरि धनुष है।

अब हम अपने पहले नंबर के चार्ट पर आते हैं। एक के नीचे एक हमने सात पृथ्वियां देखी और आठवीं पृथ्वी तो लोकाकाश के ऊपरी भाग में देखी। पृथ्वी किसे कहना? हमने देख लिया है। जो लोकाकाश के एक एण्ड से दूसरे एण्ड तक, यानी एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुयी है, पूरी आडी, उसको पृथ्वी कहेंगे हम। उसकी मोटाई अलग-अलग है। हमने हर एक पृथ्वी की मोटाई देखी थी, कितनी है। आपके चार्ट में भी लिखी है एक साइड में। यह पहले पृथ्वी में तीन अलग-अलग कलर बताये हैं; सबसे ऊपरी जो भाग है वह १६००० योजनवाला है; बीचवाला है वह ८४००० योजनवाला है और नीचेवाला है वह ८०००० योजनवाला है। यह क्या है? उसमें क्या-क्या है? उसकी बात हम देखते हैं, पृष्ठ संख्या ३० निकालना क्योंकि केवल उनके नाम पढ़ने से याद नहीं रहता न? तो हम पढ़ेंगे, साथ-साथ उसकी चर्चा भी करेंगे। दो नंबर की पंक्ति। **पहली पृथ्वी की मोटाई एक लाख अस्सी हजार योजन है।** यानी तीनों की मिलकर, उसमें कोई बीच में गॅप-अंतराल नहीं है; कंटिन्युअस घनस्वरूप है, यह १८०००० योजन है। **इसके तीन भाग हैं। इसका पहला अर्थात् ऊपर का भाग खरभाग है जो सोलह हजार योजन मोटाईवाला है, दूसरा पंकभाग चौरासी हजार योजन का है और तीसरा अब्बहुलभाग अस्सी हजार योजन का है। पहले खरभाग में सोलह पृथ्वियां हैं** आड़ी हैं, हॉरिझॉन्टल।

ये सभी सोलह पृथ्वियां ऐसी पूर्व-पश्चिम एक राजू और दक्षिणोत्तर सात राजू हैं। ये जो उसके सोलह भाग करेंगे तो वे सोलह भी पूरे एक राजू × सात राजू, ऐसे एक के नीचे

एक हैं; पहला-ऊपर का उसे हम पहला कहेंगे; फिर दूसरा, फिर तीसरा, ऐसे सोलह हैं। तो ये सोलह कौन-कौनसे हैं तो कहते हैं पहले खरभाग में सोलह पृथ्वियां हैं यानी उसके सोलह भाग हैं। वे पहली पृथ्वी के ही पार्ट ॲण्ड पार्सल, उसीके भाग हैं; १६ अलग-अलग लेअर्स हम कहेंगे। **एक-एक पृथ्वी हजार-हजार योजन प्रमाण मोटी है।** ऊपर का जो सोलह हजार योजन मोटाईवाला जो खरभाग है, उसीमें हजार-हजार योजन के सोलह अलग-अलग भेद हैं; उनके नाम भी अलग-अलग हैं; उनको भी हम पृथ्वी कहेंगे। **ये लोक के अंत तक फैली हुयी हैं तथा इनके बीच में कोई अंतराल नहीं है।** सुबह पूछा था न? कि इसके बीच में कोई अंतराल है क्या? तो नहीं है। **इनके नाम ऊपर से नीचे तक,** यानी ऊपर की है वह पहली फिर दूसरी फिर तीसरी, इसतरह। **चित्रा, वज्रा, वैडूर्या, लोहिता, कामसारकल्पा, गोमेदा, प्रवाला, ज्योतीरसा, अंजना, अंजनमूलिका, अंका, स्फटिका, चंदना, सर्वर्थका, बकुला और शैला।** ये सोलह अलग-अलग यहां पर पृथ्वियां हैं। **खरभाग और पंकभाग में भवन पाये जाते हैं।** ये किसके भवन होंगे? **वहां भवनवासी और व्यंतर रहते हैं। असुरकुमार को छोड़कर शेष नौ प्रकार के भवनवासी देव ऊपर के खरभाग में रहते हैं, वहां सात प्रकार के व्यंतरों के भी भवन हैं।** उनके भी हैं और भवनवासियों के भी हैं।

श्रोता: असुरकुमार कहां रहते हैं? यह यहां बताया है आगे। **बीच में पंकभाग में असुरकुमार जाति के भवनवासी रहते हैं।** यानी भवनवासियों में से जो असुरकुमार जाति के देव हैं वे पंकभाग में रहते हैं और व्यंतरों के जो ८ प्रकार हैं उनमें से जो **राक्षस जाति के व्यंतर** हैं वे भी वहां पंकभाग में **रहते हैं।** भवनवासियों और व्यंतरों का अलग प्रकरण है उसकी विस्तार से चर्चा बाद में की हुयी है यहां पर। उनके भवन कैसे होते हैं? क्या होते हैं? व्यंतरों के आवास भी होते हैं और भवन भी होते हैं। उनकी चर्चा बाद में की है। *श्रोता: ये सीमेंट के बने हैं?* ये तो जमीन के अंदर ही बने हैं। ये तो रत्नों के बने हुये होते हैं, उनकी भित्तियां आदि रत्नों की होती हैं। उनका वर्णन भी पढ़ेंगे न, तो वहां जाने का मन हो जायेगा। व्यंतर कहने से ऐसे कोई डरावने भूत-पिशाच नहीं हैं। वे भी सुंदर शरीर के धारक देव होते हैं। *श्रोता: पहले आपने पृथ्वी के १३ पटल बताये, अब १६ बता रही हैं?* आपका प्रश्न है पहले तो पृथ्वी के १३ पटल बताये और अभी १६ बता रही हैं। हमने जो १३ पटल बतायें वे नरकों के बतायें; नरकों के बिलों के पटल बताये और वे

कहां पर हैं? तो अब्बहुलभाग में हैं और ये जो १६ हैं, वे खरभाग में हैं। ये जो पृथ्वी के १६ लेअर्स हैं, वे खरभाग में हैं। पहले हमने देखा था कि पहली पृथ्वी का जो ऊपरी भाग १६००० योजन मोटा है जिसे खरभाग कहते हैं, उसके १०००-१००० योजन के १६ लेअर्स हैं ऐसा हम कहेंगे। १६ अलग सतह पर ये अलग-अलग पृथ्वियां हैं और ये जो नाम बतायें न? चित्रा-वज्रा-वैडूर्या आदि, ये सभी रत्नमयी हैं, उस-उस रत्न से वे बनी हुयी हैं।

श्रोता: ये सारे को मिलाकर भी एक पृथ्वी कहेंगे न? खरभाग, पंकभाग और अब्बहुलभाग इन तीनों को मिलाकर ही एक पृथ्वी है। इस पहली पृथ्वी की मोटाई १८४००० योजन है; उसमें से खरभाग १६००० योजन और पंकभाग ८४००० मिलकर कितने हुये? १००००० योजन और नीचे ८०००० योजन मोटाईवाला अब्बहुलभाग है उसमें पहले नरक के बिल हैं। उसके १३ पटल हैं और सबसे बीचवाला; जो पहले नरक का ऊपर के पटल का पहला बीचवाला जो बिल है, सीमंतक बिल उसका नाम है, वह कितना बड़ा है मालूम है? ढ़ाई द्वीप इतना। पैंतालीस लाख योजन इतना। ये भवन भी कितने होते हैं? तो ये ढ़ाई द्वीप जो हैं, उतना छोड़कर बाकी जो असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं, उनके नीचे ये सारे भवन होते हैं। अपने मनुष्यलोक के एक्झॅक्ट नीचे वहां ये भवन नहीं पाये जाते हैं। अभी ये हमने देखे न? उनमें कितने भवन होते हैं? कैसे भवन होते हैं? तो उसकी बात हम देखेंगे। यह पहली पृथ्वी की बात हुयी; उसमें जो १३ पटल देखे हैं हमने, उनमें मिलकर, १३ पटलों में मिलकर, तीस लाख प्रथम नरक के बिल हैं। बिलों की भी बात हमने देखी थी कितने ही बिल संख्यात योजनों के होते हैं और कितने तो असंख्यात योजनों के बड़े-बड़े बिल होते हैं। ऐसे ही हर पृथ्वी में – दूसरी, तीसरी, चौथी, नीचे-नीचे, हमने पटलों की संख्या और बिलों की संख्या सुबह पढ़ी थी। आपके चार्ट में लिखी है बाजू में। तो इसतरह से इसमें ये सारे बिल और उनकी रचना होती हैं। ये नरकों की बात हो गयी। इसमें कोई प्रश्न है? तो हम ऊपर की बात करेंगे।

श्रोता: ये जो वातवलय बताये थे उनमें क्या विशेषता है? विशेषता कुछ नहीं, कहां क्या रचना है उसकी बात बतायी है। *श्रोता: वातवलय तो खाली हवा है न?* हां, फिर भी इन पृथ्वियों का वजन उनके ऊपर है। वैसे तो हर चीज़ अपने आधार से है फिर भी यहां

कहेंगे, इन वातवलयों के आधार से पृथ्वियां है। *श्रोता: दोनों पृथ्वियों के बीच में वातवलय, वातवलय दोनों पृथ्वियों को लेकर रखा है?* पृथ्वी जो है उसके नीचे वातवलय हैं यानी उन्होंने उसका वजन संभाला है और साइड में तो हैं ही हैं। साइड में भी हैं; साइड में बहुत थिन हैं, ये सात-पांच-चार योजन वगैरह के हैं और नीचे तो बीस-बीस हजार योजन के हैं। तो उसके ऊपर पृथ्वियां स्थित हैं। केवल ऊपरी पृथ्वी के ऊपर भी वातवलय हैं। जो इतने हैं न? दो कोस, एक कोस वगैरह हमने जो देखे थे उनके डायमेन्शन्स। अब जो सातवीं पृथ्वी के नीचे भी ६०००० योजन अर्थात् बीस हजार, बीस हजार और बीस हजार मिलकर ६०००० योजन के वातवलय हैं। वह सातवीं पृथ्वी के नीचे एक राजू हाइटप्रमाण जो एरिया है, उसको वहां केवल निगोद ऐसा लिखा है। वहां निगोद ही पाये जाते हैं, अन्य वहां कोई नरक या अन्य कुछ रचना है नहीं है और उसके भी नीचे, सबसे नीचे भी २००००, २००००० और २००००० योजने के तीन वातवलय हैं।

श्रोता: वातवलय यानी क्या है? वातवलय यानी वह वायु की एरिया है। वह वायु के... *श्रोता: लेअर्स?* लेअर्स हैं हवा के, हां। *श्रोता: नहीं, लेकिन आप यह चार्ट के साथ जो देखेंगे तो फिर यह वातवलय जो है, पहलेवाली पृथ्वी खाली दो वातवलय के बीच में ही है वह, पूरा वेट?* उसके नीचे भी वातवलय हैं न? *श्रोता: नहीं है, फिर डिस्ट्रिब्यूशन देखेंगे तो फिर आप ऊपर एक खाली दो वातवलय के बीच में ही पहली पृथ्वी है।* सभी पृथ्वियों के बारे में ऐसा ही है। दो बाजू नहीं, चारों बाजू और नीचे भी वातवलय हैं क्योंकि पूरे लोकाकाश के अंत में सभी ओर यानी चारों ओर तथा नीचे और ऊपर की ओर भी वातवलय हैं। *श्रोता: वह जो वातवलय है वह चौदह राजू में इन्क्लूड हो गया कि वह अलग से है?* चौदह राजू में इन्क्लूडेड है। लोकाकाश की जो पूरी एरिया है उसके प्रदेश हम यहां गिनते हैं तो वातवलय लोकाकाश के ही अंदर हैं क्योंकि वातवलय लोकाकाश के बाहर नहीं हो सकते। क्योंकि सभी जो वातवलय हैं, उनमें भी पांचों सूक्ष्म जीव हैं। अकेले वायुकायिक हैं ऐसा नहीं है। सभी हैं जीव। *श्रोता: स्थिर हैं कि चलते हैं?* नहीं, चलते नहीं, स्थिर हैं वहां पर। *श्रोता: बादर और सूक्ष्म दोनों हैं वातवलय में?* वातवलय में सूक्ष्म तो सब जगह हैं। *श्रोता: हां, लेकिन बादर भी हैं?* बादर भी होंगे वहां पर क्योंकि उसकी एरिया छोटी है। वहां पर लोक का संख्यातवां भाग नहीं है। वातवलय, पूरे वातवलयों की एरिया भी लोक का असंख्यातवां भाग ही है।

अभी ये सारे कॅल्क्युलेशन्स त्रिलोकसार में हैं। हां, धवला की पुस्तक में भी है, मेरे ख्याल से चौथी पुस्तक में होगी। कौनसी पुस्तक में है, आप सुन रहे हैं न? सिंगतकरजी, याद नहीं है? *अन्य श्रोता: जीवंधर को मालूम होगा।* हां, उन्हींको पूछा मैंने। यह धवला आप भी सुन रहे हैं और वह...। *श्रोता: मिला नहीं।* चौथे भाग में है। नहीं है? अच्छा। कोई बात नहीं घर में जाने के बाद देखना। *श्रोता: वातवलय त्रिलोकसार में है।* त्रिलोकसार में तो है ही। वातवलय में पुद्गल तो हैं ही वहां पर, परंतु सूक्ष्म जीव तो सर्वत्र हैं, वातवलय सहित सर्वत्र हैं। सूक्ष्म-पांचों प्रकार के जीव पूरे लोकाकाश में जहां पृथ्वियां हैं वहां पर भी और जहां वे बीच में अंतराल हैं वहां पर भी सर्वत्र खचाखच भरे हुये हैं क्योंकि उनको तो आधार की जरूरत नहीं है, बिना आधार के रहते हैं। *श्रोता: बादर भी रहेंगे, बादर बिना आधार के रहेंगे?* बादर जीवों के लिये आधार की आवश्यकता है। पांचों ही बादर एकेन्द्रिय तथा त्रस जीव सात पृथ्वियां आदि के आधार से रहेंगे। यह तो हमने साधारण आयडिया देखी कि लोकाकाश में पृथ्वियां कहां है? कहां क्या रचना है? स्वर्गों में तो ऐसे कोई पृथ्वियों के लेअर्स नहीं हैं परंतु उनके खण्ड-खण्ड हैं, जिनको हम विमानवासियों के विमान कहेंगे। आपके जो चार्ट में हैं न? देखो, पहले ही चार्ट में देखो, त्रसनाली के अंदर दिखाये हैं।

स्वर्ग के ६३ पटल बताये हैं और वहां १, २, ३, ४ ऐसे स्वर्गों के नंबर डाले हैं। यानी डेढ़ राजू तक तो सौधर्म और ईशान के विमान हैं। उसके ऊपर और डेढ़ राजू तक तीन और चार यानी सनत् कुमार, माहेंद्र के विमान हैं। यानी तीन राजू तक एरिया कव्हर होगी। फिर आगे जो हैं आधे-आधे राजू में होंगे ५-६, ७-८ वगैरह-वगैरह ऊपर १५-१६ तक, फिर नौ ग्रैवेयक फिर उसके ऊपर अनुदिश और अनुत्तर। तो अनुत्तर से ऊपर सिद्धशिला कितनी दूरी पर है? *श्रोता: बाल के बराबर।* हं? बाल के बराबर? यह बात बराबर नहीं है; १२ योजन दूरी पर है। देखो मेरु की चूलिका के ऊपर बाल के बराबर दूरी पर सौधर्म विमान तो हैं परंतु सर्वार्थसिद्धि के ऊपर १२ योजन ऊपर जाकर सिद्धशिला है यानी वह आठवीं पृथ्वी है। इसका अर्थ समझ में आता है? उस आठवीं पृथ्वी के नीचे बीस हजार, बीस हजार और बीस हजार ऐसे साठ हजार योजन तक तो तीन वातवलय हैं, तो ये सारे अनुत्तर विमान अंतिम वातवलय में यानी उस पृथ्वी से लगते हुये २०००० योजन के वातवलय में होंगे और वहां से आठवीं पृथ्वी की दूरी केवल १२ योजन की है।

ख्याल में आयी न बात यह? नहीं समझे? आठवीं पृथ्वी के नीचे साठ हजार योजन तक तो तीनों वातवलय हैं और आठवीं पृथ्वी के नीचे कितना जाकर अनुत्तर विमान हैं? पांचों अनुत्तर, विमान? *श्रोता: १२ योजन।* १२ योजन उसका अर्थ क्या है? वे वातवलय के अंदर हैं, ख्याल में आयी न बात? अभी यह तो हमने साधारण आयडिया देखी कहां क्या है।

श्रोता: यह सिद्धशिला से सिद्धालय कितना है जहां सिद्ध भगवान हैं? आपका प्रश्न है सिद्धशिला से सिद्धालय यानी जहां सिद्ध भगवान विराजमान हैं वह कितना दूर है? हमने देखा था तीन वातवलय हैं; दो कोस, एक कोस और १५७५ धनुष। ये महाकोस और महाधनुष हैं। इतने ऊपर जाकर वहां सिद्ध भगवान विराजमान हैं। तो हमने ये बातें देखी हैं। अब आगे बढ़ते हैं हम, स्वर्गों के जो विमान हैं न, उसके लिये आप १४ नंबर चार्ट देखना। *श्रोता: सूक्ष्म निगोदिया जीव जैसा आपने कहा था जैसे विहायोगति नामकर्म का उनको उदय नहीं है इसलिये वे जहां-जहां अपने-अपने स्थान पर पैदा होंगे, वे हलन-चलन दूसरे जीवों की तरह नहीं करते तो ये सूक्ष्म निगोदिया जीव भी मारणांतिक समुद्घात करेंगे?* आपका प्रश्न ऐसा है कि सूक्ष्म निगोदिया जीवों को विहायोगति नामकर्म का उदय नहीं है। हमने ऐसा कभी नहीं कहा था सूक्ष्म को नहीं है, किसी भी एकेन्द्रिय को नहीं है, न बादर एकेन्द्रिय को है, न सूक्ष्म को है क्योंकि विहायोगति नामकर्म का उदय मात्र त्रस जीवों को ही होता है। तो ये जो हम जल का बहना आदि देखते हैं वे एकेन्द्रिय गमन करके यानी वे विहायोगति के कारण चलकर गमन करके नहीं जाते। मैंने आपको बताया था कि जल की तो ऐसी विशेषता है उसका नेचर ऐसा है कि वह ढलान की तरफ बहता है। यानी वह स्वयं चल करके नहीं जा रहा है जल। समझ में आती है बात? कोई चींटी स्वयं चल करके जा रही है न? इसतरह से एकेन्द्रिय जीव स्वयं चल करके नहीं जा रहे हैं यह बात है। *श्रोता: यह वायु भी?* यह वायुकायिक भी, उसकी विक्रिया होती है वह बात अलग है, हां, परंतु वह विहायोगति के कारण नहीं है। *श्रोता: मारणांतिक समुद्घात?* मारणांतिक, उनका प्रश्न तो अधूरा है। तो क्या वे मारणांतिक समुद्घात करते हैं कि नहीं करते हैं? मारणांतिक समुद्घात में चलकर तो जाना नहीं है। आत्मप्रदेश उसी रूट में फैले रहते हैं जहां से वह जीव अन्य भव में जानेवाला है। पंचेन्द्रिय की बात करेंगे, पंचेन्द्रिय भी जो मारणांतिक करता है वह तो विहायोगति के कारण तो करता नहीं है। जैसे हम चलकर

यहां से भोजनालय में चले जायेंगे ऐसा चलना नहीं है वहां। आत्मप्रदेशों का फैलना है। उसके लिये कोई विहायोगति नामकर्म की जरूरत नहीं है। मरण के बाद भी जब गमन होता है वहां विग्रहगति में कहां विहायोगति है? वह विहायोगति नामकर्म का उदय तो शरीरपर्याप्ति पूरी होने के पश्चात् शुरू हो जाता है। ख्याल में आती है बात?

श्रोता: तीन वातवलय जो हैं तनुवातवलय, घनवातवलय वगैरह इनका प्रयोजन क्या है? क्या पृथ्वी को संभालने के लिये है? नरक से स्वर्ग तक जो पृथ्वी है उसको संभालने के लिये है? उसका प्रयोजन क्या है? आपका ऐसा प्रश्न है कि वातवलयों का प्रयोजन क्या है? पृथ्वियों को संभालने के लिये है कि क्या है? वह सहजरूप से स्वयंसिद्ध रचना है। किसी रचना का कोई प्रयोजन नहीं है। हां, कहां क्या-क्या रचना है बस ये हम जानते हैं। ज्ञान के द्वारा हम इनको जान रहे हैं। ये जानने का क्या प्रयोजन है? यह हमारा स्वभाव है। हम अपने में रहते हुये पूरे विश्व को जान सकते हैं और जानते भी हैं और इसका जो निषेध करता है न, हमें यह नहीं जानना, वह नहीं जानना, हमें थोड़ी चीजें जाननी, दूसरी नहीं जाननी तो हम ज्ञान स्वभाव का ही निषेध कर रहे हैं।

श्रोता: ये एकेन्द्रिय जीव गमन नहीं करते, तो विग्रहगति में वे कैसे गमन करते हैं? वही तो कहा, विग्रहगति में जो गमन होता है वहां विशिष्ट उन्होंने आयु भी बांधी है, गति भी बांधी है और उनका वहां पर जो गमन होता है वह गति नामकर्म के निमित्त से सहज हो जाता है। यह गमन करना यानी चलकर जाना नहीं है। वहां तो आत्मप्रदेश सहजरूप से वैसे फैलते हैं। ऐसा अगर होगा तो हम पूछेंगे आपको, अरिहंत दशा के बाद चौदहवें गुणस्थान के बाद, सिद्ध ऊपर सिद्धालय में विराजमान होने को जाते हैं; एक समय का गमन होता है; वे क्यों करते हैं? हां, यह गमन तो है वहां। वह गमन और वह विहायोगतिवाला चलकर गमन अलग बात है। आत्मप्रदेश यहां से वहां जाना वह बात अलग है और यह गमन करके जाना, जो हम चलकर जाते हैं वह बात अलग है।

श्रोता: सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव मारणांतिक समुद्घात करते हैं? हां, प्रश्न ऐसा है कि क्या सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव मारणांतिक समुद्घात करते हैं? मरनेवाले जीवों में से बहुभाग जीव मारणांतिक समुद्घात करते हैं। *श्रोता: कंपल्सरिलि?* कंपल्सरिलि-बंपल्सरिलि कुछ नहीं है। आयु का बंध हुआ है और जहां आयु का बंध हुआ है और अभी मरण एक

अंतर्मुहूर्त बाद होनेवाला है तो सहजरूप से किसी-किसी के आत्मप्रदेश जहां जन्म होनेवाला है वहां तक फैले रहते हैं। मरण होते ही मूल शरीर से प्रदेश उचककर एक-एक मोड़ तक जाकर फिर जितने समय में पहुंचना है उतने समय में वहां पहुंच जाते हैं। सर्वार्थसिद्धि के देव भी मरकर यहां मनुष्य में आते हैं तो मारणांतिक कर सकते हैं। यह तो सहजरूप से होता है। उसके लिये कोई ऐसा वहां जाकर आये इसलिये अभी हंसते-हंसते मरे ऐसा कुछ नहीं है। क्योंकि अनंत जीव, एकेन्द्रियों में तो अनंत जीव हैं; निगोदराशि अनंत है; तो हर समय में अनंत जीवों के मारणांतिक हो रहे हैं। हर समय में अनंत जीव मर रहे हैं। हर समय में अनंत जीवों का उपपादवाला जो दंड है यानी प्रदेश फैले हैं, पूरे लोक में फैले हैं क्योंकि अनंत जीव हैं और लोक तो असंख्यातप्रदेशी है। तो पूरा लोक उनके मारणांतिक के द्वारा भरा पड़ा है। *श्रोता: मोड़ लेते हैं?* बस मोड़ भी लेंगे मारणांतिक में। जैसे मरण के बाद जाते हैं वैसे ही मारणांतिक में भी मोड़ होते हैं।

तो हम अभी ये स्वर्गों के विमान कहां हैं उसे देख रहे थे। १४ नंबर का लास्ट चार्ट निकालिये। *श्रोता: ऐसा बताया आपने सभी पर्यायों के जीव बहुतायत में मारणांतिक करते हैं।* हां, मेजॉरिटी करते हैं। *श्रोता: जो नहीं करते उनका क्या?* कोई कारण नहीं है। सहजरूप से किसीके होता है, किसीके नहीं होता; परंतु जो होता है उसको कहने में आ जाता है। ये देवों के विमान कहां, कितने हैं उनकी बात है। जैसे हमने नरकों में देखे इतने सारे पटल हैं; वहां तो हम ऊपर से नीचे पटलों को गिनेंगे; नरकों को भी ऊपर से नीचे गिनेंगे। पहला नरक, फिर उसके नीचे दूसरा, उसके नीचे तीसरा, उसके नीचे चौथा...। स्वर्गों के विमान हम नीचे से ऊपर पहला आदि कहते हैं। पहला और दूसरा स्वर्ग एक लेव्हल पर हैं। पहला नाम लेंगे सौधर्म वह दक्षिण की तरफ है और ईशान वह उत्तर की तरफ है। ऐसा हर एक में, तीसरा है वह दक्षिण की तरफ, चौथा है वह उत्तर की तरफ। तो उनकी संख्या और उनके पटलों की संख्या यहां बतायी है। नीचे से ऊपर हम पढ़ेंगे, यह १४ नंबर का चार्ट नीचे से ऊपर पढ़ेंगे। देखो, **सौधर्म ईशान** जहां लिखा है – मिला सबको? उसमें **३१** पटल हैं और वहां विमानों की संख्या कितनी है **३२ लाख** और **२८ लाख** मिलकर कितनी हुयी? ६० लाख। **सनत्कुमार - माहेन्द्र के ७ पटल हैं।** पटल अभी नीचे से ऊपर हैं। ऐसे डेढ़ राजू एरिया में सौधर्म-ईशान स्वर्ग के ३१ पटल हैं, उनमें वे विमान हैं। विमानों की कैसी रचना होती है? सेंटर में एक होता है जिसको इंद्रक विमान

कहेंगे और फिर चारों ओर एक लाइन में होते हैं उनको श्रेणीबद्ध कहते हैं। विदिशाओं में भी होते हैं और फिर बीच में ॲटरँडम जो होंगे जो कहीं भी, ऐसे बिखरे हुये फूल की तरह उनको प्रकीर्णक कहते हैं। ऐसी रचना हर पटल में होती है।

नीचे से ऊपर एक-एक पटल के प्रत्येक श्रेणीबद्ध में साइड से एक-एक विमान कम होते चला जाता है, प्रति पटल। एक-एक श्रेणीबद्ध में से एक-एक विमान सभी चारों ओर से कम होते हैं। तो देखो, सनत्कुमार - माहेन्द्र के ७ पटल हैं; उसमें दक्षिणवाले सनत् कुमार की तरफ **१२००००० विमान** हैं न? और माहेन्द्र के **८००००० विमान** २०००००० टोटल हो जायेगी। **ब्रम्ह युगल के ४ पटल** हैं और उसमें **४००००० विमान** हैं। **लान्तव युगल** में २ पटल हैं उनमें **५०००० विमान** हैं। **शुक्र युगल** के **४००००, शतार युगल** के **६०००, आनतादि ४** नाम मालूम हैं? आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, उनमें **७०० विमान** हैं। **अधो ग्रैवेयक**, देखो, यहां ग्रैवेयकों के नाम कैसे लिखें? अधो, मध्य और ऊर्ध्व; अधो में तीन, मध्य में तीन और ऊर्ध्व में भी तीन ग्रैवेयक हैं। क्योंकि इनको अलग नाम नहीं हैं। नीचे के तीन, मध्य के तीन, ऊपर के तीन। अब अधो में भी हम कहेंगे; अधो में भी अधो, मध्य, ऊर्ध्व कहेंगे। अधो यानी उसको हेठ्ठिम नाम दिया है। उनको वहां हेठ्ठिम, मज्झिम, उपरिम कहेंगे। हर एक में से तीन-तीन भेद हो गये, तीनों के मिलकर यहां तीन पटल हैं और उनमें **अधो ग्रैवेयक** में **१११** विमान हैं, **मध्य ग्रैवेयक** में **१०७** हैं, **ऊर्ध्व ग्रैवेयक में ९१** हैं। **अनुदिश,** अनुदिश में टोटल कितने हैं? हमें मालूम है **९** विमान हैं; सेंटर में एक है, चार दिशाओं में एक-एक है और विदिशाओं में एक-एक है, मिलकर ९ हो गये। एक सतह पर, एक लेव्हल पर ९ हैं। नौ ग्रैवेयक कहेंगे तो एक के ऊपर एक नौ हैं और उनमें बहुत सारे विमान हैं और नौ अनुदिश कहेंगे तो बीच में एक है और फिर ८ विमान बाजू में हैं। **अनुत्तर** कहेंगे तो सेंटर में एक है और ४ बाजू में एक-एक विमान है। बीच सेंटरवाला है वह सर्वार्थसिद्धिवाला है। *श्रोता: ऊंचा है?* ऊंचा नहीं है, एक लेव्हल पर वह है। एक लाख योजनवाला है। जितना हमारा जम्बूद्वीप है उतना ही एक लाख योजन व्यासवाला वह सर्वार्थसिद्धि विमान है और बाकी बाजू में चार हैं।

उन सबकी टोटल मिलकर विमानों की संख्या कितनी है? ८४,९७,०२३। यह कुछ संख्या सुनी-सुनीसी लगती है। *श्रोता: अकृत्रिम जिनचैत्यालय की पूजा में आता है।*

ऊर्ध्वलोक के अकृत्रिम जिनचैत्यालय हैं न यहां? हां, प्रत्येक विमान में एक-एक अकृत्रिम चैत्यालय है उसकी बात है यह। अकृत्रिम चैत्यालयों की हम पूजा करते हैं न? तो उनकी विशिष्ट गिनती करते हैं। वे कितने हैं? *श्रोता: सात करोड़ बहत्तर लाख।* सात करोड़ और बहत्तर लाख अकृत्रिम जिनालय कहां के हैं? अधोलोक के यानी भवनवासियों के हैं। मध्यलोक के ४५८ हैं और स्वर्गों के विमानों के ८४,९७,०२३ हैं परंतु वहां न हमने ज्योतिषियों के अकृत्रिम चैत्यालय की बात की, न व्यंतरों के अकृत्रिम चैत्यालयों की बात की। सबको मिलायेंगे तो असंख्यात हो जाते हैं। हमने तो ये केवल संख्यात को गिना है वहां पर। जब हम अर्घ्य देते हैं तो आठ करोड़ छप्पन लाख सत्तानवे हजार चार सौ इक्यासी इतनी इनकी संख्या कहते हैं। तो हमने स्वर्गों की और ये नरकों की बात देखी कहां क्या है; अब हम आगे देखते हैं क्योंकि यह पूरे विश्व की यानी लोकाकाश की रचना कैसी है उसको हम यहां देखने जा रहे हैं। अब वहां के जीवों की बात हम बाद में देखेंगे। कहां कौन-कौनसे जीव मरकर जाते हैं, कैसे-कैसे जा सकते हैं, कहां तक मरकर जा सकते हैं उसकी बात तो अलग से होगी।

श्रोता: इतने बड़े विमान हैं लाखों योजन के उसमें एक ही जिनालय है? हां, एक-एक विमान में एक-एक है। देखो, एक बात हमने देखी थी, आपको मैंने बतायी थी कि भवनवासियों के तो भवन कहलाते हैं और व्यंतरों के क्या-क्या होते हैं? आवास भी हैं, भवन भी हैं और भवनपुर भी हैं। देखो, यह बात ७० पेज पर है, सेव्हन झिरो। देखो, नीचे का पॅरेग्राफ, **अब अधोलोक के प्रकरण में हमें खरभाग और पंकभाग की चर्चा करनी है, वे हैं तो अधोलोक में परंतु वहां देवगति के जीव भवनवासी और व्यंतर रहते हैं।** यानी हम आपको पूछेंगे देव कहां रहते हैं? ऊर्ध्वलोक में रहते हैं कि अधोलोक में? *श्रोता: तीनों लोक में।* तीनों लोक में; क्योंकि ऊर्ध्वलोक में विमानवासी तो हैं ही, ज्योतिषि तो मध्यलोक में कहलायेंगे और अधोलोक में भवनवासी और व्यंतर हैं। वैसे व्यंतर तो मध्यलोक में भी हैं, ज्योतिषि भी मध्यलोक में है तो **भवनवासियों के भवन होते हैं किंतु व्यंतरों के भवन भी हैं आवास भी हैं भवनपुर भी हैं।** तो **भवन किसे कहना? आवास किसे कहना?** और **भवनपुर किसे कहना?** तो **भवन तो पृथ्वी के अंदर होते हैं – बड़े-बड़े अनेक योजन विस्तारवाले चौकोर, लगभग ३०० योजन ऊंचाईवाले होते हैं। प्रत्येक भवन में सौ-सौ योजन ऊंचा एक पर्वत होता है जिसके ऊपर अकृत्रिम**

जिन चैत्यालय होता है। एक-एक चैत्यालय में १०८-१०८ जिनबिम्ब विराजमान हैं जो ५०० धनुष ऊंचाईवाले हैं, जो रत्नमयी हैं। रत्नमयी कहा है; रत्न उनके ऊपर जड़े नहीं हैं। इसके बारे में प्रश्न होते हैं न? हां, रत्नों से जड़े नहीं हैं। वे रत्नमयी हैं, रत्नों से ही अकृत्रिम, नित्य ही बने हुये हैं। **वहां चैत्यवृक्षादि होते हैं।** उनके विस्तार वगैरह हम देखेंगे बाद में। वह **आवास क्या है** उसको **देखते हैं।** देखो, नीचे की लाइन, **पृथ्वी के ऊपर ऊंचे स्थानों में – तालाब, वृक्ष, पर्वत आदि के ऊपर व्यंतरों के जो निवासस्थान हैं उन्हें आवास कहते हैं।** यानी **व्यंतर तो अनेक जगहों में रहते हैं, खरभाग और पंकभाग में तो रहते ही हैं, परंतु जैसे हम पृथ्वी के ऊपर रहते हैं वैसे वे भी पृथ्वी के ऊपर, वृक्षों, पर्वतों एवं समुद्रों के ऊपर भी रहते हैं।** ऐसा नहीं है कि केवल पृथ्वी के ऊपर ही रहते हैं। जैसे लाख योजन ऊंचाई तक मध्यलोक है तो हर एक दस-दस हजार और कहीं बीस हजार हाथ की ऊंचाई पर अलग-अलग व्यंतरों के वे आवास वगैरह पाये जाते हैं। अब हम आगे देखेंगे अलग बात, क्योंकि बहुत सारी विस्तार से बातें हैं, है न?

श्रोता: इसका अलग से शिबिर होना चाहिये। अलग शिबिर हुआ था उसीके बाद तो यह जैन भूगोल पुस्तक बनी है, हां। अब हम यहां थोड़ी मध्यलोक की बात देखेंगे। ऊर्ध्वलोक में हमने क्या देखा? देवों के विमान हैं, विमानवासी देवों के। देव भी कितने प्रकार के होते हैं मालूम है? *श्रोता: चार प्रकार के।* हां, कौनसे चार प्रकार? *श्रोता: भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषि और वैमानिक।* भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषि और वैमानिक। वैमानिक में भी दो प्रकार होते हैं। *श्रोता: कल्पवासी और कल्पातीत।* कल्पवासी और कल्पातीत। कल्पवासी का अर्थ क्या है? *श्रोता: जिसमें अलग-अलग प्रकार के देव हैं।* जिसमें अलग-अलग ग्रेडस् के देव बतायेंगे न हम? दस प्रकार के पाये जाते हैं; इन्द्र है, प्रतीन्द्र है, उसके फिर लोकपाल हैं, सामानिक हैं, त्रायस्त्रिंश हैं, अंगरक्षक, पारिषद, अनीक वगैरह होते हैं; जिनमें ये भेद हैं वे सारे हैं कल्पवासी। कल्पातीत कहां के हैं? ग्रैवेयक और ऊपर अनुदिश और अनुत्तर इनको कल्पातीत कहेंगे। वहां प्रत्येक जीव इंद्र है, अहमिन्द्र कहेंगे। अहमिन्द्र का अर्थ मालूम है? *श्रोता: सभी इन्द्र हैं।* क्यों नवीनभाई? नहीं मालूम आपको? वहां कोई स्वामी और सेवक का भेद नहीं है। जैसे हम बम्बईवाले या अमेरिकावाले क्या करते हैं? वहां कोई सेवक नहीं मिलता। हमारा अपना काम हम खुद ही कर लेते हैं। हां, अहमिन्द्र हैं हम। यह तो ऊपर की बात हुयी, देवों की बात।

अब यहां हम तिर्यक्लोक यानी मध्यलोक में कैसी रचना है? वह भी देखेंगे। यह तो शॉर्ट में देख रहे हैं न? ये हमारे सारे जन्मस्थान कहां-कहां थे उन्हें हम देख रहे हैं। इन सभी प्रदेशों में हमने अनंतों बार जन्म धारण किया है। अभी हमारा जन्मस्थान कहां था? जन्म का प्रदेश, याद करो! हम कौनसे हॉस्पिटल में जन्मे थे? वह जन्म तो प्रसूति के बादवाला जन्म है। यहां जन्म उसको कहते हैं जब शरीर धारण किया था; जब मां के गर्भ में आये थे। तो अभी तो हमारा जन्म मनुष्यलोक में हुआ है। जो जिसका जहां जन्म का प्रदेश है और उसको क्षेत्रपरावर्तन करना है तो उसके ॲड्जेसन्ट प्रदेश पर जब जन्म होगा तब अनुक्रम में गिनेंगे। बीच में आप लोग सब स्वर्ग में चले जायेंगे तो यहां के प्रदेश पर तो जन्मेंगे नहीं। अभी आगे देखेंगे यहां, तिर्यक्लोक ३ नंबर के चार्ट में। हमने एक बात देखी थी, इस मध्यलोक में यानी वैसा देखेंगे तो पहली पृथ्वी कितनी बड़ी है? पूर्व-पश्चिम ऐसी एक राजू और दक्षिणोत्तर सात राजू है। उसके बीच जो त्रसनाली है वह एक राजू बाय एक राजू स्क्वेअर है। उस स्क्वेअर में पूरे ही सभी बॉर्डर को टच करते हुये अगर हम एक गोल करेंगे तो यह स्वयंभूरमण समुद्र का बाहरी किनारा होगा। *श्रोता: समुद्र का?* समुद्र, स्वयंभूरमण समुद्र का। यह स्वयंभूरमण समुद्र से अंदर जम्बूद्वीप की ओर चले जाओ तो आधे-आधे-आधे करते अंदर तक जाओ, या हमें जम्बूद्वीप से, सेंटर से समझाना हो तो सबसे बीच में एक लाख योजन विस्तारवाला यानी डायमीटरवाला जम्बूद्वीप है। देखो बाजू के ४ नंबर के चार्ट में देखो, सेंटर से हम समझायेंगे आपको।

एकदम सेंटर में एक पीला डॉट दिख रहा है आपको? वह क्या है? जम्बूद्वीप है। उसका विस्तार कितना है? डायमीटर, एक लाख योजन परंतु उसकी एक बाजू यानी त्रिज्या कितनी होगी? पचास हजार योजन। उसके आगे ही उसको सराउंडिंग जहां लवणसमुद्र लिखा है, ब्लू है; उसका विस्तार, उसे डायमीटर नहीं कह सकते; उसका एक बाजू का विस्तार कितना है? दो लाख योजन। उसके आगेवाला जो है जिसमें वह लाइन-लाइन दिख रही है हां, उसका नाम क्या है? धातकीखण्ड; वह है चार लाख योजन विस्तारवाला। उसके आगे कालोदधि समुद्र है, आठ लाख योजन का है। उसके आगे पूरा का पूरा पुष्करवर द्वीप सोलह लाख योजन का है परंतु उसके आधे में ही जो ऐसी झिगझॅग लाइन बतायी है, वह मानुषोत्तर पर्वत है। उस मानुषोत्तर पर्वत के कारण वह पुष्करद्वीप जो है वह आधा मनुष्यलोक में है और आधा बाहर की ओर है। तो देखो सबसे सेंटरवाला जम्बूद्वीप

है। फिर एक समुद्र, फिर धातकीखण्ड, फिर एक समुद्र और आगेवाला आधा द्वीप है; इसलिये इसको क्या कहते हैं? ढाई द्वीप, ढाई कहो, अढाई कहो एक ही बात है और इसका विस्तार कितना होगा? पैंतालीस लाख योजन डायमीटर होगा। एक बाजू, सेंटर से एक बाजू देखेंगे तो जम्बूद्वीप के आधा लाख, फिर लवणसमुद्र के दो लाख, ढाई हो गये। आगे चार लाख, साढ़े छह हो गये। आगे आठ लाख हां, कितने हुये साढ़े चौदह हुये। फिर उसके आगे आठ लाख, साढ़े बाईस लाख हुये। साढ़े बाईस प्लस साढ़े बाईस कितने हुये? पैंतालीस लाख योजन। यह मनुष्यक्षेत्र है या इसको ढाई द्वीप कहते हैं। इसके बाहर क्या है? यही चलेगा आगे, पुष्करद्वीप है उसके आगे समुद्र है दोगुणा, उसके आगे का द्वीप दोगुणा, समुद्र दोगुणा। हमने देखा था, वह नन्दीश्वर द्वीप के प्रकरण में हमने देखा था। पेज नंबर १९७, वह नन्दीश्वर द्वीप तक कौन-कौनसे समुद्र और द्वीप हैं उनको देखेंगे।

नीचे से तीसरी लाइन, देखो, सबसे सेंटर में है **जम्बूद्वीप** मिला क्या सबको? हां, दूसरे नंबर पर है **लवणसमुद्र**। फिर **धातकीखण्ड**, फिर **कालोदधि समुद्र**, फिर **पुष्करवर द्वीप, पुष्करवर समुद्र, वारुणीवर द्वीप, वारुणीवर समुद्र, क्षीरवर द्वीप, क्षीरवर समुद्र, घृतवर द्वीप, घृतवर समुद्र,** फिर **क्षौद्रवर द्वीप** और **क्षौद्रवर समुद्र** और फिर **नन्दीश्वर द्वीप।** द्वीपों में इसका आठवां नंबर है। तो ऐसे ही कितने हैं द्वीप और समुद्र? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं। यानी वे सारे दोगुणे-दोगुणे-दोगुणे विस्तारवाले हैं। जो दो नंबर पर है न अभी? सेंटर से दो नंबर पर है, वह दो लाख योजनवाला है। तीन नंबर पर है २ × २, चार नंबर पर है २ × २ × २। जितने नंबर पर है उसमें से एक कम करके उतनी बार २ को आपस में गुणा करना तो उतने लाख योजन हमें उसका एक बाजू का विस्तार आयेगा, विस्तार यानी उसकी विड्थ हम जिसको कहेंगे। *श्रोता: रेडिअस।* रेडिअस नहीं है। रेडिअस सेंटर से कहलाती है और वह बस एक बाजू की चौड़ाई है क्योंकि वह इसतरह से ब्रॉड है, कितना ब्रॉड है? उसका विस्तार आता है। अगर उसकी इनर रेडिअस देखनी है तो अंदर के सभी द्वीप और समुद्रों को इन्क्लूड करना पड़ेगा। उस विशिष्ट द्वीप या समुद्र का जो वलयव्यास है-उसकी चौड़ाई-विड्थ जो है उसमें से डेढ़ लाख योजन कम कर दो, तो उसकी इनर रेडिअस आयेगी और इनर रेडिअस में उसकी विड्थ मिला दो तो उसकी आउटर रेडिअस आयेगी। ख्याल में आती है बात? गणित आता है तो बहुत कठिन हो जाता है।

तो यहां हम क्या देख रहे थे? ये तो हमने कुछ असंख्यात द्वीप-समुद्रों की बात की। दोगुणा-दोगुणा-दोगुणा-दोगुणा, देखो, कितनी बार दोगुणा होगा? कितने द्वीप और समुद्र हैं? *श्रोता: असंख्यात हैं।* २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य प्रमाण हैं। उसमें एक मायनस करो, उतनी बार २ संख्या लिखकर आपस में गुणा करो तो जो संख्या आयेगी उतने लाख योजन स्वयंभूरमण समुद्र का विस्तार होगा। जो हमने करीबन कितने देखा है? १/४ राजू। अंतिम समुद्र का विस्तार, स्वयंभूरमण समुद्र कितना चौड़ा है? देखो, चार्ट नंबर ३ में, स्वयंभूरमण समुद्र की बात पूछ रहे हैं हम। अंतिम जो समुद्र है उसके अंदर के सभी द्वीप और समुद्र को एक बाजू रखो, उसमें डेढ़ लाख योजन मिला दो; तो स्वयंभूरमण समुद्र की चौड़ाई यानी एक बाजू का विस्तार आयेगा। इसको हमने देखा था, यह ऐसा क्यों है? क्योंकि पहले और दूसरे में ही डेढ़ लाख योजन का अंतर है। जम्बूद्वीप की रेडिअस देखेंगे तो पचास हजार योजन है और लवणसमुद्र का विस्तार है २ लाख योजन। यह जो डेढ़ लाख का डिफरन्स है वह अंत तक है। ख्याल में आयी बात यह?

१२४ नंबर का पेज, पहला पॅरेग्राफ पढ़ेंगे। **लवणसमुद्र का एक दिशा में विस्तार २ लाख योजन का है, उसके आगे उसको घेरे हुये आगे का धातकीखण्ड नाम का द्वीप ४ लाख योजन विस्तारवाला है। पहले ढाई लाख त्रिज्या में ये चार लाख मिलाकर** साढ़े छह लिखना चाहिये, पुरानी पुस्तकों में वह साढ़े सात लिखा है, उस सात को छह करना। नयी पुस्तकों में तो वह सुधारा हुआ है। आपके पास क्या लिखा है? सात है उसको छह करो और सेकंड एडिशन जिनके पास हैं उनके तो वह ठीक किया हुआ है। साढ़े सात लिखा है **साढ़े छह लाख योजन त्रिज्यावाला।** जिसके ठीक है उसको कोई चिंता नहीं है और जिसमें सात है उसको छह करो और आगे की लाइन **अर्थात्** पंद्रह लिखा है वहां तेरह करना **तेरह लाख योजन बाहरी व्यासवाला धातकीखण्ड द्वीप है।** यह समझ में आती है बात? देखो, हम इसे ४ नंबर के चार्ट के आधार से देखेंगे। यहां पहले पॅरेग्राफ में क्या लिखा है पृष्ठ १२४ पर? सेंटर में जम्बूद्वीप है। मध्य पॉइंट से, मध्यबिंदु से एक तरफ पचास हजार योजन क्योंकि लाख योजन तो हम उसका डायमीटर कह रहे हैं तो उसकी त्रिज्या कितनी हुयी? पचास हजार योजन। फिर लवणसमुद्र का एक बाजू का विस्तार कितना है? *श्रोता: दो लाख।* दो लाख; मिलकर कितना हुआ? *श्रोता: ढाई लाख।* ढाई लाख, बराबर। उसके आगे चार; मिलकर कितने हुये? *श्रोता: साढ़े छह।* साढ़े छह

और साढ़े छह कितने हो गये? *श्रोता: तेरह।* तेरह लाख योजन, यानी बाहरी विस्तार तक कितना हुआ? तो तेरह, तो यह करेक्शन कर दी आपने? बहुत अच्छा।

श्रोता: सूची? नहीं-नहीं, वह सूची की बात बाद में देखेंगे। सूची यानी आउटर डायमीटर, उसीको जो हमने देखा है। अभी देखो, अब तक हमने कहां तक देखा? धातकीखण्ड का बाहरी व्यास, बाहर तक का विस्तार; यानी एक बाहरी तरफ से दूसरी बाहरी तरफ तक, कितना देखा हमने? साढ़े छह और साढ़े छह, तेरह लाख, इसको कहते हैं सूची; यह धातकीखण्ड द्वीप की सूची कहलायेगी। उसके आगे कालोदधि समुद्र की सूची कितनी होगी? तो अभी हमने साढ़े छह गिने थे। साढ़े छह तक गये थे न? साढ़े छह प्लस डेढ़, आठ लाख उसका विस्तार होगा एक बाजू का, तो उसमें मिला देना है और फिर दोनों तरफ को मिला देना, कितना होगा? यह साढ़े छह तक था। देखो, जम्बूद्वीप आधा लाख, लवणसमुद्र दो लाख था; धातकीखण्ड चार लाख था; कालोदधि समुद्र आठ लाख था; यानी हमने धातकीखण्ड तक साढ़े छह गिने थे, उसमें आठ मिला दो। *श्रोता: साढ़े चौदह।* साढ़े चौदह। उसके दोगुणा करो तो उनतीस होगा यानी कालोदधि समुद्र की सूची उनतीस लाख योजन होगी। समझ में आ रही है बात? यह आगे-आगे के उसमें मिलाते जाना, बस इतनी बात है। तो ऐसे ही एक द्वीप और एक समुद्र, एक द्वीप और एक समुद्र कहां तक चले जायेंगे स्वयंभूरमण समुद्र तक। यहां तक की बात ख्याल में आयी?

वह मानुषोत्तर पर्वत के अंदर उसको मनुष्यक्षेत्र कहेंगे। उसके बाहर हमने कहां तक देखा था? ३ नंबर के चार्ट में देखना। सबसे बाहर स्वयंभूरमण समुद्र है। उसके अंदर उसके आधे प्रमाण स्वयंभूरमण द्वीप है, जिसमें दो अलग-अलग हरे रंग बताये हैं। क्योंकि सेंटर में जो पर्वत है सराउंडिंग पूरा, कंकनाकृति उसका नाम है स्वयंप्रभ पर्वत। तो स्वयंप्रभ पर्वत के बाहर – स्वयंभूरमण द्वीप का आउटर हाफ और पूरा स्वयंभूरमण समुद्र, यहां कर्मभूमि पायी जाती है और बाकी जो चार कोण हैं न? जो ग्रीन कलर में बतायें हैं, चतुष्कोण जिसको कहेंगे, वहां पर भी कर्मभूमि है। यानी इतनी एरिया में कर्मभूमि है। वहां विकलेन्द्रिय भी पाये जायेंगे, पंचेन्द्रिय तिर्यंच भी पाये जायेंगे और वहां के तिर्यंच तो पंचम गुणस्थानवर्ती भी होंगे जो मरकर सोलहवें स्वर्ग तक जा सकते हैं और मिथ्यादृष्टि वहां से मरकर सातवें नरक तक भी जायेंगे। वहां के महामत्स्य तो सातवें नरक में जाते हैं वह तो

हमने सुना है। *श्रोता: उन कर्मभूमियों में विकलत्रय भी हैं?* विकलत्रय हैं, क्योंकि हमने बड़ी अवगाहनावाले वहीं पर देखे थे; शंख हैं, रक्तबिच्छू हैं, भ्रमर हैं, वहां के ही देखे थे न बड़ी-बड़ी अवगाहनावाले। कल ही बात की थी हमने, तो वे सारे वहीं के हैं। स्वयंप्रभ पर्वत के बाहर स्वयंभूरमण द्वीप के परभाग में एकेन्द्रिय की बड़ी अवगाहनावाला कमल भी है। वे सारे बड़ी अवगाहनावाले वहीं पर हैं और महामत्स्य जो उत्कृष्ट अवगाहनावाले हैं वे तो समुद्र में हैं। देखो, उन महामत्स्य का तो ऐसा वर्णन हमने पढ़ा है, धवला में ही पढ़ा है कि वे कितने बड़े हैं? वे हजार योजन और इतनी लंबी-चौड़ी उनकी जो एरिया है तो वे तो पड़े रहते हैं तो उनकी पीठ पर मिट्टी इकट्ठी हो जाती है। आपने पढ़ा है न? ये तो हां-हां कर रहे हैं, पढ़ा है न? *श्रोता: आपने ही कहा था।* हां, हमने ही कहा था, अच्छा? हमारे कहने पर भरोसा मत रखना, आगम को देखना। हां, नहीं तो वैसी परिस्थिति हो जायेगी कि जैसे हमारे सायकलवाले ने पंक्चर कर दिया न?

तो हमारे प्रोफेसरसाहब कहते हैं कि आपने नहीं देखा? तब से हमने नक्की किया हां, सामनेवाला कहता है फिर भी हम देखेंगे उसको कि वह सही कहता है कि नहीं कहता है और हम आगम से टॅली करेंगे, हां। कोई कहता है वह बहुत बड़ा विद्वान है; बड़ा विद्वान कहता है इसलिये सच है ऐसा नहीं। आगम के अनुसार है कि नहीं तब उसको हम मानेंगे। *श्रोता: उसके लिये आगम तो पढ़ना पड़ता है।* आगम तो पढ़ना पड़ेगा क्योंकि ऐसा हो सकता है जैसे हम बोलते-बोलते गुणाकार के बदले भागाकार कुछ कह देते हैं। ऐसी भूले तो हो सकती हैं और हो सकता है कि क्षयोपशमज्ञानी हैं, उनकी कहीं कुछ मिस्टेक हो सकती हैं। आगम तो हमारे लिये प्रमाण है, तो हम आगम के अनुसार चलेंगे। इसमें हमें किसीका इन्सल्ट नहीं करना है। हमें तो आगम के अनुसार चलना है, हां। तो कहां तक आये थे? भटक गये। ये जो महामत्स्य हैं, हां, मिट्टी-मिट्टी।

श्रोता: स्वयंप्रभ पर्वत? स्वयंप्रभ पर्वत नहीं, वह तो महामत्स्य की बात चल रही है। कितने तो ऐसे ही पड़े रहते हैं। स्वयंभूरमण समुद्र इतना बड़ा है, उसकी एरिया तो राजू में गिनेंगे, एक चौथाई $\frac{१}{४}$ राजू तो उसकी चौड़ाई है। इन महामत्स्यों को भी करवट बदलने के लिये कितनी बड़ी एरिया चाहिये। जो ऐसे ही पड़े रहेंगे उनकी पीठ पर मिट्टी ही मिट्टी जम जाती है; उसमें बड़े-बड़े वृक्ष तैयार होते हैं, जंगल बन जाता है। इतना ही नहीं संज्ञी

पंचेन्द्रिय पर्याप्त सम्मूर्च्छन जीव भी वहां पैदा हो जाते हैं। बाघ, सिंह जैसे बड़े प्राणी तथा द्वीन्द्रियादि जीव जंतू सभी होंगे। जैसे टापू होते हैं न, कोई अंदमान-निकोबार जैसे आयलंड होते हैं, ऐसे वे सेंकडों योजनों के जंगल उन महामत्स्यों के पीठ पर तैयार होते हैं। मान लो, वह महामत्स्य करवट बदलना चाहे तो क्या हो जायेगा? जैसे हमारे यहां भूकंप होता है तो क्या होता है? *श्रोता: तो क्या सब डूब जायेंगे?* हां, सब डूब जायेंगे। *श्रोता: यह छह महीने तक सोता रहता है? ऐसा है क्या?* अभी उसकी जो कुछ जैसी होगी परिस्थिति। वहां तो दिन-रात तो है नहीं। वहां दिन-रात कहां है? दिन-रात तो हमारे यहां हैं, क्यों? क्योंकि हमारे यहां सूर्य का और चंद्र का भ्रमण होता है; ढाई द्वीप के बाहर उनका भ्रमण नहीं होता है। जहां के सूर्य और तारें वहीं पर स्थित हैं, जहां के वहां स्थिर हैं। वहां सूर्य भी हैं, चंद्र भी हैं, तारें भी हैं, सब हैं; परंतु जहां के वहां स्थिर हैं। वह तारों का घूमने का कार्य तो ढाई द्वीप के अंदर होता है। यहां पर भी कुछ स्थिर तारें हैं परंतु बाहर तो सारे स्थिर ही हैं।

तो यह हमने द्वीप और समुद्रों की बात देखी थी। ये मध्यलोक में इतने सारे द्वीप-समुद्र हैं, एक से दोगुणा दूसरा, दूसरे से दोगुणा तीसरा, इसतरह ये सारे ही हैं। बीचवाले जो सारे द्वीप हैं वहां तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि होती है। *श्रोता: कहां से कहां तक?* यानी मानुषोत्तर पर्वत के बाहर और स्वयंप्रभ पर्वत के अंदर कितने द्वीप समुद्र होंगे? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात हैं क्योंकि हमने तो केवल स्वयंप्रभ पर्वत के बाहरी ओर का आधा निकाल दिया और मानुषोत्तर पर्वत के अंदरवाले ढाई द्वीप भी निकाले तो बाकी तो इतने असंख्यात हैं न! कुल द्वीप और समुद्र मिलाकर २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य प्रमाण हैं, उनमें से आधे द्वीप हैं और आधे समुद्र हैं। उन द्वीपों की संख्या में से हमने अंदर के ढाई और बाहर का आधा अर्थात् तीन कम कर दिये तो बाकी जो शेष द्वीप हैं उन द्वीपों में तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि पायी जाती है। *श्रोता: सारे द्वीपों में भोगभूमि?* सारे-सारे! *श्रोता: वहां के जीव मरकर कहां जाते हैं?* मरकर सभी देव में चले जायेंगे। मिथ्यादृष्टि हैं तो भवनवासी और व्यंतर और ज्योतिषियों में चले जायेंगे - भवनत्रिक में और सम्यग्दृष्टि हैं तो सौधर्म-ईशान में जायेंगे। *श्रोता: द्वीपों में?* द्वीपों की ही बात चल रही है। *श्रोता: सॉरी समुद्रों में?* समुद्रों में कोई जलचर नहीं पाये जाते। जलचर का अर्थ समझते हैं? *श्रोता: जलकायिक?* जलकायिक नहीं कहा, जलचर कहा; पानी में रहनेवाले त्रस जीव उनको जलचर कहते हैं। नभचर यानी पक्षी। हम-आप स्थलचर यानी थलचर हैं न? *श्रोता: नहीं।*

क्या आप स्थलचर नहीं हैं? *श्रोता: नहीं, मनुष्य हैं यहां पर।* अरे! मनुष्य हैं पर मनुष्य हैं तो भूमि पर चलते हैं न? तो इसको स्थलचर कहते हैं।

श्रोता: भोगभूमियों का जल प्रासुक है क्या? आपका प्रश्न है कि भोगभूमियों का जल प्रासुक है क्या? हां, क्योंकि वहां विकलत्रय जीव तो हैं नहीं। क्योंकि पहले भी जब हमने बात की थी वह जन्माभिषेक की, तब कहा था वह क्षीरसमुद्र का जल लाते हैं तो लोग पूछते हैं कि उसको प्रासुक कैसे बनाते हैं? वहां तो कोई जलचर हैं ही नहीं उसके अंदर। त्रस जीव उसमें नहीं पाये जाते हैं। *श्रोता: खाली द्वीपों में?* द्वीपों में जघन्य भोगभूमि हैं; समुद्रों में कोई जलचर नहीं है और जो द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय तो उसमें होते ही नहीं, पंचेन्द्रिय भी नहीं होते। हां, कोई देव उसको उठाकर समुद्र में पटक दे वह बात अलग है। तो ये हो गयी बीच में क्या-क्या रचना है उसकी बात। *श्रोता: खाली भोगभूमि के तिर्यंच हैं वहां?* हां, यानी उनकी भोगभूमि है ऐसा कहेंगे। बाहर तो मनुष्य जाते ही नहीं न, हां, इसलिये वह तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि है, मध्यम या उत्तम भोगभूमि नहीं है वहां पर। *श्रोता: वे इतने सारे असंख्यात जीव मरकर देव में जायेंगे? अन्य श्रोता: वहां कौनसे द्वीप में कर्मभूमि है?* स्वयंप्रभ पर्वत के बाहर भी द्वीप है न? आधा द्वीप; वह आधा द्वीप जो बाहर का है। स्वयंभूरमण द्वीप जो $\frac{१}{८}$ राजू है, उसका बाहरी आधा जो है $\frac{१}{१६}$ राजू ही कहेंगे न हम उसको? वहां पर भी कर्मभूमि है और चतुष्कोण में भी कर्मभूमि है, वह भी बड़ी एरिया है।

श्रोता: वहां जो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव हैं, वे असंख्यात सम्यग्दृष्टि हो सकते हैं? हां, असंख्यात हो सकते हैं। *श्रोता: चतुष्कोण में भी?* चतुष्कोण में भी होंगे। देखो, जब हम मारणांतिक की बड़ी एरिया देखते हैं, तो उसमें हमने ऐसा लिया कि बड़ी अवगाहनावाला महामत्स्य जो है वह वेदना समुद्घात करता है और वह उछलकर स्थंडिलक्षेत्र में गिरता है। चतुष्कोण को स्थंडिलक्षेत्र भी कहते हैं। तो वहां से सातवें नरक तक मारणांतिक करता है तो उसकी एरिया बहुत बड़ी ऐसी कॅल्क्युलेट करते हैं। अभी अपना समय हो चुका है। बाकी चर्चा हम थोड़ी देर के बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२२. करणानुयोग – क्यों जानना?

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। वहां जो अलग-अलग काल गिना जाता है, उसको हम व्यवहारकाल कहेंगे। हमने देखा है, गुणस्थानों में रहने के उत्कृष्ट काल को गुणस्थितिकाल कहा था। फिर भवस्थितिकाल, एक भव के उत्कृष्ट काल को भवस्थितिकाल कहा था। कर्मस्थितिकाल में कर्म का जो स्थितिबंध होता है; उसमें से सबसे उत्कृष्ट स्थितिबंध बताया जाता है; कर्म की उत्कृष्ट स्थिति का बंध कितना होता है उसको कर्मस्थितिकाल कहने में आता है। कायस्थितिकाल किसको कहते हैं? एक जीव का किसी विशिष्ट मार्गणा में रहने का उत्कृष्ट काल।

मार्गणा का अर्थ क्या है? जैसे हम कहेंगे गतिमार्गणा में, देव में और नरक में तो जो उनकी भवस्थिति वही उनकी कायस्थिति भी कहलायेगी। परंतु अन्य-अन्य मार्गणाओं में जब हम कहेंगे, तो मार्गणा का स्वरूप और उसके आलाप इनकी जानकारी आवश्यक है। आलाप का अर्थ होता है, भेदों का कथन; जैसे अभी हमने देवों की बात देखी। देवों में आलाप कैसे हैं कि सौधर्म-ईशान की बात अलग करेंगे, भवनत्रिक की बात अलग करेंगे, ऊपर के देवों की बात अलग करेंगे, फिर ग्रैवेयकों की। क्योंकि उनमें कुछ विशेषतायें हैं, जिनके आधार से वहां उनके भेद करके कथन करेंगे तो उनकी जो अपनी-अपनी बात होगी उसको हम कहेंगे, देवगति के वे भेद हो गये। जैसे तिर्यंचगति मार्गणा के भेदों में सामान्य तिर्यंच कहने से एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय सभी आ गये। उसमें दूसरा भेद कहेंगे, पंचेन्द्रिय तिर्यंच। पंचेन्द्रिय तिर्यंच में भी कहेंगे कोई पर्याप्त हैं और कोई हैं पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनिमति यानी स्त्रीवेदवाले, उनकी बात अलग बतायेंगे। पंचेन्द्रिय तिर्यंच लब्धिअपर्याप्त की बात अलग करेंगे। उनमें जो-जो विशेषतायें होती हैं उनका वहां कथन किया जाता है।

ऐसे ही इन्द्रियमार्गणा में अगर हम देखेंगे तो इन्द्रियमार्गणा कहने से एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय ये उसके भेद हुये। एकेन्द्रिय की कायस्थिति कितनी? तो आप सबको मालूम है; यानी एकेन्द्रिय में रहने का जो उत्कृष्ट काल है उसको उसकी कायस्थिति कहेंगे। वह कितनी देखी याद है न? *श्रोता: असंख्यात पुद्गलपरावर्तन।* असंख्यात पुद्गलपरावर्तन। अब समझ में आ गया? एक पुद्गलपरावर्तन का काल इतना अनंतकाल

है तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन का काल कितना बड़ा होगा! कोई त्रस, हो सकता है कि यह किसीकी अंतिम स्थिति है यानी यह त्रस का अंतिम भव है और वह एकेन्द्रिय में चला जायेगा बाय चान्स, तो कितने काल तक भटकेगा? तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन हो सकता है। पं.टोडरमलजी ने कहा इसका कोई हिसाब नहीं।

एक बार हम जयपुर शिबिर में गये थे तो हम दोनों को आमंत्रण आ गया, आमंत्रण यानी बुलावा आ गया पं.यशपालजी की तरफ से। पं.यशपालजी और बहुत सारे विद्वान वहां बैठे थे। तो वहां चर्चा चल रही थी कि देखो पं.टोडरमलजी को भी आगम का कोई प्रमाण नहीं मिला क्योंकि मोक्षमार्गप्रकाशक पुस्तक में ऐसा लिखा है कि जीव एकेन्द्रिय में चला जाता है तो उसका कोई प्रमाण नहीं कि कितने काल भटकेगा। उसका कोई प्रमाण नहीं का अर्थ क्या है? उसकी कोई मर्यादा नहीं, कोई लिमिट नहीं, कुछ बता नहीं सकते। तो उस प्रमाण का अर्थ ऐसा नहीं कि आगम का प्रमाण नहीं है। *श्रोता: ऐसा नहीं है। भंडारी साहब के पास इतना पैसा है कि उसका कोई प्रमाण नहीं है।* अच्छा-अच्छा। आप कह रहे हैं कि यहां इतने सारे इकट्ठे हो गये हैं, बड़े-बड़े वैभवशाली लोग कि उनके पास कितना वैभव है कुछ हिसाब नहीं है। *श्रोता: प्रमाण नहीं है।* प्रमाण नहीं है यानी लौकिक में हम कहते हैं न कि कोई हिसाब नहीं यानी बहुत लंबा काल है, अमर्यादित यानी अनंतकाल है। अमर्यादित यानी कह नहीं सकते इतना लंबा काल है। उस अर्थ में वह प्रमाण शब्द है। तो फिर मैंने जब बताया तो इससे सबका समाधान हो गया। क्योंकि एकेन्द्रिय में जाता है तो अधिक से अधिक असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक वहां जाता है, यह तो एकेन्द्रिय की कायस्थिति थी। अब एकेन्द्रिय के भी भेद कहेंगे।

हम कहेंगे बादर एकेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? उसको बादर एकेन्द्रियों की कायस्थिति कहने में आयेगी। बादर एकेन्द्रिय कहने से कितना काल हो जायेगा? *श्रोता: असंख्यातलोकप्रमाण।* असंख्यातलोकप्रमाण तो सूक्ष्म एकेन्द्रिय का काल है। *श्रोता: ढाई पुद्गलपरावर्तन।* ढाई पुद्गलपरावर्तन तो निगोद का काल है, बादर एकेन्द्रिय का नहीं। जब निगोद कहेंगे तो निगोद में बादर भी आये, सूक्ष्म भी आये, पर्याप्त भी आये, अपर्याप्त भी आये। निगोद की कायस्थिति कितनी है, तो ढाई पुद्गलपरावर्तन। बादर एकेन्द्रियों की कितनी है? उसमें मात्र बादर एकेन्द्रिय की बात की, तो अंगुल का असंख्यातवां

भाग। *श्रोता: बादर एकेन्द्रिय?* बादर एकेन्द्रिय में रहने का यानी बादर एकेन्द्रिय से बादर एकेन्द्रिय में गया। कभी निगोद हुआ, कभी वनस्पतिकायिक हुआ यानी प्रत्येक वनस्पतिकायिक, कभी वायुकायिक, परंतु बादर में रहा; तो उसको कहते हैं अंगुल का असंख्यातवां भाग। यानी वह कितना लंबा काल है? उसमें असंख्यातासंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी चली जाती हैं उतना यह लंबा काल है।

मात्र सूक्ष्म एकेन्द्रिय में रहने का अधिक से अधिक काल कितना है? तो कहते हैं कि असंख्यातलोक। देखो सूक्ष्म में कभी पर्याप्त होगा, कभी अपर्याप्त होगा। अकेले अपर्याप्त-अपर्याप्त-अपर्याप्त – कौनसा? सूक्ष्म; सूक्ष्म अपर्याप्त से सूक्ष्म अपर्याप्त, सूक्ष्म अपर्याप्त से सूक्ष्म अपर्याप्त होगा तो अंतर्मुहूर्त से ज़्यादा नहीं रह सकता। सूक्ष्म पर्याप्त से सूक्ष्म पर्याप्त, सूक्ष्म पर्याप्त से सूक्ष्म पर्याप्त करता रहे तो अंतर्मुहूर्त से ज़्यादा नहीं रह सकता। परंतु सूक्ष्म में रहने का काल जब कहेंगे, कभी पर्याप्त-कभी अपर्याप्त, दोनों मिलकर हम कहेंगे दो अंतर्मुहूर्त, ऐसा नहीं है। सूक्ष्म एकेन्द्रिय में रहने का लंबे से लंबा, अधिक से अधिक काल कितना है? तो कहेंगे असंख्यातलोक। यानी असंख्यातलोक में जितने प्रदेश हैं उनको समयों में कन्व्हर्ट करो इतना लंबा काल है उसका। यह समझ रहे हैं न कायस्थिति किसको कहना? यह तो हमने सूक्ष्म की कायस्थिति बतायी, बादर की अलग बतायी। अब कायमार्गणा में कहेंगे, अकेले वायुकायिक या अग्निकायिक या जलकायिक या पृथ्वीकायिक में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? तो असंख्यातलोकप्रमाण काल है। अकेले वनस्पतिकायिक में रहने का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन प्रमाण है, उसमें कभी निगोद, कभी प्रत्येक वनस्पति अर्थात् उसके सभी भेदों में रहने का उत्कृष्ट काल समझना। *श्रोता: वायुकायिक बादर?* बादर वायुकायिक, बादर अग्निकायिक, बादर पृथ्वीकायिक, बादर जलकायिक और बादर निगोद में एक-एक में रहने का उत्कृष्ट काल कर्मस्थितिप्रमाण है। कर्मस्थिति कहने से ७० कोड़ाकोड़ी सागर। इसतरह से इसको कहेंगे कायस्थिति। अभी हर एक मार्गणा में इतने भेद हो गये, वहां उनके भेद करते जाओ। हमने तो यह कायस्थितिकाल भी देखा। एक उपपादकाल देखा। वह तो एक समय होता है, जन्म का एक समय और भावस्थितिकाल, यानी एक ही पर्टिक्युलर परिणाम में रहने का उत्कृष्ट काल, उसको भावस्थितिकाल कहा था।

यह जो मार्गणाओं में हमने बहुत बार देखा है, असंख्यात पुद्गलपरावर्तन वगैरह-वगैरह बातें आती हैं, तो यह परावर्तन क्या है इसके बारे में हम यहां बातें देख रहें हैं। ऐसे पांच प्रकार के परावर्तन चलते रहते हैं। अनादिकाल से आज तक कितना काल गया है उसकी यहां हम गिनती कर रहे हैं। मिथ्यादृष्टि है या सम्यग्दृष्टि होगा तो उसने भी सम्यग्दर्शन होने के पूर्व इतना काल बिताया है कि उसके पांचों ही परावर्तन अनंतों बार हुये हैं। काल की कोई बिगिनिंग ही नहीं है तो पीछे चले जाओ, पीछे चले जाओ, पीछे चले जाओ तो उसने ऐसे परावर्तन कितने बार किये हैं? तो कहते हैं, अनंतों बार किये हैं। एक परावर्तन होने के लिये इतना अनंतकाल लगता है तो ये ऐसे परावर्तन उसने अनंतों किये हैं। तब जाकर अभी हम आज मनुष्यपर्याय में आये हुये हैं। जिसके सम्यग्दर्शन प्राप्त होगा वह नियम से अर्धपुद्गलपरावर्तन के अंदर-अंदर मोक्ष जायेगा ही जायेगा। वह भी मिथ्यात्व में चला जायेगा तो उसको इतना टाइम लगेगा। हो सकता है कि उसका सम्यक्त्व बना रहे तो उसी भव में या फिर २, ४, ५, १० भवों में मोक्ष में चला जायेगा। ख्याल में आती है ये बातें सभी?

ये क्यों जानना? क्योंकि ये इतने ऐसे परावर्तन किये हैं। तो इस भव में अगर हम नहीं चेते, अपना स्वरूप नहीं समझे, तो कहां जाकर हम जीयेंगे? क्योंकि हमारे जैसे परिणाम होते हैं हर समय के, क्योंकि दिन भर तो हम स्वाध्याय और पूजा नहीं करते हैं तो हमारे कैसे-कैसे परिणाम होते हैं? रात-दिन, दिन में भी और रात में भी और सपने में भी। हर समय का बंध तो हो रहा है और यहां से मरकर हम कहां जायेंगे और वहां से और हम कहां चले जायेंगे; जिसको कहते हैं इसका कोई हिसाब नहीं है। इस भव में अगर हमने अपना कल्याण नहीं किया तो ऐसा सुअवसर फिर अनंतकाल में मिले कि नहीं मिले पता नहीं है। मनुष्य हुआ तो भी क्या हुआ, लब्धिअपर्याप्त होकर जन्मेगा। कहीं कुभव यानी म्लेच्छों में जन्मेगा। कहीं अन्य-अन्य पर्यायों में जन्मेगा जहां जिनवाणी सुनने का भी मौका नहीं आयेगा। आज तो ऐसी परिस्थिति है कि अपने यहां मनुष्यों की संख्या बहुत बढ़ रही है। तो उनमें से कितनों को यह जिनवाणी सुनने को मिल रही है? जिनवाणी सुनने की एक तो रुचि नहीं है। सुनने को मिले तो उसका अर्थ नहीं भासित होता है। अर्थ खोलकर बतानेवाले हैं परंतु उसमें भी बहुत सारी बातें चलती रहती हैं। तो हम सुने और सुनकर समझें यह कितनी रेअर बात हो जाती है। अब हम समझ रहे हैं तो इतने मात्र से संतुष्ट नहीं

होना है! हमने जिनवाणी सुनी है, हमें ये मर्म बतानेवाले गुरु भी मिले हैं! कानजीस्वामीजी ने कितना खोल-खोलकर स्पष्टरूप से बताया है हमें। मुंह में निवाला भी डाला है, अभी बस...। *श्रोता: निगलना है।* निगलना है! कितना सरल किया है कि यह धर्म। यह तो बस अपनी बात है।

कितने जीवों ने आज तक सम्यग्दर्शन प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त किया है? सिद्ध कितने हैं? *श्रोता: अनंत।* अनंत! अनंतों ने जो प्राप्त किया है वह बात सरल होगी कि बहुत डिफिकल्ट होगी, यह बात नक्की करो। यह तो अपनी बात है, पर में तो हम कुछ कर ही नहीं सकते हैं। कुछ कर भी नहीं सकते फिर भी हम माथा उधर ही मारते रहते हैं। हमारा ही हम कर सकते हैं परंतु अपनी ओर कभी हमने देखा ही नहीं, हम कौन हैं इसके बारे में कभी सोचा ही नहीं। जिसमें मैंपना स्थापित होता है उस मैंके लिये हम कुछ भी करने को तैयार होते हैं। जब शरीर मैं हूं मान लिया तो उसके लिये सब कुछ करने की हम सोचते हैं, हमारी विचारधारा भी वैसी होती है। जब 'मैं स्वयं जीवद्रव्य हूं', 'मैं आत्मा हूं' और 'भगवान जैसा मैं शक्तिमान हूं' ऐसा जब हम विचार करेंगे; ऐसा जब हम निश्चित करेंगे तो उस मैंके लिये हमारे सारे विचार सहजरूप से वैसे ही होंगे। उसके लिये कोई ज़बरदस्ती नहीं करनी पड़ती है। हमने 'मैं कौन हूं' इसका स्वरूप निश्चित नहीं किया है और ये इतना सारा क्यों देख रहे हैं क्योंकि हमने इतनीसी भूल की; कितनी? मैं कौन हूं यह जानने में भूल कर दी है। शरीर ही मैं हूं मान लिया है तो जरूर हम अन्य-अन्य शरीर धारण करते हैं। हमने देखा सूक्ष्म निगोद से लेकर महामत्स्य तक के अलग-अलग अवगाहनावाले, अलग-अलग पर्यायोंवाले कितने-कितने भवों में हम घूम चुके हैं। इसमें से ऐसी कोई पर्याय नहीं होगी कि जिसे हमने अनंतों बार नहीं प्राप्त की होगी।

लोकाकाश का ऐसा कोई प्रदेश नहीं है जिस पर हमने अनंतों बार जन्म धारण नहीं किया होगा। तो इतने सारे परावर्तन होने पर भी यदि ऐसी ही बात होती रहेगी तो यह भी मनुष्यभव ऐसे ही चला जायेगा। ये सारे हम चौदह जीवसमास देखते हैं तो इनमें से मनुष्यपर्याय प्राप्त होना अत्यंत दुर्लभ है। देखो स्वर्ग प्राप्त करना भी सुलभ है, नारकी होना भी सुलभ है परंतु मनुष्यायु बंधे ऐसे मध्यम परिणाम होना वह तो दुर्लभ बात है। फिर भी मनुष्यपर्याय हमने अनंतों बार प्राप्त की थी वह तो अभी हम भवपरावर्तन में देखेंगे। तो प्राप्त हुयी तो क्या हुआ। क्यों? हम किसीको पूछते हैं कि आपको क्या होना है? तो मनुष्य

होना है। तो मनुष्य होने के लिये क्या करोगे ? कहां का मनुष्य होना है ? *श्रोता: विदेहक्षेत्र का।* विदेहक्षेत्र का! तो मनुष्य क्यों होना है मैं पूछती हूं ? हां, मनुष्य होना है, तो अभी हम कौन हैं ? तो मनुष्य होने के लिये क्या करना है ? कुछ नहीं करना, हम मनुष्य हो गये हैं। लोग पूछते हैं, पुण्य के उदय से मनुष्यपना मिला है तो इसलिये हम अभी भी पुण्य करेंगे तो फिर मनुष्यपना मिलेगा। पर यह जो मनुष्यपना मिला है उसका क्या हुआ ? उसको सार्थक बना दो तो कल्याण हो जायेगा। हमें कोई बंध करना नहीं है, कुछ नहीं करना है। बस अपना स्वरूप समझना है और वह समझकर उसीमें लीन रहना है।

तो सहजरूप से जो कोई यथायोग्य प्रकृतियों का बंधना रुक भी जायेगा, कुछ बंधेगी भी, यथायोग्य प्रकृतियों का उदय होगा, कुछ प्रकृतियों का उदय रुक भी जायेगा, यह सब ऑटोमॅटिक प्रोसेस है। हमें उसमें कुछ नहीं करना है। हम कुछ कर ही नहीं सकते उसमें। यह केवल यानी मात्र ज्ञान का विषय है कि कौनसे जीव सम्यक्त्व होने के बाद कौनसी प्रकृतियां बांधेंगे, कौनसी प्रकृतियों का बंध रुक जायेगा और कैसे-कैसे क्या होगा ? कैसे उदय होगा ? प्रकृतियां कैसे नष्ट हो जायेगी ? कौनसी विधि होगी ? यह सब ज्ञान का विषय है। क्यों जानना ? क्योंकि जब उसको जानते हैं तो उपयोग उसमें सूक्ष्म हो जाता है, एकाग्र हो जाता है। पूरी दुनिया में क्या चल रहा है उसके विचार नहीं आते। ना वहां कोई हिंसा है, ना झूठ है, ना चोरी है, कुछ भी नहीं है। तो हम वीतरागता सहित यानी राग-द्वेष रहित उसको जानते हैं, सत्य बात को जानते हैं, उपयोग हमारा सूक्ष्म होता है इसलिये यह बहुत कार्यकारी है।

करणानुयोग अत्यंत कार्यकारी विषय है। देखो यह जीवकाण्ड, इसमें पं.टोडरमलजी ने स्वयं लिखा है। हमें तो लगता है कि अरे विकल्प करने से क्या, क्योंकि हमें तो निर्विकल्प होना है। निर्विकल्प होना है यानी क्या है ? ज्ञान से रहित होना है ? हम यहां देवलाली के बाजार में गये, हम ऐसा आईना यानी दर्पण ढूंढ़ने गये कि जिसमें कोई भी रिफ्लेक्शन न हो। मिलेगा कि नहीं ? इसीतरह ज्ञान भी हमें ऐसा चाहिये कि जिसमें कुछ भी जानने में न आवे, तो हम निर्विकल्प हो जायेंगे कि नहीं हो जायेंगे ? ऐसे ही हमने सोच रखा है, हां, देखो यह जीवकाण्ड की पहली पुस्तक निकालना। लोग जो इसके ऊपर ऑब्जेक्शन लेते हैं न कि इसका विकल्प मत करो, यह मत जानो, वह मत जानो, हमारे बहुत विकल्प होते हैं; ये विकल्प बहुत होते हैं इस बात की कभी टीव्ही के सामने हमें याद नहीं आती।

यह क्यों जानना? वह क्यों जानना? जब लौकिक धंधे-पानी के विचार होते हैं, अन्य कोई विचार होते हैं, तब नहीं कहते हैं, ये विचार, ये विकल्प नहीं चाहिये। ये विकल्पों की बात कब याद आती है? जब करणानुयोग पढ़ना है तब! *श्रोता: क्योंकि यह प्रयोजनभूत नहीं होता।* हां, आप कहते हैं यह प्रयोजनभूत नहीं है। तो प्रयोजनभूत तत्त्वों के नाम कोई बतायेंगे मुझे? *श्रोता: सात तत्त्व हैं।* हां बोलिये न। *श्रोता: जीव, अजीव।* हां जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व। *सभी श्रोता: जीवतत्त्व,* जीवतत्त्व। *सभी श्रोता: अजीवतत्त्व,* अजीवतत्त्व। *सभी श्रोता: आस्रवतत्त्व,* आस्रवतत्त्व। *सभी श्रोता: बंधतत्त्व,* बंधतत्त्व। *सभी श्रोता: संवरतत्त्व,* संवरतत्त्व। *सभी श्रोता: निर्जरातत्त्व,* निर्जरातत्त्व। *सभी श्रोता: मोक्षतत्त्व,* मोक्षतत्त्व। आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष के कितने भेद हैं? द्रव्यास्रव-भावास्रव, द्रव्यबंध-भावबंध; सबके लिये लगा लो। तो अभी हम द्रव्यबंध की तो चर्चा कर रहे हैं।

करणानुयोग क्या है? कर्मों की बात – थिअरी क्या है? महाबंध में तो बंध के ऊपर सात व्हॉल्यूम लिखे हैं। *श्रोता: ओहोहो!* भूतबलि आचार्य ने, षट्खण्डागम में से जो छठा खण्ड है 'महाबंधअधिकार', उसमें केवल बंध-बंध की बात बतायी है। प्रकृतिबंध की एक पुस्तक है; स्थितिबंध की ५००-५०० पेजेस की दो पुस्तकें हैं; अनुभागबंध की ५००-५०० पेजेस की दो पुस्तकें हैं और प्रदेशबंध की भी दो पुस्तकें हैं। आपकी कौनसी चल रही है अभी? *श्रोता: महाबंध।* महाबंध शुरू कर दी? अच्छा, बहुत अच्छी बात है। तो इसका निषेध हम करते हैं और मुनियों ने तो इसके ऊपर कितना सारा लिख दिया है। देखो यह जो है यहां पर, पक्षपाती की बात है। *श्रोता: पेज नंबर?* हां, पेज नंबर बताते हैं न आपको। वह तो छह से शुरू हुआ है। यहां तो छह नंबर का पृष्ठ निकालना, चलो... यह पांच नंबर पेज से बात है, यहां से हम देखेंगे, यहां तीसरा पॅरेग्राफ।

कहते हैं कि **'सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका' नामक देशभाषामयी टीका करने का निश्चय किया है**। नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ, वहां से पढ़ेंगे। पेज नंबर पांच, पीठिका सामान्य प्रकरण, पहली पुस्तक। **अब इस शास्त्र के अभ्यास में जीवों को सन्मुख करते हैं**। कौन कह रहे हैं? पं.टोडरमलजीसाहब। कहते हैं **हे भव्य जीव! तुम अपने हित की वांछा करते हो, तो** यदि चाहो अपनो कल्याण, **तुमको जैसे बने वैसे इस शास्त्र का अभ्यास करना**। जैसे बने वैसे यानी सौ में से ०.५ पर्सेंट भी ख्याल में आये तो भी निहाल हो जाओगे, कहते हैं **क्योंकि आत्मा का हित मोक्ष है। मोक्ष के बिना अन्य जो है, वह**

परसंयोगजनित, विनाशिक और दु:खमय है और मोक्ष है वही निजस्वभाव है, अविनाशी है, अनंत सुखमय है। इसलिये मोक्षपद प्राप्त करने का उपाय तुमको करना चाहिये। सो मोक्ष का उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र हैं। इनकी प्राप्ति जीवादिक का स्वरूप जानने ही से होती है। जीवादिक सब तत्त्व आ गये न इसमें! **वही कहते हैं, जीवादि तत्त्वों का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है, उसे बिना जाने श्रद्धान का होना आकाश के फूल के समान है**। जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व आदि को जाने बिना उसका श्रद्धान होना कैसा है? आकाश के फूल के समान है। कौनसे रंग का होता है आकाश का फूल? *श्रोता: होता ही नहीं है।* अच्छा होता ही नहीं है।

प्रथम जाने, यह जाने यानी कहां से जाने? आगम से जाने। **प्रथम जाने** किसीने यह प्रश्न पूछा है हमें कि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका, जैनभूगोल इन पुस्तकों को हम ग्रंथ माने या नहीं माने? यह आगम के अनुसार किया हुआ एक्स्प्लनेशन है। तो इसको पढ़ो तो आगम पढ़ने के लिये, समझने के लिये आपको आसानी होगी। इसको आगम मानो, नहीं मानो वह तो आपकी बात है। जो मूल आगम के अनुसार है और आगम जो मूल ग्रंथ हैं षट्खण्डागम आदि, उसीको अनंतर आचार्यों ने जो एक्स्प्लेन किया है; जैसे मूल ग्रंथ षट्खण्डागम, चूर्णिसूत्र आदि से फिर धवला, जयधवला आदि ग्रंथ टीका के रूप में लिखे गये। जयधवला आदि के ऊपर से जो आगे गोम्मटसार आदि टीका हुयी और फिर इसीमें से जो टीकायें लिखी गयी हैं कर्णाटक और संस्कृत टीका; उसके अनुसार सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका पुस्तक लिखी गयी है। किसने लिखी? पं.टोडरमलजीसाहब ने लिखी। कोई कहते हैं, वे आचार्य नहीं थे। अरे! आचार्य नहीं थे परंतु उन्होंने सिर्फ अपनी बुद्धि से थोड़े ही लिखा है? अपनी कल्पना से नहीं लिखा है; जो ओरिजिनल आचार्यों के ग्रंथ चले आये हैं उसीके अनुसार अपनी भाषा में उसको समझाया है। इनका निषेध करना मूल आगम का निषेध है क्योंकि हमारी बुद्धि तो मूल आगम संस्कृत, प्राकृत पढ़ने में नहीं लगती है। तो यहां उसका ही एक्स्प्लनेशन किया है तो यह आगम जैसे ही है। अगर इसको समझकर मूल आगम पढ़ते हैं तो बहुत अच्छी बात है। **प्रथम जाने**, जाने यानी कहां से जाने? आगम से जाने। **पश्चात् वैसी ही प्रतीति करके श्रद्धान को प्राप्त होता है। इसलिये जीवादिक का जानना, श्रद्धान होने के पूर्व में होता है**। आप कहेंगे, सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान एक साथ होता है? यहां उस सम्यग्ज्ञान की बात नहीं है। ये जो जीवादि तत्त्वों को जानेंगे, पदार्थों को

जानेंगे, उनकी परिणमन व्यवस्था को जानेंगे, क्रमबद्धपर्याय क्या होती है, कैसे होती है, क्या है इसको जानेंगे; निमित्त-उपादान क्या है, कौन कार्यकारी है, यह कार्य कैसे होता है, ये सबको हम कहांसे जानेंगे? तो आगम से जानेंगे। तो कहते हैं...

श्रोता: यहां इसमें बताया है, पहले जानो फिर बाद में श्रद्धान करो। सम्यग्दर्शन के क्रम में पहले जो सम्यग्दर्शन है फिर ज्ञान आता है? उसीकी बात मैं कह रही हूं। पहले सम्यग्दर्शन और बाद में सम्यग्ज्ञान बताते हैं और यहां कहते हैं पहले जानो। यहां जो पहले जानो कहा वह 'आगम को जानो'; आगम के द्वारा आत्मा कैसा है उसको जानो; आगम के द्वारा छह द्रव्य कैसे परिणमन करते हैं उनको जानो। इसको भी जानना कहेंगे, नहीं जानना तो नहीं कहेंगे। तो पहले जानो फिर प्रतीति करो कहा है। पहले आगम से जानो, तब तक हमने आत्मा को नहीं जाना है। आगम से हमने आत्मा का और अन्य पदार्थों का स्वरूप जाना है, उसमें कैसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध हैं, क्या एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कार्य कर सकता है या नहीं कर सकता, इस सबका ज्ञान, निर्णय हमें आगम के द्वारा होगा। आगम को अच्छी तरह से पढ़कर, सुनकर, स्वाध्याय करके, यह सब देशनालब्धि में आयेगा न? सुनना है, समझना है, श्रवण है, ग्रहण है – ग्रहण यानी समझना, धारण है – याद रखना, निर्धारण है – उस पर बारंबार विचार करके तत्त्वनिर्णय तक पहुंचना। फिर उसरूप परिणमन है, ये सभी बातें देशनालब्धि में आ जायेगी। ये सब कहलायेगा हमने आगम को जाना। आगम को सुनकर जाना, सुनने की मुख्यता है उसमें भी, पढ़ने की नहीं है। क्यों नहीं है पढ़ने की? पढ़कर हम अपनी बुद्धि से अपनी कल्पना के अनुसार उसका अर्थ लगाते हैं।

मैं जब मेडिकल प्रॅक्टिस करती थी तो कॉलेज की तीन लड़कियां मेरे पास आ गयी और उन्होंने पूछा, आप हेअर स्पेशॅलिस्ट हैं न? मैंने कहा नहीं तो! तो बाहर बोर्ड क्यों लगाया है? मैंने बोला मुझे भी दिखाओ बोर्ड, बाहर जाकर मैंने देखा उनके साथ। तो वहां लिखा था बालरोग तज्ञ। *श्रोता: हा हा हा हा।* चाइल्ड स्पेशॅलिस्ट-पीडियाट्रीशन। तो उसका अर्थ उन्होंने क्या लगाया? क्योंकि उनको उसीकी जरूरत थी, तो बाल का अर्थ बालक के बदले हेअर है ऐसा कर दिया। यानी जो हम पढ़ते हैं तो अपनी बुद्धि के अनुसार अर्थ लगाते हैं। वे भी कॉलेज में जानेवाली लड़कियां थी और हिन्दी, अंग्रेजी नहीं जानती थी यह

बात नहीं थी। परंतु वे तो उसी धुन में थी न कि हमें यह ढूंढ़ना है कहीं से। ऐसे ही शास्त्र पढ़कर, पढ़कर की बात है; हम ऐसे ही कुछ अपनी मतिकल्पना के अनुसार उसका अर्थ लगा सकते हैं। शक्यता की बात है, हां, हो सकता है कोई पूर्वभव का देशनालब्धि का संस्कार लेकर आया है और वह ग्रंथ पढ़कर भी उसका सही अर्थ लगा सकता है; सर्वथा नहीं यह बात नहीं है। क्योंकि जिसे निसर्गज सम्यग्दर्शन कहते हैं, उसमें पहले की देशना हो और अभी उसके कोई ग्रंथ हाथ में आया तो पढ़कर उसका अर्थ समझ सकते हैं, जैसे कानजीस्वामीजी। उन्होंने अन्य संप्रदाय में जन्म लिया था। वहां का मुनिपद अंगीकार किया था। परंतु जब 'समयसार' हाथ में आया 'मोक्षमार्गप्रकाशक' हाथ में आया, तो उन्होंने कहा कि अरे! ये तो अशरीरी होने के शास्त्र हैं। वे पढ़कर उन्होंने उसमें से अर्थ निकाला, केवल निकाला ही नहीं सबको बताया। उन्होंने स्वयं दिगंबर पंथ स्वीकार किया। हम मूल दिगंबर हैं और हमें उन्होंने सही मोक्षमार्ग समझाया। हमें गुस्सा आना चाहिये न?

महावीर के ज़माने में भी ऐसे ही हुआ था, कि वहां जो पार्श्वनाथ भगवान के गणधर के डायरेक्ट शिष्य, जो मुनि थे, मस्करी गोशाल। वहां तो महावीर भगवान को केवलज्ञान हुआ। देवों ने समवसरण की रचना की और वहां सब रोज जाते थे परंतु छियासठ दिन तक वाणी नहीं खिरी थी और फिर क्या हुआ वह सबको मालूम है। इन्द्र ने अवधिज्ञान लगाया। पहले क्यों नहीं लगाया? फिर इन्द्र ने इन्द्रभूति के पास जाकर काव्य का अर्थ पूछा। तब इन्द्रभूति वगैरह, वे सब समवशरण तक आ गये और मानस्तंभ देखा तो इन्द्रभूति का मान गल गया। मान गल गया का अर्थ क्या है? वहां सम्यग्दर्शन हुआ। किसकी देशना सुनी? *श्रोता: महावीर की।* महावीर की? अरे नहीं! मिथ्यादृष्टि के निमित्त से थोड़ी उनकी वाणी खिरेगी? उनके पूर्व भव की देशना थी। हज़ार वर्षों तक द्रव्यलिंगी रहे थे, तभी कार्य नहीं हुआ था। लौटकर वे वैदिक ब्राह्मण हुये और यहां आकर सम्यग्दर्शन हुआ उनको। तत्त्वश्रद्धान हो गया, सम्यग्दर्शन हुआ और समवशरण में अंदर चले गये और महावीर भगवान के सामने उन्होंने दीक्षा ली। वास्तविक ऐसा नियम है जो तीर्थंकर के सामने दीक्षित हो जाते हैं वे ही गणधर हो सकते हैं; पूर्व से दीक्षित मुनिराज गणधर नहीं बन सकते। तो वह मस्करी गोशाल को कितना गुस्सा आया होगा? यह बाहरी कोई आया है और वह गणधर बन गया और वह सबको सिखायेगा? और हम तो पूर्व से दीक्षित हैं, हैं न? ऐसे ही अब हुआ न? कानजीस्वामीजी ने आकर हमारा ही समयसार हमें समझाया है।

देखो, यह जन्म कहां हुआ, उससे कुछ संबंध नहीं। जो जीव पुरुषार्थ करता है, वह आगम का अर्थ समझता है। यहां जो जानने की बात है वह आगम से जानने की बात है। वहां भी सुनने की मुख्यता इसलिये रखना है कि हर जीव उसमें से सही अर्थ नहीं निकाल सकता है। तो प्रथम जाने फिर प्रतीति हो। *श्रोता: समयसार गाथा ५ में भी ये तीन साधन दिये हैं – आगम का सेवन, युक्ति का अवलंबन और ज्ञानियों का उपदेश – ये परोक्ष बातें करे और उसके बाद स्वानुभव से प्रतीति करे।* ऐसा ही है, क्योंकि आगम के अभ्यास बिना तो होगा ही नहीं; यह इसको जानना कहते हैं। पहले जानना और बाद में श्रद्धान करना ऐसा जब आयेगा तो पहला जानना है वह आगम से जानना। आत्मा कैसा है? आत्मा संबंधी ज्ञान करना, वह भी जानना कहलायेगा। परंतु अभी उसको आत्मा का अनुभव नहीं हुआ है, आत्मा का ज्ञान नहीं हुआ है। तो ऐसे जो उसने आगम से ज्ञान किया है, तत्त्वों का निर्णय किया है, ऐसे निर्णय सहित जब स्वसन्मुख उसके उपयोग लगेगा तब उसको ध्यान अवस्था में सम्यग्ज्ञान होगा। तब वह सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र एक ही समय में युगपत् प्राप्त होंगे। *श्रोता: क्रम नहीं होता है?* क्रम उसमें नहीं है फिर भी वहां सम्यग्दर्शनपूर्वक सम्यग्ज्ञान क्यों कहेंगे? जैसे दीपक का प्रकाश है वहां उनमें कारण-कार्य संबंध है। वैसे ही एक ही समय में होनेवाली इन दो बातों को भी सम्यग्दर्शनपूर्वक सम्यग्ज्ञान कहेंगे, यह कथन पद्धति है। यदि हम कथन पद्धति नहीं समझेंगे तो कहेंगे, एक बार तो सम्यग्दर्शनपूर्वक सम्यग्ज्ञान कहते हैं और यहां कहते हैं प्रथम जाने पश्चात् प्रतीति होती है। यदि इसका अर्थ हमारे ख्याल में नहीं आता है तो हमारी भूल हो सकती है।

कहीं-कहीं तो अपेक्षा भी अलग होती है। एक ही आचार्य हैं, समयसार में कहते हैं राग आत्मा का है नहीं, पुद्गल का है। वे ही आचार्य; अच्छा हुआ वे ही आचार्य थे, उन्होंने प्रवचनसार में क्या लिख दिया? जिस समय आत्मा रागरूप परिणमित हो रहा है उस समय आत्मा रागी नहीं, आत्मा ही राग है, आत्मा पाप है, आत्मा पुण्य है। तो एक जगह उसको बिलकुल बाहर निकाल दिया – पुद्गल का बना दिया और एक जगह आत्मा को उसरूप बताया अलग-अलग आचार्य होते न, तो हम वहां पर भी भेदविज्ञान कर लेते! क्योंकि हम भेदविज्ञान में प्रवीण हैं! किसमें? पर में! अपना भेदविज्ञान करना है पर से, उसकी बात ही हम भूल जाते हैं। तो यहां **प्रथम जाने, पश्चात् वैसी ही प्रतीति करके श्रद्धान को प्राप्त होता है। इसलिये जीवादिक का जानना, श्रद्धान होने के पूर्व में होता है**। इसका अर्थ

समझे ? जानना यानी यह आगम से जानना है। **वही उनके श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शन का कारण जानना। तथा श्रद्धान होने पर जो जीवादिक का जानना होता है उसीका नाम सम्यग्ज्ञान है**। आपके प्रश्न का उत्तर आया न ? श्रद्धान होने पर उसी समय हो गया वह। पहले का जो जानना था, उसको सम्यग्ज्ञान नाम नहीं था। वह आगम से सही जान रहा था और सही जानकर उसके सही निर्णय के प्रति वह सन्मुख था। निर्णय होने का समय कहो, सम्यग्दर्शन का समय कहो, आत्मानुभूति का समय कहो, सर्वज्ञ को उसने सहीरूप से जाना, तो कुछ भी उसको नाम दे दो, क्रमबद्धपर्याय की प्रतीति कहो एक ही बात है। वही समय है सम्यग्दर्शन का, सम्यग्ज्ञान का।

इसलिये वहां कहते हैं **पुनश्च** यानी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान की बात हो गयी, **पुनश्च श्रद्धानपूर्वक जीवादि जाननेपर** यानी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान होने पर, **स्वयमेव उदासीन होकर, हेय का त्याग करता है, उपादेय का ग्रहण करता है, तब सम्यक् चारित्र होता है**। स्वयमेव उदासीन होकर यानी मुंह लटका कर ऐसा नहीं। बस हमने सफ़ेद कपड़े पहन लिये गहने उतार दिये और हम उदासीन हो गये, ऐसा उसका अर्थ नहीं है। सौधर्म इंद्र हो या चक्रवर्ती हो, सम्यग्दृष्टि होंगे तो क्या वे उनके अपने पूरे आभूषण से नहीं आयेंगे यहां पर ? ख्याल में आती है न बात ? यानी उनके किसी बाह्य क्रिया से उनके सम्यग्दर्शन का निर्णय नहीं हो सकता। हम उसकी क्रियायें देख-देखकर; यह क्या करता है, कैसे करता है, कितना जानता है, इस पर से वह सम्यग्दृष्टि है या नहीं इसको नक्की करना चाहते हैं। उसके कोई सींग नहीं होते सम्यग्दृष्टि के; वह तो उसके प्रतीति है, उसका श्रद्धान है; उसने आत्मा का अनुभव किया है। परंतु यह जो अधिक आत्मस्थिरता है जिसको कहेंगे चारित्र है यानी अंतरंग में स्थिरता जितनी बढ़ेगी उतनी वीतरागता बढ़ेगी। यहां तो देखो, सम्यक्चारित्र सम्यग्दर्शन के साथ ही होता है, परंतु जितनी अंतरंग में स्थिरता बढ़ती है, उतने प्रमाण में वह ऊपर के गुणस्थानों में जाता है, वहां व्रत आदि भी स्वयमेव उसके पलते ही हैं और अंतरंग में स्थिरता होती है तो मुनिदशा उत्पन्न होती है। हां, वहां पर भी पहले बुद्धिपूर्वक, प्रतिज्ञापूर्वक मुनिदीक्षा लेगा और उसके सहित वह अंतरंग में जब ध्यान में चला जायेगा तब उसके सातवां गुणस्थान प्रकट होगा; फिर छठां-सातवां चलता रहेगा; उसको चारित्र कहते हैं। परंतु पहले सम्यक्चारित्र नहीं था ऐसा नहीं है। परंतु वह तो अंतरंग में स्थिरता इतनी नहीं है जैसे छठे-सातवेंवाले की होती है इसलिये उसको चारित्र कहने का प्रघात नहीं

है। तो यहां कहते हैं सम्यक्चारित्र होता है... *श्रोता: उदासीन होकर नहीं सुनता।* हां, उदासीन होकर यानी स्वयमेव उसके बाहर की रुचि कम हो जाती है। अंतरंग की रुचि बढ़ती है, क्योंकि एक बार आत्मा का अनुभव किया है, अतीन्द्रिय आनंद का स्वाद लिया है तो उसको बारंबार आत्मा में लीन होकर अपने अतीन्द्रिय आनंद का स्वाद लेने की ही रुचि रहती है। बाहरी रुचि स्वयमेव कम होती है, तो उसको उदासीन होकर ऐसा कहते हैं। उदासीन होना यानी अपने आप पर ज़बरदस्ती करना ऐसी बात नहीं है।

अज्ञानपूर्वक क्रियाकांड से सम्यक्चारित्र नहीं होता। इसतरह जीवादिक को जानने ही से सम्यग्दर्शनादि मोक्ष के उपायों की प्राप्ति होती है – ऐसा निश्चय करना। यह करणानुयोग की बात तो आयी नहीं इसमें, वह अभी बतायेंगे। **इस शास्त्र के अभ्यास से**, इस शास्त्र यानी? *श्रोता: सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका।* सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका यानी करणानुयोग के शास्त्रों के अभ्यास से **जीवादिक का जानना यथार्थ होता है**। पहले तो हमने इतना ही कहा था यह जीव है, यह पुद्गल है, बस दो जुदे हैं। तो दो जुदे हैं, तो दोनों की विशेषताओं को डिटेल्स में जानेंगे, उनका विस्तार से स्वरूप जानेंगे तो दोनों का भेद स्पष्ट हो जाता है। तो कहते हैं, **इस शास्त्र के अभ्यास से जीवादिक का जानना यथार्थ होता है। क्योंकि संसार है वह जीव और कर्म के संबंधरूप है**। हमने कहा, यहां अनादि से जीव संसार में भटक रहा है। अनादि से जीव और कर्म बंधरूप अवस्था में हैं। हर समय पुराने कर्मों का उदय हो रहा है। वहां निमित्त-नैमित्तिक संबंध से जीव मोह-राग-द्वेषरूप परिणमित होता है और नये कर्म का बंध होता है। यह कब से चल रहा है, तो अनादि से चल रहा है। तो संसार क्या है? कि जीव और कर्म के संबंधरूप है। **तथा विशेष जानने पर**, विशेष जानने पर यानी विस्तार से जानने पर, इन डिटेल जानने पर, **इनका संबंध का जो अभाव होता है, वही मोक्ष है और इस शास्त्र में जीव और कर्म का ही विशेष निरूपण है।**

इस शास्त्र में यानी सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका में तो जीवकाण्ड भी है, कर्मकाण्ड भी है, लब्धिसार-क्षपणासार भी है। तीनों का नाम उन्होंने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लिखा है। **अथवा जीवादिक षट् द्रव्य, सात तत्त्व आदि का भी इसमें यथार्थ निरूपण है। इसलिये इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना**। अब देखो, इसके आगे हमारे आपके प्रश्न लिखे हैं। *श्रोता: देखो ग्यारह नंबर में ली है सामान्यशास्त्र से...।* हां, ग्यारह नंबर पेज पर लिखा है,

पहली लाइन में। विशेषों को जानने से...। देखो दसवां पेज, चौथी लाइन नीचे से। **कोई कहता है, अध्यात्मशास्त्रों का ही अभ्यास करना**। हम-आप ऐसा ही कहते हैं। क्या कहते हैं? द्रव्यानुयोग का ही अभ्यास करना, है न? आपने कहा न? यह अप्रयोजनभूत है। पं.टोडरमलजी उसका उत्तर दे रहे हैं। **वह योग्य ही है**। उसका नकार नहीं किया, वह योग्य ही है। **परंतु वहां भेदविज्ञान करने के लिये स्व-पर का सामान्यपने स्वरूप निरूपण है**। बस जीव जुदा है, पुद्गल जुदा है, सामान्य से उसका निरूपण किया है। **और विशेष ज्ञान बिना सामान्य का जानना स्पष्ट नहीं होता**। इन डिटेल जाने बिना वह जो जीव जुदा और पुद्गल जुदा या कर्म जुदा कहते हैं, उसका स्वरूप ठीक भासित नहीं होता। **इसलिये जीव के और कर्म के विशेष**, विशेष यानी डिटेल्स, **अच्छी तरह जानने से ही स्व-पर का जानना स्पष्ट होता है।**

इसको क्यों जान रहे हैं? हम भेदविज्ञान के लिये ही इसको जान रहे हैं। **उन विशेषों को जानने के लिये इस शास्त्र का अभ्यास करना। क्योंकि सामान्यशास्त्र बलवान है। वही कहा है, "सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान् भवेत्"**, देखो यहां क्या लिखा है? इसी दसवें पेज पर **द्रव्यानुयोग का पक्षपाती कहता है कि,** हम आप द्रव्यानुयोग के अच्छे अभ्यासवाले हैं, बहुत अच्छी बात है। इसीसे तो अपना कल्याण होगा ही होगा। परंतु यदि वह करणानुयोग का निषेध करता है, उसको अप्रयोजनभूत बताता है तो की बात है। यहां द्रव्यानुयोग का निषेध करके करणानुयोग पढ़ो ऐसी बात नहीं है। तो कहते हैं, **द्रव्यानुयोग का पक्षपाती कहता है कि इस शास्त्र में जीव के गुणस्थानादिरूप विशेष**, यानी उनके डिटेल्स, **और कर्म के विशेष**, यानी कौनसे कर्म हैं? उनका बंध कैसे होता है? उन कर्मों की क्या-क्या अवस्थायें होती है? **इनका वर्णन है, उसको जानने से अनेक विकल्प तरंग उठते हैं तथा कुछ सिद्धि नहीं है**। ऐसी ही अनेक लोगों की थिंकिंग है, कल्पना है। **इसलिये अपने शुद्ध**...। *श्रोता: पेज नंबर क्या है?* पेज नंबर है दस। *श्रोता: पहला भाग?* हां, पहला भाग, पीठिका की बात चल रही है, नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ।

द्रव्यानुयोग का पक्षपाती यानी जो द्रव्यानुयोग तो पढ़ता है और करणानुयोग का निषेध करता है। पक्षपाती का अर्थ समझते हैं न? वह कहता है ये बहुत विकल्प उठ रहे हैं और उनसे कुछ सिद्धि नहीं है। **इसलिये अपने शुद्ध स्वरूप को अनुभवना तथा स्व**

और पर का भेदविज्ञान करना, इतना ही कार्यकारी है अथवा इनके उपदेशक जो अध्यात्मशास्त्र, उनका ही अभ्यास करना योग्य है। ऐसी उस जीव की मान्यता है। उसके लिये पं.टोडरमलजी उत्तर देते हैं, **उसको कहते हैं**। उसके लिये एक उन्होंने डिग्री-पदवी बहाल कर दी है। **हे सूक्ष्माभासबुद्धि**! उसको सूक्ष्म का आभास हो गया है। **तूने कहा वह सत्य है**, पं.टोडरमलजी की विशेषता है पहले सामनेवाले को कहते हैं कि हां-हां **तूने कहा वह सत्य है, परंतु**, 'परंतु' आ गया उनका। **अपनी अवस्था देखना। यदि स्वरूपानुभव में**, यानी स्वरूप के अनुभव में – आत्मलीनता हो तो, **वा भेदविज्ञान में उपयोग निरंतर रहता है, तो अन्य विकल्प क्यों करने**? अच्छी बात है। *श्रोता: सही बात है।* हां... **वहां ही**, वहां ही यानी आत्मा में ही, **स्वरूपानंद सुधारस का**, यानी स्वरूपानंदरूपी अमृत के रस का, **स्वादी होकर संतुष्ट होना। परंतु निचली अवस्था में वहां निरंतर उपयोग रहता नहीं**। निचली यानी चौथे, पांचवें गुणस्थान में भी आत्मा में उपयोग निरंतर नहीं रहता है और यह पक्षपाती तो मिथ्यादृष्टि है।

जो कहता है करणानुयोग अप्रयोजनभूत है, वह मिथ्यादृष्टि है उसके तो निचले से भी निचली भूमिका है। तो कहते हैं वहां निरंतर उपयोग रहता नहीं है। **उपयोग अनेक अवलंबन को चाहता है**। इसका अर्थ क्या है? उपयोग अनेक अवलंबन को चाहता है – आप सबके अनुभव की बात बताती हूं। टीव्ही के सामने बैठे हैं हम, कोई सीरियल चल रही है, बीच में वह ब्रेक आता है न? और हाथ में रिमोट है, क्या करते हैं बेटा? *श्रोता: चेंज करते हैं।* चेंज... क्यों? कौनसे चॅनेल पर क्या चल रहा है? अरे इधर फटाफट-फटाफट-फटाफट, यह चॅनेल, वह चॅनेल वह चॅनेल। हमें पता नहीं है क्योंकि हमारे पास वह केबल वगैरह कुछ नहीं है। हां, तो हम जाते हैं कहीं अन्यत्र तो देखते हैं कि वह सब तो फटाफट-फटाफट चेंज होता है। यहां हाथ में रिमोट कंट्रोल लेकर वह बटन दबाते जाता है। इधर क्या है? उधर क्या है? क्यों? उपयोग अनेक अवलंबन चाहता है।

हां! **इसलिये जिस काल में वहां उपयोग नहीं लगता**, मिथ्यादृष्टि है तो द्रव्यानुयोग के अभ्यास में उपयोग नहीं लगता हो, भेदविज्ञान में नहीं लगता हो, सम्यग्दृष्टि के लिये, मुनियों के लिये भी कहते हैं, आत्मा में उपयोग नहीं लगता हो, सातवें गुणस्थान में नहीं हो, छठे में हो, तब क्या करेंगे? तो कहते हैं, **तब गुणस्थानादि विशेष जानने का अभ्यास**

करना। पुनश्च तूने कहा, जो अभी हमने यहां पढ़ा था। ग्यारह पेज पर आते हैं। **वहां वह कहता है कि अध्यात्मशास्त्रों में तो गुणस्थानादि विशेषों से रहित शुद्धस्वरूप का अनुभवना उपादेय कहा है**। क्योंकि हमने समयसार पढ़ा है, पचास से पचपन गाथा भी पढ़ी है। वहां कहा है, तू वर्ण नहीं, तू गंध नहीं, स्पर्श नहीं, वर्ग नहीं, वर्गणा नहीं, स्पर्धक नहीं, उदयस्थान नहीं, अनुभागस्थान नहीं है, गुणस्थान नहीं, मार्गणास्थान नहीं, कितने-कितने, बंधस्थान नहीं है। तो हम इनसे रहित हैं। फिर यह गुणस्थान क्या होता है? क्या पता! हम उससे रहित हैं। अगर वह क्या है पता नहीं है तो हम उससे रहित हैं यह जाना कैसे? शास्त्र में तो व्यवहार का निषेध आता है, परंतु पहले व्यवहार को खड़ा तो कर दो। फिर उसका निषेध निश्चयनय की अपेक्षा होगा। वे व्यवहारनय और निश्चयनय किसके भेद हैं? *श्रोता: सम्यग्ज्ञान के।* यानी व्यवहारनय वह मिथ्याज्ञान है और निश्चयनय वह सम्यग्ज्ञान है ऐसा है न? *श्रोता: नहीं।* नहीं, तो कैसा है? *श्रोता: दोनों सम्यग्ज्ञान के ही अंश हैं।* अरे! वे सम्यक् श्रुतज्ञान के भेद हैं! तो व्यवहारनय से जो कथन किया है, उसके द्वारा गुणस्थान, मार्गणास्थान आदि को सभी भेदों सहित पहले जानेंगे; फिर भेद का निषेध करेंगे, अभेद का अनुभव करेंगे। यहां तो भेदों को जानने का ही निषेध कर दिया। यानी मिथ्याज्ञान सहित हमको सम्यग्दर्शन चाहिये। यह लोगों की भ्रमणा हो रही है। हां, इसमें बुद्धि नहीं चलती है तो कोई बात नहीं पर इसका निषेध तो मत करो।

श्रोता: यह द्रव्यानुयोग में निषेध नहीं करते। द्रव्यानुयोग में क्या शैली है? करणानुयोग और सम्यग्दर्शन, सम्यग्दर्शन से करणानुयोग का संबंध बहुत कम आता है। बीजसम्यक्त्व सुना है आपने? *श्रोता: करणानुयोग में संकल्प-विकल्प बहुत, वे त्यागने योग्य हैं।* ऐसी बात नहीं है! करणानुयोग पढ़ते-पढ़ते बीजसम्यक्त्व नाम का सम्यक्त्व होता है, मालूम है आपको? यह हमें मालूम नहीं है तो हम डायरेक्ट निषेध करने निकलते हैं। हम कहां द्रव्यानुयोग का निषेध कर रहे हैं? हम तो कहेंगे पहले जीवादि द्रव्यों के नाम सुनो, फिर सामान्य गुण क्या हैं उनको जानो। वे सब अच्छी तरह से जो सिद्धान्त प्रवेशिका में हमने सुने हैं, बहुत अच्छी तरह से उनको आत्मसात करो। निर्णय करो, जीवादि सात तत्त्वों का सही निर्णय करो। बिलकुल यह निर्णय आवश्यक है। निमित्त-उपादान है, क्रमबद्धपर्याय है, निश्चय-व्यवहार है, इन सभी का सर्वांगीण अच्छी तरह से निर्णय करना। परंतु निर्णय करता है तो हो गया क्या सम्यक्त्व, तो कोई बात नहीं। सम्यक्त्व हुआ तो अभी आपको

द्रव्यानुयोग का क्या कार्य है? अभी तो आपको करणानुयोग चाहिये और सम्यक्त्व नहीं हुआ तो क्यों नहीं हुआ? तो और इसमें डिटेल जानो, तो सम्यग्दर्शन जल्दी हो जायेगा। *श्रोता: बराबर, बहुत अच्छा।* सम्यग्दर्शन हुआ हो या नहीं हुआ हो इसका निषेध तो बिलकुल योग्य नहीं है, यह तो कार्यकारी बात है। उसका निषेध करना तो हम तीर्थंकरों का निषेध कर रहे हैं, केवलज्ञानी का निषेध कर रहे हैं, सर्वज्ञ का निषेध कर रहे हैं, अपने सर्वज्ञस्वरूप का निषेध कर रहे हैं और निषेध करके हमको सम्यग्ज्ञान कैसे होगा? सम्यग्दर्शन कैसे होगा? हं... देखो यहां लिखा है.. अपनी ओर से कुछ नहीं कह रही हूं मैं।

देखो, **वहां वह कहता है कि अध्यात्मशास्त्रों में तो गुणस्थानादि विशेषों से रहित शुद्धस्वरूप का अनुभवना उपादेय कहा है। यहां गुणस्थानादि सहित जीव का वर्णन है। इसलिये अध्यात्मशास्त्र और इस शास्त्र में तो विरोध भासित होता है, वह किसप्रकार है**? हमने देखा न जहां समयसार में उन गुणस्थानादि को जानने का निषेध नहीं किया। हां, मैं उसरूप हूं इस मान्यता का निषेध किया है और अष्टपाहुड़ में, वे ही कुंदकुंद आचार्य कहते हैं, अरिहंत भगवान की स्थापना करके नमस्कार करो। तो कैसी स्थापना करो? तो अरिहंत भगवान का जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, ये सब उन पर लगा लो, अप्लाय करो और वह निश्चित करो और निश्चित करके यानी उनके कितने प्राण हैं, कितनी पर्याप्ति हैं, क्या-क्या हैं, कौनसे हैं – ये सब, सभी बीस प्ररूपणा लगाओ, निश्चित करो, उनका स्वरूप निश्चित हो जायेगा, फिर नमस्कार करो। तभी आपने अरिहंतों को जाना। यहां तो हम प्रवचनसार की गाथा कहते हैं। **'जो जाणदि अरिहंतं'** तो अरिहंतों को कैसा जाना? वे शुद्ध-बुद्ध हैं ऐसा जाना? नहीं, परंतु उनकी पर्याय को जाना कि नहीं जाना? उनकी पर्याय में जो गुणस्थान, मार्गणास्थान हैं उनको भी जानना है और उनकी जो शरीर की अवस्था है – वे अठारह दोषों से रहित हैं, वह भी जानना है। पूरा सर्वांगीण स्वरूप जानने पर हमने अरिहंत को सही जाना है। उसके लिये गुणस्थान, मार्गणास्थानों का अगर ज्ञान ही नहीं होगा तो हम उनको सहीरूप से कैसे जानेंगे? देखो, यहां जानने का जो निषेध होता है न, उस निषेध को यहां हम देख रहे हैं। यह उसकी बात बता रहे हैं पं. टोडरमलजी। अभी प्रश्नकर्ता को उत्तर देते हैं।

आप कहेंगे, हमारे पंच परावर्तन में यह कहां आया? यही तो करना है न? कि पंच

परावर्तन से छूटने का उपाय हमको करना है। *श्रोता: यह सार बात है।* हां, तो उपाय करना है, यह सही है कि हर एक को सोचना चाहिये – हर एक को, अभी हमें क्या करना चाहिये ? उसीका तो उत्तर दे रहे हैं पं.टोडरमलजी। तो कहते हैं, **उसको कहते हैं नय दो प्रकार के हैं – एक निश्चय, एक व्यवहार। वहां निश्चयनय से जीव का स्वरूप गुणस्थानादि विशेष रहित अभेद वस्तुमात्र ही है**। क्या कहा ? एक अखंड वस्तु है, वह वस्तु समझने के लिये उसको भेद कर-करके हम समझते हैं। वस्तु समझने के लिये हमने भेद करके समझा है। अब हम कहेंगे उन सब भेदों को निकाल बाहर कर दो। जैसे, भारत एक अखंड देश है, वह कैसा है समझना है हमको। तो हमने उसके भेद करके समझा। यह गुजरात है, यह महाराष्ट्र है, यह उत्तरप्रदेश है – हमने ये सारे भेद कर-करके समझा। अब कहेंगे, उन भेदों को निकाल बाहर करो; तो उन्होंने महाराष्ट्र को भारत से बाहर निकाल दिया, राजस्थान को निकाल दिया, गुजरात को निकाल दिया, तामिलनाडु को निकाल दिया, दिल्ली को निकाल दिया। हां ? क्या रह गया भारत में ? हम पर्याय से रहित कर देते हैं न ? हां, क्या रह गया फिर ? भेदों को निकाल बाहर कर दिया। क्या करना था ? अरे ! सब भेद हमने समझने के लिये किये थे, अब उन भेदों को भूल जाओ। अब उन भेदों को गौण करके पूरे अखंड, अभेद को लक्ष में ले लो। परंतु हम तो सबको निकाल बाहर कर देते हैं। हां ? तो क्या शून्य रह जायेगा अंदर ? हां ? *श्रोता: सभी भारतीय हैं।* सभी भारतीय, एक अखंड भारत, ऐसा हमको लेना है।

वह भारत कैसा है समझने के लिये तो हमने भेद करके समझा था; वैसे आत्मवस्तु कैसी है वह समझने के लिये तो भेद किये थे। परंतु अभी उन भेदों को गौण कर दो। जान लिया न ? जानकर गौण करो। आप कहेंगे गौण करना है तो हम जानेंगे ही नहीं ! जानेंगे नहीं तो उसके संबंध में आपकी भ्रांति चलती रहेगी। जानना क्यों ज़रूरी है ? उस संबंधी भ्रांति मिटाने के लिये। फिर जानना छोड़ना है; अभेद ही करना है तो भेद ही क्यों करें ? हां ? हमको स्कूल छोड़कर कॉलेज में जाना है तो हम स्कूल में जायेंगे ही नहीं। आपको कॉलेज में ॲडमिशन नहीं मिलेगी ! ऐसे ही, देखो **और व्यवहारनय से गुणस्थानादि विशेषों से संयुक्त जीव अनेक प्रकार का है। वहां जो जीव सर्वोत्कृष्ट, अभेद, एक स्वभाव को अनुभवते हैं, उनको तो वहां शुद्ध उपदेशरूप, जो शुद्ध निश्चयनय, वही कार्यकारी है**। यानी उसीका अनुभव करना योग्य है। उसीसे उसको सम्यग्दर्शन, आत्मलीनता होगी।

पुनश्च जो स्वानुभवदशा को प्राप्त नहीं हुये हैं वे यानी जो अभी सम्यग्दर्शन जिनको नहीं हुआ है उनकी बात है। **वा** यानी और **स्वानुभवदशा से छूटकर सविकल्पदशा को प्राप्त हुये हैं**, यानी जो सम्यग्दृष्टि हैं ऑलरेडि; दोनों को लिया न? जिनके अभी सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं हुआ है और जिनको सम्यग्दर्शन हो चुका है परंतु अभी सविकल्पदशा में हैं, **ऐसे अनुत्कृष्ट जो अशुद्ध स्वभाव, उसमें स्थित जीवों को व्यवहारनय प्रयोजनवान है।**

श्रोता: पं. टोडरमलजी ने यहां पर बारहवीं गाथा को लिया है समयसार की। यह व्यवहारनय प्रयोजनवान है उसे 'जाणेलो प्रयोजनवान' कहा न स्वामीजी ने? कितनी बार कहा है उसको! क्योंकि व्यवहारनय जानने योग्य है यानी वे गुणस्थान, मार्गणास्थान आदि के भेद जानकर जीव का स्वरूप निश्चित करना योग्य है। पं.टोडरमलजीसाहब ने बाद में, लास्ट में यह लिखा है, **जीवकाण्ड को जानकर ज्ञानकाण्डमय होय**। यह जीवकाण्ड यानी जीवों के जो भेद हैं उनको जानकर हमें ज्ञानमय होना है। भेद जानकर फिर यानी भेदों को अच्छी तरह से जानो, निर्णय करो; फिर अभेद-अखंड अपना आत्मानुभव करो। तो इसके जानने से और कर्मों के भेद जानने से जीव और कर्मों का जो भेद है वह अच्छी तरह से, हमारे ख्याल में आता है, भेदविज्ञान को अत्यंत दृढ़ता मिलती है। इसलिये वे कहते हैं, यह बारहवीं गाथा इन्होंने बता दी। देखो यह नीचे का पॅरेग्राफ, **पुनश्च सुनो**! यह जगा-जगाकर सुना रहे हैं, लिख रहे हैं, **तुम्हारे परिणाम तो स्वरूपानुभव दशा में तो प्रवर्तते नहीं**। यानी बस अध्यात्मशास्त्र की बातें करता रहता है और वह अनुभव का विषय नहीं बनाते हुये चर्चा का विषय बना दिया है। तो स्वानुभव दशा में तो प्रवर्तते नहीं **और विकल्प जानकर गुणस्थानादि भेदों का विचार न करोगे तो तुम इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्ट।**

यह इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्ट क्या होता है, मालूम है? *श्रोता: नहीं।* मराठी में एक कहावत है 'तेल पण गेलं, तूप पण गेलं आणि हाती धुपाटणं राहिलं'। नहीं समझे? आप नहीं समझे न मराठी? *श्रोता: हमारी हिंदी में?* हिंदी में है। *श्रोता: धोबी का कुत्ता – न घर का न घाट का।* वह बात नहीं है। जब मैं छोटी थी न, धुपाटणं समझते हैं? धूप जिसमें खेते हैं न वह मिट्टी का एक बर्तन होता है; उसमें एक हॅण्डल होता है; ऊपर एक ऐसी सीधी कटोरी होती है, नीचे एक ऐसी उलटी कटोरी होती। दोनों कटोरी के मुंह – एक का ऊपर, एक का नीचे और बीच में है हॅण्डल; तो ऊपर की कटोरी में धूप खेते हैं। उसको धुपाटणं कहते हैं

मराठी में। धूपायन या जो कुछ नाम हो हिंदी में क्या कहते हैं मुझे मालूम नहीं। मां ने बोला थोड़ा घी और थोड़ा तेल लेकर आना है बाजार से, तो हम गये। गये तो दुकानदार ने पूछा किसमें दूं? तो मैंने बोला इसमें तेल दे दो। तो मैंने वह धुपाटणं बताया उसको। तो उसके ऊपर की कटोरी में उसने तेल दिया। तभी मैंने कहा मुझे थोड़ा घी भी दे दो। किस में दूं? तो मैंने उस धुपाटणं को ऐसे उलटा किया और कहा इसमें दे दो। यह लो, उसने घी डाला। तो बाय दॅट टाइम वह तेल गिर गया। तो वह गिरते हुये देखा तो ऊपर घी डाला था। तो उसको भी ऐसा उलटा कर दिया, पलट दिया तो दोनों गिर गये और हाथ में क्या रहा? वह धुपाटणं! ऐसे ही इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्ट। यानी स्वानुभवदशा तो है नहीं है और इसको विकल्प जानकर तो करना नहीं है। तो क्या करोगे?

अशुभोपयोग में ही प्रवर्तन करोगे, वहां तुम्हारा बुरा होगा। देखो, उनको इतनी करुणा है अंदर में, पं.टोडरमलजीसाहब को। **पुनश्च सुनो! सामान्यपने से तो वेदांत आदि शास्त्राभासों में** क्या लिखा है? शास्त्राभ्यास नहीं कहा। हं, शास्त्र नहीं, शास्त्र का आभास है। उनमें **भी जीव का स्वरूप शुद्ध कहा है**। उनमें भी कहते हैं जीव शुद्ध है-शुद्ध है और हम भी कहेंगे जीव शुद्ध है-शुद्ध है। तो उनके और हमारे कहने में कुछ अंतर है कि नहीं है? हम किसी नय से शुद्ध कहते हैं परंतु व्यवहारनय से उसमें भेद भी है, जो कुछ अशुद्धता भी है उसका भी ज्ञान करना ज़रूरी है। **वहां विशेष को जाने बिना यथार्थ-अयथार्थ का निश्चय कैसे हो? इसलिये गुणस्थानादि विशेष जाननेपर जीव की शुद्ध, अशुद्ध, मिश्र अवस्था का ज्ञान होता है, तब निर्णय करके यथार्थ को अंगीकार करता है। पुनश्च सुनो! जीव का गुण ज्ञान है, सो विशेष जानने से आत्मगुण प्रकट होता है**, यानी हम जो विशेष को जान रहे हैं, हम इन डिटेल जान रहे हैं, यह जानना है यानी आत्मा के गुण का विकास है या अधोनति है, उसका ह्रास है, क्या है? *श्रोता: विकास है।* विकास है न?

अपना श्रद्धान भी दृढ़ होता है। जैसे सम्यक्त्व है, वह केवलज्ञान प्राप्त होनेपर परमावगाढ़ नाम पाता है। इसलिये विशेष जानना। आगे बहुत कहते हैं, अभी थोड़ा पढ़ लेते हैं, अभी पांच मिनट हैं और। **पुनश्च वह कहता है – आपने कहा वह सत्य है, परंतु करणानुयोग से विशेष जाननेपर भी द्रव्यलिंगी मुनि अध्यात्म श्रद्धान के बिना**

संसारी ही रहता है और अध्यात्म का अनुसरण करनेवाले तिर्यंचादिक को अल्प श्रद्धान से भी सम्यक्त्व होता है और तुषमाष भिन्न इतने मात्र श्रद्धान से शिवभूति मुनि मुक्त हुये। उस ज़माने में भी लोगों के वे ही फेवरिट थे। **इसलिये हमारी बुद्धि से तो विशेष विकल्पों का साधन होता नहीं। प्रयोजनमात्र अध्यात्म का अभ्यास करेंगे**। क्या कहा? यह प्रयोजनमात्र कहा और वह अप्रयोजनमात्र कहा, है न? **इसको कहते हैं, द्रव्यलिंगी जैसे करणानुयोग से विशेष जानते हैं, वैसे अध्यात्मशास्त्रों का ज्ञान भी उनको होता है, परंतु मिथ्यात्व के उदय से अयथार्थ साधन करते हैं** यानी गलत करते हैं, **तो शास्त्र क्या करे? शास्त्र में तो परस्पर विरोध है नहीं। कैसे? वह कहते हैं** – अभी उसमें बहुत सारी बातें कहते हैं, तो क्या करें।

देखो, नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ देखेंगे। **पुनश्च तुमने तिर्यंचादिक के सामान्य श्रद्धान से कार्यसिद्धि कही परंतु उनके भी अपने क्षयोपशम के अनुसार विशेष का जानना होता है अथवा पूर्व पर्यायों में**, यानी पूर्व भवों में, **विशेष का अभ्यास किया था, उस संस्कार के बल से होता है। जिस प्रकार किसीने कहीं गड़ा हुआ धन पाया इसलिये हम भी ऐसे ही पायेंगे मानकर सभी को व्यापारादिक का त्याग नहीं करना चाहिये**। तिर्यंचो के जो संस्काररूप धारा चलती है वह ज्ञान में आ जाये तो उनका हो गया कार्य, तो हम भी ऐसा ही करेंगे सोचना उचित नहीं है। **उसी प्रकार किसीने अल्प श्रद्धान से ही कार्य सिद्ध किया इसलिये हम भी ऐसे ही कार्य सिद्ध करेंगे मानकर सभी को विशेष अभ्यास का त्याग करना योग्य नहीं है क्योंकि यह राजमार्ग नहीं है। राजमार्ग तो यह ही है कि नानाप्रकार के विशेष**, नाना यानी अनेक प्रकार के विशेष, यानी इन डिटेल **जानकर तत्त्वों का निर्णय होने पर ही कार्यसिद्धि होती है। पुनश्च तुमने कहा**, यह हम-आप जो कहते हैं कि, **मेरी बुद्धि से विकल्पसाधन नहीं होता**। कि मेरी बुद्धि अल्प है; कहां याद आती है बुद्धि? करणानुयोग के अभ्यास में! **तो जितना बन सके उतना ही अभ्यास करो**। जितना बने यानी उसमें से जितना समझे उतना करो। **तुम पापकार्य में तो प्रवीण हो**, अपने व्यापार-धंधे में तो बुद्धि बहुत चलती है और हम कहां गये थे, क्या-क्या देखना है, कैसे करना है, कैसे हलवा बनाना है, कैसे क्या चीजें बनायी – उसमें तो हम प्रवीण हैं। **और इस अभ्यास में कहते हो मेरी बुद्धि नहीं है, यह तो पापी का लक्षण है। इसतरह द्रव्यानुयोग के पक्षपाती को इस शास्त्र के अभ्यास में सन्मुख किया**।

यह हर एक पक्षपाती की यहां बात ली है। वह पुस्तक में से पढ़ लेना आप यह पूरा, बहुत सरल है। इसमें पढ़कर कुछ नहीं समझें ऐसी बात नहीं है। यह...

श्रोता: यह द्रव्यानुयोग के पक्षपाती को सूक्ष्माभासबुद्धि कहा, चरणानुयोग के पक्षपाती को स्थूलबुद्धि कहा। कहां पर ? चरणानुयोग में ? देखो, आपका प्रश्न ऐसा है, जो चरणानुयोग का पक्षपाती था न ? देखो पेज नंबर है, पहले प्रथमानुयोग के पक्षपाती को लिया है फिर चरणानुयोग के पक्षपाती को लिया है। पेज नंबर ७, उसे स्थूलबुद्धि कहा था उसमें। स्थूलबुद्धि क्यों कहा ? स्थूलबुद्धि यानी मोटी बुद्धि, जड़बुद्धि। क्यों कहा ? कि व्रतादि शुभ कार्यों से कार्य होगा ऐसा वह मानता है। परंतु व्रतादिक करना यानी हिंसा का त्याग करना यानी जीवों की विराधना न हो, इसलिये वह ऐसे व्रतादि अंगीकार करता है। परंतु वे जीव कहां रहते हैं, किस पर्याय में रहते हैं, कैसे-कैसे वे पाये जाते हैं, ये सूक्ष्म कहां हैं, बादर कहां हैं, अनंत जीव कहां रहते हैं, किस पर्याय के आश्रय से रहते हैं यह जाने बिना उन जीवों की हिंसा का त्याग कैसे होगा ? केवल बाह्य में हमने कुछ व्रत अंगीकार किये, कुछ क्रिया की, तो उससे हमारा क्या लाभ होगा ? इस बात को वहां कहते हैं। इसलिये उसको स्थूलबुद्धि कह दिया।

अब इसमें तो बहुत सारी विशेषतायें हैं, आप पढ़ना इसको। वहां बार-बार यही कहते हैं कि इन शास्त्रों का अभ्यास आप जरूर करना। जैसे हो सके वैसा अभ्यास करो, ऐसा कहते हैं। इसमें तो ऐसा लिखा है १९ पेज पर, कहते हैं कि **जैसे बने वैसे इस शास्त्र का अभ्यास करो**, सेकंड लाइन, **तथा अन्य जीवों को जैसे बने वैसे शास्त्राभ्यास कराओ। तथा जो जीव शास्त्राभ्यास करते हैं, उनकी अनुमोदना करो**। उसको अप्रयोजनभूत मत बताओ। **पुस्तक लिखवाना और पढ़ने-पढ़ानेवालों की स्थिरता करना इत्यादिक शास्त्राभ्यास के बाह्य कारण, उनका साधन करना। क्योंकि इनके द्वारा भी परंपरा कार्यसिद्धि होती है और महत् पुण्य उपजता है**। भविष्य में ऐसे प्रसंग, ऐसे अवसर आपको आते हैं कि शास्त्राभ्यास हो जाये। अभी हम यहीं विराम लेते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२३. मध्यलोक – ढाई द्वीप रचना

षट्खण्डागम के आधार से यहां हम कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर हैं, उसीके अंतर्गत यहां पंच परावर्तन का स्वरूप हम देख रहे हैं। यह जो हमने अभी मंगलाचरण कहा है, यह कहां लिखा है? धवला पुस्तक ४ में लिखा है। जहां कालानुगम शुरू होता है, वहां वीरसेन आचार्य ने इसको लिखा है। किसीने हमें बोला कि इसका अर्थ समझाओ। एक बार देखा था पर एक बार देखने से क्या होता है? है न! तो हम फिर समझेंगे।

मंगलाचरण

कम्मकलंकुत्तिण्णं विबुद्धसव्वत्थमुत्तवत्थमणं ।
णमिऊण उसहसेणं कालणिओगं भणिस्सामो।।

कम्म यानी कर्म, **कम्मकलंक** यानी कर्मरूपी कलंक और उससे **उत्तिण्णं** यानी उत्तीर्ण-पार हो गये हैं। कर्मरूपी कलंक से जो पार हुये हैं ऐसे कौन हैं या कौन इस कलंक से पार हुये हैं? तो सिद्ध भगवान। कैसे हैं वे? **विबुद्धसव्वत्थम्। सव्वत्थम्** यानी सर्व अर्थों के यानी सर्व पदार्थों के **विबुद्ध** यानी विशेषरूप से जाननेवाले हैं यानी वे सर्वज्ञ भगवान हैं। वे और कैसे हैं? **उत्तवत्थमणं** यानी अस्तरहित हैं, यानी सदा उदित हैं यानी उनका जो केवलज्ञान है, वह हमेशा ही ऐसा ही उदितरूप से रहेगा। ऐसे कौन हैं? तो **उसहसेणं** वृषभसेन। ये कौन थे वृषभसेन? *श्रोता: आदिनाथ भगवान के गणधर।* हां, आदिनाथ भगवान के गणधर। तो उनको सभी कर्मकलंक से मुक्त क्यों कहा? हां बोलो न, सभी गणधर मोक्ष जाते ही हैं उसी पर्याय में, यह तो नियम है। *श्रोता: द्रव्यनिक्षेप से?* क्यों? उसी भव में – उसी भव में जायेंगे। हां परंतु हम यहां **उसहसेणं** वृषभसेन लिखा है, गाथा में उन्हें कहीं गणधर ऐसा नहीं कहा। आप कहेंगे द्रव्यनिक्षेप यानी क्या? जैसे हमारे भविष्य के तीर्थंकर कौन हैं? श्रेणिक राजा, श्रेणिक राजा है क्या? वह तो पूर्व भव का नाम है, अभी तो वे नारकी हैं और वे महापद्म होनेवाले हैं। ऐसे यहां वृषभसेन कहने से वे कौनसे वृषभसेन हैं? इसलिये वे गणधर थे तो हम उनको गणधर कहेंगे परंतु हर गणधर उसी पर्याय में मोक्ष जाते ही हैं, इस अपेक्षा से वे मोक्ष गये हैं। जैसे हम महावीर भगवान कहते हैं, महावीर तो उनका अरिहंत अवस्था का नाम था, परंतु वे तो मोक्ष चले गये हैं। ये गणधर अवस्था में थे,

केवलज्ञान होकर वे भी मोक्ष चले गये हैं, उनको नमस्कार करके यहां **कालणिओगं भणिस्सामो** यानी कालनियोग मैं बताता हूं ऐसी वीरसेनस्वामी स्वयं प्रतिज्ञा करके कालअनुयोग द्वार की रचना करते हैं यानी उसकी जो टीका लिखी है आगे उसकी बात है। आचार्यों की यह विशेषता है कोई भी ग्रंथ हो, कोई भी अनुयोग हो तो उसके पहले मंगलाचरण करेंगे, अरिहंतादि को, सिद्धों को नमस्कार करेंगे उसे हम मंगलाचरण कहते हैं। उसमें कौनसा विषय बतानेवाले हैं उसको प्रतिज्ञापूर्वक वहां कहेंगे कि मैं ऐसा बताऊंगा। यह विशेषता होती है, यह हुआ मंगलाचरण का अर्थ।

यहां दो, तीन प्रश्न आये हैं उन्हें देखेंगे फिर आगे बढ़ेंगे। एक है *स्वयंभूरमण द्वीप में भोगभूमि है तो क्या वह भोगभूमिवाले तिर्यंच भी सम्मूर्च्छन जीव हैं?* हमने स्वयंभूरमण द्वीप में भोगभूमि है ऐसा तो नहीं कहा था। स्वयंभूरमण द्वीप में दो भाग हैं, बीच में स्वयंप्रभ पर्वत है। स्वयंप्रभ पर्वत के बाहरी ओर का जो स्वयंभूरमण द्वीप है उसमें तो कर्मभूमि है और अंदरवाला जो भाग है उसमें जघन्य भोगभूमि है। भोगभूमि के जीव तो गर्भज ही होते हैं – यहां 'ही' लगाया है। कर्मभूमि में तो गर्भज भी होते हैं और सम्मूर्च्छन भी होते हैं। ख्याल में आयी बात? यह महामत्स्य तो सम्मूर्च्छन है। परंतु वहां अन्य भी पंचेन्द्रिय जीव या अन्य द्वीन्द्रिय आदि जीव भी पाये जायेंगे, वे तो द्वीन्द्रिय आदि भी सम्मूर्च्छन होते हैं। यानी यहां प्रश्न था कि भोगभूमिवाले तिर्यंच क्या सम्मूर्च्छन होते हैं? तो बिलकुल नहीं होते।

दूसरा एक प्रश्न है कि *जम्बूवृक्ष, नंदीश्वर द्वीप के वृक्ष, स्वर्गों के वृक्ष, वनस्पतिकायिक नहीं है।* नंदीश्वर द्वीप के वृक्षों के बारे में तो हमने कुछ नहीं कहा था। हमने तो केवल कमल की बात की थी वह अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीव है। आगे उनका प्रश्न है *तो फिर देव कल्पवृक्षों के फल फूलों से पूजा करते हैं तो हम क्यों नहीं कर सकते? यदि वनस्पतिकायिक को तोड़ने में जीवहिंसा है तो पृथ्वीकायिक तो तोड़ने में भी हिंसा होगी।* वे कल्पवृक्षों के फूल नहीं तोड़ते, कल्पवृक्षों से वे दिव्य फूल, फल प्राप्त होते हैं। देखना है आपको? निकालना जैन भूगोल। आपके प्रश्नों को पहले से ही लिखकर रखे हैं यहां पर। देखो पेज नंबर २०० निकालना। जैन भूगोल पुस्तक में २०० नंबर का पृष्ठ निकालना है आपको, नीचे का पॅरेग्राफ।

अष्टान्हिका पर्व में कल्पवासी, कल्पवासी मालूम है न? कहां तक के? सोलहवें

स्वर्ग तक के। व्यंतर, ज्योतिषि, भवनवासी इन सबके इन्द्र तथा अन्य देव उनके परिवार सहित आते हैं। कहां आते हैं? नंदीश्वर द्वीप में। कल्पवासियों के सौधर्म आदिक बारह इन्द्र, सोलह स्वर्गों में मिलकर बारह ही इन्द्र होते हैं। *श्रोता: प्रतीन्द्र?* प्रतीन्द्र भी होंगे परंतु इन्द्र तो बारह ही हैं। अपने-अपने वाहनों पर आते हैं, उनके रहने के स्थानों को भी विमान कहते हैं, यहां उनके वाहन क्रम से इस प्रकार हैं: हाथी किसका होगा? सौधर्म का, घोड़ा ईशान का, सिंह, सारस पक्षी... हमने बोला था ना कि हमारे पास सोल्यूशन है, चार-चार हाथी नहीं मंगवाने हैं तो। आप नहीं समझे, दिल्ली में पंचकल्याणक हुआ था तब चार इन्द्रोंने कहा हम भी जन्मकल्याणक के अवसर पर हाथी पर बैठकर प्रदक्षिणा देंगे और वहां वैसी व्यवस्था करनी पड़ी थी। तो हर एक इन्द्र के अलग-अलग वाहन हैं, तो जिसने जिसकी बोली ली उसको उसपर बिठाना चाहिये। हाथी, घोड़ा, सिंह, सारस पक्षी, कोयल, हंस, चकवा, गरुड़, माछला, मोर, कमल और पुष्पक विमान। ये उनके विमानों के-उनके वाहनों के ये नाम हैं वहां कोई तिर्यंच वाहन नहीं हैं – वहां वाहनजाति के देव ही विक्रिया करके इनका रूप लेते हैं। इन वाहनों को भी विमान कहते हैं। इनपर आरूढ़ होकर सौधर्म आदि देव अपने परिवार सहित – आगे क्या लिखा है देखिये। कल्पवृक्षों से प्राप्त दिव्य फल-फूल आदि पूजनद्रव्य हाथों में लेकर आते हैं। उनसे प्राप्त, वहां से तोड़कर ऐसा नहीं कहा और वे कोई पृथ्वीकायिक फूल नहीं होते हैं। अभी आगे तो बहुत बातें आती हैं, इसपर यह जो प्रश्न उठा है न, फिर पढ़ लेते हैं चलो। ये सभी इन्द्रादि देव प्रशस्त आभरण पहनकर आते हैं, चामर, सेना आदि सहित होते हैं, ध्वजा तथा वादित्रों के शब्दों से संयुक्त होते हैं। २०१ पृष्ठ पर हम पढ़ रहे हैं – वहां आठ दिन तक ऐन्द्रध्वज यानी इंद्रध्वज पूजन करते हैं। वहां दिन रात का भेद नहीं है, क्यों नहीं है? *श्रोता: सूर्य, चंद्र नहीं हैं।* सूर्य-चंद्र तो हैं परंतु वहां कोई घूमनेवाले सूर्य–चंद्र नहीं हैं। तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि होने से...

श्रोता: वहां दिन रात नहीं हैं तो आठ दिन किस अपेक्षा से? हमारी अपेक्षा से। हमारे आठ दिन हम कहेंगे, आठ दिन-रात हम हमारी अपेक्षा कह रहे हैं। तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि होने से वहां भी कल्पवृक्षों से ही प्रकाश होता है। हमारे एक दिन-रात में आठ प्रहर होते हैं। ये सभी देव आठ दिन तक, अष्टमी से पूर्णिमा तक निरंतर पूजा करते हैं क्योंकि वहां रात्रि और दिन का भेद ही नहीं है। एक-एक दिशा में दो प्रहर तक पूजा करके फिर अन्य दिशा में जाकर पूजा करते हैं। पूर्ववाले दक्षिण में जाते हैं, दक्षिणवाले पश्चिम

में, पश्चिमवाले उत्तर में और उत्तरवाले पूर्व में जाते हैं। फिर दो प्रहर के बाद आगे की दिशा में जाते हैं। आठ प्रहर हुये न यानी २४ घंटे नंदीश्वर द्वीप के एक पूर्व दिशा में आठ प्रहर हुये, फिर जो पूर्व दिशा के हैं वे सभी दक्षिण की ओर जायेंगे – फिर ऐसे इसतरह से घूमेंगे। प्रारंभ में पूर्व दिशा में कल्पवासी, दक्षिण में भवनवासी, पश्चिम में व्यंतर और उत्तर में ज्योतिषि देव होते हैं। उनके इन्द्र, क्रम से सौधर्म, ईशान आदि यानी ये कल्पवासियों के, आदि में सभी समझना। चमरेन्द्र, वैरोचन आदि ये कहां के इन्द्र हैं? भवनवासियों के हैं, किंपुरुष आदि ये व्यंतरों के और चंद्र आदि ज्योतिषियों के इन्द्र हैं। इसतरह प्रदक्षिणा देकर लगातार आठ दिन रोज के चौबीस घंटे पूजन चलती है।

वहां दिन-रात का भेद नहीं होता परंतु अपने यहां रात में पूजन का निषेध है। रात में स्वाध्याय, ध्यान, चिंतन कर सकते हैं। प्रश्न यह आपका जो आया था अभी पूछा है न, क्या पूछा है? कल्पवृक्षों के फल-फूल वगैरह उनसे पूजा, तो क्या हिंसा नहीं होती है यह पूछा था। तो वहां भी जैन भूगोल शिबिर में किसीने प्रश्न पूछा था क्योंकि हमारे शिबिर में जो डायरेक्ट प्रश्नोत्तर हुये उसकी बात यहां पर लिखी हुयी है। हम फल-फूल नहीं चढ़ाते हैं और इन्द्र चढ़ायें तो चलता है क्या? यहां तो फल-फूल चढ़ाने का निषेध हो रहा है और वहां चढ़ायें तो चल जाये? यह पार्शलिटि क्यों? इन्द्र जो फल-फूल लाते हैं वे कल्पवृक्षों से प्राप्त दिव्य फल-फूल होते हैं, रत्नमयी होते हैं, अचित्त होते हैं, सचित्त नहीं और वे तोड़कर नहीं ला रहे हैं वे। हम जो द्रव्य चढ़ाते हैं वे प्रासुक, योग्य और हिंसा रहित होने चाहिये। कुछ गलत रूढ़ियां चल पड़ती हैं परंतु हम सही या गलत का निर्णय करके सही बातें अंगीकार कर सकते हैं। यह आपके प्रश्न का उत्तर हुआ, ये तो हो गये दो-तीन प्रश्न।

श्रोता: वह महामत्स्य जो आपने बोला था। हां, यह हमारा विषय अधूरा रहा था क्योंकि हमारी स्थिति पूरी हुयी थी न दोपहर के क्लास की, वह स्थंडिलक्षेत्र और महामत्स्य की कुछ बातें उठायी थी तो उसके लिये आपको जीवकाण्ड दूसरा भाग, पेज ६६६ निकालना है। हमने ऐसी बात देखी थी कि स्वयंभूरमण समुद्र जो है उसका जो बाहरी तट है वह तो एक राजू बाय एक राजू जो एरिया है न मध्यलोक की उसको टच कर रहा है। बराबर है न? और चारों कोनों में चतुष्कोण भूमि है तो यह स्वयंभूरमण समुद्र का कोई महामत्स्य जैसे यहां कोई पानी में से मछली किसी वेदना से, या किसीने उठाकर उसको बाहर जमीन पर लाया तो वेदना से वहां पर तड़फड़ेगी – वैसे ही वहां कोई मत्स्य उछलकर

बाहर आ जावे, या कोई कारण हो जावे तो वह चतुष्कोण भूमि पर जाकर वहां गिरे तो वहां वह वेदना समुद्घात तो कर ही सकता है परंतु उसके साथ मारणांतिक कहां तक करेगा उसकी बात है, उसके लिये हम पेज नंबर ६६६ पर पढ़ेंगे और फिर उसकी संदृष्टि भी इसी पुस्तक में देखेंगे, देखो। ६६६ पेज पर गाथा ५८४ की टीका। जीव का क्षेत्र कहते हैं, यह सम्यक्त्वमार्गणा है न! देखो, सम्यक्त्वमार्गणा में यह बात बतायी है, यहां क्षेत्र का विषय क्यों लिया उन्होंने? क्योंकि हमें जीव के संबंध में पूरा जानना है तो उसका क्षेत्र भी जानना चाहिये ऐसी कुछ बातें वहां आयी थी, ठीक है, हम यहां से पढ़ेंगे उसको।

देखो, जीव का क्षेत्र कहते हैं, वह शरीर मात्र की अपेक्षा से तो सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अवगाहना से लेकर, इसको हमने बहुत विस्तार से बारंबार कंटाला आने तक पढ़ा है और सुना है। एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये इसको भी पढ़ा न हमने? अभी इसकी गहराई, इसकी सूक्ष्मता, इसकी विशालता ख्याल में आती है। एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना तक क्षेत्र जानना। जीव के शरीर की अवगाहना की अपेक्षा क्षेत्र के इतने भेद होते हैं; यह तो उसके शरीर की अवगाहना यानी जो शरीर में यानी उसका जिस शरीर के साथ संबंध है उसकी बात है। उसके ऊपर यानी शरीर की अवगाहना तो है तो शरीर से भी कुछ अधिक प्रदेश व्याप सकता है क्या जीव? तो हां, समुद्घात अवस्था में।

जितनी अवगाहना है वह शरीर में तो मूल प्रदेश हैं ही हैं जब समुद्घात करता है तब शरीर के बाहर भी निकलता है कुछ समय के लिये। तो कहते हैं उसके ऊपर, यहां जीव का क्षेत्र बता रहे हैं यहां कितना हो सकता है तो कहते हैं अपने देहप्रमाण – वह निगोद से लेकर महामत्स्य तक। उससे भी अधिक हो सकता है? हां, कहते हैं मारणांतिक समुद्घात की अपेक्षा। तो कहते हैं उसके ऊपर, समुद्घात की अपेक्षा से वेदना समुद्घातवालों के क्षेत्र में एक-एक प्रदेश बढ़ते हुये यानी वेदना समुद्घात में हो सकता है कि एक ही प्रदेश बाहर निकला, दो प्रदेश, तीन प्रदेश, अधिक से अधिक तीनगुणा बाहर निकल सकते हैं। तो कहते हैं एक-एक प्रदेश बढ़ते हुये महामत्स्य की अवगाहना से तिगुणे लंबे चौड़े क्षेत्र तक क्षेत्र जानना। वेदना समुद्घात कितना हो सकता है? जो मूल शरीर है उससे तिगुणा आड़ा और तिगुणा ऐसा आगे-पीछे, हाइट वाइज नहीं बढ़ता – हाइट वाइज में तिगुणा नहीं

वह जितनी हाइट है उतनी ही रहेगी। जब वेदना समुद्घात होता है तब ऐसा तीनगुणा और ऐसा तीनगुणा – तीन त्रिक नौगुणा हो जायेगा पूरा आकार अगर ऐसा देखना है तो।

एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये यहां तक के भेद हो सकते हैं। महामत्स्य को क्यों लिया? क्योंकि वहां तक तो हमने एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी अवगाहना तो देख ली थी। उसके और आगे क्षेत्र हमको काउंट करना है इसलिये, समुद्घात की अपेक्षा किसीके एक प्रदेश ज्यादा, दो प्रदेश ज्यादा, तीन प्रदेश ज्यादा, अधिक से अधिक कितना? तिगुणा लंबा-चौड़ा, आगे देखते हैं – इसके ऊपर, यह तो वेदना समुद्घात की अपेक्षा हुये। इसके ऊपर एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये मारणांतिक समुद्घातवाले के उत्कृष्ट क्षेत्र तक जानना। एक-एक प्रदेश से बढ़ते हुये क्यों कहा? मारणांतिक हो सकता है कि एक प्रदेश दूरी पर मारणांतिक किया हो, दो प्रदेश दूरी पर, दस प्रदेश दूरी पर, अधिक से अधिक कितनी दूरी पर यहां से मारणांतिक करेगा कोई जीव? तो सातवें नरक तक करेगा। यह जरूरी नहीं कि जन्म के स्थान तक प्रदेश फैल जाये।

तो उसके लिये बताते हैं स्वयंभूरमण समुद्र के बाह्य स्थंडिलक्षेत्र में, स्वयंभूरमण समुद्र की बाहरी भूमि में, स्वयंभूरमण समुद्र के बाहर कहां जगह है? चार कोनों में – उसको स्थंडिलक्षेत्र कहते हैं, वहां स्थित जो महामत्स्य, वहां कैसे महामत्स्य चला जायेगा? वह तो पानी में रहता है। हां तो जैसे मैंने कहा कि उछलकर बाहर चला जावे, वेदना से वहां तक चला जायेगा क्योंकि हजार योजनवाला है और वहां से बाहर फेंका गया, मान लेते हैं कि किसी देव ने उठाकर फेंका तो वहां तक यानी वहां कोने तक पहुंच सकता है। वहां से मारणांतिक करेगा तो कैसे करेगा? हो सकता है कि सातवां नरक जहां उसको जाना है वह, इस दूसरी बाजू में है यानी ऐसा वलयाकृति है न वह स्वयंभूरमण समुद्र, ऐसा गोल है और वह महामत्स्य इस चतुष्कोण में यहां इशान्य कोने पर पहुंचा है, यहां से उछलकर, वह यहां कोने में पड़ा है। तो अभी उसके आत्मप्रदेश यहां से गिनेंगे हम, तो पहले में पहले ऐसे पूर्व तक चले जायेंगे, या ऐसे भी चले जायेंगे ईशान्य कोने से स्वयंभूरमण समुद्र के पश्चिमी तट तक। कैसे भी गिनो आप – यहां तो आधे राजू तक आयेंगे। या तो यहां पूर्व दिशा तक आयेंगे पूरे एक राजू और फिर आधा राजू ऐसे उस समुद्र के पूर्व तट तक गये और फिर नीचे गये छह राजू तक तो कितना होगा? एक राजू फिर आधा राजू – डेढ़ राजू

और नीचे छह राजू। सातवी पृथ्वी छह राजू नीचे है तो कितना हो जायेगा? *श्रोता: साढ़े सात राजू।* साढ़े सात राजू वही बात बतायी है। इसके लिये मैं फिगर भी बताऊंगी आपको।

जब सातवें नरक में महारौरव नामक श्रेणीबद्ध बिल के प्रति मारणांतिक समुद्घात करता है, तब उसमें पांच सौ योजन चौड़ा – यह महामत्स्य की अवगाहना, ढाई सौ योजन ऊंचा प्रथम वक्र गति में एक राजू यानी पहेले मोड़ तक एक राजू, द्वितीय वक्र में आधा राजू और तृतीय वक्र में छह राजू लंबाईवाला उत्कृष्ट क्षेत्र होता है वहां तक क्षेत्र जानना। मारणांतिक की अपेक्षा यह सबसे बड़े में बड़ा एक जीव की अपेक्षा क्षेत्र होता है। अब इसीका जो ड्रॉइंग आपको देखना है तो १०२८ नंबर का पेज निकालो, हां १०२८, जहां चौकोन और अंदर जो गोल बताया है अभी जो फर्स्ट एडिशन - पुरानी पुस्तक है उसमें जो वह गोल है वह चौकोन को टच करता हुआ नहीं बनाया है। पेन्सिल से ठीक कर लो उसको – वह गोल है वह चौकोन को टच करना चाहिये। नयी एडिशन में उसको ठीक कराया है, सेकंड एडिशन में वह ठीक है। पुरानी एडिशन में वह गोल छोटा है, उसमें और चौकोन में स्पेस है अभी थोड़ासा वह बाजू में रह गया है। वह तो प्रिन्टिंग की मिस्टेक है, समझना वह टच करता हुआ है। चतुष्कोण जो है उसको स्थंडिलक्षेत्र कहते हैं, वहां लिखा हुआ है न स्थंडिल मिला आपको?

श्रोता: कोई जीव है जो त्रसनाली के बाहर है तो... त्रसनाली के बाहर की बात नहीं है यहां पर... यहां तो महामत्स्य की बात है – वह त्रसनाली के बाहर नहीं गया है। *श्रोता: वही मैं पूछ रहा हूं... उसमें मारणांतिक क्षेत्र ज्यादा नहीं होगा?* आपका ऐसा प्रश्न है त्रसनाली के बाहर का जीव मारणांतिक ज्यादा नहीं करेगा? त्रसनाली के बाहर कौन है? एकेन्द्रिय है, एकेन्द्रिय कहां तक मारणांतिक करेंगे? कोई एकेन्द्रिय से एकेन्द्रिय में जानेवाला है, उसकी अवगाहना कितनी होगी? *श्रोता: घनांगुल का असंख्यातवां भाग।* घनांगुल का असंख्यातवां भाग, तो केवल उसकी लंबाई बढ़ेगी वह पूरा क्षेत्र नहीं बढ़ेगा, उसका व्हॉल्यूम बढ़ेगा नहीं।

तो अभी जो यह स्थंडिलक्षेत्र है चौकोर और जो अंदर की जो गोल आउटर बॉर्डर है वह स्वयंभूरमण समुद्र है, वह चौड़ा कितना बताया है? देखो, आड़ी लाइन है उस संदृष्टि में

नहीं पड़ेंगे। *श्रोता: उसका क्या अर्थ है बताइये न।* आड़ी लाइन का मतलब होता है जगत्श्रेणी। जगत्श्रेणी यानी ७ राजू, डिव्हायडेड बाय ७ यानी एक राजू और उसको आधा किया यानी आधा राजू। ऊंचाई ६ राजू बताया है और लंबा एक राजू बताया है, इस संदृष्टि में मत जाओ। हमें तो आपको केवल यह फिगर बतानी है कि यह बाहरी चतुष्कोण भूमि में कोई महामत्स्य पड़ा हुआ है तो ऐसा अगर आड़ा जायेगा तो एक राजू ऐसा पूर्व में जायेगा फिर सेंटर तक आया यानी आधा राजू आया, फिर नीचे गया तो छह राजू नीचे तक गया। तो इतना बड़ा उसका मारणांतिक का समुद्घात हो सकता है। उसमें लिखा है देखो १०२८ पेज पर सेकंड लाइन, पुनश्च यहां उत्कृष्ट मारणांतिक की अवगाहना में स्थंडिलक्षेत्र जानने की रचना करते हैं। स्थंडिलक्षेत्र नीचे लिखा है देखो – स्वयंभूरमण समुद्र के बाह्यकोण में है। स्थंडिलक्षेत्र से मरकर वह महामत्स्य महारौरव नामक सातवें नरक में उपजता है उसका उत्कृष्ट मारणांतिक समुद्घात होता है। उत्कृष्ट क्यों कहा? क्योंकि वह अधिक से अधिक लंबाई तक उसके प्रदेश फ़ैले हैं इसलिये उत्कृष्ट कहा, यहा जरूरी नहीं कि सभी महामत्स्य मरकर सातवें नरक में जावे, ऊपर के नरक में जा सकते हैं कि नहीं जा सकते? जा सकते हैं और नरक में ही जाना चाहिये यह भी जरूरी नहीं है, क्या महामत्स्य स्वर्ग में नहीं जा सकते? हां महामत्स्य मरकर कर्मभूमि के तिर्यंच भी हो सकते हैं, मनुष्य भी हो सकते हैं। ख्याल में आयी न बात! तो उनका तो मारणांतिक छोटा होगा। यह मॅक्झिमम लंबे से लंबा मारणांतिक कहां हो सकता है, हाइएस्ट पॉसिबल इसके लिये यह बात बतायी है। यह तो संदृष्टि हम पूरी नहीं जानते हैं ना इसलिये, आपको जो पूरी फिगर बतानी थी तो उसकी बात हो गयी। यह आपका प्रश्न हो गया।

श्रोता: कषाय समुद्घात और वेदना समुद्घात में आत्मा के प्रदेश बाहर निकलते हैं क्या? आपका प्रश्न है कषाय समुद्घात और वेदना समुद्घात में मॅक्झिमम कहां तक जा सकते हैं? मॅक्झिमम तीनगुणा, वेदना समुद्घात में भी और कषाय समुद्घात में भी। *श्रोता: हाइट नहीं बढती है?* नहीं, हाइट नहीं बढ़ती है, दोनों में ऐसे मोटाई तीनगुणा और ऐसे चौड़ाई तीनगुणा। यह समुद्घात की बात आपको बताऊं मैं? लेश्यामार्गणा में होगी। अभी हम उसको पढेंगे, फाइंडआउट करेंगे फिर आपको बतायेंगे।

अभी अपना जो विषय चल रहा है उसमें एक प्रश्न यह था कि अभी हमने दोपहर में

देखा था की सामान्य से विशेष बलवान होता है। 'सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान भवेत्।' सामान्य शास्त्र को जानने की अपेक्षा विशेष यानी विस्तार से शास्त्र को जानना वह बलवान है। तो प्रश्न ऐसा आया कि हमने अभी तक तो, चूंकि द्रव्यानुयोगवाले हैं हम, हमने तो हमेशा सामान्य को मुख्य किया था और यहां आप विशेष को बलवान कह रहे हैं? पं. हेमचंदजीसाहब हंस रहे हैं। यहां हम जीव के सामान्य-विशेष की बात नहीं कर रहे हैं, अभेद एक सामान्य की बात नहीं हो रही है यहां पर। सामान्य यानी 'इन जनरल' यानी बहुत स्थूलरूप से, और विशेष यानी 'इन डिटेल' बहुत सूक्ष्मता से। जीव जुदा-पुद्गल जुदा यह सामान्य कथन हुआ, जीव के भेद और पुद्गल के कर्मों के भेद जानना यह विशेष हुआ यानी वह विस्तार हुआ। तो विस्तार से जानना अधिक कार्यकारी है, ऐसा वहां कहने का प्रयोजन है, ख्याल में आयी बात? अब हो गये सारे प्रश्न, अब आगे बढ़ेंगे।

अपनी जो बात चल रही थी क्षेत्र को जानने संबंधी क्योंकि क्षेत्रपरावर्तन तो हम वैसे देख चुके हैं, फिर भी इस लोकाकाश में कहां कौनसे क्षेत्र हैं उसकी बात अपनी चल रही थी। हमने लोकाकाश की जनरल बात देखी, उसके तीन भेद होते हैं – अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक। अधोलोक में क्या है तो सात पृथ्वियां हैं एक के नीचे एक; इन पृथ्वियों में क्या हैं? तो वहां तो ऊपर की पृथ्वी में तो भवनवासियों के भवन भी हैं, व्यंतरों के भी भवन हैं और फिर वहां असुरकुमार जाति के देव भी रहते हैं और नीचे के अब्बहुलभाग में तो नारकियों के बिल भी हैं। दूसरी, तीसरी, चौथी ऐसी सातों ही पृथ्वियों में नरक के बिल होते हैं, वहां नारकी रहते हैं। सातवीं पृथ्वी के नीचे निगोद नाम की एरिया है एक राजू हाइटवाली, सात राजू और सात राजू लंबाई-चौड़ाईवाली। ये सभी पृथ्वियां सभी ओर से वातवलयों से लिपटी हुयी हैं। ऊपर से नहीं हैं नीचे से हैं, केवल आठवीं पृथ्वी जो है वह नीचे से तो वातवलयों से लिपटी है यानी उनके आधार से हैं ऊपर भी उसके तीन वातवलय हैं। जिस ऑर्डर से नीचे हैं, उसके उलटे ऑर्डर से ऊपर हैं।

यह तो हमने देखा सबसे ऊपर जो तनुवातवलय है उसमें सिद्ध भगवान वहां विराजमान हैं, अंतिम तनुवातवलय में – ये भी बातें हमने देखी थी। ये जो पृथ्वियां हैं, हम लौकिक में जिसको पृथ्वी कहते हैं ऐसी वह गोलवाली पृथ्वी नहीं है। लोकाकाश के एक एण्ड से दूसरे एण्ड तक जो फैली हुयी है उसको यहां पृथ्वी कहते हैं। ऊपर जो देवों के विमान हैं वे भी

पृथ्वीकायिकवाले हैं परंतु वे खण्ड-खण्ड हैं, टुकड़े-टुकड़े जैसे हमें प्लॅनेट दिखते हैं न, ऐसे उनके वे विमान हैं – जैसे कोई नींबू या संतरा ऐसा आधा करके फ्लॅट बाजू ऊपर रखेंगे और गोलाकार बाजू नीचे, उस प्रकार के उनके वे विमान हैं। देवों के निवास को भी विमान कहते हैं और देव एक जगह से दूसरी जगह विहार करके जाते हैं तो उनके वाहन को भी विमान कहते हैं। वे विमान तो उनके रहने के ठिकाने हैं और ये जो विहार करते हैं उनके वाहनजाति के देव होते हैं, वे विक्रिया से अलग-अलग रूप धारण करते हैं और वाहन बनते हैं, उनको भी विमान कहने में आता है। यहां तक तो हमने बात देखी थी। वातवलयों की भी बात देखी थी।

मध्यलोक में असंख्यात द्वीप समुद्र होते हैं, सबसे बीचवाला है जम्बूद्वीप – फिर एक समुद्र एक द्वीप, एक समुद्र एक द्वीप, दुगुणे-दुगुणे विस्तारवाले होते हैं। अंतिम है स्वयंभूरमण समुद्र, यहां तक तो बात हमने देखी थी। हम कहां रहते हैं इस पूरे झमेले में? हम कहां हैं अभी? *श्रोता: भरतक्षेत्र में।* अभी तो यहां हमारा ठिकाना है, *श्रोता: देवलाली में।* देवलाली में? अच्छा। पूर्वभव में इन सब जगह घूमकर आये हैं, हां अभी याद नहीं है न इसलिये थोड़ा याद कर रहे हैं कहां-कहां हम जाकर आये हैं। तो यहां जम्बूद्वीप है, देखो कहां पर है क्योंकि बहुतसे लोगों को यहां से मरकर विदेहक्षेत्र में जाना है तो थोड़ा रास्ता भी देख लो तो सुलभ हो जायेगा। आपको नहीं जाना है न?

तो यह जम्बूद्वीप का प्रकरण पृष्ठ १३३ से शुरू होता है और उसका चार्ट नंबर है ५। यह जम्बूद्वीप क्या है तो एक लाख योजन विस्तारवाला द्वीप है जो मध्यलोक में सबसे सेंटर में है । सबसे सेंटर में, मध्य में जो द्वीप है, देखो मध्य का द्वीप तो गोलाकार है और उसका व्यास है एक लाख योजन। आगे-आगेवाले द्वीप और समुद्र कैसे हैं? कि जो सेंटर का जो है उसको पूरे घेरे हुये हैं, सराउंडिग हैं उसके, हम कहेंगे। एक समुद्र-एक द्वीप-एक समुद्र-एक द्वीप-एक समुद्र-एक द्वीप, कोई जम्बूद्वीप जैसे अखंड गोलाकार नहीं हैं, ऐसे फैले हुये हैं वलयाकार। केवल जम्बूद्वीप ही है ऐसा कि जो पूरा एक गोल है। ख्याल में आती है बात? यह चार्ट नंबर ५ देखना। जम्बूद्वीप तो पूरा ही ऐसा गोल है और जो हमने उसका पहलेवाला चार्ट देखा था, ४ नंबर का, जम्बूद्वीप तो एक येलो डॉट दिख रहा है, उसके बाहरी ओर लवणसमुद्र है, उसके बाहरी ओर धातकीखण्ड है, उसके बाहरी ओर

कालोदधि समुद्र है इसतरह से एक द्वीप-एक समुद्र-एक द्वीप-एक समुद्र है, पूरे गोल नहीं हैं। ख्याल में आती है बात? वे बाहरवाले द्वीप और समुद्र केवल ऐसे वलयाकृति हैं। तो इस जम्बूद्वीप में क्या है? क्योंकि हमने कल देखा था कि बीच में सुमेरु पर्वत है, उसके तल में लोकाकाश का सेंटर आता है। पर यह सुमेरुपर्वत कहां है, जम्बूद्वीप कहां हैं, उसकी क्या रचना है, कुछ मालूम नहीं। तो थोड़ा हम देख लेते हैं।

तो जम्बूद्वीप की डायमेन्शन कितनी है? वह कितना बड़ा है? एक लाख योजन चौड़ाईवाला यानी व्यासवाला। व्यास, सर्कम्फरन्स नहीं, डायमीटर, उसका डायमीटर एक लाख योजन का है। अब १३३ पेज निकालना, सेकंड पॅरेग्राफ, जम्बूद्वीप एक लाख योजन व्यासवाला गोलाकार है, यह बात हमने अनेक बार देखी है। इसमें छह पर्वत पूर्व से पश्चिम तक आड़े फैले हुये हैं, पूर्व की ओर भी लवणसमुद्र को स्पर्श करते हैं और पश्चिम की ओर भी लवणसमुद्र को स्पर्श करते हैं। इन पर्वतों को कुलाचल पर्वत कहते हैं। अब देखिये आप चार्ट, आपके हाथ में एक बाजू चार्ट रखना सामने। यह ५ नंबर का जो चार्ट है, जो गोल पूरा बताया है वह है जम्बूद्वीप और उसमें पर्वत कहां कहां पर हैं?

तो देखिये सबसे नीचे से ऊपर शुरू करते हैं। नीचे एक पीली आड़ी लाइन दिखायी देगी आपको, वह तो है भरतक्षेत्र और उसके ऊपर एक झिगझॅग लाइन है वह है हिमवान पर्वत। उसके ऊपर फिर एक क्षेत्र है और बाद में फिर पर्वत जैसी रचना दिखायी है, वह है महाहिमवान पर्वत। देखो लेफ्ट साइड में पर्वतों के नाम और उनके सरोवर-ह्रदों के नाम लिखे हैं। राइट साइड में क्षेत्र के नाम हैं और उनमें बहनेवाली नदियों के नाम हैं। तो जब क्षेत्र का नाम देखना है तो राइट साइड में देखेंगे, पर्वत का नाम देखना है तो लेफ्ट साइड में देखेंगे। तो सबसे नीचे वहां भरतक्षेत्र लिखा है, उसके ऊपर हिमवान पर्वत लिखा है, फिर ऊपर उसके राइट साइड में हैमवतक्षेत्र लिखा है। उपर महाहिमवान पर्वत लिखा है, उसके ऊपर हरिक्षेत्र है उसके ऊपर निषध पर्वत है।

मिले ये तीन पर्वत? तो लेफ्ट साइड के केवल पर्वतों के नाम हम पढ़ेंगे तो नीचे हिमवान, फिर महाहिमवान और फिर निषध। ऊपर से भी ऐसे ही नीचे आयेंगे – एकदम ऊपर जो रेड लाइन है वह है ऐरावतक्षेत्र। लेफ्ट साइड में पर्वत का नाम है शिखरी, उसके नीचे और दूसरा पर्वत है रुक्मी और उसके नीचे और एक पर्वत है नील। यानी ऊपर से

देखेंगे तो शिखरी, रुक्मी और नील ये तीन पर्वत हैं और नीचे से हम देखेंगे तो हिमवान, महाहिमवान और निषध ये तीन पर्वत हैं। ये तीन और तीन छह पर्वत कैसे फैले हैं? तो पूर्व से लेकर पश्चिम तक, दोनों ओर कहां तक फैले हैं वे? तो ब्लू बॉर्डर है वह लवणसमुद्र है यानी पूर्व की ओर भी लवणसमुद्र तक फैले हैं और पश्चिम की ओर भी लवणसमुद्र तक फैले हैं। यह बात ख्याल में आयी? तो एक गोलाकार एरिया है और आड़े छह पर्वत हैं। तो उनकी डिव्हिजन्स कितनी होंगी? *श्रोता: सात।* सात होंगी न! छह पर्वतों के द्वारा सात क्षेत्र तैयार हुये। यहां तक बात ख्याल में आयी?

तो नीचे, सबसे नीचे क्षेत्र है भरतक्षेत्र – फिर एक पर्वत, फिर दूसरा क्षेत्र है उसका नाम है हैमवतक्षेत्र – फिर एक पर्वत फिर हरिक्षेत्र – फिर एक पर्वत और फिर ऊपर का जो क्षेत्र है उसमें तो बहुत सारे हैं – भोगभूमि भी है, बीचवाली एरिया में विदेहक्षेत्र भी है। ऊपर की ओर से देखेंगे तो सबसे ऊपर ऐरावतक्षेत्र है – फिर पर्वत है, फिर हैरण्यवतक्षेत्र है – फिर पर्वत है, फिर रम्यकक्षेत्र है – फिर पर्वत है, फिर वह विदेह की एरिया बीच में आती है। इन छह पर्वतों का नाम है कुलाचल पर्वत – छहों का एक नाम क्या है? कुलाचल पर्वत। इसे वर्षधर भी कहेंगे – वर्ष यानी क्षेत्र, इन पर्वतों के द्वारा क्षेत्रों की डिव्हिजन होती है इसलिये इन्हीं पर्वतों को वर्षधर पर्वत भी कहेंगे। छह पर्वतों के द्वारा सात क्षेत्र तैयार हुये, उनके नाम भी हमने देखे। तो इसकी विशेषता क्या है? भरतक्षेत्र को हम एक हिस्सा कहेंगे, एक भाग कहेंगे तो उससे दोगुणा है उससे ऊपर का पर्वत है, हिमवान पर्वत। हिमवान पर्वत को हम दो भाग कहेंगे तो चार भाग किसके होंगे? हैमवतक्षेत्र के, फिर महाहिमवान आठ भागवाला होगा उसके आगेवाला क्षेत्र सोलहगुणा होगा, इसतरह से वह निषध पर्वत बत्तीस भाग तक पहुंचेगा। यह बात ख्याल में आती है? एक-फिर दो-फिर चार-फिर आठ-फिर सोलह और बत्तीस। ऊपर से भी ऐसा ही है, तो इसका माप कैसे निकालना? भरतक्षेत्र एक लाख योजन डायमीटरवाले पूरे जम्बूद्वीप के कितने भागप्रमाण है? अब उसको हम ऐसा व्हर्टिकल डायमीटर कहेंगे। यहां नीचे ऊपर कुछ नहीं है आड़ा है पर हमारे नक़्शे में हम ऊपर नीचे कहेंगे या दक्षिणोत्तर कहेंगे।

तो भरतक्षेत्र कैसा देखना? तो जम्बूद्वीप का दक्षिणोत्तर यानी व्हर्टिकल डायमीटर कहेंगे तो उसके १९० भाग करना। एक लाख को १९० से भाग देना तो जो प्रमाण आता है वह भरतक्षेत्र की ऐसी जो डायमेन्शन – आड़ा ऐसा नहीं लेना व्हर्टिकल जिसको

बाण कहते हैं। ५२६ $\frac{६}{१९}$ योजन है न वह। *श्रोता: १९० कैसे आया?* १९० उसके भाग करना है... *श्रोता: फिगर है उसकी?* हां, फिगर है उसकी – १९० इसलिये है क्योंकि १ + २ + ४ + ८ + १६ + ३२, ऊपर से भी ऐसा ही करो, बीचवाली एरिया दोनों के लिये कॉमन है उसको ॲड करो। *श्रोता: बीचवाली एरिया क्या रेशिओ में होगी?* वह ६४ होगी न? ६४ दोनों के लिये कॉमन या ३२ दो बार कहो। गणित करेंगे इसका? हमने आपको एक फॉर्म्युला बताया था – दो-दोगुणा है ना? एक से दो दोगुणा, फिर दो से चार तो अंतिम फिगर कितनी है ३२ समझो। वह ६४ वाली हम बाद में जोड़ेंगे। पहले बत्तीस तक जोड़ देंगे। दोगुणा-दोगुणा अंतिम फिगर है ३२, हमारा सूत्र क्या था? **अंतधनं गुणगुणियम्** दो का गुणकार है; ३२ को दोगुणा करो, ६४ हुये। पहले हमने १ से शुरू किया था इसलिये मायनस १ करो तो ६३ हुये, डिव्हाइडेड बाय १, ६३ रहे, तो यहां ६३, ऊपर ६३ और बीचके ६४ मिलकर कितने हुये? १९० – बराबर है? हां, कहीं गया नहीं, कोई खोया नहीं न! तो इसतरह से यह डिव्हिजन होती है, बराबर?

अब ये पर्वतों के और क्षेत्रों के हमने नाम देख लिये। अब यहां जो देख लेते हैं। *श्रोता: पूर्व-पश्चिम में यह दिशा...* यह पूर्व-पश्चिम हम नक़्शे को पढ़ने के लिये पूर्व-पश्चिम कहेंगे। देखो कोई भी हम चार्ट या नक्शा पढ़ते हैं राइट साइड को हम पूर्व कहेंगे और लेफ्ट साइड को पश्चिम फिर ऊपर-नीचे को उत्तर-दक्षिण कहेंगे। ऐसे हम ऐरावत को उत्तर और हम भरत को दक्षिण कहते हैं। अब इसकी बात भूल जाओ – हमें जो पृथ्वी की बात मालूम है, हम जिसको पृथ्वी कहते हैं – हम भारत में हैं, अभी आप लोग अमेरिका से आये हैं ना कौन-कौन रजनीभाई आये हैं और हमारी सुशीलाबेन आयी हैं और कौन कौन आये हैं। तो उनके लिये उत्तर और हमारे लिये उत्तर उसमें कोई डिफरन्स है कि नहीं है? उनका नॉर्थ पोल और हमारा नॉर्थ पोल, हमारी सबकी उत्तर दिशा एक ही है पर हमारे हरेक की पूर्व दिशा अलग है। नहीं समझे? जहां से सूर्य उदित होता है वह दिशा पूर्व दिशा है, हमारा सूर्य तो जापान की तरफ से आ जायेगा और हमारे लिये वह आफ्रिका वगैरह पश्चिम की तरफ है, अमेरिका को भी हम पश्चिम की तरफ़ कहेंगे। हां, अगर हम पूर्व की तरफ ज्यादा घूमेंगे तो वह आयेगा परंतु उनके लिये क्या है? उनका पूर्व कौनसा है? इसतरह से, इधरसे अब हम यह सुमेरु पर्वत देखते हैं जम्बूद्वीप के चार्ट में।

सूर्य का भ्रमण कैसे होगा? मेरु को प्रदक्षिणा देते हुये होता है, तो मेरु को प्रदक्षिणा देता है हमारा सूर्य इस बाजूसे आता है तो हमारी पूर्व दिशा इस तरफ हुयी राइटसाइड की तरफ और हमारे भरतक्षेत्र के लिये उत्तर सुमेरु पर्वत हुआ। ऊपर ऐरावत आदि के लिये पूर्व दिशा कौनसी होगी? जो हमारी अभी लेफ्ट साइड में है – उनकी पूर्व उधर होगी और उनका उत्तर सुमेरु पर्वत है। सुमेरु पर्वत सबके लिये उत्तर है यानी सबकी उत्तर दिशा सेम है और हरेक की पूर्व-पश्चिम दिशा रिलेटिव्ह टर्मिनॉलॉजि है।

फिर भी जब हम कोई नक्शा पढ़ते हैं तब राइट साइड को हम पूर्व कहते हैं, लेफ्ट साइड को पश्चिम कहते हैं, नीचे को दक्षिण कहते हैं और ऊपर को हम उत्तर कहते हैं। क्योंकि हम लोकाकाश में भी पूर्व-पश्चिम कैसे कहेंगे? लोकाकाश में तो कोई बाहर से सूर्य नहीं आनेवाला है। उसको भी हम कहते हैं न कि पूर्व-पश्चिम फैला है, उत्तर-दक्षिण इतना सात राजू फैला है तो वहां कैसे दिशा नक्की करेंगे? वह तो कोई नक्शा पढ़ने का उसका यह तरीका होता है। अब यहां पेज नंबर १३३ पर आना।

श्रोता: सूर्य जो डेली आता है वह वही का वही है कि दूसरा सूर्य आता है? दो सूर्य होंगे परंतु उनकी भ्रमण कक्षा तो वही होगी न, चारक्षेत्र तो वही होगा उनका, हां दूसरा आने दो न परंतु वह पूर्व दिशा से ही आयेगा। *श्रोता: एक ही सूर्य है कि दो सूर्य हैं?* दो सूर्य हैं, जम्बूद्वीप के लिये दो हैं। *श्रोता: उत्तर पोल के ऊपर तो एक सूर्य छह महिने तक चमकता रहता है।* वहां तो दिखता रहता है वह और हमें दिखता नहीं है। *श्रोता: ... मॉडर्न...* नहीं, मॉडर्न सायन्स के साथ कम्पेअर करने की जरूरत नहीं है हमें। अभी यह जो है सर्वज्ञप्रणीत उसको पहले जान लेते हैं। मॉडर्न भूगोल तो बहुत जाना हमने, बचपन से स्कूलों में भी सीख लिया।

पेज नंबर १३३ – अभी तो हमने कुलाचल पर्वत और उनके नाम देखे। नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ – एक लाख योजन व्यासवाले जम्बूद्वीप के दक्षिणोत्तर व्यास के – दक्षिणोत्तर यानी हम अपने चार्ट पढ़ने की अपेक्षा दक्षिणोत्तर कहेंगे, हम १९० भाग करेंगे तो उसमें १ भाग प्रमाण क्षेत्र तो भरतक्षेत्र का बाण है, बाण कहा। उसके लिये आगे एक फिगर निकाली है, देखो। जम्बूद्वीप गोलाकार होने से जब हम उसके आड़े भाग करेंगे तो सबसे दक्षिण की ओर भरतक्षेत्र ऐसा धनुषाकार दिखेगा। धनुष की जो प्रत्यंचा होती है, प्रत्यंचा

समझते हैं? वह डोरी जो होती है जिसको बाण के साथ खींचकर बाण छोड़ा जाता है उसको प्रत्यंचा कहते हैं। जिसके मध्य में बाण पकड़कर खींचकर हम छोड़ते हैं उस प्रत्यंचा को यहां हम भरतक्षेत्र की जीवा कहेंगे। जो आड़ी लाइन है वह है भरतक्षेत्र की जीवा। मध्य में यह क्षेत्र अधिक चौड़ा है और गोलाकार होनेसे दोनों ओर चौड़ाई घटती जाती है। जहां चौड़ाई अधिक होगी उस मध्यभाग को भरतक्षेत्र का बाण या विष्कंभ कहते हैं – विष्कंभ यानी उसकी चौड़ाई। ऐसा होने से चौड़ाई सर्वत्र समान नहीं हैं – बीचमें जो है, व्यास पर जहां हमने भाग किये थे उसकी चौड़ाई है वहां गिनेंगे हम, उसको बाण कहते हैं। जो एक लाख योजन के १९० वें भाग प्रमाण है और जब एक लाख को १९० से भाग देंगे हम, तो देखो नीचे १३४ पेज पर देखना जरा – वहां वह गणित करके बताया है। नीचे से पांचवीं लाइन में है न, ५२६ पूर्णांक हो गये और ६ बटे १९ हो जाते हैं। वह कैसे निकले उसका गणित भी ऊपर समझाया है और फिर अभी जो हमने १ + २ + ४ वगैरह बातें देखी थी वे भी ऊपर समझायी हैं।

इसीको एक चार्ट के द्वारा बताया है देखो। १३५ पृष्ठ पर लेफ्ट से राइट तक हम पढ़ेंगे। लेफ्ट में भरतक्षेत्र लिखा है। नीचे-नीचे क्षेत्रों के नाम हैं और ऊपर-ऊपर पर्वतों के नाम हैं, और वह कितने भाग प्रमाण है उसको लिखा है। देखो, भरत जो है वह एक भाग प्रमाण है और हिमवान पर्वत है वह दो भाग प्रमाण है। *श्रोता: ये इधर कोने से?* सेंटर में व्यास के ऊपर। हैमवत है वह चार भाग प्रमाण है, महाहिमवान आठ भाग प्रमाण है, हरि सोलह भाग प्रमाण है, निषध बत्तीस भाग प्रमाण है, विदेह चौंसठ भाग प्रमाण है। यह दोनों जगह कॉमन है। ऐसे हम राइट साइड से अभी देखेंगे। ऐरावत एक भाग प्रमाण है, शिखरी दो भाग प्रमाण है, हैरण्यवत चार भाग प्रमाण है, रुक्मी आठ भाग प्रमाण है, रम्यक सोलह भाग प्रमाण है और नील पर्वत है वह बत्तीस भाग प्रमाण है,। चौंसठ दोनों के लिये बीच में कॉमन है जहां विदेहक्षेत्र पाये जायेंगे। यह चौंसठ भागवाला है वह विदेहक्षेत्र जिसमें पाया जाता है उसमें बहुत सारी रचनायें हैं पर उनको अभी यहां तो विदेह कहेंगे। वहां क्या-क्या हैं उन्हें बाद में देखेंगे।

श्रोता: विदेह का दूसरा नाम... दूसरा नाम नहीं, वहां विदेहक्षेत्र है – परन्तु उस एरिया में-विदेहवाली एरिया में-चौंसठ भागवाली जो एरिया है उसमें सबसे सेंटर में है

सुमेरुपर्वत। निकालो, वह चार्ट निकालो। विदेह को ही महाविदेह कहते हैं। देखो, यह जो हम जम्बूद्वीप की बात देख रहे हैं और ढाई द्वीप में और कौन-कौनसे द्वीप हैं? धातकीखण्ड है। यह जो आपका चार्ट निकालो – चार्ट नंबर ४। जम्बूद्वीप के बाहर लवणसमुद्र और उसके बाहर एक ऐसी व्हाइट एरिया और उसमें कुछ लाइन वगैरह बतायी है न, वह है धातकीखण्ड। धातकीखण्ड में क्या करना है? पूर्व धातकी और पश्चिम धातकी इसतरह से दो विभाजन करने हैं। उसके आगे कालोदधि के बाहर भी जो पुष्करार्थ है न आधा पुष्कर, तो उसमें भी राइट और लेफ्ट – यानी पूर्व और पश्चिम ऐसे दो भाग करना, यानी वह आधा पुष्कर। धातकी में भी पूर्व धातकी और पश्चिम धातकी और पुष्कर में भी अर्ध पुष्कर है न? पूर्व पुष्करार्ध और पश्चिम पुष्करार्ध, ये बातें समझमें आती हैं कि गहरी हो रही हैं बहुत?

देखो जैसे जम्बूद्वीप में सेंटर में मेरुपर्वत है, वैसे पूर्व धातकी में भी सेंटर में उसका एक मेरुपर्वत है, पश्चिम धातकी में भी एक मेरुपर्वत है। पांच मेरु कहते हैं न? पूजा भी बहुत चाव से करते हैं। पूर्व पुष्करार्ध में एक मेरु है, पश्चिम पुष्करार्ध में एक मेरु है। पांच मेरु हो गये। अभी हम ४ नंबर के चार्ट में उनको दिखायेंगे आपको। जहां वह जम्बूद्वीप का पीला डॉट है न, उसके अंदर एक ब्लॅक डॉट भी है और सबसे नीचे लिखा है सुदर्शनमेरु, यह उस मेरु का नाम है, मिला कि नहीं मिला? सुदर्शनमेरु लिखा हुआ मिला और वह कहां का है वह? जम्बूद्वीप के सेंटर में है। अब पूर्व धातकी में उसी आड़ी लाइन में जहां से वे नदियां वगैरह प्रदक्षिणा देती हैं उसके नीचे क्या लिखा है? विजय यानी वह पूर्व धातकी का मेरु है। अब पश्चिम धातकी के मेरु का नाम क्या है? अचलमेरु, आड़ी लाइनपर सेंटर में।

श्रोता: यह विजय कहां है? हां... यह विजय जो है न – अभी आपको कैसे दिखेगा? यह जो ब्राऊन है न उसके सेंटर में – उसके दोनों ओर झिगझॅग तो पर्वत हैं, उसके बीच में जो एरिया है क्षेत्र, उस क्षेत्र में बीच में वह डॉट इतना क्लिअर नहीं है और आगे चलो तो वह क्लिअर होगा। एकदम बाहरी जो पुष्कर का है – पुष्कर में इसी आड़ी लाइन पर यहां एक डॉट है बीच में और ऊपर और नीचे से नदियां आकर उसको प्रदक्षिणा देती हुयी इधर-उधर चली जाती हैं, वह है मेरु, तो बीचवाले को क्या लिखा है? सुदर्शनमेरु, राइट साइड का यानी पूर्व का पहला काउंट करना विजय, फिर पश्चिम धातकी उसका

नाम है अचल, फिर पूर्व पुष्करार्ध में जाना उसका नाम है मंदर और फिर विद्युन्माली। इसी ऑर्डर से हम कहेंगे पहले सेंटर का फिर पूर्व की ओर, फिर पश्चिम की ओर, फिर पूर्व की ओर, फिर पश्चिम की ओर। इसी ऑर्डर से हम पंचमेरु के नाम लेते हैं, पूजा तो करते होंगे न आप? पढ़ते हैं कि नहीं पढ़ते? पंचमेरु की पूजा, हां? ये तो मेरु के नाम हुये। हर क्षेत्र में ऐसे ही छह-छह पर्वत हैं, जम्बूद्वीप में तो ऐसे आड़े हैं, परंतु आगे के क्षेत्रों में सायकल के आरे होते हैं न ऐसे, स्पोक्स जैसे हैं देखो।

जिस सेंटर से जो निकले हैं जो स्पोक्स वे अंदर और बाहर के द्वीप में सेम लाइन में आपको दिखायी देंगे, ऐसे झिगझॅगवाले पर्वत दिखायी दे रहे हैं की नहीं? देखो ये यहां से लेकर यहां तक ऐसा है, ये अंदर से ऐसा, ये सारे पर्वत हैं, झिगझॅगवाले वे सारे पर्वत दिखायी दे रहे हैं। तो जम्बूद्वीप में तो सारे आड़े थे हॉरिझॉन्टल, और ये ऐसे सायकल के स्पोक्स की तरह फैले हुये हैं। तो वहां की एरिया भी यानी क्षेत्र भी अंदर से छोटे और बाहर की ओर चौड़े ऐसे होंगे। ऐसे वहां पर भी भरतक्षेत्र होंगे, ऐसे वहां पर भी ऐरावतक्षेत्र होंगे।

तो देखो, हमारा मेरु संबंधी एक भरतक्षेत्र है, एक ऐरावतक्षेत्र है और फिर वह बीच में मेरु है उसके दोनों बाजू में विदेहक्षेत्र होंगे, पूर्व और पश्चिम विदेह, बराबर? पूर्व धातकी में भी उसका अपना एक मेरु है, उसका अपना एक भरतक्षेत्र है, उसका अपना एक ऐरावतक्षेत्र है, उसके अपने विदेहक्षेत्र हैं। पश्चिम धातकी में भी उसका जो मेरु है उसका भी अपना भरतक्षेत्र है, उसका भी अपना ऐरावत क्षेत्र है, उसके अपने विदेहक्षेत्र हैं। इसतरह क्या होगा? पांच मेरु हैं, पांचों का अपना-अपना भरतक्षेत्र है, पांचों का अपना-अपना ऐरावतक्षेत्र है। कितने भरत हुये? *श्रोता: पांच।* पांच और ऐरावत कितने हुये? *श्रोता: पांच।* पांच। तो पांच भरत और पांच ऐरावत हो गये, यहां तक बात ख्याल में आयी? हां अब उसके आगे विदेह, विदेह कितने होते हैं? उसको तो हम ऐसे पांच कहेंगे। जरा जम्बूद्वीप का नक्शा निकालना, ५ नंबर का।

देखो, सबसे बीच में सुमेरु लिखा है, यह मेरु पर्वत का ऐसा कट पोर्शन है, हॉरिझॉन्टल सेक्शन, गोल दिखाया है ना? मेरुपर्वत ऐसे तो लाख योजन ऊंचा है जैसे यह पेन्सिल बहुत उंची है परन्तु हमें उसका बेस कैसा दिखेगा? ऐसा दिखेगा न गोल? ऐसे ही मेरुपर्वत जमीन के लेव्हल पर ऐसा गोल दिखेगा, ऐसा रखेंगे तो लाख योजन तक चला जायेगा। तो यह

सुमेरुपर्वत दिखाया है उसके ऊपर और नीचे उत्तरकुरु और देवकुरु लिखा है। ये उत्तम भोगभूमि की एरिया हैं और उसके बाजू में जो पर्वत जैसा दिखाया है हाथी के दांत जैसा उसका नाम है गजदंत पर्वत।

एकदम राइट साइड में जहां १, २, ३, ४ सब ऊपर आठ अंक हैं, नाम नहीं, मिले के नहीं? और ९ नंबर कहां है? *श्रोता: ८ के नीचे।* ८ के नीचे है यानी वह क्लॉकवाइज आपको बताना है – १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ फिर ९, १०, ११, १२ इसतरह से १६ तक फिर १७, १८ ऐसा २४ तक और फिर ऊपर ऐसा २५ से ३२ तक आ जायेंगे, यह बात ख्याल में आयी? तो एक मेरु संबंधी ऐसे बत्तीस विदेह हैं। हम जब पूर्वविदेह कहेंगे तब पूर्व की ओर हम देखेंगे परंतु पूर्व का विदेह जो है, पूरा विदेहक्षेत्र, नदी के कारण पूर्व में दक्षिण और उत्तर ऐसे दो भेद हुये। उत्तर की तरफ अनेक नदियां और पर्वत हैं, उनके कारण ये १, २, ३, ४... आठ भेद हुये। ये आठ विदेह, आठ अलग-अलग विदेह हैं और हर विदेह में एक-एक आर्यखण्ड और पांच पांच म्लेच्छखण्ड हैं। जो विदेहक्षेत्र में जाना चाहते हैं वे बराबर ख्याल में रखना, म्लेच्छ में नहीं जाना।

तो ऐसे आठ-आठ-आठ और आठ, एक मेरु संबंधी कितने हो गये? बत्तीस हो गये। ऐसा कहेंगे कि पांच मेरु के पांच विदेह हैं परंतु एक-एक मेरु संबंधी बत्तीस-बत्तीस विदेह हैं। तो हमारे पास पांच मेरु हैं तो टोटल कितने हो गये विदेह? *श्रोता: १६०।* १६० बराबर है न? और भरत कितने देखे थे? *श्रोता: पांच।* पांच और ऐरावत? *श्रोता: पांच।* पांच। कितने हुये टोटल? *श्रोता: १७०।* १७०, तो १७० तीर्थंकर विधान तो बहुत गा-गाकर करते हैं, पर कहां अर्घ्य चढ़ाते हैं क्या पता? ये कैसे गिनने? तो यहां पर विदेहक्षेत्र में अभी वर्तमान में बीस तीर्थंकर तो कॉन्स्टन्ट होते ही हैं, बीस से कम तीर्थंकर कभी नहीं होंगे, हमेशा बीस तीर्थंकर तो विराजमान रहेंगे ही। तो इन आठ में यानी १ से ८ में एक है, नीचे के आठ में यानी ९ से १६ तक उसमें एक है। यानी एक मेरु संबंधी चार तीर्थंकर हैं वे कौन-कौनसे हैं? सीमंधर, कहां पर हैं? पूर्व दिशा के उत्तर में सीमंधर हैं, पूर्व दिशा के दक्षिण में युगमंधर, बराबर है न! तो कुंदकुंदाचार्य को युगमंधर नजदीक थे न? तो सीमंधर, युगमंधर, बाहु, सुबाहु इसतरह से वे इस ऑर्डर में होंगे।

श्रोता: अजितनाथ भगवान के काल में १७० तीर्थंकर विराजमान थे...

तो ऐसा भी कभी हो सकता है कि सभी जगह एक-एक तीर्थंकर हो – ये बत्तीस के बत्तीस जगह यानी सभी मेरु के सभी बत्तीस विदेहक्षेत्रों में। उस समय ऐरावतक्षेत्र में भी कोई न कोई तीर्थंकर और हमारे यहां भरतक्षेत्र में भी कोई तीर्थंकर होंगे। हमारे यहां जो चौबीस तीर्थंकर होते हैं वे एक के बाद एक होते हैं और वहां विदेहक्षेत्र में ॲट अ टाइम होते हैं। ये हमने जो पांच मेरु संबंधी १६० विदेहक्षेत्र देखें, उन हरेक में कभी एक-एक तीर्थंकर हो यह बात हो सकती है और जब वहां थे तब हमारे यहां भरत में भी कोई थे और ऐरावत में भी थे। तो ऐसा कब बनाव बना था? तो जब यहां, हमारे यहां दूसरे अजितनाथ तीर्थंकर विराजमान थे तब सर्वत्र एक-एक तीर्थंकर थे – तो उस समय १७० तीर्थंकर यहां विद्यमान थे। *श्रोता: तो उस समय मोक्ष जानेवालों की संख्या बढ़ गयी होगी न?*

क्यों बढ़ती होगी तीर्थंकर ज्यादा है इसलिये? ६०८ से तो ज्यादा जायेंगे नहीं, हां उस समय तीर्थंकरों की आयु लंबी थी।

श्रोता: ये आठ में से कौनसे में होंगे सीमंधर भगवान? आठवें में, आठवें में। अभी वर्तमान में तो आठवें में हैं। *श्रोता: अभी भविष्यमें दूसरे सीमंधर होंगे?*

अभी तो जम्बूद्वीप के विदेहक्षेत्र में चार हैं न। *श्रोता: जब भविष्य में सीमंधर होंगे वे आठ में ही होंगे?* जहां सीमंधर हैं वहां सीमंधर ही रहेंगे हमेशा। *श्रोता: अभी जो सीमंधर भगवान हैं, उनका तो मोक्ष हो रहा है... तो दूसरे सीमंधर वहां कैसे रहेंगे?* दूसरे सीमंधर आठ में ही होंगे परन्तु आठ में से कहां पर होंगे मुझे पक्का पता नहीं है परन्तु वहां होते हैं। ॲट अ टाइम तो एक ही क्षेत्र में दो तीर्थंकर नहीं होंगे।

श्रोता: अभी धातकीखण्ड के भरतक्षेत्र के अंदर भी पंचमकाल ही चलता होगा? ऐसा कोई उल्लेख आया है?

सर्वत्र पंचमकाल ही रहेगा न – सर्वत्र पंचमकाल ॲट अ टाइम ही रहेगा। अभी अपना समय पूरा हुआ – बाकी की चर्चा और विदेह की बात हम थोड़ी देर के बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२४. विदेहक्षेत्र – रचना

षट्खण्डागम के आधार से यहां हमारी कालअनुयोगद्वार की चर्चा चल रही है, उसमें पंच परावर्तन का स्वरूप हम देख रहे हैं। यह जीव इस संसार में अनादि से जन्म-मरण करते आया है, परिभ्रमण कर रहा है। अनादि से कहने से उस काल की जो विशालता है, मॅग्निट्यूड है, वह हमारे ख्याल में नहीं आती है। यह काल कितना बड़ा है वह हम समझ नहीं सकते। उसको गिनने का एक तरीका है और वह हम द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन और भावपरावर्तन के रूप में यहां देखने जा रहे हैं और देख रहे हैं। क्षेत्रपरावर्तन का अपना विषय चल रहा है। द्रव्यपरावर्तन हमने विस्तार से देखा, उसमें नोकर्मद्रव्यपरावर्तन और कर्मद्रव्यपरावर्तन की बात देखी थी। क्षेत्रपरावर्तन में स्वक्षेत्रपरावर्तन देखा; उसमें जघन्य अवगाहना से लेकर अनुक्रम से एक-एक प्रदेश से बढ़ती हुयी उत्कृष्ट अवगाहना तक, जब-जब जीव जन्म धारण करेगा, तब-तब उसको गिनना है; बीच में अनुक्रम रहित यानी क्रम रहित अन्य अवगाहना के साथ उत्पन्न होगा उसको नहीं गिनना है, उसके काल को गिनना है। तो यह अनंतकाल होता है, जो द्रव्यपरावर्तन से भी अनंतगुणावाला ऐसा एक क्षेत्रपरावर्तन का काल है।

उसीको परक्षेत्रपरावर्तन की अपेक्षा जब हम देखते हैं, तो सबसे पहले जघन्य अवगाहना के साथ, सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त की पर्याय में, जीव लोकाकाश के मध्य में उत्पन्न हुआ। उसके शरीर के मध्यप्रदेश और लोकाकाश के मध्यप्रदेश सुपरइंपोज़ होते हुये, कोइन्साइड होते हुये उसने जन्म धारण किया और उसी क्षेत्र में उतनी ही बार जन्म लिया जितने असंख्यात प्रदेश उसने रोके हुये थे। उसके बाद उसीके बाजूवाले – ॲड्जेसन्ट एक-एक प्रदेश को अपनी अवगाहना में लेते हुये उसने जन्म लिया। बाद में जब-जब उसने जन्म धारण किया तब उन लोकाकाश के मध्यप्रदेशों की वहां कोई आवश्यकता नहीं है केवल पूर्व-पूर्व प्रदेशों के बाजूवाले एक प्रदेश को अपनी अवगाहना में लेकर, वहां अपना जन्मक्षेत्र बनाकर किसी भी अवगाहना के साथ जन्म लेना चाहिये। वह पहली कंडिशन अब नहीं रही क्योंकि अन्यत्र जब जन्म धारण करेगा तब तो लोकाकाश के मध्य में कैसे उसके प्रदेश पहुंचेंगे? यह तो स्टार्टिंग पॉइंट में ही केवल उन आठ प्रदेशों की बात उठायी थी। बाद में जहां कहीं भी जन्म ले रहा है, वह बिलकुल अनुक्रम से उसके बाजूवाला प्रदेश होना

चाहिये। पहले उसने जहां जन्म धारण किया था उसके आगे-आगेवाले एक-एक प्रदेश को कव्हर करते हुये, पूरे लोकाकाश के हर एक प्रदेश पर अनुक्रम से जब जन्म लेगा, तब उसको गिनना। यह जरूरी नहीं कि क्रम से वहीं पर जन्म लेगा। उस एक प्रदेश को छोड़कर आगे के प्रदेश में जन्म ले सकता है। कहीं पर भी जन्म ले सकता है, परंतु उसका समय तो गिनना, टाइम तो गिनना, उसको क्रम में नहीं लेना। इसतरह से जब पूरे लोक के प्रदेश पूर्ण हो जायेंगे और फिर वह जाकर सेंटर में उत्पन्न होगा, तब उसका एक परक्षेत्रपरावर्तन पूरा होगा। इसके लिये लोकाकाश में कहां क्या है, उसमें कहां कौनसे क्षेत्र हैं, कहां कौन-कौनसी रचनायें हैं उसकी बात हम यहां देख रहे थे।

प्रश्न: दक्षिण अमेरिका, आफ्रिका, ऑस्ट्रेलिया म्लेच्छखण्ड में आते हैं क्या? ये आर्यखण्ड में आते हैं। *श्रोता: यह मॅप बताया है, मॅप के अंदर तो अपना भरतक्षेत्र और विदेहक्षेत्र एक लाइन में बताया है। वर्तमान में मॅप जो दिखाया न अपना, उसमें भरतक्षेत्र, उसके आगे सब हैमवतक्षेत्र, महाविदेहक्षेत्र, ऐरावत तक तो पूरा एक लाइन में बता दिया। ॲक्चुअलि गूगल के हिसाब से अभी देखा जाये तो पृथ्वी अलग ही चीज है तो मान लीजिये अपना महाविदेहक्षेत्र में सीमंधरस्वामी को ऊपर ही नमस्कार करते हैं, तो ऐसा कैसा है?* देखो, विदेहक्षेत्र अपने उत्तर की तरफ है क्योंकि मेरु पर्वत कहां है? हमारे उत्तर की तरफ है; बराबर है? और यह विदेहक्षेत्र उत्तर-पूर्व यानी उत्तर और पूर्व की तरफ का है। उत्तर की तरफ तो है ही है, परंतु उसमें भी पूर्व की तरफ है इसलिये हम उसे पूर्व विदेह कह रहे हैं। हमारी अपेक्षा हम इसको पूर्व कह रहे हैं। तो आपका प्रश्न क्या है? यह तो चार्ट है न? यह तो प्लेन सरफेस पर बताया है। प्रश्न आपका मुझे भी नहीं ख्याल में आया है। *श्रोता: चार्ट के हिसाब से देखा जाये तो पहले भरतक्षेत्र, फिर पहाड़ उसके बाद में वापस दूसरा क्षेत्र फिर पहाड़?* ऐसा ही है। *श्रोता: एक क्षेत्र, फिर पहाड़, वापस दूसरा क्षेत्र, फिर समुद्र, फिर पहाड़?* समुद्र नहीं हैं। क्षेत्र और पर्वत, क्षेत्र और पर्वत ही हैं। *श्रोता: कंटिन्युइटि बतायी है ऐसा तो है। अपना वर्तमान जो है गूगल के हिसाब से किधर भी कुछ है नहीं ऐसा, इसलिये कुछ समझ में नहीं आ रहा है।* हमने आपको पहले ही दिन बताया था। *अन्य श्रोता: वे नहीं थे।* कि हमारे वर्तमान के सायंटिस्टों ने जो बताया है, उसके साथ इसको बिलकुल कम्पेअर नहीं करना। जो भगवान ने बताया है, उसीको यहां सुनना है क्योंकि सर्वज्ञ ने जो बातें बतायी हैं उनको हमें अभी जो मालूम है उसके साथ बिलकुल कम्पेअर

नहीं करना है। ऐसी ही बात हुयी थी जब हमारा भूगोल का शिबिर हुआ था। अभी जाने दो, अभी उस पर हम टाइमपास नहीं करेंगे। *श्रोता: क्या हुआ था?* वहां पर भी ऐसा ही हुआ था। कोई भाई तीसरे दिन आये और प्रवचन के बीच में ही बोले कि अभी के अभी पहले यह समझाओ कि हमारे सायंटिस्ट ने ऐसा बताया है और आप ऐसा कह रही हैं और फिर इसे जानने की आवश्यकता क्या है? यह भूगोल जानकर हमारा कल्याण कैसे हो सकता है? उसको तो पं.टोडरमलजी ने त्रिलोकसार के पहले ही, शुरुआत में ही बताया है। निकालो जैन भूगोल पेज नंबर २, यह बीच में जो श्लोक लिखा है।

नम: श्रीवर्धमानाय निर्धूतकलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते।।

किसने लिखा? कहां पर लिखा? *श्रोता: समन्तभद्र आचार्य ने।* हां, समन्तभद्र आचार्य ने। *श्रोता: रत्नकरण्ड श्रावकाचार में।* रत्नकरण्ड श्रावकाचार में लिखा है। तो **जिनके केवलज्ञान में अलोक सहित तीन लोक झलकते हैं, सालोकानां त्रिलोकानां** अलोक सहित तीन लोक। अर्थात् **सर्वज्ञ भगवान इन तीन लोकों को तथा उनसे अनंतगुणा ऐसे अलोकाकाश को प्रत्यक्ष स्पष्ट जानते हैं, उन्होंने जो-जो जाना है, वह उनकी वाणी में - दिव्यध्वनि में आया है। उनकी वाणी के अनुसार, गणधरों ने बारह अंग और चौदह प्रकीर्णकों की रचना की है। सत्यमहाव्रतधारी आचार्यों की परंपरा से ये बातें चली आयी हैं और कालांतर से ये ग्रंथ लिपिबद्ध हुये हैं। इन्हीं जिनागम के आधार से अब हम देखेंगे कि ये तीन लोक क्या है? कहां हैं? उनमें कौन-कौनसे जीव कहां रहते हैं? हम कहां रह रहे हैं? सिद्ध भगवान कहां विराजमान हैं? अरिहंत कहां हैं? और हम अनादि से कहां-कहां जन्ममरण करते आये हैं? और कहां-कहां घूमकर आये हैं?** अब उस पेज की सबसे लास्ट लाइन। **हम स्कूलों में जो भूगोल सीखे हैं, लौकिक में जो वैज्ञानिकों ने बताया है, उसके साथ इसकी तुलना करने की थोड़ी भी कोशिश मत करना, क्योंकि हम तो अल्पज्ञानी हैं, क्षयोपशमज्ञानी हैं। वैज्ञानिकों ने थोड़ी बहुत बातें ढूंढ़ निकाली हैं, उन्हींको सही मानकर, स्टँडर्ड मानकर, हम सर्वज्ञ की कही हुयी बातों का तथा उनकी सत्यता-असत्यता का निर्णय करने जाते हैं।**

क्या आपको पता है? कि वैज्ञानिक-सायंटिस्ट किसे कहना? मैंने बहुत बार आपको बताया है कि **मैं कहती हूं कि वैज्ञानिक उन्हींको कहते हैं जिनकी खोज कभी पूरी नहीं होती, वे तो हमेशा कुछ न कुछ नया खोजते रहते हैं। कुछ नया बनाते नहीं हैं।** है न? **अन्य लोगों से थोड़ा कुछ अधिक जानते हैं परंतु सब कुछ नहीं जानते, जो कुछ जानते हैं उसमें भी बहुत पराधीनता है** और **सर्वज्ञ तो उन्हें कहते हैं** कि तीन लोक, पूरे लोक-अलोक सबको वे जानते हैं, प्रत्यक्ष जानते हैं। जानने से कुछ परे नहीं रह गया इसलिये हम यहां वर्तमान में... *श्रोता: इन्द्रियज्ञान आधारित हैं वर्तमान में?* हां, इन्द्रियज्ञान आधारित है। कितनी ही बातें जो हमें जैसी दिखायी दे रही हैं उनमें दृष्टिभ्रम भी कितने ही होते हैं। क्योंकि बहुत सारी ऐसी बातें है कि हमें दिखायी कुछ और देती हैं और होती हैं कुछ और। रेल की पटरियां या अन्य पॅरलल लाइन्स आपको मिलती हुयी क्यों दिखायी देती हैं? अमेरिका में हम पिट्सबर्ग शहर में गये थे। वहां हमें एक पहाड़ के ऊपर ले गये। वहां रेल की पटरियां ऊपर से सीधी नीचे तक हैं, उसके ऊपर ट्रेन का एक डिब्बा ऊपर से नीचे जाता है, नीचे से ऊपर आता है। ऊपर से देखने के लिये तीन बड़ी-बड़ी खिड़कियां हैं। बीचवाली खिड़की में से देखने पर पटरी और पटरी पर ट्रेन सीधी दिखती है। परंतु राइट या लेफ्ट खिड़की से देखेंगे तो पटरी सीधी दिखती है और ट्रेन आड़ी दिखती है, पटरी पर आड़ी है ऐसा लगता है। यह दृष्टिभ्रम है, ऐसा होता है न! यहां पर भी उसके लिये कुछ तो सोल्यूशन है।

यह जो भरतक्षेत्र है, उसमें छह खण्ड होते हैं, एक आर्यखण्ड और पांच म्लेच्छखण्ड। पहले काल से लेकर छठे काल तक जो कालों का परिवर्तन है, वह आर्यखण्ड में होता है और आर्यखण्ड ऐसा उभर-उभरकर ऊपर आता है, जो गोलाकार हो जाता है और उसके कारण वहां बहुत सारी भौगोलिक परिस्थितियां बदलती रहती हैं। हमें उसका संपूर्ण ज्ञान नहीं है और हम पहले में पहले अड़कर बैठते हैं कि हमें तो इतना दिखायी देता है; आप दिखाओ तो मानेंगे नहीं तो नहीं मानेंगे। जिसने सर्वज्ञ को माना है, उसीकी इस पर श्रद्धा होगी। जिसको सर्वज्ञ पर और उनकी वाणी पर श्रद्धा नहीं है, उसके लिये तो मार्ग अभी बहुत दूर है; अभी लंबा प्रोसेस बाकी है क्योंकि अभी उसकी सर्वज्ञ के स्वरूप ऊपर श्रद्धा नहीं है। क्या केवल समयसार पढ़कर उसकी श्रद्धा हुयी है? अन्य शास्त्र सच लगते हैं और जैन भूगोल झूठा? अगर उसे इस सर्वज्ञ की वाणी में कोई संदेह लगता है तो उसे अभी

सोचने की जरूरत है क्योंकि अभी उसका सर्वज्ञ के बारे में निर्णय नहीं हुआ है। जब तक सर्वज्ञ का निर्णय नहीं होता है, तब तक सम्यग्दर्शन होने की कोई गुंजाइश ही नहीं है। तो पहले में पहले हमें सर्वज्ञ का निर्णय होना ही चाहिये, तब जाकर हमें सर्वज्ञ की बात पर भरोसा हो सकता है। लोग कहते हैं ये बातें हमें नहीं दिखायी देती। हमें नहीं दिखायी देती, तो क्या हुआ? स्कूल में थे तब वह मेंढ़क की स्टोरी हमने पढ़ी थी। कुएं का एक मेंढ़क कूदकर बाहर आया और वह जाते-जाते बम्बई में पहुंचा। *श्रोता: अच्छा बम्बई लेकर गये, मद्रास या बंगलोर में नहीं?* बंगलोर में तो समुद्र है नहीं न! तो उसने समुद्र देखा बहुत बड़ा। तो फिर वापस आया और कुएं के और सब दूसरे मेंढ़कों को बताने लगा, कि बाहर बहुत बड़ा पानी, बहुत बड़ा पानी है। अरे ऐसे कैसे हो सकता है? उसने कहा, हो सकता है क्या? मैंने खुद ने देखा है। तो उस पर किसीने श्रद्धान नहीं किया। ऐसे ही... *श्रोता: सही बात है।* देखो, यहां लिखा है, ३ नंबर के पेज पर, सेकंड पॅरेग्राफ में, **सर्वज्ञ तो उन्हें कहते हैं जो सब कुछ अर्थात् तीन लोक और अलोक के सभी द्रव्यों को, तीन काल की उन सभी की अवस्थाओं को, अपने ज्ञान में प्रत्यक्ष-स्पष्ट, एकसाथ, एक समय में जानते हैं। विश्व में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो उनके ज्ञान से परे हो; इसलिये हमें सर्वज्ञ के कथन के अनुसार तीन लोक का स्वरूप समझना है। यह परमसत्य है, इसको हमारे लौकिक ज्ञान के आधार से सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है।** *श्रोता: ओहो!*

सर्वज्ञ का स्वरूप एवं सर्वज्ञ की सिद्धि यह हमारा वर्तमान का विषय नहीं है, उसकी चर्चा मैंने "कारण कार्य रहस्य" पुस्तक में विस्तार से की है। सर्वज्ञ भगवान की मात्र पूजा करना, अष्ट द्रव्य चढ़ाना, उनकी भक्ति करना, उनकी सच्ची श्रद्धा नहीं कहलाती, मात्र लिखा है न? नहीं तो आप कहेंगे कि पूजा करना वह सच्ची श्रद्धा नहीं है, मात्र शब्द को खा डालो और बाकी को पढ़ो ऐसा मत करो। **परंतु उनकी वाणी की यानी उनके वचन की श्रद्धा करना,** उनका **विश्वास करना, उनकी सही श्रद्धा है।**

यह पं.टोडरमलजीसाहब ने भी यहां आगे बहुत बताया है। देखो जैन भूगोल पुस्तक में पेज नंबर ४, आप कहेंगे विषयांतर बहुत हो रहा है। क्या करें? इसकी प्रयोजनता ही हमें ख्याल में नहीं आती, यह हमें प्रयोजनभूत है ऐसा लगता नहीं है न! इसलिये यह बताने की आवश्यकता पड़ी। देखो ४ नंबर पृष्ठ पर, **पं.टोडरमलजी ने त्रिलोकसार भाषाटीका**

की भूमिका में लिखा है मिला न? हां, ऊपर भी बहुत सारी बातें इसी संबंध में लिखी हैं। मैं कुछ पॉइंट्स बता रही हूं कि **कोई पूछता है कि भूगोल के ज्ञान से हमारा कल्याण कैसे होगा? इसमें निश्चयधर्म की या व्यवहारधर्म की तो कोई बात ही नहीं आयी है और कल्याण तो धर्म का साधन करने से होता है।** कब लिखा है? *श्रोता: ढाई सौ साल पहले।* हां-हां-हां, **इस ग्रंथ में तो क्षेत्रादि का प्रमाण, स्थानों के आकार, नारकादि जीवों की आयु, शरीर इत्यादि का निरूपण है, तो उससे धर्मसाधना कैसे होगी?** यह प्रश्न हमारा-आपका सबका है न? **उत्तर-मोक्ष के कारण सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र धर्म हैं। वहां सम्यक्त्व प्रथम धर्म है। सम्यक्त्व की प्राप्ति संशय दूर होने पर होती है। लोक के बारे में अन्यमतियों की अनेक भ्रामक कल्पनायें हैं। जिनमत में कथित विश्व का सही स्वरूप जानने से आस्रव-बंध के फल नरक स्वर्गादि कहे, उनके विशेषों का जानना होता है।** विशेषों का यानी डिटेल्स, विस्तार से जानना होता है। **आस्रव-बंध के अभाव से संवर-निर्जरा होती है उसका फल मोक्ष है। उन सिद्धों के स्थानादि विशेष जानेंगे तो तत्त्वश्रद्धान में संशय नहीं रहेगा, श्रद्धान दृढ़ होगा।**

अभी बहुत सारी विस्तार से बातें हैं, आप पढ़ लेना उनको। फिर आगे ५ नंबर पेज पर, सेकंड पॅरेग्राफ, **यहां कोई पूछेगा कि इतने विकल्प होनेपर वीतरागता कैसे रहेगी?** हमें चिंता विकल्पों की हो रही है। *श्रोता: मुमुक्षुओं का स्टँडर्ड प्रश्न है यह।* स्टँडर्ड है यह। उसका **उत्तर** सुनो, **जड़ होनेपर विकल्प दूर होंगे**। *श्रोता: समझा नहीं कुछ।* नहीं समझा? ये विकल्प यानी राग सहित जो विचार चलते हैं; वह राग जो है; उससे भेदज्ञान करने की बात है। देखो, राग का भी यहां डायरेक्ट निषेध नहीं किया। जैसे शरीर से हम भिन्न हैं, वैसे ही अपने में उठनेवाले राग से भी हम भिन्न हैं। हम तो राग के कर्ता-कंट्रोलर बनकर यहां बैठे हैं और सम्यग्दर्शन चाहते हैं। राग का भी ज्ञान होगा; पर्याय में जो राग-द्वेष उठ रहे हैं, उसको हम राग कहेंगे, उसका ज्ञान भी होगा; परंतु वह अपना कायमी स्वरूप नहीं है, उससे भी भेदज्ञान करने की जरूरत है। यह तो रोज समयसार आदि परमागमों में सभी में हमने यह बात बारंबार पढ़ी है, सुनी है। हम सब इस चर्चा से तो बिलकुल परिचित हैं, फिर भी हमने यह कुछ अलग विषय इसलिये ढूंढ़ा कि जो हम रोज के स्वाध्याय में जो पढ़ते हैं, उसमें बहुत दृढ़ता मिल जाती है इससे। *श्रोता: यह कथन आपका है या पं.टोडरमलजी का?* हां, पं.टोडरमलजी का है।

श्रोता: निर्विचार होने का नाम निर्विकल्प नहीं है। हां, निर्विचार होने का नाम निर्विकल्प नहीं है, जो मोक्षमार्गप्रकाशक में लिखा है, मेरे ख्याल से २१० पेज पर। यहां कोई पूछेगा कि यह सब पं.टोडरमलजी की बात है...। देखो, जैन भूगोल पेज नंबर ४ पर नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ – **पं.टोडरमलजी ने त्रिलोकसार की भाषा टीका में लिखा है 'कोई पूछता है यहां से लेकर ५ वें पेज पर तीसरे पॅरेग्राफ तक अभ्यास में तत्पर रहना योग्य है'** यह सब पं.टोडरमलजी के मूल ग्रंथ में से लिखा हुआ है। उन्होंने ढूंढ़ारी में लिखा था मैंने इसका हिंदी में अनुवाद कर दिया है। **यहां कोई पूछेगा कि इतने विकल्प होने पर वीतरागता कैसे रहेगी? उसका उत्तर–जड़ होने पर विकल्प दूर होंगे। ज्ञान का स्वरूप तो सविकल्प ही है।** तो मेरा प्रश्न है कि केवलज्ञान सविकल्प है कि निर्विकल्प है? *श्रोता: सविकल्प है।* सविकल्प है और आत्मज्ञान होता है वह? *श्रोता: आत्मा की अनुभूति के समय निर्विकल्प है।* ज्ञान इटसेल्फ सविकल्प है क्योंकि विकल्प शब्द के बहुत अर्थ होते हैं; विकल्प यानी भेद। केवलज्ञान किस-किसको जानता है? सभी द्रव्यों को; अनंत द्रव्यों को, उनके अनंतानंत गुणों को, उनकी अनंतानंत पर्यायों को, सबको जानता है। तो सबको मिलाकर 'एक' है ऐसा जानते हैं या सबको भिन्न-भिन्न जानते हैं? *श्रोता: भिन्न-भिन्न।* तो भिन्न-भिन्न जानता है, उसको कहेंगे सविकल्प जानता है; 'साकार' उसका नाम है; ज्ञान को 'साकार' भी कहेंगे और ज्ञान को 'सविकल्प' भी कहेंगे। यह ज्ञान का लक्षण है। क्योंकि सभी वस्तुओं को भिन्न-भिन्न पहचानता है न? इसके लिये उसको कहेंगे सविकल्प, सविकल्प का दूसरा अर्थ होता है रागसहित, परंतु वह बात यहां नहीं है।

तो यहां क्या लिखते हैं? **ज्ञान का स्वरूप तो सविकल्प ही है। किसी ज्ञेय को जानेगा ही।** यानी किसी ज्ञेय को नहीं जानेगा, ऐसा कब होगा? तब जाकर हमको आत्मानुभूति होगी न? हमने बताया न? आपको जाकर एक मिरर लाना है, खरीदना है, जिसमें कोई भी रिफ्लेक्शन न हो, तो क्या उसको आप मिरर कहेंगे? *श्रोता: नहीं। नहीं कहेंगे।* तो हमारा ज्ञान सब ज्ञेयों से रहित हो जाये, तब हम निर्विकल्प हो जायें, ऐसी जो मान्यता कहीं अभिप्राय में हो, तो उसके लिये कहते हैं, **किसी ज्ञेय को जानेगा ही, इसलिये ज्ञेय जाननेरूप विकल्पों से वीतरागता का अभाव नहीं होता, जिससे राग-द्वेष उत्पन्न होते हैं, ऐसे विकल्पों से वीतरागता का अभाव होता है।** श्रेणी में भी एक पदार्थ से दूसरे पदार्थों को जानना होता है। पृथक्त्ववितर्कवीचार, वीचार यानी संक्रमण,

पलटना। वहां योगों का भी पलटना होता है और जो ज्ञेय पदार्थ हैं, उनका भी पलटना होता है। *श्रोता: ज्ञेय का ज्ञान होता है?* हां, बिलकुल होता है; भले एक ज्ञेय को अंतर्मुहूर्त तक जानेगा, फिर वह ज्ञेय पलटेगा, फिर वह अंतर्मुहूर्त के बाद फिर पलटेगा, ऐसा होता रहता है। तभी तो उसको कहेंगे पृथक्त्ववितर्कवीचार। तो केवल वह इसको या अन्य किसीको जानता है, इसलिये वह राग-द्वेष सहित जान रहा है, ऐसा उसका अर्थ नहीं है।

इस शास्त्र के अभ्यास को कार्यकारी जानकर इसे पढ़ना, वाचना, सीखना, सुनना आदिरूप अभ्यास में तत्पर रहना योग्य है। हमने करणानुयोग संबंधी कथन में सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की पीठिका में भी यही देखा था और यह है त्रिलोकसार की भूमिका। **पं.टोडरमलजी आगे लिखते हैं, अब इस शास्त्र के वक्ता और श्रोता कैसे होने चाहिये? वह कहते हैं।** यह बहुत महत्व की बात है। **प्रथम तो जिनवचन के श्रद्धानी होने चाहिये। यदि श्रद्धानी न हो तो प्रत्यक्ष और अनुमान से अगोचर,** यानी जो प्रत्यक्ष नहीं दिख रहे; हमें स्वर्ग, नरक, पाताल वगैरह कुछ नहीं दिख रहे; न हमें जम्बूद्वीप पूरा दिख रहा है; न ही हमें कोई मेरु पर्वत दिख रहा है; न ही हमें कोई विदेहक्षेत्र दिख रहे हैं। **तो प्रत्यक्ष और अनुमान से अगोचर** यानी प्रत्यक्ष के द्वारा जो जानने में नहीं आ रहे हैं और अनुमान से भी जो हम अभी जान नहीं सकते हैं **ऐसे त्रिलोक के स्वरूप को वे कैसे सत्य जानेंगे?**

एक बात, **उनके धर्मबुद्धि होनी चाहिये। धर्मबुद्धि न हो तो इसमें अन्य शारीरिक प्रयोजन तो कुछ है नहीं, तो इसमें क्यों लगेंगे।** जैसे अन्यत्र हम क्यों जाते हैं? शारीरिक प्रयोजन के लिये; तो यह चलता है न? कहीं विपश्यना आदि ध्यान चलता है, कहीं अन्य कुछ चलता है, क्यों जाते हैं? शारीरिक प्रयोजन के लिये, शांति लगती है न? १० दिन मौन रखना है, कुछ बोलना नहीं है और जो कुछ वहां की बातें होती हैं। आत्मा का अनुभव तो होनेवाला नहीं है उससे; शारीरिक प्रयोजन के लिये जाते हैं। हां, ब्लड प्रेशर अच्छा रहता है, मन की शांति होती है क्योंकि वहां तो मोबाइल अलाउड नहीं है। किसीसे कुछ बातचीत करनी नहीं है, शांति तो रहेगी कि नहीं रहेगी? तो देखो, यह जिनवाणी या जिनवचन का श्रद्धानी नहीं होगा, सर्वज्ञ की श्रद्धा नहीं होगी, हम तो किसके श्रद्धानी हैं? हम तो वैज्ञानिकों के श्रद्धानी हैं, हम जिनवचन के कहां श्रद्धानी हैं? हमारी सबसे पहली श्रद्धा, जो वैज्ञानिकों ने हमें बताया उस पर है। हम उसका निषेध नहीं कर रहे हैं; भले उन्होंने कुछ

चीजें ढूंढ़ी हैं, हमें उनसे कुछ राग-द्वेष तो है ही नहीं, परंतु हम सर्वज्ञ की वाणी को सर्वोपरि मानेंगे और जो इसको श्रद्धापूर्वक सुनना चाहते हैं, बिलकुल सुनें। अगर इस पर बिलकुल श्रद्धा नहीं है, तो ठीक है। कोई किसीकी जबरदस्ती में तो श्रद्धा ला नहीं सकता है।

धर्मबुद्धि होनी चाहिये। **यदि पांडित्य प्रगट करने के लिये लगेंगे तो कषायभाव से उलटा बुरा होगा।** देखो, कितनी बातें उन्होंने सोच कर लिखी हैं। पं.टोडरमलजी की बुद्धिमत्ता की तो कमाल है। **गणितादि ज्ञान सहित होने चाहिये, नहीं तो ग्रंथ का अर्थ भासित नहीं होगा।** फिर भी जब हमने इसको पढ़ाया था न, तब हमने सबको बताया था कि हम आपको गॅरंटी देते हैं कि बिना गणित का हम त्रिलोकरचना आपको सुनायेंगे और उसमें गणित मिनिमम करके बताया था। **कथन का निर्णय करके तत्त्वज्ञान को दृढ़ करने का अभिप्राय जिनके हो,** क्या कहा? निर्णय करके तत्त्वज्ञान को दृढ़ करने का, **वादादि का अभिप्राय न हो,** वादविवाद के लिये यह कुछ चर्चा का विषय नहीं बनाना है हमको। **यदि ऐसा न हो तो ग्रंथ अभ्यास का फल उपयोग निर्मल करना – उसको प्राप्त नहीं होंगे। क्षमा, संतोष, न्यायप्रवृत्ति सहित हो; यदि ऐसे न हो, तो शोभा प्राप्त नहीं होगी। पंडितजी आगे लिखते हैं, यह जैनमत का आगम है,** मैंने डायरेक्ट उनकी पुस्तक में से पढ़कर सुनाया था। **जिनेन्द्र द्वारा कथित है इसलिये प्रमाण है,** मोस्ट स्टँडर्ड है - प्रमाण है। **इसे सिद्ध करने के लिये अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। इसका श्रद्धान करके इसके अभ्यास द्वारा तत्त्वश्रद्धानी होकर, तत्त्वज्ञान को बढ़ाकर, रागादि को घटाकर मोक्षमार्गी हो और सिद्ध अवस्था को प्राप्त करो।** अभी और भी बहुत कुछ लिखा है, हम तो यहां विदेहक्षेत्र को देख रहे थे, है न? हां।

श्रोता: जैन शास्त्रों में सर्वज्ञ की सिद्धि कैसी है? जैनियों के तो न्यायशास्त्र सर्वज्ञ सिद्धि से भरे हैं। सबसे पहले में पहले आगम पढ़ो या कोई भी बात करो तो सबसे पहले सर्वज्ञ की सिद्धि की जाती है क्योंकि यह उपदेश हमें सर्वज्ञ के द्वारा प्राप्त हुआ है; फिर आगे पढ़ते हैं। यह हम सिद्धान्तप्रवेशिका भी सिखाते हैं तो सबसे पहले सर्वज्ञ की सिद्धि करते हैं, क्योंकि हमें मूल उपदेश तो सर्वज्ञ से ही प्राप्त हुआ है। लोग पूछते हैं ये धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य किसने बताये? कहां हैं दिखाओ? हमें तो ऐसे भी लोग मिलते हैं पूछनेवाले कि आत्मा कहां है, दिखाओ? और वे पढ़े-लिखे पूछते हैं अगर आत्मा है तो आज तक किसीको दिखायी देता, है न? वह कोई हलका-भारी तो होगा, उसकी कुछ स्मेल तो आती

होगी? वह ठंडा-गरम भी तो होगा कि नहीं होगा? वे तो इन्द्रियों के द्वारा आत्मा को जानने का प्रयत्न करते हैं। दिखाओ तो हम मानेंगे, नहीं तो नहीं मानेंगे। अभी उसके लिये बहुत चर्चा है, परंतु हम अपना विषय भूल जायेंगे, तो हम आगे बढ़ेंगे यहां पर।

हमने यहां विदेहक्षेत्र की रचना देखना प्रारंभ किया था, फिर से देखना वह जम्बूद्वीप का चार्ट। हमने ६ कुलाचल पर्वतों के द्वारा ७ क्षेत्र देखे थे। सबसे बीचवाला जो भाग है जिसमें सेंटर में मेरु है, उसकी बात हम देखेंगे और जिसमें विदेहक्षेत्र है वह हम मेरु पर्वत से लेकर, उसकी रचना देखेंगे। देखो, सेंटर में **सुमेरु** लिखा है पीले में, वह सुदर्शनमेरु पर्वत है। उसके चार कोनों से चार पर्वत निकले हैं, उनका नाम है गजदंत पर्वत। सुमेरु पर्वत के नीचे देवकुरु और ऊपर उत्तरकुरु लिखा है, वह है उत्तम भोगभूमि की एरिया। उत्तरकुरु में नीला डॉट दिखाया है वह जम्बूवृक्ष है। जम्बूवृक्ष और उसका परिवार यानी वृक्षों का समूह बहुत बड़ा है यह तो रत्नमयी पृथ्वीकायिकों की रचना है। उसके कारण इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप है। नीचे देवकुरु में जो नीला डॉट दिखाया है वह है शाल्मलिवृक्ष। अब उसके बाजू में देखो, यह जो सुमेरु पर्वत के राइट और लेफ्ट साइड में ये भद्रशालवन हैं, उसके बाद यह ईंट जैसी रचना दिखायी है ऊपर से नीचे तक, वह है भद्रशाल वनवेदी और उसके राइट साइड में एक, दो, तीन, चार, ... आठ ऐसे नंबर हैं। सबसे राइट में एक पीली एरिया है, वह है देवारण्य और भूतारण्य। अभी इसको थोड़ा एन्लार्ज करके हम देखना चाहते हैं।

वह है १२.१ नंबर का चार्ट, पूर्व विदेह को हम देखने जा रहे हैं। जो हमने वहां देखे थे न १ से ८ नंबर, यहां पर भी देखो पूर्व विदेह में वह लाल कलर में नंबर डाले हैं १ २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ और नीचे राइट से लेफ्ट ९ से १६ तक; मिले सबको? अब यह क्या है तो विदेहक्षेत्र के सबसे लेफ्ट साइड में ऊपर से नीचे तक, एक वेदी है जिसको भद्रशाल वनवेदी नाम दिया है; मिला? बॉर्डर, जो लेफ्ट साइड की बॉर्डर, विदेहक्षेत्र के लेफ्ट साइड की बॉर्डर, सबसे लेफ्ट में तो देवारण्य वगैरह लिखा है। विदेह के और अरण्य के बीच में, वन के बीच में, जो ऊपर से नीचे वह ईंट जैसी लाइन बनायी है, मिला कि नहीं मिला सबको? उसका नाम क्या है? भद्रशाल वनवेदी। देखो, सेंटर में, सबसे सेंटर में से एक सुमेरु पर्वत से लवणसमुद्र तक जानेवाली नदी ब्लू कलर में दिखायी है उसका नाम है

सीता नदी। मिल रहा है सबको? तो सीता नदी कहां से आयी है तो अभी लेफ्ट से आयी है क्योंकि हमें अभी ऊपर सीता नदी का उगम-ओरिजिन देखना है और उसके लिये फिर आपको जम्बूद्वीप का नक्शा देखना पड़ेगा। वह सीता नदी कहां से आयी जानना है, तो जम्बूद्वीप का चार्ट निकालो। वहां नील पर्वत कहां है? मिला आपको? लेफ्ट साइड में जहां पर्वतों के नाम लिखे हैं; नील और ब्रॅकेट में केसरी; मिला? हां, तो केसरी कहां है? केसरी, वह नील पर्वत के ऊपर के द्रह यानी सरोवर का नाम है; जो नील पर्वत के बीचोबीच एक ब्लू चौकोण ऐसा बताया है, वह है केसरी नाम का ह्रद जिसको कहते हैं, उस सरोवर से निकलकर ब्लू लाइन नीचे आ गयी है सुमेरु पर्वत तक। मिल रही है न? अब वह सुमेरु पर्वत को एक चौथाई प्रदक्षिणा देकर पूर्व की तरफ बहती है। वह गजदंत पर्वत के नीचे से आयी है बाहर और फिर वहां से पूर्व दिशा की ओर बहती है। पूर्व दिशा में बिलकुल जाकर वह लवणसमुद्र में मिलती है। यहां तक बात ख्याल में आयी?

अब इसके कारण यह पूरा पूर्व विदेह उत्तर-दक्षिण में विभाजित हो गया है। सीता नदी के कारण यह जो पूर्व विदेह है, वह पूर्व विदेह का उत्तर भाग, ऊपर का, नदी के उस पार का और नदी के नीचे इस पार हमारी ओर का वह दक्षिण भाग। यहां तक बात ख्याल में आयी? अब इसीको हम फिर आगे अपने १२.१ नंबर के चार्ट में देखेंगे। यही सीता नदी बीचोबीच दिखायी है, जो लेफ्ट से राइट तक आकर लवणसमुद्र को मिली है। यहां तक बात ख्याल में आयी? हां, अब यहां क्या है? देखो, ऊपर से नीचे तक ब्राऊन झिगझॅग लाइन जो बतायी है, वह पर्वत है और दो पर्वतों के बीच में एक ब्लू लाइन बतायी है जो ऊपर के पर्वत से निकलकर नीचे सीता नदी में आकर मिलती है। तो ऐसी तीन नदियां हैं उनको कहेंगे विभंग नदियां और जो चार पर्वत हैं वे अलग-अलग उनके नाम हैं। आपको दिखायी देता है तो पहले पर्वत का नाम है चित्रकूट वक्षार; मिला? सीता नदी है न? सीता नदी के ऊपर यानी उत्तर की ओर लेफ्ट साइड में देखना, चित्रकूट वक्षार लिखा है; मिला सबको? वह चित्रकूट वक्षार ऊपर से नीचे तक सीता नदी तक फैला हुआ है। ऊपर नील पर्वत से सीता नदी तक यह चित्रकूट वक्षार पर्वत है। उसके बाद ऊपर से नीचे तक एक नदी है, उसका नाम है द्रहवती; नाम ऊपर डाला है। फिर दूसरा जो वक्षार है, क्या नाम है उसका? *श्रोता: नलिनकूट।* नलिनकूट वक्षार; दिख रहा है क्या सबको? *श्रोता: हां।* वह भी ऊपर से नीचे तक है। *श्रोता: वक्षार क्या है?* वक्षार, ये पर्वतों के नाम

हैं; उन सारे पर्वतों को वक्षार पर्वत कहते हैं। ये वक्षार चार हैं और विभंग नदिया तीन हैं; चार और तीन सात हुये और इनके कारण विदेहक्षेत्र के आठ-आठ भाग हुये।

लेफ्ट यानी बिलकुल बाजू की लिमिट कौनसी थी? भद्रशाल वनवेदी। फिर पहले नंबर का वक्षार – चित्रकूट वक्षार, फिर विभंग नदी, उसका नाम है ऊपर से देखो द्रहवती नाम है; फिर वक्षार का नाम है नलिनकूट वक्षार; फिर आगे की जो नदी है वह ग्राहवती नदी है; फिर पद्मकूट वक्षार; फिर पंकवती नदी है और फिर एकशैल वक्षार यानी ये चार वक्षार और तीन नदियों के कारण; कितने? एक, दो, तीन, चार, पांच, छह, सात, आठ ऐसे विदेहक्षेत्र के आठ भाग हुये। यहां तक बात ख्याल में आयी? ऐसे ही नीचे की यानी नदी के दक्षिण की ओर भी चार पर्वत और तीन नदियां हैं। इन नदियों को विभंग नदियां कहते हैं क्योंकि उनके और वक्षार पर्वतों के कारण विदेहक्षेत्र के भिन्न-भिन्न क्षेत्र हो जाते हैं। ये जो आठ के आठ क्षेत्र हैं उनमें से हर एक में एक-एक आर्यखण्ड और पांच-पांच म्लेच्छखण्ड हैं। अब उसको देखने के लिये एक नंबर का जो विदेह है न, उसको देखो, जो कलरफुल है और कलरफुल में नीचे की ओर एक पीली एरिया दिखायी है, वहां आर्यखण्ड लिखा है। उस विदेहक्षेत्र में आर्यखण्ड कैसे हुआ? तो ऊपर से दो नदियां बहते आयी हैं और नीचे आकर सीता नदी में मिली हैं। *श्रोता: रक्ता, रक्तोदा।* हां, रक्ता, रक्तोदा और बीच में आड़ा एक पर्वत है, उसका नाम क्या है? विजयार्ध पर्वत; अभी इसको समझने के लिये जरा भरतक्षेत्र निकालो, क्यों? वहां भी ऐसी ही परिस्थिति है।

६ नंबर का चार्ट, भरतक्षेत्र की डायमेन्शन्स ऐसी नहीं हैं, इतनी गोलाकार नहीं है। इस पिक्चर में ऊपर जो बताया है पीला आड़ा पट्टा, वह ॲक्चुअलि भरतक्षेत्र की ऐसी डायमेन्शन्स हैं। वह टू द डायमेन्शन चित्र है। ६ नंबर चार्ट में, जो ६ नंबर जहां डाला है न, वहां नंबर के बाजू में जो दिखाया है, यह भरतक्षेत्र का विस्तार ऐसा आड़ा है। परंतु इतनी छोटी सी एरिया में हम कैसे समझा सकेंगे? इसलिये इसको हमने डिस्टॉर्ट कर दिया, समझाने के लिये। क्योंकि शास्त्रों में भी ऐसी फिगर बतायी है। परंतु वह ऐसा इतना गोलाकार तो नहीं है क्योंकि गोल का बिलकुल छोटा भाग है यह; यह इतनासा आड़ा जैसा है, समझने के लिये हमने उसको अलग से प्रपोर्शन में ऐसा बड़ा करके बताया है।

तो इसमें क्या है? देखो, ऊपर का जो पद्मद्रह है, ह्रद कहो या द्रह कहो अर्थ एक ही है। हिमवान पर्वत में यह जो पद्मद्रह है उसमें से दो नदियां निकलती हैं, एक गंगा है, एक

सिंधु है। *श्रोता: यह सरोवर है?* यह सरोवर है, उसमें से दोनों ओर से दो नदियां निकलती हैं, पर्वत के ऊपर से बहकर बाहर की ओर आती हैं और नीचे कुंड में गिरती हैं और फिर दक्षिण की ओर बहती हैं। वह गंगा नदी पूर्व की ओर बहती हुयी लवणसमुद्र से मिलती है और सिंधु नदी है वह भी पश्चिम की ओर बहती हुयी लवणसमुद्र से मिलती है। दिख रही हैं न वहां पर? सबसे बीच में आड़ा एक पर्वत है, क्या नाम लिखा है वहां पर? *श्रोता: विजयार्ध पर्वत।* विजयार्ध पर्वत। दो नदियां और एक पर्वत इस कारण भरतक्षेत्र के छह भाग हो जाते हैं। देखो, सबसे नीचे लिखा है आर्यखण्ड; फिर उसके लेफ्ट में देखो, सिंधु के पश्चिम बाजू में और विजयार्ध के नीचे म्लेच्छखण्ड; यहां एक खण्ड हुआ और विजयार्ध के ऊपर एक म्लेच्छखण्ड हुआ, दो नदियों के बीच में ऊपर यह तीसरा म्लेच्छखण्ड हुआ; उसके राइट साइड में चौथा म्लेच्छखण्ड हुआ और विजयार्ध के नीचे और गंगा के पूर्व में यहां एक म्लेच्छखण्ड हुआ। कितने हुये म्लेच्छखण्ड? *श्रोता: पांच।* पांच हुये।

यह ऊपर का जो म्लेच्छखण्ड है न? आर्यखण्ड के विजयार्ध के ऊपर का, वहां सेंटर में कुछ काला-काला लिखा है, क्या लिखा है वह? *श्रोता: वृषभगिरी।* वृषभगिरी; नाम सुना है? भरत चले वृषभांचल पर, क्यों गये थे? *श्रोता: नाम लिखने।* हां, नाम लिखने। यह नियम है, चक्रवर्ती जब छह खण्ड जीतकर आता है, तो वृषभगिरी पर जाकर वहां अपना नाम लिखता है। *श्रोता: इन छह खण्डों को जीतते हैं?* हां, छह खण्डों को जीतकर, ये छह खण्ड हैं पूरे। *श्रोता: सारे विदेहों में इसीप्रकार है?* सारे ही विदेहक्षेत्रों में ऐसी ही रचना है। यह तो भरतक्षेत्र की बात हमने देखी। भरतक्षेत्र का आकार तो ऐसा आड़ा है और विदेहक्षेत्र तो ऐसे आयताकृति हैं। विदेहक्षेत्रों का आकार अलग है और भरतक्षेत्रों का आकार अलग है। परंतु उनमें भी ऐसी रचना है, वहां पर भी दो नदियां और एक विजयार्ध है। देखो, अब निकालना विदेहक्षेत्र का १२.१ नंबर का चार्ट। *श्रोता: यह भी छोटासा पहाड़ है क्या?* कौनसा? *श्रोता: वृषभगिरी नाम का?* हां, वृषभगिरी जो है छोटा, वैसे होगा बड़ा; यहां कितना दिखायेंगे हम? इसकी हाइट कितनी है? कितना ब्रॉड, कैसा क्या है? वह सबका वर्णन त्रिलोकसार में है।

श्रोता: यह चक्रवर्ती छह खण्ड जीतता है और ऐसा आता कि नारायण तीन खण्ड का अधिपति होता है। तो फिर ये तीन खण्ड कौनसे होते होंगे? मेरे ख्याल से नीचे के होते होंगे, मुझे पक्का मालूम नहीं है, कहां है वह। नीचे के ही होंगे क्योंकि वहां विजयार्ध को

क्रॉस करना है न? चक्रवर्ती के पास वे काकिणी आदि रत्न होते हैं; उससे कपाट खुलते हैं; वे गुफा में से जाते हैं; उसमें उन्मग्ना, निमग्ना नदियां होती हैं; वे सब बातें होती हैं। आपने कभी वह सुना है कि नहीं सुना? हां, वह विजयार्ध के नीचे से अंदर गुफा में से उनको जाना पड़ता है, वह तो चक्रवर्ती ही जायेगा। तो ये नीचे के तीन खण्ड होने चाहिये। तो अभी हम पूर्व विदेह की बात देख रहे थे, १२.१ नंबर का चार्ट है। जैसे हमने भरतक्षेत्र में दो नदियां और एक विजयार्ध के कारण छह खण्ड देखे, ऐसे ही हर विदेहक्षेत्र में हैं। यहां तो हमने एक विदेहक्षेत्र में आपको कलर करके बताया है। एक नंबर के विदेहक्षेत्र में, देखो ऊपर से नीचे तक दो ब्लू लाइन्स हैं दो नदियों के लिये। एक का नाम है रक्ता और दूसरी का नाम है रक्तोदा। जैसे भरतक्षेत्र में हमने गंगा-सिंधु नाम देखे थे वैसे यहां के नाम रक्ता-रक्तोदा फिक्स हैं और सीता नदी के दक्षिण में निषध की ओर से आकर सीता नदी में मिलनेवाली गंगा-सिंधु फिक्स हैं। जैसे भरतक्षेत्र में गंगा-सिंधु हैं, ऐरावत में रक्ता-रक्तोदा हैं। ऐसे यहां के भी नाम रक्ता-रक्तोदा हैं।

श्रोता: आठों विदेह में? हां, ऊपर के यानी उत्तर के आठों में ही। तो ये रक्ता, रक्तोदा हैं देखो और बीच में जो आड़ी लाइन है न? वह है वहां का विजयार्ध; मिला विजयार्ध? विजयार्ध जो है न? देखो, एक नंबर का विदेहक्षेत्र उसका नाम कच्छा है, वह ऊपर नील पर्वत से नीचे सीता नदी तक आयताकार है। उसमें पीले रंग का आर्यखण्ड बताया है। चार्ट में उस पीले क्षेत्र के ऊपर और जहां कच्छा नाम लिखा है उसके नीचे ब्राऊन झिगझॅग आड़ी लाइन है जो पूरे एक विदेह को दो में विभाजित करती है, देवारण्य से वक्षार पर्वत तक दिखती है, वह है विजयार्ध पर्वत। जहां कच्छा, सुकच्छा, महाकच्छा वगैरह नाम लिखे हैं, हर एक के नीचे वह आड़ी लाइन दिखती है मगर वह कंटिन्युएशन में नहीं है। हर एक विदेहक्षेत्र का अपना-अपना विजयार्ध पर्वत अलग-अलग है। *श्रोता: नाम नहीं लिखा?* विजयार्ध नाम है न उसका? हां, यहां नहीं लिखा है। वह विजयार्ध पर्वत है और यहां जो ॲरो से बताये हैं न? हां, वे छह खण्ड हैं वहां के। ये जो पांच म्लेच्छखण्ड हैं न? चार्ट में कच्छा नाम लिखा है उसके नीचे ॲरो जहां से शुरू होते हैं वह एक म्लेच्छखण्ड, उसके बाजू में दो और नीचे जहां पीले रंग में आर्यखण्ड लिखा है उसके बाजू में इसतरह एक आर्यखण्ड और पांच म्लेच्छखण्ड वहां चार्ट में बताये हैं। परंतु अभी यह इतना छोटा चार्ट है तो इसमें आपको वह दिखायी भी नही देंगे अक्षर, बड़े चार्ट में तो दिखायी देते हैं, हैं

न ? हां, यह ख्याल में आया न ? हर एक विदेह में एक आर्यखण्ड है और पांच म्लेच्छखण्ड हैं। क्यों ? वहां भी दो-दो नदियां हैं और एक-एक विजयार्ध पर्वत है।

श्रोता: यहां म्लेच्छखण्ड में धर्म होता है ? म्लेच्छखण्ड में वहां भी धर्म नहीं होता। *श्रोता: वहां से चक्रवर्ती रानी लेकर आयेगा ?* चक्रवर्ती रानी लेकर आयेगा तो चक्रवर्ती के साथ आयेगी तो धर्म सीख जायेगी। वहां तो कोई धर्म नहीं था, है न ? *श्रोता: और क्या फर्क है आर्यखण्ड और म्लेच्छखण्ड में ?* आर्यखण्डों में तो धर्म की प्रवृत्ति होती है और यहां के भरतक्षेत्र, ऐरावतक्षेत्र के आर्यखण्डों में छह काल का परिवर्तन होता है, वहां विदेहक्षेत्र के आर्यखण्ड में तो ऐसा नहीं है और हमारे यहां म्लेच्छखण्डों में कितना परिवर्तन होता है ? *श्रोता: चौथे काल जैसा।* चौथे काल जैसा। *श्रोता: विदेहक्षेत्रों में गृहीत मिथ्यात्वी की पूजा होती है ?* होगी, क्योंकि गृहीत मिथ्यात्वी तो सब जगह होने चाहिये वैसे तो, नहीं होते क्या ? *श्रोता: बस ऐसे ही अगृहीत मिथ्यात्व तो अनादिकाल से हैं।* अच्छा। *श्रोता: नवीन गृहीत मिथ्यात्वी नहीं होते वहां पर।* तो उसको अगृहीत कहेंगे न ? अगृहीत है, अच्छा ? गृहीत नहीं, ठीक है। *श्रोता: विदेहक्षेत्र के लिये सरोवर इसका ?*

विदेहक्षेत्र का सरोवर है वह हमने देखा था जम्बूद्वीप में। हां, जैसे हमने भरतक्षेत्र में पद्म सरोवर देखा था वैसे विदेहक्षेत्र के लिये नील पर्वत का जो केसरी सरोवर है, वहां से वह सीता नदी नीचे बहती आयी है, सुमेरु पर्वत तक। सुमेरु पर्वत को एक चौथाई प्रदक्षिणा दी उसने। *श्रोता: सरोवर किधर है ?* सरोवर है न ? केसरी सरोवर नील पर्वत पर। आपको जम्बूद्वीप का नक्शा देखना है, ख्याल में आ रही है बात ? *श्रोता: दीदी यह प्रलय जो है वह सिर्फ आर्यखण्ड में है ?* आर्यखण्ड में होता है। *श्रोता: अनार्यखण्ड में सम्यक्त्व प्राप्त नहीं होता ?* हां, अनार्यखण्ड में नहीं। वहां के लोग यहां आर्यखण्ड में आयेंगे, उनको सम्यक्त्व प्राप्त हो सकता है यहां पर। देखो, अभी हम आगे बढ़ेंगे। तो हर विदेहक्षेत्र में ऐसी ही रचना होगी छह-छह खण्डों की। जैसे हमने ऊपर आठ देखे, सीता नदी के ऊपर यानी उत्तर में, ऐसे ही सीता नदी के नीचे यानी दक्षिण में भी आठ विदेह हैं। सीता के जो ऊपर है उसको हम पूर्व विदेह के उत्तर विदेहक्षेत्र कहेंगे; पूर्व की उत्तर दिशा में आठ पूर्व की दक्षिण दिशा में आठ, फिर पश्चिम की दक्षिण दिशा में आठ, फिर पश्चिम की उत्तर दिशा में आठ इसतरह यहां पर ८ × ४ = ३२ एक मेरुसंबंधी विदेहक्षेत्र होंगे। पूर्व विदेहक्षेत्र के हर एक पर्वत के नाम अलग हैं, नदियों के नाम अलग हैं, वे सब यहां पर लिखे हैं, ऐसे ही पश्चिम

विदेहक्षेत्र के भी आगे लिख दिये हैं चार्ट में। *श्रोता: अभी कितने तीर्थंकर हैं मतलब बीस तीर्थंकर कौन-कौनसे विदेहक्षेत्र में हैं?* बताया न, वे ८ विदेहों के एक्स्ट्रीम एण्ड में हैं अभी तो वर्तमान में।

देखो, चार्ट नंबर १२.१ नंबर में सबसे राइट साइड में ८ नंबर के राइट साइड में क्या दिख रहा है? ऐसी एक वेदी है, वनवेदी; दिख गयी? और उसके भी राइट साइड में और लवणसमुद्र उनके बीच में भूतारण्य लिखा है, उसीका देवारण्य भी नाम आता है। ऐसे ही पश्चिम विदेह के पश्चिम में, १२.२ चार्ट में देख लो, यह पश्चिम की तरफ है, ऐसी ही वहां रचना होगी। वहां की नदी का नाम है सीतोदा। सीता आयी थी ऊपर से नील पर्वत के केसरी सरोवर से। सीतोदा कहां से आती है? ५ नंबर के चार्ट में देख लो। हां, निषध पर्वत के तिगिंछ सरोवर से आती है। वहां से निकली सुमेरु तक पहुंची, फिर एक चौथाई में प्रदक्षिणा देकर पश्चिम की तरफ बहती है। ख्याल में आयी बात? ख्याल में आयी कि नहीं आयी? नहीं आयी? जम्बूद्वीप का चार्ट देखना। देखो, जम्बूद्वीप के चार्ट में हम यह देख रहे हैं, यह कौनसा पर्वत है यहां? *श्रोता: नील।* हां, नील-नील, नील पर्वत पर केसरी द्रह है यह। केसरी द्रह से जो नदी निकलती है, यह सीता नदी निकली, मेरु की तरफ आयी। उसके ऐसी थोड़ी प्रदक्षिणा दी, कितनी? एक चौथाई और फिर पूर्व की तरफ बह गयी, यह है सीता नदी। सीतोदा नदी कहां से आती है? अपने चार्ट में नीचे की तरफ हम देखेंगे। हां, वहां दक्षिण में निषध पर्वत है और उस पर तिगिंछ सरोवर है वहां से आती है और मेरु की तरफ बहती है। एक चौथाई उसको ऐसी प्रदक्षिणा देकर पश्चिम की तरफ बहती है। उसका नाम क्या है? सीतोदा। सीता नदी के कारण पूर्व विदेह के दो भाग हुये, ऊपर और नीचे यानी उत्तर और दक्षिण। सीतोदा के कारण पश्चिम विदेह के नीचे दक्षिण और ऊपर उत्तर ऐसे दो भाग हुये, बाकी रचना तो ऐसी ही है, उनके नाम जो हैं विभंग नदियों के और पर्वतों के वे अलग-अलग हैं।

श्रोता: हर एक विदेह में म्लेच्छखण्ड और आर्यखण्ड हैं? हर एक विदेहक्षेत्र में पांच म्लेच्छखण्ड और एक आर्यखण्ड हैं। हमारे यहां पर भी भरतक्षेत्र में पांच म्लेच्छखण्ड हैं और एक आर्यखण्ड है। *श्रोता: म्लेच्छखण्ड ज्यादा हैं सब जगह?* हां, सब जगह और हमारे यहां जो आर्यखण्ड है, उसमें वे छह कालों के परिवर्तन होते हैं। कालों के परिवर्तन हम कल देखेंगे क्या-क्या होते हैं। वे हमारे यहां भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में होते हैं। म्लेच्छखण्डों

में मात्र चौथे काल जैसी ही परिस्थिति होती है। यहां जब एक से लेकर छह तक के कालों का परिवर्तन होता है तब म्लेच्छखण्डों में मात्र चौथे काल के आदि से लेकर अंत तक जैसी ही परिस्थिति बनती है। चौथे के आदि से अंत तक जो हमारे यहां परिवर्तन होता है क्योंकि हमारे चौथे के यानी हमारी अभी अवसर्पिणी है। चौथे काल के शुरुआत में भरत चक्रवर्ती जैसे को हम रखेंगे और लास्ट में १२० वर्ष की आयुवाले, जो कोई ७ हाथवाले इतने हम रखेंगे। तो यहां ये जो, व्हेरिएशन्स हुये हैं मनुष्यों की हाइट वगैरह में, वैसे ही वहां म्लेच्छखण्डों में इतने ही व्हेरिएशन्स होंगे। हमारे यहां भोगभूमि में वह जो ३ कोस हाइटवाले थे वह बात वहां म्लेच्छखण्ड में नहीं रहेगी। ख्याल में आती है बात? यहां... *श्रोता: म्लेच्छखण्डों में भाषा कौनसी होती है?* वहां कोई म्लेच्छखण्ड की भाषा होती होगी। *श्रोता: म्लेच्छखण्डों में मनुष्यों की लंबाई कितनी होगी?* चौथे के आदि से अंत तक जो हमारे यहां व्हेरिएशन होता है, हां, ऐसा ही म्लेच्छखण्डों में होता है। क्यों? चक्रवर्ती जाते हैं और वहां की कन्याओं को शादी करके लेकर आते हैं। जब भरत चक्रवर्ती जायेंगे, तो उनके हाइट, बॉडिवाली होगी कि नहीं? और जो अंतिम ब्रम्हदत्त चक्रवर्ती जैसे कोई जायेंगे, तो उनको वह ५०० धनुष हाइटवाली कन्यायें कैसे चलेगी? तो उनके लिये तो छोटी चाहिये यानी वहां भी उतना व्हेरिएशन होता है सहजरूप से होता है ऐसा।

श्रोता: वहां पर भी १८ मुख्य भाषा और ७०० लघुभाषा हैं? अपने यहां, अपने यहां की अपेक्षा बात बता रहे हैं। अब विदेह में क्या होता है हमें क्या पता? जो कुछ होता होगा वहां पर भी यथायोग्य। *श्रोता: आर्यखण्डों से म्लेच्छखण्ड में मनुष्यों की संख्या ज्यादा होती है कुछ ऐसा डेफिनेट है क्या?* पता नहीं, अब म्लेच्छों की संख्या ज्यादा है या, आर्यों की ज्यादा है, पता नहीं है मुझे, खास ख्याल नहीं है। अभी कुछ प्रश्न हैं तो लिखित-रूपसे देना, उनको हम कुछ देखेंगे।

अभी तो, देखो, प्रश्न है सुनना जरा। कुंदकुंद आचार्य सदेहे सीमंधर भगवान पासे गया हता। पण भरतक्षेत्रना चार्ट प्रमाणे युगमंधर भगवान नजदीक थाय छे, त्यां शा माटे न गया? ऐसा कुछ नहीं है। रागद्वेष के कारण नहीं गये ऐसा तो है नहीं, सहजरूप से वह बात बन गयी है। चलो, अभी हम यहीं रुकेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२५. भोगभूमि

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। उसीके अंतर्गत अनादिकाल से इस जीव ने कितना समय बिताया है, कहां-कहां जन्म धारण किया है, कैसे-कैसे पुद्गल परमाणुओं को उसने ग्रहण किया है, कौन-कौनसे भव कैसे-कैसे धारण किये हैं इन सबका हमें पता चलता है, तो उस अनादि की अनंतता का ख्याल आता है।

एक प्रश्न किसीने पूछा है, *पंच परावर्तन से क्या फलित करना है?* प्रत्येक जीव जिसको सम्यग्दर्शन नहीं हुआ है वह नियम से अनंतकाल तक चारों गतियों में और ८४ लाख योनियों में भ्रमण करता ही रहेगा और यह बात शास्त्रों में बतायी गयी है। सिर्फ अनंतकाल परिभ्रमण बताना काफी नहीं है; अनंतकाल से ऐसा कहने से अगर यह जीव समझ जाता, चेत जाता, सम्यग्दर्शन प्राप्त करता तो काफी था; परंतु 'हम अनादि से हैं' यह कहने की हमें इतनी आदत हो गयी है कि वह अनादि का भावभासन नहीं हो रहा है। अनंतकाल का भावभासन नहीं हो रहा है। उसे अनंतकाल का भावभासन हो जाये तो ऐसे प्रश्न ही नहीं उठेंगे। जीव सम्यग्दर्शन का उपाय करने के पीछे लग जायेगा। क्योंकि हम कहते तो हैं कि हमें मोक्ष प्राप्त करना है, सम्यग्दर्शन प्राप्त करना है, परंतु उसका उपाय नहीं करते हैं। आप कहेंगे कि हम स्वाध्याय तो करते हैं। हं, कितने घंटे करते हैं? और केवल स्वाध्याय से कुछ नहीं होनेवाला है। उससे तो बस क्षयोपशम ज्ञान बढ़ जायेगा और शब्दज्ञान हो जायेगा परंतु आत्मज्ञान नहीं होगा। उसके लिये क्या हमें गहराई से-अंदर से उसकी रुचि लगी है? अंदर से निरंतर इस संसार का भय वर्तता है? क्योंकि हम निडर होकर घूम रहे हैं। हमारी सबसे पहली प्रायॉरिटि किसमें है? देख लेते हैं, है न? क्योंकि शरीर मैं हूं मान लिया है तो उसके लिये कुछ भी करने को तैयार होता है। स्वाध्याय तो क्या चलो बाद में कर लेते हैं; क्योंकि अभी हमारी दूसरी अपॉइन्टमेंट है; हमें यह करना है, वह करना है, बस उसीमें समय चला जाता है। तो यह हमें भासित हो जाये कि सचमुच मैंने अनादि से कहां-कहां अपना समय गंवाया है या हमने कैसे-कैसे जन्म-मरण किये हैं, तब जाकर इस संसार का यदि भय लगेगा तो जीव सोचेगा कि मुझे इससे बाहर निकलना

ही है और उसके लिये मैं क्या कर सकता हूं। इसके लिये यदि आप अनादि या अनंत कहने से मान जाते तो अच्छा था।

दूसरा प्रश्न है पंच परावर्तन अनुक्रम से जिया जाता है कि एक साथ सायमल्टेनिअस्लि भोगते हैं? यह जिया जाता है, उसे भोगना है ऐसी कोई बात नहीं है। वह तो जैसे हमारे घड़ी की तीनों सूइयां एक साथ घूम रही हैं, वैसे काल को काउंट करने के लिये हम एक पर्टिक्युलर समय में कहेंगे कि सभी पांचों के पांचों परावर्तन शुरू हो गये। तो सबसे पहला कौनसा पूरा होगा? *श्रोता: पुद्गलपरावर्तन।* पुद्गलपरावर्तन। जब अनंत बार पुद्गलपरावर्तन हो जायेंगे तब जाकर एक क्षेत्रपरावर्तन पूरा होगा। फिर जब अनंत बार क्षेत्रपरावर्तन होगा तब जाकर एक कालपरावर्तन पूरा होगा। जब कालपरावर्तन अनंत बार हो जायेगा तब जाकर एक भवपरावर्तन पूरा होगा और जब भवपरावर्तन अनंत बार पूरा होगा तब जाकर एक बार भावपरावर्तन पूरा होगा। तो हमें इस अनंतता का भावभासन नहीं है। पहले में पहले अनंत क्या है वही पता नहीं है; असंख्यात क्या है वही पता नहीं है; असंख्यात का भी भावभासन हो जावे तो ऐसा लगता है, अरे बाप रे! यह कितनी बड़ी फिगर है, तो अनंतकाल क्या होगा! अभी हमने तो क्षेत्रपरावर्तन देखा है। क्षेत्रपरावर्तन में जो बातें हमने बहुत...

श्रोता: एक और प्रश्न है, करणानुयोग का अभ्यास करने से सम्यक्त्व का बीज अंतर में पड़ता है? ऐसा किसीने नहीं कहा। मैंने यह कहा कि एक बीजसम्यक्त्व नाम का सम्यक्त्व होता है। करणानुयोग का गहराई से अभ्यास करते हैं, गणित का अभ्यास करते हैं, उसमें उपयोग की इतनी सूक्ष्मता होती है कि उपयोग की उस सूक्ष्मता के साथ – क्योंकि आत्मा भी सूक्ष्म है और उपयोग की सूक्ष्मता के बिना वह ख्याल में नहीं आता – तत्त्व की गहराई में या चिंतन की गहराई में उसका अनुभव होता है। तो ऐसी गहराई करणानुयोग के अभ्यास में बहुत अधिक प्राप्त होती है और उपयोग वहां से छूटकर अपने आपको पकड़ लेता है यानी आत्मस्थिरता होती है। उसमें भी वह सात तत्त्वों का वहां सही निर्णय वगैरह होना ही चाहिये। बिना निर्णय के बस ऐसा ही यह पढ़ने से सम्यक्त्व होगा ऐसी बात नहीं है और न ही इसमें ऐसा कोई बीज है कि जिसके कारण सम्यक्त्व होता है। बीज यानी बीजगणित जो है, गणित का जो प्रकरण है उसमें उपयोग इतना जुड़ जाता है कि सारी दुनिया को भूल जाते हैं। राग-द्वेष रहित हम उसको जानते हैं। राग-द्वेष रहित जानते रहने

को ध्यान कहते हैं। हम तो विकल्प-विकल्प कहकर इसीको छोड़ना चाहते हैं। परंतु ये विकल्प कैसे हैं कि राग-द्वेष रहित होकर मुनिराज भी इसका अभ्यास करते हैं। उनके तो संस्थानविचय धर्मध्यान की मुख्यता है, करणानुयोग की ही उसमें मुख्यता है; उनके लिये वह असंख्यातगुणा निर्जरा का कारण है। वे तो सम्यग्दृष्टि हैं ही, अंतरंग में उनकी स्थिरता बहुत अधिक है और बारंबार इसके अभ्यास में उपयोग की इतनी सूक्ष्मता होती है कि वहां से उपयोग आत्मा पर चला जाता है। हम अपनी भाषा में, द्रव्यानुयोग की भाषा में कहेंगे, वे शुद्धोपयोग में चले जाते हैं। यह बहुत कार्यकारी बात है।

तो मुनिराजों को मालूम नहीं था? कभी? कि जब निरंतर छठे-सातवें में वर्तनेवाले आचार्यों ने इन ग्रंथों की रचना की है। नेमिचन्द्र आचार्य, उनके पहले भी वीरसेन आचार्य, भूतबलि आचार्य, पुष्पदंत आचार्य और भी जितने आचार्य हो गये हैं, करणानुयोग के ग्रंथ उन्होंने क्यों लिखे? लिखते समय भी उपयोग की सूक्ष्मता होती है। पढ़ाते समय भी उपयोग की सूक्ष्मता होती है और उस बारे में चिंतन करेंगे, स्वयं पढ़ेंगे, उस पर सोचेंगे, तभी भी उपयोग की अत्यंत सूक्ष्मता होती है और यह बहुत कार्यकारी है। जब हम इसको पढ़ते हैं तभी वह एक घंटा कब निकल जाता है, उसका पता नहीं चलता है! ऐसा है न? अरे हो गया समय समाप्त? ऐसा लगता है। ये बेकार की बातें नहीं हैं। यदि किसीने ऐसे सोच लिया होगा कि यह अप्रयोजनभूत है, तो ऐसा सोचना गलत है। मुनिराज क्या अप्रयोजनभूत बातों में अपना इतना कीमती मनुष्यभव गंवा देंगे? पं.टोडरमलजी ने भी पहले सभी ग्रंथों की रचना की है। कौनसे? करणानुयोग के। उन्होंने स्वयं तो अभ्यास किया ही था; सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड, उसकी अर्थसंदृष्टि, कर्मकाण्ड, उसकी अर्थसंदृष्टि, लब्धिसार-क्षपणासार, उसकी अर्थसंदृष्टि फिर पूरा त्रिलोकसार और फिर इतने सारे करणानुयोग के ग्रंथ लिखने के बाद उन्होंने मोक्षमार्गप्रकाशक लिखना शुरू किया था। यह जाहिर है न? क्योंकि वही तो अधूरा रह गया है, बाकी तो सारे पूर्णता को प्राप्त हुये हैं। यानी लोगों की जो भ्रमणा है, उसके बारे में मैं बताना चाहती हूं। किसीकी उसमें बुद्धि नहीं लगती है तो कोई बात नहीं, जितनी लगती है उतनी अवश्य लगाना चाहिये और उसका अभ्यास करते-करते ही ज्ञान खुल जाता है। *श्रोता: तीर्थंकरों की दिव्यध्वनि में भी चारों अनुयोगों का कथन आयेगा कि खाली अकेला एक ही अनुयोग का होगा?* चारों अनुयोगों का आयेगा

कि नहीं आयेगा? *श्रोता: चारों अनुयोगों का आयेगा।* हां, तो अभी हम उसके बारे में अधिक चर्चा नहीं करेंगे।

यह तो अभी कालपरावर्तन की बात शुरू होनेवाली है। उसके पहले जो हमने भूगोल का प्रकरण देखना प्रारंभ किया था। क्योंकि कालपरावर्तन समझने के लिये तो वह विषय संबंधित है कि कर्मभूमि कहां है? भोगभूमि कहां है? उसी बात को देखेंगे। कल हमने जम्बूद्वीप की बात देखना शुरू की थी। फिर से वह जम्बूद्वीप का चार्ट निकालिये आप। हां, ५ नंबर का चार्ट है, जम्बूद्वीप का। हमने देखा था कि जम्बूद्वीप जो है वह सबसे मध्य में है; सेंटर का द्वीप है। मध्यलोक में जो असंख्यात द्वीप-समुद्र हैं उन सबके मध्य में क्या है? तो जम्बूद्वीप है जो एक लाख योजन विस्तारवाला है। विस्तार यानी यहां व्यास, डायमीटर समझना। उसके हमने आड़े एक सौ नब्बे भाग किये थे। तो एक सौ नब्बे भागों में से एक-एक भाग हम दक्षिण और उत्तर की अपेक्षा से कहेंगे तो दक्षिण की तरफ एक भागप्रमाण भरतक्षेत्र है। ऊपर यानी उत्तर की तरफ एक भागप्रमाण ऐरावतक्षेत्र है। उसके बाद दोनों तरफ एक-एक पर्वत है। दक्षिण का पर्वत हमने देखा था उस पर्वत का नाम है हिमवान पर्वत और ऊपर ऐरावत की तरफ देखेंगे उसका नाम है शिखरी पर्वत। सबको मिल रहा है कहां हम देख रहे है?

पर्वतों के नाम लेफ्ट साइड में डाले हैं। ब्रॅकेट में हैं वे सरोवरों के नाम हैं। ये हमने दो पर्वत देखे, भरतक्षेत्र देखा, उसके आगे हिमवान पर्वत के बाद हैमवत नाम का क्षेत्र है; यह जो हैमवतक्षेत्र है वहां हमेशा के लिये जघन्य भोगभूमि है। क्या कहा? हैमवतक्षेत्र है वहां कॉन्स्टन्ट, हमेशा ही जघन्य भोगभूमि पायी जाती है। वहां मनुष्य भी हैं और तिर्यंच भी हैं। यह जघन्य क्या होता है, मध्यम क्या होता है उसकी बात देखेंगे; परंतु वह कहां है उसकी बात हम अभी यहां देख रहे हैं। भरतक्षेत्र में जो यहां पर उत्तम, मध्यम, जघन्य भोगभूमि थी यानी पहला, दूसरा, तीसरा काल कहते थे, वह काल के परिवर्तन में आता है। अभी हमारा पंचम काल चल रहा है। सबसे पहले यहीं पर पहला काल था, दूसरा था, तीसरा था यानी उसमें उत्तम भोगभूमि थी, मध्यम थी, तीसरे काल में जघन्य भोगभूमि थी। फिर कर्मभूमि का प्रारंभ यहीं पर शुरू हुआ जो चौथा काल है। फिर अभी चल रहा है, वह पांचवां काल है। उस काल के परिवर्तन पर हम बाद में आयेंगे परंतु भरतक्षेत्र में भी जघन्य भोगभूमि

तीसरे काल में थी और यहां जो है हैमवतक्षेत्र में जघन्य भोगभूमि हमेशा ही पायी जायेगी – सदा काल। उसके ऊपर के पर्वत का नाम है महाहिमवान पर्वत। यह सब एक से दूसरा दोगुणा-दोगुणा होता चला जाता है। उसके ऊपर जो है वह हरिक्षेत्र है। राइट साइड में नाम लिखे हैं देखो। हरिक्षेत्र में हमेशा ही मध्यम भोगभूमि होती है। उसके ऊपर है निषध पर्वत। निषध पर्वत के ऊपर जो क्षेत्र है, जहां हमने राइट साइड में और लेफ्ट साइड में विदेहक्षेत्र देखा था। बीच में सुमेरु पर्वत है और सुमेरु पर्वत के चौगिर्द भद्रशाल वन है और सुमेरु पर्वत के उत्तर और दक्षिण की तरफ नाम लिखे हैं देखो वहां पर – उत्तरकुरु और देवकुरु, यहां हमेशा ही उत्तम भोगभूमि पायी जाती है। यानी जम्बूद्वीप में हमेशा कहीं पर जघन्य भोगभूमि है, कहीं पर मध्यम भोगभूमि है, कहीं पर उत्तम भोगभूमि है।

ऊपर की तरफ से देखेंगे। ऊपर जो रेड लाइन दिख रही है वह ऐरावतक्षेत्र है। उसके बाद शिखरी पर्वत है; उसके बाद हैरण्यवतक्षेत्र है, यहां पर भी जघन्य भोगभूमि पायी जाती है। इसके बाद रुक्मी पर्वत है; उसके बाद रम्यकक्षेत्र है, यहां मध्यम भोगभूमि पायी जाती है। उसके बाद नील नाम का पर्वत है और उसके बाद मेरु की तरफ आते हैं, तो उत्तरकुरु नाम की उत्तम भोगभूमि है। यानी जम्बूद्वीप में, दो जघन्य भोगभूमि हैं, दो मध्यम भोगभूमि हैं और दो उत्तम भोगभूमि हैं। जैसे हमने जम्बूद्वीप में देखा है ऐसा ही पूर्व धातकीखण्ड में है, ऐसा ही पश्चिम धातकीखण्ड में है, ऐसा ही पूर्व पुष्करार्ध में है और ऐसा ही पश्चिम पुष्करार्ध में है यानी जो आधा-आधा द्वीप है उसमें सभी रचना ऐसी ही होगी। उसको भी हमने देखा था कल, वह सायकल के स्पोक्स के समान ऐसे जो पर्वत फैले रहते हैं उनके कारण वहां भी इसी नाम के वहां पर क्षेत्र, पर्वत आदि हैं। तो सुमेरु पर्वत की दोनों ओर उत्तम भोगभूमि हैं। देखो सुमेरु से विदेह की जो वेदी है न, वहां तक का वह डिस्टन्स तो २२५०० योजन का है और आगे चलकर विदेह है; यानी निषध और नील पर्वतों के बीच के क्षेत्र में पूरा विदेह नहीं फैला है। विदेह तो बहुत पूर्व और पश्चिम की तरफ है और उसके प्रत्येक के फिर दक्षिण और उत्तर में ८-८ भाग हो गये हैं। कल जो बात आयी थी न? वह कुछ सीमंधर वगैरह की, एक सीमंधर होते हैं तो दूसरे कैसे होंगे? किसीने ऐसा सजेस्ट किया या किसीने बताया है किसीने किसीसे सुना था। अब किसने किससे सुना था वह बात उनको भी पता नहीं है कि आठों में ही, जो होंगे उनका नाम सीमंधर होगा। ऐसा है क्या?

श्रोता: कल मैंने कहा था कि किसी भी एक, आठ पृथ्वी में से किसी भी एक पृथ्वी के अंदर सीमंधर भगवान होंगे। उसको पृथ्वी मत कहो, विदेह कहो। उसमें किसी में होंगे? समझो एक से ज्यादा होंगे, जैसे हम कहते हैं न? कि आठवें में अभी हमारे सीमंधर हैं, तो पहले से सातवें में कहीं पर भी वे दूसरे सीमंधर शुरू हो जाते हैं और ये... *श्रोता: उनके अलग-अलग नाम होंगे? १७० के १७० नाम अलग होंगे?* नाम अलग होंगे। *श्रोता: बिलकुल अलग?* नहीं, किसीने क्या कहा कि वे सभी आठों ही सीमंधर होते हैं। *श्रोता: शाश्वत जो रहनेवाले हैं?* वे तो सीमंधर ही सारे हैं। *श्रोता: शाश्वत सीमंधर रहेंगे। आठों भूमियों से किसी भी एक भूमि के अंदर सीमंधर भगवान रहते हैं?* अच्छा, सीमंधर कहीं पर भी रहेंगे। *श्रोता: जैसे हम कहते हैं कि आठवीं भूमि के अंदर अभी सीमंधर भगवान हैं। तो दूसरे जो बन रहे होंगे वे दूसरे कहीं पर भी हो सकते हैं। फिफ्थ पर भी हो सकते हैं? फोर्थ पर भी हो सकते हैं?* हां, यही कहना था कि हम कहते हैं न कि एक सीमंधर है तो दूसरे कब होंगे? तो अन्य सात में से कहीं पर भी दूसरे सीमंधर आ जायेंगे। आप फिर से आठ भूमियों की बात कह रहे हो, ये आठ विदेहक्षेत्र हैं। *श्रोता: उनके कल्याणक होते हैं? जैसे ही उनका मोक्ष कल्याणक हुआ, वैसे ही दूसरे आ जायेंगे, बिना अंतर?* हां। समझ में आयी बात? यानी अभी हमारे आठवें में सीमंधर भगवान हैं। तो प्रश्न यह था कि जब तक एक तीर्थंकर हैं तब तक दूसरे तीर्थंकर का वहां जन्म भी नहीं होता है कुछ नहीं होता है। परंतु आठ में से अन्य क्षेत्र में, पहले से सातवें में कहीं उनका जन्म होगा फिर उनके जो कल्याणक वगैरह सब होते रहेंगे, गर्भ, जन्म, तप कल्याणक होंगे और वहां उनके हो जायेगा तो यहां यह केवलज्ञान होकर उनके समवशरण आदि चालू हो जायेंगे। यह कहना चाहते हैं। *श्रोता: बिना अंतराल?* हां, बिना अंतराल। ख्याल में आयी बात? *श्रोता: तो बीस और एक सौ सत्तर में जो...* एक सौ सत्तर में हैं तब तो सीमंधर के सीमंधर रहे न? अन्यत्र और नामवाले हो जायेंगे। यानी सीमंधर, जो एक के बाद एक होते हैं उनके नाम सीमंधर होंगे। यह जरूरी नहीं कि वे आठवें में ही सीमंधर होंगे, अन्यत्र भी होंगे। यानी जब वह आठवें के मोक्ष जाने का समय आयेगा उसके पूर्व अन्य किसीके वे तीनों कल्याणक हो गये, फिर वह केवलज्ञान कल्याणक होकर उनके वहां समवशरण चलेगा, उसमें खंड नहीं पड़ेगा। यही कहना चाहते हैं।

श्रोता: ऐसा भी बोलते हैं कि छह माह का अंतराल पड़ सकता है? वह तो सौधर्म

इन्द्र के लिये है। आपने इसके बारे में सुना है क्या तीर्थंकर के बारे में? *श्रोता: छह महिना। अन्य श्रोता: अंतर नहीं है।* हां, तो जो कुछ है, तो यह अलग-अलग जो कुछ सुनने में आते हैं या पढ़ने में तो मुझे नहीं आया है इसके बारे में। सौधर्म इन्द्र के पश्चात् दूसरा सौधर्म इन्द्र जन्म लेता है उसमें छह महिने का अंतराल हो सकता है ऐसी त्रिलोकसार ग्रंथ में गाथा है। सौधर्म इन्द्र वहां से, यानी उसने मनुष्य में जन्म लिया तो दूसरा सौधर्म इन्द्र होने तक वहां छह महीने का अंतराल होता है - हो सकता है। हां, यह जो हम भोगभूमि देख रहे थे, हमने देखा था, कहीं पर हमेशा ही जघन्य, कहीं मध्यम, कहीं उत्तम भोगभूमि पायी जाती है। *श्रोता: छह महीने तक फिर और कल्याणक अगर होंगे तो फिर उसकी व्यवस्था और कोई इन्द्र आदि करेंगे, कैसे होगी?* देखो, देखो, सौधर्म इन्द्र जो है न वह तो सर्वत्र पहुंचता है। ख्याल में आया न? ॲट अ टाइम भी अगर १७० तीर्थंकर विराजमान हैं, तो सर्व भरतक्षेत्रों में तो वे व्यवस्था करेंगे ही और सौधर्म इन्द्र जो व्यवस्थापक है, व्यवस्थापक कहा मैंने; सौधर्म इन्द्र व्यवस्थापक किसके लिये है? भरतक्षेत्र के लिये है और ईशान इन्द्र जो है वह ऐरावतक्षेत्र के लिये व्यवस्थापक है। यहां हम जो पंचकल्याणक मनाते हैं उसमें सौधर्म इन्द्र की बोली बड़ी चलती है, वहां ऐरावतक्षेत्र में ईशान इन्द्र की चलती होगी, है न! और यह जो है न विदेहक्षेत्र, उसमें तो सनत्कुमार - माहेन्द्र इन्द्र चले जायेंगे। सनत्कुमार इन्द्र पूर्व विदेह में जायेंगे, माहेन्द्र इन्द्र पश्चिम विदेह में। पांडुकशिलावाला वह प्रकरण निकालो। सौधर्म इन्द्र कितने तीर्थंकरों के कल्याणक मनायेंगे? *श्रोता: एक सौ सत्तर के एक सौ सत्तर के मना लेंगे।* नहीं-नहीं, अधिक से अधिक, उनकी आयु में? *श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात; क्यों? दो सागर की आयु है, तो उसमें तो पूर्वकोटि के असंख्यात भव चले जायेंगे। उसमें असंख्यात तीर्थंकरों के कल्याणक मनायेंगे वे।

श्रोता: क्या सोलह ही सोलह स्वर्गों का इन्चार्ज या हेड वह सौधर्म इन्द्र ही होता है? वे ही सब जगह इन्फॉर्मेशन भेजते हैं, उन्हींकी आज्ञा से सब चलता है? नहीं, वही तो, इसीलिये मैंने उनको व्यवस्थापक कहा न? उनके ऊपर के इन्द्रों को वे आज्ञा कैसे देंगे? क्योंकि हमारे यहां भी कल्याणकों में दिखाते हैं कि सब आकर उनकी हांजी-हांजी करते हैं। ऊपर के तो सारे सौधर्म इन्द्र से भी बड़े इन्द्र हैं और ऊपर के सारे दक्षिणेंद्र एक भवावतारी हैं। मुझे पुस्तक में से यह बताना है कि कौनसे तीर्थंकर का जन्माभिषेक पाण्डुकवन की कौनसे शिला पर होता है। पाण्डुकवन में चार विदिशाओं में चार शिलायें हैं

न, भरतक्षेत्र के तीर्थंकर का जन्माभिषेक पाण्डुकशिला पर, ऐरावत के तीर्थंकर के लिये रक्तशिला, पूर्व विदेह के तीर्थंकर के लिये रक्तकम्बला शिला और पश्चिम विदेह के तीर्थंकर के लिये पाण्डुकम्बला शिला ऐसा अलग-अलग है। आप चार्ट नंबर १० देखना, सुमेरु पर्वत के चार्ट में पाण्डुकवन बताया है, वहां देखना। पृष्ठ १९१-१९२ पर पाण्डुकवन और उन चार शिलाओं का वर्णन है, नीचे से तीसरी लाइन। *श्रोता: उनके लिये वस्त्राभूषण?* हां, उनके वस्त्र, गहने कौन ले जाते हैं वह अलग बात है। वे वस्त्राभूषण इन्द्र के सुधर्मसभा के आगे मानस्तंभ होता है उसमें जो पिटारे लटकते हैं वहां पाये जाते हैं। कौनसे गृहस्थ तीर्थंकर के आभरण कौनसे पिटारों में होते हैं इसके भी नियम हैं। *श्रोता: उत्तर-दक्षिण के अलग-अलग होते हैं?* हां, वे अलग-अलग होते हैं। *श्रोता: १०९ पर है।* १०९ पर मिला आपको? हां-हां, १०९ पर, देखो, यह पृष्ठ १०८ पर लास्ट लाइन। वहां से उन करंडकों का वर्णन शुरू होता है।

हमें पता है कि जब तीर्थंकर जीव का जन्माभिषेक होता है तब इन्द्र स्वर्गों से उनके लिये वस्त्र तथा आभूषण ले आता है। कौनसे तीर्थंकरों के आभरण कौनसे पिटारों में होते हैं इसके भी नियम हैं। तीर्थंकरों के अर्थात् तीर्थंकर होनेवाले जीवों के ऐसा समझना। मुनिदशा में ही नग्न दिगंबर अवस्था होती है, तो तीर्थंकर अवस्था होने पर वस्त्राभरण, आभूषण का सवाल ही कहां पैदा होता है? यानी तीर्थंकर होने के बाद नहीं समझना, तीर्थंकर कहने से वह उसी भव में तीर्थंकर होनेवाले जीव की बाल्यावस्था और गृहस्थ अवस्था समझना। **सौधर्म इन्द्र के आस्थान मण्डप अर्थात् सभा मण्डप के आगे जो मानस्तंभ है, उसमें जो करण्डक हैं उनमें भरतक्षेत्र के तीर्थंकरों के वस्त्राभरण पाये जाते हैं। सौधर्म इन्द्र उन्हें यहां भरतक्षेत्र में लेकर आता है। ईशान इन्द्र के आस्थान मण्डप के आगे जो मानस्तंभ है उसमें जो करण्डक हैं, उनमें ऐरावतक्षेत्र के तीर्थंकरों के वस्त्राभरण पाये जाते हैं। ईशान इन्द्र उन्हें ऐरावतक्षेत्र में ले जाता है। ऊपर जो सनत्कुमार युगल है, उसमें सनत्कुमार के मानस्तंभ में पूर्वविदेह के तीर्थंकरों के आभरण होते हैं और माहेन्द्र के मानस्तंभ में पश्चिम विदेह के तीर्थंकरों के आभरण पाये जाते हैं।** बाकी वह क्या है उसकी विस्तार से चर्चा है। अभी तो वह अपना विषय नहीं है। अपना विषय तो यहां भोगभूमि संबंधी है हम उसे देखेंगे।

तो पांचों मेरु संबंधी जो हमने अलग-अलग पांच विभाग देखें – एक तो जम्बूद्वीप; फिर धातकीखण्ड में एक पूर्व धातकी, एक पश्चिम धातकी, पुष्करार्ध में एक पूर्व पुष्करार्ध और एक पश्चिम पुष्करार्ध। इनमें हर एक में दो-दो जघन्य भोगभूमि, दो-दो मध्यम भोगभूमि और दो-दो उत्तम भोगभूमि होती हैं। भरत-ऐरावत तो हमने कल देखे थे। सब मिलकर पांच भरत और पांच ऐरावत हैं। अब जहां-जहां यह जघन्य, मध्यम या उत्तम भोगभूमि होती है, तो वहां कैसी परिस्थिति होती है? उसकी थोड़ी हम बात देखेंगे यहां, देखो, १५० पेज निकालना। यानी वहां की परिस्थिति कैसी होती है? उसकी हम थोड़ी चर्चा करेंगे। हमें तो वह काल का प्रकरण लेना है परंतु यदि भोगभूमि की बात करेंगे या जो कालों का परिवर्तन कहां कितना होता है उसकी बात करेंगे, तो वह बात अच्छी तरह से समझ में आ सकती है। देखो, दो नंबर का पॅरेग्राफ।

उत्तम भोगभूमि की उत्कृष्ट आयु तीन पल्य की होती है। पल्य समझते हैं न? यह अद्धापल्य है। एक हमने उद्धारपल्य देखा था। उसके पहले व्यवहारपल्य देखा था, जो वह गड्ढा करना, रोमखण्ड से भरना आदि विस्तार से देखा था। फिर जो था उद्धारपल्य जिसमें द्वीपों और समुद्रों की गिनती करते हैं और यह है अद्धापल्य, इसमें देव, नारकी, भोगभूमि के मनुष्य, तिर्यंचों के आयु की गिनती होती है। सागर कहो या पल्य कहो जहां हम आयु मापते हैं, कर्म की स्थिति मापते हैं, वहां यह अद्धापल्य या अद्धासागर की बात है। **उत्तम भोगभूमि की उत्कृष्ट आयु तीन पल्य की होती है।** उत्कृष्ट की बात है और वहां की जघन्य होगी – दो पल्य प्लस एक समय। **कुरुक्षेत्र यानी उत्तरकुरु और दक्षिणकुरु** उसीको देवकुरु भी कहते हैं, वहां **तो हमेशा ही उत्तम भोगभूमि होती है, परंतु भरत और ऐरावतक्षेत्रों में अवसर्पिणी के पहले काल में उत्तम भोगभूमि होती है।** अभी हमारा अवसर्पिणी काल चल रहा है; अवसर्पिणी यानी उतरता काल, उत्सर्पिणी यानी चढ़ता काल। अवसर्पिणी में किसमें-किसमें उतरता है? तो आयु कम होती चली जायेगी, शरीर की जो ऊंचाई-लंबाई कहेंगे वह कम होती चली जायेगी। इसतरह से उसको अवसर्पिणी कहेंगे। तो कहते हैं, **यह भरत और ऐरावत क्षेत्रों में अवसर्पिणी के पहले काल में उत्तम भोगभूमि होती है, जो चार कोड़ाकोड़ी सागर तक चलती है। पश्चात् यहीं पर मध्यम भोगभूमि होती है।** हमने अभी जम्बूद्वीप में क्या देखा? कहीं पर हमेशा ही उत्तम भोगभूमि होती है; कहीं पर हमेशा ही मध्यम भोगभूमि होती है और किसी क्षेत्र में हमेशा ही

जघन्य भोगभूमि होती है। भरत और ऐरावत क्षेत्र के आर्यखण्डों में क्या पोझिशन है? कि जब अवसर्पिणी का पहला काल होता है, तब वहां उत्तम भोगभूमि होती है। वह कितने लंबे काल तक चलती है? तो ४ कोड़ाकोड़ी सागर। कोड़ाकोड़ी का अर्थ देखा था, करोड़ गुणा करोड़ और सागर यानी १० कोड़ाकोड़ी पल्य का एक सागर होता है। तो इतने काल तक यहां उत्तम भोगभूमि चली है।

जब हम अवसर्पिणी कहते हैं उसमें क्रमशः आयु, शरीर की ऊंचाई एवं अवगाहना घटती जाती है। परंतु आहार तो बढ़ता जाता है। उत्तम भोगभूमि में शरीर की ऊंचाई ६००० धनुष यानी तीन कोस होती है। इतनी बड़ी अवगाहनावाले वहां होंगे। **वहां तीन दिन बीतने पर एक बार भोजन होता है। बदरीफल यानी छोटा बेर प्रमाण कल्पवृक्षों द्वारा दिया हुआ दिव्य आहार वहां के जीव ग्रहण करते हैं। मनुष्यों के शरीर का वर्ण उदय होते हुये सूर्य के समान होता है। शरीर की ऊंचाई एवं आयु घटते-घटते** क्योंकि शुरुआत में जितनी थी वह तो चार कोड़ाकोड़ी सागर में घटती चली जायेगी, तब जाकर वहां मध्यम भोगभूमि की शुरुआत होगी। तो **अंत में ४००० धनुष एवं दो पल्य होती है जो मध्यम भोगभूमि की उत्कृष्ट ऊंचाई एवं आयु होती है।** हम एक समय अधिक दो पल्य कहेंगे वह उत्तम भोगभूमि की जघन्य आयु है और एक्झॅक्टली दो पल्य कहेंगे वह मध्यम भोगभूमि की उत्कृष्ट आयु कहलायेगी। **यहां दो दिन के अंतराल से भोजन होता है जो अक्षफल** यानी **बेहड़ा प्रमाण होता है। मनुष्य संपूर्ण चन्द्रमा समान वर्णयुक्त होते हैं।**

दूसरे काल के अंत में तथा तीसरे काल के प्रारंभ में शरीर की ऊंचाई २००० धनुष और आयु एक पल्य प्रमाण होती है। यहां एक दिन के अंतराल से भोजन होता है, जो आवले प्रमाण होता है। इस काल में मनुष्य हरित श्याम वर्णयुक्त शरीरवाले होते हैं। तीनों भोगभूमि के जीव मल, मूत्रादि नीहार रहित होते हैं। उनके मल, मूत्र वगैरह नहीं होते, नीहार नहीं है। आहार थोडा है और नीहार नहीं है। नीहार समझतें हैं न? हां। **चौथे काल के आदि में यहां कर्मभूमि का प्रारंभ होता है।** हमने देखा था कि जहां हमने जम्बूद्वीप की बात की थी, यहां कहीं तो जघन्य भोगभूमि हमेशा है, कहीं मध्यम भोगभूमि हमेशा है और कहीं पर उत्तम भोगभूमि हमेशा है। तो जम्बूद्वीप में कर्मभूमि हमेशा

पायी जायेगी कि नहीं पायी जायेगी? *श्रोता: नहीं-नहीं, वहां कर्मभूमि हमेशा नहीं होगी।* विदेहक्षेत्र में क्या होगा? *श्रोता: विदेहक्षेत्र में तो हमेशा कर्मभूमि होगी।* वही तो पूछ रहे हैं हम, जम्बूद्वीप में ही बात पूछ रहे हैं। जम्बूद्वीप में कहीं पर कॉन्स्टन्ट जघन्य भोगभूमि है, कहीं पर कॉन्स्टन्ट मध्यम भोगभूमि भी है, कहीं पर कॉन्स्टन्ट उत्तम भोगभूमि भी है, तो कॉन्स्टन्ट कर्मभूमि है कि नहीं है? यह अपना प्रश्न था। हां, हां? अभी है, है। विदेहक्षेत्र में तो हमेशा कर्मभूमि पायी जायेगी यानी हमारे यहां जो चौथा काल है, वहां वैसा हमेशा ही चौथा काल होगा।

श्रोता: विद्याधर होते हैं कर्मभूमि में? विद्याधर भी कर्मभूमि में होते है। यानी विद्याधरों के जो क्षेत्र हैं वहां पर भी, विद्याधर भी कर्मभूमि के ही जीव हैं क्योंकि विद्याधर भी उसी पर्याय में मुनि होकर मोक्ष जा सकते हैं। *श्रोता: विदेहक्षेत्र में भी चढ़ता-उतरता काल रहेगा?* नहीं वहां तो कॉन्स्टन्ट वही है। एक करोड़ पूर्व की आयु है। वहां कोई वधघट नहीं है। जो हमारे में कोई ऊंचा-लंबा है, कोई छोटा है, तो कोई आयु थोड़ी कम-ज्यादा है वैसी हो सकती है, परंतु वहां चौथा काल तो हमेशा रहेगा। *श्रोता: और कर्मभूमि हमेशा रहेगी?* कर्मभूमि हमेशा रहेगी। *श्रोता: प्रत्येक विदेह में?* प्रत्येक विदेह में। हमेशा ही, १६० विदेहों में। *श्रोता: १६० में? मतलब की क्या विदेहक्षेत्र के म्लेच्छखण्डों में जैसे चौथे काल के शुरुआत से अंत तक का ऐसा परिवर्तन नहीं होगा?* हमारे यहां – यानी भरतक्षेत्र के म्लेच्छखण्डों में चौथे काल के आदि से अंत तक जैसा परिवर्तन होता है परंतु वहां विदेहक्षेत्र में आदि-अंत की कोई बात ही नहीं है। *श्रोता: विद्याधरों में भी ऐसा ही है?* विद्याधरों में भी होगा, परंतु विदेहक्षेत्र में तो हमेशा कॉन्स्टन्ट है। विदेहक्षेत्र में चौथा काल हमेशा ही है और उसमें परिवर्तन नहीं होते हैं। हां। *श्रोता: स्वयंभूरमण समुद्र के वहां जो है?* स्वयंभूरमण समुद्र के वहां तो कर्मभूमि है। *श्रोता: कौनसी? पंचम कालवाली?* पंचम कालवाली बताते हैं।

अभी यहां हम पढ़ेंगे १५० पेज पर लास्ट लाइन, **चौथे काल के आदि में यहां कर्मभूमि का प्रारंभ होता है। जहां शरीर की ऊंचाई ५०० धनुष एवं आयु एक करोड़ पूर्व की होती है। दिन में एक बार आहार होता है और शरीर पांचों वर्ण युक्त होते हैं। आयु घटते-घटते अंत में एक सौ बीस वर्ष प्रमाण एवं ऊंचाई सात हाथ**

प्रमाण होती है जो पंचम काल के प्रारंभ में उत्कृष्ट का प्रमाण होता है। पंचम काल के अंत में दो हाथ प्रमाण ऊंचाई और बीस वर्ष प्रमाण आयु रह जाती है। यानी अभी आगे-आगे ऐसे ही होगा, घटती चली जायेगी। **छठवें काल के अंत में ऊंचाई एक हाथ प्रमाण और आयु पंद्रह वर्ष प्रमाण होती है। पंचम काल में शरीर कांतिहीन, रूक्ष, मिश्र वर्णवाला होता है, जीव बहुत बार आहार ग्रहण करता है।** इससे तो हम परिचित हैं। **छठवें काल में शरीर धुओं जैसा श्याम वर्णवाला होता है, जीव अति प्रचुर वृत्ति से बारंबार आहार करता है** और भी बहुत सारी बातें बतायी हैं, थोड़ी पढ़ लेते हैं देखो; **भोगभूमि के जीव मंद कषायी होते हैं। वहां दस प्रकार के कल्पवृक्ष होते हैं।** भोगभूमि में मात्र स्त्री और पुरुष ही होते हैं, वहां कोई भी नपुंसकवेदी नहीं हैं – न भाव से, न द्रव्य से। वहां के जीव जो मिथ्यात्व अवस्था में मरकर आये हैं, वे अपर्याप्त अवस्था में भले मनुष्यगति बांधे, तिर्यंचगति बांधे, पर्याप्त होने पर पल्यों प्रमाण जितनी आयु है, उतने काल तक निरंतर देवगति का ही बंध करते हैं। आयु के अंतिम ६ महीने बाकी हैं तब जाकर उनके आयु का बंध हो सकता है; देवायु बांधकर सभी देव में ही जायेंगे। सारे ही मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक में जायेंगे और यहां के सारे ही सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान में चले जायेंगे। यह नियम है भोगभूमि के लिये।

श्रोता: देवगति का ये बंध करते हैं तो सदाकाल ही बांधते हैं? हां, क्योंकि वहां शुभ लेश्या ही होती है उनके, अपर्याप्त अवस्था में कापोतलेश्या में जन्म लेंगे परंतु यह बाद में तो शुभ लेश्या ही होती है कंटिन्युअसलि – पीत, पद्म, शुक्ल में से ही होती रहती है। *श्रोता: भोगभूमि में विकलत्रय जीव होते हैं?* भोगभूमि में विकलत्रय नहीं होते। *श्रोता: संज्ञी पंचेन्द्रिय?* संज्ञी पंचेन्द्रिय होते हैं। असंज्ञी भी नहीं होते, संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच होंगे या मनुष्य होंगे।

वहां तो दस प्रकार के कल्पवृक्ष होते हैं। **तूर्यांग नाम के कल्पवृक्ष से वाद्य, पात्रांग से पात्र मिलते हैं, भूषणांग से आभूषण मिलते हैं, पानांग से पीने की चीज़ें, आहारांग से आहार, पुष्पांग से पुष्प, ज्योतिरंग से प्रकाश प्राप्त होता है। गृहांग से मंदिर अर्थात गृह-महल प्राप्त होते हैं, वस्त्रांग से वस्त्र और दीपांग से दीपक मिलते हैं।** अब भोगभूमि का स्वरूप देखेंगे, **भोगभूमि दर्पण के समान मणिमय होती है और चार**

अंगुल प्रमाण ऊंचे उत्तम रस और गंधयुक्त कोमल तृणों से संयुक्त होती है। दूध या मिष्ट रस या जल या मधुसमान रस या घृत से पूर्ण ऐसी बावड़ी या सरोवरों से यह भोगभूमि व्याप्त होती है।

यहां माता के गर्भ से युगपत् स्त्री-पुरुष का जोड़ा याने युगल उत्पन्न होता है, इसलिये उन्हें जुगलिया या युगलिया कहते हैं। इनका जन्म होते ही माता-पिता दोनों मर जाते हैं। पुत्र का मुंह नहीं देखते हैं, हां। **तो क्या माता-पिता के बिना ही बड़े होते हैं?** हां! तो कहते हैं, **हां! हम मानते हैं कि हमारे बिना हमारे बच्चों का क्या होगा? यहां तो लोग पुत्रमोह में अंधे होकर बड़े से बड़े पाप भी करते हैं। कमाते भी हैं बच्चों के लिये। अपने लिये तो इसको खाने की भी फुरसत नहीं है। सब यहीं छोड़कर जाना है फिर भी पैसे कमाने के लिये क्या-क्या पाप नहीं करते?** देखो, **संस्कृत में एक श्लोक है कि यदि** तेरा पुत्र सुपुत्र होगा तो उसके लिये क्यों कमाते हो? वह स्वयं कमाकर खायेगा और कुपुत्र होगा तो उसके लिये क्यों कमाते हो? आप कितनी भी कमाई करेंगे उसे तो वह सब उसके व्यसनों में और खोटी आदतों में ही गंवा देगा। सुपुत्र होगा तो उसके लिये धन कमाकर रखने की क्या आवश्यकता है? **सुपुत्र स्वयं काबिल है, कमाकर खायेगा और कुपुत्र है तो उसके लिये क्यों छोड़ रहे हो? वह तो सारा गंवानेवाला है।** परंतु पैसे के पीछे आपने जो पाप किये हैं उसका फल तो आप स्वयं भोगोगे। **भोगभूमि में युगल जन्मते हैं। जन्म से सात दिन तक अपना अंगूठा चूसते हैं, आगे सात दिन तक ऊंचे-नीचे होते हैं अर्थात् पेट के बल भूमि पर ऊंचे-नीचे होते हैं – रेंगते हैं, फिर सात दिन लड़खड़ाते हुये चलते हैं, फिर सात दिन में स्थिररूप अच्छे से चलने लगते हैं, फिर सात दिन में कला गुण ग्रहण करते हैं, फिर सात दिन में यौवन अवस्था प्राप्त करते हैं, पश्चात् सात दिन में परस्पर दर्शन का ग्रहण होना होता है। इसतरह उनचास दिनों में संपूर्णता होती है।**

श्रोता: यह उत्तम भोगभूमि का बताया है? यह उत्तम भोगभूमि में बताया है। मेरे ख्याल से हमने कहां 'सागार धर्मामृत' में पढ़ा कि मध्यम भोगभूमि में इसका प्रमाण कम है और जघन्य में इससे भी कम है। **इस दम्पत्ति यानी स्त्री-पुरुष युगल में दोनों के वज्रवृषभनाराच संहनन होता है।** देखो, अन्यत्र कहीं भी स्त्रियों के वज्रवृषभनाराच संहनन नहीं है, परंतु भोगभूमि की स्त्रियों में है। **इनके समचतुरस्र संस्थान होता है, ये मंद**

कषायी होते हैं इसलिये इन्हें आर्य कहते हैं। पंचेन्द्रिय के विषय इन्हें अत्यंत सुलभता से प्राप्त होते हैं तो भी उनसे तृप्ति नहीं होती, विषयों से अरुचि नहीं होती। देखो, यहां सम्यक्त्व तो प्राप्त कर सकते हैं, चौथे गुणस्थान के ऊपर नहीं जा सकते। **आयु के अंत में पुरुष छिंक से और स्त्री जंभाई से मरण प्राप्त कर शरदकालीन मेघवत् उनके शरीर का विलय हो जाता है, शरीर का अंश भी पड़ा नहीं रहता।**

श्रोता: शरीर तो औदारिक ही है उनके भी? हां, औदारिक शरीर है उनके भी। इनको असंख्यात वर्षायुष्क कहते हैं, परंतु इनमें भी जघन्य भोगभूमि की मिनिमम आयु तो करोड़ पूर्व प्लस एक समय होगी, इनका कदलीघात से मरण नहीं होता। वे जितनी भुज्यमान आयु लेकर आये हैं उतनी पूरी भोगेंगे। जैसे देवों में, नारकियों में कदलीघात से मरण नहीं होता, जिसको हम अकालमरण कहते हैं, वैसे भोगभूमि में भी अकालमरण कहो या कदलीघात से मरण नहीं होता। *श्रोता: भोगभूमि में सम्यग्दर्शन किसकी देशना से होता है?* भोगभूमि में सम्यग्दर्शन किसकी देशना से? देखो, क्षायिक सम्यग्दृष्टि मरकर भोगभूमि में जन्म ले सकते हैं, जिसने पूर्व में पहले मनुष्यायु या तिर्यंचायु बांधी है। अभी तिर्यंच तो देशना नहीं देंगे परंतु नियम बता रही हूं; जो सम्यक्त्व के साथ भोगभूमि में जन्म लेनेवाले जीव हैं वे नियम से क्षायिक सम्यग्दृष्टि होने चाहिये, कृतकृत्यवेदक भी वहां जन्म लेते हैं क्योंकि वे अंतर्मुहूर्त में क्षायिक सम्यग्दृष्टि होनेवाले हैं। तो ये कौनसे जीव हैं? जिन्हें पूर्व में – सम्यग्दर्शन होने के पहले; जिन्होंने मनुष्यायु बांधी है क्योंकि सम्यग्दर्शन होने के बाद यदि आयु बंधती है तो देव की बंधेगी। इसलिये जिन्होंने पहले मनुष्यायु बांधी है या तिर्यंचायु बांधी है, बाद में जिन्होंने सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है तो वे जीव यदि क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त करते हैं तो ही सम्यक्त्व के साथ मरकर भोगभूमि में जा सकते हैं। जो क्षायिक नहीं है ऑर्डिनरि क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि है वह सम्यक्त्व लेकर मनुष्य में से मरकर वहां का मनुष्य नहीं होगा। *श्रोता: उसका सम्यक्त्व छूट जायेगा, नियम से?* छूट जायेगा। *श्रोता: तो वह फिर विदेहक्षेत्र इत्यादि में जन्म ले लेगा, मनुष्य बनकर?* कितनी आयु बांधी है उस पर वह निर्भर है। अगर पल्यों की आयु बांधी होगी – मनुष्यायु, तो भोगभूमि का ही मनुष्य होगा, मिथ्यादृष्टि; भोगभूमि का ही होगा, अभी उसके नियम थोड़े अलग हैं। *श्रोता: भोगभूमि में तिर्यंच, सिंह आदि होंगे?* हां, भोगभूमि के तिर्यंच, सिंह वे भी मंद कषायी होते हैं और वे भी मांसाहारी नहीं होते। यह कुलकर के प्रकरण में लिखा है, मैं आपको आगे बताऊंगी।

यह तो हमने देखा था न यहां आयु का घात यानी कदलीघात नहीं होता। हमारे यहां भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में एक के बाद दूसरा काल आता है न? पहले उत्तम भोगभूमि थी यहां पर, देखो, उसके नाम भी बोर्ड पर लिखे हैं। उत्तम भोगभूमि थी जिसको हम पहला काल कहते हैं, उसका नाम क्या है? सुषमा-सुषमा; इसीको सुखमा-सुखमा भी कहते हैं; ये दोनों बातें एक ही हैं। यहीं पर मध्यम भोगभूमि शुरू हुयी। ४ कोड़ाकोड़ी सागर तक उत्तम भोगभूमि रही, यह अवसर्पिणी की बात चल रही है। फिर ४ कोड़ाकोड़ी सागर के बाद यहीं पर सुषमा जो काल है; उसको सुखमा काल भी कहेंगे यानी यहां मध्यम भोगभूमि की शुरुआत होती है और वह कितने काल तक रहती है? तो ३ कोड़ाकोड़ी सागर काल तक। ३ कोड़ाकोड़ी सागर होने के बाद यहीं पर जघन्य भोगभूमि शुरू होती है। अभी यहां उस काल का नाम है सुषमा-दुषमा। तो सुषमा-दुषमा काल शुरू होता है तो वह २ कोड़ाकोड़ी सागर तक चलता है। उसके बाद क्या होता है? चौथा काल शुरू होता है जिसे हम कर्मभूमि कहेंगे, दुषमा-सुषमा इसका नाम है, दुखमा-सुखमा। वह कितने काल तक चलेगा? तो देखो चौथा, पांचवां और छठा सबका मिलाकर १ कोड़ाकोड़ी सागर होगा। उसमें से पांचवां और छठा २१००० और २१००० वर्ष के हैं, इसलिये १ कोड़ाकोड़ी सागर में से ४२००० वर्ष कम करेंगे, इतना तो चौथा काल है। हमारे जो चौबीस तीर्थंकर हैं वे इस चौथे काल में एक के बाद एक हुये हैं और जब हम विदेह के बीस कहते हैं तो वे ॲट अ टाइम, अन्य-अन्य बीस जगह के मिलकर बीस हैं। समझ रहे हैं न? हमारे चौबीस तीर्थंकर पहले वृषभदेव हुये। फिर कितने ही काल जाने के बाद अजितनाथ हुये। इसतरह से एक के बाद एक होते हैं और विदेह में ये मिनिमम बीस तो एक साथ हैं अभी, कभी-कभी बीच में उससे अधिक संख्या होती है।

श्रोता: वृषभदेव भगवान तीसरे काल में मोक्ष चले गये थे? सभी विद्वान कहते हैं कि हुंडाअवसर्पिणी में तीसरे काल में ही मोक्ष चले गये क्योंकि तीसरे काल के २ कोड़ाकोड़ी सागर अभी पूरे नहीं हुये थे। अब मैं इस विषय में कुछ तथ्य – कुछ पॉइंट्स बताती हूं आप उस पर विचार करना। क्या तब यहां जघन्य भोगभूमि थी? विचार करना। भोगभूमि की आयु का बंध तो मिथ्यादृष्टि मनुष्य और तिर्यंच के ही होता है। वृषभदेव तो सर्वार्थसिद्धि के देव थे जो सम्यग्दृष्टि ही होते हैं। कोई भी सम्यग्दृष्टि देव मरकर कर्मभूमि में जहां चौथा काल चलता है वहीं पर उत्पन्न होते हैं। जघन्य भोगभूमि की जघन्य आयु करोड़ पूर्व प्लस

एक समय है जब कि वृषभदेव की आयु ८४ लाख पूर्व की थी। भोगभूमि में जुगलिया उत्पन्न होते हैं और वे जुगलिया को ही जन्म देते हैं, वृषभदेव ना जुगलिया थे, उनके तो सौ पुत्र और दो कन्यायें थी। वृषभदेव को केवलज्ञान हुआ तब भरतजी को चक्ररत्न प्राप्त हुआ, ६०,००० वर्ष तक वे छह खण्ड जीतने के लिये गये। तो भोगभूमि में चक्रवर्ती होते हैं मानना पड़ेगा और म्लेच्छखण्ड की स्त्रियों को शादी करके भोगभूमि में कैसे लेकर आये? भोगभूमि के जीवों को चौथे गुणस्थान के ऊपर के गुणस्थान हो नहीं सकते और वृषभदेव के सहित कितने ही मोक्ष भी चले गये? उनके वृषभसेन गणधर, बाहुबली आदि तो उनके पहले मोक्ष गये थे। आप स्वयं सोचोगे तो और भी अनेक बिंदुओं के द्वारा यह बात आपके ख्याल में आयेगी कि ये सब बातें कर्मभूमि की ही हैं, जिसे हम चौथा काल कहते हैं।

इस पांचवें काल का नाम है – दुषमा; जो अभी हमारा चल रहा है पंचम काल; वह है २१००० वर्ष का और दुषमा-दुषमा नाम का छठा काल है तो वह है २१००० वर्ष का। इसके बाद क्या होगा? यह तो अवसर्पिणी हुयी। अवसर्पिणी कितने काल की हो गयी? पूरी टोटल? ४ और ३ और २ और १ ये सब मिलकर १० कोड़ाकोड़ी सागर की। अब जब छठा काल पूरा होगा तो क्या होगा? उलटे क्रम से ऊपर चले जायेंगे; तो वहां पहले में पहले दुषमा-दुषमा होगा, फिर दुषमा होगा, फिर दुषमा-सुषमा शुरू होगा तब पहले तीर्थंकर होंगे। अभी जो श्रेणिकराजा वर्तमान में नरक में है तो वे जाकर प्रथम तीर्थंकर यानी मनुष्यभव में उत्पन्न होकर वे तीर्थंकर होंगे। उलटे क्रम से वहां चलेंगे फिर जाकर वहां तीसरा काल होगा, फिर वहां दूसरा काल होगा, फिर पहला काल होगा। *श्रोता: भोगभूमि में कन्फ्र्ट हो जायेगा?* हां भोगभूमि में। तो १० कोड़ाकोड़ी सागर का अवसर्पिणी काल और १० कोड़ाकोड़ी सागर का उत्सर्पिणी काल होता है। अब मेरा प्रश्न है हमारे यहां भरतभूमि में आदिनाथ तीर्थंकर हमारे प्रथम तीर्थंकर हैं तो कितने काल के बाद यहां तीर्थंकर हुये? *श्रोता: १८ कोड़ाकोड़ी सागर।* १८ कोड़ाकोड़ी सागर के पश्चात् क्योंकि उत्सर्पिणी के इस चौथे काल में जो अंतिम तीर्थंकर हुये होंगे चौबीसवें, उसके बाद यह पूरा २ कोड़ाकोड़ी सागर, ३ कोड़ाकोड़ी सागर, ४ कोड़ाकोड़ी सागर और फिर उतरते हुये भी उतने ही सब यानी कुल १८ कोड़ाकोड़ी सागर के बाद यहां पर तीर्थंकर हुये, आदिनाथ तीर्थंकर हुये। *श्रोता: मायनस चौरासी लाख पूर्व?* अभी वह तो करीबन बता

दिया, वह तो बिलकुल नगन्य की बात है उसके सामने। यह हम तो साधारण हिसाब बता रहे हैं। तब तक तो यहां की लोकसंख्या उतनी की उतनी थी। जुगलिया जन्मते थे और मां-बाप मरते थे। वहां कोई फॅमिली प्लॅनिंग की समस्या नहीं थी।

श्रोता: ये तीनों में कौनसी भूमि होगी? चौथे, पांचवें और छठे इन तीनों कालों में, इन तीनों में ही कर्मभूमि होगी, परंतु यह देखो, यहां तीसरे काल तक तो चौथे गुणस्थान तक के ही जीव थे; पहले से चौथे गुणस्थान तक, यहां चौथे काल से जीवों का मोक्षगमन शुरू हुआ और नरक में जाना भी यहीं से शुरू हुआ क्योंकि भोगभूमि से तो मरकर सभी देव में जाते थे तो नरक का दरवाजा भी खुला और मोक्ष का दरवाजा भी खुला। *श्रोता: अभी उत्सर्पिणी में कुलकर कब होंगे?* उत्सर्पिणी के पांचवें काल में; यानी हमारी अपेक्षा से पांचवां काल और उत्सर्पिणी की अपेक्षा से दूसरा काल। अभी कुलकर क्या है? जरा देख लेते हैं। *श्रोता: अब जो काल आयेगा उसमें धर्म अभी जैसा रहेगा?* अभी जैसा नहीं रहेगा। देखो, अभी हम देखते हैं आगे कि पहले-दूसरे-तीसरे काल में तो भोगभूमि से सब संपन्न होता था; कोई समस्या ही नहीं थी – कोई कमाने की, धमाने की, न कोई काम करने की समस्या थी; सब कुछ आराम से मिलता था और भोगों में जीव रमा रहता था। अब यहां तो तीसरे काल का अंत होने लगा यानी कुछ भौगोलिक परिस्थितियां भी चेंज होने लगी, बदलने लगी। यहीं पर कर्मभूमि उत्पन्न होनेवाली है; भोगभूमि से कर्मभूमि में कन्व्हर्ट होनेवाली है, हां।

श्रोता: जम्बूद्वीप में खाली आर्यक्षेत्र में ऐसा होता है या और किधर-किधर ऐसा होता है जो भोगभूमि-कर्मभूमि में बदल जायेगी? आपका प्रश्न है यह कालों का जो परिवर्तन है वह और कहां होता है? पांचों भरतक्षेत्रों में यानी उनके आर्यखण्डों में और पांचों ऐरावतक्षेत्रों के भी आर्यखण्डों में ऐसा ही कालों का परिवर्तन होता रहता है। *श्रोता: शिक्षा ग्रहण करने के लिये क्या स्कूल-कॉलेज होते हैं? वहां कौन देशना देता है?* वह आपका प्रश्न था न कि कौन वहां देशना देता है? जैसे वहां क्षायिक सम्यग्दृष्टि उत्पन्न होते हैं और वहां कितनों को जातिस्मरण भी होता है, अवधिज्ञान भी होता है; तो वे देशना भी देते हैं वहां के जीवों को। वहां जब भोगभूमि समाप्त होने को आती है तो ऐसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि, जातिस्मरणवाले ही वहां लोगों को सिखाते हैं कि कैसे जीवन-यापन करना है; उसीको हम यहां देखेंगे; वे

कुलकरों के रूप में वहां उत्पन्न होंगे। कर्मभूमि के चारणऋद्धिधारी मुनिराज भी हो सकते हैं कि गमन करके वहां चले गये हो, वहां उपदेश दे सकते हैं; कोई देव मुनिराजों को पटककर विदेह में से वहां डाल देगा तो वहां से मोक्ष भी जा सकते हैं। पृष्ठ १५३ पर देखना, यह कुलकर क्या होते हैं? उसको देखेंगे।

कहां कौनसी भोगभूमि हमेशा होती है हमने देखा ही है। भरत, ऐरावत में भी छह कालों के परिवर्तन में तीनों भोगभूमिरूप परिवर्तन यहां होता है उसकी भी चर्चा की थी। जब यहां अवसर्पिणी का तृतीय काल अर्थात् जघन्य भोगभूमि समाप्त होने का काल नजदीक आता है अर्थात् तृतीय काल में से पल्य का आठवां भाग शेष रहता है तब क्रम से चौदह कुलकर उत्पन्न होते हैं। एक कुलकर के बाद कुछ काल बाद दूसरा कुलकर हुआ, कुछ काल के बाद तीसरा हुआ। **यहां तीसरे काल में हुये कुलकरों के नाम इसप्रकार हैं** – अभी वे चौदह नाम बताये हैं **प्रतिश्रुति, सन्मति, क्षेमंकर, क्षेमंधर, सीमंकर, सीमंधर, विमलवाहन, चक्षुष्मान, यशस्वी, अभिचंद्र, चंद्राभ, मरुद्देव, प्रसेनजित और नाभि।** नाभि मालूम है नाम? *श्रोता: नाभिराय, वृषभसेन के पिता।* **नाभि कुलकर के पुत्र वृषभदेव प्रथम तीर्थंकर हुये जिन्हें हम आदिनाथ भी कहते हैं।** अभी यहां क्यों उत्पन्न होते हैं जीव? यह क्या है? तो **समीचीन पात्र अर्थात् सुपात्र को दान देने के पुण्य परिणाम से जिन्होंने पहले मनुष्यायु बांधी हो** यानी वह मिथ्यात्व अवस्था की बात है, जाहिर है। **पश्चात् सम्यग्दृष्टि होकर जिन्होंने क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया हो ऐसे जीव कुलकर होकर यहां भोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। अन्य भी जो वहां सम्यक्त्व के साथ जन्म लेते हैं वे क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही होने चाहिये। बाकी तो वहां मिथ्यात्व और सासादन के साथ जन्म लेनेवाले भी बहुत सारे जीव होते हैं।**

हां, क्योंकि मेजॉरिटी तो वहां मिथ्यादृष्टि उत्पन्न होंगे। सासादनवाले भी जा सकते हैं क्योंकि वह तो सम्यक्त्व छूट गया है न उनका? सम्यक्त्व छूट गया है और मनुष्यायु पहले बांधी है तो यहां उत्पन्न हो सकते हैं। *श्रोता: सासादन से सीधे मिथ्यात्व में चले जायेंगे?* सासादन से तो मिथ्यात्व में ही चले जायेंगे अल्पकाल में। **सम्यक्त्व सहित जन्म लेनेवालों के लिये यह क्षायिक की या क्षायिक का प्रारंभ हो चुका है ऐसे कृतकृत्यवेदकपने की**

शर्त यानी कंडिशन है। **इन कुलकरों को क्षत्रिय कुल में उपजते हैं ऐसा कहते हैं** क्या कहा? वहां तो कोई कुल की बात नहीं थी पहले से, तो क्षत्रिय क्यों कहते हैं? कुलकर भी क्षत्रिय कुल में उत्पन्न हुये ऐसा कहने में आता है, क्यों? **चूंकि तब कोई कुलादि की प्रवृत्ति तो नहीं थी परंतु इनके कुल में भविष्य में क्षत्रिय होंगे** आगे चलकर क्षत्रिय इनके कुल में उत्पन्न होंगे **इसलिये उपचार से इनको भी क्षत्रिय कुलोत्पन्न कहने में आता है। इन कुलकरों में कितने ही जातिस्मरण सहित होते हैं, कितने ही अवधिज्ञान सहित होते हैं।** तभी तो वहां पर भौगोलिक जो कुछ प्रतिकूलतायें बनेगी उसके लिये वहां लोगों को बराबर वे आगाह भी करेंगे, उनका भय भी दूर करेंगे।

प्रारंभ के कुलकरों की आयु भी बड़ी होती है जैसे पहले कुलकर की पल्य के दसवें भागप्रमाण आयु थी। पहले दो कुलकरों के बीच में अंतराल भी बड़ा होता है जैसे पहले कुलकर के मरने के पश्चात् पल्य के अस्सीवें भागप्रमाण काल बीत जानेपर दूसरा कुलकर उत्पन्न हुआ था। इनको कुलकर क्यों कहते हैं पता है? अभी तक तो भोगभूमि थी, कुछ कमाना-धमाना तो था नहीं, जीव भी भद्र परिणामी – भले परिणामवाले थे। कल्पवृक्षों से सारी जरूरियातें पूरी होती थी। यहां से आगे कर्मभूमि की शुरुआत होनेवाली है तो जीवों के अनेक समस्यायें उत्पन्न होने लगती हैं, कुलकर उन समस्याओं का निवारण करते हैं, बदलती हुयी परिस्थितियों में जीवन यापन कैसे करना आदि का उपदेश देते हैं। पहले कुलकर के समय ज्योतिरंग कल्पवृक्षों का प्रकाश मंद होने लगा क्योंकि कल्पवृक्षों से प्रकाश था तभी, चंद्र, सूर्य नहीं थे वह बात नहीं है परंतु उनके आगे इनका प्रकाश ज्यादा था **तो सूर्य, चंद्र दिखने लगे। वे तो पहले भी विद्यमान थे परंतु कल्पवृक्षों के प्रकाश के कारण दिखते नहीं थे। लोग उसे आपत्ति समझकर भयभीत होने लगे, पहले कुलकर ने उन्हें समझाकर उनके भय का निवारण किया। दूसरे कुलकर ने तारे दिखने से उत्पन्न हुये भय का निवारण किया। फिर सिंह आदि जीवों में क्रूरता आने लगी**; यह आपका प्रश्न था न? पहले क्रूरता नहीं थी।

उनसे बचने का उपाय तीसरे कुलकर ने बताया और लोगों के भय का निवारण किया। सिंहादिक पशु अधिक क्रूर बने उनके दंडादि का उपाय करके चौथे

कुलकर ने लोगों के भय का निवारण किया। उसके पश्चात् कल्पवृक्ष अल्प फल देने लगे तब प्रजा में परस्पर कलह होने लगा। जब तक सब प्राप्त होता था तो कोई कलह का प्रसंग नहीं था, **तब पांचवें कुलकर ने सीमा बांधकर प्रजा को अपनी-अपनी सीमा में रहने का उपदेश दिया। पश्चात् कल्पवृक्ष अतिमंद होने लगे, प्रजा में उस मर्यादा में भी झगड़े होने लगे तब छठवें कुलकर ने चिन्हादि द्वारा उस मर्यादा को दृढ़ किया।** जैसे यह महाराष्ट्र है, यह गुजरात है ऐसी बॉर्डर्स बनाते हैं न हम। **सातवें कुलकर ने गमन करने के लिये घोड़ा आदि वाहन का उपयोग किया। आठवें कुलकर के समय बालकों का जन्म होने के पश्चात् भी कुछ काल तक माता-पिता जीवित रहने लगे, तब कुलकर ने बालकों का मुख देखने से उत्पन्न हुये भय को दूर किया।** उस बालक का क्या करना? कैसे हॅण्डल करना है उसको? **उसके बाद नौवें कुलकर के समय बालक जन्मने के पश्चात् अधिक काल तक माता-पिता जीवित रहने लगे तब उस नौवें कुलकर ने बालकों को आशीर्वाद देना सिखाया। माता-पिता और अधिक काल जीवित रहने लगे तब दसवें कुलकर ने बालकों को चन्द्रमा दिखाना आदि केलि-क्रीडायें सिखायी।** यानी उनको किसतरह से खेलना आदि सिखाना, **उसके पश्चात् बहुत अधिक काल तक माता-पिता जीवित रहने लगे तब ग्यारहवें कुलकर ने प्रजा के इस भय को दूर किया। बारहवें कुलकर के समय जलवृष्टि-मेघवृष्टि होने से नदी, जलाशय हुये तब तिरने का उपाय बताया, जहाज, नाव आदि बनाने का – प्रयोग में लाने का विधान बताया। तेरहवें कुलकर के समय जरायु सहित बालक जन्मने लगे,** उसके पहले नहीं। जन्मते समय बालक के ऊपर मेम्ब्रेन होता है न? उसको जरायु कहते हैं। **तब उस कुलकर ने जरायु का छेदन करना सिखाया। प्रसूतिशास्त्र तब से शुरू हुआ लगता है।** ऑब्स्टेट्रिशन्स तब से हो गये।

श्रोता: उससे पहले जो देह होती थी वह बादलों में उसका विलय हो जाता था? हां, देह का विलय हो जाता था, बादलों में नहीं, बादलों जैसा। **यह जरायु क्या है पता है? जब बालक जन्मता है तो उसके ऊपर पतला आवरण होता है – मेम्ब्रेन होता है जिसके अंदर ॲम्नीयाटिक फ्लूइड होता है जिसमें बालक होता है। उसके बाद नाल सहित** यानी **अम्बिलिकल कॉर्ड सहित बालक जन्मने लगे। नाभि से जुड़ी यह नाल छेदने को चौदहवें कुलकर ने सिखाया। इसका नाम नाभिराय था।** *श्रोता: इसका*

मतलब मेडिकल नॉलेज तब से है? हां तब से है, हां। वही तो मैंने कहा ऑब्स्टेट्रिशन्स जो हैं प्रसूतिशास्त्र में विशारद, तब से उन्होंने सिखाया – प्रसूति वगैरह कैसे करना।

उनके काल में इन्द्रधनुष, बिजली का चमकना आदि होने लगे उनको देखने से उत्पन्न हुआ प्रजा का भय इस चौदहवें कुलकर ने दूर किया। वृक्षों के फलों में यह औषधि है, यह भोजनयोग्य है आदि सिखाया। इसके पश्चात् कर्मभूमि की शुरुआत हुयी। ग्राम, नगर, पत्तन आदि की रचना, लौकिक कार्य संबंधी शास्त्र, असि, मसि, कृषि, विद्या, शिल्प, वाणिज्य आदि लौकिक व्यवहार, जिसको षट्कर्म भी कहते हैं हम, वे गृहस्थ के षट्कर्म अलग; **आजीविका कैसे करनी, आचरण कैसे करना, दया है मूल जिसका ऐसा धर्म ये सभी बातें आदिब्रह्मा अर्थात् नाभिराय के पुत्र श्री वृषभदेव ने सिखायी। वे ही इस भरतक्षेत्र के इस अवसर्पिणी के प्रथम तीर्थंकर हुये।** तब वहां तो जीव बहुत भद्र परिणामी थे। तो **पहले पांच कुलकर अपराधी को 'हा' ऐसा वचन बोलकर दंड देते थे।** 'हा' यानी निषेध करते थे। **उस समय जीव भद्र परिणामी थे, उन्हें डांटने की भी आवश्यकता नहीं होती थी। 'हा' का अर्थ 'हाय, यह बुरा किया' – यही उनके अपराध का दंड था, उसीसे वे गलत काम छोड़ देते थे। उसके पश्चात् पांच कुलकर 'हा मा' कहकर दंड देते थे अर्थात 'हाय बुरा किया, मत करना'। उसके पश्चात् वृषभदेव सहित पांच कुलकर 'हा मा धिक्' कहकर दंड देते थे अर्थात् 'बुरा किया, मत करो, धिक्कार है तुम्हे'।** आज के लोग ऐसा कहने से थोड़े ही माननेवाले हैं! अब ये तो हमने काल संबंधी बातें देखी थी और भी अब इनकी कुछ विशेषतायें देखकर हमको कालपरावर्तन की चर्चा शुरू करनी है। कालपरावर्तन के लिये यह कुछ यथायोग्य जानकर इसकी हमने चर्चा की। जैसे यह भोगभूमि होती है न, वैसे कुभोगभूमि भी होती है। सुना है कभी, नहीं सुना? अच्छा थोड़ा सुनेंगे फिर हम आगे बढ़ेंगे। अभी नहीं, दूसरे लेक्चर में।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२६. कुभोगभूमि

षट्खण्डागम के आधार से काल अनुयोगद्वार की हम चर्चा कर रहे हैं, उसमें पांच परावर्तनों का स्वरूप हम देख रहे हैं। द्रव्यपरावर्तन और क्षेत्रपरावर्तन की अपनी बात पूर्ण हुयी है और यहां कालपरावर्तन को देखना हमने शुरू किया था। कालपरावर्तन की हमने डेफिनिशन, उसकी परिभाषा नहीं देखी है, परंतु उसके पहले यह कालपरावर्तन में अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी के संबंध में यह जो बात आयी थी जिसको पूरा मिलकर एक कल्पकाल कहने में आता है; अवसर्पिणी के दस कोड़ाकोड़ी सागर और उत्सर्पिणी के दस कोड़ाकोड़ी सागर मिलकर बीस कोड़ाकोड़ी सागर का एक कल्पकाल होता है, उस कल्पकाल की यहां बात चलेगी।

उसके पहले हम भोगभूमि का स्वरूप देख रहे थे; भोगभूमि तो हमने देखी, जघन्य, मध्यम और उत्तम; परंतु कुभोगभूमि भी होती है, वह तो नहीं सुनी थी कितने ही लोगों ने। तो वह क्या होती है, और कहां होती है, उसमें कौन रहते हैं, वहां क्या परिस्थिति है, वहां कौन हैं, उनकी कैसी-कैसी विशेषतायें हैं यह सब चार्ट के भी आधार से और पुस्तक के भी आधार से हम देखेंगे। इसके लिये जैन भूगोल पुस्तक में १६३ नंबर का पृष्ठ आपको निकालना है, और चार्ट नंबर ९ आपको निकालना है। एक बाजू चार्ट रखिये और एक बाजू वह पुस्तक का पन्ना क्योंकि जब हम कहेंगे चार्ट में देखेंगे तो हम चार्ट को वहां से देख लेंगे। उसमें लिखा है कुमानुषद्वीप; कुमानुषद्वीप कहो या कुभोगभूमि कहो एक ही बात है; कुमानुष को अंतर्द्वीपज म्लेच्छ भी कहते हैं। छोटे द्वीप यानी टापू जैसे उनके प्रदेश होते हैं, वहां रहनेवालों को अंतर्द्वीपज म्लेच्छ कहने में आता है। यह तो कुभोगभूमि क्या है, कहां है उसकी अभी चर्चा अपनी चलेगी। अब यहां १६३ पृष्ठ पर नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ। अभी यह जो ९ नंबर का चार्ट कैसे देखना उसकी बात यहां समझायी है।

यहां मध्य में लाख योजन व्यासवाला जम्बूद्वीप है। आपके चार्ट में जो ग्रे कलर में दिखाया है। चार्ट के साथ आप इस वर्णन को पढ़ेंगे, सुनेंगे तो आपको ख्याल में आ जायेगा। **उसको घेरे हुये दो लाख योजन विस्तारवाला यहां जो नीले रंग में दिखाया है वह लवणसमुद्र है। उसके आगे उससे दोगुणा विस्तारवाला धातकीखण्ड द्वीप है**

परंतु यहां नक्शे में जगह कम है और आगे के कालोदधि समुद्र का पूरा विस्तार दिखाना था इसलिये इस धातकीखण्ड द्वीप को बहुत छोटा दिखाया है, यानी उसका विस्तार बिलकुल नहीं के बराबर बताया है। ख्याल में आयी बात? दो समुद्र यहां हमें विस्तार से बताने थे और उसके ओरिजिनल प्रपोर्शन में बताने थे। यानी यह जो लवणसमुद्र दो लाख योजन विस्तारवाला होगा तो धातकीखण्ड वहां चार लाख, पर यहां चार लाख नहीं बताया, छोटा बताया है; परंतु आगेवाला कालोदधि समुद्र आठ लाख योजन का है तो वह उसे आठ लाख योजन पूरा बताना था। यानी जितना लवणसमुद्र दो लाखवाला है उसके हिसाब से आगेवाला कालोदधि समुद्र आठ लाखवाला बताया है। **कल्पना में धातकीखण्ड को लवणसमुद्र से दोगुणा व्यासवाला समझना।** व्यास यानी एक बाजू का विस्तार उसरूप से लेना है यहां पर। **उसके बाहर कालोदधि समुद्र है जो आठ लाख योजन विस्तारवाला है,** यह बात समझ में आयी? यहां तो इन दो समुद्रों की बात चलेगी; इन दो समुद्रों में वहां अनेक द्वीप हैं, जिसको हम टापू या आयलँड कहते हैं।

जैसे हमारे ये अंदमान, निकोबार द्वीप हैं ऐसे यहां द्वीप पाये जाते हैं। तो **यहां हम लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र में पाये जानेवाले छियानवे द्वीप देखेंगे जहां कुभोगभूमि होती है।** देखो, लवणसमुद्र के दो तट हैं – एक जम्बूद्वीप की तरफ का अभ्यंतरवाला तट और एक बाहरी तट धातकीखण्ड की तरफ़ का है; तो उसमें चौबीस और चौबीस द्वीप होते हैं। ऐसे ही कालोदधि समुद्र में एक बाजू कौनसा द्वीप है? धातकीखण्ड है और बाहर के बाजू में पुष्कर द्वीप है; तो दोनों ही तटों की ओर चौबीस और चौबीस द्वीप हो गये। यानी लवणसमुद्र में अड़तालीस हैं और कालोदधि समुद्र में अड़तालीस हैं, दोनों के मिलकर छियानवे द्वीप हैं। यहां तक बात ख्याल में आयी? इन द्वीपों में ये कुमानुष यानी कुमनुष्य रहते हैं और यहां कुभोगभूमि पायी जाती है। देखो, **लवणसमुद्र, कालोदधि समुद्र में पाये जानेवाले छियानवे द्वीप हम देखेंगे जहां कुभोगभूमि होती है। इनमें से अड़तालीस द्वीप लवणसमुद्र में हैं और अड़तालीस द्वीप कालोदधि समुद्र में हैं। वहां भी चौबीस द्वीप समुद्र के अभ्यंतर तट के निकट हैं और चौबीस बाहरी तट के निकट हैं।** यह अर्थ समझते हैं न? भाषा समझती है? *श्रोता: निकट यानी?* निकट यानी नजदीक। यानी इसका जो तट है उसके पास। अभी यह हम चार्ट के द्वारा इसको समझेंगे।

सर्वप्रथम लवणसमुद्र के अभ्यंतर तट के पास अर्थात् जम्बूद्वीप के समीप चार दिशाओं और चार विदिशाओं में, दिशा यानी पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर; विदिशा यानी आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान्य, **प्रत्येक में एक-एक ऐसे आठ द्वीप हैं। चार्ट में वे काले रंग में दिखाये हैं और बाजू में उनके क्रमांक भी लिखे हैं।** हमारे ओरिजिनल चार्ट में बाजू में लिखे थे, यहां आपके चार्ट में कॉम्प्युटर से थोड़ासा उसमें सुधार किया है। वहां काले के अंदर ही वे कलर में नंबर बताये हैं। देखो, एक नंबर है राइट साइड यानी **पूर्व** दिशा **में**। दूसरा किधर है? **दक्षिण में, तीसरा है पश्चिम में, चौथा है उत्तर में, पांचवां है आग्नेय में, छठवां है नैऋत्य में, सातवां है वायव्य में और आठवां है ईशान्य में।** यह समझ में आयी बात, नंबर दिखे सबको? बहुत छोटे हैं, यह काला जो डॉट है उसके अंदर लिखे हुये हैं व्हाइट कलर में, तो ये हो गये आठ।

इन आठ द्वीपों के अंतराल में, दोनों के बीच में जो जगह है उसको अंतराल कहते हैं। **उनसे बाहरी ओर** यानी थोड़ा आउटर साइड में और **छोटे साइझवाले अन्य आठ द्वीप हैं, जो यहां लाल रंग में दिखाये हैं,** वह ब्राइट रेड आपको दिखायी देगा। देखो, आठ के बाद नौ नंबर कहां लिखा है? वह उसके इनर साइड में... *श्रोता: एक और पांच के बीच में है।* हां, एक और पांच के बीच में है, जिसको हम आग्नेय की तरफ़ कहेंगे। फिर उसके नीचे, पांच और दो के बीच में दस नंबर है। उसके आगे ग्यारह, बारह इसतरह से कंटिन्युएशन में हैं; क्लॉकवाइज जिसको हम कहेंगे, घड़ी की सूई जैसे चलती है उसको कहेंगे क्लॉकवाइज। तो ऐसे उसके नंबर डाले हैं – नौ, दस, ग्यारह, बारह इसतरह से सोलह तक यानी सोलहवां जो है वह एक नंबर के ऊपर के भाग में आया है। यह सब समझ में आयी बात? ये सारे लाल रंग में बताये हैं, तो कितने हैं वे लाल? आठ हैं क्योंकि आठ के अंतराल में और आठ कैसे? सराउंडिंग हैं; आठ ऐसे एक पंक्ति में होते तो तो उनके बीच में तो सात ही अंतराल होते। परंतु ये आठ ऐसे सर्क्युलर हैं तो उन सबके अंतराल भी आठ होंगे, बीच-बीच में। तो अभी तक कितने हो गये? सोलह हो गये, हमें देखने हैं चौबीस। अब **जम्बूद्वीप में यहां चार्ट में** दो लाइन बतायी हैं, ऊपर की ओर **उत्तर में शिखरी पर्वत लिखा है** और नीचे की ओर **दक्षिण में हिमवान पर्वत लिखा है।** यह चार्ट थोड़ा छोटा होने से दिखने में थोड़ी दिक्कत होती है। **उनके प्रत्येक के पूर्व दिशा में दो और पश्चिम दिशा में दो ऐसे चार-चार द्वीप हैं।** देखो **चार्ट देखना** यहां पर, **हिमवान**

पर्वत की लाइन में पूर्व में नौवें द्वीप के पूर्व में सत्रहवां द्वीप है, उसी लाइन में हिमवान पर्वत के पश्चिम में बारहवें द्वीप के पश्चिम में अठारहवां द्वीप है।

देखो, नीचे हिमवान द्वीप की लाइन दिखी? उसके राइट साइड में दो ग्रीन डॉट्स हैं, सत्रह और उन्नीस लिखा है। यहां तो सत्रह है और पश्चिम की तरफ, बारह के बाहरी ओर अठारह नंबर का डॉट है। *श्रोता: ग्रीन कलर का।* ग्रीन कलर का, ये दिखायी दिये? पूर्व में सत्रहवां और पश्चिम में अठारहवां। फिर सत्रह के नीचे उन्नीस लिखा है और अठारह के नीचे बीस लिखा है। ये सब आपको मिले कि नहीं मिले? *सभी श्रोता: मिल गये। श्रोता: ये सब क्या है?* ये सभी हम द्वीपों की बातें देख रहे हैं और यह एक-एक नंबर... *श्रोता: अलग-अलग क्यों? किसलिये नंबर अलग-अलग दिये हैं?* अलग-अलग नंबर इसलिये दिये हैं, क्योंकि उनके साइझ अलग-अलग हैं। *श्रोता: कलर किसलिये अलग-अलग दिये हैं?* इसलिये कलर अलग-अलग दिये हैं, नहीं तो कैसे समझेंगे? आपको एक, दो, तीन, चार नंबर कैसे बतायेंगे? इसके लिये सारी कोशिश की है उनको अलग-अलग कलर दिये हैं, उन द्वीपों के कलर ऐसे नहीं हैं; इस चार्ट में उनको डिफरन्शिएट करने के लिये उनको अलग-अलग वहां कलर दिये हैं। *श्रोता: ये समुद्र के बीच में हैं?* समुद्र के बीच में जिसको टापू कहते हैं न, वैसे बीच में हैं, वे किसीसे कनेक्टेड नहीं हैं। बीच में हैं यानी तट छोड़कर थोड़े अंदर हैं, एकदम तट से - किनारे से लगते हुये नहीं हैं। किनारे से उनका डिस्टन्स; वे कितने बड़े हैं; उनका डायमीटर क्या है; उनकी पूरी डायमेन्शन्स विस्तार से अपने त्रिलोकसार आदि ग्रंथों में बतायी हैं। यहां तो बहुत शॉर्ट में आपको बता रहे हैं।

सत्रह, फिर अठारह, उन्नीस और बीस, ये हिमवान पर्वत के दोनों ओर पाये जायेंगे। अब शिखरी के दोनों ओर देखना, शिखरी के राइट साइड में, जहां सोलह नंबर का रेड डॉट है उसके और राइट साइड में, इक्कीस नंबर का ग्रीन डॉट है, मिला? और बाईस लेफ्ट साइड में, तेरह के बाहर की ओर है। फिर इधर आना, तेईस और चौबीस – इक्कीस के ऊपर है तेईस और फिर बाईस के ऊपर चले जाओ – वहां है चौबीस। तो हमने कितने देखे? *श्रोता: चौबीस।* चौबीस। आठ तो दिशाओं और विदिशाओं के हुये और आठ उनके अंतरालों में हुये; परंतु थोड़ी बाहरी ओर और हिमवान की दोनों ओर;

यहां दो, यहां दो चार हुये; शिखरी के भी दोनों ओर चार हुये; पहले आठ फिर आठ और ये आठ-चौबीस हो गये।

जैसे ये चौबीस द्वीप अंदर के तट की ओर हैं, वैसे ही बाहरी तट पर चौबीस द्वीप हैं; उसी लाइन में देखना। देखो, जहां एक देखा था न हमने? बिलकुल आड़ी लाइन लेना, वहां पर भी एक काला डॉट है; वह भी एक नंबर का है और जो दक्षिण में दो नंबर का था उसके नीचे चले आओ, वहां काला उसी साइज का डॉट है वह है दो नंबर का। ऐसे ही चार दिशाओं के चार हो गये और विदिशाओं के चार हो गये। ये आठ तो काले हो गये। सबके अंतराल में रेड डॉट्स हैं, वे और आठ हो गये। जहां हमने हिमवान पर्वत की लाइन में राइट साइड में सत्रह और उन्नीस नंबर के दो ग्रीन डॉट्स बताये हैं और शिखरी पर्वत की लाइन में इक्कीस और तेईस नंबर के दो ग्रीन डॉट्स बताये हैं उनकी सीधी लाइन में पूर्व की ओर चले जाओ वहां लवणसमुद्र के बाहरी किनारे के पास पूर्व दिशा के काले डॉट की दोनों ओर दो-दो ग्रीन डॉट्स बताये हैं, ऐसे ही दो-दो ग्रीन डॉट्स पश्चिम की तरफ भी हैं। इसतरह आठ काले, आठ रेड और आठ ग्रीन डॉट्स मिलकर चौबीस डॉट्स बताये हैं यानी ये चौबीस टापू हैं। यानी जैसे अंदर के किनारे में हमने चौबीस देखे हैं ऐसे ही बाहर के किनारे में भी चौबीस हैं। यहां तक लवणसमुद्र के ४८ द्वीप ख्याल में आये न?

अभी हम कालोदधि समुद्र में देखते हैं। जहां हमने लवणसमुद्र में एक नंबर के डॉट देखे थे एक लाइन में, वही लाइन आगे बढ़ाओ, वह भी एक नंबर के कहलायेंगे। यानी वहां पर भी पूर्व में, पश्चिम में, दक्षिण में, उत्तर में वे चार हैं और विदिशाओं में चार हैं। वे तो देखो पूरे सर्कल में सराउंडिंग क्योंकि हमने यहां दो समुद्रों के बीचवाला धातकीखण्ड बहुत छोटा बताया है, वैसे उसका विस्तार बड़ा है परंतु उतना बड़ा करते तो चार्ट नहीं बना सकते थे, इसलिये उसको यहां बिलकुल केवल नाम लिख दिया है उसका और केवल दो समुद्रों को प्रपोर्शन में दिखाया है। आगे ये चार दिशाओं में चार और विदिशाओं में चार, आठ काले हो गये और रेड भी आठ हो गये और उसके साइड में ग्रीन देखो, उसी लाइन में आगे चलकर। जो पहलेवाले ग्रीन थे उसी लाइन को आप और बढ़ाओ आगे तो यहां पर वे ग्रीनवाले वे भी चार इधर और चार उधर। इसतरह से अंदर के किनारे पर भी चौबीस द्वीप हैं और उन्हीं लाइन्स को आगे बढ़ाओ तो बाहरी किनारे में भी चौबीस द्वीप हैं। ऐसे ये छियानवे द्वीप कौनसे कहां हैं उसकी बात है।

अब उनकी क्या विशेषतायें हैं उसको आगे देखेंगे। हां, अभी हम आते हैं १६४ पृष्ठ पर। देखो, पहले तो आठ समझ में आये न? चार दिशा के, चार विदिशा के वे आठ हुये और उनके अंतरालों में और आठ हो गये परंतु थोड़े बाहरी ओर और भी आठ हैं। अब यहां १६४ पृष्ठ पर सेकंड लाइन से पढ़ेंगे हम। **जम्बूद्वीप में यहां चार्ट में उत्तर में शिखरी पर्वत और दक्षिण में हिमवान पर्वत दिखाया है; उनके प्रत्येक के पूर्व दिशा में दो और पश्चिम दिशा में दो ऐसे चार-चार द्वीप हैं। यहां हिमवान पर्वत की लाइन में पूर्व में नौवें द्वीप के पूर्व में सत्रहवां द्वीप है उसी लाइन में हिमवान पर्वत के पश्चिम में बारहवें द्वीप के पश्चिम में अठारहवां द्वीप है।** अभी हमने देख लिया था इसको, ग्रीन डॉटवाले। **सत्रहवें के नीचे उन्नीसवां और अठारहवें नीचे बीसवां द्वीप है। उसीप्रकार शिखरी पर्वत की लाइन में,** शिखरी यानी वह ऐरावत की तरफवाला, **पूर्व में इक्कीसवां, पश्चिम में बाईसवां, पूर्व में तेईसवां और पश्चिम में चौबीसवां द्वीप स्थित है। इन द्वीपों का विस्तार देखते हैं।**

जम्बूद्वीप की वेदिका अर्थात् जगती; यह क्या होती है? जरा जम्बूद्वीप का ५ नंबर का चार्ट निकालो। यह जो जम्बूद्वीप की सराउंडिंग गोल ऐसी जो ब्लू लाइन दिखायी है वह तो समुद्र है परंतु उसके अंदर एक डॉटेड काली लाइन दिखायी देगी आपको, हं, तो वह वेदिका है। पूरे द्वीप और समुद्र को डिव्हाइड करनेवाली, हमारी जैसी दीवार होगी वैसी वहां वेदिका पायी जाती है और उसमें भी द्वार होते हैं जहां से नदियां बाहर निकलती हैं। जहां-जहां नदियां समुद्र में मिलती हैं वहां-वहां वह जगती कहो या वेदिका कहो उसमें तोरण आदि होते हैं, उसमें से वे नदियां बाहर की ओर चली जाती हैं। सभी जो नदियां मिलेगी समुद्र में, वे सब इसीतरह से वहां मिलेगी। इसको कहते हैं जगती; समझो न दीवार जैसी कोई रचना है, अपने समझने के लिये, अपनी भाषा में। हं, वेदिका-वेदिका, उसको वेदिका कहेंगे; उसको जम्बूद्वीप की वेदिका कहेंगे यानी समुद्र और द्वीप के बीच में ऐसी वेदिका है। तो उस जगती से, वेदिका से पांच सौ योजन की दूरी पर यानी जम्बूद्वीप से समुद्र में जाना, कितना जाना? पांच सौ योजन, **पांच सौ योजन दूरी पर समुद्र में दिशा संबंधी** यानी एक से चार नंबर के **द्वीप स्थित हैं जो सौ योजन विस्तारवाले गोल हैं।** यानी उनका डायमीटर सौ योजन है।

जब यहां योजन कहेंगे, द्वीप का विस्तार है योजनों में तो यह महायोजन समझना। तो एक से चार हैं वे सौ योजनवाले हैं। **जम्बूद्वीप से पांच सौ योजन दूरी पर विदिशा संबंधी** यानी पांच से आठ नंबर के **द्वीप हैं जो पचपन योजन विस्तारवाले हैं।** पहले बड़े थे, ये थोड़े छोटे हैं; वे सौ योजनवाले थे, ये पचपन योजनवाले हैं। **जम्बूद्वीप से पांच सौ पचास योजन दूरी पर,** अभी थोड़ा डिस्टन्स बढ़ गया, **अंतरदिशा संबंधी**, अंतरदिशा संबंधी यानी उनके अंतराल में, दिशा-विदिशाओं के अंतराल में उसको अंतरदिशा कहा यानी नौ से सोलह नंबर के **द्वीप हैं जो पचास योजन विस्तारवाले हैं।** दिशाओं में सौ योजनवाले थे, विदिशाओं में पचपन योजनवाले थे और ये अंतरदिशाओं में पचास योजनवाले हैं। **जम्बूद्वीप से छह सौ योजन दूरी पर पर्वत के निकटवर्ती** यानी सत्रह से चौबीस नंबर के सत्रह, अठारह, उन्नीस, बीस नीचे की ओर और बाकी ऊपर की ओर, **द्वीप हैं जो पच्चीस योजन विस्तारवाले हैं।** छोटे हैं इसीलिये उसी अनुपात में यहां छोटी-छोटी साइझ दिखायी हैं। **ये सभी** यानी ये सभी द्वीप **समुद्र में स्थित गोल आकारवाले टापू हैं** यानी **द्वीप हैं,** आयलँड हैं।

श्रोता: यह माप किधर से लेना उसको? जो माप लेना है न, तो जम्बूद्वीप की जो जगती है, जगती से समुद्र में चले जाना। समुद्र दो लाख योजन विस्तारवाला है उसमें जम्बूद्वीप के तट से, किनारे से समुद्र में अंदर पांच सौ योजन दूरी पर जाना, वहां ये स्थित हैं। यानी इसके लिये ९ नंबर का ही आपको चार्ट देखना है। पहले हमने जगती क्या है उसके लिये हमने जम्बूद्वीप को याद किया था। अभी तो आपको ९ नंबर के चार्ट में ही देखकर आगे की ये जो कुछ बातें हैं, वहां कौन रहते हैं उनकी बात सुननी है। हां, आगे बढ़ते हैं हम। यहां तक तो कोई प्रश्न नहीं है न? यहां तक ख्याल में आ गयी बात? हं, अभी आगे पढ़ेंगे १६४ पृष्ठ पर।

इन सबके नाम अलग-अलग हैं। ऐसे ही चौबीस द्वीप लवणसमुद्र के बाहरी तट के समीप धातकीखण्ड से इतनी ही दूरी पर स्थित हैं। इनके नाम भी वे ही हैं। देख लो जरा, आपके चार्ट में; हमने अभी अंदर के किनारे में देखे चौबीस, उसी लाइन को आप बढ़ा दो आगे, तो लवणसमुद्र में ही बाहरी किनारे की ओर यानी जहां धातकीखण्ड नाम का गोल है उसके अंदर, बाहर नहीं, बाहर में तो कालोदधि समुद्र होगा; उसके अंदर ही देखना है। ऐसे ही काले चार डॉट हैं दिशा में और चार हैं विदिशा में; फिर लाल हैं वे

आठ हैं और वे ग्रीनवाले भी उसमें दो-दो छोटे बताये हैं; जो चौबीस हमने पहले अभी देखे थे ऐसे ही चौबीस बाहरी तट की ओर भी हैं। पहले चौबीस और ये चौबीस लवणसमुद्र के अंदर हैं, ख्याल में आयी बात? दिखायी दिये या नहीं दिये? हां, बाहर के कालोदधि समुद्र की बात नहीं की है अभी हमने। तो **अभ्यंतर और बाह्य तट पर उसी नंबर पर उसी नाम के वैसे ही द्वीप हैं, चार्ट में उनके रंगों से, साइझ से पता चलेगा ही, दिशा-विदिशा संबंधी द्वीपों के नाम अंदरी तट से बाहरी तट तक लिखे हैं।**

देखो क्या कहा? जो पहला नंबर है न? पहला नंबर अंदरी तट की ओर जो पहला नंबर है उसी लाइन में बाहरी तट में भी पहला नंबर है, वे दो काले डॉट के बीच में वहां क्या नाम है? दिखायी देता है क्या? *श्रोता: एकोरुक।* एकोरुक, दोनों ही द्वीपों का नाम यही होगा। एक और एक नहीं, दोनों एक नंबर के हैं और दोनों का नाम एकोरुक है। अभी जहां दो लिखा है और नीचे भी वह दो नंबर है, उसमें डाला नहीं है दो नंबर परंतु वह दो नंबर का है; उसके बीच में क्या लिखा है? *श्रोता: लांगुलिक।* लांगुलिक और तीसरे के बीच में? *श्रोता: वैषाणिक।* वैषाणिक, तो हम नाम पढ़ेंगे यहां पुस्तक में, वहां दिखायी नहीं दे रहा है न? तो देखो, ये सब जो नाम हैं, कहां लिखे हैं? वह मैंने आपको वहां से बताया, अब वे कौन-कौनसे नाम हैं, एक नंबरवाले का क्या नाम है? दूसरे का क्या नाम है? या वहां कौनसे जीव रहते हैं? जीव यानी सारे मनुष्य ही हैं परंतु उनकी विशेषताओं के कारण उनके नाम भी अलग-अलग हैं। देखो –

इनके नाम क्रम से इसप्रकार हैं – (१) एकोरुक, आप आपके चार्ट में इसके साथ मिलान करके देख सकते हैं। **(२) लांगुलिक, (३) वैषाणिक, (४) अभाषक, (५) शष्कुलिकर्ण, (६) कर्णप्रावरण;** जैसे उनके नाम हैं न? वैसे ही वहां के जीव हैं; उसकी बात हम बाद में करेंगे। पहले उनके नाम सुन लेते हैं। **(७) लम्बकर्ण, (८) शशकर्ण, (९) सिंहमुख, (१०) अश्वमुख, (११) श्वानमुख, (१२) महिषमुख, (१३) वराहमुख, (१४) शार्दूलमुख, (१५) घूकमुख, (१६) बन्दरमुख, (१७) मत्स्यमुख, (१८) कालमुख, (१९) मेषमुख, (२०) गोमुख, (२१) मेघमुख, (२२) विद्युन्मुख, (२३) दर्पणमुख, (२४) हस्तिमुख।** यानी ये **लवणसमुद्र** में **अभ्यंतर के चौबीस और बाहर के चौबीस ऐसे कुल अड़तालीस अंतर्द्वीप हैं, कुभोगभूमि के द्वीप हैं।**

कालोदधि समुद्र में भी चौबीस द्वीप अभ्यंतर परिधि की तरफ हैं और चौबीस बाहर की ओर हैं। वहां पर भी **दिशाओं में चार, विदिशाओं में चार, अंतरदिशाओं में आठ** यानी अंतरालों में; **पूर्व में छोटे-छोटे चार तथा पश्चिम में छोटे-छोटे चार ऐसे कुल चौबीस हैं। अब उनके नाम देखते हैं।** चार्ट में तो समझ में आवे ऐसा है क्योंकि यहां तो बड़ा समुद्र है और वहां नाम भी दिखायी दे इतने स्पष्ट हैं। हम क्रम से अभी पढ़ेंगे उनको, **(१) वत्स्यमुख, (२) अश्वकर्ण, (३) पक्षिमुख और (४) हस्तकर्ण,** ये हो गये एक से चार। **५, ६, ७, ८** इन सबके नाम वही हैं **शूकरकर्ण**, आप देखना उस चार्ट में देखना; सभी विदिशाओं के नाम वही हैं, शूकरकर्ण, ये दो काले डॉट के बीच में लिखे हैं नाम। (९) **उष्ट्रकर्ण**, दसवें और ग्यारहवें का नाम एक ही है **(१०, ११) मार्जारमुख, (१२) कर्णप्रावरण, (१३) गजमुख**; चौदहवें और पन्द्रहवें का नाम फिर वही है **(१४, १५) मार्जारमुख, (१६) गोकर्ण (१७) वृकमुख, (१८) व्याघ्रमुख, (१९) शिशुमारमुख, (२०) मकरमुख, (२१) अक्षमुख, (२२) श्रृगालमुख, (२३) द्वीपिकमुख, (२४) भृंगारमुख।**

इसतरह लवणसमुद्र के अड़तालीस और कालोदधि के अड़तालीस, मिलकर कितने हुये? **छियानवे द्वीप हैं, वहां जो मनुष्य रहते हैं उन्हें अंतर्द्वीपज म्लेच्छ कहते हैं या कुमानुष कहते हैं और यहां पर कुभोगभूमि हैं।** यह ख्याल में आयी बात? इन्हें कुभोगभूमि कहेंगे। तो ये सारी कुभोगभूमि हैं और यहां रहनेवाले मनुष्यों को कुमानुष कहते हैं, या उन्हींका दूसरा नाम है अंतर्द्वीपज म्लेच्छ। **यहां रहनेवाले मनुष्यों के मुख चित्र-विचित्र होते हैं और इन मनुष्यों के कारण उन द्वीपों के नाम ऐसे पड़े हैं।** यानी नामों से ही पता चलता है कि वहां मनुष्यों के शरीर के कैसे आकार होंगे। सबके मुख अलग-अलग प्रकार के बताये न! कोई सिंह जैसा मुख है, कोई महिष जैसा मुख है, कोई वराह जैसा मुख है, किसीके कान लंबे हैं तो कोई एक टांगवाले हैं, कोई सींगवाले हैं। *श्रोता: कर्णप्रावरण यानी?* कर्णप्रावरण यानी क्या? उनके कान इतने लंबे हैं कि एक बिछा दो और दूसरा ओढ़ लो, हां, ऐसे लंबे कान हैं। **इनको द्वीप इसलिये कहते हैं ये समुद्रों के बीच में पाये जानेवाले टापू हैं, उनके चहूं ओर समुद्र हैं,** जैसे अपने यहां है न? **लक्षद्वीप है, अंदमान** है, इसको द्वीप कहते हैं। **इंग्लिश में आयलँड कहते हैं। इन द्वीपों**

में रहनेवाले कुमानुषों के वे ही नाम हैं। जो द्वीपों के नाम हैं वहां रहनेवाले मनुष्यों के भी वे ही नाम हैं।

एकोरुक मनुष्य एक पैरवाले यानी एक टांगवाले **होते हैं, वे गुफाओं में रहते हैं और वहां की मीठी मिट्टी खाते हैं** यानी **भक्षण करते हैं। अन्य सभी कुमानुष वृक्षों के नीचे रहते हैं और कल्पवृक्षों द्वारा दिये हुये फल खाते हैं।** यानी वहां पर भी कल्पवृक्ष हैं इसलिये कुभोगभूमि कहा है। **उनके जन्म आदि की प्रवृत्ति जघन्य भोगभूमिवत् पायी जाती है।** क्योंकि ये पल्यप्रमाण आयुवाले होते हैं यहां पर। **लांगुलिक मनुष्य पूंछवाले होते हैं,** क्योंकि नाम है न, लांगुल यानी पूंछ; **वैषाणिक सींगवाले होते हैं, अभाषक गूंगे होते हैं, शष्कुलिकर्ण पूडि समान कानवाले होते हैं। कर्णप्रावरण मनुष्यों के ऐसे बड़े-बड़े कान होते हैं कि एक कान बिछाकर दूसरा कान ओढ़ने के लिये काम में आता है, कान से शरीर को आच्छादन करते हैं। लम्बकर्ण लंबे कानवाले होते हैं,** और **शशकर्ण खरगोश जैसे कानवाले होते हैं। अन्य मनुष्यों का अनेक प्राणियों जैसा मुख होता है, बाकी शरीर मनुष्यों जैसा होता है। उनके नाम से ही पता चलता है** – जैसे **सिंहमुख, अश्वमुख,** अश्व यानी घोडा – घोड़े जैसा मुख, **श्वानमुख** यानी कुत्ते जैसा मुख, महिषमुख यानी भैंसे जैसा मुख, **वराहमुख** यानी सुअर जैसा मुख, **शार्दूलमुख** यानी सिंह जैसा मुख। **बाकी भी सब नाम जैसे उनके मुख या कान हैं वैसे होते हैं।** वैसे इतने सारे हमने अलग-अलग नाम पढ़े हैं उसका ऐसा ही अर्थ समझना। जैसे मार्जारमुख यानी बिल्ली जैसा मुख, हं। *श्रोता: एक कालमुख है?* हां, अभी कितने ही उनके नाम जैसे दर्पणमुख, कालमुख इसका अर्थ ख्याल में नहीं आता है; कालमुख यानी काला होता है या पता नहीं कैसे है।

इनके नाम सुनकर आपको हंसी आ रही है, यदि आप वहां के कुमानुष नहीं बनना चाहते, तो किसके फल में जीव वहां जन्म लेता है वह भी सुनेंगे हम। ग्रंथ के आधार से सुनेंगे। **वहां नहीं जाना चाहते तो प्रथम वहां जीव क्यों उत्पन्न होते हैं उन कारणों को देखेंगे तो आप सोच सकेंगे कि वैसे परिणाम रखने या नहीं रखने! ये परिणाम स्वयं करने या करनेवालों की अनुमोदना करनी, दोनों का भी वही फल है। कुभोगभूमि में कौनसे जीव उत्पन्न होते हैं इसे त्रिलोकसार में गाथा ९२२, ९२३ और ९२४ में बताया है। मूल ग्रंथ में देखना,** ये गाथायें यहां पृष्ठ १६७ पर

लिखी हैं। वे मूल ग्रंथ की हैं जो नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने लिखी हैं। पं.टोडरमलजी ने नहीं लिखी हैं, क्योंकि जो त्रिलोकसार ग्रंथ है, ढूंढ़ारी भाषा में एक तो पं.टोडरमलजी ने लिखा है; एक है विशुद्धमति माताजी ने हिन्दी में बहुत बड़ा विशाल ग्रंथ उसका बनाया है। देखो, इन सबके नाम यहां बता दिये १६९ पेज पर। कौन-कौनसे ग्रंथों का आधार लिया है और यहां ये जितनी बातें लिखी हैं; मूल ग्रंथ में से पढ़कर सुनायी थी, मेरी ओर से एक भी लाइन उसमें नहीं डाली है।

देखो यहां नीचे है न? नीचे के पॅरेग्राफ में तीसरी लाइन, **पं.टोडरमलजी द्वारा लिखित ढूंढ़ारी भाषा में त्रिलोकसार, आर्यिका विशुद्धमति माताजी द्वारा लिखित बड़ा त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति में भी यही बात लिखी है। यह जैनतत्त्वविद्या नामक पुस्तक है,** लेक्चर के समय मैं हाथ में लेकर आयी थी तो सबको बताया था, **जो मुनि प्रमाणसागर द्वारा किया हुआ आगम वचनों का संकलन है उसमें करणानुयोग विभाग में पृष्ठ ८७ पर यह बात लिखी है।** आगे लिखते हैं **संयमप्रकाश ग्रंथ में भी यही बात है।** यह संयमप्रकाश ग्रंथ मालूम है क्या है? जैन भूगोल पृष्ठ १६६ पर लिखा है, जहां तक हमने देखा न ९२२ गाथा वगैरह की बात, उसके नीचे की लाइन। **यही बात आचार्य १०८ श्री सूर्यसागरजी महाराज विरचित संयमप्रकाश ग्रंथ में,** अद्वितीय ग्रंथ है; किसीके पढ़ने में आया है? हमने वह पहली बार वाशीम में पढ़ा था, हं, कहां हैं वाशीमवाले? लिखा है क्या? अच्छा हां, **श्री सूर्यसागरजी महाराज विरचित संयमप्रकाश ग्रंथ में मुनिधर्म संबंधी द्वितीय भाग में पृष्ठ ६२० पर लिखी है। यह ग्रंथ १०८ मुनिराज श्री धर्मभूषणजी महाराज की प्रेरणा से सन १९९५ में पुन:प्रकाशित हुआ है। अत्यंत मौलिक रचना है। श्रावकधर्म पर दो एवं मुनिधर्म पर दो ऐसे कुल चार भाग हैं। संतोषजी पाटनी, मंजूजी पाटनी,** वाशीम से आये हैं, उस शिबिर में भी आये थे। **उनके यहां मैंने इन ग्रंथों को देखा था जब हम वहां दशलक्षण पर्व में प्रवचनार्थ गये थे।** कौनसा साल था? *श्रोता: १९९५ में।* अच्छा। **ये ग्रंथ कहीं उपलब्ध नहीं थे, हमारे स्वाध्यायियों में से एक ने दिल्ली के अनेक मंदिरों में जा-जाकर कहीं से कोई, कहीं से कोई भाग लाया है।** और हमारे यहां हमने बहुत बार उनको आद्योपांत पढ़ा है।

यह संयमप्रकाश ग्रंथ बहुत मौलिक रचना है, अत्यंत मौलिक है और सारे मूल ग्रंथों के आधार देकर उसमें गृहस्थों का स्वरूप और मुनियों का स्वरूप बहुत अच्छी तरह से

समझाया है। ये ग्रंथ हमें मिल नहीं रहे थे, एक बहन हमारे यहां स्वाध्याय में आती थी, दिल्लीवाली थी यानी दिल्ली में उनके बहुत सारे रिश्तेदार थे। वह दिल्ली में हर मंदिर में गयी क्योंकि, प्रकाशकों ने इन ग्रंथों को एक बार प्रकाशित करके ग्रंथ सर्वत्र बांट दिये थे; बाद में वे ॲव्हेलेबल नहीं थे। हमने उनसे कॉन्टॅक्ट किया तो वे बोले हमने छापे और सर्व जगह सर्व मंदिरों में हमने बांट दिये, तो वह बहन हर मंदिर में गयी और वहां पूछा। तो कहीं वे ग्रंथ धूल में पड़े हुये थे तो कहीं उसमें से एक कॉपी तो कहींसे कोई एक कॉपी मिली, कहीं दूसरी मिली इसतरह उन्होंने अनेक मंदिरों में जा-जाकर वे चार व्हॉल्यूम इकट्ठे करके लाये थे हमारे लिये। उसको पढ़कर वहां से हमने ये बातें यहां लिखी हैं; ये सभी बातें इन ग्रंथों का आधार लेकर यहां बतायी हैं। यहां कहीं ऐसा नहीं है कि हम किसीकी निंदा कर रहे हैं, श्रावक की बात नहीं बता रहे हैं या मुनि की बात बता रहे हैं या ऐसा कुछ नहीं है। जो मूल ग्रंथों की बात है वही यहां लिखी है यानी कोई प्रेज्युडाइज्ड माइंड नहीं है। देखो, इसके लिये पहले गाथा पढ़ेंगे जैन भूगोल के १६७ पेज पर से –

जिनलिंगे मायाविनो ज्योतिर्मंत्रोपजीविनः धनकांक्षिणः।
अतिगारवसंज्ञायुताः कुर्वंति ये परविवाहमपि।।९२२।।

दर्शनविराधिका ये दोषं नालोचयंति दूषणकाः।
पंचाग्नितपसः मिथ्याः मौनं परिहृत्य भुंजते।।९२३।।

दुर्भावाशुचिसूतकपुष्पवतीजातिसंकरादिभिः।
कृतदाना अपि कुपात्रेषु जीवाः कुनरेषु जायंते।।९२४।।

जीवाः कुनरेषु जायंते, जीव कुनरों में यानी कुमानुषों में उत्पन्न होते हैं। अब हम यहां १६६ पेज पर देखते हैं। क्या आप घर में पढ़नेवाले हैं? *श्रोताः नहीं-नहीं, सुनना चाहते हैं।* सुनना चाहते हैं? हां, **जो जीव जिनलिंग अर्थात् मुनिवेष धारण करके मायाचार करते हैं, ज्योतिष, मंत्र, वैद्यक आदि से आहारादिरूप आजीविका करते हैं,** यहां लिखा है न ज्योतिर्मंत्रोपजीविनः **वे कुभोगभूमि में जन्म लेते हैं। क्या कहा? आहार को आजीविका कहा, क्यों?** ये मुनियों की कुछ आजीविका नहीं होती है, **मुनियों को आहारदान देना** यह **तो** श्रावकों का बहुत बड़ा और अच्छा कर्तव्य है, तो **समाज का अहोभाग्य है, कर्तव्य है। समाज कोई उनपर उपकार नहीं कर रहा है।** मुनिराजों को आहारदान देने का

सौभाग्य मिलना यह तो बहुत बड़ी बात है। परंतु **ज्योतिष, मंत्र, वैद्यक आदि बताना मुनि का कार्य नहीं है। आहार के बदले में ये चीज़ें करना या ऐसी चीज़ें बताने से समाज आकर्षित होकर अपनी अच्छी व्यवस्था रखेगी यह तो मिथ्या अभिप्राय है। किसीको ज्योतिष बताना,** यह संयमप्रकाश में से मैंने लिखा है, जाकर देखना, **मंत्र, मणि अर्थात् रत्न चिकित्सा बताना,** यह टिप्स मेरा शब्द है; **टिप्स देना कि चांदि में पैसा लगाओ;** क्यों सातारवाले? लगाया था कि नहीं लगाया था? बहुत साल हुये, आप छोटी थी तभी; **सोना खरीदो आदि उपदेश देना, औषधि बनाकर देना या उसका उपदेश देना आदि सभी बातें जो करते हैं उनके लिये कहा है कि आहारादिरूप आजीविका करते हैं।**

आगे लिखा है, यानी ग्रंथ की बात है, **जो मुनिवेष धारण करके रुपया, पैसा आदि धन चाहते हैं वे कुभोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। किसी भी बहाने से पैसा इकट्ठा करना मुनियों का कार्य नहीं है। तीर्थक्षेत्र बनाना हो या तीर्थों की रक्षा करना हो या अन्य किसी बहाने से दान इकट्ठा करना मुनि का कार्य नहीं है।** देखो, यह तो श्रावक का कर्तव्य है, देव-शास्त्र और गुरु के लिये अपना पैसा जो है पूरा लगा देना यह तो श्रावक का कर्तव्य है और अहोभाग्य है, परंतु यह मुनि के लिये योग्य नहीं है। **आगे लिखा है,** यह ग्रंथ की बात है, **कि मुनिवेष धारण करके जो ऋद्धि, यश और सातारूप गारव से युक्त हैं;** गारव यानी अभिमान से युक्त हैं; **वे कुभोगभूमि में जन्म लेते हैं।** लिखा है आगे, **गारव यानी अभिमान। मुनिवेष धारण करके जो किसी ऋद्धि का, यश का, अन्य किसी अनुकूलता आदि का अभिमान करते हैं, मद करते हैं उनकी बात है। जो मुनिवेष धारण करके आहार, भय, मैथुन, परिग्रह संबंधी वांछा-तीव्र लालसा रखते हैं वे कुभोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। ये चारों संज्ञा तो चारों गति के जीवों में पायी जाती हैं परंतु मुनिधर्म अंगीकार करके भी, जो इनमें तीव्र रुचिवाला है उनकी बात है।**

आगे लिखा है, क्या लिखा है वह यहां देखते हैं, **कि जो मुनिवेष धारण करके समाज के अन्य गृहस्थों की परस्पर विधि मिलाकर विवाह कराते हैं, शादी-ब्याह रचाते हैं वे कुभोगभूमि में जन्म लेते हैं। मुनिपद जैसा उच्च पद अंगीकार करके यह कैसी विडम्बना! कैसे-कैसे परिणाम करके जीव कहां-कहां जाते हैं! वे ही नहीं, उनको अनुमोदना देनेवाले, उनको मुनि जैसा आदर, नमस्कार, आहारदान देनेवाले**

भी वहां जायेंगे। वहां जानेवाले जीव अपने शिष्यों को थोड़े ही छोड़कर जायेंगे? साथ में लेकर जायेंगे, कुभोगभूमि में जायें या नरक-निगोद में जायें; अपने शिष्यों को साथ लेकर जायेंगे। छहढाला में उनको पत्थर की नाव-उपलनाव कहा है।

ये मेरे मन की बातें नहीं हैं, ये सब गाथायें भी मैंने आपको पढ़कर सुनायी थी उनमें से बातें हैं और ये सारे जो जैनतत्त्वविद्या कहो या संयमप्रकाश कहो, इन ग्रंथों में से मैंने यह पढ़कर बताया था जो यहां पुस्तक में लिखा है बाद में। जैन भूगोल शिबिर की जो व्हिडिओ कॅसेट बनी थी उसका यह लिखितरूप से पुस्तक बनाया है बाद में। क्योंकि यहां जो शिबिर हुयी थी २००५ साल में, वहां ये २० लेक्चर हुये थे; उनको पं. जितेन्द्र राठी ने पूरे लिख लिये फिर उनको मैंने फिर सुनकर फिर चेक किये, फिर उनमें कुछ और टेबल्स बनाये जैसे इन्द्रों के नाम हैं, उनके चिन्ह हैं वगैरह-वगैरह वह ऑडिशन की। बाकी इसमें जो प्रश्नोत्तर हुये थे जैसे आप लोग प्रश्न करते हैं और हम उत्तर देते हैं वैसे ही वहां हुआ था; उसीको यहां बिलकुल वैसे के वैसे लिख दिया है और यह कहीं किसीकी निंदा नहीं है, यह तो वहां कुभोगभूमि में जानेवाले जीव कैसे परिणामों से वहां जन्म लेते हैं बस इसका ज्ञान करना है। यहां कोई किसी मुनि की निंदा करना और श्रावक कैसे भी रहे उसकी बात नहीं है। यहां श्रावक के धर्म की या मुनिधर्म की बात नहीं हो रही है। प्रकरण यहां कुभोगभूमि का है और कुभोगभूमि में कौन जीव जाते हैं उसका यहां वर्णन है। किसी जीव को हमें यहां चेकअप् नहीं करना, कौन कितना पानी में है, कौन सच्चा है, कौन झूठा है। हमें देव संबंधी, गुरु संबंधी, शास्त्र संबंधी अपना निर्णय पक्का करना है। सत्य परिस्थिति यानी मुनि कैसे होते हैं, शास्त्र कैसे होते हैं, देव यानी भगवान कैसे होते हैं, इनका स्वरूप हम निश्चित नहीं करेंगे तो हमें सम्यग्दर्शन की प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि देव-गुरु-शास्त्र की सच्ची प्रतीति यही सम्यग्दर्शन का पहला योग्यतावाला एक नियम है; उसके बिना सम्यग्दर्शन हो नहीं सकता।

लोग पूछते हैं कि समाज में रहते हैं तो समाज के लिये कुछ तो करना पड़ेगा कि नहीं? तो समाज के बिना कब पैदा होंगे? कुंदकुंदाचार्य कहते हैं किसी आशा से, स्नेह से, भय से, अभी जो कुछ कारण हैं लगा दो उसमें सब, तो यदि इसमें हम अगर अनुमोदना भी करते हैं, खोटे मार्ग पर चलते हैं, हर परिणाम का फल तो भोगना ही पड़ेगा। क्या हम इन

परिणामों को भोगने के लिये तैयार हैं? तो जो चाहो वह करो! क्या करना उसकी बात नहीं है, यहां अभिप्राय की बात है, सही ज्ञान की बात है। आपके पास टॉर्च है और रात के अंधेरे में चल रहे हैं तो सामने खड्डा आयेगा तो टॉर्च बतायेगी न आपको, हं? स्लो-डाउन-स्लो डाउन, आगे खड्डा है! बोलनेवाली टॉर्च निकलेगी कुछ दिन में! आपका वह जीपीएस बोलता है न आजकल! हां, वैसे बोलेंगे, अभी खड्डा है अभी मत गिरो। यह जिनवाणी तो टॉर्च का काम कर रही है। हं, वह तो कैसे परिणाम में जीव कहां जाकर जन्म लेते हैं? कहां-कहां के जीव मरकर कहां जा सकते हैं? कौनसे नहीं जा सकते हैं वे सभी बातें इसमें हैं। पूरी लोकभावना में यही तो बात है सारी, तो यहां किसीकी, किसीकी भी निंदा नहीं है। समाज में कोई दो तट पाड़ने-कराने का भी हमारा बिलकुल अभिप्राय नहीं है, इरादा नहीं है। हम तो आगम पढ़ रहे हैं और कुभोगभूमि की बात आयी है इसलिये इसका वर्णन जो यहां मूल ग्रंथों में लिखा है, वही मैं पढ़कर बता रही हूं। इसमें से कोई भी ग्रंथ आपकी भाषा में मुमुक्षुओं ने लिखे हुये नहीं है। समझ में आया? ये ग्रंथ लिखनेवालों में तो कानजीस्वामी के फॉलोअर कोई भी नहीं हैं, न पं. टोडरमलजी हैं, न विशुद्धमति माताजी हैं, न प्रमाणसागरजी महाराज हैं और न संयमप्रकाश लिखनेवाले मुनिराज हैं और स्वयं नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने ये जो मूल गाथायें लिखी हैं, वे ही गाथायें पढ़कर बतायी हैं। क्योंकि ऐसा किसीका अभिमत होने की शंका होती है कि क्या करें, यहां तो मुनियों की निंदा चलती है, ऐसी बिलकुल बात नहीं है। देवलाली में ऐसा कुछ नहीं चलता है, हम तो आगम में क्या लिखा है वह पढ़कर सुना रहे हैं, यहां तो करणानुयोग की बात अपनी चल रही है, यहां तो हम भूगोल यानी त्रिलोक की रचना को देख रहे हैं। समझ में आयी बात?

अभी हम आगे बढ़ेंगे। यह कुभोगभूमि क्या होती है और जीव वहां क्यों जन्म लेता है उसकी बात चल रही है। *श्रोता: ये वनमानुष, चिम्पान्झी क्या ये मनुष्यगति के जीव हैं?* चिम्पान्झी मनुष्यगति का नहीं है, वह तो बंदर है तिर्यंचगति का है। *श्रोता: कुभोगभूमि में भी दो ही वेद होंगे? स्त्रीवेद और पुरुषवेद होंगे मनुष्य में?* कुभोगभूमि में भी, हां, दो ही वेद होंगे, वहां नपुंसकवेद नहीं पाया जाता। वहां के सारे ही जीव मरकर भवनत्रिक में चले जाते हैं। *श्रोता: ये आपस में एकदूसरे के यहां जा सकते हैं?* आपस में नहीं जायेंगे, उनकी अपनी-अपनी एरिया है। *श्रोता: जैसे भोगभूमि में तिर्यंच और मनुष्य पाये जाते हैं, वैसे कुभोगभूमि में पाये जायेंगे?* तिर्यंच पाये जायेंगे पर उनको कुतिर्यंच नहीं कहेंगे क्योंकि वे

तो अपने आकारवाले होंगे न? *श्रोता: पाये जायेंगे वहां पर?* पाये जायेंगे वहां पर परंतु वह तिर्यंचो की जघन्य भोगभूमि कहलायेगी और कुछ नहीं। *श्रोता: उसको कुभोगभूमि?* यह कु तो मनुष्यों के लिये लगाया है, तिर्यंचों के लिये तो जैसे अन्यत्र जघन्य भोगभूमि हैं वैसे हैं सब। *श्रोता: जैसे मनुष्यों में एक टांगवाला है, बड़े कानवाला है ऐसा तिर्यचों में होगा?* ऐसा वर्णन सुनने में नहीं आया है, क्योंकि केवल कुमानुष द्वीप लिख दिया है उसको। *श्रोता: और सम्यग्दर्शन के लिये वहां पर कोई साधन है?* कोई साधन नहीं है, वहां सम्यग्दर्शन नहीं होता है। ये तो सारे वहां से मरकर भवनत्रिक में ही चले जाते हैं। *श्रोता: कुभोगभूमिवाला कोई भी सम्यग्दर्शन नहीं करेगा वहां पर?* वहां नहीं करेगा। *श्रोता: मरकर?* मरकर भवनत्रिक में जाते हैं। देखो, यह बात आगे यहां लिखी है, १६८ पर। यह जो गाथा का ही अर्थ लिखा है न? यहां देखो –

अब गाथा क्रमांक ९२३ का अर्थ देखते हैं, १६८ पेज, सेकंड लाइन। **जो जीव मुनिवेष धारण करके सम्यग्दर्शन की विराधना करते हैं, मिथ्यात्व का पोषण करते हैं, वे कुभोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। जो मुनिवेष धारण करके अपने किये हुये दोषों का श्रीगुरु** यानी आचार्य **के पास जाकर आलोचना नहीं करते वे कुभोगभूमि में उत्पन्न होते हैं। मुनिवेष धारण करके जो अन्य जीवों पर दोष लगाते हैं वे कुभोगभूमि में जन्म लेते हैं। जो मिथ्यादृष्टि पंचाग्नि साधन आदि प्रकार के कुतप करते हैं**; ये अन्यमतियों में होते हैं न? पंचाग्नि वगैरह; **जो मौन छोड़कर भोजन करते हैं वे कुभोगभूमि में जन्म लेते हैं। उसीप्रकार जो गृहस्थ दान देने की अयोग्य अवस्था में दान देते हैं अर्थात् दुर्भाव यानी खोटे परिणामों से, अशुचि यानी अपवित्र दशा में दान देते हैं, सूतकादि होने पर भी जो दान देते हैं, स्त्री यदि रजस्वला अवस्था में दान देती है, जातिसंकर का मतलब है इंटरकास्ट मॅरेज, इसप्रकार दातार दोषसहित हो तो उसके दान देने पर वह कुभोगभूमि में उत्पन्न होता है**। देखो, आहारदान जो है तो वह किसको देना उसको पात्र कहेंगे। तो मुनिराज तो उत्तम पात्र हैं। क्या देना वह भी बताया है और देनेवाला भी वहां दोषरहित ऐसा होना चाहिये। तो दातार के भी दोष टालकर यह दान देना चाहिये उसके कारण यह सब बताये हैं। अब वे कौनसे हैं वह एषणासमिति में सब कुछ आते हैं। हं, अंतराय के कौनसे दोष होते हैं, वह भोजनशुद्धि संबंधी क्या-क्या बातें हैं वह सभी विस्तार से उसमें वर्णन है।

श्रोता: इंटरकास्ट मॅरेज? इंटरकास्ट मॅरेज नहीं समझते? *श्रोता: जो मतलब अदर कास्ट में करते है?* हां, जो जैन हैं और अन्यमतियों में कहीं उसने शादी की। *श्रोता: शादी की और वहां दान दिया आदि?* वहां दान नहीं दिया; जिसने इंटरकास्ट शादी की है उसने मुनिराजों को आहार दिया यह बात बता रहे हैं। *श्रोता: आहारदान संबंधी हैं।* आहारदान संबंधी हैं। ऐसा भी है न कि विधवा होकर जो विवाह करते हैं उसके बारे में, मुनिराज उनके हाथ से ग्रहण नहीं करते आहार; ऐसे नियम हैं, जो ओरिजिनल चले आये हैं। जिसने दूसरी शादी की है – स्त्रियों ने, पुरुषों के लिये यह नियम नहीं है। हां, कोई विधवा है और उसने दूसरी शादी की है तो वह दोष माना जाता है तो उसके हाथ से मुनिराज आहार ग्रहण नहीं करते। देखो, यह चरणानुयोग संबंधी बहुत सारे नियम हैं और उन नियमों से हम परिचित हो तो उन दोषों को टालकर हम आहारदान वगैरह की विधि संपन्न कर सकते हैं। *श्रोता: अन्य कास्टवाले जैनधर्म अपना लेवे तो?* तो भी अभी वे तो दोष तो, जैसे चक्रवर्ती अभी वहां म्लेच्छ की रानी लायेगा तो वह तो जैन हो जायेगी, उसमें भी कुछ विधिपूर्वक करते हैं, क्या करते हैं मुझे पता नहीं है। *श्रोता: ऐसा सुना है कि जैन संस्कार देते हैं; जैसे वे म्लेच्छखण्ड से लाते हैं तो जैन संस्कार देते हैं वैसे यह इंटरकास्टवाला ये जैन संस्कार से देवे ऐसा कुछ है?* क्योंकि वे विधि से मंत्रपूर्वक देते हैं, क्योंकि पहले के जमाने में तो ऐसा था न 'उसने जैनधर्म अंगीकार किया', किया तो यानी संस्कारपूर्वक करते थे उसको हम जैन कहेंगे। *श्रोता: लेकिन फिर भी यहां...* लेकिन फिर भी यहां लिखा तो है उसमें क्योंकि ये मूल गाथा में लिखा है न? जातिसंकरादिभि:... *श्रोता: माने खाली मुनि को आहारदान की बात है या दूसरा कोई दान नहीं?* यहां पर आहारदान की मुख्यता है।

श्रोता: हमारे यहां तो बेन, वर्णव्यवस्था बतायी गयी है जैसे कि क्षत्रिय होगा, ब्राह्मण होगा। जाति अलग है, वर्ण अलग है। *श्रोता: यह जैनजाति का जो है वह क्षत्रिय वर्ण में भी पाया जायेगा, ब्राह्मण वर्ण में भी पाया जायेगा और वैश्य में भी पाया जायेगा।* हां, तो उसको शूद्र के साथ लेना; जातिसंकर दोष शूद्र के साथ लेना क्योंकि जैनों के वर्ण तो सभी बताये हैं, परंतु अभी जातिसंकर जो वहां बताया है, यह मूल गाथा में लिखा है न? संस्कृत गाथा में लिखा है। जातिसंकरादिभि: गाथा ९२४ में ही लिखा है। देखो, आगे हम पढ़ेंगे। *श्रोता: रानी चेलना ने राजा श्रेणिक से शादी की और उन्होंने फिर आहारदान दिया तो उसमें संकर दोष लगेगा? अन्य श्रोता: क्या प्रश्न है?* आपका प्रश्न है, चेलनारानी ने राजा श्रेणिक के

साथ शादी की और फिर वह तो बौद्धधर्मी था। परंतु उसने बौद्धधर्म स्वीकारा नहीं था। कुछ बातें तो इसमें से अपने को ख्याल में नहीं आती परंतु वहां जो लिखा है उसको हम समझेंगे वहां। *श्रोता: वह जो संस्कार की बात है, संस्कार।* हं, देखो-देखो, आगे हम पढ़ेंगे –

जब दान देते हैं वहां दातार के गुण, पात्र यानी जिसको दान दिया जाता है उसके गुण और जो द्रव्य दान में दिया जाता है उसका विचार होना चाहिये। लोग हमको पूछते हैं कि वह नेत्रदान करना कि नहीं? किडनी दान करना कि नहीं? उसको दान मत कहो, वह तो मांस है। *श्रोता: ब्लड, ब्लड डोनेशन।* सब मांसपेशी है उसके अंदर, तो उसको धर्म के नाम पर दान मत कहो। वह करना कि नहीं वह आपका निर्णय है। **जैसे पहले ही दिन हमने पढ़ा था कि वक्ता कैसा होना चाहिये और श्रोता कैसा होना चाहिये। वक्ता और श्रोता दोनों का सर्वज्ञ भगवान पर विश्वास होना चाहिये। उनके अस्तित्व का, उनके वीतरागी सर्वज्ञ स्वरूप का, केवलज्ञानी के ज्ञान का, उनकी वाणी का, उनकी वाणी के अनुसार रचित आगमग्रंथों का, उन्होंने बताये हुये मुनि के स्वरूप का, मोक्षमार्ग का जिन्हें विश्वास नहीं है, वे योग्य वक्ता भी नहीं है और योग्य श्रोता भी नहीं है। इसीतरह दान देनेवालों के गुणों का और कौनसे दोष टालकर दान दिया जाता है इसका ज्ञान होना आवश्यक है**। हम श्रावक हैं तो मुनियों को कैसे दान दिया जाता है, कौनसे दोष टालकर दिया जाता है, जो स्वयं अशुद्ध भोजन करता रहा हो वह क्या दान देगा? क्योंकि उनके तो... *श्रोता: निर्दोष देना चाहिये।* निर्दोष देना चाहिये और उद्दिष्ट तो नहीं होना चाहिये। तो जो अपने लिये बना रहा है शुद्ध भोजन तो उसमें से वह मुनियों को दान दे सकता है। यानी यह तो हमारा कर्तव्य है कि हम स्वयं शुद्ध भोजन को अपनायें। उसके बिना भले ही हमारे शहरों में मुनिराज नहीं दिखायी देंगे परंतु उनको दान देने की भावना तो निरंतर होनी चाहिये कि नहीं होनी चाहिये? तो इसलिये शुद्धभोजन हम स्वयं करें रोज़ाना, शुद्धभोजन अपनी जिंदगी का अंग होना चाहिये।

जैसे दातार के गुण देखे, वैसे ही दान किसको दे रहे हैं उसका विवेक होना चाहिये, वगैरह-वगैरह, हं। **केवल पैसे लिखवाये और हो गया दान ऐसा नहीं है**, अभी वह दान के बारे में कुछ है, अपना विषय तो अभी अलग चल रहा है। देखो, यहां १६९ पर **कुपात्रदान के फल में जीव कुभोगभूमि में जन्म लेते हैं, इसलिये इन सबका**

विवेक होना चाहिये। अज्ञान के कारण भी यह दोष होंगे तो भी उनका फल वही होगा। किसीने अज्ञानवश विष पी लिया तो क्या होता है? *श्रोता: मर जाता है।* हॉस्पिटल में बहुत बच्चे आते हैं, केरोसीन पी जाते हैं इसलिये। जैसे अभी क्या है; मध्यमवर्गीय लोग रहते हैं तो उनके घरों में पहले तो केरोसीन भरी हुयी बॉटल्स ऐसी कहीं न कहीं रखी रहती थी। अभी तो सभी जगह गॅस सप्लाय आया, पहले तो केरोसीन से स्टोव्ह पर रसोई होती थी; तो केरोसीन पीकर हॉस्पिटल में भर्ती होनेवाले तो बहुत सारे बच्चे होते थे। तो उन्होंने क्यों पिया? आत्महत्या करना चाहते थे क्या? नहीं, वह तो कुछ भी खाने-पीने की उनको तो आदत रहती है न? चलो टेस्ट करके देखे, तो पी लेते हैं। तो अज्ञान के वश पी लिया तो उसको फल मिलेगा कि नहीं मिलेगा? *श्रोता: मिलेगा। ऐसे ही* **इसका इलाज क्या है, उपाय क्या है**? कि **स्वयं ज्ञानी हो जाओ, ज्ञान अर्थात् शास्त्रों में से इसकी जानकारी प्राप्त करो। मुनि का स्वरूप, भगवान का स्वरूप हमें आगम के आधार से नक्की करना है। समाज में कौन सच्चा है, कौन झूठा है यह आगम के थर्मॉमीटर से नापते नहीं रहना है।**

हं? *श्रोता: खोटी नोट।* हां, जो खोटी नोट चलती है बाजार में तो क्या करते हैं? *श्रोता: वह अपनी जेब में नहीं आनी चाहिये।* अपनी जेब में नहीं आती है न, इसका ख्याल रखना है। बस हम अपना निर्णय स्वयं करे बस इतनी बात है और कुछ बात नहीं है। नीचे का पॅरेग्राफ, **हमें तो सच्चे देव, सच्चे गुरु, सच्चे धर्म का निर्णय करना है, मोक्षमार्ग का निर्णय करना है। हमारे अभिप्राय में, हमारी क्रियाओं में मिथ्यात्व का पोषण नहीं होता है न, उसे देखना है। 'समाज क्या कहेगा' ऐसी चिंता छोड़ दो। समाज को दिखाने के लिये करना है कि अपना कल्याण करना है? मनुष्यभव की दुर्लभता जानकर भी यह मनुष्यभव आप समाज के लिये गंवाना चाहते हैं? क्या नरक-निगोद में यह समाज आपके साथ आनेवाला है? समाज को ही चाहते हो तो निगोद में सबसे बड़ा समाज मिलेगा। जब कभी मनुष्य में जन्म लेंगे तो बिना समाज के तो जन्म लेंगे नहीं हम।**

देखो, **हमने कितने सारे कारण देखे, वहां जीव मिथ्यात्व के पाप सहित किंचित् पुण्य उपार्जन करता है, यहां तो अल्प आयु है** यानी हमें यहां कोई प्रतिकूल परिस्थिति

होती है, तो समझो न हमारी कितनी आयु है? कुछ सालों की हैं **परंतु कुभोगभूमि में एक पल्य प्रमाण आयु भोगनी पड़ती है।** अभी **यह किसी एक शास्त्र की बात नहीं है।** इन सभी शास्त्रों के नाम पढ़कर मैंने आपको सुनाये हैं। तो इसतरह ये कुभोगभूमि में वहां जीव उत्पन्न होते हैं; जैसे हम परिणाम करते हैं वैसे-वैसे उनके फल पाने के भी स्थान इस विश्व में हैं। तो इसलिये हम चौकन्ना रहें। हमें तो निर्णय करना है। मोक्षमार्ग प्राप्त करना है तो उसके लिये छह द्रव्य हैं, सात तत्त्व हैं, देव-गुरु-शास्त्र हैं, उनका स्वरूप निश्चित करना ही चाहिये और इसीमें अपनी भलाई है क्योंकि हम अनादि से ये पांच परावर्तन तो करते ही आ रहे हैं और उसीमें अगर हमको और घूमना है तो फिर उसमें से छुटकारा तो नहीं है। कोई प्रश्न नहीं है न? एक प्रश्न था न कल किसीका? उसमें से एकाध प्रश्न ले लेते हैं।

प्रश्न: अघातिकर्म के प्रकृति को सर्वघाति कह सकते हैं क्या? क्योंकि उसके अभाव में प्रगट होनेवाले गुण का अभी सर्वथा घात हो रहा है। इसका उत्तर शायद दिया था मैंने उनको। देखो, कर्म दो प्रकार के हैं – घाति और अघाति। घाति क्यों कहते हैं? कि जीवों के गुणों के घात में वे निमित्त हैं। घात में यानी जैसी गुणों की शक्ति है वैसी पर्याय में प्रगट नहीं हो रही है उसको घात करते हैं ऐसा कहने में आता है; इसलिये उनका नाम है घातिकर्म; वे हैं ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय और अघाति में कौनसे हैं? वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र हैं। तो क्या अघाति को भी घाति कह सकते हैं? महाबंध में यह बात लिखी है, महाबंध यानी महाधवला ग्रंथ में जहां अनुभाग की बात आयी है, अनुभाग के प्रकरण में, अभी आपका नहीं हुआ होगा वह। तो उसमें लिखा है कि अघातिकर्मों को भी कथंचित् घातिकर्म कहेंगे हम, क्योंकि ये जो घातिकर्म हैं वे तो जीव के अनुजीवी गुणों का घात करते हैं और अघातिकर्म हैं वे जीव के प्रतिजीवी गुणों का घात करते हैं। इस अपेक्षा उनको भी घाति संज्ञा दे सकते हैं; वहां कहीं कहा नहीं है परंतु बस इतना विवेचन है उसमें कि उसमें भी घाति संज्ञा हो सकती है। *श्रोता: अनुजीवी, प्रतिजीवी क्या है?* यह अनुजीवी और प्रतिजीवी फिर याद कराना। अभी अपनी स्थिति पूरी हुयी है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२७. संख्यामान

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। उसीके अंतर्गत पांच परावर्तनों का हम यहां विस्तार से वर्णन देख रहे हैं। पांच परावर्तनों के नाम हमने देखे थे; द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरार्वतन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन और भावपरावर्तन। अभी तक हमारी द्रव्यपरावर्तन और क्षेत्रपरावर्तन की विस्तार से चर्चा हो चुकी है। कालपरावर्तन को प्रारंभ करते हैं हम। यहां जीवकाण्ड पुस्तक दूसरी में पेज नंबर ६४३, जहां परक्षेत्रपरावर्तन कहा था उसके पश्चात् कालपरावर्तन की परिभाषा हम यहां से समझेंगे। देखो, नीचे से पांचवीं लाइन है।

आगे कालपरावर्तन को कहते हैं। कोई जीव उत्सर्पिणी काल के पहले समय में जन्मा। यह उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी क्या है उसको हमने देखा था; उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल कहां पर होते हैं यह भी बात हमने देखी थी। क्या, ये सब जगह होते हैं? *श्रोता: नहीं।* तो? *श्रोता: भरत और ऐरावतक्षेत्र में।* भरत और ऐरावतक्षेत्र के आर्यखण्ड में यह उत्सर्पिणी, अवसर्पिणीरूप छहों कालों का परिवर्तन होता रहता है। तो हमने उनके नाम देखे थे। अवसर्पिणी के पहले काल को सुषमा-सुषमा कहते हैं; दूसरे को सुषमा कहते हैं; तीसरे को सुषमा-दुषमा कहते हैं; चौथे को दुषमा-सुषमा कहते हैं; पांचवें को दुषमा कहते हैं और छठे को दुषमा-दुषमा कहते हैं। उत्सर्पिणी में इसीको उलटे क्रम से देखेंगे हम। हमारा अभी अवसर्पिणी काल चल रहा है उसकी अपेक्षा हमने पहला काल, दूसरा काल, तीसरा काल, चौथा काल, पांचवां काल और छठा काल कहा।

तो यह जो पहला काल है यहां पर, वह क्या है? तो उत्तम भोगभूमि है और उसका काल कितना है? *श्रोता: चार कोड़ाकोड़ी सागर।* चार कोड़ाकोड़ी सागर है। दूसरा काल जो है जब यहां पर मध्यम भोगभूमि होती है तब वहां उसका कितना काल है? *श्रोता: तीन कोड़ाकोड़ी सागर।* तीन कोड़ाकोड़ी सागर। उसके पश्चात् यहीं पर जघन्य भोगभूमि शुरू होती है और वह दो कोड़ाकोड़ी सागर तक चलती है। उसके पश्चात् चौथा काल यहां प्रारंभ होता है; जिसको हम दुखमा-सुखमा या दुषमा-सुषमा कहते हैं; वह है एक कोड़ाकोड़ी सागर में ४२००० वर्ष कम। ये ४२००० वर्ष क्यों कम कहे? क्योंकि पांचवां और

छठा काल उतना है; २१००० वर्ष का पांचवां काल और २१००० वर्ष का छठा काल। यानी सब टोटल मिलकर ४ + ३ + २ + १ कितने हुये? १० कोड़ाकोड़ी सागर का अवसर्पिणी काल होता है और उतना ही १० कोड़ाकोड़ी सागर का उत्सर्पिणी काल होता है।

ऐसा ही कालों का यह चक्र-परिवर्तन भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में हमेशा ही चलता रहता है। कौनसे भरतक्षेत्र में? तो पांचों ही भरतक्षेत्रों में। भरतक्षेत्र पांच होते हैं हमने देखा था; पांच मेरु संबंधी पांच भरतक्षेत्र। ऐसा ही काल का परिवर्तन ऐरावत क्षेत्र में भी होता है। उन पांचों ऐरावतक्षेत्रों में ऐसा काल का परिवर्तन होता है। काल के ऐसे परिवर्तन अन्यत्र नहीं होते। अन्यत्र यानी विदेहक्षेत्र में नहीं होते। *श्रोता: वहां कुभोगभूमि होती है?* कहां पर? *श्रोता: पांच ऐरावतक्षेत्र और पांच भरतक्षेत्र में?* पांच ऐरावतक्षेत्र और भरतक्षेत्र में कुभोगभूमि होने का सवाल ही नहीं है क्योंकि वे कुभोगभूमि मात्र समुद्रों में हैं, लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र में हैं। हमने देखी न? लवणसमुद्र में २४ और २४ मिलकर ४८ और कालोदधि समुद्र में भी २४ और २४ मिलकर ४८ जो द्वीप हैं वहीं पर कुभोगभूमि होती हैं। *श्रोता: पूरे विश्व में?* हां! पूरे विश्व में वहीं पर होती हैं, अन्यत्र कहीं नहीं होती।

ये कुभोगभूमि हमने देखी थी और यह कालों का परिवर्तन भी हमने देखा था कि कहां कौनसा काल है। देखो, १६१ पृष्ठ पर है यह कालों की बात, फिर दोबारा हम जरा देखते हैं। जैन भूगोल की पुस्तक में १६० पृष्ठ पर है हमने वहां शरीर की ऊंचाई वगैरह कितनी बड़ी होती है वह बात देखी थी, आहार के बारे में भी देखा था। देखो, नीचे का पॅरेग्राफ १६० पृष्ठ पर **कहां कौनसा काल वर्तता है यह हमने पहले विस्तार से देखा था**। यह बात हमने देखी थी अभी, सुबह भी बात हुयी थी न उसके संबंध में। अब कहते हैं, **जहां हमेशा ही उत्तम, मध्यम या जघन्य भोगभूमि होती है वे क्षेत्र भी हमने देखे**। कहां पर होते हैं? जम्बूद्वीप में देखे थे वैसे ही अन्य चार मेरु संबंधी सभी द्वीपों में होते हैं।

विदेहक्षेत्र में हमेशा चौथा काल वर्तता है, वहां तीर्थंकरों की विद्यमानता भी हमेशा रहती है। मोक्षमार्ग एवं उसका उपदेश भी हमेशा चलता रहता है, उसका कभी लोप नहीं होता। यदि धर्म का लोप होगा तो यहां पर इस भरतक्षेत्र में कुछ काल के लिये हो सकता है। **हमें डर लगता है कि इस जैन धर्म का क्या होगा? उसका लोप हो**

जायेगा तो? किसीको यह डर नहीं है कि मैं जिनेन्द्रकथित तत्त्वज्ञान को अंगीकार नहीं करूंगा तो मेरा क्या होगा? लोक कितना बड़ा है यह हम देख रहे हैं, यदि हमने अपना स्वरूप नहीं समझा तो कहां जाकर जन्म लेंगे और कहां-कहां भटकना पड़ेगा इसका विचार करना। इसका भय लगे तो अच्छा है। संसार का भय लगे तो उसमें से छूटने का उपाय मुझे इसी भव में शीघ्रातिशीघ्र करना है, इस बात का एहसास होगा।

देखो, **भरत-ऐरावत के पांच-पांच म्लेच्छखण्डों में तथा विजयार्ध पर्वत की श्रेणियों में जहां विद्याधर रहते हैं वहां चौथे काल के आदि से अंत तक के समान हानिवृद्धि होती है**। क्या कहा कि विद्याधर कहां रहते हैं? *श्रोता: विजयार्ध पर्वत पर।* तो हमने जो विजयार्ध पर्वत देखे न, कौनसे विजयार्ध? जो भरतक्षेत्र हो, ऐरावतक्षेत्र हो या विदेहक्षेत्र हो उनमें आड़े ऐसे जो फ़ैले हैं विजयार्ध-अर्ध, दो आड़े भाग कर देते हैं उस देश के, दो आधे भाग ऊपर-नीचे ऐसा कहेंगे उसको; तो उसके कारण इसका नाम है विजयार्ध। एक विजयार्ध और दो नदियां, इनके कारण ये छह खण्ड बने हैं। तो ऐसे जो विजयार्ध हैं उनकी श्रेणियों में विद्याधर रहते हैं, विजयार्ध पर्वत की श्रेणियों में। वहां कौनसा काल है? तो हमेशा चौथा काल है। उसके आदि से अंत तक जितने व्हेरिएशन्स हैं, वे केवल हाइट-बॉडि की अपेक्षा ऐसा समझना। वैसी हानि-वृद्धि होती है।

देवों में हमेशा प्रथम काल, प्रथम काल यानी वह प्रथम काल सदृश वहां की स्थिति होती है। देवों में भोगों की या शरीर के लंबाई की सदृशता नहीं कहलाती परंतु पहले काल जैसे वहां उनका वातावरण रहता है। **नरकों में हमेशा छठवां काल सुख-दु:ख की अपेक्षा समझना; आयु, शरीर की अवगाहना या आहार की अपेक्षा नहीं**। क्योंकि देव तो कहीं ऐसा कुछ मुंह से खाते-पीते ही नहीं, कवलाहार तो होता ही नहीं है। **कुभोगभूमि में तीसरा काल होता है**। क्योंकि पल्य की आयु है न? हमने देखी थी यानी जघन्य भोगभूमि जैसा काल का वहां प्रमाण होता है। **स्वयंभूरमण समुद्र एवं आधा स्वयंभूरमण द्वीप इनमें दुखमा अर्थात् पांचवां काल वर्तता है**। यह तो आगम का कथन है कहां कौनसा काल वर्तता है, उसकी यह बात है। अभी वह विजयार्ध की बात या विद्याधरों की बात हम छोड़ देते हैं, हम थोड़ा अपना विषय पहले आगे बढ़ायेंगे। बाद में समय मिले तो

हम उनकी भी चर्चा करेंगे। ये विद्याधर कौन होते हैं, कहां रहते हैं, क्या वे मोक्ष प्राप्त करते हैं कि नहीं करते हैं उसकी चर्चा हम बाद में करेंगे। तो ये हमने जो छह प्रकार के काल देखे हैं, उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में, तो सबका मिलकर एक कल्पकाल कहने में आता है जो बीस कोड़ाकोड़ी सागर का होता है।

अब हम यहां और आगे पढ़ेंगे, जीवकाण्ड पुस्तक दूसरी, ६४३ पेज, **कोई जीव उत्सर्पिणी काल के पहले समय में जन्मा**। अब यह कौनसी पर्याय धारण करके जन्मा इससे हमें कुछ लेना-देना नहीं है; लोकाकाश के किस क्षेत्र में जन्मा, किस प्रदेश पर जन्म लिया इससे भी कुछ लेना-देना नहीं; कितनी अवगाहना के साथ जन्मा इससे भी कुछ लेना-देना नहीं; कब जन्मा है? तो कहते हैं, जब हमारे यहां उत्सर्पिणी काल शुरू होनेवाला है उसके पहले समय में उसने जन्म धारण किया। आप कहेंगे सर्वत्र तो उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी होती नहीं हैं, नहीं होने दो, हमें तो केवल काल सेट करना है। तो हमारे यहां जब उत्सर्पिणी चालू हो जायेगी, उसका पहला समय हुआ तब इस जीव ने कहीं न कहीं जन्म धारण किया। भले वह नारकी हो, देव हो, कोई निगोद हो, कुछ भी हो, उसने पहले समय में उसकी वह आयु चालू की; यानी देह धारण किया, यानी जन्मा हम कहेंगे उसको। **अपनी आयु को पूर्ण करके मरा**। कोई अंतर्मुहूर्त में मरेगा और नारकी होगा तो ३३ सागर करके मरेगा उससे कुछ लेना देना नहीं। कितनी आयु के साथ जन्मा है, वह अपनी चर्चा का विषय यहां नहीं है।

फिर दूसरी (अन्य) उत्सर्पिणी के दूसरे समय में जन्मा। उत्सर्पिणी की बात चल रही है क्योंकि हमने उत्सर्पिणी से शुरू किया है। तो उत्सर्पिणी के पहले समय में जन्मा था, जितनी आयु लेकर आया था वह आयु पूरी होकर मर गया। फिर पूरे बीस कोड़ाकोड़ी सागर का चक्कर काटकर दूसरी उत्सर्पिणी जब शुरू हुयी, बीच में कितनी बार वह जन्म-मरण करते-करते-करते यहां आया है। जब दूसरी उत्सर्पिणी शुरू हुयी, तो उसको दूसरे ही समय में जन्म लेना है। *श्रोता: आयु कितनी भी हो?* आयु कितनी भी हो, *श्रोता: बीस कोड़ाकोड़ी सागर के बाद लेना?* बिलकुल बीस कोड़ाकोड़ी सागर के बाद दूसरा अवसर आयेगा और उसे एक्झॅक्ट दूसरे समय में जन्म लेना चाहिये। *श्रोता: एक्झॅट उसी समय में?* तभी तो! अभी तो हमने शुरूआत भी नहीं की है।

श्रोता: यह विग्रहगति के पहले समय में जन्म होगा? आयु का पहला समय लेना, उसकी आयु शुरू हो गयी ऐसा ले लेना। *श्रोता: विग्रहगति के पहले समय से आयु नयी चालू हो जाती है न?* हां, नयी यानी उसकी आयु का प्रारंभ हो गया, वह गति चालू हो गयी उसकी, उसी समय से शुरू करना। यानी यहां का अंतिम समय, मर गया और वहां उसने जन्म ले लिया। इसतरह से हम ले लेंगे उसको। समझ में आती है बात? यानी उसका एक्झॅट मरण भी एक समय पूर्व हो गया तो दूसरे समय में जन्म धारण करेगा वह। हो सकता है कि चार समय अभी मरने को बाकी हैं तो उस समय जन्म कैसे धारण करेगा? हो सकता है कि दो समय पहले ही जन्म धारण किया है तो उसका वह भव चल रहा है। तो दूसरे उत्सर्पिणी के दूसरे समय में ही उसको जन्म धारण करना है। अभी वह समय छूट गया, एक समय के अंतर से भी अगर चूक गया, *श्रोता: वापस घूमेगा।* तो फिर बीस कोड़ाकोड़ी सागर तक जन्म-मरण करते-करते फिर आ जायेगा। तब भी अगर उसका दूसरे समय में जन्म नहीं हुआ तो फिर और बीस कोड़ाकोड़ी सागर के बाद उसको अवसर आयेगा, *श्रोता: चान्स मिलेगा।* जब कभी जाकर वह दूसरे ही समय में जन्म धारण करेगा तब उसको अनुक्रम में गिनना।

श्रोता: फिर काल तो गिनना? काल तो गिनना; उसमें बीच में असंख्यात-असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी भी चली जाये। हो सकता अनंतकाल चला जावे, परंतु उत्सर्पिणी के दूसरे ही समय में जब कभी जन्म होगा उसका, तब हम उसको अनुक्रम में गिनेंगे। नहीं तो चलो, चक्कर काटो, फिर और एक उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी घूमो, और एक उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी घूमो। कितनी ही बार ऐसा हो जायेगा, यानी यहां काल का परिवर्तन तो चल रहा है और उसको हम दस कोड़ाकोड़ी और दस कोड़ाकोड़ी, बीस कोड़ाकोड़ी सागर में नाप रहे हैं। यानी एक-एक अवसर उसको बीस कोड़ाकोड़ी सागर के बाद आनेवाला है और यह समय कितना सूक्ष्म है हमें मालूम है। समय की सूक्ष्मता थोड़ी देर के बाद फिर देखेंगे हम, पहले हमने देखी है फिर भी देखेंगे, उसके पहले ये दो-चार वाक्य पढ़ लेते हैं, है न?

कोई जीव उत्सर्पिणी काल के पहले समय में जन्मा, अपनी आयु को पूर्ण करके मरा। फिर दूसरी यानी **अन्य उत्सर्पिणी के दूसरे समय में जन्मा, अपनी आयु**

को पूर्ण करके मरा। पुनश्च तीसरी यानी **अन्य किसी उत्सर्पिणी के तीसरे समय में उत्पन्न हुआ, वैसे ही मरा। इसतरह दस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण उत्सर्पिणी काल के जितने समय हैं, उनको पूर्ण करता है। पश्चात् इसी अनुक्रम से दस कोड़ाकोड़ी प्रमाण अवसर्पिणी काल के जितने समय हैं उनको पूर्ण करता है**। तो यह समय कितना सूक्ष्म है उसको जरा देख लेते हैं हम। क्योंकि हमने देखा था न? एक सेकंड में इतनी सारी हजारों कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं और एक आवली में जघन्य युक्तासंख्यात समय होते हैं और वह जघन्य युक्तासंख्यात के समयों का प्रमाण कैसे निकालना वह भी जरा देख लेते हैं। पहली पुस्तक निकालना, जीवकाण्ड। क्योंकि काल हम गिन रहे न? तो काल गिनने का थोड़ा नाप भी ख्याल में आवे तो अच्छा है, पेज नंबर है २१७। ये जो गिनने के तरीके हैं, जब हम कहेंगे द्रव्यों को गिनना यानी कि द्रव्यों की संख्या को बताते हैं। क्षेत्रमान यानी वह हम प्रदेशों को बतायेंगे।

देखो निकालना, मैं यहीं से पढकर बताऊंगी आपको, २१७ पेज है और नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ है। चलो, पहले से ही पढ़ लेते हैं। देखो, **मान दो प्रकार का है**। क्योंकि हमारे लौकिक के साथ कंपॅरिझन करना है इसलिये ऊपर के पॅरेग्राफ से पढ़ रहे हैं। मान यानी मेझरमेंट, माप। **एक लौकिक मान और एक अलौकिक मान, वहां लौकिक मान छह प्रकार का है। मान, उन्मान, अवमान, गणितमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमान, ये तो छह प्रकार हो गये। वहां पाइ, माणी (पैसा) आदि मान जानना**। पहले के जमाने के ये कॉइन्स थे न? तीन पाइ का एक पैसा होता था वगैरह-वगैरह। अब हमारे यहां पर अभी पैसे को कौन गिनता है? अठन्नी, रुपया, अब चवन्नी भी गयी। **ताखड़ी का तौल** यानी **तराजू में तोलना, वजन** जिसको हम कहेंगे, **किलो, पौंड आदि यह उन्मान जानना। चल इत्यादि का प्रमाण** चल यानी **प्रवाही चीजों का माप-लीटर, औंस आदि अवमान जानना। एक-दो से लेकर गणितमान जानना। चरिम तोला, मासा,** चरिम यानी बिलकुल छोटा वजन जो है न? जैसे **ग्रॅम, मिलिग्रॅम आदि प्रतिमान जानना** और **घोड़े का मूल्य इत्यादि तत्प्रतिमान जानना।**

इत्यादि में अभी क्या चल रहा है, मुंबई में जगह का भाव क्या चल रहा है? उसको तत्प्रतिमान बोलो अभी, इतना स्क्वेअर फीट, इतने रुपये पर स्क्वेअर फीट। ऐसे ही लोग

तभी तो घोड़े की कीमत बताते थे, हाथी की बताते थे। अभी हम अलौकिक मान की चर्चा करेंगे। **अलौकिक मान के चार भेद हैं – द्रव्यमान, क्षेत्रमान, कालमान और भावमान। वहां द्रव्यमान में जघन्य द्रव्यमान एक परमाणु और उत्कृष्ट द्रव्यमान सभी पदार्थों का प्रमाण**। क्या कहते हैं? जघन्य द्रव्यमान यानी एक द्रव्य, एक परमाणु कहेंगे हम और सभी द्रव्यों का प्रमाण कितना है? कोई बतायेगा? सभी को मिलकर? *श्रोता: अनंत।* अनंत, गिनाओ सब द्रव्य, छह द्रव्यों की संख्या गिनना। आप बता रहे हैं? बोलो –

श्रोता: जीव अनंत। जीव अनंत, *श्रोता: पुद्गल अनंतानंत।* पुद्गल अनंतानंत, कितने अनंतानंत हमने देखे थे? द्विरूपवर्गधारा में जहां जीवों की संख्या आती है वह भी अनंत में है। उसको अनंतानंत बार वर्ग करते जाओ तब जो संख्या आयेगी वह है पुद्गल परमाणुओं की संख्या। इस विश्व में इतने पुद्गल परमाणु वे सारे द्रव्य हैं, एक परमाणु एक द्रव्य है। स्कंध को हम पुद्गल कह देते हैं परंतु वह द्रव्य नहीं है, वह तो उनकी पर्याय है, अनेक द्रव्यों की मिलीजुली पर्याय है, यहां तो द्रव्यों की संख्या देखनी है। तो जीवद्रव्य अनंत हैं और पुद्गलद्रव्य अनंतानंत हैं। फिर? *श्रोता: धर्मास्तिकाय एक।* धर्मास्तिकाय एक सिंगल द्रव्य है, पूरे लोकाकाश में फैला हुआ। फिर, *श्रोता: अधर्मद्रव्य।* अधर्म कहो या अधर्मास्तिकाय वह एक द्रव्य है। फिर, *श्रोता: आकाशद्रव्य एक।* आकाशद्रव्य एक है। *श्रोता: कालद्रव्य असंख्यात।* कालद्रव्य कितने असंख्यात हैं? *श्रोता: लोक में जितने प्रदेश हैं उतने असंख्यात हैं।* लोकप्रमाण असंख्यात, लोक में जितने प्रदेश हैं उतने असंख्यात हैं। इन सबकी टोटल करो। अनंत जो कोई प्रमाण है तो यह हुआ है उत्कृष्ट द्रव्यमान; द्रव्यों का प्रमाण, मान यानी प्रमाण।

क्षेत्रमान में जघन्य क्षेत्रमान एक प्रदेश, क्योंकि हमने देखा न? छोटे में छोटा जो क्षेत्र का यूनिट है, नाप है वह है एक प्रदेश और **उत्कृष्ट क्षेत्रमान** है **संपूर्ण आकाश द्रव्य के प्रदेश**। हमने देखा था कि जीव से अनंतानंतगुणे तो पुद्गल परमाणु हैं, उसी द्विरूपवर्गधारा में देखा था और जहां पुद्गल की संख्या का अनंतानंत बार वर्ग करेंगे तो तीन काल के समयों की संख्या आती है और उससे भी अनंतानंत वर्गस्थान चले जाओ तो आकाशद्रव्य के प्रदेश आते हैं, वह भी श्रेणीरूप आकाश के, उसको फिर घनरूप करो तो आकाश के संपूर्ण प्रदेश आते हैं। तो उत्कृष्ट क्षेत्र तो आकाशद्रव्य के प्रदेशों का है; इसको उत्कृष्ट

क्षेत्रमान कहेंगे। **कालमान में जघन्य कालमान एक समय है**। कालमान जब कहेंगे तो व्यवहारकाल को गिनना है क्योंकि द्रव्यरूप से तो हमने उसको ऊपर द्रव्यमान में गिना है। यहां हम जो कालमान कह रहे हैं वह तो हमें व्यवहारकाल यानी कितने समय बीत गये, ऐसा हम कहेंगे उसकी चर्चा है। जघन्य तो एक समय है और **उत्कृष्ट कालमान तीन काल के समयों का समूह है। भावमान में जघन्य भावमान सूक्ष्म निगोदिया लब्धिअपर्याप्त का लब्धिअक्षरज्ञान है।**

देखो, सूक्ष्म निगोद लब्धिअपर्याप्त में जितना ज्ञान का उघाड है, उसका नाम मालूम है? *श्रोता: पर्यायज्ञान।* पर्यायज्ञान, उसीको अक्षर का अनंतवां भाग कहेंगे और उसीको लब्धिअक्षरज्ञान भी कहेंगे। यानी इससे हीन ज्ञान किसीको नहीं है और इतना ज्ञान तो रहेगा ही रहेगा किसी जीव को, जीव बिलकुल जड़ हो जावे ऐसा कभी भी हो नहीं सकता। यानी ज्ञान की कितनी भी हीन पर्याय, हीन दशा क्यों न हो; इतना तो ज्ञान का उघाड रहेगा ही रहेगा जिसको हम पर्यायज्ञान कहते हैं, जो अक्षरज्ञान का अनंतवां भाग है। तो यह है जघन्य भावमान। इसके जो अविभागप्रतिच्छेद हैं; भाव यानी यहां पर्याय में जो शक्ति प्रकट है उसके जो अविभागप्रतिच्छेद हैं उसको यहां भावमान कहने में आता है और **उत्कृष्ट भावमान** क्या है? तो **केवलज्ञान**, केवलज्ञान यानी केवलज्ञान के अविभागप्रतिच्छेद। उससे उत्कृष्ट संख्या ही इस विश्व में नहीं है।

श्रोता: यह जो बताया आपने जघन्य ज्ञान, लब्धिअपर्याप्तज्ञान... नहीं, लब्धिअक्षरज्ञान। *लब्धिअक्षरज्ञान, तो वह इसको ही पर्यायज्ञान में ही हम गठित करे?* उसीको पर्यायज्ञान कहते हैं। *श्रोता: क्योंकि पर्यायसमास ही अक्षरसमास है न?* अक्षरसमास नहीं, पर्यायसमास है। *श्रोता: तो पर्याय, पर्यायसमास, उसके बाद अक्षर, अक्षरसमास इसप्रकार से? तो फिर कि जो अक्षरज्ञान में बताया तो यह पर्यायज्ञान को ही यहां पर घटित करना है न? तीसरा भेद अक्षर हैं न इसलिये?* यहां तीसरा भेद कहते हैं; परंतु देखो जब हम कहते हैं न, पर्यायज्ञान सबसे मिनिमम ज्ञान; फिर आगे थोड़ा-थोड़ा ज्ञान बढ़ता-बढ़ता-बढ़ता-बढ़ता उसके कितने भेद हो जाते हैं; कितने हो जाते हैं? असंख्यात लोकप्रमाण, जिसमें असंख्यात लोक बार षट्स्थानवृद्धि के भेद हैं। अब एक बार षट्स्थानवृद्धि होती है, तो अनंतभागवृद्धि आदि के कांडक कितनी-कितनी बार हो जाते हैं। तो इतने भेद पार करने के बाद

अक्षरज्ञान नाम का ज्ञान आता है। और उसके बाद अक्षरसमास यानी दो अक्षर, तीन अक्षर, चार अक्षर इसतरह से हैं, ख्याल में आया? उसको दूसरा और तीसरा इतना ही नहीं कहेंगे; वह दूसरे और तीसरे में इतने भेद गर्भित हैं। तो यह सबसे छोटे में छोटे या जघन्य में जघन्य जो ज्ञान है उसको यहां लब्धिअक्षरज्ञान कहेंगे, उसीका नाम है पर्यायज्ञान।

यह जो द्रव्यमान है; द्रव्यमान यानी हमें संख्या गिननी है, उस संख्या को हम किसीके लिये भी अप्लाय करेंगे। प्रदेशों के लिये कहेंगे, समयों के लिये कहेंगे, द्रव्यों के लिये कहेंगे। इसको कहेंगे द्रव्यमान यानी संख्या बतानी है। तो संख्या में एक होता है संख्यामान और एक होता उपमामान। इसका अर्थ क्या है? ये जो बड़ी-बड़ी संख्यायें हैं, असंख्यातों में, उनको उपमा देकर समझायी जाती हैं। जैसे आपको मालूम होगा पल्य; पल्य कहने से वह गड्ढा जो है उसकी अपेक्षा से वह बात समझायी गयी है। सागर यानी वह तो लवणसमुद्र है, तो उसमें पल्य जैसे कितने खण्ड होंगे उसकी अपेक्षा वह बात समझाते हैं, तो इसको कहेंगे उपमामान। तो दो हमने देखे – **एक** तो **संख्यामान** और **एक उपमामान**। अब संख्यामान को देखते हैं। **वहां संख्यामान के तीन भेद हैं – संख्यात, असंख्यात और अनंत**। ये बहुत बार हम असंख्यात, अनंत जैसे शब्द तो सुनते हैं। परंतु उनका सही भावभासन नहीं होता। **वहां संख्यात तीन प्रकार का है – जघन्य संख्यात, मध्यम संख्यात** और **उत्कृष्ट संख्यात।**

तो जघन्य संख्यात की व्हॅल्यू क्या है? *श्रोता: दो।* दो है, एक नहीं। एक को संख्यात में नहीं गिना है क्योंकि एक का आप कितनी ही बार वर्ग करो, कितनी ही बार आपस में गुणा करो, कितनी ही बार भागाकार करो तो संख्या एक ही आती है। इसलिये उसको संख्यात में नहीं गिना है। संख्यात की जघन्य संख्या शुरू होती है दो से और सबसे उत्कृष्ट संख्यात का प्रमाण कितना है? तो कहते हैं जो मिनिममवाला असंख्यात है उससे एक कम है। तो छोटे में छोटा असंख्यात कौनसा है? तो कहेंगे जघन्य परीतासंख्यात। उत्कृष्ट संख्यात कितना है? तो जघन्य परीतासंख्यात में से एक मायनस कर दो, एक कम कर दो तो क्या आयेगा? उत्कृष्ट संख्यात का प्रमाण मिल जायेगा। यहां तक बात ख्याल में आयी? अब पढ़ेंगे। तो **संख्यात तीन प्रकार के हैं – जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट**। जघन्य दो है और उत्कृष्ट वह जघन्य परीतासंख्यात में एक कम, इतना है। तो मध्यम के भेद

कौनसे होंगे? तीन, चार, पांच, छह, सात, ... सब, एक लास्ट का छोडकर; ये सारे मध्यम संख्यात के भेद कहलायेंगे। नहीं समझे? यदि हमने जघन्य २ कहा और उत्कृष्ट १०० कहा तो मध्यम के भेद कौनसे होंगे? तीन, चार, पांच, ... ३ से लेकर ९९ तक; ख्याल में आता है? ऐसे ही यहां पर भी समझना, मध्यम कहने से केवल एक संख्या नहीं है वह, एक-एक से बढ़ती हुयी सभी संख्यायें मध्यम में गर्भित हो जाती हैं।

असंख्यात है वह भी **परीतासंख्यात, युक्तासंख्यात और असंख्यातासंख्यात**। असंख्यातासंख्यात का अर्थ होता है – असंख्यात-असंख्यात, तो 'अ' का 'त' के साथ मिलकर 'ता' हो गया असंख्यातासंख्यात। ये तीन हो गये, उसके मुख्य तीन भेद हुये। असंख्यात के तीन भेद; कौनसे? परीतासंख्यात यानी परीत असंख्यात, फिर युक्त असंख्यात यानी युक्तासंख्यात और असंख्यातासंख्यात ये मूल तीन भेद हुये। अब हर एक में **जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट**, जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट लगा लेंगे। **तीनों के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद से नौ प्रकार** हुये, तीनों के हर एक के तीन-तीन। संख्यात के कितने हुये थे? तीन। असंख्यात के? नौ। **अनंत है, वह परीतानंत, युक्तानंत और अनंतानंत**। उसी पद्धति से नाम हैं। **इन तीनों के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद से नौ प्रकार का है**। हमने संख्यात तीन प्रकार के देखे, असंख्यात नौ प्रकार के और अनंत भी नौ प्रकार के देखे। **ऐसे संख्यामान के इक्कीस भेद हुये**। यह तो आसान है न समझना? ये इक्कीस भेद यानी वे मध्यम के कितने भेद होते हैं वे देख लेना। केवल जघन्य का एक भेद होगा, उत्कृष्ट का एक भेद होगा, बीचवाले तो सब उसके अलग-अलग भेद होंगे। **उनमें जघन्य संख्यात दो संख्यामात्र है। यहां एक का गुणकार भागहार करने पर कुछ वृद्धि हानि होती नहीं है, इसलिये दो को ही संख्यात के भेदरूप से ग्रहण किया है, एक को नहीं। पुनश्च तीन आदि संख्यायें मध्यम संख्यात के भेद हैं इसलिये दो ही को जघन्य संख्यात कहते हैं**। और **तीन से लेकर एक कम उत्कृष्ट संख्यात पर्यंत मध्यम संख्यात जानना**। यह बात समझ में आयी? सरल है।

अब कहते हैं पुनश्च – यह एक वाक्य यहां होना चाहिये क्योंकि आगे चलकर वह जघन्य परीतासंख्यात बतानेवाले हैं। इसलिये वह ब्रॅकेट में डाला है, मूल में यह वाक्य नहीं था। **(पुनश्च एक कम जघन्य परीतासंख्यात को उत्कृष्ट संख्यात जानना)**। अब यह

जघन्य परीतासंख्यात यानी असंख्यात में से सबसे छोटे में छोटा असंख्यात, उसका नाम है जघन्य परीतासंख्यात। अब यह जघन्य परातीसंख्यात की व्हॅल्यू कैसे निकालनी? वह कितना बड़ा होगा तो उसको थोड़ासा वे समझाते हैं यहां पर। अभी हम उसको पढ़ेंगे, आपके हाथ में पुस्तकें हैं और यह बात बिलकुल सरल है।

उसको जानने के लिये उपाय कहते हैं। क्योंकि असंख्यात तो हमारे मति-श्रुत ज्ञान का डायरेक्ट विषय नहीं है, हम तो उसे आगम से समझ सकते हैं। आगम से हम इसको जान रहे हैं। अवधिज्ञानी के प्रत्यक्ष ज्ञान का यह विषय हो सकता है और अनंत है उसे प्रत्यक्ष तो केवलज्ञानी ही जानते हैं और हम-आप श्रुतज्ञान के द्वारा इसको जान सकते हैं, आगम से जान सकते हैं। तो **जघन्य परीतासंख्यात कितना है? उसको जानने के लिये उपाय कहते हैं**। अब यहां क्या करना है कि चार कुण्ड बनाना है, कुण्ड समझते हैं? *श्रोता: खड्डा।* खड्डा-खड्डा, हां गड्ढे करेंगे। तो उनके नाम क्या-क्या हैं? देखो, पहला है वह **अनवस्था कुण्ड**, दूसरा है **शलाका कुण्ड**, तीसरा है **प्रतिशलाका कुण्ड** और चौथा है **महाशलाका कुण्ड**। ये **चार कुण्ड करना**। कोई नाम बतायेंगे? *सभी श्रोता: अनवस्था कुण्ड,* अनवस्था कुण्ड। *शलाका कुण्ड,* शलाका कुण्ड, *प्रतिशलाका कुण्ड,* प्रतिशलाका कुण्ड। *महाशलाका कुण्ड,* महाशलाका कुण्ड। अभी यह कितना बड़ा करना तो प्रत्येक का प्रमाण जम्बूद्वीप समान, एक लाख योजन चौड़ा है; यानी उसका व्यास – जो गोल गड्ढा करना है उसका व्यास यानी डायमीटर जो है वह एक लाख योजन चाहिये, यह महायोजन है। **जम्बूद्वीप समान** है न? द्वीप तो महायोजनों मे नापते हैं। तो यह महायोजन प्रमाण यह गड्ढा करना। *श्रोता: सब?* सभी, अनवस्था भी, शलाका भी, प्रतिशलाका भी और महाशलाका भी। ऊंडा कितना करना, गहरा? **एक हजार योजन ऊंडा** करना।

देखो, यहां पढ़ने के पहले हम अपनी भाषा में थोड़ा समझेंगे। यहां करना क्या है? तो सबसे पहले जो अनवस्था कुण्ड है न, उसको भर देना है। हम तो समझने के लिये कहेंगे कि चार सरसों, सरसो यानी वह राई होती है न, उसको सरसो कहते हैं। चार सरसों से पहला कुण्ड भर जायेगा ऐसा हम मान लेते हैं; यथार्थ में कितनी सरसों लगती हैं वह बाद में बतायेंगे। हम समझने के लिये मानते हैं कि एक-एक कुण्ड भरने के लिये चार-चार सरसों काफी हैं। तो पहले अनवस्था कुण्ड में जब चार सरसों भरी जायेगी तब एक सरसो हम

शलाका कुण्ड में डालेंगे। बराबर? फिर वह अनवस्था कुण्ड खाली कर देना। अभी हम सबको एक साइझ का रख रहे हैं, समझाने के लिये। दूसरी बार जब अनवस्था कुण्ड को भरेंगे तब दूसरी बार एक सरसो शलाका कुण्ड में डालनी। *श्रोता: प्रतिशलाका में?* प्रतिशलाका में अभी नहीं डालना है। फिर से, जब एक अनवस्था कुण्ड पूरा भर जाता है तब एक ही सरसो शलाका कुण्ड में डालनी। पहलेवाला अनावस्था कुण्ड खाली कर देना। फिर दूसरी बार अनवस्था को भर देना। फिर दूसरी सरसो शलाका में डालनी। तीसरी बार जब अनवस्था को फिर भर देंगे, तब तीसरी सरसो शलाका में डालनी। जब चौथी बार अनवस्था कुण्ड भर गया तो चौथी सरसो शलाका में डालनी। यानी शलाका भी एक बार भर गया तो एक सरसो प्रतिशलाका में डालनी है। अब क्या करना? अनवस्था और शलाका दोनों खाली कर देना। फिर क्या करना? फिर अनवस्था कुण्ड भरेंगे, तो एक सरसो शलाका में आयेगी। ऐसे ही करते-करते जब शलाका कुण्ड दूसरी बार भर जायेगा, तब दूसरी सरसो प्रतिशलाका में जायेगी।

देखो, इसका हिसाब लगाते हैं जरा। देखो हमने चार कुण्ड किये, चार सरसों से एक-एक कुण्ड भरता है ऐसा हमने नक्की किया। जब पहला कुण्ड पूरा भरेगा; पूरा भरेगा यानी हमने चार सरसों से अनवस्था कुण्ड भरा तब एक सरसो शलाका कुण्ड में डालनी है। तो चार बार अनवस्था कुण्ड भरने पर, एक बार शलाका कुण्ड भरेगा। यह तो आसान है? चार बार अनवस्था कुण्ड भरेगा, तब जाकर एक बार क्योंकि हर बार हमने शलाका कुण्ड में एक-एक सरसो डाली है, तो एक बार शलाका कुण्ड भर जायेगा तब एक सरसो प्रतिशलाका में जायेगी। ऐसे चार शलाका कुण्ड यानी १६ अनवस्था कुण्ड हो जाने पर प्रतिशलाका कुण्ड भरेगा। क्योंकि उसमें चार सरसों आ जायेंगी, तब एक सरसो महाशलाका में गयी। ऐसे चार बार प्रतिशलाका कुण्ड भर जायेंगे। उसका अर्थ है १६ शलाका कुण्ड हो जायेंगे; अर्थात ६४ अनवस्था कुण्ड हो जायेंगे, तब महाशलाका पूरा भरेगा। यह ख्याल में आती है बात?

हमने चार का प्रमाण नक्की किया, फिर दुबारा सुनना। अनवस्था कुण्ड जब एक बार भरा तब जाकर हमने शलाका कुण्ड में एक सरसो डाली, दूसरी बार भरा तो दूसरी डाली, तीसरी बार भरा तो तीसरी डाली, चौथी बार भरा तो चौथी डाली; इसतरह शलाका

कुण्ड एक बार भरा तब जाकर हमने प्रतिशलाका कुण्ड में पहली सरसो डाली। तो प्रतिशलाका कुण्ड में चार बार सरसो डालने के लिये शलाका कुण्ड भी चार बार भरना चाहिये और शलाका कुण्ड चार बार भरने के लिये अनवस्था कुण्ड सोलह बार भरने चाहिये। यह कितना आसान है, कठिन तो कुछ नहीं है इसमें। यह ख्याल में आयी इतनी बात? तो उसका अर्थ क्या है? महाशलाका कुण्ड एक बार भरने के लिये अनवस्था कुण्ड कितनी बार भरने चाहिये? ६४ बार यानी चार के घन बार। बात समझ में आयी कि नहीं आयी?

श्रोता: शलाका १६ और प्रतिशलाका ४? हां, यानी महाशलाका कुण्ड एक बार भरने के लिये प्रतिशलाका कुण्ड चार बार भरने चाहिये; प्रतिशलाका कुण्ड चार बार भरने के लिये तो शलाका कुण्ड ४ × ४ = १६ बार भरने चाहिये और वह १६ बार भरने के लिये १६ × ४, अनवस्था कुण्ड ६४ बार भरने चाहिये। हमने चार सरसों से भर जाता है ऐसा कहा, यानी प्रथम अनवस्था कुण्ड जितनी सरसों से भर जाता है उसके घन बार अनवस्था कुण्ड भरेंगे तब जाकर महाशलाका कुण्ड पूरा भर जायेगा। यह हमारा बिलकुल बेसिक सिद्धांत है। अब हम इसको पढ़ेंगे। हमने तो अनवस्था को यहां ईक्वल लिया हर बार। दूसरा बेसिक सिद्धांत क्या है? हर बार का जो अनवस्था कुण्ड है वह बढ़ता चला जायेगा। पहली बार जितनी सरसों से अनवस्था कुण्ड भरता है अब उसका क्या होता है, क्यों बड़ा होता, उसको भी हम पुस्तक में से पढ़ेंगे। देखो-देखो, अपनी पुस्तक निकालना, २१८ पेज, हम एकदम असंख्यात कह देते हैं, परंतु असंख्यात का भावभासन नहीं होता है। यह तो छोटे में छोटा असंख्यात है, तो देखो फिर पढ़ेंगे।

जघन्य परीतासंख्यात किसे कहना या **कितना है? उसको जानने के लिये उपाय कहते हैं। अनवस्था, शलाका, प्रतिशलाका, महाशलाका नामधारक चार कुण्ड करना। उनका प्रत्येक का प्रमाण जम्बूद्वीप समान लाख योजन चौड़ा और एक हजार योजन ऊंडा जानना**। यहां चार कुण्ड बनाकर दिखाये हैं; अनवस्था, शलाका, प्रतिशलाका और महाशलाका; और हर एक का व्यास एक लाख योजन है और प्रत्येक एक हजार योजन ऊंडा है। अब क्या करना? **उनमें से अनवस्था कुण्ड गोल सरसों से सिघाऊ भरना**, सिघाऊ समझते हैं? मराठी में क्या कहते हैं, शिग भरून। ऊपर उसकी

रास करना। एक होता है फ्लॅट, एक होता है रास सहित। *श्रोता: पिरॅमिड टाइप।* पिरॅमिड टाइप उसको भर देना; जैसे हम अनाज भरते हैं माप में, तो पूरा ऐसा ऊपर तक भरते हैं। यहां आपने देखा होगा खेत में, वह रास करते हैं न? धान की रास करते हैं, ऐसे तो पूरा भर देते हैं, *श्रोता: ढेर लगाते हैं।* हां, ढेर लगा देते हैं, ऐसा ही करना।

तो वह कितने सरसों के द्वारा भर जाता है? क्योंकि इतना लाख योजन चौड़ा है और ऊंडा एक हजार योजन है। तो कहते हैं, **१९७९१२०९२९९९६८ इतने तो अंक अनुक्रम से लिखने, उनके आगे इकतीस शून्य और लिखने, इतने प्रमाण सरसों तो कुण्ड के अंदर भर जाती हैं**। यानी फ्लॅट और **उस कुण्ड के ऊपर आकाश में राशि करते हैं** यानी **सिघाऊ भरना कहते हैं। सो ऊपर कितनी सरसों का ढ़ेर होता है?** तो **१७९९२००८४५४५१६। इतने तो अनुक्रम से लिखने और इनके आगे सोलह बार छत्तीस-छत्तीस लिखने। इतनी सरसों और चार सरसों का ग्यारहवां भाग** यानी **४/११ इतनी सरसों का ऊपर ढ़ेर होता है**। तो ऐसा कैसे निकाला? तो **गोल घनरूप क्षेत्रफल के करणसूत्र द्वारा और अन्य राशि के करणसूत्र द्वारा होता है, सो त्रिलोकसार आदि ग्रंथों में से जानना**। जैसे सिलिंडर है। *श्रोता: करणसूत्र मतलब?* करणसूत्र यानी गणित के जो फॉर्म्युले होते हैं न, उनको करणसूत्र कहते हैं। कोई गोल चीज़ है सिलिंडर जैसी, तो सिलिंडर का घनफल कैसे निकालते हैं? वहां पहले नीचे के गोलाकार का क्षेत्रफल निकालेंगे और फिर हाइट से उसको गुणा करेंगे तो उसका घनफल आयेगा और ऊपर जो है न ऐसा, शंकु के आकार का? उसका भी घनफल निकालना पड़ेगा। हम उसके इतने विस्तार में नहीं जायेंगे। उन्होंने हमें डायरेक्ट उसका उत्तर बता दिया है।

तो **इन दोनों राशियों का जोड़ देने पर एक हजार नौ सौ सत्तानवे**, क्या कहा १९९७ **कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी**। कोड़ाकोडी में १४ झिरो आते हैं; दूसरी बार कोड़ाकोड़ी यानी और १४; तीसरी बार कोड़ाकोड़ी यानी और १४; इसका अर्थ है ४२ डिजिट तो यहीं पर हो गये और १९९७ ये चार डिजिट हुये यानी ४६ डिजिट यहीं पर हो गये। ख्याल में आती हैं न बात? तो एक हजार नौ सो सत्तानवे, यह नीचे के ब्रॅकेट में जो फिगर है न? उसको साथ-साथ सामने रखकर पढ़ना या सुनना। **एक हजार नौ सौ**

सत्तानबे कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी फिर **ग्यारह लाख उनतीस हजार तीन सौ चौरासी कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी कोड़ी**, क्योंकि ये सात डिजिट हैं न? तो एक कोड़ी कम हो गया। फिर **इक्यावन लाख इकतीस हजार छह सौ छत्तीस कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी** और सात डिजिट कम हो गये। **छत्तीस लाख छत्तीस हजार तीन सौ तिरसठ कोड़ाकोड़ी कोड़ी**, फिर **तिरसठ लाख तिरसठ हजार छह सौ छत्तीस कोड़ाकोड़ी** फिर **छत्तीस लाख छत्तीस हजार तीन सौ तिरसठ कोड़ी**, फिर **तिरसठ लाख तिरसठ हजार छह सौ छत्तीस सरसों और चार सरसों का ग्यारहवां भाग इतनी सरसों द्वारा अनवस्था कुण्ड सिघाऊ भर गया।**

हमने क्या किया, लाख योजन विस्तारवाले और हजार योजन ऊंडाईवाले चार कुण्ड बनाये। उसमें से पहला अनवस्था कुण्ड इतनी सरसों द्वारा, इतनी यानी कितनी? अभी दोबारा नहीं कहेंगे। वे छियालीस डिजिट और चार ग्यारांश इतनी सरसों द्वारा पहला अनवस्था कुण्ड; पहला इसलिये कह रहे हैं, अब यहां से शुरुआत हुयी; वह सिघाऊ भर दिया। भर दिया न? अब क्या करना? **ऐसे भरने पर अन्य एक सरसो** उसमें से नहीं लेना। **अन्य एक सरसो को शलाका कुण्ड में डाले**। क्योंकि एक बार अनवस्था कुण्ड भर गया है इसलिये एक सरसो हम शलाका कुण्ड में डालेंगे। शलाका कुण्ड भरने के लिये भी इतनी सरसों लगनेवाली है। *श्रोता: तो वह बाहर से लेना है?* बाहर से, इसमें से नहीं लेना, वह बाहर से लाना। आप कहेंगे – कहां से लाना इतना? अरे! इमॅजिन करो न? हमें कहां लाना है। देवों को बोलो, इतने लाकर वे देवें।

तो **एक सरसो को शलाका कुण्ड में डाला और उस अनवस्था कुण्ड की सर्व सरसों को मनुष्य है वह बुद्धि द्वारा** क्या कहा? क्योंकि अभी इससे आगे क्या करना है? एक-एक द्वीप और एक-एक समुद्र में एक-एक सरसो डालते हुये आगे चलना है। क्योंकि हमारे पास एक पहला जम्बूद्वीप है फिर लवणसमुद्र है फिर धातकीखण्ड है, कालोदधि समुद्र है, ऐसे एक में एक, एक में एक, एक में एक डालते चलना, देखो **अथवा देव है, वह हस्तादिक से ग्रहण करके** यानी देव अपने हाथ से डालते चले जायेंगे। इतने हमने ४६ डिजिट प्रमाण; ४६ सरसों नहीं, यह ४६ डिजिट प्रमाण जो संख्या है इतनी सरसों हमारे पास हैं। अभी वह भरे हुये अनवस्था कुण्ड को क्या करना है? तो एक **जम्बूद्वीपादिक** यानी जम्बूद्वीप में एक, दूसरी है वह लवणसमुद्र में, तीसरी है – इसतरह से कितने चले

जायेंगे आगे हम? ४६ अंकप्रमाण; अंकप्रमाण नहीं, ४६ अंकप्रमाण तो संख्या है; उतने द्वीप और समुद्र में हम डालते चले जायेंगे। एक में एक ही डालना है केवल। नंदीश्वर द्वीप में कौनसी सरसो आयेगी कितने नंबर की? *श्रोता: १५ नंबर की।* १५ नंबर की, तो इमॅजिन करो तो आगे कितना जाना है? तो **जम्बूद्वीपादिक द्वीप-समुद्रों में अनुक्रम से एक द्वीप में एक समुद्र में डालता गया**। यह तो ख्याल में आया न? अभी घबराना नहीं, अभी आगे बहुत चलना है।

श्रोता: अनवस्था कुण्ड से डालना है? अनवस्था कुण्ड में से, वह जो सिघाऊ भरा था न? उन सरसों को डालते जाना। वे पूरी की पूरी सरसों समाप्त होनी चाहिये, हं। सिघाऊ भरा हुआ उनमें से एक-एक निकालकर वह डालते-डालते, जितनी संख्या में हमने सरसों देखी, जैसे हमने पहले चार देखी थी न? तो हम एक जम्बूद्वीप में, एक लवणसमुद्र में, एक धातकीखण्ड में और एक कालोदधि समुद्र में डालेंगे तो, कालोदधि में हमारी समाप्त हो जाती। बराबर है न? अब यहां कितनी हैं? जो वे कोड़ाकोड़ी, कोड़ाकोड़ी वगैरह इतनी जो हैं, इतने द्वीप-समुद्रों में डालते चले जाओ। **वे सरसों जिस द्वीप या समुद्र में समाप्त होगी उस द्वीप वा समुद्र के सूचीप्रमाण** सूची यानी आउटर डायमीटर उसको देखेंगे, कैसे निकालना? **चौड़ा और पूर्वोक्त हजार ही योजन ऊंडा ऐसा दूसरा अनवस्था कुण्ड वहीं पर करना।**

श्रोता: वह लाख योजनवाला पहला अनवस्था कुण्ड सरसों से भरा था न? उसका यानी हमने चार सरसों का उदाहरण दिया था, तो चौथा किसमें गिरा? पहला जम्बूद्वीप में, दूसरा लवण में और तीसरा धातकीखण्ड में, चौथा तो कालोदधि समुद्र में । तो कालोदधि समुद्र का आउटर डायमीटर कितना है? आपके पास वह चार्ट है न? निकालो; आधा नहीं पूरा; सूची यानी पूरी। बीचवाले सभी द्वीप-समुद्र कव्हर करते हुये जो उसका डायमीटर होगा वह। कालोदधि समुद्र का डायमीटर कितना होगा, आउटर डायमीटर? देखो, हमने कहां से शुरू किया था? मध्य से। एक बाजू पचास हजार पहले लेना फिर दो लाख, ढ़ाई लाख हुआ, उसमें डेढ़ मिला दो तो चार लाख, चार और ढाई साढ़े छह हुआ, साढ़े छह कहां तक हुआ? तीसरे तक और उसमें चौथे के आठ लाख मिला देना, कितना हुआ? *श्रोता: साढ़े चौदह।* हां, उसके डबल... *श्रोता: उनतीस।* निकालो-निकालो आप तो चार्ट निकालो। चार्ट निकालो तो आपको आसान होगा।

देखो, आपका ४ नंबर का चार्ट है और जो आपको कालोदधि समुद्र दिख रहा है न? सेंटर में पीला डॉट है वह जम्बूद्वीप है, वह एक लाख योजन व्यासवाला है। लवणसमुद्र दोनों और दो-दो लाख योजन है, यानी पांच लाख हो गया। आगे का चार-चार लाख यानी आठ लाख, दोनों ओर का मिलाकर आठ लाख होगा। आठ और पांच तेरह हुआ और उसके आगे आठ-आठ हैं न? एक था, दो था, चार था ये आठ हैं तो आठ और आठ सोलह, उसमें मिला दिया तो कितनी हुयी टोटल? २९ लाख, तो अभी कितने लाख योजन का हुआ दूसरा अनवस्था कुण्ड? हमारे चार के बाद, चार की जो बात थी तब की बात हैं तो कितना करेंगे हम? २९ लाख योजन व्यासवाला और हजार योजन ऊंडा। ४ सरसों डाली तब इतना हुआ। हमने कितनी सरसों डाली? इतनी कोड़ाकोड़ी-कोड़ाकोड़ी-कोड़ाकोड़ी सब डाली तो कौनसे नंबर पर चला जायेगा? एक जम्बूद्वीप में; दूसरी लवणसमुद्र में, एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र इसतरह से जहां पहुंचे हैं, उसका आउटर डायमीटर कैसे निकालना? उसकी सूची निकालनी। अभी सूची कैसे निकालेंगे? उसको देखेंगे।

देखो **सूची किसे कहते हैं? विवक्षित के सन्मुख अंत के दोनों तट** यानी विवक्षित अभी हमने कालोदधि समुद्र की बात की। उसके सामने-सामनेवाले जो दो तट यानी हमको उसका आउटर डायमीटर निकालना है अपनी भाषा में। **दोनों तटों के बीच जितना चौड़ाई का प्रमाण हो वही सूची जानना**। मेरी भाषा में लिखा है आगे। **विवक्षित द्वीप या समुद्र के बाहरी तटों का व्यास जिसमें अंदर के सभी द्वीप और समुद्र समाहित हो जाते हैं**। यानी उसीको अपनी भाषा में **आउटर डायमीटर** कहेंगे। कालोदधि समुद्र का आउटर डायमीटर गिनेंगे तो उसमें अंदर के सभी द्वीप-समुद्र आ गये। ख्याल में आयी न? जैसे लवणसमुद्र की सूची कितनी है? तो पांच लाख योजन है। **जिस द्वीप या समुद्र की सूची कहते हैं, उससे पहले के सभी द्वीप और समुद्र उस सूची के अंदर आ गये**। तो यह कैसे निकालना? जैसे हमने नंदीश्वर द्वीप की सूची निकालना है। तो वह कितने नंबर पर है? ७ द्वीप और ७ समुद्र के बाद यानी १५ वे नंबर पर है।

हां, पहले में पहले एक बाजू का उसका विस्तार प्लस सेंटर से वहां तक का विस्तार सब देखना पड़ेगा न? हमने कल-परसों ही हिसाब किया था। हां-हां नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई में से मायनस डेढ़ लाख करना और वह उसीमें मिलाना। यानी एक सौ तिरसठ

करोड़ चौरासी लाख हमने देखा था उसको डबल करो। उसमें से डेढ़ लाख मायनस करो तो नंदीश्वर द्वीप के बाहरी तट तक की त्रिज्या आ गयी और त्रिज्या को डबल करेंगे तो व्यास आ जायेगा। ख्याल में आयी बात? इसीतरह से कॅल्क्युलेट करना है। नंदीश्वर द्वीप पन्द्रहवें नंबर पर था तो हमने दो गुणा दो चौदह बार किया तो अकेले नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई आ गयी। उसके अंदर के सभी द्वीप-समुद्र मिलकर उनकी सेंटर से चौड़ाई डेढ़ लाख योजन कम थी। दूसरी भाषा में कहना है तो नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई को दोगुणा करेंगे। उसमें से डेढ़ लाख योजन कम करेंगे। यह हो जायेगी सेंटर से नंदीश्वर द्वीप की आउटर बॉर्डर तक की त्रिज्या, उसे डबल करो तो नंदीश्वर द्वीप की सूची आयेगी या नंदीश्वर द्वीप की चौड़ाई को चार गुणा करके तीन लाख योजन कम कर दो तो आ जायेगी नंदीश्वर द्वीप की सूची। दोनों पद्धति से एक ही बात है। ख्याल में आयी बात? ख्याल में आती है न बात? *श्रोता: कैसे करना?* कैसे करना, नहीं समझे? देखो, हमने क्या किया नंदीश्वर द्वीप पन्द्रहवें नंबर पर था। उसकी चौड़ाई यानी एक बाजू का विस्तार हमने निकाला था, १६३८४ लाख योजन। आप उसको १६३ कोड़ी ८४ लाख कहो एक ही बात हैं। मैंने वही फिगर कही, १६३८४ लाख योजन एक साइड में, परंतु यह उसका एक साइड का विस्तार हुआ और फिर उसको लेते हुये सेंटर से कितना हुआ? तो हमने देखा था कि सेंटर से उसके पहले तक, उनके इनर साइड तक डेढ़ लाख योजन कम था तो १६३८४ प्लस १६३८४ मायनस डेढ़ लाख वह सेंटर से एक बाजू की वह त्रिज्या हुयी नंदीश्वर द्वीप तक की। उसका डबल करो तो यह हो जायेगी सूची।

तो ऐसे हमने क्या किया है? हमने अनवस्था कुण्ड सरसों से सिघाऊ भर दिया है, ४६ डिजिट प्रमाण सरसों उसमें समायी, ४६ सरसों नहीं है। इतने कोड़ाकोड़ी-कोड़ाकोड़ी-कोड़ाकोड़ी सब सरसों थी; उन्हें एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र में डालते गये तो जितनी हमने कोड़ाकोड़ी बार कहा उतनी बार दो संख्या लिखकर आपस में गुणा करो। उसमें एक कम इतनी बार करो जैसे हमने पन्द्रहवें द्वीप के लिये चौदह बार दो का गुणा किया था ऐसे ही यहां समझो। वह तो उस द्वीप का अपना विस्तार होगा। फिर उसकी सूची निकालना और फिर उतने डायमीटरवाला दो नंबर का अनवस्था कुण्ड करो। समझ में आया उसकी मॅग्निट्यूड कितनी होगी? अभी हमारा सिर काम नहीं कर रहा है। तो फिर अनवस्था कुण्ड को क्या करना है? फिर उसको सिघाऊ भर देना। *श्रोता: बड़े अनवस्था*

कुण्ड में? बड़े-बड़े अनवस्था कुण्ड में सरसों भरना। दो नंबर के अनवस्था कुण्ड को सिघाऊ भर देना। अभी तक शलाका कुण्ड में एक ही सरसो डाली थी। अब यह इतना बड़ा दूसरे नंबर का अनवस्था कुण्ड भरा तब शलाका कुण्ड में दूसरी सरसो डालना और इस दूसरे नंबर के अनवस्था कुण्ड में जो सरसों हैं वे उससे आगेवाले एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र में डालते चले जाओ। जहां पर पूरा होगा वहां का जो द्वीप या समुद्र है, अभी देखो उसमें कितनी सरसों भर जायेगी? तो वहां जो द्वीप या समुद्र का नंबर आयेगा उसकी सूची का प्रमाण निकालना। उस प्रमाण का वह तीसरा अनवस्था कुण्ड सिघाऊ भरना।

जब दूसरा अनवस्था कुण्ड सिघाऊ भरा था तो दूसरी सरसो हमने शलाका कुण्ड में डाली थी। अब तीसरा अनवस्था कुण्ड कितना बड़ा हो जायेगा? तो उसको फिर सिघाऊ भरना; अभी तक तो दो ही सरसों पड़ी हैं शलाका कुण्ड में, जब तीसरा अनवस्था कुण्ड भर जायेगा तो एक और सरसो शलाका कुण्ड में डालेंगे और यह जो भरे हुये अनवस्था कुण्ड में से सरसों लेकर उनको जहां तक ठहरे थे उसके आगे डालते चलना एक द्वीप में-एक समुद्र में, एक द्वीप में-एक समुद्र में, एक द्वीप में-एक समुद्र में वहां तो द्वीप-समुद्रों की संख्या कितनी बढ़ती जा रही है; बड़े-बड़े अनवस्था कुण्ड हो रहे हैं। तो बड़े-बड़े कुण्ड भरने में तो उतनी अधिक सरसों लगेगी। उतनी अधिक सरसों लगेगी, उतने-उतने आगे कहां तक पहुंचेंगे हम अरबों-खरबों जितना गिनना आता है, तो वहां के द्वीप और समुद्र की आउटर डायमीटर कितनी बड़ी होगी! उतने प्रमाण में अनवस्था कुण्ड बड़े-बड़े करते जाना। अभी एक से हम दूसरा कुण्ड देखते हैं तो भी हम इमॅजिन नहीं कर सकते कि सरसों कितनी होगी और वह कौनसे द्वीप या समुद्र में जाकर उसकी अंतिम सरसो पड़ेगी? और उसके सूची प्रमाण हम आगेवाला अनवस्था कुण्ड करेंगे। फिर वह भरना; फिर और एक सरसो शलाका कुण्ड में डालो और फिर आगे डालते चले जाना। शलाका कुण्ड एक बार भरने के लिये अनवस्था कुण्ड कितने बार होगे? ये कोड़ाकोड़ी, कोड़ाकोड़ी, कोड़ाकोड़ी वह सब गिनना ४६ डिजिट प्रमाण जो संख्या है उतनी बार अनवस्था कुण्ड भरेंगे और हर बार का अनवस्था कुण्ड और बड़े साइझ का, और बड़े साइझ का, और बड़े साइझ का होगा तब जाकर शलाका कुण्ड एक बार भरेगा, तब जाकर प्रतिशलाका कुण्ड में हम एक सरसो डालेंगे।

फिर क्या करना? फिर शलाका कुण्ड खाली करना और अनवस्था कुण्ड की सरसों आगे के द्वीप-समुद्रों में एक-एक डालते जाना। जहां पर वह सरसों समाप्त हुयी उस द्वीप या समुद्र की सूची प्रमाण और एक नया अनवस्था कुण्ड करना; उसको फिर भरना। हमने जब चार का प्रमाण देखा था सरसों का, तो ऐसे अनवस्था कुण्ड कितने बार किये थे? तो चार का घन ६४ बार किये थे। अब यहां कितनी बार करना पड़ेगा? ये जो ४६ डिजिट प्रमाण संख्या है उसका घन करो, केवल उतने अनवस्था नहीं, उतनी बार बड़े-बड़े, बड़े-बड़े, क्योंकि हर बार नये-नये अनवस्था कुण्ड होते हैं बड़े-बड़े; उनको फिर सरसों से भर देते हैं और जहां तक पहुंचे थे उसके आगेवाले द्वीप-समुद्र, द्वीप-समुद्र, द्वीप-समुद्र में डालते चले जाते हैं। जैसे हमने चार का ६४ किया; वैसे यह जो संख्या हमने यहां पढ़ी थी उसका घनप्रमाण तो अनवस्था कुण्ड होंगे। तब जाकर वह महाशलाका कुण्ड पूरा भर जायेगा। कितना बड़ा है यह अनवस्था कुण्ड लास्ट में जो होगा! अब ज़रा पढ़ेंगे।

श्रोता: यह जो कॅल्क्युलेशन है जो कॅल्क्युलेशन है वह एक राजू में है त्रसनाड़ी में। अभी तो सभी द्वीप-समुद्र कव्हर भी नहीं होंगे। यह तो मिनिमम असंख्यात है; मिनिमम असंख्यात है जिसको हम जघन्य परीतासंख्यात कह रहे हैं। जघन्य परीतासंख्यात को जघन्य परीतासंख्यात बार आपस में जघन्य परीतासंख्यात से गुणा करो तो आवली का प्रमाण होगा; हां, और आवली से पल्य कितने वर्ग स्थान आगे हैं; वह भी अद्धापल्य की बात है और ये द्वीप-समुद्र कितने हैं? २५ कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य इतने तो द्वीप और समुद्र हैं; तो राजू कितना बड़ा होगा? हमें तो समय की सूक्ष्मता देखनी है। आप कहेंगे सूक्ष्मता कहां बतानी है, आप तो हमको डरा रहे हैं। हम डरा नहीं रहे हैं, हमने तो अभी पढ़ा भी नहीं उसको, हम पढ़ने जा रहे हैं।

जब हमने शुरुआत में सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका पढ़ना शुरू की। देखो, इ.स. १९९२ में हम जयपुर शिबिर में गये थे वहां पहुंचे ही लेट क्योंकि हमारे घर में किसीकी मृत्यु हुयी थी तो हम लेट पहुंचे। वहां तो कुछ बहुत सारा गुणस्थान का अभ्यास हो चुका था क्योंकि हम लेट गये थे, तो फिर पढ़ लिया। पढ़ा, परीक्षा दी, पहला नंबर आया; १०० आउट ऑफ १००। फिर क्या किया? वहां सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका के तीन व्हॉल्यूम ॲव्हेलेबल थे। जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड और लब्धिसार-क्षपणासार, तभी अर्थसंदृष्टि उसमें थी नहीं। उसको लेकर हम घर आये, इनके लिये तीन व्हॉल्यूम और मेरे लिये तीन। हमारे यहां सभी शास्त्र दो-दो होते

हैं। दोनों मिलकर एक पुस्तक पढ़ना ऐसा हम कभी नहीं करते। *श्रोता: बँक अकाउंट भी अलग हैं?* हां बँक अकाउंट भी अलग हैं। *श्रोता: घर एक ही है न?* हां, घर एक ही है क्योंकि दोनों मिलकर स्वाध्याय करते हैं न? तो फिर हमने इ.स. १९९३ से इसको पढ़ना शुरू किया। तो शुरुआत में पढ़ते-पढ़ते कंटाला बहुत आने लगा था, तो यहां पहुंचते-पहुंचते जब यह अनवस्था की बात आयी तो हमारी दुरवस्था हो गयी थी।

इन्होंने तो बता दिया अब बस! बहुत हो गया, तेरे हठ के लिये मैंने इतना पढ़ा, अभी से आगे बिलकुल नहीं पढ़ेंगे, बिलकुल स्टॉप। हमारा द्रव्यानुयोग अच्छा है... *श्रोता: बहुत सरसों डाली।* हां, बहुत सरसों डाली। अवस्था खराब हो गयी, हठ मत करो, हम द्रव्यानुयोग पढ़ रहे हैं। क्योंकि द्रव्यानुयोग हम इ.स. १९७५ साल से पढ़ रहे थे। कोई ऐसा शास्त्र बाकी नहीं था जिसको हमने नहीं पढ़ा था और इ.स. १९९२ से हमने रिटायरमेंट ली थी, रोज के साढ़े आठ घंटे हम पढ़ते ही थे। कोई भी ग्रंथ लिया तो छह, सात, आठ दिन में पूरा हो जाता था; तो यह सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका ले लिया फिर। फिर भी मैंने हठ कर लिया और उन्होंने माना। फिर जब आगे-आगे पढ़ते गये, कितने ही शब्दों का अर्थ नहीं मालूम होता था, पूछना किसको? कोई था नहीं हमारे वहां। फिर भी पढ़ते गये, पढ़ते गये, पढ़ते गये। फिर हमारे यहां तो रोज स्वाध्याय चलता था, दिनेशजी पढ़ाते थे तब तो पढ़ाते समय ये करणानुयोग के शब्द आने लगे कुछ। तो लोग पूछने लगे – अरे हमको भी बताओ, हमको भी बताओ तो हफ्ते के हफ्ते यानी संडे टू संडे, हम इसको लेने लगे। मैं इसको सिखाने लगी, इसतरह वह कब पूरा होता? फिर जाकर हमने डेली चालू कर दिया, रोज के डेढ़ घंटे सुबह। तभी तो हम ढूंढ़ारी भाषा में पढ़ते थे। हां, ढूंढारी भाषा में ही सब पढ़ा हमने। फिर यह जीवकाण्ड हुआ, कर्मकाण्ड हुआ और लब्धिसार हुआ, उन सभी की अर्थसंदृष्टि इनका स्वाध्याय सब ढूंढारी में ही हुआ। फिर जाकर इसका ट्रान्स्लेशन मैंने कर दिया और फिर हिंदी में भी इसका पूरा स्वाध्याय दो बार, तीन बार पढ़ाना हो गया है। तो यह आपको कुछ कठिन लगे तो कोई डरना नहीं। जैसे हमारी परिस्थिति हुयी थी, हां, तो आगे बढ़ना, बीच में आप रुकना नहीं, यह बात कहना चाहती हूं। बाकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२८. कालपरावर्तन – असंख्यात के भेद

षट्खण्डागम के आधार से कालअनुयोगद्वार की हम चर्चा कर रहे हैं। काल गिनने का एक नाप है, इसको कहते हैं परावर्तन। अनादि से यह जीव इस संसार में कितने काल से घूमते आया है तो कहते हैं पांच प्रकार के परावर्तन इस जीव ने अनंतों बार किये हैं। उसमें से द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन की बात हो गयी थी, हम कालपरावर्तन को देख रहे थे। कालपरावर्तन में यह बात देखनी है कि हमारे यहां उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी मिलकर २० कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण जो काल है, उसको कहते हैं एक कल्पकाल। किसी उत्सर्पिणी के पहले समय में – हमारे यहां जब उत्सर्पिणी का पहला समय है तब की बात है – तब किसी जीव ने जन्म लिया। किस पर्याय में लिया, कौनसे क्षेत्र में लिया, कितनी अवगाहना से लिया, उसको कन्सिडर नहीं करना है, बस उसका वह जन्म का क्षण है यानी उसका जन्मक्षण कौनसा है? तो उत्सर्पिणी का पहला समय।

उसका वह जन्म भरत में हो, ऐरावत में हो, विदेह में हो, कहीं पृथ्वीकायिक हो, कोई सूक्ष्म जीव हो, निगोद हो नारकी हो, कोई बात नहीं, उसका वह जन्म उत्सर्पिणी के पहले समय में होना चाहिये। उत्सर्पिणी के पहले समय में उसने जन्म धारण किया जिस किसी आयु के साथ, वह आयु भोगकर मरा और वह उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी पूरी होकर जब एक कल्पकाल पूरा हो जायेगा २० कोड़ाकोड़ी सागर का। उसने पहले समय में जन्म धारण किया था, अब उसको दूसरे समय में जन्म धारण करना चाहिये। यह समय कितना सूक्ष्म है इसको देखने के लिये हम वह असंख्यात में घुस गये थे। क्यों? यह तो हम जघन्य असंख्यात का प्रमाण देख रहे थे, जघन्य परीतासंख्यात को देख रहे थे। ऐसे जघन्य परीतासंख्यात को जघन्य परीतासंख्यात बार लिखकर आपस में गुणा करने पर जघन्य युक्तासंख्यात यह संख्या आती है और इतने समय एक आवली में होते हैं और ऐसी संख्यात हज़ार कोड़ाकोड़ी आवली एक सेकंड में होती हैं। तो जन्मक्षण-जन्मक्षण-जन्मक्षण करते हुये एक सेकंड जितना काल पूरा होने के लिये भी कितना काल चला जायेगा क्योंकि हर बार एक पूरा कल्पकाल चला जायेगा। एक समय वेस्ट हो गया तो बीस कोड़ाकोड़ी सागर का एक कल्पकाल चला गया फिर दूसरे कल्पकाल में चान्स आयेगा। परंतु वह समय इतना सूक्ष्म है कि थोड़ा आगे-पीछे, आगे-पीछे हो जायेगा तो भी नहीं

चलेगा। क्रम तभी गिनेंगे जब इमीजिएट्लि नेक्स्ट समय में जन्म होगा, उसका जन्मक्षण वह होना चाहिये। यानी हजारों कोड़ाकोड़ी आवली तो एक सेकंड में होती हैं, तो एक आवली प्रमाण आगे बढ़ने के लिये भी कितना अनंत-अनंतकाल चला जायेगा।

हो सकता है कि एक समय से दूसरे समय में पहुंचते-पहुंचते भी अनंतकाल चला जावे क्योंकि उसी समय, वही जन्मक्षण होना चाहिये न उसका! वह समय इतना सूक्ष्म है एक्झॅक्ट उसी समय में उसको जन्म लेना चाहिये। ऐसे एक समय–एक समय-एक समय-एक समय क्रम से पार करने चाहिये; अक्रम से तो कितनी ही बार जन्मेगा वह, उसको तो यहां कन्सिडर करना ही नहीं है। जब-जब क्रम से वह एक-एक समय में जन्म लेगा तब उसको हमें यहां कन्सिडर करना है। ऐसे उत्सर्पिणी के, देखो एक सेकंड में इतने समय तो एक मिनट में कितने, एक घंटे में कितने, एक वर्ष में कितने समय; अभी वर्षों की बात थोड़े ही है वह तो कोड़ाकोड़ी सागरों की बात है। जो हम उसका गणित भी इमॅजिन नहीं कर सकते अपनी कल्पना के बाहर की बात लगती है। तो ऐसे एक-एक-एक-एक-एक-एक समय में उसने क्रम से जन्म लिया और पूरा ही उत्सर्पिणी काल पूरा करके फिर अवसर्पिणी में एक-एक-एक-एक समय में जन्म लिया। अभी कालपरावर्तन पूरा नहीं हुआ है, अभी थोड़ा श्वास लेकर रुकना क्योंकि ज़रा असंख्यात के स्वरूप को देखकर फिर वापस यहां पर आते हैं।

देखो क्योंकि हमें पता नहीं है, हम केवल अनादि है-अनादि है-अनादि कहते हैं, अरे एक चक्कर पूरा करने की क्या बात है, अभी तो यह आधा भी नहीं हुआ है, अभी तो जन्म की बात की है, उसके बाद क्रम से मरण की भी बात करेंगे, हां। यह असंभवसी जो बात है और उसको होने में कितना अनंत-अनंतकाल चला जाता है और इतना सारा अनंतकाल पूरा होने के बाद हम एक कालपरावर्तन कहेंगे और ऐसे कालपरावर्तन भी इस जीव ने अनंतबार किये हैं और इससे आगेवाले दो परावर्तन इससे भी और अनंतगुणा बड़े हैं। हमें पता ही नहीं हम तो बस मौज कर रहे हैं, दिन कहां चला जाता है हमारा, पता नहीं चलता है, हम क्यों इस भव में आये, क्यों? क्योंकि हमने कर्म बांधे। मनुष्यपर्याय पायी तो हम मनुष्य में आ गये। मनुष्य की आयु भोगकर चले जायेंगे और कहां जाना है? कहां कीड़ों-मकोडों में जायेंगे कि निगोद में जायेंगे कि नरक में जायेंगे? स्वर्ग में गये तो भी क्या हुआ? पुण्य करके व्रतादि करके स्वर्ग में भी गये! अरे हमने तो स्वाध्याय किया; स्वाध्याय किया

तो क्या हुआ? स्वाध्याय किया और आत्मानुभव नहीं किया तो भी कुछ योग्य फल नहीं है उसका।

हमें बहुत गहराई से इसको सोचना है – बिलकुल डरने जैसी बात है यह। जीव भय से कांप उठता है तो ही यह सोचेगा कि मुझे क्या करना है? अभी करना है, इसी भव में करना है। बाकी तो हमारी सभी प्रायॉरिटि चलती हैं परंतु जो सबसे मुख्य बात है उसको हमने कभी गंभीरता से लिया नहीं है और यह गंभीरता से लेने का समय आ चुका है क्योंकि नहीं तो हरेक का अपना-अपना जीवन है, अपने-अपने फॅमिली मेंबर्स हैं और उनके प्रति हमारे कुछ कर्तव्य हैं वे तो करते ही रहते हैं। सबको छोड़कर जंगल में जाकर बैठे ऐसा नहीं कर रहे हैं हम, परंतु हमें यह करने के लिये कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है; कुछ करने-धरने की आवश्यकता नहीं है, तत्त्वनिर्णय यहीं करने की बात है। यह सारी ज्ञान में, तत्त्वनिर्णय में ही होनेवाली बात है और वह हम कहीं पर भी बैठकर कर सकते हैं यानी यहीं घर में ही कर सकते हैं और उसके लिये अन्य कुछ क्रिया करने की वहां बात ही नहीं है।

यह सबसे पहले में पहले जो कार्य करना है, कार्य करना है यानी वह जानने की बात है। हमको जानना यह कोई कार्य लगता ही नहीं है; कार्य करना है तो क्या करना बताओ! शुभभाव की बात आती है तो क्या करना है बताओ यानी कुछ करने धरने में ही हमने धर्म मान कर रखा है बचपन से आज तक। यह क्या करना है, जो कर सकते वह करो। क्या कर सकते हो बोलो? *श्रोता: जान सकते हैं।* जान सकते हैं। जान सकते हैं तो सही जानना हमारा कर्तव्य है। अभी तक तो हमने भ्रमणायें बहुत की हैं। एक दूसरे की सुनकर कहो या अपने मतिकल्पना से कुछ न कुछ धर्म का स्वरूप जो हमने मान रखा है और धर्म के नाम पर भी हम कुछ भ्रान्तियां ही चलाते रहते हैं और एक दूसरे की सुनते भी रहते हैं और उन्हींको चलाते हैं।

हम इतने भाग्यवान हैं कि भगवान से चली आयी वाणी आज तक हमें ॲव्हेलेबल है; हमारे पूर्वजों के हमारे पर इतने उपकार हैं कि यह वाणी उन्होंने हमारे लिये प्रिझर्व्ह करके रखी है। हम कितना भी प्रिझर्व्ह करने की कोशिश करें – यह ऐसे ग्रंथ छपवाने से प्रिझर्व्ह होनेवाली नहीं है। हम स्वयं पढ़ेंगे, पढ़ायेंगे तो ही आगे की पीढ़ी तक चलेगा और आगे के

जीव भी कुछ इसमें से समझ पायेंगे। पैसा कमाकर रखने से हमारे बच्चों का कल्याण होनेवाला नहीं है। हम स्वयं से प्राप्त करें, तत्त्वनिर्णय करें और हम तत्त्वनिर्णय करके आगे बढ़े क्योंकि यह बहुत सिरिअस्लि लेने की बात है। यह मनुष्यभव फिर ऐसे ही चला गया तो फिर उसका मिलना दुर्लभ है, बिलकुल दुर्लभ है क्योंकि स्वाध्याय की मुख्यता तो यहीं मनुष्यपर्याय में ही अधिक होती है। यहीं पर हम जो कार्य कर सकते हैं, अरे! नारकी जीव, सातवें नरक का नारकी इतनी प्रतिकूलता में सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है तो हम आप क्यों नहीं कर सकते?

तो हम यहां असंख्यात का प्रमाण देखते थे, मिनिमम असंख्यात जिसको कहेंगे जघन्य परीतासंख्यात। हमने क्या किया, ४ कुण्ड बनाये। ४ कुण्ड पहली बार जब बनाये तब तो सभी समान आकारवाले थे, उनमें से केवल अनवस्था कुण्ड ही बड़े-बड़े होनेवाले हैं। तो शुरू में ये चारों कुण्ड कितने बड़े किये? तो लाख योजन विस्तारवाले यानी डायमीटरवाले, हजार योजन ऊंड़े ऐसे ये सब बनाये। पहली बार अनवस्था कुण्ड सिघाऊ भरा ऊपर ऐसा टॉप तक, तो उसमें ४६ डिजिट प्रमाण सरसों समा गयी। अब इसके बाद क्या? आगे के कुण्ड खाली हैं; अब क्या करना? इसमें से वह अनवस्था कुण्ड एक बार भरा न तब एक सरसों शलाका कुण्ड में डालनी है। फिर क्या करना? ये जो अनवस्था कुण्ड में भरे हुये सरसों हैं उनको एक द्वीप में-एक समुद्र में, एक द्वीप में-एक समुद्र में, एक द्वीप में कहां से, जम्बूद्वीप से लेकर ये सब खाली होने तक डालते रहना। जहां वे सरसों खत्म हो जायेगी उस द्वीप का जो विस्तार है; वह विस्तार कैसे निकालना तो जितनी यहां सरसों थी न, उतनी बार वह दोगुणा दोगुणा करते जाओ तो वहां की चौड़ाई आ जायेगी – वलयविस्तार, एक बाजू का विस्तार, जैसे हमने नंदीश्वर द्वीप का निकाला था। उस विस्तार को क्या करना, चौगुणा करो और उसमें से ३ लाख मायनस करो तो उतने योजन उस द्वीप की सूची आयेगी। सूची समझते हो न? जहां हम पहुंचे थे उसका आउटर डायमीटर, उसमें बीचवाले सभी समुद्र और द्वीप समा जायेंगे। इस सूचीप्रमाण दूसरा अनवस्था कुण्ड करना; अब उसको फिर सिघाऊ भरना, तब जाकर हम दूसरी सरसो शलाका कुण्ड में डालेंगे। अब जहां पहुंचे थे उसके आगे के द्वीप में-समुद्र में, द्वीप में-समुद्र में दूसरे अनवस्था कुण्ड के सरसों को डालते चले जाना; जहां वह खाली हो जायेगा यानी जहां उसकी सरसों खत्म होगी न, उस द्वीप या समुद्र की जितनी सूची होगी - आउटर डायमीटर,

उसमें अंदर के सब द्वीप और समुद्र समा जायेंगे; उतना तो तीसरा अनवस्था कुण्ड करना है। वह तीसरा अनवस्था कुण्ड फिर सरसों से भर देना और तब एक सरसो शलाका कुण्ड में डालनी है।

यही गाडी आगे चलेगी, फिर एक द्वीप-एक समुद्र, एक द्वीप-एक समुद्र में उन सरसों को डालना तो आगे-आगे के अनवस्था कुण्ड कितने बड़े-बड़े होंगे और उनमें सरसों कितनी अधिक-अधिक होती चली जायेगी और हम कितने आगे चले जायेंगे - कितने द्वीपों और समुद्रों में और जितने आगे जाते हैं तो दोगुणा-दोगुणा उनका विस्तार है। केवल विस्तार नहीं यहां तो हमें उसकी पूरी सूची निकालनी है यानी जितने बीच के द्वीप-समुद्र हैं वे सब उसके अंदर गर्भित हो जाते हैं। इतनी बार अनवस्था कुण्ड करके भरते हैं तो एक बार शलाका कुण्ड भरने के लिये ये अनवस्था कुण्ड कितनी बार होंगे तो जितनी पहले अनवस्था कुण्ड में सरसों भरी हैं उतनी बार।

उसको हम क्ष कहेंगे, पहलेवाली ४६ डिजिट प्रमाण सरसों की संख्या थी उसको क्ष कहेंगे, क्ष बार यानी क्ष इतनी सरसों की संख्या से जब शलाका कुण्ड भर जाता है; तो ऐसे कितने अनवस्था कुण्ड करने पड़ेंगे? क्ष बार और हरेक अनवस्था कुण्ड का प्रमाण बहुत बड़ा-बहुत बड़ा-बहुत बड़ा होता है तो उसमें सरसों भी बहुत आयेगी-बहुत अधिक आयेगी-बहुत अधिक आयेगी और जब इतने आगे-आगे के द्वीप - समुद्रों में सरसों डालते हुये चले जायेंगे तो दोगुणा-दोगुणा-दोगुणा वह कितना बड़ा हो जायेगा और उसकी सूची कितनी बड़ी हो जायेगी! और उसको भरते चले जाओ और आगे-आगे एक-एक सरसों शलाका कुण्ड में डालते जाओ। तो जब ये अनवस्था कुण्ड क्ष बार हो जायेंगे तो शलाका कुण्ड एक बार भर जायेगा; तब जाकर एक सरसो प्रतिशलाका कुण्ड में डालेंगे। ऐसे जब क्ष बार शलाका कुण्ड भर जायेंगे इसी विधि से, बाय दॅट टाइम अनवस्था कुण्ड कितने हो जायेंगे? क्ष × क्ष बार यानी क्ष वर्ग बार हो जायेंगे तब जाकर प्रतिशलाका कुण्ड एक बार भरेगा और तब महाशलाका कुण्ड में एक सरसो पड़ेगी।

यहां तो हम केवल क्ष वर्ग कह रहें हैं परंतु वह प्रत्येक अनवस्था कुण्ड बड़ा बड़ा हो रहा है। पहले हमने आपको ४ सरसोंवाला ही उदाहरण दिया था और हर बार उसमें ४-४ ही सरसों भरी थी हमने। तो इसतरह से जब महाशलाका कुण्ड भी पूरा भर जावे तो ये

कितने हो जायेंगे अनवस्था कुण्ड? जो हमने क्ष माना है उसके घन बार होंगे अनवस्था कुण्ड और वह छोटी संख्या नहीं है। ४६ डिजिट प्रमाण संख्या है उसका घन करो उतनी बार अनवस्था कुण्ड होंगे और हरेक अनवस्था कुण्ड पहले से कितना अधिक बड़ा होता है दूसरा; दूसरे से तीसरा कितना बड़ा है। तो ये इतने सब होते-होते वह कितना बड़ा होगा और जो अंतिम होगा उसको फिर सरसों से भर देना। उसमें जितनी सरसों समा जायेगी उतना जघन्य असंख्यात यानी जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण है। थोड़ा पढ़ लेते हैं यहां पर। यह तो सबसे छोटे में छोटा असंख्यात है। देखो २१८ पेज...।

श्रोता: महाशलाका भर जाये तब का अनवस्था कुण्ड लेना?

तब वह जो अनवस्था कुण्ड है यानी वह जो लास्ट कुण्ड बना है, हां, वह तो पूरा भरना है और उसमें जितनी सरसों हैं उनको नापना हैं। देखो हम फिरसे पढ़ेंगे, पहले हमने क्या किया तो ४ कुण्ड किये, सब समान डायमेन्शनवाले – लाख योजन विस्तारवाले यानी उसका डायमीटर और हजार योजन ऊंड़े, यहां तक बात ख्याल में आयी? और अनवस्था कुण्ड का क्या करना? सिघाऊ भर देना - सिघाऊ यानी उसके टॉप तक ऐसे राशि करना उसकी। फ्लॅट तो भर ही देना, ऊपर ऐसी राशि कर देना। तो उसमें कितनी आती हैं सरसों? हमने यह जो बड़ी संख्या पढ़ी, जिसको हमने कहा ४६ डिजिट और $\frac{४}{११}$ प्रमाण है। अनवस्था कुण्ड एक बार भर जाये तो शलाका कुण्ड में एक सरसो डालनी है और क्या करना? अनवस्था कुण्ड के सरसों को जम्बूद्वीप से लेकर एक द्वीप एक समुद्र-एक द्वीप एक समुद्र में डालते जाना। जहां वह अंतिम सरसो डालेंगे वहां जो द्वीप या समुद्र है उसकी सूची निकालना और यहां लिखते हैं अभी, २१९ पेज पर कि सूची किसे कहते हैं; यह हमने पढ़ा था फिर भी देखेंगे। **विवक्षित के सन्मुख अंत के दोनों तटों के बीच जितना चौड़ाई का प्रमाण हो वही सूची जाने।** यानी **विवक्षित द्वीप या समुद्र के बाहरी तटों का व्यास जिसमें अंदर के सभी द्वीप-समुद्र समाहित हो जाते हैं** यानी हमारी भाषा में आउटर डायमीटर कहेंगे। *श्रोता: आउटर डायमीटर मायनस इनर डायमीटर?* नहीं, पूरा आउटर से आउटर तक, जैसे स्वयंभूरमण समुद्र का आउटर डायमीटर कितना है? *श्रोता: एक राजू।* एक राजू। ऐसे समझना जिस द्वीप या समुद्र में हम पहुंचे हैं उसके आउटर यानी बाहरी तट से सामनेवाली बाजू का बाहरी तट, यह पूरा लेना है। *श्रोता: व्यास।* व्यास यानी

बाहरी तट का व्यास, अंदर का नहीं। समुद्र या द्वीप तो ऐसा वलयाकार फैला है; परंतु उसके सामनेवाले उसीकी दूसरी ओर का बाहरी तट। उस द्वीप सहित बीच के सभी द्वीप और समुद्र उसमें समाहित हो गये, उसको कहेंगे सूची। **जिस द्वीप या समुद्र की सूची कहते हैं उससे पहले के सभी द्वीप और समुद्र उस सूची के अंदर आ गये।** फिर क्या करना? उस सूची प्रमाण २ नंबर का अनवस्था कुण्ड करना। यह नीचे के पॅरेग्राफ में लिखा है, देखो।

इसतरह वहां किया हुआ अनवस्था कुण्ड सरसों से सिघाऊ भरना। भरने पर अन्य एक सरसो उसी शलाका कुण्ड में डालनी है और इस दूसरे अनवस्था कुण्ड की सरसों को लेकर वहां से आगे एक द्वीप में-एक समुद्र में डालते जाना। वे जिस द्वीप या समुद्र में समाप्त होगी उस सहित पूर्व के द्वीप समुद्र उनके व्यासरूप जो सूची – उस प्रमाण चौड़ा और पूर्वोक्त हजार योजन ऊंड़ा ऐसा तीसरा अनवस्था कुण्ड सरसों से सिघाऊ भरना। आगे-आगे के कुण्ड भी बहुत बड़े-बड़े होंगे और वहां सरसों का प्रमाण भी और कितना बढ़ेगा, कितना अधिक बढ़ेगा, क्योंकि कितने गुणा प्रमाण में वे बड़े-बड़े कुण्ड हो रहे हैं! **भरने पर अन्य एक सरसो शलाका कुण्ड में डालनी और इस तीसरे अनवस्था कुण्ड की सरसों लेकर वहां से आगे एक द्वीप में एक समुद्र में डालनी। वह जहां पूर्ण हो वहां उसकी सूची प्रमाण चौथा अनवस्था कुण्ड करना, उसको सरसों से सिघाऊ भरना। भरकर अन्य एक सरसो शलाका कुण्ड में डालनी,** यह ख्याल में आ रहा हैं न? हमने बहुत बार इसको देखा है कैसे करना। आगे-आगे बढ़ते हैं तो अनवस्था कुण्ड बहुत बड़े-बड़े हो रहे हैं। वे जब भरेंगे तो उनमें और अधिक सरसों आयेगी और उनको लेकर हम जहां ठहरे थे उसके आगे के द्वीप और समुद्रों में डालते-डालते आगे बढ़ना है।

इसीतरह व्यास से बढ़ते हुये अनवस्था कुण्ड करके और एक-एक सरसो शलाका कुण्ड में डालते हुये जब शलाका कुण्ड भर जाये तब एक सरसो प्रतिशलाका कुण्ड में डालनी हैं। इसतरह एक नौ आदि अंकप्रमाण यानी ४६ डिजिट प्रमाण **जितनी सरसों प्रथम अनवस्था कुण्ड में समायी थी उतनी बार अनवस्था कुण्ड होने को** – जैसे हमने कहा था ४ सरसों से एक कुण्ड भरता है तो ४ बार अनवस्था कुण्ड भरने चाहिये, वैसे ४६ डिजिट प्रमाण सरसों से पहला अनवस्था कुण्ड भरा था तो इतनी ही

बार बढ़ते हुये अनवस्था कुण्ड हो जाये तब – **शलाका कुण्ड एक बार सिघाऊ भर जाता है**; उसको हम क्ष मानेंगे ऐसा लिखा है यहां ब्रॅकेट में।

फिर क्या करना? **इस शलाका कुण्ड को रीता कर दिया** और पहले के अनवस्था कुण्ड भी रीते हो गये। फिर क्या करना यह जो भरा था न वहां पर, जब शलाका कुण्ड पूरा भर गया था उस समय जो अनवस्था कुण्ड हुआ था वह सिघाऊ भरा था हमने, उसके सरसों को और आगे डालते चले जाना। मेथड तो वही है; हर बार आगे के द्वीप-समुद्रों में डालो और जहां वह समाप्त होगी उतना उसके बादवाला अनवस्था कुण्ड और बड़ा करो, उसको फिर सिघाऊ भर दो। फिर शलाका कुण्ड में एक सरसो अब डालनी है क्योंकि हमने रीता किया था शलाका कुण्ड। जब आगेवाले अनवस्था कुण्ड हो रहे थे तो हमने शलाका कुण्ड को खाली कर दिया था, अब फिर वही चक्कर चलेगा। इतने क्ष बार और अनवस्था कुण्ड और बड़े आकार के होंगे तब जाकर फिर शलाका कुण्ड में वह एक-एक सरसो हम डालते चले जायेंगे; इसतरह से दुबारा होंगे यानी शलाका कुण्ड भी दूसरी बार भर गया, तीसरी बार भर गया, तो ४६ डिजिट प्रमाण बार भरा तब जाकर प्रतिशलाका कुण्ड में एक-एक सरसो डालते-डालते वह प्रतिशलाका कुण्ड एक बार भर गया। यह हमने पहले देखा था ४ का उदाहरण लेकर। देखो फिर –

श्रोता: शलाका कुण्ड जब हम एक-एक-एक डालकर शलाका कुण्ड भरते हैं, तो जब भी एक-एक-एक डालते हैं तब अनवस्था कुण्डवाला तो पूरा भरते ही रहता है।

भरते ही रहता है और बड़ा-बड़ा भी होता है, बड़ा होता जाता है; केवल भरता रहता नहीं वह तो बड़ा-बड़ा होता जाता है। बड़ा होता है तो उससे आगे और कितने द्वीप-समुद्र चले जाते हैं यानी कितनी बार आगे-आगे जाते हैं, फिर भी हम संख्यात में ही हैं। तो ये सारे २५ कोड़ाकोड़ी उद्धार पल्य इतने द्वीप-समुद्र होंगे इस मध्यलोक में। ये सभी द्वीप समुद्र कव्हर होनेवाले नहीं हैं, उनका असंख्यातवां भाग कव्हर होगा। *श्रोता: और ये सरसों के दाने तो अभी तो संख्यात के ही चलते हैं, बराबर है?* अभी अनवस्था कुण्ड भी संख्यात चल रहे हैं, और सरसों भी संख्यात ही चल रही हैं। जब लास्टवाला अनवस्था कुण्ड पूरा भर जायेगा यानी जब अभी हम बीचवाला छोड़ देते हैं, तो जब अंतिम कौनसा – महाशलाका कुण्ड पूरा भर जावे उसके लिये अनवस्था कुण्ड कितने हो जायेंगे? क्ष^{३} यानी क्ष रेज्ड टु

३। क्ष के घन प्रमाण बार अनवस्था कुण्ड होंगे और वे हर बार बड़े-बड़े हुये थे और हर बार जितने सरसों से भरे थे उतने आगे-आगे हम चले थे यानी कितना बड़ा होना चाहिये वह अंतिम अनवस्था कुण्ड! उस अंतिम अनवस्था कुण्ड को भर देंगे उसमें जो सरसों का प्रमाण होगा वह सबसे छोटे में छोटा असंख्यात है जिसको हम जघन्य परीतासंख्यात कहेंगे। *श्रोता: रीता माने क्या?* रीता यानी खाली कर देना। *श्रोता: वह ४ बाय ११ था उसका क्या हुआ?* उसको भी डालो न एक में, हां, देखो २२२ पेज पर आना। यानी इसी पद्धति से हम आगे चले जायेंगे-आगे चले जायेंगे। *श्रोता: शलाका कुण्ड कब तक भरते रहेंगे?* शलाका कुण्ड तब तक भरते रहेंगे जब प्रतिशलाका कुण्ड पूरा भर नहीं जाये; प्रतिशलाका कुण्ड पूरा भर जाये तो महाशलाका कुण्ड में एक सरसो डाली; जब महाशलाका कुण्ड में एक सरसो डाली तो आगे पहलेवाले सभी कुण्ड खाली कर देना, फिर उसको भरते रहना। *श्रोता: फिर प्रतिशलाका कुण्ड भरना है?* प्रतिशलाका कुण्ड भी पूरा भरेगा तब एक सरसो महाशलाका कुण्ड में पड़ेगी। *श्रोता: प्रतिशलाका कुण्ड, महाशलाका कुण्ड वगैरह भी सिघाऊ भरना हैं?* वे भी सिघाऊ भरना; वे भी सिघाऊ भरना। जैसे हमने ४ का एक्झाम्पल लिया था शुरुआत में, यानी ये अनवस्था कुण्ड बड़े-बड़े-बड़े-बड़े होते जा रहे हैं और जितनी चौड़ाई उनकी बढ़ती हैं तो सिघाऊ में भी कितने आयेंगे; उनमें सरसों कितने अधिक हो जायेंगे और इतने द्वीप-समुद्र आगे चले जायेंगे।

श्रोता: शलाका कुण्ड का आकार कैसा है? जो पहली बार अनवस्था कुण्ड बनाया था एक लाख योजन डायमीटरवाला और एक हजार योजन ऊंड़ा, शलाका कुण्ड का आकार उतना ही है, प्रतिशलाका कुण्ड का आकार उतना ही है और महाशलाका कुण्ड का आकार भी उतना ही है। परंतु वह भरने के लिये अनवस्था कुण्ड और बड़े-बड़े होते जाते हैं – यह बात है। उसको भरने के लिये अनवस्था कुण्ड के आकार बहुत बड़े-बड़े हो रहे हैं। पहला अनवस्था कुण्ड ४६ डिजिट प्रमाण सरसों से भरा था तब शलाका कुण्ड में पहली सरसो पड़ी थी। दूसरी बार ऐसा नहीं है, दूसरे नंबर के अनवस्था कुण्ड में सरसों बहुत बढ़ जायेगी। दूसरे नंबर का अनवस्था कुण्ड सरसों से भर दिया तब शलाकाकुण्ड में दूसरी सरसो पड़ी। शलाका कुण्ड में आगे-आगेवाली एक-एक सरसो पड़ेगी तभी अनवस्था कुण्ड और बड़े-बड़े-बड़े होनेवाले हैं। तो अनवस्था कुण्ड को खाली करके शलाका कुण्ड में एक सरसो डालना, खाली करके एक डालना और हर बार अनवस्था कुण्ड और बड़े-

बड़े होते हैं। यानी आगे-आगेवाले अनवस्था कुण्ड भरते समय उन सरसों की संख्या बहुत सारी बढ़ती चली जायेगी। इसतरह से देखो, २२२ पर आना, क्योंकि किसीको हार्ट अॅटॅक नहीं आवे।

पुनश्च महाशलाका कुण्ड में – २२२ पेज तीसरी लाइन – **महाशलाका कुण्ड में एक सरसो डालने पर अनवस्था कुण्ड एक नौ आदि अंकों के वर्ग प्रमाण होते हैं तो महाशलाका कुण्ड में एक नौ आदि अंक प्रमाण सरसों डालने पर कितने अनवस्था कुण्ड हो गये?** तो हमने देखा था न वे एक नौ आदि अंक के घन प्रमाण होते हैं। जैसे हमारा ४ का एक्झाम्पल ले लो; महाशलाका कुण्ड में चार सरसों पड़ती हैं तो प्रतिशलाका कुण्ड ४ बार होते हैं और शलाका कुण्ड १६ बार और अनवस्था कुण्ड ६४ बार होते हैं – इसतरह से। तो ये घन प्रमाण बार होते हैं बस इतनी बात ख्याल में लेनी है। महाशलाका कुण्ड भरने के लिये यह जो ओरिजिनल संख्या है उसके घन प्रमाण बार अनवस्था कुण्ड होंगे। घन बार भले होंगे, परंतु एक से दूसरा, दूसरे से तीसरा, तीसरे से चौथा अनवस्था कुण्ड बहुत ही बड़ा-बड़ा होता चला जा रहा है। यही इसकी बेसिक बात है। बाकी तो शलाका, प्रतिशलाका और महाशलाका कुण्डों का साइझ उतना ही है।

श्रोता: यह नंबर आयेगा – यह इतने समय एक आवली में है? नहीं, नहीं, अभी तो यह जो नंबर आयेगा वह आवली नहीं है; वह आवली तो बहुत आगे है। अभी तो हम मिनिमम पॉसिबल असंख्यात कौनसा है, जिसको जघन्य परीतासंख्यात कहते हैं उसकी बात देख रहे हैं। *श्रोता: महाशलाका कुण्ड में जितने सरसों हैं उतना मिनिमम?* देखो शलाका कुण्ड में कहो, प्रतिशलाका कुण्ड में कहो और महाशलाका कुण्ड में कहो, भरने के लिये ४६ डिजिट प्रमाण सरसों चाहिये, सरसों उतनी ही चाहिये। पर हर बार जो शलाका कुण्ड भी भरेगा तो उतनी बार पहली बार से दूसरी बार भरने में अनवस्था कुण्ड कितने अधिक सरसों से भरेगा; वह कितना बड़ा हो जायेगा! तीसरी जब हम सरसो डालेंगे तब वाला अनवस्था कुण्ड कितना बड़ा होगा; जब चौथी सरसो डालनी है, तो चौथे नंबर का अनवस्था कुण्ड और कितना बड़ा होगा। केवल बड़ा नहीं होता है, तो वह आगे-आगे कितने द्वीप-समुद्र चलकर आगे चले जाते है और आगेवाली सूची कितनी बड़ी, बढ़ती चली जाती है। तो इतने बढ़ते-बढ़ते-बढ़ते-बढ़ते यानी हम उसको इमॅजिन नहीं कर सकते क्योंकि इतने आगे चले गये। पहले जहां हमने अंतिम सरसो डाली है उसके आगे बढ़ना है;

फिर पहले से नहीं स्टार्ट करना है और इतनी बार वह द्वीप और समुद्र दुगुणा दुगुणा विस्तारवाला हो रहा है।

श्रोता: ४६ अंक का जो घन आया – उसका उतनी बार वर्ग करे तो उसका व्यास आयेगा? नहीं, उतनी बार तो कुण्ड करने हैं। *श्रोता: जो ४६ अंक का घन किया उसमें जो संख्या आयी उतने तो अनवस्था कुण्ड करने होंगे – उतनी बार अनवस्था कुण्ड करने हैं?* हां, उतनी बार अनवस्था कुण्ड करने हैं। *श्रोता: और लास्ट साइझ आयेगी वह ४६ अंक के घन की जो फिगर आयी उसको डबल?* नहीं-नहीं-नहीं – ऐसा नहीं है। *श्रोता: साइझ?* साइझ बहुत बड़ा है, उसका साइझ तो बताया ही नहीं यहां पर; साइझ तो बताया नहीं, उसका साइझ तो कितना अधिक हो जायेगा क्योंकि साइझ तो हम निकाल ही नहीं सकते। जो ४६ डिजिट प्रमाण सरसों पहले की, पहले कुण्ड की ४६ डिजिट प्रमाण सरसों जहां फिनिश हुयी, वहां को जो द्वीप या समुद्र हो – अब जो यह ४६ डिजिट है न उतनी बार दो संख्या लिखो और आपस में गुणा करो, जो प्रमाण आयेगा उतने लाख योजन उस द्वीप का वलयविस्तार हो गया। उसको चौगुणा करके तीन लाख कम कर दो, यह तो सूची हुयी। तो दो नंबर का अनवस्था कुण्ड ही कितना बड़ा हो गया। तो तीन नंबर का, चार नंबर का अभी उसकी कल्पना न करो तो अच्छा है!

श्रोता: *हमने जो क्ष का क्यूब किया,* उतने तो अनवस्था कुण्ड हुये। *श्रोता: उसको २-२-२-२-२ लिख कर मल्टिप्लाय करके आपस में गुणा करना?* नहीं-नहीं, ना-ना-ना, वह तो अनवस्था कुण्डों की संख्या आयी। उसमें जितनी सरसों आती हैं और वे एक अनवस्था कुण्ड की सरसों नहीं – अभी तक जितने अनवस्था कुण्ड बने हैं, उनमें जितनी सरसों डालकर आगे चले हैं, देखो फिर से सुनो, मान लेते हैं कि पहली बार हम ४ द्वीप-समुद्र आगे गये, बराबर हैं? और दूसरी बार जो सरसों, सरसों पहली बार ४ थी और दूसरी बार मानो न १६ थी; पहली ४ थी, और दूसरी १६ थी तो ४ और १६ यानी २० नंबर के द्वीप पर हम गये। तो २० पर पहले १ लाख रखना और १९ बार दोगुणा-दोगुणा करना, ख्याल में आती है न यह बात? जैसे हमने नंदीश्वर द्वीप के लिये किया था, वह १५ वां था, तो पहले तो १ लाख रखा और बाकी १४ बार दोगुणा-दोगुणा किया। तब हमने १४ बार दोगुणा दोगुणा किया था। ऐसे जहां पर वे सरसों समाप्त होगी, पहली बार की ४ थी, दूसरी बार की हमने १६ मानी हैं, १६ प्लस ४ = २० हो गयी, तो २०

हैं, तो पहली बार १ लाख रखो फिर १९ बार २-२-२ को आपस में गुणा करो। उतने लाख योजन तो उसका वलयविस्तार आया, उसको चौगुणा करो, उसमें से ३ लाख योजन मायनस करो, यह तो सूची आ गयी यानी आउटर डायमीटर आया, तो यह दूसरा अनवस्था कुण्ड इतना होगा। बात समझ में आती है?

इसतरह से जो अंतिम अनवस्था कुण्ड करना है तो पहले के जितने भरकर हमने डाले थे, उन सब प्रमाणों को इकठ्ठा करो और उतनी बार दोगुणा-दोगुणा-दोगुणा करो। तो इतने लाख योजन की तो वह सूची आ गयी – यह तो सूची का प्रमाण हुआ, उसमें सरसों कितनी आ जायेगी? तो इतना करने पर देखो, यहां जो लिखा है न २२२ पेज पर चौथी लाइन – **लब्धराशि एक नौ आदि अंकों के घन प्रमाण होती है।** अनवस्था कुण्डों का प्रमाण - ये जो ४६ डिजिट थे उनके घन प्रमाण तो अनवस्था कुण्ड हुये। **सो इतने अनवस्था कुण्ड होते हैं, ऐसा अनवस्था कुण्डों का प्रमाण जानना।** यहां ना सूची का प्रमाण बताया ना सरसों का प्रमाण बताया। यह अंतिम जो अनवस्था कुण्ड है न, उसमें जितनी सरसों भर जाती हैं उनके प्रमाण को यहां जघन्य परीतासंख्यात कहा है। २२१ पेज पर है न।

पहले और दूसरे कुण्ड के अंदर जितनी समायी थी उतनी वगैरह करते करते, देखो दूसरे पॅरेग्राफ की नीचे से तीसरी लाइन, पेज २२१। **इसतरह से बढ़ता हुआ व्यास का प्रमाण अंतिम अनवस्था कुण्ड पर्यंत जानना।** यह जो सूची बढ़ती-बढ़ती गयी और वहां जो अंतिम अनवस्था कुण्ड आया – **वहां जो अंतिम अनवस्था कुण्ड हुआ उसमें जितना सरसों का प्रमाण होता है उतना जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण जानना।** यह फिर भी सबसे छोटे में छोटी असंख्यात की संख्या है। अब जरा २२२ पेज पर आना, दूसरा पॅरेग्राफ। *श्रोता: लास्ट में महाशलाका का कुण्ड खतम होगा, लास्ट में, तो आगे के भी सारे अंकों को क्लिअर करना न?* अभी क्लिअर करने की जरूरत नहीं है, तो वह भर गया न, जब अंतिम अनवस्था कुण्ड भर गया तब एक सरसो शलाका कुण्ड में डाली; तो शलाका कुण्ड भी पूरा हुआ तो प्रतिशलाका कुण्ड में डाली, वह भी पूरा हुआ तो महाशलाका कुण्ड में डाली – तो सभी पूरा हो गया। उसके कारण सभी पूरे हुये, सभी पूरे हुये हैं तभी जो अनवस्था कुण्ड भरा था उसमें जितनी सरसों आयी हैं वह जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण है। अब यहां दूसरा पॅरेग्राफ – **अब जघन्य युक्तासंख्यात का प्रमाण कहते हैं।**

श्रोता: यहां केवल अनवस्था कुण्ड ही बड़ा-बड़ा होता है क्या? हां, अनवस्था कुण्ड का साइझ ही बड़ा होता है, बाकी तो उतने के उतने ही रहते हैं।

अब जघन्य युक्तासंख्यात का प्रमाण कहते हैं। यह जघन्य युक्तासंख्यात कहो या एक आवली में समयों का प्रमाण कहो बात एक ही है। हमने देखा ना एक आवली कितनी छोटी होती है, हं, तो **जघन्य युक्तासंख्यात का प्रमाण कहते हैं – जघन्य परीतासंख्यात का विरलन करना।** तो यह विरलन क्या है? **जितना उसका प्रमाण है उतने ही एक-एक करके अलग-अलग स्थापन करना।** अब इसके लिये एक उदाहरण ब्रॅकेट में बताया है – जैसे चार का विरलन करना हो तो चार बार एक-एक लिखना; वह लिखकर बताया है। अभी जो हमने अंतिम अनवस्था कुण्ड में जितनी सरसों देखी थी, उन सरसों को एक-एक करके अलग-अलग लिखो यानी इन सरसों को बिखेर दो एक-एक में, उसको कहते हैं विरलन करेंगे; यह विरलन हुआ; फिर क्या करना है? एक-एक की जगह एक-एक जघन्य परीतासंख्यात मांड़कर; जो अंतिम अनवस्था कुण्ड था इसमें जितनी सरसों थी उनको हम एक-एक में बिखर देंगे और एक-एक सरसो की जगह जघन्य परीतासंख्यात-जघन्य परीतासंख्यात-जघन्य परीतासंख्यात ऐसा लिखते चले जायेंगे – ऐसा लिखेंगे, हं, फिर क्या करना देखो – यानी पहले विरलन किया फिर उतनी ही बार **जघन्य परीतासंख्यात मांड़कर पश्चात् सभी को परस्पर गुणित करना। यानी पहले जघन्य परीतासंख्यात को दूसरे जघन्य परीतासंख्यात से गुणा किया, जो प्रमाण आयेगा उसको तीसरे जघन्य परीतासंख्यात से गुणा करना; पुनश्च जो प्रमाण आयेगा उसे चौथे जघन्य परीतासंख्यात से गुणा करना – ऐसे अंत तक परस्पर गुणा करने पर,** हमारी भाषा में जघन्य परीतासंख्यात रेज्ड टु जघन्य परीतासंख्यात। उसको इतनी बार लिखकर आपस में गुणा करो, **जो प्रमाण आता है वह प्रमाण जघन्य युक्तासंख्यात का जानना।** उसीको ४ का दृष्टांत लेकर समझाया है जो हमने देखा था। इतने तो समय एक आवली में होते हैं और ऐसे कितने ही संख्यात कहो या संख्यात हज़ार कोड़ाकोड़ी आवली एक सेकंड में होती हैं। *श्रोता: कोड़ाकोड़ी?* हां, कोड़ाकोड़ी – यह बात हमें अभी पता चली – हमने वह महाबंध या जयधवला में कहीं, महाधवला में पढ़ी है न? हां। *श्रोता: एक सेकंड में?* ऐसी कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं, संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं – एक सेकंड में।

तो यह कितना असंख्यात का बड़ा प्रमाण है – एक सेकंड में। अंतर्मुहूर्त – छोटे में छोटा अंतर्मुहूर्त कितना है? एक आवली प्लस एक समय वह सबसे छोटा अंतर्मुहूर्त है और सबसे बड़ा अंतमुहूर्त है ४८ मिनट में एक समय कम। जब-जब अंतर्मुहूर्त ऐसा लिखा है कहीं पर भी शास्त्र में, तो यथायोग्य अंतर्मुहूर्त समझना। हां, उसका छोटे-बड़ेपना जानना है तो अल्पबहुत्व नाम के अधिकार बहुत बड़े-बड़े हैं, अपने ग्रंथों में-आगम में वहां से पढ़ लेना कि कौनसा अंतर्मुहूर्त किस अंतर्मुहूर्त से कितना बड़ा है। हां, यानी हर बार हम कहते हैं अंतर्मुहूर्त प्रमाण आत्मा में लीन हो जायेगा तो केवलज्ञान हो जायेगा, तो कितने मिनट अंतरंग में लीन होगा? *श्रोता: ४८ मिनट।* ४८ मिनट नहीं लगते हैं, वह बहुत छोटा काल है क्योंकि छठे से सातवें का काल आधा और उसके आगे के गुणस्थान यानी आठवें का उसके संख्यातवां भाग, नववें का उसके संख्यातवां भाग – नववें का इतना छोटा अंतर्मुहूर्त है उसमें हजारों कोड़ाकोड़ी बार तो स्थितिकांडकघात और अनुभागकांडकघात होते हैं। उस अंतर्मुहूर्त में इतने सारे अंतर्मुहूर्त हैं, हमने काऊंट किये थे न एक बार कुछ, हं, ५४-५६ बार तो – हर बार कहते हैं संख्यात कोड़ाकोड़ी, संख्यात हजार बार स्थितिकांडकघात होता है; संख्यात हजार बार का भी प्रमाण निकाला था हमने कभी, वह भी कोड़ाकोड़ी में चला जाता है। यानी एक छोटे अंतर्मुहूर्त में इतने अंतर्मुहूर्त अंदर गर्भित हैं और एक समय में केवलज्ञानी संपूर्ण विश्व को, सभी द्रव्यों को, सभी गुणों को, उनकी पर्यायों को युगपत् जानते हैं। तो वह समय कितना छोटा है और वह ज्ञान की क्या पॉवर है यह हमारे ख्याल में आती है।

केवलज्ञान की महिमा करणानुयोग पढ़े बिना नहीं आ सकती आपको। केवल हम सर्वज्ञ-सर्वज्ञ भगवान कहते हैं परंतु वह सर्वज्ञ क्या जान रहे हैं – यह तो इतना थोड़ा है जो श्रुतज्ञानियों ने हमारे जैसे श्रुतज्ञानियों के लिये लिखकर रखा है। यह हमारे समझने के लिये लिखा है, कि नहीं समझने के लिये लिखा है? अभी तो लिखा हुआ कितना तो थोड़ा अंश ॲव्हेलेबल है। बारह अंगों का जितना ज्ञान गणधरों को था और फिर शिष्यों की परंपरा में था और गणधरों को भी कितना था? केवलज्ञानी कितना जानते हैं? तो अनंत जानते हैं और उनकी दिव्यध्वनि में कितना आता है तो उसका अनंतवां भाग दिव्यध्वनि में आता है। जितना दिव्यध्वनि में आता है उसका अनंतवां भाग गणधरों के ज्ञान में आता है; जितना वे जानते हैं उसके अनंतवां भाग तो द्रव्यश्रुत की रचना होती है – वे लिखते नहीं है परंतु

रचना करते हैं; द्वादशांग की रचना होती है। अब जो द्वादशांग की भी रचना हुयी है तो आज तक कितना रहा उसका अंश? नहीं के बराबर रह गया – यह नहीं के बराबर है, तो क्या होगा वह द्वादशांग श्रुत?

जब हम स्वाध्याय कर रहे थे न, नववां गुणस्थान का हमारे यहां प्रकरण चल रहा था, कोई एक भाई आये थे स्वाध्याय के समय – लब्धिसार-क्षपणासार चल रहा था और नववें गुणस्थान के उपशमचारित्र की बात चल रही थी। मैं आऊंगा और बैठूंगा ऐसा कहा उन्होंने। वे अच्छे प्रवचनकार थे; ८७-८८ वर्ष की कुछ उम्र थी। तो आये, बैठे, डेढ़ घंटा अच्छे से सुना उन्होंने। हमारी वही नववें गुणस्थान की बात चल रही थी, वहां तो क्या-क्या होते हैं प्रोसेस, बहुत लंबे चौड़े होते हैं। तो फिर जब डेढ़ घंटे का स्वाध्याय समाप्त हुआ तब जाते समय इनसे बात की कि मैं कल से नहीं आऊंगा; कल से नहीं आऊंगा? क्यों नहीं आयेंगे? क्योंकि मैं कुछ नहीं समझा, परंतु फिर भी आज मेरे ऊपर बड़ा उपकार हुआ, बहन को बता देना कि मुझे इसका बहुत लाभ हुआ है। कुछ समझे नहीं और लाभ हुआ यह कैसे हुआ? तो कहते हैं कि मेरा मद गल गया कि आज केवलज्ञान क्या हो सकता है इसका मुझे विचार आ गया। यानी केवलज्ञान की महिमा मुझे आज भासित हुयी कि कितना-कितना गहन विषय इसमें है।

तो देखो ये सारी बातें तो हमारे जानने के लिये लिखकर रखी है, ढूंढ़ारी भाषा में उन्होंने सरल करके लिखी है। मूल तो संस्कृत प्राकृत ग्रंथ आज भी ॲव्हेलेबल हैं, उसमें बुद्धि चलती हो तो जरूर लगाना परंतु वहां अपनी बुद्धि के अनुसार अर्थ मत करना। उसके लिये इसको आधाररूप से कहो, गाइडरूप से कहो इसको सुनना या पढ़ना, अच्छी तरह से। सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका के जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार-क्षपणासार ये तीनों जो हैं वे पढ़ेंगे तो आगे के आगम ग्रंथ समझने में बहुत सरलता होती है क्योंकि उन्हींको समझने में हम बहुत भूल करते हैं। तो ये संख्याओं की बात इसलिये जाननी है कि हमें उन असंख्यातों का थोड़ा एहसास होगा क्योंकि यहां तो केवल उनके नाम बताये जायेंगे, आवलीप्रमाण काल इतना कहेंगे। एक समय की बात करेंगे, असंख्यात समयों की बात करेंगे; कहीं कहेंगे पल्य, कहीं कहेंगे अंगुल, वह क्या होता है क्या पता! ख्याल में आया? अब हम पूरे में नहीं जायेंगे, अभी तो हमने आवली की बात देखी थी।

अभी जो हमने एक द्विरूपवर्गधारा देखी थी न, हम पुस्तक में नहीं पढ़ेंगे – द्विरूपवर्गधारा

यानी क्या है? एक सीक्वेन्स है ऐसा – क्या है उसमें? शुरुआत कहां से होती है? २ का वर्ग ४ से शुरुआत होती है और इस धारा में सारे ही वर्गस्थान हैं। वर्ग का वर्ग-वर्ग का वर्ग-वर्ग का वर्ग-वर्ग का वर्ग करते चले जाओ। तो इसमें ४ है, १६ है, २५६ है, ६५५३६ है, पणट्ठी जिसको कहेंगे, फिर बादाल है, एकट्ठी है, ऐसे चले जाओ आगे-आगे तक। तो इसी धारा में आगे चलकर बहुत सारी संख्यायें आती हैं, देखो हम आगे आपको बताते हैं। यह जो जघन्य परीतासंख्यात है न, वह संख्या भी इस धारा में आती है। देखो, यह द्विरूपवर्गधारा है, पेज नंबर २२९ – यह हमने एक बार पढ़ा था इसको। अभी जो मैंने आपको बताया न उसको पढ़ेंगे नहीं, हमने यह बात देखी कि २ का वर्ग ४ से यह धारा शुरू होती है और ४ का वर्ग-उसका वर्ग-उसका वर्ग-उसका वर्ग-छह स्थान जाते हैं तो एकट्ठी हो जाती है – एक अट्ठ यानी यह संख्या अठारह से शुरू होती है इसलिये इसका नाम है एकट्ठी। यह एकट्ठी नाम सुना हैं कहीं पर? क्या होता है इतने प्रमाण? हं? जरा जोर से? *श्रोता: बीस अंक प्रमाण है।* हां, बीस अंक प्रमाण है पर उस प्रमाण क्या है? सुना है कुछ? *श्रोता: ४२ से शुरू होता है...* वह तो बादाल है, पर यह एकट्ठी प्रमाण क्या है इस विश्व में? *श्रोता: एकट्ठी मायनस १... अन्य श्रोता: सर्वश्रुत के अक्षर...* एकट्ठी मायनस १ सर्वश्रुत के अक्षर हैं। अपुनरुक्त अक्षर यानी नॉन रिपीटेड, हो!

जैसे हमने अंग्रेजी में इतनी बड़ी नॉव्हेल पढ़ी, उसमें अपुनरुक्त अक्षर कितने थे? *श्रोता: २६। हां २६*, क्योंकि A जो लेटर है कितनी भी बार आये, हम उसको एक बार ही गिनेंगे। हमारी भाषा में तो जोडाक्षर भी होते हैं अ, आ, इ, ई वगैरह स्वर भी हैं, क, ख, ग आदि व्यंजन भी हैं। टोटल कितने होते हैं स्वर और व्यंजन मिलकर? ६४ होते हैं। तो उनके कॉम्बिनेशन्स कितने होंगे? जैसे हमारे पास कोई A, B, C तीन ही लेटर्स हैं; उनके कॉम्बिनेशन्स कैसे करना? अकेले A को रखना, अकेले B को रखना, अकेले C को रखना, फिर AB को रखना, AC को रखना, BC को रखना; तीन और तीन छह हो गये; ABC तीनों को रखना, वे हो गये सात – हमारे यहां सप्तभंगी कहलाती है, तो भंग सात ही क्यों हैं? क्योंकि वहां तीन ही बातें बताते हैं। कौनसी? अस्ति, नास्ति और अवक्तव्य और इनके कॉम्बिनेशन्स हैं। कैसे? अस्ति, नास्ति और अवक्तव्य; फिर अस्ति-नास्ति, अस्ति-अवक्तव्य, नास्ति-अवक्तव्य; अस्ति-नास्ति-अवक्तव्य – इसतरह से सात भंग होते हैं, जहां तीन बातें होंगी उनके कॉम्बिनेशन्स यानी भंग सात होते हैं।

हमारे यहां ६४ लेटर्स हैं, स्वर और व्यंजन मिलकर ६४ हैं, उनके कॉम्बिनेशन्स कैसे करना? गिनो अभी। तो हमने क्या किया? तीन लेटर्स हैं न, तो २ को तीन बार रखा और आपस में गुणा किया, २ गुणा २ गुणा २; ८ हुये। ८ में से १ मायनस करो तो ७ ही भंग होंगे। जहां A, B, C, D चार बातें होंगी वहां कितने भंग होंगे? २ गुणा २ गुणा २ गुणा २; १६ हुये, १६ मायनस १; १५ होंगे। करके देखो आप – वहां एकसंयोगी, द्विसंयागी, तीनसंयोगी, चारसंयोगी भंग होंगे। ऐसे हमारे पास लेटर्स हैं ६४ तो क्या करना? ६४ बार २-२ लिखकर आपस में गुणा करो; कौनसी संख्या आयेगी? एकट्ठी प्रमाण संख्या आयेगी जो २२९ पर नीचे से तीसरी लाइन में लिखी है; उसमें १ मायनस करो, इतने तो समस्त श्रुत के अपुनरुक्त अक्षर आ जायेंगे। अभी अपुनरुक्त अक्षरों में से हमारे पदों की रचना हुयी हैं। कितने अक्षरों का एक पद होता हैं? *श्रोता: १६५६* नहीं, नहीं, सोलह सौ चौंतीस करोड़ तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अट्ठासी (१६३४,८३,०७८८८) अक्षरों का एक पद होता है, यह मध्यम पद है। जिसमें जिनवाणी यानी संपूर्ण द्रव्यश्रुत ग्रथित है। जैसे हम कहते हैं न, पहेलो आचारांग बखानो, कितने पद हैं? *श्रोता: पद अष्टादश सहस।* पद अष्टादश सहस यानी १८००० पद, ये पद क्या होते हैं? क्या पता क्या होते हैं? तो एक-एक पद में इतने अक्षर होते हैं। तो एकट्ठी मायनस १ इतने अक्षर ये टोटल अक्षर हैं। डिव्हायडेड बाय एक पद के अक्षरों की संख्या (१६३४,८३,०७८८८); तो जो संख्या आयेगी इतने टोटल पद हमारे अंगश्रुत के हैं। तो कितने पद हैं बारह अंगों के मिलकर? हं? ११२ करोड़ वगैरह हैं न? अभी आपके हाथ में पुस्तक है न निकालो –

श्रोता: ११२ करोड़, ८३ लाख, ५८ हजार, ५। हां, वह तो हम सरस्वतीपूजन बहुत बार करते हैं परंतु उसमें क्या लिखा है कुछ पता नहीं है। यह ज्ञानमार्गणा में है। *श्रोता: पेज नंबर?* पेज नंबर थोड़े ही मुझे याद है? अभी देखेंगे – ४८७। हां देखो, ४८७ पेज, ३५५ गाथा; मिला? गाथा ३५५ की टीका – **एक कम एकट्ठी प्रमाण समस्त श्रुत के अक्षर कहे, उनको परमागम में प्रसिद्ध जो मध्यमपद** – एक होता है अर्थपद, एक होता है प्रमाणपद और एक होता है मध्यमपद। अर्थपद यानी हम जो वाक्य बोलते हैं उसमें कुछ वर्ड्स हैं और उससे अर्थ सूचित होता है, उसको हम कहेंगे अर्थपद। जैसे राम ने आम खाया; चार शब्द हैं, चार पद हैं और उसमें कुछ अर्थ भासित हुआ। प्रमाणपद होते हैं हमारे

जो श्लोक हैं उनमें अक्षरों की संख्या विशिष्ट होती हैं जैसे 'नम: समयसाराय' – ८ का एक चरण हुआ; 'स्वानुभूत्या चकासते' – ८ और ८ सोलह हुये; 'चित्स्वभावाय भावाय सर्वभावान्तरच्छिदे'; ८ गुणा ४ = ३२ अक्षरों का एक श्लोक तैयार हुआ। अनुष्टुप छंद हो जाता है न! तो इसको कहते हैं श्लोक, हं? *श्रोता: टीका इसीसे नापते हैं?* जो टीका इतने श्लोकप्रमाण कहते हैं वहां तो अक्षरों की संख्या गिनते हैं। हम तो कहते हैं कि गद्यरचना हुयी है और इतने श्लोक कहां से आ गये, ख्याल में आयी न बात?

तो यहां एकट्ठी मायनस एक इतने परमागम में श्रुत के अक्षर कहे उनके जो मध्यमपद हैं, उनके **अक्षरों का प्रमाण सोलह सौं चौंतीस कोड़ि तिरासी लाख सात हजार आठ सौ अट्ठासी, उसका भाग देने पर पदों का जो प्रमाण आता है उतने तो अंगपूर्व संबंधी मध्यमपद जानने।** इनमें बारह अंगों की रचना हुयी हैं। और **अवशेष जो अक्षर रहे वे प्रकीर्णकों के जानने** – अंगबाह्य जिसको कहेंगे १४ प्रकीर्णक। **सो एक सौ बारह कोड़ि तिरासी लाख अट्ठावन हजार पांच इतने तो अंगप्रविष्ट श्रुत के पदों का प्रमाण आया। अवशेष आठ कोड़ि एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर अक्षर रहे वे अंगबाह्य प्रकीर्णक के जानने। ऐसे जो दोनों का प्रमाण हे भव्य तू जान!**

यह एकट्ठी की बात आयी थी न इसलिये हमने उसको याद किया। हं, इतने तो अक्षर हैं टोटल, अपुनरुक्त अक्षर, एक बार आयेंगे तो फिर दुबारा नहीं गिनेंगे। तो देखो, इस द्विरूपवर्गधारा में ऐसे और कुछ स्थान चले जायेंगे तो वे जो बहुत सारी संख्यायें हैं तो उनमें ही आगे चलकर जघन्य परीतासंख्यात भी आ जायेगी। तो जघन्य परीतासंख्यात के आगे – समझ में आती है बात? जघन्य परीतासंख्यात उनमें छोटे में छोटा असंख्यात है तो यह वर्गस्थान है। संख्यात बार वर्गस्थान के बहुत बार वर्ग किये तब जाकर जघन्य परीतासंख्यात आ गयी। उसके बाद उसका वर्ग-उसका वर्ग-उसका वर्ग असंख्यात बार करते जाओ तो जाकर वहां पर आवली आ जाती है।

फिर आगे चलकर पल्य आ जाता है, अभी हम शॉर्ट में बताते हैं उसको। असंख्यात वर्ग स्थान जाने के बाद पल्य नाम की संख्या आती है; अब हम समझाने के लिये कहते हैं आपको – जैसे द्विरूपवर्गधारा में १६ संख्या कहां है? दूसरे स्थान पर। ४ और १६; यह दो नंबर के स्थान पर १६ है; और दो स्थान आगे चले जाओ तो क्या होगा? तो ६५५३६ आयेंगे, ख्याल में आती हैं बातें? दो नंबर के स्थान पर १६ है और उतने ही

दो स्थान आगे चले जाओ तो ६५५३६ आ जाते हैं और ऐसे असंख्यात स्थान जाने पर पल्य आया; जितने असंख्यात स्थान जाने पर पल्य आया, पल्य को उतने ही असंख्यात बार वर्ग करते-करते आगे चले जाओ तब जाकर अंगुल का प्रमाण आयेगा; अंगुल में प्रदेशों की संख्या इतनी होती हैं। फिर से, जितने असंख्यात स्थान जाते-जाते-जाते वर्ग करते-करते-करते पल्य नामकी संख्या आयी है, तो पल्य का वर्ग-वर्ग का वर्ग-वर्ग का वर्ग करते चले जाओ; कितनी बार? जितनी असंख्यात बार करने पर पल्य आया, अब पल्य के आगे उतने ही स्थान चले जाओ तब जाकर अंगुल नामकी संख्या आती है यानी अंगुल का प्रमाण इतना बड़ा है। उसको सूच्यंगुल कहेंगे; उसका घन होगा तो वह घनांगुल होगा। कल बात आयी थी न वह घनांगुल का असंख्यातवां भाग वगैरह और भी यहां बहुत सारी बातें आती हैं।

श्रोता: असंख्यात का असंख्यात बार पल्य लिया, वह असंख्यात कौनसा लेना?

वह तो साधारण बता दिया असंख्यात स्थान जाने पर, अभी उसमें भी बहुत सारी बातें हैं – उसका अर्धच्छेद, उसकी वर्गशलाका, उसका प्रथम वर्गमूल ये सब मैंने छोड़ दिये हैं, बीचवाली जो बहुत सारी स्टेजेस हैं उनको मैंने छोड़ दिया है क्योंकि यह रोज के अगर स्वाध्याय में लेते हैं और थोड़ा थोड़ा पढ़ते हैं तो यह बात ख्याल में आती है। जब हम पढ़ते थे तब आधा पेज होता था एक दिन में यानी डेढ़ घण्टे में। *श्रोता: आपकी कॅसेट में है...* हां, हमारी कॅसेट में है ना, आपने सुना होगा – जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड की सीडीज् यहां फ्री में बट चुकी हैं पहले दो शिबिरों में और अभी वह लब्धिसार की भी मिलेगी आपको – पूरे आद्योपांत ग्रंथ के पूरे के पूरे लेक्चर्स उनमें हैं, पूरी की पूरी सीडीज्। आपको चाहिये तो धवला की पूरी हैं, धवला के ऊपर १२२५ घंटों के लेक्चर्स हो गये, १०२ सीडीज् हैं – एक सीडी में १२ घंटे। जयधवला के ऊपर ११७ सीडीज् हैं, हरेक में १२ घंटे। महाधवला की अभी तक पांच ही पुस्तकें हुयी हैं, हां, अभी दो बाकी हैं।

श्रोता: आप इसका भी वर्ग का वर्ग, वर्ग का वर्ग कर रही हैं। ये भाई हमारे सिंगतकरजी चंद्रपूर से हैं, ये हमारे यशवंतजी बँगलोर के हैं वे भी सुन रहे हैं, उनकी जयधवला भी हो गयी। ये होशंगाबादवाली सुषमाजी और वहां की महिलायें उन्होंने भी धवला की सीडी मंगायी थी। बहुत सारे हैं, बहुत जगह गयी और लोग उसको अच्छी तरह से समझ रहे हैं।

सामने पुस्तक रखो और सीडी चलाओ – एक-एक लाइन, एक-एक शब्द में बहुत उसको घूंट-घूंटकर सिखाया है। यानी हमारे यहां वांचना नहीं होती; उसका बिलकुल विस्तार से अर्थ जब तक घटित नहीं होता तब तक बारंबार उसको समझाया जाता है और हमारे सामने सुननेवाले शांति से आप जैसे नहीं बैठते हैं। हां, क्वेश्चन पूछनेवाले हैं; उनके लिये भी हमने अलग से माइक की व्यवस्था की है, नहीं तो सीडी में क्वेश्चन तो सुनायी नहीं देगा। तो इतने ऐसे उलटे-पुलटे क्वेश्चन पूछते हैं और हम आगम के आधार से उनका समाधान करने की कोशिश करते हैं – यह इनको पता है, हैं न! और फिर उनको जब तक उत्तर नहीं मिलता तब तक हमारी चर्चा चलती है। हम तो इतने भाग्यवान हैं, इतनी गहरी चर्चा सुननेवाले एकसाथ ऐसे हम बैठते हैं दस-बारह-पंद्रह जन।

श्रोता: महा मायानगरी बम्बई में सर्वार्थसिद्धि योग है। महामाया तो हमारे बाहर है, हमें क्या? यह तो ऐसा है न, नरकों में सम्यग्दर्शन क्यों होता है? क्योंकि उन्हें वहां के वातावरण से बिलकुल... *श्रोता: लगाव नहीं है।* हां, उसमें नहीं रहना चाहते। ऐसे ही बम्बई में रहनेवालों को वहां के वातावरण से कुछ प्रयोजन नहीं है न, वह तो प्रतिकूलता है तो अच्छा है; बाहर तो कहीं मन भटकता नहीं है – अपना स्वाध्याय करो, अपने घर में रहो आनंद से। आप लोग बहुत आग्रह करते हैं तो हमें यहां आना पड़ता है, हमारा सारा स्वाध्याय छूट जाता है।

तो हमने ये कुछ असंख्यात वगैरह की बातें देखी। उसमें पल्य है, अंगुल है, सूच्यंगुल है, घनांगुल है, सागर भी उसीमें आता है। जगत्श्रेणी यानी सात राजू को जगत्श्रेणी कहते हैं। जगत्श्रेणी गुणा जगत्श्रेणी को जगत्प्रतर कहते हैं और जगत्श्रेणी का घन करो तो उसको लोक कहते हैं; जिसको हम लोकप्रमाण असंख्यात कहते हैं। ये सारे असंख्यात के भेद हैं – जघन्य परीतासंख्यात से लेकर ये आवली कहो या पल्य कहो, सागर कहो, अंगुल कहो – ये सारे क्या हैं? असंख्यात के अलग-अलग भेद हैं। वह कौनसा असंख्यात कहां लेना है उसका तो शास्त्र में कथन आता है। वे तो केवल ऐसा ही लिखेंगे – पल्यप्रमाण हैं; पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं; आवली के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं; तो उसमें हमें उसका थोड़ा एहसास होता है कि कौनसा असंख्यात कितना बड़ा है, छोटा है। इसमें डिटेल में नहीं समझते हैं तो बस असंख्यात इतना जान लो – ख्याल में आती है न बात?

श्रोता: यह आत्मांगुल और आपने जो अभी बताया सूच्यंगुल, इन दोनों में क्या फरक पड़ेगा? या तो दोनों में आनेवाले प्रदेशों की संख्या में भी फरक पड़ेगा क्या?

हां, उसमें भी फरक पड़ेगा – यह सूच्यंगुल आता है उसमें तो वह बात है जिसको कहेंगे न, निकालना पेज नंबर २४०, नीचे से चौथी लाइन। **अंगुल तीन प्रकार का है – उत्सेधांगुल, प्रमाणांगुल, आत्मांगुल। वहां पूर्वोक्त क्रम से उत्पन्न हुआ वह उत्सेधांगुल** पूर्वोक्त क्रम से यानी उसके ऊपर के पॅरेग्राफ में चलते हैं। पहले में पहले तो हमें अभी टाइम नहीं है परंतु पहले परमाणुओं का वर्णन किया है; परमाणु तो एकप्रदेशी है। बराबर? ऐसे दो परमाणुओं का, तीन परमाणुओं वगैरह का स्कंध होते-होते तो **अनंतानंत परमाणुओं का जो स्कंध होता है, वह अवसन्नासन्न नामधारक है**; उसको अवसन्नासन्न कहेंगे। उससे सन्नासन्न – अभी जो हम नाम लेंगे वे आठ-आठगुणे होंगे। यानी आठ अवसन्नासन का एक सन्नासन्न होगा; आठ सन्नासन्न का एक तृटरेणु होगा; आठ तृटरेणु का एक त्रसरेणु होगा; आगे के नाम ऐसे ही आठ-आठगुणे हैं। **तो त्रसरेणु, रथरेणु, उत्तम भोगभूमिवालों के बाल का अग्रभाग, मध्यम भोगभूमिवालों के बाल का अग्रभाग, जघन्य भोगभूमिवालों के बाल का अग्रभाग, कर्मभूमिवालों के बाल का अग्रभाग**; फिर उससे आठगुणा **लीख**, उससे आठगुणा **सरसो**, उससे आठगुणा **यव** और उससे आठगुणा **अंगुल**। यहां जो अंगुल कहा है उसका नाम है उत्सेधांगुल। आठ यव का एक अंगुल है, ये आठगुणे-आठगुणे हैं। अब ये जो... *श्रोता: लीख यानी जो रुस है?* लीख यानी तो बाल में जूं होती है न उसका अंडा, उसको लीख कहते हैं, वह लीख।

तो यह जो उत्सेधांगुल है, उत्सेधांगुल में नारकी वगैरह के शरीरों को हम नापते हैं। आत्मांगुल यानी जो जितना बड़ा है उसके अंगुल का जो नाप वह आत्मांगुल कहलाता है। छोटा बच्चा है तो उसका अंगुल छोटा होगा; हमारा इतना छोटा है और वह जो भोगभूमिवालों का कितना बड़ा होगा – तीन कोस हाइट है उनका आत्मांगुल कितना होगा? ये अलग अलग आत्मांगुल होते हैं। प्रमाणांगुल किसको कहना? तो **जो भरतक्षेत्र के अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्रवर्ती का जो अंगुल है वही प्रमाणांगुल है।** वह उत्सेधांगुल से कितना बड़ा है, तो पांच सौ गुणा बड़ा है। उस प्रमाणांगुल से क्या नापे जाते हैं? द्वीप, समुद्र, पर्वत, वेदी, जगती वगैरह जो हमने अभी पढ़े हैं न, इतने-इतने लाख योजन वगैरह

कहे, वह यह प्रमाणांगुल से बना हुआ प्रमाणयोजन होगा। अब ये बाकी आगे की बातें तो हमने पढ़ी थी – छह अंगुलों का एक पाद, दो पाद की एक विलस्ति वगैरह।

श्रोता : सूच्यंगुल किसमें घटित करना?

सूच्यंगुल यानी वह उत्सेधांगुल-उत्सेधांगुल वह सूच्यंगुल। वहां पर भी कहेंगे वह अंगुल में भी वह प्रमाणांगुल है या उत्सेधांगुल है? ऐसा कहीं कहीं कथन आता है। हम किसकी बात करे उस पर वह डिपेंड है यानी क्या? देह का प्रमाण हम नाप रहे हैं तो उत्सेधांगुल होगा और यदि जो अंगुलों में अन्य की बात करते हैं कहीं पर अकृत्रिम चैत्यालयों की या वहां क्षेत्र की बात है तो वह प्रमाणांगुल हो गया – प्रमाणांगुल के प्रमाण से योजन होंगे। *श्रोता: घनांगुल के असंख्यातवें भाग में जो कहते हैं न कि जो अवगाहना है...* वह उत्सेधांगुल के असंख्यातवें भाग है। बहुत छोटी अवगाहना है वह। शरीर का प्रमाण उत्सेधांगुल में नापा जाता है।

तो यह असंख्यात का प्रमाण हमने इसलिये देखा है कि समय कितना सूक्ष्म है और ऐसे अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी के एक-एक समय में हमने अपना जन्मक्षण बनाया यानी हमने अपना जन्मक्षण बनाकर हम उत्पन्न हुये थे कहीं न कहीं पर । फिर भी हमारा पेट नहीं भरता है। ऐसा कोई भी क्षण, कोई भी समय नहीं है जिस समय हमने जन्म धारण नहीं किया है क्रम से। अभी तो क्रम से हम आगे बढ़ेंगे, मरण भी क्रम से करने हैं – वह अभी हमने नहीं किया है। हमने केवल जन्म-जन्म ही धारण किया है फिर भी हमारा पेट नहीं भरा फिर भी हम बर्थडे मनाते हैं। कोई क्षण ऐसा नहीं रहा जब हमने जन्म धारण नहीं किया है अनंतों बार – तो बर्थडे कब हुआ था? और उसको मनाते हैं। जन्म लेना अपराध है कि क्या है? *श्रोता: अपराध है।* अठारह दोषों में है न वह? और फिर हम उसको खुशी-खुशी मनाते हैं यानी हमने उसको अपराध भी नहीं माना है। हमने उसको जशन मनाने जैसा मान लिया। चलो, बाकी चर्चा हम शाम को करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

२९. कालपरावर्तन, भवपरावर्तन – १

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर रहे हैं। व्यवहारकाल किस रीति से गिना जाता है उसके हमने अलग-अलग नाप देखे, उसके बहुत सारे यूनिट्स देखे। सबसे छोटे में छोटे जो व्यवहारकाल का नाप है उसको कहते हैं समय। समय कितना सूक्ष्म है इसको जानने की हमने थोड़ी कोशिश की। क्योंकि हमें तो सेकंड पता है, ऐसे एक-एक सेकंड में संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी तो आवली होती हैं और एक-एक आवली में जघन्य युक्तासंख्यात समय होते हैं। जघन्य युक्तासंख्यात तो उस संख्या का नाम है जहां जघन्य परीतासंख्यात को आपस में उतनी ही बार गुणा करके जो प्रमाण आता है; उसको आवली कहते हैं। तो समय इतना सूक्ष्म है, यह समय सूक्ष्म है यह क्यों जानना? हमें तो जो मालूम है सेकंड – छोटे में छोटा, उसके भी अब बहुत सारे अब्जावधी भाग किये हैं हमारे सायंटिस्टों ने, पर वे तो कुछ संख्यात हैं, उत्कृष्ट संख्यात भी नहीं हैं। तो समय इतना सूक्ष्म है और हम जो यह कालपरावर्तन देख रहे हैं, उसमें हमने क्या पढ़ा था जरा फिर से दुबारा देखते हैं, ६४३ पृष्ठ निकालिये जीवकाण्ड की २ नंबर की पुस्तक में। देखो, कालपरावर्तन को देखते हैं। यह कहां से शुरुआत करनी है तो किसी कालपरावर्तन को हम शुरुआत करेंगे तो कहां से कहां तक गिनना तो किसी एक समय से गिनेंगे, तो हम शुरू करेंगे किसी उत्सर्पिणी के पहले समय में किसी जीव ने जन्म लिया।

देखो, पृष्ठ ६४३, नीचे से चौथी लाइन – **कोई जीव** – अभी एक ही जीव, कितने काल तक जन्म-मरणरूपी संसार में भ्रमण करेगा तो एक कालपरावर्तन होगा उसकी यह बात है। तो कोई जीव – **कोई जीव उत्सर्पिणी काल के पहले समय में जन्मा,** कहां जन्मा? कहीं पर भी, लोकाकाश के किसी भी प्रदेश पर उसका जन्म हुआ। कितनी अवगाहना के साथ जन्मा? उसमें कोई कंडिशन नहीं है। कौनसा भव धारण किया? सूक्ष्म निगोद हुआ कि मनुष्य हुआ उससे कोई लेना-देना नहीं है। बस उसका जन्म कब हुआ इसकी बात है; कहां हुआ, कितनी अवगाहना के साथ हुआ, उसने वह कौनसी पर्याप्तिवाले क्या परमाणु लिये उसकी यहां चर्चा नहीं है; जन्म कब किस समय धारण किया है बस इतनी ही मात्र यहां चर्चा है। तो उसने जन्म लिया, जन्म लिया तो आयु पूरी करके मर

जायेगा फिर जन्म-मरण करते-करते फिर दूसरी बार जब उत्सर्पिणी आयेगी, कब आयेगी? तो उत्सर्पिणी अभी तो शुरू हुयी थी, एक समय हुआ था, तो उत्सर्पिणी के पूरे दस कोड़ाकोड़ी सागर फिर अवसर्पिणी के दस कोड़ाकोड़ी सागर करके एक कल्पकाल पूरा होगा, उसको कल्पकाल कहने में आता है, वह पूरा होने के बाद नयी उत्सर्पिणी आयेगी। २० कोड़ाकोड़ी सागर कितना बड़ा काल है तो उसमें एक ही भव लेना है और वह भी पहले समय में जन्मा है इसलिये उसका एक भव वहां लिया।

अब बाय चान्स वह वहीं मर जाये तो दूसरे समय में जन्म ले सकता है। अभी वहां उसका मरण नहीं हुआ, दो चार समय पहले जन्मा था कहो या घंटे पहले या चार पांच साल पहले जन्मा था तो उसका भव चल रहा है, भव चल रहा है तो दूसरे समय में तो उसका जन्म नहीं होगा। नहीं होगा तो क्या होगा? वह पूरा सायकल, पूरा कितना? २० कोड़ाकोड़ी सागर का टर्न होकर वापस जब दूसरी नयी उत्सर्पिणी शुरू होगी तब फिर उसके दूसरे समय में जन्मने का अवसर आ सकता है। हो सकता है उस समय में भी उसकी आयु चल रही है, ऑलरेडि वह जन्मा है और उस समय उसका जन्मने का अवसर नहीं है तो क्या होगा? और एक पूरे कल्पकाल का फेरा चला जायेगा तब उसको फिर दूसरे समय में जन्मने का अवसर आयेगा। ऐसा हो सकता है कि कितनी ही बार उसके ऐसे फेरे हो जावें तो दूसरे समय में उसका जन्म नहीं होगा। जब कभी होगा तो उसको अनुक्रम में हम गिनेंगे। फिर भले ही उसका दूसरे समय में जन्म होगा, फिर अनेक भव पार करके पूरे २० कोड़ाकोड़ी सागर पार करके आयेगा, अभी तीसरे समय में जन्म होना चाहिये। एक-एक समय आगे बढ़ने के लिये हो सकता है बीच में अनंतकाल चला जाये क्योंकि उसी एक्झॅक्ट समय में, समय कितना सूक्ष्म है, उसी समय में उसका जन्म होना चाहिये। तो ये बहुत कठिन जैसी बातें लगती हैं। अब हम आगे बढ़ेंगे –

कोई जीव उत्सर्पिणी काल के पहले समय में जन्मा, अपनी आयु को पूर्ण करके मरा। फिर दूसरी (अन्य) उत्सर्पिणी के दूसरे समय में जन्मा – यह समझ में आता है न! एक बार एक समय लिया तो वह पूरे कल्पकाल का दूसरा समय नहीं लेना जन्म के लिये, उसके बादवाली उत्सर्पिणी जब आयेगी उसमें फिर दूसरा समय लेना। बाय चान्स उस समय उसका जन्म नहीं हुआ क्योंकि ऑलरेडि उसने जन्म लिया हुआ था और

फिर उस समय उसका जन्म लेना पॉसिबल नहीं था, तो उस उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी को नहीं गिनना। फिर दूसरे समय में जन्मा **और अपनी आयु को पूर्ण करके मरा**, फिर तीसरे समय में, अन्य किसी उत्सर्पिणी के तीसरे समय में जन्मा। **इसतरह दस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्सर्पिणी काल के जितने समय** – अब यह कितने समय हो सकते हैं यह आप कल्पना कर सकते हैं। अभी हमने केवल जघन्य परीतासंख्यात को गिना तो सबके सरदर्द शुरू हो गये, सिर भारी हो गये। क्योंकि यह इतनी बड़ी संख्या! हमें ऐसा लगता है कि यह कल्पना से परे ऐसी कोई बात है; वह है नहीं कल्पना; कल्पना नहीं है; यह तो सर्वज्ञ भगवान ने बतायी हुयी बात है। एक्झॅक्ट उसका प्रमाण बताया है तो उसमें इतने समय हैं, एक जघन्य परीतासंख्यात में इतने समय हैं, तो आवली में कितने होंगे, एक सेकंड में कितने होंगे, एक मिनिट में कितने होंगे, एक साल में कितने होंगे और सागरों में कितने होंगे और यहां तो बात कितनी है? २० कोड़ाकोड़ी सागर के – दस और दस कोड़ाकोड़ी सागर मिलकर जितने समय हैं उस प्रत्येक समय पर क्रम से जन्मना चाहिये – आप कहेंगे जब २० कोड़ाकोड़ी सागर हो रहे थे तब जहां जहां जन्म हुआ वहां वहां टिक करते जाओ न! और बाद में हम फिल इन द ब्लँक्स कर लेंगे – वैसा नहीं चलेगा।

बिलकुल एक-एक समय के क्रम से, एक-एक समय से आगे बढ़ते हुये ही जन्म होना चाहिये, ये दुर्लभ में दुर्लभ ऐसी बातें हैं। जब जाकर पूरा राऊंड, पूरा कितना २० कोड़ाकोड़ी सागर के जितने समय हैं उस प्रत्येक समय पर जब क्रम से जन्म होगा – तो बीच में अक्रम से होगा तो क्या करेगा? वह तो होनेवाला ही है और उसमें अनंतकाल चला जानेवाला ही है, क्योंकि उस एक्झॅक्ट समय पर जन्म होना बहुत दुर्लभसी बात है। तो ऐसा कितना ही अनंत-अनंत-अनंत-अनंतकाल चला जायेगा तब जाकर २० कोड़ाकोड़ी सागर के जितने समय हैं उन प्रत्येक समय पर उसका क्रम से जन्म होगा। जो ऑलरेडि बीत चुके हैं जन्म के क्षण, वहां तो कितनी ही बार उसका जन्म होगा आगे या पीछे, यानी एक एक समय पर तो उसने अनंतों बार जन्म-मरण, जन्म-मरण किया होगा तब जाकर उसका जन्म का सायकल पूरा हो जायेगा। अब आगे बढ़ते हैं ६४४ पृष्ठ पर –

तो पहले में पहले उसने क्रम से हर समय जन्मते-जन्मते उत्सर्पिणी के १० कोड़ाकोड़ी सागर पूरे किये। **पश्चात् इसी अनुक्रम से १० कोड़ाकोड़ी प्रमाण अवसर्पिणी काल**

के जितने समय हैं, उनको पूर्ण करता है। हमारी भाषा में २० कोड़ाकोड़ी सागर के जितने समय हैं उस प्रत्येक समय पर क्रम से जन्म लेते-लेते-लेते वह पूरा ही पूर्ण हो जायेगा इतना काल, उसके पश्चात् – क्या अभी तक यहां कालपरावर्तन पूरा नहीं हुआ है? नहीं हुआ है। **उसके पश्चात् जैसे जन्म की अपेक्षा अनुक्रम कहा, वैसे ही मरण की अपेक्षा अनुक्रम जानना।** आप कहेंगे जब जन्म धारण किया तभी मरता ही था न कहीं न कहीं वह? तो वह नहीं गिनना। ये पूरे २० कोड़ाकोड़ी सागर के जितने समय हैं, क्रम से जन्म लेते-लेते जब सायकल उसकी पूरी हो जायेगी तब जाकर उत्सर्पिणी के पहले समय में उसका मरण होना चाहिये। फिर २० कोड़ाकोड़ी पार करके आयेगा – मान लेते हैं वहां उसका जीवन चल रहा है, चार समय के बाद मरा, तो उसको नहीं गिनना। फिर घूमो २० कोड़ाकोड़ी सागर तो दूसरा कल्पकाल बीत जायेगा, तब जाकर दूसरे समय में जब उसका मरण होगा – एक्झॅक्ट उसी समय में, तब उसको गिनना।

जैसे हमने जन्म में भी एक-एक समय की बात देखी थी, वैसे मरण के लिये भी एक-एक समय में उसका मरण होना चाहिये। *श्रोता: मर गये।* सुनकर ही मर गये? अच्छा। ऐसे कितने ही कालपरावर्तन हम कर चुके हैं – अनंतों। यह इम्पॉसिबल जैसी बात भी हो रही है। हमें तो यहां काल को देखना है। क्या ऐसा हो सकता है किसीका? हो सकता है क्या? हम आप सभी अनादि से हैं और ऐसे पाचों परावर्तन हमने अनंतों बार किये हैं इसलिये तो बताया है और वह कितने काल के बाद, कितने अनंतों काल के बाद यह क्रम-क्रम से एक-एक समय पर जन्म या मरण का नंबर आता होगा जरा कल्पना कर सकते हैं हम? एक सेकंड आगे बढ़ने के लिये वह कितना अनंतकाल चला जायेगा। हमें तो इस अनंतता का पता नहीं है, यह अनंत क्या हो सकता है इसका एहसास हमें आज तक नहीं है। इसका एहसास हो जाये तो अरे ऐसे हमने कितने अनंतों परावर्तन किये हैं यानी कहीं न कहीं, कहीं न कहीं जन्मते रहे हम, फिर भी लगातार के जन्म नहीं गिनने हैं। जन्म तभी गिनना जब पूरा २० कोड़ाकोड़ी सागर पूरा हो जायेगा, मरण भी तभी गिनना जब एक मरण होने के बाद पूरा २० कोड़ाकोड़ी सागर घूमने के बाद एक्झॅक्ट दूसरे यानी अनंतर समय में मरण हो तब गिनना, नहीं तो चलो – और घूमकर आओ। फिर क्रम से निश्चित समयपर मरण होगा तो गिनना, नहीं तो फिर और एक कल्पकाल का चक्कर काटना पड़ेगा। यानी एक-एक अवसर उसको २० कोड़ाकोड़ी सागर के बाद मिलेगा और

वहां एक्झॅक्ट उसी समय पर मरण नहीं होगा तो उस कल्पकाल को नहीं गिनना। इसीलिये क्या कहा? जैसे जन्म की अपेक्षा अनुक्रम कहा वैसे ही मरण की अपेक्षा अनुक्रम जानना। पहले समय में मरा, दूसरे समय में मरा। आप कहेंगे तो पहले समय में मरा वह दूसरे समय में कैसे मरेगा वहां तो जन्मेगा? उसी अवसर्पिणी की या उत्सर्पिणी की बात नहीं है, दूसरी नयी उत्सर्पिणी के दूसरे समय में मरण होना चाहिये अर्थात् किसी एक उत्सर्पिणी के पहले समय में मरा फिर वह उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी चली गयी फिर जब दूसरी उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी आयी उसके दूसरे समय में मरण होना चाहिये।

श्रोता: दूसरी अवसर्पिणी में? हां, नहीं तो क्या? एक के बाद एक थोड़े ही मरण होनेवाला है उसका। समझ में आया न? *श्रोता: जैसे जन्म का वैसे ही मरण का?* हां, जैसे जन्म का क्रम देखा वैसे ही मरण का भी क्रम होगा। जन्म में भी हमने एक कल्पकाल में एक ही बार जन्म देखा था। ऐसे ही मरण के लिये समझना। *श्रोता: दोनों पॅरलल नहीं चलेंगे?* नहीं, दोनों पॅरलल नहीं चलेंगे, आप कहेंगे एक बाजू जन्म लेने दो और एक बाजू मरण का ले लो तो सायकल जल्दी पूरा करेंगे, तो दोनों पॅरलल नहीं चलेंगे। *श्रोता: कभी जैसे जीव मरा तो उसी क्षण वहां जन्मा तो...* अरे, जन्म लिया पर जन्म का सायकल अलग है, मरण का सायकल अलग है। *श्रोता: दोनों साथ में नहीं लेना?* दोनों? नहीं, एक समय में मरण होगा तो दूसरे समय जन्म लेगा ही, तो वह तो नहीं चलेगा। तो जो जन्म का सायकल पूरा हुआ है, जन्म-जन्म-जन्म – हर बार एक-एक कल्पकाल के बाद उसी समय में जन्म लेना चाहिये, उस समय में जन्म नहीं लिया तो वह पूरा कल्पकाल वेस्ट गया, फिर दूसरा... *श्रोता: मरण का समय?* मरण का समय यानी उस भव का जो अंतिम समय है... *श्रोता: तो जो काल में मरता है वह नहीं गिनना?* नहीं गिनना, वही तो कह रहे हैं, पहले जब-जब केवल हमने जन्म के ही समय गिने। वहां भी उसका मरण हो रहा था, वह नहीं गिनना। अभी उसकी आयु चल रही थी और उसका मरण का समय गिनना। *श्रोता: उसका मीटर अलग है, इसका मीटर अलग है?* हां, उसका मीटर पूरा हो जाये तब जाकर मरण का मीटर चालू हो जायेगा। ॲट अ टाइम दोनों को नहीं लेना। आप कहेंगे न कि पहले समय में मरेगा दूसरे समय में जन्मेगा, ऐसे दोनों को साथ-साथ ले चलो न। यहां तो हमें कालपरावर्तन का काल कितना बड़ा है उसकी बात देखनी है।

हमें क्या जल्दी है पूरी करने की – ऐसा थोड़े ही है कि चक्कर लगाते हैं, है न! परावर्तन कहो, परिवर्तन कहो एक ही बात है, परिवर्तन हमें बहुत अच्छे लगते हैं। सुबह उठकर ही घूमते हैं न हम चक्कर लगाते हैं न, वैसे ही अनादि से हम चक्कर लगा रहे हैं, कहां पर? जन्म-मरण, जन्म-मरण, जन्म-मरण, उसीको नापने का यह तरीका है। पहले हमने द्रव्यपरावर्तन देखा जिसको पुद्गलपरावर्तन कहते हैं। वहां तो परमाणुओंके ग्रहण की बात थी, वे ही परमाणु और उन्हीं स्पर्शादि पर्यायों के साथ हमने ग्रहण किये थे। वे कितने लंबे काल के बाद ग्रहण किये जाते हैं उसको देखा था। फिर क्षेत्रपरावर्तन की बात आयी थी, किस अवगाहना के साथ – क्योंकि अवगाहना के भी बहुत भेद देखे थे, वहां भी क्रम की बात आयी थी। एक-एक प्रदेश की बढ़ती अवगाहना को क्रम से प्राप्त करना है, अक्रम से तो अनंत बार किये होंगे बीच में; तो वह हो गया था स्वक्षेत्रपरावर्तन।

परक्षेत्रपरावर्तन में हमने लोकाकाश के पर्टिक्युलर प्रदेश पर उत्पन्न होने की बात की थी, वह भी एक-एक प्रदेश को ॲड्जेसन्ट जिसको हम कहेंगे क्रम से एक-एक प्रदेश पर जन्म लेते हुये पूरे लोकाकाश को उसने कव्हर किया था और यहां किसकी बात हो रही है? किस समय में उसका जन्म हुआ – जन्मक्षण, जन्मक्षण की पूरी सायकल पूरी होने के बाद मृत्यु का क्षण लेना, मरण का समय लेना उसका। उतनी ही रेअरिटि के साथ वह भी चलेगा, यह पूरा जन्म का सायकल और मरण का सायकल मिलकर एक कालपरावर्तन होता है। देखो, यहां हम आगे पढ़ेंगे, पृष्ठ ६४४ में विशेषार्थ लिखा है – **जीव उत्सर्पिणी के प्रथम समय में जन्मेगा उसके बाद उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी मिलाकर २० कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण कल्पकाल बीतने पर,** यानी जो पहले समय में जन्मा है तो उस कल्पकाल के वह २० कोड़ाकोड़ी सागर तो पूरे करने है उसको; बीच में कितनी बार जन्म-मरण करते आयेगा वह, उसकी बात तो नहीं लेनी है। तो इतना बीतने पर **दूसरे कल्पकाल के दूसरे समय में यदि जन्म नहीं लेता तो वह कल्पकाल चला गया। उसके पश्चात् हो सकता है कितने ही कल्पकाल चले जायेंगे परंतु दूसरे समय में जन्म नहीं होगा, आगे पीछे होगा, उसे क्रम में नहीं गिनना परंतु जो काल बीत रहा है उसे गिनना।** क्योंकि उसी पर्टिक्युलर समय में जन्म होगा तो हम उसको मान्य करेंगे, उसको क्रम में लेंगे। बिना क्रम के जब जन्म होगा, उसको गिनना नहीं, उसका काल गिनना – मीटर तो अपना पहले से ही चालू हो गया है। **क्रमभंग होकर आगे पीछे समय मात्र का भी अंतर**

पडे तो दुबारा एक कल्पकाल और चला जायेगा। इसतरह क्रम से एक-एक समय में जन्म होने के पश्चात्, उसके साथ नहीं, क्रम से एक-एक समय में मरण होना चाहिये। जीव किस क्षेत्र में जन्मता है, कौनसी गति में या कितनी अवगाहनावाला है या कितनी आयुवाला है इससे कोई मतलब नहीं है। क्रम से एक समय आगे बढ़ने के लिये बीच में अनंतकाल चला जा सकता है। हो सकता है एक विशिष्ट समय पर आये और दूसरे समय जन्मा ही नहीं, कितना ही काल, कितना ही काल ऐसा ही चला जायेगा; जब कभी क्रम से विशिष्ट समय पर जन्म होगा तब उसको गिनना। **उक्तं च –**

उत्सर्पिण्यवसर्पिणिसमयावलिकासु निरवशेषासु।
जातो मृतश्च बहुशः परिभ्रमन् कालसंसारे।।

इसको कालसंसार कहा – पहले तो वह पुद्गलसंसार, द्रव्यसंसार था, फिर क्षेत्रसंसार और यह है कालसंसार। तो **कालसंसार में भ्रमण करते हुये जीव ने उत्सर्पिणी अवसर्पिणीरूप कल्पकाल के समस्त समयों की पंक्ति में** – यह पूरे समयों की पंक्ति कही उसको और एक-एक समय कव्हर करते हुये पूरी वह पंक्ति में **क्रम से बहुत बार जन्म लिया है और मरण किया है,** क्रम से। ऐसा एक ही कालपरावर्तन नहीं हुआ है, ऐसे अनंतों कालपरावर्तन हुये हैं आज तक। एक कालपरावर्तन होने के लिये जितना काल लगता है उसमें अनंत क्षेत्रपरावर्तन हो जाते हैं, एक क्षेत्रपरावर्तन होने के लिये जितना काल लगता है उसमें अनंत बार तो पुद्गलपरावर्तन हो जाते हैं। अभी तो हमने आगे के भवपरावर्तन और भावपरावर्तन तो देखे ही नहीं हैं।

तो कालपरावर्तन को इतना अनंतकाल लगता है ऐसे अनंत कालपरावर्तन हो जावें तब जाकर आगेवाला एक भवपरावर्तन होगा और ऐसे अनंत भवपरावर्तन होते हैं तब जाकर एक बार भावपरावर्तन होता है; तो भावपरावर्तन का काल कितना बड़ा होगा यह हम थोड़ी कल्पना कर सकते हैं और ऐसे भावपरावर्तन हमने कितने किये? अनंत किये, क्योंकि अनादि का अर्थ ही होता है जिसको कोई शुरुआत नहीं है। अनादि नाम की कोई शुरुआत नहीं है; अनादि कहते ही उसको हैं कि उधर कुछ शुरुआत है ही नहीं। उस पार चले जाओ पीछे, तो ऐसे तो कितने अनंत परावर्तन करते-करते हम आज यहां आये हैं।

क्यों घूम रहे थे इतना संसार में? क्यों घूमे, क्या आवश्यकता थी जन्म-मरण की? बोलो? *श्रोता: मिथ्यात्व के कारण...* मिथ्यात्व के कारण। क्या खोटेपना किया हमने? अपने स्वरूप को नहीं पहचाना, प्राप्त पर्याय यानी जिस भव में जन्म धारण किया उतना ही मेरा स्वरूप है, इतना ही मेरा अस्तित्व है ऐसा मान लिया। हमारा अस्तित्व तो अनादि से है, हमने इतने परावर्तन पार करके आज हम यहां है, उसका अर्थ क्या है? हम तभी से थे यही बात सिद्ध हो रही है न! अनादि से हम हैं और अनंतकाल तक हम रहनेवाले हैं क्योंकि अतीतकाल जो बीत गया है, जो हमने अनंत परावर्तन देखे हैं, उससे भी आनेवाला अनागतकाल अनंतानंतगुणा है। हमने पहले एक बार बताया था आपको, अतीतकाल कितना गया है? तो जीवद्रव्यों की संख्या अनंत है, जीवद्रव्य के अनंतवें भागवाले अनंत को असंख्यात से गुणा करो यानी अभी तक जितना काल-समय बीत गया है वह जीवद्रव्य के अनंतवें भागप्रमाण है।

समझ में आती है बात? फिर से, अतीतकाल का प्रमाण बताते हैं। वैसे पहले बताया था बोर्ड पर। जीवकाण्ड गाथा ५७८, पृष्ठ ६६३ है। हम अपनी भाषा में समझेंगे तो वहां क्या कहते हैं समझ में आयेगा। आपको पता है कि हर छह महीने और आठ समय में छह सौ आठ जीव सिद्ध होते हैं। अनादि से आज तक कितने सिद्ध हो चुके हैं? तो अनंत हुये हैं, उस अनंत का प्रमाण जीवराशि के अनंतवें भागप्रमाण है। ६०८ जीव ६ महीने और ८ समय में मोक्ष प्राप्त करते हैं तो एक जीव के लिये ॲव्हरेज कितना काल लगेगा? ६०० जीवों को ६ महीने मान लो न, तो १०० जीवों को १ महीना यानी ३० दिन, १० जीवों को ३ दिन यानी ७२ घंटे अर्थात् एक जीव को ७.२ घंटे अर्थात् संख्यात आवली – उसका अर्थ असंख्यात समय। अब त्रैराशिक कितना आसान है! एक जीव के लिये असंख्यात समय, तो सिद्धराशि जो सभी जीवद्रव्यों के अनंतवें भागप्रमाण है उसके लिये सिद्धराशि × असंख्यात समय इतना काल आज तक बीत गया। उसीका अर्थ है (जीवराशि/अनंत) × असंख्यात। वह भी जीवराशि के अनंतवें भागप्रमाण होता है। अतीतकाल के समयों से जीवों का प्रमाण अनंतगुणा, उससे पुद्गलद्रव्य अनंतानंतगुणा, उससे तीन काल के समय अनंतगुणा हैं। तीन काल के समयों में से केवल जीवराशि के अनंतवें भागप्रमाण ही काल बीत गया है। इसीका अर्थ है जब भी देखो अतीतकाल से अनागतकाल अनंतगुणा ही रहेगा।

हमने अभी इतना काल बिताया है, कितना? साठ-सत्तर-पैंसठ साल बितायें हैं, अब और कितने साल जियेंगे? १५-२० साल जियेंगे तो उसके लिये हम सब तजवीज करके रखते हैं न! किसीके सामने हाथ नहीं फैलाना है हमें, तो हम अपनी जो कोई भी व्यवस्था करके रखनी हो वह करके रखते हैं। अब इतना अनंतकाल हमारा अस्तित्व अभी तो कायम रहनेवाला है, वह कभी मिटनेवाला नहीं है तो यह अस्तित्व हम किस अवस्था में बिताना चाहते हैं इसका हम विचार करें। ऐसा ही जन्म-मरण करना है तो वह तो हो ही रहा है उसमें क्या विचार करना? होने दो, आप कहेंगे अब हम युज्ड टु हो गये हैं, होने दो न, क्या होता है उसमें? ऐसा ही काल बिताना है, अभी तो कुछ थोड़ी अनुकूलता दिखायी देती है, अभी हम मनुष्य हैं, हमने कुछ पढ़ाई की है, हमने कुछ कमाई की है, हम कुछ सेटल्ड हैं, हमारे बच्चे हमारा मान रहे हैं ऐसा हम मानते हैं, तो हमको लगता है चलो हमारी लाइफ बहुत अच्छी है। इसीमें हम संतुष्ट-संतुष्ट होकर बैठ गये हैं, ख्याल में आती है बात। परंतु क्या ऐसे ही यह मनुष्यभव कायम रहनेवाला है? इसके बाद? क्योंकि हमें पता नहीं है कब कैसे क्या परिणाम होते हैं और हमें पता नहीं है कि हमने कब-कैसे कर्म बांधे थे और कब-कैसे वे उदय में आयेंगे। आप कहेंगे सम्यग्दर्शन होने पर भी उदय में तो आयेंगे? ऐसा नहीं है; वे सारे उदय के नियम बदल जाते हैं। मिथ्यादृष्टि ने जैसे जो कुछ कर्म बांधे हैं उसको तो वैसा फल मिलेगा ही मिलेगा। सम्यग्दर्शन होने के बाद कितने ही कर्म उदय में आने से रहे हैं। जो बंधे हैं न वे अन्यरूप से कैसे-कैसे उदय में आकर चले जाते हैं उसके नियम अलग हैं वह कर्मकाण्ड का विषय अलग है। हमने तो अभी कितना काल गंवाया है और हमें अभी सावधान होना ही चाहिये इस बात को हम यहां देख रहे हैं।

श्रोता: तो क्या करना चाहिये? हां, प्रश्न आपका सही है – तो क्या करना चाहिये? सबसे पहले हमें यह निर्णय करना चाहिये कि हमें इससे बाहर निकलना ही निकलना है, पहले में पहले यह नक्की करना है। इस जन्म-मरणरूप संसार से बाहर निकलना है तो उसका उपाय क्या है? हमें सुखी होना है, हमें जन्म-मरण का अंत करना है तो उसका उपाय क्या है? तो हमारा जो असली स्वरूप है उसको हमें पहचानना है। उसे कैसे पहचाने? तो जिन्होंने अपना स्वरूप पहचानकर, मुनिदशा अंगीकार करके, जो अरिहंत हुये हैं और अरिहंत अवस्था में, विशेषत: तीर्थंकरों ने इस मार्ग का, इस उपाय का हमें उपदेश दिया है और यह उपदेश जो हमें आज प्राप्त है, उस उपदेश को सही तरीके से पहले में पहले सुनना

चाहिये क्योंकि उन्होंने हमारे हित का उपदेश हमें दिया है और इस पूरे संसार में से यानी परिभ्रमण में से छूटने का मार्ग बताया है। यह बात अच्छी हुयी है कि उसमें से छूटनेवाला जो जीव है, अरिहंत का जीव उन्होंने छूटने का मार्ग बताया और वे छूट गये, बिना बताये छूट जाते तो शायद हमें वह मार्ग नहीं मिलता। परंतु ऐसा सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध पाया जाता है कि जो-जो इस मार्ग पर यानी मोक्षमार्ग पर चले हैं, अपना स्वरूप पहचाना है, मोक्षमार्ग पर आगे बढ़कर अरिहंत हुये हैं उनकी बिना इच्छा के दिव्यध्वनी खिरती है। तथा जो मोक्षमार्ग पर हैं उन्हें भी ऐसे सहज परिणाम आते हैं – अरे! मैं भी इतने दु:ख में से पसार होकर आया हूं, मुझे यह मोक्षमार्ग मिला है तो अन्य जीव भी उसको प्राप्त करें। सहजरूप से उनकी ऐसी भावना होती है, सहजरूप से उन्हें ऐसा वात्सल्यभाव होता है, करुणाभाव होता है कि मोक्षमार्ग का उपदेश वे अन्य जीवों को भी देते हैं।

हमारे मुनिराज भी इतने शास्त्र क्यों लिखकर गये हैं? अपने में स्थिर रहते न वे? क्योंकि जब तक अंतरंग में स्थिरता नहीं रहती है, कायम के लिये अंतरंग में स्थिरता नहीं होती है तब तक उनके भी सहज ऐसी भावना होती है। वह तो मुनियों का छठा-सातवां गुणस्थान है और जो गृहस्थ हैं वे भी शुद्धोपयोग में कभी-कभी चले जाते हैं, अन्यथा शुभोपयोग में तो उनके ऐसे ही परिणाम होंगे। ये ऐसे परिणाम सहज आते हैं, करने पड़ते हैं या करते रहते हैं ऐसी बात नहीं है। तो इन्होंने जो मोक्षमार्ग का स्वरूप बताया है उसको हमें रुचिपूर्वक - सिरिअस्लि - गंभीरतापूर्वक सुनना चाहिये। बस हमने एक रूटीन लाइफ बना ली है कि आधा घंटा, पौना घंटा, एक घंटा सुन लिया और हो गया हमारा काम! ऐसा नहीं है। भले ही कितना ही आप सुनो लेकिन २४ घंटे उसको हमें ऑप्लिकेशन में लाना है। जैसे हम कहेंगे निमित्त-नैमित्तिक संबंध देखा, क्रमबद्धपर्याय का स्वरूप देखा, निश्चय-व्यवहार का स्वरूप देखा; देखा यानी क्या? हमने सुना; तो चौबीसों घंटे उसकी बात चलेगी अपने मन में, सहज चलेगी; वह लानी नहीं पड़ती है। 'करो-करो' यह उपदेश की भाषा है, जिसको ये बातें सत्य लगती हैं, उसको अंतरंग में सहज ऐसा लगता है कि नहीं-नहीं, यह जो उपाय है वह मुझे करना ही है।

कोई बीमारी होगी तो कैसे डॉक्टर को ढूंढ़ते हैं, कैसे हम एक दूसरे को पूछते हैं, उसमें कोई सीधा सादा चलेगा की एकदम स्पेशॅलिस्ट डॉक्टर चाहिये? शरीर में रोग हो

जाये तो सुपर स्पेशॅलिस्ट चाहिये; उसके लिये देश विदेश कहीं पर भी जाने के लिये हम तैयार हैं। मैं शरीर हूं यह मान लिया और शरीर में कोई भयंकर रोग हुआ तो वहां धंदा बीच में नहीं आता हमारा, सीझन चल रहा है हमारा अभी, क्या करना, कैसे करेंगे, हमें इधर जाना है, हमारी वह अपॉइन्टमेन्ट है ये बातें कुछ आड़े नहीं आती। घर में बेटे की शादी है और हमें कॅन्सर हो जाये, वह थर्ड स्टेज में हो तो क्या करेंगे? शादी होने के बाद में देखेंगे ऐसा कहेंगे कि नहीं कहेंगे? क्योंकि वह रोग है और इस एक भव का अंत होनेवाला है यह मालूम है। परंतु यह जो मार्ग, उपाय हमें बताया है, किसने बताया है? तीर्थंकरों ने बताया है, किसी क्षयोपशमज्ञानी ने यह मार्ग बताया नहीं है यानी बनाया नहीं है। यह जो उपदेशदाता कोई हमें मिले हैं, आचार्य मिले हैं, ज्ञानी मिले हैं, इन्होंने ग्रंथरचनायें की हैं या इनसे प्रत्यक्ष मौखिकरूप से ज्ञान हमको मिला है वह सारा ही मार्ग है जो सर्वज्ञ का चला आया है, वही मार्ग है। यदि कोई कहता है कि मैंने यह मार्ग बनाया है, यह मेरा उपदेश है तो वह सही नहीं है। ख्याल में आता है न!

हमें भले ही वह मार्ग, उसका उपदेश कानजीस्वामी से मिला है, किसीको श्रीमद् राजचंद्रजी से मिला है, किसीको पं.टोडरमलजी के जमाने में उनसे मिला होगा, पं.बनारसीदासजी के जमाने में उनसे मिला होगा और उसके पहले के जमाने में और किसीसे मिला होगा। परंतु वह किसी व्यक्ति का मार्ग नहीं है, वह सर्वज्ञ भगवान का मार्ग है। यह आजकल की जो पद्धति है आप कानजीवाले हैं, हम श्रीमद्वाले हैं वह बात यहां नहीं है। यदि कोई कहता है कि हमारे गुरु ने यह मार्ग बनाया है और उसका सर्वज्ञ के साथ कोई कनेक्शन नहीं है तो वह तो खोटा है, सच हो ही नहीं सकता है। भ्रम से व्यक्तिविशेष की हमें बहुत महत्ता आती है तो व्यक्तिविशेष के नाम से वह धर्म बना देते हैं ऐसा सही है नहीं, बिलकुल विवेक होना चाहिये। हमारा यह प्रश्न था न कि क्या करना चाहिये? पहले भी यह प्रश्न पूछा था किसीने, हमारी मिथ्यात्व की दशा है हम क्या करें? *श्रोता: तत्त्वविचार करें, परंतु कैसे करें?* हां अब तत्त्वविचार करना चाहिये, तो तत्त्वविचार करने के लिये पहले तत्त्व सुनने चाहिये, तत्त्व समझने चाहिये, उनका जैसा है वैसा - ज्यों का त्यों श्रद्धान होना चाहिये। ज्यों का त्यों श्रद्धान होने के लिये पहले आगम का अभ्यास चाहिये। आगम में तो पहले में पहले छह द्रव्य क्या है, उनका स्वरूप क्या है, उनकी परिणमन व्यवस्था क्या है ये सब हम सीखेंगे। ये तो छह द्रव्यों की सामान्य चर्चा हो गयी, हमें तो अपने आत्मा का

अनुभव करना है तो अध्यात्म यानी अधि + आत्मा, आत्मा की तरफ आना है। तो हम यहां जो कोई सिद्धान्त सीखते हैं, वह प्रत्येक सिद्धान्त सीखते समय उसे अपनी आत्मा पर कैसे घटाना इसकी मुख्यता होनी चाहिये। इनको सीखकर केवल दूसरों को सिखाने के लिये ये तत्त्व नहीं हैं, ये तत्त्व जो कुछ भी हम सीखते हैं, सामान्य गुण हैं या विशेष गुण हैं या अन्य जो कोई अभावों की चर्चा है, यह अपनी आत्मा पर कैसे घटित करना इसकी ही मुख्यता होनी चाहिये। बारंबार अपने को ही मुख्य करना है, अपने को ही मुख्य रखना है। जैसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध है इतना हमने सीखा है, उपादान से कार्य होता है निमित्त से नहीं होता इस तत्त्व को, इस विषय को कैसे घटित करेंगे? तो दिनभर हमारे जो कार्य चलते हैं, तो चलते हुये कार्यों में, यह किसका कार्य है उसका निर्णय - यह विचारधारा चलती रहेगी उसके साथ-साथ। व्यापार-धंधे में, घर के कामकाज में, जहां पर भी जो कुछ हो रहा है, होते हुये कार्यों को वे किसके हैं उसका निर्णय तो उसी समय चलता है।

हम रोटी बनाते हैं तो दुनिया के विचार नहीं चलते क्या मन में? चलते हैं न! मन में तो एकधारा कुछ न कुछ – अरे! रोटी की क्या बात करें, पूजा के समय भी मन के द्वारा घूमकर आते हैं न जाने कहां-कहां? होता है कि नहीं? जो कोई हमारी रुचि का विषय हो या जो कोई मेहमान आनेवाले हैं या जो कुछ हैं वे विचार तो चलते ही रहते हैं। तो जिसको तत्त्व की धुन लगी है, ज्ञायक की धुन लगी है उसकी हर जगह वह ज्ञायकपने की बात चलेगी। क्योंकि हम तो ज्ञायक हैं न! ज्ञानस्वरूपी हैं, ज्ञानमयी हैं और यह शरीर की बात जुदी है। जब हम यहां द्रव्यपरावर्तन देख रहे थे तो यह नहीं भासित होगा कि इतने अनंत परमाणु हर समय आ रहे हैं, अनंत परमाणु जा रहे हैं, वहां तो इसरूप मैं नहीं हूं ऐसा भासित होगा। यह जो कहा न कि सामान्य से विशेष बलवान है यानी क्या? सामान्य नॉलेज क्या है? मैं जुदा हूं, शरीर जुदा है और विशेष में हम देखते हैं, एक-एक समयप्रबद्ध आ रहे हैं, इतने ही जा रहे हैं और मरण के समय सब चले जाते हैं इससे तो भासित होता है न, कि मैं तो इनसे भिन्न हूं। हर सिद्धान्त में हम अप्लाय कर सकते हैं, अब यह कैसे करना? हरेक की विचारधारा अलग-अलग हो सकती है, ऐसा नहीं है कि अमुक ऐसा ही विचार करो और ऐसे ही विशिष्ट आसन में बैठो। इन सभी तत्त्वों का जो हमारा चिंतन, हमारा रोज का वह मन ही मन में अभ्यास वह बहुत कार्यकारी है। 'ज्ञानाभ्यास करे मन मांहि, ताके मोह महातम नाहिं' – कहा है न यह। यानी ये जो हमने सारे तत्त्व सीखें हैं, अलग-

अलग सिद्धान्त सुने हैं, समझे हैं उनको बराबर समझना यह अपना पहले में पहला कर्तव्य है। फिर उनको विचारों में लेना, वे सहज में आते हैं फिर भी कहने के लिये कहेंगे कि उन पर विचार करो। तत्त्व पर विचार करो, यह तत्त्वनिर्णय जिस समय होगा उसी समय में सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होगी। पं.टोडरमलजीसाहब ने इतना ही कहा है कि तत्त्वविचार में तद्रूप होकर लीन हो जा। उस काल में कर्मों की अवस्थायें सहज उसरूप होती हैं। हमने यहां पंचलब्धि के शिबिर में देखी थी वह बात। लब्धिसार का विषय है वह कि कर्म जो कोई ७० कोड़ाकोड़ी सागर का था या कोई अन्य बांधे थे वे सारे ही कट डाउन होते हैं प्रायोग्यलब्धि में। आयुकर्म छोड़कर शेष सातों ही कर्मों की स्थिति घटकर अंत:कोड़ाकोड़ी सागर रह जाती है। आगे करणलब्धि में उनमें बहुतसे परिवर्तन होते हैं, जीव के अनुकूल सारी बातें बनती हैं। जीव को क्या करना है, बस तत्त्वविचार में मन लगाना है। मन लगाना है यानी उसके तत्त्वनिर्णय होता है तो तत्त्वनिर्णयपूर्वक उसे तत्त्वविचार में लगे रहना है।

यह लगे रहना भी कहने की बात है। जिसको उसकी धुन लगी है उसके तो तत्त्वों के ही विचार चलेंगे। तो यही सोचना है हमको कि अभी मुझे क्या करना चाहिये? क्योंकि हम तो शेड्यूल बनाते हैं हमारी क्या प्रायॉरिटि है, अभी अपनी प्रायॉरिटि हमारे ख्याल में आनी चाहिये कि क्या है हमारी प्रायॉरिटि? ये बाहर के काम छोड़ दो ऐसी बात नहीं है, वे होते हुये यह तत्त्व का चिंतन, तत्त्वचिंतन की एक धारा तो चलती रहेगी और वह सहजरूप से होती रहेगी। अब यह तो हम गुरुदेवश्री के प्रवचनों में भी सुनते हैं, जितने द्रव्यानुयोग के हम प्रवचन सुनते हैं, पुस्तकें पढ़ते हैं उनमें यही तो बातें हैं। शरीर से तो भेदविज्ञान है, राग से भी भेदविज्ञान करने की कला हमें इनसे प्राप्त हुयी और उसके ऊपर भी अलग से मैं कुछ बताऊं उसकी आवश्यकता नहीं है। परंतु यह हमें निर्णय करना है कि करने योग्य यही बात है और यही मुझे करना है। अब उसके लिये समय कैसे निकालना है वह सब अपने आप जानो। किसीके मनपसंद की कोई अच्छी टीवी सीरियल होती है तो उसके लिये कैसे समय निकालता है! कितने लेट पहुंचते हैं वहां पर? लेट पहुंचते हैं क्या? वहां तो १० मिनिट जल्दी पहुंचते हैं, यह तो हमारी रुचि दर्शाती है।

देखो, अभी हम अपना विषय चलायेंगे। ऐसा प्रश्न उठना ही चाहिये कि मुझे क्या करना चाहिये, बस मुझे अभी यह करना ही है इस भव में, यह तो हम पहले नक्की करें!

जिसको ऐसी तीव्र रुचि होती है, जिज्ञासा होती है उसको मार्ग भी सहज मिल जाता है, उसको निमित्तरूप से ज्ञानी भी सहज मिल जाते हैं। अभी मुझे कौन समझायेगा, मुझे कौन ज्ञानी करेगा ऐसी निमित्त से होनीवाली बात ही नहीं है। यह सब अपने-अपने द्रव्य में अपनी-अपनी योग्यता से अपनी-अपनी पर्याय स्वसमय पर होगी ही होगी। हां, पर उपदेश की भाषा में ऐसा कहेंगे कि ऐसा करो-वैसा करो और ऐसे पूछने के भाव भी होंगे कि अभी मुझे यह करना है तो मैं क्या करूं? हमें तो इस विषय को गंभीरता से लेना है। सर्वज्ञ ने बतायी हुयी बात, आत्मा के अनुभव करने की बात, उसकी कला, आज तक हमारे लिये उपलब्ध है। इतने निकृष्ट पंचमकाल में इतना उत्कृष्ट उपदेश हमें मिला है, हम महा भाग्यवान हैं। किसी पुण्य के उदय से हमें ये बातें मिली हैं, यह अवसर खोने जैसा नहीं है। फिर दुबारा ऐसा सुवर्ण अवसर मिले यह कोई नहीं कह सकता यानी हमें निमित्त नहीं मिला और हम रह गये यह कोई बात कहने की है ही नहीं। क्योंकि हमें इतनी गहराई तक यह स्वाध्याय मिला है, इतना तत्त्वज्ञान मिला है तो अभी इसको खोने जैसा नहीं है। बस हम करेंगे ही, ऐसा अंतरंग में हम नक्की करेंगे, तो हुये बिना रहेगा नहीं। देखो हम यह पढ़ रहे थे न बहुत बार जन्म और मरण किया है इस जीव ने, अब यह भवपरावर्तन क्या है उसको हम देखेंगे।

श्रोता: कालपरावर्तन में दोनों कंडिशन फुलफिल होना? एक कालपरावर्तन में – कालपरावर्तन में जन्म भी होना और उसी समय में मरण भी होना...

हां, यह नक्की है कालपरावर्तन में पहले अनुक्रम से हर समय में जन्म होना चाहिये, पूरे कल्पकाल के प्रत्येक समय में जन्म-जन्म-जन्म-जन्म ऐसा क्रम से होते हुये जब वह क्रम पूरा होगा और एक कल्पकाल में एक ही जन्म लेना है और ये क्रम से होने चाहिये। यह पूरा होने के बाद क्रम से एक-एक समय में मरण होना चाहिये। एक कल्पकाल में एक ही मरण लेंगे, फिर दूसरे कल्पकाल में दूसरे समय में होना चाहिये, नहीं हुआ तो एक चक्कर और लगाओ। एक्झॅक्टली दूसरे समय में होगा तब उसको गिनो, फिर जब कभी जाकर तीसरे समय में होगा तब उस कल्पकाल को गिनना। बीच में कितना काल चला जायेगा उस काल को गिनना, क्रम में उसको नहीं गिनना। इसतरह से यह कालपरावर्तन भी पूरा होता है अब हम भवपरावर्तन की बात पढ़ेंगे, कालपरावर्तन के बारे में कोई प्रश्न है तो... *श्रोता: दोनों सायकल बारी-बारी से गिनना?* हां, एक के पश्चात् दूसरा लेना, दोनों

साथ में नहीं गिनना है, पश्चात् गिनना है। *श्रोता: जन्म क्रम से आ रहा है, मरण में क्रम टूट रहा है तो कालपरावर्तन हुआ की नहीं?* नहीं हुआ, जन्म का एक-एक समय करके पूरा हुआ उसके बाद मरण को काउंट करना चालू करना है, तो जब तक वह पूरा नहीं होता है तब तक कालपरावर्तन पूरा नहीं होगा। जन्म पहले पूरा करना फिर मरण भी, एक-एक समय में मरण भी होना चाहिये। वह पूरा सायकल जो है २० कोड़ाकोड़ी सागर का। उसके प्रत्येक समय में उसने जन्म-जन्म लेकर वह पूरा हुआ, अब क्या करना? अब मरण-मरण-मरण-मरण ऐसा गिनना है। *श्रोता: पहले जब मरण हुआ वह भव नहीं लेना...* मरण के बिना तो वह जन्मा नहीं था? उसकी बात वहां गिनना नहीं।

श्रोता: १ से १०० बार जन्मे, १ से १०० बार मरे ऐसा? देखो-देखो, मान लेते हैं कि २० कोड़ाकोड़ी सागर के बदले ऐसे २० समय ले लो न! तो पहले समय में जन्मा। ये २० समय बहुत छोटे हो जाते हैं। २०००० समय ले लो न और ऐसे ५-६ समय का एक-एक भव गिनेंगे। तो २०००० समय के पहले समय में उसने जन्म लिया तो फिर वह पूरा सर्कल घूम करके आया। फिर २०००० समयों के दूसरे समय में उसका जन्म होना चाहिये फिर और एक वह कल्पकाल यानी २०००० समय पार करके फिर तीसरे समय में जन्म होना चाहिये। बीच में भी उसके जन्म अन्यत्र भी होंगे ना क्योंकि कितनी लाइफ लेकर आया है, उसकी लाइफ चल रही है, मरा नहीं है तो जन्मेगा कैसे? एक्झॅक्ट उस समय में जन्म होना चाहिये। समय तो कितना सूक्ष्म है यह हमारे आपके ज्ञान की बात नहीं है। हमारे यहां तो डॉक्टर बतायेगा कि इस समय तुम्हारा जन्म हुआ यानी वह घड़ी में देखकर जन्म समय यानी दिन, घंटा, मिनट, सेकंड जो कुछ वह बतायेगा।

श्रोता: वह जीव स्वर्ग-नरक में भी जायेगा? हां हां, स्वर्ग में भी जायेगा, नरक में भी जायेगा, असंख्यात पुद्गलपरावर्तन तक एकेन्द्रिय में भी जा सकता है। कहां जाता है कोई मतलब नहीं है। जिस समय जन्म हुआ उसको काउंट करना है, कितने अलग-अलग भव होंगे न, सभी जगह घूमता ही रहेगा। क्योंकि असंख्यात पुद्गलपरावर्तन उसके सामने कुछ नहीं हैं। एक कालपरावर्तन में उसके अनंतानंत पुद्गलपरावर्तन और क्षेत्रपरावर्तन हो जायेंगे। आगेवाले जो परावर्तन हैं उनके लिये जो बातें क्रम से होनी चाहिये वे बहुत ही

रेअर-रेअरलि होती हैं और उसमें काल भी, अनंतानंत बीत जाता है। हमें याद नहीं हैं, हमें पता नहीं हैं हम कब से हैं। यह हमें थोड़ा जागृत करने के लिये यहां यह काल का प्रमाण बताकर जीवों को सचेत करते हैं कि अभी तू जाग जा। क्योंकि हम तो संतुष्ट होकर बैठ गये हैं, स्वाध्याय नहीं मिला यह बात नहीं है, हमें तो बहुत मार्मिक मिला है, गुरुदेवश्री से सभी बातें हमें पता चली हैं या यह कहो हमारे तक आ गयी हैं। आज तो कितने साधन उपलब्ध हैं। जो कोई भी जो हमें मालूम है उस दुनिया के किसी कोने में रहता हो, ये हमारे अमेरिकावाले, लंडनवाले वहां बैठकर भी वे यहां के प्रवचन सुन रहे हैं, हैं न! सीडीज् उपलब्ध हैं, डीव्हीडीज् उपलब्ध हैं, जो कुछ चाहिये। जिसको स्वाध्याय करना है कहीं भी कर सकता है, वहां से छोड़कर यहां आना पड़े ऐसी कोई बात नहीं है। जो जिस संयोग में है कर सकता है, संयोग पलटाने में हम पहले लग जाते हैं कि हमको यह संयोग पलटाना है फिर हम इसमें जुड़ जायेंगे, ऐसी कोई बात है ही नहीं। संयोग ने हमें कभी भी रोका नहीं है, वह तो रोक ही नहीं सकता है, वह तो परद्रव्य ही है न। जो संयोग हमसे जुदा है पहले उसको ठीक करने में क्यों लगे हो? हम शरीर से जुदे हैं कि नहीं हैं? जुदे हैं, हां हम शरीर से जुदे हैं तो पहले हम वह ब्यूटिपार्लर में जाकर आते हैं फिर चिंतन में बैठ जायेंगे कि शरीर से मैं जुदा हूं। अरे जो जुदा ही है उसकी कुछ भी अवस्था होने दो न, आप क्यों इतने चिंतित हो जाते हैं? परंतु हम उसीमें लगे रहते हैं क्योंकि उसरूप हमने अपनेको माना है, कहने के लिये तो कहते हैं कि मैं जुदा हूं, शरीर जुदा है – बस जीव जुदा-पुद्गल जुदा यही तत्त्व का सार, वह सब हमने रट लिया है परंतु उसका भावभासन नहीं हो रहा है और यह चिंतनधारा चलती रहनी चाहिये अंदर से और ऐसा होने पर कार्य ना हो यह कभी बन नहीं सकता। सही उपाय करे और उस योग्य कार्य ना हो यह बन नहीं सकता।

श्रोता : वह २०००० समय लिया था... हां वह २०००० समय का जो काल है, अभी कालपरावर्तन पूरा नहीं हो रहा है क्या करें। तो २०००० समय हमने गिने थे तो २०००० समय में एक समय, दो समय, तीन समय, मान लेते हैं १००० समय तक गये हम, अभी कितने बाकी हैं? १९००० समय, परंतु १००१ समय पर उसका जन्म ही नहीं हुआ; कितने ही कल्पकाल चले गये वहां जन्म ही नहीं हुआ। तो जब जाकर अनंतकाल के बाद १००१ समय पर जभी जन्म होगा तब उसको गिनो। ऐसे करते-करते जितना काल बीत जायेगा २०००० समय के सायकल के एक-एक समय पर

उसनें जन्म लिया तो जन्म का सायकल पूरा हुआ। अब २०००० समय के पहले समय में उसने मरण किया। ये सारे जन्म पूरे होने के बाद मरण को गिनना है, जन्म के साथ-साथ उसके मरण को गिनते जाओ ऐसा नहीं लेना है। अब उसको अलग से काउंट करना है उसमें भी उतना ही टाइम जाना है। तो एक-एक समय पर जब क्रम से मरण होगा तो एक बार मरण होगा तो एक सायकल में एक ही बार मरण होगा यानी यहां पर भी मरण हुआ-यहां पर भी मरण हुआ-यहां पर भी हुआ वह काउंट नहीं करना। क्रम से होगा तब और एक-एक के लिये एक-एक उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी बीच में चली जायेगी तब जाकर दूसरा अवसर आ सकता है और वहां तो विशिष्ट समय पर मरण होने की पॉसिबिलिटि बहुत ही रेअर है।

यदि यह सहीरूप से समझते हैं, उसका भाव थोड़ा अंदर भासित होता है, तो जीव कांप उठता है कि अरे ऐसा-ऐसा है! ऐसा हम करके आये हैं सब? किसी एक जीव की बात नहीं है हम सबकी है क्योंकि हमारा अस्तित्व है तो कब से है यानी हमने अनादि को आज तक समझा ही नहीं है, अनादि शब्द का भावभासन हमें नहीं हुआ है। भावभासन हो जाता कि हम अनादि से हैं और अनंतकाल तक रहने वाले हैं तो हम सोचते कि हमें किस रूप से रहना है, सुखी रहना है या दुखी रहना है? हमने तो सुख बस इतने को मान लिया है कि हमने पैसे कमाये, हमने घर लिया है, हम सब ठीकठाक हैं, हमने हमारी पैसों की व्यवस्था कर रखी है, अमे सुखी छीअे। ऐसा ही कहते हैं न? *श्रोता: मजामां छे।* अच्छा। मजामां छीअे।

अब भवपरावर्तन देखेंगे, ६४४ पृष्ठ पर नीचे का पॅरेग्राफ **भवपरावर्तन कहते हैं –** *श्रोता: यह अनंत बार...।* यह बात आयेगी भवपरावर्तन में। हम भवपरावर्तन की परिभाषा देखते हैं फिर वह अनंत बार वाली बात भी यहां आयेगी। देखो यह भवपरावर्तन यानी चार प्रकार के भव हैं – नरकगति का है, तिर्यंचगति का है, मनुष्यगति का है और देवगति का है यानी जीव अनादि से इन चारों ही पर्यायों में भटक रहा है। तो आप कहेंगे उसमें क्या नवाई है, हम तो भटकते-भटकते आये हैं यहां पर। तो इसका परावर्तन किसतरह से गिनना है उसकी बात हम यहां देखेंगे।

कोई जीव पहले नरक में १०००० वर्ष की जघन्य आयु धारण करके उत्पन्न

हुआ, तो नरक की जघन्य आयु कितनी है और उत्कृष्ट कितनी है? *श्रोता: १०००० वर्ष की जघन्य आयु है, उत्कृष्ट ३३ सागर।* जघन्य आयु १०००० वर्ष की है, कहां की है, कौनसे नरक की है? *श्रोता: पहले नरक की है।* पहले नरक के पहले पाथडे की – पाथडा समझते हैं? पटल-पटल, तो वहां उसने जन्म लिया, कितने वर्ष की आयु लेकर आया वह? *श्रोता: १०००० वर्ष की।* वह १०००० वर्ष की आयु के बाद नरक से निकला तो दुबारा नरक में जायेगा न वह? नरक से निकला हुआ जीव तत्काल अगले भव में नरक में नहीं जाता, या तो मनुष्य होकर जन्मेगा या संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच होकर जन्मेगा। देखो, असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर पहले नरक में जा सकता है परंतु नारकी मरकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय में जन्म नहीं ले सकता। वह नियम से मरकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न होगा या मनुष्य होगा। अब क्या करना है? उसको दुबारा जन्म लेना है, कितनी आयु सहित? *श्रोता: १०००० वर्ष और १ समय की।* १०००० वर्ष की, १०००० वर्ष और १ समय की नहीं। १०००० वर्ष में वर्ष कितने हैं तो १०००० , उन वर्षों में घंटे कितने होंगे, मिनिट कितने होंगे, सेकंड कितने होंगे और समय कितने होंगे उसको काउंट करो। तो १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार १०००० वर्ष की आयु लेकर पहले नरक में जन्म लेना चाहिये। जीव बारंबार नरक में से मरकर एक भव करके नरक में, नरक में से मरकर एक भव करके नरक में नहीं जा सकता, उसकी भी लिमिट है, उसकी लिमिट यह है कि मरकर लगातार पहली नरक में जाता है तो ८ ही बार जा सकता है और यह जरूरी नहीं कि १०००० वर्ष की आयु लेकर ही ८ बार जन्में। नरक में जानेवाले कौन हैं? संज्ञी पंचेन्द्रिय यानी त्रस में से भी संज्ञी पंचेन्द्रिय, तो संज्ञी पंचेन्द्रिय यानी त्रस की स्थिति कितनी है? त्रस की स्थिति २००० सागर है और उसमें २००० सागर तक तो संज्ञी नहीं रह सकता – पृथक्त्व सौ सागर तक लगातार संज्ञी पंचेन्द्रिय में रह सकता है, मान लो न ९०० सागर तक। तो जब-जब संज्ञी होगा तभी नरक में जाने का चान्स होगा। हां, असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर पहले नरक में जा सकता है। तो नरक में गया १०००० वर्ष की आयु सहित ही जाना चाहिये; हमने शुरुआत वहां से की है तो जब पहली बार गया है तभी से गिनना चालू करेंगे।

वहां से निकला यानी तिर्यंच हुआ या मनुष्य हुआ, हो सकता है फिर वहां से मरकर वह देव में गया, हो सकता है एकेन्द्रिय में गया, असंख्यात पुद्गलपरावर्तन तक भटक कर

आया। फिर वहां से निकला, नरक में गया पर ३३ सागर का हुआ, फिर निकला तिर्यंच हुआ, तिर्यंच से भटकते-भटकते जो कोई पर्यायें हुयी – कभी देव में गया, नरक में गया ही नहीं और अगर गया भी तो लंबी आयु लेकर गया। कैसे जाना है? १०००० वर्ष की आयु लेकर ही वहां जन्म लेना है, कितनी बार? १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार, १०००० वर्ष की आयु के साथ ही वहां उत्पन्न होना है। यहां से तो अभी शुरुआत है। देखो, हम नरक की आयु देखते हैं जरा, कहां की कितनी होती है? ३५ पृष्ठ है, नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ – **ऊपर के नरकों के पटलों में आयु कम है,** हम नरक के पटल गिनते हैं तो ऊपर से नीचे तक गिनते हैं, ऊपर पहला फिर दूसरा फिर तीसरा इसतरह से। तो कहते हैं **ऊपर के पटलों में आयु कम है नीचे के नरकों में आयु ज्यादा है। नरकों में कम से कम आयु १० हजार वर्ष की है तथा अधिक से अधिक आयु ३३ सागर की है।** वह ३३ सागर कहां की है, सातवें नरक की है। **नारकियों की ऊंचाई ऊपर कम और नीचे ज्यादा है अर्थात् प्रथम नरक के प्रथम पटल में तीन हाथ से प्रारंभ होकर नीचे सातवें नरक में पांच सौ धनुष होती है।** अभी उसको छोड़ो। आगे देखो,

ऊपर के पटलों की उत्कृष्ट आयु में एक समय अधिक करने पर नीचे के पटल की जघन्य आयु होती है। शरीर की ऊंचाई भी प्रतिपटल बढ़ती जाती है। जैसे पहले नरक के पहले पटल में जघन्य आयु १०००० वर्ष की है और उत्कृष्ट आयु ९०००० वर्ष की है, दूसरे पटल में जघन्य आयु ९०००० वर्ष अधिक एक समय और उत्कृष्ट आयु कितनी लिखी है? *श्रोता: ९० लाख वर्ष।* **९० लाख वर्ष है। तीसरे पटल में उत्कृष्ट आयु असंख्यात पूर्व कोटि है, उससे आगे एक दशांश सागर (१ बटे १० सागर) ऐसे बढ़ते-बढ़ते तेरहवें पटल में उत्कृष्ट आयु १ सागर है।** यह हमने पहले नरक के अलग-अलग पटलों की बात देखी। *श्रोता: वहां तो आयु १०००० वर्ष की है?* १०००० वर्ष तो मिनिमम आयु है और मॅक्झिमम आयु तो १ सागर है। यह श्रेणिक राजा वहीं पर है न ८४००० वर्ष की आयुवाले, *श्रोता: पहले नरक में।* पहले नरक के पहले पटल में श्रेणिक राजा है क्योंकि वहां की उत्कृष्ट आयु ९०००० वर्ष की है।

श्रोता: तो इसकी काउंटिंग कैसे करना १०००० वर्ष की? किसकी काउंटिंग? यह १०००० वर्ष वहां की जघन्य आयु है बस। देखो, यह आगे का ३६ नंबर का पृष्ठ

देखो। देखो करना कुछ नहीं है अभी तो गिनती करने की शुरुआत हो गयी है। यह भवपरावर्तन कैसे गिनना उसकी बात यहां बता रहे हैं। यहां बात हमने इतनी ही पढ़ी कि १०००० वर्ष की आयु के साथ पहले नरक में जीव उत्पन्न हुआ है। अब इसके लिये हम थोड़ी नरकों की आयु की बात जैन भूगोल पुस्तक में ३६ पृष्ठ पर देख रहे थे। यहां उत्कृष्ट आयु की बात दायीं तरफ है, अभी ऊंचाई की बातों को गौण करेंगे, केवल आयु की बात को देखेंगे यहां पर। **पहली पृथ्वी की उत्कृष्ट आयु है १ सागर** – जघन्य कितनी देखी थी? *श्रोता: १०००० वर्ष।* १०००० वर्ष, वहां से शुरू करना। जो पहली पृथ्वी की उत्कृष्ट आयु है, दूसरी पृथ्वी यानी दूसरा नरक – उसको पृथ्वी कहने की पद्धति है, यहां लिखा है न पहली पृथ्वी, दूसरी पृथ्वी यानी दूसरी पृथ्वी में दूसरा नरक है वहां के जीवों की आयु जघन्य तो १ सागर प्लस एक समय, वह यहां नहीं लिखी है क्योंकि आगे-आगे एक समय से बढ़ते हुये जघन्य लेना, केवल यहां उत्कृष्ट-उत्कृष्ट लिखी है। तो दूसरी पृथ्वी यानी **दूसरे नरक में ३ सागर की उत्कृष्ट आयु** है, **तीसरे में ७ सागर की है, चौथे की उत्कृष्ट आयु है १० सागर, पांचवें की १७ सागर, छठे नरक में २२ सागर और सातवें नरक में ३३ सागर है।** ये वहां की आयु है। तो १०००० वर्ष से लेकर १ सागर तक एक-एक समय से बढ़ते हुये भेद कितने होंगे यह हम कल्पना कर सकते हैं। परंतु शुरुआत में १०००० वर्ष की आयुसहित नरक में उत्पन्न हुआ, उसके बाद १०००० वर्ष की ही आयु सहित १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार वह पहले नरक में उत्पन्न होना चाहिये, यही हमारा क्रम है, भवपरावर्तन इसतरह से होता है और एक ही जीव बारंबार नरक में उत्पन्न हो जावे ऐसा हो नहीं सकता।

हमने अभी आपको पढ़कर बताया था पहले नरक से निकलकर मनुष्य या तिर्यंच होता है और फिर दुबारा प्रथम नरक में जाये तो लगातार आठ बार ही जा सकता है। नरक से निकला, मनुष्य या तिर्यंच हुआ फिर नरक में गया, फिर निकला फिर नरक में गया – पहले नरक में, लगातार आठ बार ही हो सकता है। दूसरे नरक से निकलकर मनुष्य, तिर्यंच होकर फिर दूसरे नरक में जावे तो सात बार हो सकता है – लगातार की बात है, *श्रोता: पहले नरक में आपने बताया लगातार आठ बार?* हां, आठ बार परंतु यह जरूरी नहीं है न कि वह १०००० वर्ष की आयु लेकर ही वहां जाये, वह आयु तो अधिक भी होगी उसकी। आयु में तो हमें उतनी ही आयु सहित जाना चाहिये और यहां तो लगातार

आठ की कंडिशन है, लगातार की। *श्रोता: लगातार आठ बार जा सकता है लेकिन वह पहले में ही जायेगा कि...* यहां पहले पटल की बात नहीं है, पहले नरक की बात है, आगे भी जा सकता है। अगर कोई बारबार पहले ही नरक में जायेगा तो आठ बार ही जा सकता है। यह बात है और लगातार का मतलब क्या है? वहां से निकला एक अन्य भव करके वापस गया, वहां से निकला एक अन्य भव करके वापस गया इसके लिये यह नियम है। *श्रोता: यह जीव पहले नरक में लगातार आठ बार जा सकता है?* लगातार यानी बीच-बीच में एक भव लेना और दूसरे नरक से निकलकर लगातार दूसरे में जाता रहे तो सात बार, तीसरे से निकला फिर तीसरे में गया तो छह बार। अगर लिखना है तो ऐसे लिखो – पहले में लगातार आठ बार, दूसरे में सात बार, तीसरे में छह बार, चौथे में पांच बार, पांचवें में चार बार, छठे में तीन बार और सातवें में से निकलकर गर्भज तिर्यंच ही होता है; फिर वहां से उसको मनुष्य या मत्स्य होना पड़े। क्योंकि डायरेक्ट वह गर्भज तिर्यंच सातवीं नरक में नहीं जा सकता और वह दो बार जा सकता है, परंतु बीच में दो भव होंगे। कम से कम दो भव होंगे, ज्यादा से ज्यादा कितने भव होते हैं तो वहां से मरकर कालांतर में कहीं घूमेगा अनंतकाल तक उसकी बात नहीं है, लगातार की बात है।

श्रोता: तिर्यंच में आया है फिर वापस १०००० वर्ष के लिये नरक में जाना है तो ऐसे भाव करेगा की वापस १०००० वर्ष तक जाना पड़े?

ऐसे होंगे तो ही जायेगा, करना पड़ेगा यानी ऐसे भाव होंगे जब १०००० वर्ष के योग्य वह आयु बांधेगा तभी उतनी आयु के साथ वहां जन्म लेगा। करना पड़े की बात ही नहीं है, जब कभी करे; अभी उसने नहीं किये और जो नरक से निकला और अच्छे उसके परिणाम हुये, हां, उसने तो शुभभाव किये स्वर्ग में चला गया। स्वर्ग में चला गया, स्वर्ग से आया मनुष्य होकर तिर्यंच में घूमा, एकेन्द्रिय में चला गया तो १०००० वर्ष की नरकायु का मौका ही नहीं आया। नरक में तो गया परंतु ३३ सागरवाला हो गया, १०००० वर्ष का नहीं हुआ तब तक उसको गिनना नहीं परंतु उस काल को गिनना। अब बाकी की गिनती बाद में करेंगे हम। अभी यहीं रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

३०. भवपरावर्तन – २

षट्खण्डागम के आधार से कालअनुयोगद्वार की हम चर्चा कर रहे हैं। कालों की गिनती किसप्रकार से करनी है उस संबंधी अपनी प्ररूपणा चल रही है। इसीके अंतर्गत हम पंच परावर्तन का स्वरूप यहां देख रहे हैं, पांच परावर्तन या पांच प्रकार का संसार, उसकी बात यहां चल रही है। द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन की बात देखने के बाद अब भवपरावर्तन की बात हम देखेंगे, बाद में भावपरावर्तन। तो यह भवपरावर्तन में क्या लेना है तो एक-एक भव की बात, जघन्य आयु से लेकर उत्कृष्ट आयु तक की बात यहां लेनी है। देव की आयु जघन्य कितनी होगी, उत्कृष्ट कितनी होगी? *श्रोता: १०००० वर्ष जघन्य और ३३ सागर उत्कृष्ट।* क्या ३३ सागर? *श्रोता: नहीं, नहीं, ३१ सागर।* देखो, मिथ्यादृष्टि के ये पांच परावर्तन होंगे तो ऊपर के देवों में जन्म लेंगे या नहीं लेंगे? क्योंकि वहां तो सम्यग्दृष्टि ही जन्मते हैं। मिथ्यादृष्टि जहां तक जन्म लेते हैं वहीं तक ही लेंगे यानी ३१ सागर तक। ३१ सागर नौवें ग्रैवेयक की उत्कृष्ट आयु है।

अभी तो हम नरक की बात देख रहे हैं। नरक की बात देखकर बाद में देवों का नंबर लास्ट में आयेगा। तो हमने यहां, पहले नरक में उसने जन्म लिया... देखो हम यहां पढ़ रहे थे उसकी परिभाषा – भवपरावर्तन की बात हमने आरंभ की थी। पढ़ लेते हैं पहले, फिर आते हैं अपनी उस जगह पर। **कोई जीव नरकगति में १०००० वर्ष की जघन्य आयु धारण करके उत्पन्न हुआ,** तो १०००० वर्ष तक उसने वहां क्या किया? वहां के सारे दु:ख भोगे के नहीं भोगे? तो नरक के कैसे-कैसे दु:ख होते हैं वे सब वहां पार करके फिर वहां से निकला। तो कहते हैं, वहां से निकला तो मनुष्य हुआ या तिर्यंच हुआ, जैसे उसके परिणाम होंगे वैसी आयु बांधकर वहां से निकला। **पश्चात् मरकर संसार में भ्रमण कर वहां ही,** पहली ही नरक में **जघन्य १०००० वर्ष की आयु को धारण कर जन्मा।** तो १०००० वर्ष के ऐसे कितने भव करने हैं? तो कहते हैं की **ऐसे १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार तो जघन्य आयु को ही धारण कर करके जन्मा और मरा।** २००० सागर में नरक के कितने भव हो सकते हैं? और वहां क्या सारे १०००० वर्ष के होंगे? और २००० सागर त्रस की स्थिति पूरी करेगा फिर एकेन्द्रिय में जायेगा वहां भी लंबे काल तक रहेगा। असंख्यात पुद्गलपरावर्तन तो वहां रहेगा, लौटकर

आयेगा तो जरूरी नहीं कि वह नरक में जायेगा, तिर्यंच के, मनुष्य के, देव के भव करते-करते बैठेगा। फिर दुबारा नरक में जायेगा तो भी हो सकता है कि अधिक आयु लेकर गया हो, हो सकता है एक समय अधिक की भी लेकर गया हो उसको तो क्रम में नहीं गिनना है। एक्झॅक्ट १०००० वर्ष की आयु लेकर वहां जन्मेगा तभी उसको गिनना है।

श्रोता: १०००० वर्ष के जितने समय हैं। जितने समय हैं; कितने समय हैं? अभी हमने तो कॅल्क्युलेट किया था न, एक वर्ष में कितने दिन हैं? ३६५, तो १०००० × ३६५ इतने दिन हुये। अब सेकंड गिनना है तो एक दिन में कितने सेकंड होंगे? २४ तो घंटे हो गये; एक-एक घंटे में कितने मिनट होंगे; उसमें कितने सेकंड होंगे; एक-एक सेकंड में कितनी हजार कोड़ाकोड़ी तो आवली होंगी और एक-एक आवली में जघन्य युक्तासंख्यात समय होंगे। इतनी बार, अभी १०००० वर्ष के समय करते जाओ तो कितने असंख्यात-असंख्यात-असंख्यात हो जायेंगे। इतनी बार १०००० वर्ष की आयु सहित पहले नरक में उसको उत्पन्न होना है, तो १०००० वर्ष की आयु सहित ५-६ बार उत्पन्न होगा तो भी बीच में अनंतकाल चला जायेगा उसका, क्योंकि वहां से निकला फिर वहां नरक में जायेगा उसी आयु के साथ जायेगा, उतनी ही आयु के साथ वहीं जन्मेगा यह तो कोई जरूरी बात है ही नहीं। कभी पाप अधिक करेगा कभी कम करेगा, कभी पुण्य करके कहीं देव में चला जायेगा, कहीं अन्यत्र चला जायेगा, एकेन्द्रिय में चला जायेगा।

तो १०००० वर्ष के समय कितने होते हैं उसको जरा आप कल्पना करो, उतनी बार उतनी ही आयु सहित जन्मेगा तब उसको हम क्रम में लेंगे। इतने काल में वह अन्य नरकों में भी कितनी बार चला जायेगा, नीचे के नरकों में अधिक आयु सहित जायेगा और त्रस की स्थिति तो लिमिटेड है। जब कभी त्रस में आयेगा, केवल त्रस होकर नहीं चलेगा, पंचेन्द्रिय होगा, संज्ञी-असंज्ञी, तभी तो वह १०००० वर्ष की आयु सहित नरक में जन्म ले सकता है, अन्यथा तो नहीं। बीच में अन्य पर्यायों में यानी एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय पर्याय में जब-जब जायेगा तब-तब उसको तो चान्स ही नहीं है न नरक में जाने का और १०००० वर्ष की जो नरकायु लेकर वहां असंख्यात बार जाना है तो त्रस पर्याय के २००० सागर में असंख्यात बार तो नहीं जा सकता है वह। तो कितनी बार तो उसको त्रस पर्याय भी धारण करनी पड़ेगी। यानी बीच-बीच में एकेन्द्रिय की पर्याय कितनी बार होगी और जो

जीव त्रस की उत्कृष्ट स्थिति पूर्ण करके एकेन्द्रिय में जाता है तो एकेन्द्रिय का एक भव करके वह त्रस में वापस नहीं आयेगा – ख्याल में आती है न बात? जितनी पूरी त्रस की स्थिति पार करके जायेगा तो एकेन्द्रिय में भी लंबा काल बिताकर आयेगा। तो ये नरक में जाते कौन हैं उसको जरा देखते हैं ३९ पेज पर जैन भूगोल पुस्तक में –

उसके पहले थोड़ा नरकों में वह कैसे-कैसे काल बिताता है वह भी देखेंगे ३६ पृष्ठ पर। पहले में पहले वहां नरकों में जो उत्पन्न होते हैं न, उनके जो बिल होते हैं इन बिलों के छत में मधुमक्खी के छत्ते के समान नारकियों के उपजने के उपपाद स्थान लटकते हैं ऊंट के मुंह के आकार के, तो उसके अंदर नारकी पैदा होते हैं। उपपाद स्थान ऊपर अंदर से पोले चौड़े होते हैं और उनके मुख नीचे की ओर होते हैं जो सांकडे यानी नॅरो होते हैं और उनके अंदर शस्त्रों जैसी रचना होती है। अंतर्मुहूर्त में नारकी के शरीर की रचना पूर्ण होकर तीक्ष्ण शस्त्रों से कटते कटते वे नीचे भूमि पर गिरते हैं और वहां से फिर ऊपर उछलते हैं और गिरते हैं, उछलते हैं-गिरते हैं, यहीं से उनके सारे जो ये दुखमय संयोग हैं वे शुरू हो जाते हैं। *श्रोता: सातवीं नरक में कितनी बार जा सकता है लगातार जाये तो?* दो बार, परंतु उसके बीच में दो भव करने पडते हैं। देखिये, ३६ पृष्ठ पर – जन्म होने के बाद पहले तो उछलते रहते हैं, गिरते रहते हैं, कटते रहते हैं उसके बाद **वहां रहनेवाले पुराने नारकी आकर** *श्रोता: स्वागत के लिये।* स्वागत के लिये, रॅगिंग के लिये **पुराने नारकी आकर कठोर शब्द उच्चारते हुये उन्हें मारते हैं, घाव पर खारा जल सींचते हैं, जैसे यहां कॉलेज में रॅगिंग करते हैं न शायद इनके पूर्व के संस्कार रहे होंगे। नये नारकी भी अवधिज्ञान द्वारा पूर्व वैर जानकर उन्हें मारते हैं, स्वयं भी पिटते हैं। नारकी अपने शरीर की भेड़िया, व्याघ्र, सर्प, बिच्छु, गिद्ध, कुत्ता आदिरूप तथा शस्त्र, अग्नि आदिरूप विक्रिया करते हैं**। वहां कोई ऐसे द्वीन्द्रियादि तिर्यंच नहीं हैं। नारकी स्वयं ही ऐसा रूप धारण करते हैं उनकी अपृथक् विक्रिया होती है। पृथक् विक्रिया यानी अलग शरीर बनाना और अपृथक् मतलब उसी शरीर को अलग-अलग रूप में धारण करना, तो यह उनकी अपृथक् विक्रिया है। देखो, आगे पढ़ते हैं –

नरकों में बड़े भीमकाय पर्वत, पीड़ा देनेवाले सैंकड़ों यंत्रों से भरी हुयी गुफायें, अग्नि से व्याप्त लोहमयी प्रतिमायें हैं, शस्त्रों समान पत्रों से युक्त असिपत्र वन हैं, मिथ्या शाल्मलि वृक्ष हैं, वैतरणा नदी है जिसका जल खारा है, तथा दुर्गंधित खून

और पीप से युक्त है जिसमें करोड़ों कीड़े भरे हैं। ये कीड़े भी नारकियों की विक्रिया है – यहां कोई द्वीन्द्रियादि नहीं होते, नारकी ही विक्रिया से इनके रूप धारण करते हैं। यहां भयंकर उष्णता होती है उसके भय से नारकी नदी में कूदते हैं तो उस जल से सर्वांग जलता है, छाया के लिये असिपत्र वन में जाते हैं तो शस्त्रों समान पत्रों से शरीर छिद जाते हैं। कुम्भी में रखकर एक दूसरे को पकाते हैं। बड़ी-बड़ी कढ़ाइयों में उबलते हुये तेल में पटक देते हैं। यहां की भूमि के स्पर्शमात्र से हजारों बिच्छुओं के एकसाथ काटने जैसी वेदना होती है। पहले नरक से पांचवें नरक के तीन चौथाई भाग तक अतिउष्णता है – अग्नि से भी अधिक तथा उसके नीचे सातवें नरक तक अतिशीत वातावरण है।

नारकियों के शरीर अनेक रोगों से ग्रस्त होते हैं, भूख, प्यास, भय आदि की तीव्र बाधायें सहनी पडती हैं। वहां की अत्यंत दुर्गंधित मिट्टी खाते हैं परन्तु भूख नहीं मिटती। पहले नरक के पहले पटल की मिट्टी – नीचे नीचे तो और दुर्गंधित होंगी, यदि मनुष्यक्षेत्र में डालेंगे तो दुर्गंध से आधे कोस के मनुष्य मर जायेंगे। क्यों विश्वास नहीं होता? यहां भोपाल में गॅसकांड हुआ था तो क्या हुआ था? मालूम है न, वहां तो रातभर में कितने जीव, कितने मनुष्य मरे थे। देखो, वह जो गॅस निकला था न युनियन कार्बाइडवाला। नरक में शरीर के खण्ड-खण्ड होने पर भी पारे के समान फिर मिल जाते हैं। मरते नहीं है वहां पर, भले ही शरीर कट जाये, मरणप्राय वेदना का तो अनुभव होगा वहां पर, परंतु मर नहीं सकते; छूटना चाहते हैं वहां से, छूटते नहीं हैं। यहां देखो कोई मनुष्य ऐसे होते हैं न भयंकर वेदना है, कोई रोग है क्या है तो कहते हैं आत्मघात करके मुझे मरना है और अगर मरते हैं तो नरकादि में जाकर और भी अत्यंत तीव्र वेदना को भोगते हैं। क्योंकि मरने से थोड़े ही उन कर्मों की उदय मिटनेवाला है? असाता यहां है और उससे छूटने के लिये अगर कोई मरना चाहता है, आत्मघात करने जैसा महापाप करता है तो मरकर वह ऐसी हीन गतियों में, नीच गतियों में जाकर उत्पन्न होता है, वहां इससे भी ज्यादा दुःख भोगता है। यानी यह तो कोई छुटकारे का तो सवाल ही नहीं है कि कोई मर गये तो सब छूट गया ऐसा जो विचार, जो कल्पना है किसीकी और कोई कषायवश मरना चाहता है या कोई अत्यंत तीव्र वेदना के कारण जो उससे छूटने के लिये मरना चाहता है यह मरने को चाहना या जीने को चाहना यह बात ही योग्य नहीं है। जितना जीवन है उतना तो है, भले

व्याधि है, कोई प्रतिकूलता है तो क्या हुआ? हमें तो इसको अवसर मान लेना चाहिये। हमें तो उसके प्रति - तत्त्वों के विचारों के प्रति मुड़ना चाहिये। प्रतिकूलता है तो अच्छा है कि संयोगों में हम रचे पचे नहीं रहेंगे। ख्याल में आती है बात!

यहां आयु पूर्ण भोगे बिना मरते ही नहीं है। हम मनुष्य तो कषायवश या संयोगों से कंटालकर आत्महत्या कर देते हैं, वहां नरकों में ऐसा कोई चान्स – सुविधा नहीं है। मनुष्य सोचते हैं कि मैं मर जाऊंगा तो दु:खों से छुटकारा होगा, परन्तु उन्हें पता नहीं है कि ऐसे परिणामों से मरकर नरकों में सागरों तक ऐसे कष्ट और वेदना भोगने पड़ते हैं जिसमें से कोई छुटकारा नहीं है। ये सारे क्षेत्रसंबंधी दु:ख हैं, वहां होनेवाले संक्लेश परिणामों के कारण आर्त-रौद्रध्यान होते रहते हैं जो मानसिक दु:ख हैं। रोगादि से उत्पन्न होनेवाली वेदना शारीरिक दु:ख है और असुरकुमार जाति के भवनवासी देव तीसरे नरक तक जाकर परस्पर भिड़ाते हैं, एक दूसरों को पूर्व भव की याद दिलाकर झगड़ा कराते हैं। अभी हम बाकी चर्चा छोड़ देंगे।

श्रोता: एक प्रश्न है कि नरकों में इतना दु:ख है तो वहां जीव जन्मते ही क्यों हैं? पापभाव करते हैं तो उसका फल भोगने का कोई न कोई स्थान है, जगह है, तो उनके वैसे ही कर्मप्रकृति बंधती है और वहां जाकर वे उत्पन्न होते हैं और वहां के दु:ख भोगते हैं। *श्रोता: यह अवधिज्ञान हो जाता है वह क्या ज्ञान का क्षयोपशम हो जाता है? अवधिज्ञान भवप्रत्यय है?* वहां मिथ्यादृष्टियों के भवप्रत्यय अवधिज्ञान है जिसे विभंगज्ञान कहते हैं। जो कुअवधिज्ञान है उसीका दूसरा नाम है विभंगज्ञान, देवों में और नारकियों में यह होता ही है। मिथ्यादृष्टियों के तो कुअवधिज्ञान है और वहां सम्यग्दृष्टियों के तो सुअवधिज्ञान होता है यह तो नियम से होता है, उस भव के जीवों को होता ही है, यह नियम है। *श्रोता: उनका क्षेत्र बहुत छोटा होता है।* अवधिज्ञान का क्षेत्र अलग-अलग होता है। कौनसे जीवों की अवधि कहां तक चलती है उसके नियम अलग हैं जैसे देवों के नियम हैं वैसे नारकियों के भी हैं। कौनसे नरक का अवधिज्ञान कितने क्षेत्र तक चलता है उसके सारे नियम हैं, इसमें भी कहीं लिखे हैं परंतु हम अभी केवल थोड़ी-थोड़ी स्थूलरूप से चर्चा करेंगे।

श्रोता: एक निगोद का जीव है और एक बाजू नारकी का जीव है – निगोद के जीव का ज्ञान अक्षर के अनंतवें भाग का है और नारकियों का ज्ञान – संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव है, तो

दु:ख की जो वेदना है, तो ज्यादा वेदना कौन पकड़ेगा यानी ज्यादा दु:खी किसप्रकार से कहेंगे? आपका प्रश्न ऐसा है की कोई निगोद का जीव है और कोई नारकी है, एक संज्ञी पंचेन्द्रिय है एक एकेन्द्रिय है, देखो संक्लेश की अपेक्षा देखो, विशुद्धि की अपेक्षा देखो, संक्लेश भी संज्ञी पंचेन्द्रिय में मॅक्झिमम होगा और विशुद्धि भी संज्ञी पंचेन्द्रिय में अधिक होगी। क्योंकि देखो, एकेन्द्रिय जीव अधिक से अधिक बंध करेगा, स्थितिबंध मिथ्यात्व का मान लो – कितना करता है मालूम है? *श्रोता: एक सागर!* एक सागर और संज्ञी पंचेन्द्रिय संक्लेश परिणाम में? *श्रोता: ७० कोड़ाकोड़ी सागर।* ७० कोड़ाकोड़ी सागर। परंतु वही संज्ञी पंचेन्द्रिय, भले वह बंध इतना करता हो पर सातवें नरक का नारकी भी सम्यग्दृष्टि हो सकता है, सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है। वह सोच भी सकता है क्योंकि वहां जो परिस्थिति है, प्रतिकूलता है, दु:ख है, फिर भी उसको राग की, शरीर की और संयोगों की भिन्नता भासित हो सकती है और वह आत्मसन्मुखतापूर्वक आत्मज्ञान, सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है, उस अपेक्षा हम कहेंगे उसकी पर्याय है वह बेटर है। किस अपेक्षा से? वहां वह अपना स्वरूप पहचान सकता है, उसे भावभासन हो सकता है, भले पूर्वभव में उसने वह उपदेश सुना हो, उसका कार्य नहीं किया हो, पाप करके वहां गया हो। फिर भी वहां जाकर उसके सम्यक्त्व प्राप्त हो सकता है।

एकेन्द्रिय में कितना ही कम बंध क्यों न हो, परंतु वहां से छूटने का तो मार्ग नहीं है कोई । अनुभाग का बंध और स्थितिबंध एकेन्द्रियों के बहुत अल्प होता है उससे द्वीन्द्रियों के ज्यादा, उससे त्रीन्द्रियों के, चतुरिन्द्रियों के, पंचेन्द्रियों के ज्यादा है। पंचेन्द्रिय जीव मिथ्यादृष्टि, कम से कम स्थितिबंध अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का तो करेगा ही करेगा और एकेन्द्रिय जीव? वह सागर से लेकर सागर में पल्य के असंख्यातवें भाग कम तक इतनी उसकी रेंज है। उस अपेक्षा से देखेंगे तो यहां नारकी के दु:ख ऐसे भले दिखने में ज्यादा है, परन्तु वह निगोद की पर्याय ऐसी हीन पर्याय है कि वहां से छूटने का कोई मार्ग नहीं है। वहां तो केवल वह कर्मफलचेतना कहते हैं न। सुखी दु:खी ऐसा ही अनुभव चलता है, दु:खरूप से। *श्रोता: अनुभव किसको ज्यादा है? अन्य श्रोता: नारकियों को अवधिज्ञान मिलता है...* मिलता है यानी उनके वह सहजरूप से पाया जाता है। देव और नारकी के भव में वह सहजरूप से पाया जाता है। मिथ्यादृष्टि को कुअवधिज्ञान यानी विभंगज्ञान होता है और सम्यग्दृष्टि को अवधिज्ञान होता है।

अब कौनसे जीव कहां जाते हैं उसकी जरा बात देखेंगे हम ३९ पेज पर। देखो जो एकेन्द्रिय जीव हैं, बाकी भी सब लब्धिअपर्याप्त जीव हैं या द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीव हैं वे ना नरक में जाते हैं ना देव में जाते हैं। यानी वे नरकगति का भी बंध नहीं कर सकते, देवगति का भी बंध नहीं कर सकते। सारे ही लब्धिअपर्याप्त, सारे ही एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीव ये मरकर या तो मनुष्य होंगे या तिर्यंच होंगे। परन्तु वे ना तो नरक में जाते हैं ना तो देव में जाते हैं। **सम्मूर्च्छन पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव मरकर नरक में जा सकते हैं।** जो हमने देखा न कि मत्स्य वगैरह जा सकते हैं। नीचे का पॅरेग्राफ –

तीसरे नरक तक पक्षी आदि, चौथे नरक तक सर्प आदि – आपने पूछा था न कि सर्प चतुरिन्द्रिय है या पंचेन्द्रिय है, तीसरे नरक तक जाता है उसका अर्थ क्या है? *श्रोता: पंचेन्द्रिय।* पंचेन्द्रिय होना चाहिये और वह भी संज्ञी। *श्रोता: ऐसा लिखा है?* लिखा नहीं है पर इससे हम इन्फरन्स निकाल सकते हैं। **पांचवें नरक तक सिंह आदि, छठवें नरक तक स्त्री और सातवें नरक तक मनुष्य और मत्स्य जा सकते हैं।** वह वज्रवृषभनाराच संहननवाले ही मरकर सातवें नरक में जा सकते हैं हां, वहां संहनन के नियम हैं सारे – नरक में जाने के लिये भी संहननों के नियम हैं। **जिस प्रकार मोक्ष में जानेवालों के लिये वज्रवृषभनाराच संहनन का नियम है, उसी प्रकार सातवें नरक में जानेवालों के लिये भी यह नियम है।** हमने वह बात देखी थी कि तंदुलमत्स्य है वह भी जो सातवें नरक में जाता है तो उसने कितना पाप किया, कितनी मछली खायी? तो कहते हैं उसने तो केवल परिणाम किये। दूसरे के मुंह में जाती हुयी मछलियों को देखकर सोचता है अरे मैं होता तो पूरे के पूरे निगल जाता तो इसतरह से सोचकर वह पाप बांधता रहता है। हम कहेंगे हम तो जैनी हैं, हम थोड़े ही पाप बांधते हैं? नहीं बांधते हैं न! तो टीव्ही के सामने बैठते हैं, टीव्ही की सीरियल चल रही है, वह हीरो मार खा रहा है, हाथ में बंदूक है तो बैठे-बैठे क्या सलाह देते हैं उसको? *श्रोता: गोली चलाओ।* अरे! गोली मारो न, क्यों मार खा रहे हो! उसको तो गोली नहीं मारनी है, वह तो ॲक्शन कर रहा है, उसको तो नहीं मारने के पैसे मिल रहे हैं, ॲक्टिंग के उसको पैसे मिल रहे हैं, आपको क्या मिल रहा है? *श्रोता: पाप।* पाप, हिंसा का। गोली मारने का पाप तो उस देखनेवाले को लगता है जो यहां बैठे-बैठे कहता है अरे मारो न क्यों मार खा रहे हो? व्हिलन आगे भाग रहा है, कोई पीछे से पिस्तोल लेकर भाग रहा है – अरे गोली मार न, क्यों फालतू में भाग रहा है – यहां बैठे-बैठे पुकारता है सलाह

के लिये। मालूम है? इसको अनर्थदंड कहते हैं, बेकार का दंड – क्या किया आपने? पैसे मिले, क्या मिला आपको? वे परिणाम किये तो उनका फल, उनका बंध अवश्य ही हुआ है। हम कहते हैं हमने तो कुछ किया ही नहीं है, हम तो इतने अच्छे हैं। *श्रोता: और एक स्टँडर्ड बात है न – यह जो टेररिझम का प्रॉब्लेम होता है न, तब बहुत से लोग बोलते हैं सभी लोगों को गोली मार देनी चाहिये, सबको हँग कर देना चाहिये।* ऐसा ही है, जो सभी को हँग करना चाहिये यह कहते हैं तो वे परिणाम तो हुये उसके। उसके कहने से तो कुछ होनेवाला नहीं है परन्तु उन परिणामों का फल अवश्य मिलेगा। यही तो कहते हैं न कि हमें पता ही नहीं है हम क्या कर रहे हैं। यह कृत-कारित-अनुमोदना का पाप लगता है – सबका समान पाप लगता है। तिर्यंच आहारदान तो नहीं दे रहे हैं परन्तु अनुमोदना कर रहे हैं तो वे मरकर भोगभूमि में जाते हैं – यह सुना है कि नहीं सुना है?

अब हम आगे पढ़ते हैं। अपना विषय चल रहा है कि अभी नरक से निकला हुआ जीव अन्य तीन गतियों में भटकता रहे, वह दुबारा नरक में जन्मे नहीं ऐसा भी तो हो सकता है न। यानी नरक से निकला जीव मनुष्य, तिर्यंच हुआ फिर तिर्यंच में, मनुष्य में, देवों में ही भटकता रहा, नरक में गया ही नहीं और वह त्रस पर्याय पूरी हुयी, चला गया वह एकेन्द्रिय में, अनंतकाल वहां भटककर वह वापस लौटा। जब कभी १०००० वर्ष की ही आयु लेकर नरक में गया तब उसको गिनना। दस बार भी जाता है तो कितना काल चला जायेगा! यहां तो १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार १०००० वर्ष की आयु लेकर ही प्रथम नरक में उसको उत्पन्न होना है। शुरुआत में इतना रेअर होता है तो आगे क्या होगा? अभी आगे पढ़ते हैं। जीवकाण्ड २ नंबर की पुस्तक में ६४४ पृष्ठ, भवपरिवर्तन –

कोई जीव नरकगति में १०००० वर्ष की जघन्य आयु धारण करके उत्पन्न हुआ, पश्चात् मरकर संसार में भ्रमण कर, अब कितना काल भ्रमण करेगा कोई लिमिट नहीं उसकी, उसकी पॉसिबिलिटीज़ हमने देख ली हैं क्या-क्या हो सकता है। वहां ही १०००० वर्ष की जघन्य आयु को धारण कर जन्मा ऐसे १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार तो जघन्य आयु को ही धारण कर करके जन्मा और मरा। बीच में अन्य नरकायु कितनी बार भोगकर छोड़ी है, कितनी बार नरक में तो जन्मा था परंतु अधिक आयु लेकर जन्मा था। अन्यत्र भी गया – देव में भी गया, मनुष्य भी हुआ,

कभी एकेन्द्रिय में गया ऐसे भटकते-भटकते जब-जब १०००० वर्ष की नरक की आयु होगी तब उसको गिनना। ऐसे कितनी बार होना चाहिये? १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार, इसीमें अनंत-अनंत-अनंतकाल चला जायेगा।

पश्चात् १०००० वर्ष और एक समय की आयु सहित जन्मा। पश्चात् १०००० वर्ष और दो समय की आयु सहित जन्मा। शुरुआत में इतना अनंतकाल है फिर आगे ये ही पॉसिबिलिटीज़ लेनी हैं, एक्झॅक्ट इतनी आयु लेकर जन्मना इतना रेअर-रेअर है, कितनी असंभव जैसी बात है। बड़ी आयु होगी, छोटी आयु होगी उससे कोई लेना-देना नहीं, उसको गिनना नहीं, उसका समय गिनना और बीच में अन्य पर्यायों में तो भटकेगा कि नहीं भटकेगा? नारकी हुआ तो भी कभी २२ सागर, कभी ३३ सागर, कभी १० सागर का हुआ, वह नहीं गिनना अभी, जब एक-एक समय बढ़ते-बढ़ते उनका नंबर आयेगा तब जाकर गिनना उनको। अभी तो १०००० वर्ष के समय गिनकर हम देख रहे हैं, फिर एक समय बढ़ाओ फिर दो समय बढ़ाओ, तीन समय बढ़ाओ – अरे आवली जितने समय बढ़ने तक तो अनंतकाल और चला जायेगा। तो पहले नरक में १०००० वर्ष से लेकर १ सागर की आयु है, एक-एक समय से बढ़ते हुये वह १ सागर कब हो जायेगा? ख्याल में आया न! १ सागर कितना बड़ा है - दस कोड़ाकोड़ी पल्य का १ सागर होता है, वह पल्य भी कितना बड़ा है हमने देख लिया था और वह भी अद्धापल्य है, व्यवहारपल्य भी नहीं। यानी वे व्यवहारपल्य के जितने रोमखण्ड थे उन्हें असंख्यात करोड़ वर्षों के समयों से गुणा किया फिर एक बार और असंख्यात वर्षों के समयों से गुणा किया तब जाकर वह अद्धापल्य के समय हुये। तो यह कितना लंबा काल, इतनी बड़ी आयु है और एक-एक-एक-एक समय से बढ़ते हुये उसको १ सागर तक पहुंचना है तब जाकर पहले नरक की आयु के सभी विकल्प यानी सभी भेद पूरे हो जायेंगे।

ये त्रस पर्यायें तो लिमिटेड हैं और नरक में बारंबार जन्म भी इतनी बार नहीं होता है फिर भी इनमें ही कितना काल चला जायेगा। अब आगे देखते हैं – **पश्चात् १०००० वर्ष और एक समय की आयु सहित जन्मा, पश्चात् १०००० वर्ष और दो समय की आयु सहित जन्मा, ऐसे एक-एक समय से बढ़ते हुये अनुक्रम से उत्कृष्ट आयु मात्र** यहां तो शॉर्ट में बता दिया अनुक्रम से उत्कृष्ट आयु मात्र **३३ सागर पूर्ण करके...** थोड़ी कल्पना करो कि १ सागर में कितने समय होंगे फिर १ सागर और एक समय की

आयु, फिर और भटक के आया, १ सागर और दो समय की आयु, फिर और भटकते-भटकते फिर १ सागर और तीन समय की आयु इसतरह अभी उसमें एक वर्ष भी बढ़ते-बढ़ते कितना हो जायेगा। यहां तो १ सागर से लेकर ३३ सागर तक एक-एक समय से बढ़ती हुयी आयु चाहिये। बीच में अक्रम से कितनी बार नरक में जायेगा और वहां तो देवों में भी कितनी बार जाकर आयेगा, एकेन्द्रिय में चला जाये तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन वहां चले जायेंगे। तो यह नरक की एक-एक समय से बढ़ती हुयी आयु जब-जब प्राप्त होगी तभी उसको क्रम में लेना है, अक्रम से जितनी बार जन्मेगा उसका समय गिनना, उसको नहीं गिनना। तो ऐसे नरक की आयु के सभी विकल्प पूर्ण करके – आगे देखेंगे – **३३ सागर पूर्ण करने के पश्चात् तिर्यंचगति में अंतर्मुहूर्त मात्र जघन्य आयु सहित जन्मा**। नरक से निकला हुआ यदि तिर्यंच में भी उत्पन्न होता है अंतर्मुहूर्त आयु सहित तो, पर्याप्त में ही जन्मेगा और तिर्यंचगति की जघन्य आयु किसकी है? अपर्याप्तों की। वहां से कोई एक जन्म लेकर क्योंकि वह संज्ञी पंचेन्द्रिय में जन्मेगा और वहां से उसने एक छोटीसी लब्धिअपर्याप्त की जघन्य आयु प्राप्त की ऐसा समझेंगे। यानी यहां से हम तिर्यंचगति का भवपरावर्तन शुरू करेंगे, गिनना चालू करेंगे।

नरक की बात ख्याल में आयी न? नरक में शुरुआत में ही क्या करना है – १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार १०००० वर्ष की आयु सहित वहां उत्पन्न होना है। फिर एक-एक समय बढ़ती हुयी नरकायु जब-जब उसको मिली है, वहां जन्म लिया है तब उसको गिनना, अक्रम से उसके जितने कुछ भव हुये उनको नहीं गिनना। अब जाकर तिर्यंच में उत्पन्न हुआ है... *श्रोता: ३३ सागर तक जाना है?* ३३ सागर तक जाना है। एक-एक समय से बढ़ते हुये नरकायु के ३३ सागर तक के सभी भव पूरे करने हैं क्रम से, यानी जब सागरों की आयु बढ़ती है, मान लीजिये ३२ सागर तक पहुंचा, तो ३२ सागर और एक समय, फिर ३२ सागर और दो समय यानी वहां तो ३२ सागर बितायेगा, वहां से बाहर निकलेगा और कहां-कहां भटकेगा, फिर घूमघाम के फिर वहां उतनी ही आयुसहित जन्मना चाहिये – यानी एक समय बढ़कर। हो सकता है कि ३२ सागर और एक समय की जगह पर डायरेक्ट ३३ सागरवाला उत्पन्न हो... *श्रोता: वेस्ट गया।* अभी वेस्ट ही है न यानी उसको परावर्तन में नहीं गिनना परंतु वे सारे दु:ख भोगेगा वहां के और वहां का इतना समय चला जायेगा।

यानी उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते, इतनी बार नरकों में जन्म लिया है तो कैसा-कैसा दु:ख उसने भोगा होगा हर बार और डायरेक्ट एक बार बाहर निकला फिर वहां गया, निकला फिर वहां गया ऐसा तो हो ही नहीं सकता है क्योंकि उसकी भी लिमिट है। त्रस जीव भी नरकों में कितनी बार जा सकता है उसकी भी लिमिट है। देवों में कितने भव करेगा ये सारे लिमिटेड हैं और उस हरेक की संख्या बतायी है ग्रंथों में, तो आगे देखते हैं। अभी तिर्यंचगति का उसने भवपरावर्तन चालू किया, तिर्यंचगति में जघन्य आयु कितनी है? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* अंतर्मुहूर्त यानी वह क्षुद्रभव में देखा था लब्धिअपर्याप्तवाले। लब्धिअपर्याप्तवाले की एक-एक समय से बढ़ती हुयी बहुत रेंज होगी। फिर पर्याप्तों की जघन्य आयु अंतर्मुहूर्त, वह भी एक-एक समय से बढ़ते-बढ़ते-बढ़ते-बढ़ते यहां तो कर्मभूमि की उत्कृष्ट आयु कितनी है? *श्रोता: एक करोड़ पूर्व।* एक करोड़ पूर्व। उसके बाद भोगभूमि की जघन्य आयु एक करोड़ पूर्व प्लस एक समय, फिर दो समय, फिर तीन समय ऐसे बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट आयु तीन पल्य तक है।

तिर्यंच में से तो तिर्यंच उत्पन्न हो सकता है परंतु एक बार वह भोगभूमिवाला मान लेते हैं एक करोड़ पूर्व प्लस एक समय भोगभूमि का भव किया उसने, तो उस भोगभूमि में से कहां चला जायेगा? *श्रोता: देव में।* देव में चला जायेगा। देव से कहां जायेगा? हो सकता है एकेन्द्रिय में चला जाये। परंतु वह तो भोगभूमि की तिर्यंचायु तो उसके नहीं होगी न! यानी करोड़ पूर्व के ऊपर की। भोगभूमि के ही उसके भव होने तक उसकी कैसी-कैसी पर्यायें होंगी, भोगभूमि में कौन जाता है? असंज्ञी तो नहीं जाता है, ना देव जाते हैं ना नारकी जाते हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच जायेंगे या मनुष्य जायेंगे और यहां तो बारंबार तिर्यंचों के भव करने हैं। ऐसा कभी नहीं होगा की २००० सागर तक वह तिर्यंचों के ही भव करता रहे, त्रस में आया है और तिर्यंचों के भव करता रहे ऐसा नहीं होता। हां, वह अंतर्मुहूर्त के लिये हम एकेन्द्रियों के भव ले सकते हैं। लब्धिअपर्याप्त हुआ, एकेन्द्रिय हुआ, इतना-इतना अंतर्मुहूर्त किया, बारंबार जन्म लिया परंतु जब संज्ञी पंचेन्द्रियों के भवों की बात आ जायेगी तब उसमें तो लिमिटेशन आनेवाली है। कितनी बार वह एकेन्द्रियों में चला जायेगा बाद में वह पंचेन्द्रियों के भव करता रहा क्योंकि करोड़ पूर्व की बात जब चालू होगी न तो वे तो पंचेन्द्रियों के होंगे इतने भव बड़े-बड़े। फिर बाद में भोगभूमि के देखने हैं। भोगभूमि में भी एक-एक समय से बढ़ते हुये कितने भव हो जायेंगे। करोड़ पूर्व अधिक एक समय से शुरू

करके हमें तीन पल्य तक को गिनना है और हर बार एक ही समय बढ़ाना है। एक ही समय बढ़ाकर उत्पन्न होगा यह तो कोई आसानी से होनेवाली बात नहीं है यानी शक्यता कम होती है उसकी, पॉसिबिलिटि कम हो जाती है। अन्य-अन्य भव करेगा, छोटे भव करेगा, बड़े भव करेगा। जब-जब उसी क्रम से एक समय बढ़कर भव आयेगा तभी उसको गिनना है, अन्यथा उसको नहीं गिनना है। देखो पढ़ेंगे ६४५ पृष्ठ पर –

सो पूर्ववत् अंतर्मुहूर्त के जितने समय हो – देखो तिर्यंचगति का जब परावर्तन चालू किया, भवपरावर्तन – तो जो छोटी में छोटी जो आयु है लब्धिअपर्याप्त की, वह भी अंतर्मुहूर्त है। तो अंतर्मुहूर्त की आयु सहित जन्मा। जैसे हमने नरक में १०००० वर्ष की आयु देखी थी ऐसे यहां अंतर्मुहूर्त के जितने समय हैं उतनी बार उतनी ही आयु सहित तिर्यंच में जन्मा। वह तिर्यंच की आयु इतना ही कहेंगे। वह संज्ञी हुआ कि एकेन्द्रिय हुआ कि द्वीन्द्रिय हुआ उसकी बात नहीं है। तो कहते हैं **अंतर्मुहूर्त के जितने समय हो उतनी बार तो उस अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही आयु को धारण कर करके जन्मे। पश्चात् एक समय अधिक अंतर्मुहूर्त आयु को धारण करके जन्मे, पश्चात् दो समय अधिक अंतर्मुहूर्त आयु को धारण करके जन्मे, ऐसे एक-एक समय अनुक्रम से बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट आयु के तीन पल्य पूर्ण करता है।** यह तो डायरेक्ट बता दिया तीन पल्य पूर्ण करता है परंतु करोड़ पूर्व तक के तो कर्मभूमि के भव हो गये और उससे एक समय अधिक से लेकर भोगभूमि के भव हो गये। ख्याल में आती है न बात! तो भोगभूमि के करते-करते तीन पल्य यानी पल्य तक भी पहुंच गया मानो तो पल्य प्लस एक समय, पल्य प्लस दो समय, पल्य प्लस तीन समय ऐसे करते-करते... और भोगभूमि के तो बारंबार उसके इतने भव नहीं होंगे। भोगभूमि के एक भव के बाद दुबारा भोगभूमि का भव नहीं होता, वह तो देव में चला जाता है। इसतरह सब रेअरिटि होती चली जाती है। हमें लगता है तिर्यंचों में तो बहुत बार जन्म मरण करता है, हां करता है परंतु एक्झॅक्ट हमारी कंडिशन पूरी होनी चाहिये, उतनी ही आयु के साथ वहां उत्पन्न होना चाहिये।

पुनश्च मनुष्यगति में – अब मनुष्यों की जघन्य आयु? *श्रोता: अंतर्मुहूर्त।* वही लब्धिअपर्याप्त की जघन्य अंतर्मुहूर्त और उत्कृष्ट आयु? *श्रोता: तीन पल्य।* तीन पल्यवाली।

पुनश्च मनुष्यगति में तिर्यंचगति के समान अंतर्मुहूर्त से लेकर तीन पल्य पूर्ण करता है। अब यहां तो एक लाइन में उन्होंने बता दिया। अब वहां मनुष्यों के भी लब्धिअपर्याप्त मनुष्यों की पर्याय लेना है, पर्याप्त मनुष्य है तो भी अंतर्मुहूर्त से लेकर उसके सभी भव लेना है। वैसे तो नारकी होना बहुत बार होता है, देव में भी बहुत बार जाता है, तिर्यंचों में तो बारंबार जाता ही है, मनुष्यभव मिलना उतना कठिन है कहो या दुर्लभ है कहो, बारंबार वह नहीं मिलता है। हमने देखा है न कोई लगातार मनुष्य से मनुष्य, मनुष्य से मनुष्य, मनुष्य से मनुष्य होता रहा तो वह ४८ बार कैसे गिनना वह हमने देखा था; पर्याप्त मनुष्यों की बात है और भोगभूमिवाला होगा तो देव में चला जाता है, तीन पल्य का नंबर तो बाद में आयेगा। पहले में पहले अंतर्मुहूर्त के जितने समय हैं उतनी बार तो उसी पर्याय में, लब्धिअपर्याप्त मनुष्यपर्याय में उत्पन्न होना चाहिये। वह तो लब्धिअपर्याप्त की बात हो गयी, पर्याप्त मनुष्य होने पर भी अंतर्मुहूर्त – वह एक-एक समय से बढ़ता हुआ अंतर्मुहूर्त उसको होना चाहिये और मनुष्यों के भव तो अति अल्प मिलते हैं। त्रस पर्याय मिली भी तो मनुष्य के भव तो कम बार मिलेंगे, तो उसकी दुर्लभता और बढ़ती चली जाती है। उसको एक-एक समय से बढ़ते हुये, एक-एक समय से बढ़ते हुये मनुष्यभव करना है तो कितनी बार त्रस पर्याय धारण करनी पड़ेगी उसको। मनुष्य तो हुआ किंतु अधिक आयुवाला हुआ, कम आयुवाला हुआ तो उसको नहीं गिनना है।

इसलिये देखो, यहां तो एक लाइन में लिख दिया, **मनुष्यगति में तिर्यंचगति के समान अंतर्मुहूर्त से लेकर तीन पल्य पूर्ण करता है।** तिर्यंचगति में तो मेजॉरिटी उसका तिर्यंचगति में घूमना होता है, वे तो आसानी से मिले परंतु मनुष्यगति तो उसको आसानी से मिलनेवाली नहीं है। *श्रोता: यह जो ४८ भव कहा तो उसकी उत्कृष्ट आयु थी उतनी मिली?* हमने लगातार ४८ भव उत्कृष्ट आयु को गिनकर देखे। *श्रोता: बाकी ज्यादा भी हो सकते हैं?* हां, ज्यादा भी हो सकते हैं, अधिक हो सकते हैं यह बात भी हमने देखी थी। *श्रोता: यानी कि लगातार में ही ज्यादा हो सकते हैं ऐसा कि ४७ कोटि पूर्व और तीन पल्य जो आपने बताया...* नहीं, लगातार ज्यादा नहीं होंगे, लगातार भव तो ४८ ही होंगे। परंतु उसकी उत्कृष्ट स्थिति, कायस्थिति हमने कहा था उसको, यानी लगातार मनुष्यपर्याय में ही जन्म लेता रहा। कायस्थिति में एक-एक भव मॅक्झिममवाला लिया था। परंतु उससे छोटा – मान लीजिये १० वर्ष का हुआ, कोई ५० वर्ष का हुआ, कोई ८० वर्ष का हुआ, कोई

अंतर्मुहूर्त का भव होगा, कितने होंगे तो ४८ से ज्यादा नहीं होंगे, लगातार की बात है। हमें वह कायस्थिति उत्कृष्ट करने के लिये हमने हर भव को बड़े से बड़ा लिया था। उसके लिये पॉसिबिलिटीज़ हम देख रहे थे और यह हमारे जैसी आयु मिली – ६०, ७०, ८० वर्ष की आयु में मर गया तो वह करोड़ पूर्व तो वहां नहीं गिनेंगे हम। ऐसे भव कितने कर सकता है? तो ८ स्त्री के, ८ पुरुष के, ८ नपुंसक के, उनमें भी वही कंडिशन लागू होगी।

श्रोता: लगातार उनकी कायस्थिति गिनते हैं तो अंतर्मुहूर्त के लिये यानी यहां पर उसके ४८ भव खत्म होने के बाद कोई एक पर्याय धारण करने के बाद दुबारा भी ४८ भव धारण कर सकता है कि नहीं? कायस्थिति के... नहीं, उसको कायस्थिति नहीं कहेंगे क्योंकि बीच में मनुष्यपर्याय निकल गयी। उसको कायस्थिति में नहीं गिनते। बीच में दूसरी पर्याय हुये बिना की बात है। *श्रोता: वह तो बराबर है लेकिन वापस, दुबारा एक पर्याय और उसने दूसरे भव में धारण की, तो उसके बाद ४८ का राऊंड आ सकता है?* हो सकता है, आ सकता है। फिर भी उसमें भी लिमिट्स हैं, क्योंकि आप ऐसा कहेंगे की एक ही देव का भव किया और मनुष्यों में ही घूमता रहा, तिर्यंचों में ही घूमता रहा। फिर मनुष्य हुआ फिर तिर्यंच हुआ, फिर मनुष्य हुआ फिर तिर्यंच हुआ। तो २००० सागर तो मनुष्य-तिर्यंच के छोटे-छोटे भव करते करते बीत जाये तो ऐसा कभी नहीं होगा। उसमें इतने सागर तो देवों के और नारकियों के भव होंगे ही तभी तो वह २००० सागर की बात पूरी हो सकती है। उसमें भी बहुत सारे नियम हैं और इन सारे नियमों से हमारे ग्रंथ भरे पड़े हैं। सभी नियम अगर मैं बताऊं तो आपको कन्फ्यूजन ज्यादा हो जायेगा। *श्रोता: अभी भी कम नहीं हुआ है।*

श्रोता: अभी क्या है जिज्ञासा भी रहती है क्योंकि लिखा मिलता है कि उत्कृष्टता से मनुष्यभव के अंदर ४७ कोटि पूर्व प्लस तीन पल्य से ज्यादा, लगातार ४८ भव से ज्यादा नहीं मिलते। मतलब ४८ भव से ज्यादा नहीं मिलते, लगातार की बात नहीं है, तो उनकी यह जिज्ञासा है। यह लगातार की बात है, ग्रंथों में लगातार की बात है। कहीं पर भी ऐसा नहीं लिखा है कि २००० सागर में मात्र ४८ ही भव मिलते हैं। ऐसा कथन हो रहा है क्योंकि हमने ऐसा सुनकर रखा है तो ऐसा हम कहते भी हैं। परंतु अभी जो आगम के अनुसार है वैसा ही हमको कहना भी चाहिये। ख्याल में आया! इसलिये आपको बता रहे हैं

क्योंकि आप प्रवचनकार हो तो यह बात आप ख्याल में रख सकते हैं। क्योंकि यह मनुष्यभव कितना दुर्लभ है उसको बताने के लिये आप कहते हैं क्योंकि हमने पहले सुनकर रखा है २४ भव पर्याप्त के, २४ भव अपर्याप्त के परंतु ऐसा नहीं है। मनुष्य अपर्याप्तों के लगातार भव भी ८ ही हो सकते हैं। यहां तो लगातार की बात है। वह तिर्यंच बनेगा, देव बनेगा, नारकी बनेगा – ऐसी अलग-अलग पर्याय धारण करेगा परंतु मनुष्य कितनी बार हो सकता है तो उसकी ऐसी कोई लिमिटेड संख्या नहीं है, तो वह अनेक बार भी हो सकता है क्योंकि वह देव में से लौटा है फिर भी मनुष्य के कुछ भव हो गये, फिर तिर्यंच में गया है, देव में गया है फिर वापस मनुष्य के भव कुछ हो गये – हो सकते हैं। *श्रोता: सम्मूर्च्छन भी बनेगा वह?* हां। अब हम आगे बढ़ेंगे। तो यहां हम मनुष्यों की बात पढ़ रहे थे।

मनुष्यगति में तिर्यंचगति के समान अंतर्मुहूर्त से लेकर क्योंकि हमने शुरुआत की है मनुष्यभवपरावर्तन की, मनुष्यों में तो शुरुआत में तो लब्धिअपर्याप्त की ही बात लेंगे। उसके जितने समय हैं उतनी बार लब्धिअपर्याप्त होकर जन्म लेना चाहिये। लगातार अधिक बार नहीं जन्म सकता; मनुष्य अपर्याप्त मरकर मनुष्य अपर्याप्त हो तो लगातार उसके भी ८ ही भव हो सकते हैं, ज्यादा तो नहीं होंगे। फिर वहां से अन्य कोई पर्याय मिले, फिर अपर्याप्त मनुष्य हो पर वह एक भव में एक समय बढ़ाकर हमें लेना है। ख्याल में आया? और यह मनुष्य अपर्याप्त कैसी मार्गणा है? *श्रोता: सांतरमार्गणा है।* वह तो नाना जीवों की अपेक्षा सांतरमार्गणा है उसकी बात छोड़ दो परंतु एक जीव लगातार आठ ही बार कर सकता है और उसको उतनी ही आयु सहित जन्मना चाहिये, उसमें भी आयु के व्हेरिएशन्स हमने देखे थे – पहले बात आयी थी न! निषेकक्षुद्रभव और घातक्षुद्रभव की। तो उसकी अपेक्षा वहां पर भी लगा लेना है। उतनी ही आयु के साथ उसको वहां जन्म लेना है यानी भव धारण करना है। उसकी भी रेंज है, मिनिमम आयु के साथ वहां जन्म लेना है। मिनिमम आयु कितनी है तो असंख्यात समयों की। असंख्यात समय हैं न, लब्धिअपर्याप्त का भव अंतर्मुहूर्त प्रमाण है, अंतर्मुहूर्त यानी कितनी आवली होंगी उसकी? संख्यात आवली होंगी। तो उसके समय कितने होंगे तो असंख्यात समय होंगे। तो असंख्यात बार वह लब्धिअपर्याप्त का जघन्य भव लेकर जन्मेगा, फिर एक समय अधिकवाला जन्म लेकर जन्मेगा, फिर और एक समय अधिक आयु को लेकर जन्मेगा। तो मनुष्यपर्याय तो इतनी सुलभ नहीं जैसे तिर्यंचों में जन्म होता है, तो बीच-बीच में पर्याप्त मनुष्य भी होगा, तिर्यंच भी

होगा, देव भी होगा, नारकी भी होगा तब जाकर वह उसी आयु के साथ जन्म लेगा और जितने उसके समय हैं उतनी असंख्यात बार वह बात पूरी होगी तब जाकर वह पर्याप्तों के भव चालू करेगा। पर्याप्तों में भी वह आयु उतनी लेकर जन्म लेना चाहिये। इतनी आयु के साथ जन्म लेना चाहिये यह हमारी कंडिशन है। तो कहते हैं मनुष्य में भी ऐसे ही तीन पल्य तक के आयु के विकल्प पूर्ण करता है।

पुनश्च देवगति में... अब देवगति में भी मिनिमम आयु कितनी है? *श्रोता: १०००० वर्ष की।* १०००० वर्ष की। कहां की है? *श्रोता: भवनत्रिक की।* भवनवासी या व्यंतर की। ज्योतिषि की नहीं, ज्योतिषि में पल्य का आठवां भाग मिनिमम आयु है। तो यहां पर भवनवासी और व्यंतरों में मनुष्य भी जन्म ले सकते हैं तिर्यंच संज्ञी, असंज्ञी पंचेन्द्रिय भी जन्म ले सकते हैं। तो १०००० वर्ष की देवायु लेकर वहां उत्पन्न हुआ, फिर वहां देव से तो देव में नहीं जायेगा, वहां से मनुष्य, तिर्यंच में आ जायेगा। तिर्यंच में कहां जा सकता है? एकेन्द्रिय में जा सकता है। भवनत्रिक और सौधर्म-ईशान के जो जीव हैं, वहां के देव, वे तो मरकर एकेन्द्रिय में जा सकते हैं। एकेन्द्रिय में जाकर वहां असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल बिता सकते हैं। क्योंकि देव मरकर बादर पर्याप्त एकेन्द्रिय में चले जायेंगे, जलकायिक में या पृथ्वीकायिक में या प्रत्येक वनस्पतिकायिक में जा सकते हैं – निगोद में नहीं जायेंगे परंतु यहां जाकर इतने काल तक घूमकर फिर उसको १०००० वर्ष की देवायु के साथ जन्म लेना चाहिये। एकेन्द्रिय से तो वहां नहीं जा सकते, जैसे हमने नारकियों में देखा था वैसे एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीव देव में जन्म नहीं ले सकते।

मनुष्य जायेंगे, पर्याप्त मनुष्य या संज्ञी-असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच जायेंगे, यह छोटी आयु है इसलिये असंज्ञी को भी लिया। असंज्ञी पंचेन्द्रिय पल्य के असंख्यातवें भाग तक की देवायु या नरकायु बांध सकता है, उससे अधिक नहीं। उसके ऊपर की सारी आयु संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य बांधकर चले जायेंगे, यानी हमें देवायु भी बारबार इतनी, कितनी? १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार उतनी ही आयु लेकर देव में जन्म लेना है। वह तो स्टार्टिंग पॉइन्ट है जैसे हमने नरक में देखा था, ऐसे ही यहां देव में ले लेना। तो यहां देखो, **देवगति में नरकगति के समान १०००० वर्ष से लेकर** कहां तक लिया? **३१ सागर पूर्ण करता है।** क्यों, ३१ सागर ही क्यों लिया? *श्रोता: मिथ्यादृष्टि पांच परावर्तन*

करता है... मिथ्यादृष्टि जीव कहां तक कौनसे स्वर्ग तक जा सकता है उसकी बात है। नहीं समझे? ये सब जो परावर्तन कर रहे हैं वे तो मिथ्यादृष्टि जीव ही कर रहे हैं, सम्यक्त्व हो जायेगा तो वह तो अर्धपुद्गलपरावर्तन में मोक्ष चला जाता है। इसलिये परावर्तन करनेवाले जीव कौन हैं? तो मिथ्यादृष्टि हैं। सादि मिथ्यादृष्टि भी नहीं, अनादि मिथ्यादृष्टि क्योंकि सादि हो जाता है तो उसके परावर्तन समाप्त होने लगते हैं और वह अर्धपुद्गलपरावर्तन के अंदर-अंदर मोक्ष चला जाता ही है नियम से। इसलिये यहां जो जीव लिये हैं वे तो मिथ्यादृष्टि जीव लिये हैं, अनादि मिथ्यादृष्टि जीव लिये हैं।

तो वहां देव में बारंबार उत्पन्न हो रहे हैं तो १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार तो वहां उतनी ही आयु सहित उत्पन्न हुआ फिर १०००० वर्ष और एक समय, फिर १०००० वर्ष और दो समय, अब हरेक स्वर्ग की आयु गिन लो। यानी शुरुआत में भवनवासियों के, व्यंतरों के, बाद में ज्योतिषियों के भव करते-करते-करते साधिक पल्य हो जायें तो ऊपर सौधर्म-ईशान के वहां शुरू हो जायेगी आयु। वहां भी बढ़ते-बढ़ते-बढ़ते सौधर्म-ईशान की दो सागर या घातायुष्क की अपेक्षा ढाई सागर आयु हो जायेगी वहां। ऐसे बढ़ते-बढ़ते ऊपर के स्वर्गों में जन्म होना चाहिये – आयु एक-एक समय से बढ़ना चाहिये, तो एक-एक समय से बढ़ती हुयी आयु के साथ वहां जन्म लेना कितनी रेअर-रेअर पॉसिबिलिटीज़ होती हैं। अधिक आयु भी लेकर जा सकता है और कम आयु लेकर भी जा सकता है, उतनी ही विशिष्ट आयु लेकर वहां जन्म होना चाहिये। नीचे के देवों में गया फिर ऊपर कहां तक जा सकता है? *श्रोता: नौ ग्रैवेयकों में...* नौ ग्रैवेयक यानी किसी ग्रैवेयक में जाने के लिये नियम क्या है? मिथ्यादृष्टि भले ही जावे परंतु उसका द्रव्यलिंग होना चाहिये। मिथ्यात्व अवस्था में द्रव्यलिंग परफेक्ट होवे तो ही वहां जा सकता है। इतनी ही कंडिशन नहीं है, उस मनुष्य के तीन उत्तम संहनन होंगे तो ही जायेगा, सभी संहननवाले वहां ऊपर नहीं जाते। नीचे के संहननवाले ऊपर के देवों में उत्पन्न नहीं होते, उनके भी संहनन के नियम हैं। अभी हमारे पंचमकाल के जो छठे संहननवाले जीव हैं, वे लांतव-कापिष्ठ तक जा सकते हैं वहां पर, उससे ऊपर नहीं जायेंगे। यह संहनन का नियम देवों में जन्म लेने की अपेक्षा से भी है। तो ग्रैवेयकों में कौन उत्पन्न होंगे? तो जो द्रव्यलिंगी हैं, उत्तम संहननवाले हैं और जब आयु बंध रही थी तब उन्हें शुक्लेलेश्या में वहां की आयु बंधनी चाहिये, वह भी एक्झॅक्ट उतनी ही चाहिये। २२ सागर प्लस एक समय, प्लस दो

समय, प्लस तीन समय। जब-जब ग्रैवेयक में जायेंगे तब वहां से मरकर मनुष्य में ही जन्म होगा, ग्रैवेयक से तो तिर्यंच में जाते नहीं है। सहस्रार के ऊपर जब कभी जन्म होगा, सहस्रार की आयु कितनी है? सहस्रार में साधिक १८ सागर आयु है यानी १८ सागर से ऊपर के देवों में जब-जब जन्म हुआ है तब-तब मरकर वह मनुष्य में ही जन्मा है। तो मनुष्य में जन्मे तो फिर ग्रैवेयक में जाय ऐसा तो नहीं होगा बारंबार। ग्रैवेयकों में भी जन्म लेने के लिये लगातार कितनी बार होगा? मेरे ख्याल से दो ही बार होगा। यानी वहां पर भी यह लिमिटेशन आ जाती है।

यानी मनुष्य भी कौनसे मनुष्य जायेंगे वहां पर? चौथा काल जहां है, क्योंकि चौथे काल में ही उत्कृष्ट संहननवाले जीव होंगे, मनुष्य होंगे और वे भी द्रव्यलिंगी मुनि होकर वहां जा सकते हैं और वह भी शुक्ललेश्या में वहां की आयु का बंध होगा तो ही जा सकते हैं। यानी यह कंडिशन हर बार कितनी रेअर हो जाती है। तो जब कभी वह ग्रैवेयक में उत्पन्न हुआ तब वहां से फिर मनुष्य हुआ तो मनुष्य होकर तत्काल वहां पर नहीं जायेगा। वहां पर जायेगा भी बाय चान्स तो इतनी आयु लेकर नहीं जायेगा, हीनाधिक लेकर जायेगा। यदि पीतलेश्या में आयु का बंध करेगा तो नीचे के देवों की आयु बांधकर वहां चला जायेगा। द्रव्यलिंगी हो गये तो ऊपर ही जायेंगे सब, यह जरूरी नहीं है। कौन जा सकता है उसके नियम है, वह जाता ही है ऐसी कोई बात नहीं है। ख्याल में आती है न बात! अभी और भी इसकी चर्चा करेंगे मगर कल करेंगे। अपना अभी यहां समय होने को आया है। यहां एक प्रश्न आया है। *प्रश्न: स्त्री पर्याय में नरकायु बांधे तो संहनन इस भव का गिना, आयु अगले भव की बंधी – संहनन इस भव का आयु या गति अगले भव की बंधेगी?* नारकियों के, देवों के और एकेन्द्रियों के संहनन नहीं होते, संहनन तो यहीं मनुष्य और द्वीन्द्रियादि तिर्यंचों के होते हैं। ऐसे ये संहनन के नियम देव में, नरक में जाने के लिये है। बाकी चर्चा कल करेंगे हम, अभी रुकते हैं यहां पर।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

३१. भवपरावर्तन – ३

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की कुछ चर्चा कर रहे हैं। यहां व्यवहारकाल को किसतरह से नापा जाता है उसकी चर्चा चल रही है। आपको याद होगा हमने छह प्रकार के काल देखे थे, कि भूल गये? बहुत दिन हो गये न! तो हमने कौनसे छह प्रकार देखे थे, याद है न? हां? *सभी श्रोता: गुणस्थितिकाल।* गुणस्थितिकाल, *सभी श्रोता: भवस्थितिकाल।* भवस्थितिकाल, *सभी श्रोता: कर्मस्थितिकाल।* कर्मस्थितिकाल, *सभी श्रोता: कायस्थितिकाल।* कायस्थितिकाल, *सभी श्रोता: उपपादकाल।* उपपादकाल और *सभी श्रोता: भावस्थितिकाल।* भावस्थितिकाल। इतने हमने देखे थे। उसकी चर्चा भी अपनी विस्तार से हुयी थी। तो कहीं-कहीं शब्द आते हैं अर्धपुद्गलपरावर्तन काल कहो या असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल कहो, तो यह परावर्तन क्या है और वह कैसे गिनना? तो ये जो पांच प्रकार के परावर्तन हैं – यह संसारी जीव अनादि से जन्म-मरण, जन्म-मरण, जन्म-मरण करते-करते आज इस मनुष्यपर्याय में आया है तो उसने अनादि से आज तक कितना काल बिताया है इसका हम थोड़ासा यहां नाप समझने जा रहे हैं। तो वह काल नापने के लिये परावर्तन का यूनिट बनाकर उस यूनिट से हम नापेंगे।

पांच परावर्तन के नाम इसप्रकार हैं – द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन और भावपरावर्तन। इनमें से सबसे छोटा काल है पुद्गलपरावर्तन यानी द्रव्यपरावर्तन का, फिर भी वह अनंतकाल है, वह कैसा अनंत है उसको भी हमने देखा था। परंतु इससे भी अनंतगुणा काल क्षेत्रपरावर्तन का होता है, उसको हमने दो पद्धति से नापा था – स्वक्षेत्रपरावर्तन और परक्षेत्रपरावर्तन। फिर उसके बाद कालपरावर्तन की बात अपनी चली। कालपरावर्तन में भी हमने देखा था कि एक कल्पकाल जो २० कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है तो उत्सर्पिणी के पहले समय में किसीने जन्म धारण किया, अपनी आयु भोगकर मरा, जन्म-मरण करते-करते उस उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी का पूरा काल बीत जाने पर २० कोड़ाकोड़ी सागर पूरे होते हैं फिर नयी दूसरी उत्सर्पिणी के दूसरे समय में जब जन्म होगा तब उसको गिनना, नहीं होगा तो फिर एक और कल्पकाल बीत जायेगा। इसकी तो हमने विस्तार से चर्चा की थी – इसतरह से जन्म का कम्प्लीट सायकल पूरा होने के बाद, उसके पश्चात् एक-एक समय में क्रम से जब-जब मरण होगा तब गिनना, अक्रम से होगा

उसको गिनना नहीं परंतु उसका काल गिनना। इसतरह से जब ये बातें पूरी होती हैं तब एक कालपरावर्तन हो जाता है। उसके बाद अभी हमने यह भवपरावर्तन क्या है उसको देखना प्रारंभ किया है। उसमें तो नरक के भव, तिर्यंच के भव, मनुष्य के भव और देव के भव, एक के बाद एक भव का परावर्तन पूरा करके फिर अन्य भव में यहां गिनना चालू करना है। अन्य भवों में तो जायेगा ही जायेगा। ऐसा भी हो सकता है एक बार नरक में जाकर आया और अन्य तीन भवों में ही भटकता रहा और एकेन्द्रिय में चला गया। त्रस में आया भी तो हर बार त्रस की उत्कृष्ट स्थिति २००० सागर मिले ही ऐसा नहीं है। यानी इस त्रसपर्याय में एक ही नरक भव मिला यह भी हो सकता है या एक भी नरकभव नहीं मिला यह भी हो सकता है। २००० सागर की त्रस की उत्कृष्ट स्थिति में पृथक्त्व सौ सागर यानी ८००-९०० सागर तक वह नरक में गया ही नहीं, मात्र देव, मनुष्य, तिर्यंच के ही भव करता रहा ऐसे हो सकता है। इसको कहते हैं त्रसपर्याय में नरकायु का अंतर। अब कौनसी पर्याय में अधिक से अधिक कितना अंतर पड़ सकता है इन कथनों से अपने बहुतसे शास्त्र भरे पड़े हैं। अभी यह आपको बताने से तो आपको याद नहीं रहेगा, ख्याल में नहीं आयेगा परंतु कौनसी पर्याय कितने काल के बाद लौटकर आयेगी ही आयेगी नियम से, इसके भी नियम हैं और लंबे काल तक नहीं भी मिले इसके भी नियम हैं।

ऐसी बात है कि जो एकेन्द्रिय में चला जाता है और वहां असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल बिताता है, वहां मनुष्यायु, देवायु और नरकायु इन तीनों में से किसी आयु का बंध नहीं होगा उसे। वहां तिर्यंचायु ही बांधता रहेगा। गति की बात नहीं है, देखो गतिनामकर्म अलग है और आयु अलग है। एकेन्द्रिय जीव देवगति और नरकगति को कभी नहीं बांधेगा परंतु मनुष्यगति का तो वह हर अंतर्मुहूर्त में पलट-पलटकर बंध करता रहता है यानी मनुष्यगति या तिर्यंचगति बांधता ही रहेगा। हां, पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि - मनुष्य या तिर्यंच जीव हर अंतर्मुहूर्त में चारों गतियों का बंध तो अलट पलट कर करता ही रहता है, परंतु जो आयु बंधेगी उस गति में चला जायेगा। एकेन्द्रिय जीव मनुष्यायु या तिर्यंचायु बांधकर उसमें चला जायेगा। गति तो जो कुछ बंधती रहती है परंतु जो आयु बंधती है उसमें जाता ही है। जब हम कहते हैं असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक कोई जीव एकेन्द्रिय पर्याय में भटकता है परंतु वहां पर भी वह हर अंतर्मुहूर्त में मनुष्यगति, तिर्यंचगति नामकर्म पलट-पलटकर बांधता रहता है। परंतु जब आयु बांधने का अवसर आता है तो तिर्यंचायु का ही

बंध करता है। यानी मनुष्यगति बांधी नहीं थी ऐसा नहीं है, हर अंतर्मुहूर्त में बांध रहा है। हां, केवल अग्निकायिक और वायुकायिक जीव मनुष्यगति नहीं बांधते। परंतु अन्य सभी जीव, निगोद भी, यानी नित्यनिगोदवाले भी, हर अंतर्मुहूर्त में मनुष्यगति का बंध कर रहे हैं परंतु जब-जब आयु बांधेगे तो तिर्यंचायु का ही बंध करेंगे। इसलिये उसी पर्याय में इतने लंबे काल तक वे भटक रहे हैं।

श्रोता: किसीके अभी गति का बंध होगा तो लगातार एक अंतर्मुहूर्त तक ही होगा?

एक अंतर्मुहूर्त तक ही होता है यह नियम है। एकेन्द्रिय की बात है इसलिये हमने वहां मनुष्यगति और तिर्यंचगति की बात कही। अब हम यहां पर्याप्त मिथ्यादृष्टि मनुष्य या तिर्यंच पंचेन्द्रिय की बात करेंगे वह चारों ही गतियों का ऑल्टरनेटली बंध करता ही रहेगा नियम से। हर अंतर्मुहूर्त में लौट-लौटकर उसको कभी नरकगति भी बंधेगी, कभी देवगति भी बंधेगी, कभी मनुष्यगति भी बंधेगी और कभी तिर्यंचगति भी बंधेगी। कोई ना कोई गति तो बंधती ही है हर समय। आयु तो कभी-कभी बंधती है जैसे वह त्रिभाग में बंधती है हमने बहुत बार देखा था। जिस समय आयु का बंध हो रहा है उस समय भी उस पर्टिक्युलर गति का बंध भी हो रहा है परंतु इस आयुकर्म के कारण वह कहां जायेगा यह निश्चित होता है और वह कितनी आयु भोगेगा वह भी उसी समय निश्चित होता है क्योंकि उतने काल की आयु बांधी। हम यहां कह रहे हैं न एक-एक समय से बढ़ती हुयी आयु किसीने धारण की। धारण की यानी उसने बांधी है तभी तो वह धारण करेगा और उसके वैसे एक्झॅक्ट परिणाम होने चाहिये कि उतनी वह आयु बांधे। ख्याल में आती है न बात इसमें?

एक-एक समय से बढ़ती हुयी आयु धारण करके अभी हमने कहां से शुरुआत की थी, तो नरक से। उसने १०००० वर्ष की नरकायु बांधकर नरक में प्रवेश किया यानी नारकी हुआ। १०००० वर्ष वहां बीत गये। वहां से निकला तिर्यंच या मनुष्य हुआ, हो सकता है दोबारा वहां गया तो १०००० वर्ष की ही आयु लेकर जाना चाहिये, यह हमारी कंडिशन है। ऐसा कितनी बार करना है? तो १०००० वर्ष के जितने समय हैं, अरे आवली में इतने असंख्यात-असंख्यात समय हैं तो १०००० वर्ष में कितने होंगे? उतनी बार १०००० वर्ष की आयु लेकर वहां नरक में जन्म होना चाहिये। उसके बाद १०००० वर्ष और एक समय, फिर १०००० वर्ष और दो समय, बीच में अन्य कितनी ही

पर्याय धारण करेगा। नरक की भी आयु धारण करेगा परंतु अधिक आयु होगी तो उसको गिनना नहीं।

मान लेते हैं १०००० वर्ष के बाद एक-एक समय से बढ़ते-बढ़ते उसे ११००० वर्ष की आयु प्राप्त हो गयी, फिर जाकर उसने १०००० वर्ष की नरकायु बांधी तो क्या फायदा? फायदा यानी वह टाइम तो गिनना है, उसका क्रम नहीं गिनना। हो सकता है बीच में ३३ सागर की नरकायु बांधेगा कभी २२ सागर की नरकायु बांधेगा तो सागरों की आयु हो सकती है, एक-एक समय के डिफरन्स से कुछ भी आयु बांध सकता है। एक्झॅक्ट उतनी ही आयु बांधना यह तो रेअर बात होगी, परंतु ऐसा भी जब असंख्यात बार होता है यानी उसके तो कितनी बार वह एकेन्द्रियादि पर्याय में जाकर आयेगा। बीच-बीच में कितनी बार तो वह असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तो एकेन्द्रियों में तिर्यंचों में भटकेगा तब जाकर लौटकर त्रस हो जायेगा क्योंकि त्रस में भी द्वीन्द्रियादि होंगे तो नरकगति, नरकायु नहीं बांधते। एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीवों को ना देवगति, देवायु बंधती है ना नरकगति, नरकायु बंधती है यानी उसको संज्ञी-असंज्ञी तिर्यंच होना पडेगा या मनुष्य होना पडेगा तो वह नरक में जा सकता है। परंतु हमारी कंडिशन तो विशिष्ट आयु बांधकर जाने की है।

तो ये बातें और रेअर-रेअर होती चली जाती हैं और एक-एक समय, देखो समय कितना सूक्ष्म है, १०००० वर्ष के जितने समय हैं, उतनी बार, उतनी ही आयु प्राप्त करने में ही कितना अनंतानंतकाल चला जायेगा। फिर एक समय अधिक, फिर दो समय अधिक, मॅक्झिमम तो हमने देखा न ३३ सागर; तो एक-एक-एक-एक समय से बढ़ते हुये कितने उसमें भेद हो जाते हैं और इतनी बार वहां नरक में जाना है तो बीच में अनंत-अनंतकाल अन्य-अन्य पर्यायों में भटक कर ही जाना पड़ेगा उसको। अक्रम से नरकायु की अन्य स्थिति बांधकर नरक में भी तो कितनी बार जायेगा और ऐसा भी नहीं है कि २००० सागर में वह नरक के बहुत सारे भव करेगा – दो-चार-पांच हजार ऐसा भी नहीं है। समझ में आती है न यह बात, यह बात ख्याल में लेने जैसी है। इसतरह क्रम से एक-एक समय से बढ़ती हुयी नरकायु के साथ उत्पन्न होते होते पूरे ३३ सागर की नरकायु के साथ वह नरक में उत्पन्न हुआ। उसके बाद यानी नरकभव के बाद हम तिर्यंचभव की बात

करेंगे। उसके पश्चात् जब तिर्यंच में जघन्य आयु के साथ उत्पन्न होगा तब से तिर्यंच भवपरावर्तन गिनना शुरू होगा क्योंकि वह सातवें नरक का नारकी मरकर कहां उत्पन्न होगा तो संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच में उत्पन्न होगा। उसके पश्चात् उसको मिनिमम आयु के साथ तिर्यंच में उत्पन्न होना है जो लब्धिअपर्याप्त का भव है। तो उतनी जघन्य आयु लेकर वहां तिर्यंच में उत्पन्न हुआ। उस जघन्य आयु का जो अंतर्मुहूर्त प्रमाण काल है, उसके जितने समय हैं उतनी बार वैसी ही लब्धिअपर्याप्त की आयु लेकर तिर्यंचों में जन्म होना चाहिये। पद्धति तो यही है हमारी, फिर एक समय अधिक आयु, फिर दो समय अधिक आयु, फिर तीन समय अधिक आयु। अब वह तिर्यंचों में कौनसी पर्यायों में जन्म लेता है उससे कुछ मतलब नहीं है, यहां तो आयु कितनी लेकर जन्मा है उससे मतलब है।

यानी एक-एक भव की एक-एक समय से बढ़ती हुयी आयु को गिनना है। बीच में अन्य भव में अन्य-अन्य पर्याय में चला जायेगा, कभी देव होगा कभी नारकी होगा कभी मनुष्य होगा कभी अन्य अधिक आयुवाला तिर्यंच होगा तो उसका समय, उसका काल तो गिनना परंतु हमारे अनुक्रम में उसको नहीं गिनना। तो यह कर्मभूमि के ही १ करोड़ पूर्व तक के एक-एक समय से बढ़ते-बढ़ते कितने सारे व्हेरिएशन्स हो जायेंगे। उसके बाद भोगभूमि के भव लेना है। अब भोगभूमि की आयु का बंध करने जैसे परिणाम तो नहीं होंगे सबके यानी वे किसके होंगे तो संज्ञी पंचेन्द्रियों के होंगे, मनुष्य या तिर्यंच के। वह भी मिथ्यादृष्टि अवस्था चल रही है। वे भी कैसे हैं तो करोड़ पूर्व प्लस एक समय, प्लस दो समय, प्लस तीन समय – करोड़ पूर्व समझते हैं न? एक करोड़ पूर्व में कितने वर्ष होते हैं? *श्रोता: ७० फिर ५६...* फिर आगे क्या? ७० लाख ५६ हजार करोड़ वर्ष वह एक पूर्व है। ७० लाख ५६ हजार करोड़ वर्षों का एक पूर्व ऐसे १ पूर्व, ३ पूर्व, ४ पूर्व, १० पूर्व, लाख पूर्व, ऐसे? करोड़ पूर्व। १ पूर्व मतलब ८४ लाख वर्ष × ८४ लाख वर्ष। देखो, ८४ लाख वर्ष मल्टिप्लाइड बाय ८४ लाख वर्ष इज ईक्वल टु १ पूर्व। उसीका यह उत्तर है ७० लाख ५६ हजार करोड़ वर्ष।

श्रोता: गति के अनुसार आयु बंधती है या आयु के अनुसार गति बंधती है? गति यह नामकर्म का भेद है और वह निरंतर बंधती रहती है। हर समय में गति बंधती है और आयु कभी-कभी बंधती है। जब आयु का बंध हो रहा है तब भी गति तो बंध ही रही है। हां, वहां ऐसे परिणाम होंगे कि अगर नरकायु बांध रहा है तो उस समय नरकगति का ही बंध कर

रहा है। ऐसा नहीं होगा कि नरकायु बांध रहा है और उसके साथ मनुष्यगति बांध रहा है। उस समय के परिणामों के कारण नरकायु के साथ नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी भी बंध रही है। न गति के कारण आयु बंधती है और न आयु के कारण गति बंधती है, दोनों मूलप्रकृति ही अलग-अलग हैं। गति यह नामकर्म का भेद है और आयुकर्म भिन्न है।

श्रोता: एक बार आयु बंधने के बाद वही गति फिर उस भव में बंधेगी? बंध भी सकती है और नहीं भी बंध सकती। आपका प्रश्न है एक बार आयु का बंध हुआ, हम श्रेणिक राजा को बुलाते हैं, उन्होंने नरकायु का बंध किया। नरकायु का बंध करने के बाद वे मिथ्यादृष्टि थे तो क्या कंटिन्युअसलि नरकगति बांध रहे थे? तो कहते हैं नहीं। नरकायु का बंध होने के पश्चात् भी मिथ्यादृष्टि थे तब तक पलट-पलट कर चारों गति बांध रहे थे। जब सम्यग्दर्शन हुआ तो क्या कर रहे थे? देवगति, निरंतर देवगति बांध रहे थे। कब तक? मरण के समय तक। क्षायिक सम्यग्दृष्टि थे न! मरण के समय तक देवगति बांध रहे थे और गये कहां पर? नरक में गये, नरक में जाने पर कौनसी गति बांध रहे हैं अभी? मनुष्यगति। नारकी जीव दो ही गति बांध सकता है परंतु ये सम्यग्दृष्टि नारकी हैं तो हर समय मनुष्यगति बांध रहे हैं। अब वहां से निकलेंगे माता के गर्भ में आयेंगे तो क्या बांधेंगे? देवगति। कब तक? आठवें गुणस्थान तक, बाद में जाकर उसका बंधना बंद हो जायेगा।

तो जब सम्यग्दृष्टि हुये तो देवगति बांध रहे थे, नरक में गये तो मनुष्यगति बांध रहे हैं, फिर मनुष्य सम्यग्दृष्टि होने पर देवगति बांधेंगे, आठवें गुणस्थान तक बांधेंगे तो आप कहेंगे फिर क्या फायदा इतना सब बांधकर? उदय तो मनुष्यगति का है और बांध रहे हैं देवगति। हां उसके नियम हैं कि जिस गति का उदय है उसरूप वे एक-एक समयवाले शेष गतिनामकर्म के निषेक थिउक्क संक्रमण होकर उदय में आते हैं। उसकी भी कर्म की थिअरी अपनी हो गयी है, अब हम यहां आगे बढ़ रहे हैं।

श्रोता: एक प्रश्न है। भवपरावर्तन में आपने चार गति का परावर्तन बताया उसमें कौनसे गति का काल अधिक होगा? कौनसी गति का अधिक समय होगा यह आपका प्रश्न है। आपको नरक की लगती है क्योंकि उसकी ३३ सागर तक है – १०००० वर्ष से लेकर ३३ सागर। परंतु यहां हम अंतर्मुहूर्त से शुरू करते हैं और तीन पल्य तक पहुंचते हैं। यह भी बात है कि केवल इसकी बात नहीं है कंटिन्युएशन में, बीच-बीच में

अन्य पर्यायें भी धारण कर रहे हैं तो इसके अनुसार भी वहां यथायोग्य जो कुछ डिफरन्स पड़ेगा। *श्रोता: सबसे अधिक काल एकेन्द्रिय में निकालेगा न?* हां, एकेन्द्रिय में निकालता है और बाद में फिर नरक में जायेगा क्योंकि हमको नरक के गिनने हैं परंतु बीच-बीच में एकेन्द्रिय में जायेगा और तिर्यंचगति गिननी है तो एकेन्द्रिय के भव शुरुआत में तो ले ही सकते हैं हम लब्धिअपर्याप्तों के। ये ही प्रश्न था न कि लब्धिअपर्याप्त जीव के अंतर्मुहूर्त के ही क्यों गिना, अन्य तिर्यंचों की जघन्य आयु को क्यों शुरू नहीं किया। तिर्यंचों में सबसे जघन्य आयु लब्धिअपर्याप्त की ही होती है – इसलिये वहां से शुरू करेंगे।

श्रोता: २००० सागर की त्रसपर्याय में टू थर्ड देव में और वन थर्ड नरक में बिताता है ऐसा है? देखो ऐसा आपका प्रश्न है कि २००० सागर में टू थर्ड (२/३) देव में बिताता है, वन थर्ड (१/३) नरक में बिताता है ऐसा है क्या? तो अलग-अलग पद्धति से उसका कॅल्क्युलेशन करके बताया गया है कि कौनसे देव में कितनी पर्याय कर सकते हैं ऐसे। सिद्धांतकोश में भी है, धवला में भी उसकी चर्चा आती है, परंतु ऐसा भी है न कि २००० सागर में से पृथक्त्व सौ सागर तक एक भी नरक का भव न करते हुये भी हो सकता है। २००० सागर में से पृथक्त्व सौ सागर तक एक भी देव का भव नहीं किया, बस मनुष्यों के तिर्यंचों के, नारकियों के किये ऐसा भी हो सकता है। उसमें बहुत सारे कॉम्बिनेशन परम्युटेशन्स हैं। *श्रोता: उसको नरक में जाना ही पड़े ऐसा नहीं है?* २००० सागर त्रस में रहते हुये पृथक्त्व सौ सागर के बाद वह लौटकर नरक में जायेगा ही जायेगा, पृथक्त्व सौ सागर के बाद लौटकर दुबारा देव में भी जायेगा ही जायेगा। वैसे ही त्रस में रहते हुये पृथक्त्व सौ सागर काल में लौटकर तिर्यंच में जन्म लेगा ही। परंतु त्रस में रहते हुये २००० सागर काल में एक भी मनुष्यभव न मिले यह बात हो सकती है। परंतु तिर्यंचों के भव तो करने ही पड़ेंगे। मनुष्य के भव किये बिना वह तिर्यंच और देव और नारकी के भव भी कर सकता है। अब उसमें भी एक-एक वेद में कितना काल बिता सकता है उसकी भी चर्चा आती है यानी इसके अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स हो सकते हैं इसलिये उसकी अपेक्षा से हमें सोचना चाहिये। चलो अभी अपना विषय चलेगा। क्योंकि अलग प्रश्न जो इससे रिलेटेड नहीं है अभी नहीं पूछना। अभी हमारी भावपरावर्तन की बात बाकी है, भावपरावर्तन अकेले १०, १२, १५ घंटे ले इतना बड़ा विषय है, हम उसको शॉर्ट में समझना चाहते हैं।

अभी तो भवपरावर्तन की बात चलेगी। तो यह भवपरावर्तन में हमने नरक की बात देखी थी फिर तिर्यंच की बात देखी, तिर्यंच जैसे ही मनुष्य में है। आप कहेंगे तिर्यंच का जल्दी होगा कि मनुष्य का जल्दी होगा? बीच में वह कहां जाता है, कौनसे भव करता है उस पर निर्भर है। मनुष्य के ऐसे भी भव कम बार मिलेंगे। मनुष्य में भी लब्धिअपर्याप्त की जघन्य आयु से शुरू करके फिर बढ़ते-बढ़ते, एक-एक समय से बढ़ते-बढ़ते मनुष्यायु के सभी विकल्प जो कर्मभूमि के होंगे फिर भोगभूमि के होंगे। जब तक तीन पल्य की आयुवाला मनुष्यभव पूरा नहीं करता है तब तक उसके मनुष्यभवों को हम इसी पद्धति से गिनते रहेंगे। बीच में उसके नारकी के कितने भव हो जायेंगे, देवों के कितने भव हो जायेंगे, फिर तिर्यंचों में चला जायेगा, कितनी बार बीच-बीच में असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक एकेन्द्रिय में जायेगा। इसलिये वह हमें लगता है अंतर्मुहूर्त से तीन पल्य परंतु वह भी काल बहुत बड़ा है। उसमें भी मनुष्य के भव जो हम गिनते हैं न उसमें सारे भेद हमने देखे थे मनुष्यों के कौन-कौनसे हैं – कभी भोगभूमि में भी जायेगा, कभी कुभोगभूमि में भी जायेगा, ऐसा नहीं है कि छोटी-छोटी आयु ही पहली करनी है, बीच में ही तीन पल्य की आयु करके आयेगा। इसको हम ऐसा नहीं गिन सकते कि किसी एक भव में कितना काल बितायेगा।

बड़ेवाले भव पहले किये हैं परंतु उनको गिनना नहीं है यानी इतना ही गिनना ऐसा जो हम कहते हैं कि इसको इतना ही गिनना है या सागरों में लंबा गिनना है उसकी अपेक्षा तो ले नहीं सकते। चारों गतियों का मिलकर जो पूरा बड़ा काल होगा उसको हम एक भवपरावर्तन कहेंगे। ये तिर्यंच, मनुष्य और देव की बात करेंगे, कल हम पढ़ रहे थे ६४५ पेज पर। हमने तिर्यंच के भी देखे, फिर मनुष्य के भी देखे, अभी देवगति के देखते हैं। **पुनश्च देवगति में नरकगति के समान १०००० वर्ष से लेकर ३१ सागर पूर्ण करता है,** यहां तो इतना ही लिखा है। देवगति की कम से कम आयु है १०००० वर्ष, जैसे हमने नरक में देखा था वैसे ही देवों की भी सबसे जघन्य आयु १०००० वर्ष की होती है। देवों की अधिक से अधिक आयु होती तो है ३३ सागर की परंतु यहां तो मिथ्यादृष्टि जीव परिभ्रमण कर रहा है, मिथ्यादृष्टि जीव देवगति में कहां तक जन्म ले सकता है? नौवें ग्रैवेयक तक। १०००० वर्ष से लेकर नौवें ग्रैवेयक की जो उत्कृष्ट आयु है ३१ सागर की, परंतु ग्रैवेयकों में उत्पन्न होनेवाले जीवों के लिये कंडिशन क्या होती है? कि वे

द्रव्यलिंगी मुनि होने चाहिये, उनके तीन उत्तम संहनन में से कोई संहनन होना चाहिये यानी वज्रवृषभनाराचसंहनन, वज्रनाराचसंहनन और नाराचसंहनन इनमें से कोई संहनन होना चाहिये और वे ऊपरवाले तीन संहनन चतुर्थकाल में होंगे। भोगभूमि में वज्रवृषभनाराचसंहनन ही होता है पुरुषों को भी और स्त्रियों को भी, परंतु वहां से कोई सौधर्म-ईशान के ऊपर के स्वर्गों में जाते नहीं हैं और सौधर्म-ईशान में भी सम्यग्दृष्टि ही जाते हैं, मिथ्यादृष्टि तो भवनत्रिक में चले जायेंगे। तो यह जरा हम १०००० वर्ष के आयुवालों की बात देखते हैं – १०००० वर्ष की आयु या तो व्यंतरों में होती है या भवनवासियों में होती है। व्यंतरों की आयु देखते हैं जैन भूगोल में ८४ पेज पर देखना, ऊपर से तीसरी लाइन देखो।

नीचोपपाद आदि वानव्यंतरों की, व्यंतर को ही वानव्यंतर ऐसा भी कहते हैं। **नीचोपपाद आदि वानव्यंतरों की आयु इसप्रकार है – नीचोपपादों की १०००० वर्ष**, ये नीचोपपाद क्या होते हैं? तो ८३ पृष्ठ निकालना। यहां तो यह बताया है कि व्यंतर जो हैं उनके रहने के निवास हैं, ठिकाने हैं वे तीन प्रकार के होते हैं। जैसे भवनवासियों के भवन हैं वैसे व्यंतरों के भी भवन होते हैं। वे हमने देखे थे, कहां होते हैं व्यंतरों के भवन? वे खरभाग में होते हैं और पंकभाग में राक्षस जाति के व्यंतर रहते हैं, बाकी जो अन्य व्यंतरों के नगर, उनके भी नगर होते हैं जो अनेक द्वीप और समुद्रों में पाये जाते हैं। मध्यलोक के जो अनेक द्वीप और समुद्र हैं उन पर उनके नगर होते हैं उन नगरों को भवनपुर कहते हैं और तीसरा उनका प्रकार है वे आवास होते हैं। तो ये आवास क्या होते हैं? तो देखो ८३ पृष्ठ पर नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ दूसरी लाइन, मिला सबको? **जमीन या समुद्र से एक हाथ की ऊंचाई से लेकर लाख योजन की ऊंचाई तक व्यंतरों के रहने के जो स्थान हैं उन्हें आवास कहते हैं।** यानी उसके नीचे कोई बेस या सपोर्ट नहीं है ऐसे उनके वहां आवास पाये जाते हैं। **इनमें रहनेवाले व्यंतरों के नाम इसप्रकार हैं** जो अभी नीचोपपाद क्या है उसको हम देख रहे थे – **पृथ्वी से एक हाथ ऊपर क्षेत्र में जिनके आवास हैं वे नीचोपपाद हैं, उनके ऊपर १०००० हाथ ऊपर के क्षेत्र में दिग्वासी हैं** यह उनका नाम है, **उनके ऊपर १०००० हाथ ऊंचे क्षेत्र में अंतरनिवासी हैं, उनके ऊपर १०००० हाथ ऊंचे क्षेत्र में कुष्मांड हैं, उनके ऊपर २०००० हाथ ऊंचे क्षेत्र में उत्पन्न नामके व्यंतर हैं** उनका नाम ही उत्पन्न है। **इससे आगे ऊपर ऊपर बीस-बीस हजार हाथ के अंतराल से क्रम से अनुत्पन्न, प्रमाणक, गंध, महागंध, भुजंग, प्रीतिक,**

आकाशोत्पन्न व्यंतर हैं। इनके आवास हमें दिखायी नहीं देते तथा इनके लिये किसी आधार की जरूरत नहीं हैं।

अब इनकी आयु का प्रमाण आगे बताया है। **नीचोपपादों की १०००० वर्ष,** अभी हमने इनके नाम पढ़े थे – **दिग्वासियों की २०००० वर्ष, अंतरनिवासियों की ३०००० वर्ष, कुष्मांडों की ४०००० वर्ष, उत्पन्नों की ५०००० वर्ष, अनुत्पन्नों की ६०००० वर्ष, प्रमाणकों की ७०००० वर्ष, गंधों की ८०००० वर्ष, महागंधों की ८४००० वर्ष, भुजंगों की पल्य का आठवां भाग, प्रीतिकों की पल्य का चौथा भाग और आकाशोत्पन्नों की आधा पल्य आयु है** और भी उनके अनेक अलग-अलग प्रकार हैं उनमें भी उनकी आयु अलग-अलग होती है।

जो व्यंतरों के अनेक भेद हैं अब हम उसके डिटेल में नहीं जायेंगे। हमारी बात क्या हो रही है? देवों में कहां से शुरुआत करना है? तो १०००० वर्ष की आयु सहित देव में उत्पन्न हुआ। कितनी बार उत्पन्न होना चाहिये? १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार। वह जब-जब होगा तब क्रम में गिनना। बिना क्रम से कहीं पर भी चला जायेगा, भले ग्रैवेयक में भी क्यों न जावे, तो उसको क्रम में नहीं गिनना, काल में गिनना। बीच में अन्यत्र जाये कहीं भी, मिथ्यादृष्टि है तो मिथ्यात्व अवस्था में जहां तक जा सकता है जायेगा। हमने ३१ सागर की बात देखी। वहां तक की कुछ भी देव की आयु उसको मिल सकती है और देवों में आना ही चाहिये ऐसी भी कोई बात नहीं है, बीच में तो एकेन्द्रिय में जायेगा, कभी नरकों में जायेगा, कभी मनुष्यों में जायेगा। जब-जब देव में आयेगा तब १०००० वर्ष की आयु चाहिये। इसतरह से जब १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार १०००० वर्ष की आयु सहित देव होगा, तब जाकर आगे क्या करना? एक समय अधिकवाली आयु के साथ देव में उत्पन्न होना है, दो समय अधिक आयु के साथ देव में उत्पन्न होना है। इन सभी प्रकारों में कितनी बार घूमेगा वह। भवनवासियों के और व्यंतरों के इतने सारे प्रकार हैं फिर ऊपर-ऊपर एक-एक समय से बढ़ते हुये सभी विकल्प हो जायेंगे तो कहते हैं अंत में जाकर कहां उत्पन्न होना है उसको? अंतिम ग्रैवेयक में ३१ सागर की उत्कृष्ट आयु सहित। एक के ऊपर एक ऐसे कुल नौ ग्रैवेयक हैं, सबसे नीचे के ग्रैवेयक की जघन्य आयु कितनी है, मालूम है? २२ सागर प्लस एक समय। यह कभी

उसने द्रव्यलिंगी होकर देवायु बांधी है। कितनी बांधी? २२ सागर और एक समय। नीचे की भी बांधी थी यानी नीचे के स्वर्गों की भी उसने आयु बांधी थी, हम क्रम-क्रम से आये थे वहां तक। यहां तो ग्रैवेयक की बात चल रही है।

तो वहां ग्रैवेयक में उत्पन्न हुआ, तो उसके लिये कंडिशन क्या है? द्रव्यलिंगी होने चाहिये, उत्तम संहननवाले चाहिये, जहां कहीं चौथे काल में से आये हैं, वे ही जायेंगे क्योंकि चौथे काल में ही उत्तम संहनन हो सकते हैं। ग्रैवेयक से मरकर कहां जायेंगे? मनुष्य होंगे कि तिर्यंच होंगे? मनुष्य ही होंगे। आनत-प्राणत, आरण-अच्युत स्वर्ग और ग्रैवेयकवाले जो देव हैं, वे शुक्ललेश्यावाले देव हैं, वे नियम से मरकर मनुष्य में ही आते हैं। अब वे मनुष्य हो गये तो दुबारा कितनी बार ग्रैवेयक में जा सकते हैं? उसकी भी लिमिट है न! अभी मेरे सामने आंकड़े नहीं हैं पर लगातार दो बार वहां उत्पन्न होंगे, ज्यादा तो नहीं हो सकते। यानी जैसे हमने नरक में देखा था न कि पहले नरक के आठ बार होते हैं, नीचे-नीचे के नरकों में लगातार उत्पन्न होना कम बार होता है, वैसे देवों में नीचे के देवों में – कम आयुवाले देवों में लगातार बहुत बार उत्पन्न हो सकते हैं, ऊपर-ऊपर के देवों में कम बार उत्पन्न होते हैं। ऐसे ग्रैवेयकों में जानेवाले लगातार जो मनुष्य से आकर फिर ग्रैवेयक गया फिर मनुष्य हुआ फिर ग्रैवेयक गया ऐसा तो बहुत कम बार होगा। दो बार होगा, ज्यादा नहीं होगा, तो फिर एक समय अधिकवाली आयु से उत्पन्न होगा। कभी हो सकता है त्रसपर्याय मिली और मनुष्यपर्याय मिली ही नहीं। तो मनुष्यपर्याय नहीं मिली तो देव में-ग्रैवेयक में कैसे जायेगा?

तिर्यंच जीव मरकर स्वर्गों में कहां तक जा सकते हैं, मिथ्यादृष्टि तिर्यंच? *श्रोता: सहस्रार तक।* हां, सहस्रार तक जाते हैं। सम्यग्दृष्टि तिर्यंच पांचवें गुणस्थानवाले मरकर सोलहवें स्वर्ग तक जा सकते हैं। परंतु यहां मिथ्यात्व अवस्था की बात चल रही है यानी तिर्यंच में से भी जो देव होते हैं वे कहां तक जायेंगे? तो सहस्रार तक जायेंगे। सहस्रार की आयु कितनी है? १८ सागर। तो १८ सागर तक के विकल्प के साथ यानी सहस्रार तक के देवों में तिर्यंचों में से भी जा सकते हैं और मनुष्यों में से भी जा सकते हैं। जो १८ सागर के आगे के सारे भेद हैं यानी १८ सागर एक समय, दो समय, तीन समय, नौवें ग्रैवेयक तक के सभी देवायु के भेद सहित वहां जानेवाले तो मनुष्य ही होंगे और वह भी शुक्ललेश्या में आयु बंधनी चाहिये वहां की, तभी वहां तक जा सकते हैं। *श्रोता: ग्रैवेयक में?* ग्रैवेयक

का बंध तो द्रव्यलिंगी को ही होगा पर उसके नीचे के भी यानी इस सहस्रार के ऊपर के सभी विकल्प हैं वहां मनुष्य में से ही जायेंगे और मनुष्यपर्याय मिलना इतना दुर्लभ है और वहां तो शुक्ललेश्यावाले हैं तो शुक्ललेश्या में उत्पन्न होने के लिये शुक्ललेश्या में ही उनकी आयु का बंध होना चाहिये और एक्झॅक्ट उतनी आयु का बंध होना चाहिये। यानी भले तिर्यंच में से देव होना आसान है परंतु यहां कंडिशन जो शुक्ललेश्यावाले देवों में उत्पन्न होना है तो वहां मनुष्य में से ही जाना पड़ेगा और उसमें ऑर्डिनरि कोई भी मनुष्य नहीं जायेगा, वह भी व्रतों के साथ वगैरह-वगैरह उसकी कंडिशन लगा लेना। तो ग्रैवेयक में देव की एक आयु प्राप्त करके मनुष्य हुआ फिर दुबारा ग्रैवेयक में जाने के लिये, एक बार फिर जाने के लिये बीच में अनंतकाल जा सकता है और ऐसे एक-एक-एक-एक समय से बढ़ते हुये सागर यानी कितना बड़ा काल है! हो सकता है वह ग्रैवेयक में भी गया परंतु २२ सागर और एक समय के बदले उसने एकदम डायरेक्ट २५ सागर की आयु बांधी हो।

फिर कभी मनुष्य हुआ फिर जब-जब मनुष्य होगा तब क्या ग्रैवेयक के योग्य परिणाम होंगे क्या वे? द्रव्यलिंग यानी मुनिदीक्षा थोड़े ही धारण करेगा? वे परिणाम होना भी दुर्लभ है। ये आप पूछते हैं न बार बार कि 'मुनिव्रत धार अनंत बार ग्रैवेयक उपजायो, पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायो' – तो कोई कहते हैं यह तो किसी आचार्य ने नहीं कहा है। आचार्य ने नहीं कहा क्या? यह भवपरावर्तन किसने कहा है? भवपरावर्तन जो है तो उसमें यह अनंत बार घटित होता है कि नहीं होता है? क्योंकि हम कहते हैं कि एक परावर्तन किया, कौनसा? देवगति का परावर्तन किया उसमें कितनी बार वह ग्रैवेयक में – एक परावर्तन में कितनी बार ग्रैवेयक में चला जायेगा। २२ सागर और एक समय से लेकर ३१ सागर तक के एक-एक समय से लेकर जो भेद हैं वे कितने असंख्यातें हैं। इतनी बार ग्रैवेयकों में जाता है तो कंटिन्युएशन में एक ही समय से बढ़ती आयु के साथ तो नहीं जायेगा – कभी हीन, कभी अधिक, कभी हीन तो एक भवपरावर्तन में कितनी बार जायेगा? और ऐसे भवपरावर्तन इस जीव ने कितनी बार किये! अनंत बार, उससे क्या सिद्ध होता है? द्रव्यलिंग धारण करके अनंत बार गया है, मिथ्यादृष्टि के तो सिद्ध होता ही होता है। *श्रोता: ऐसा आप रेफरन्स निकाल दो, शास्त्र में किधर लिखा है?* शास्त्र पढ़ने की कला आनी चाहिये। जो-जो जीव आगम का आधार मांगते हैं उनको आगम कैसे पढ़ना यह मालूम होना चाहिये। बिना उसके उसको आगम का आधार मांगने का अधिकार नहीं है।

जब कहेंगे की कायस्थिति इतनी, तो आचार्य इतना ही कहेंगे कि कायस्थिति इतनी है उसका अर्थ ऐसा होता है, कायस्थिति क्या होती है यह हमें मालूम होना चाहिये। विशिष्ट पर्याय में रहने का जो उत्कृष्ट काल है भले वह वेद की बात हो गयी, या कोई अन्य की बात हो रही है। हम कहेंगे नपुंसकवेद में रहने का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन है। आप कहेंगे नपुंसकवेद में कैसे रहेगा? तो आपको यह मालूम होना चाहिये कि एकेन्द्रियों के तो नपुंसकवेद ही होता है। स्त्रीवेद की जो कायस्थिति है तो कहेंगे सौ पल्य पृथक्त्व। तो पृथक्त्व में क्या, पृथक्त्व का अर्थ जानना चाहिये। स्त्रीवेदी कौन कौनसी पर्याय में होते हैं वह जानना चाहिये – ये सब बातें आती हैं। उसमें तो पुरुषवेद में रहने का उत्कृष्ट काल जो उसकी कायस्थिति है सौ सागर पृथक्त्व। अब उसके अंदर फिर लगायेंगे की जो पुरुषपर्याय में आया है उसने एक बार तिर्यंचायु बांधी तो पुरुषवेदी जीवों में तिर्यंचायु का उत्कृष्ट अंतर कितना है? सौ सागर पृथक्त्व है, समझ में आता है?

कोई तिर्यंच हुआ, पुरुषवेदी हुआ यानी संज्ञी-असंज्ञी तिर्यंच ही पुरुषवेदी हो सकता है, चतुरिन्द्रिय तक के तो सभी नपुंसकवेदी हैं। उसने पहली आयु तिर्यंच की बांधी और तिर्यंच हुआ। अंतर का अर्थ क्या होता है? उस जीव ने फिर बहुत काल तक तिर्यंचायु बांधी ही नहीं और पुरुषवेदी है और तिर्यंचायु नहीं बांधेगा तो उसका उत्कृष्ट अंतर है सौ सागर पृथक्त्व। एक बार तिर्यंच में आया है, तिर्यंचायु बांधकर आया है, पुरुषवेदी हुआ है और वह लगातार पुरुषवेदी होगा यानी उसको कहां भटकना है? देव और मनुष्य, देव और मनुष्य क्योंकि नारकी सभी नपुंसकवेदी हैं। यानी सौ सागर पृथक्त्व काल तक देव और मनुष्यों के भव करता हुआ फिर पुरुषवेद का काल समाप्त होने के पहले पहले उसको तिर्यंचायु बांधकर तिर्यंच में आना है। क्योंकि हमें पुरुषवेद में तिर्यंचायु का उत्कृष्ट अंतर साबित करना है। तो सौ सागर पृथक्त्व काल तक करीबन ९०० सागर काल तक एक देव का और दो चार भव मनुष्यों के ऐसे करेगा इतने लंबे काल तक वह देव और मनुष्यों के ही भव करता रहेगा क्योंकि उसको पुरुषपर्याय में रहना है। तो हमें इसका अर्थ क्या है यह पहले भासित होना चाहिये।

यानी इस काल और अंतर के द्वारा बहुत सारी भ्रमणायें दूर होती हैं परंतु इसको कैसे पढ़ना यह हमें आना चाहिये। हमें तो फोन आते रहते हैं कि कहां लिखा है? कौनसे

पेज पर, इतना बता दो। परंतु वह पेज पढ़ोगे, निकालोगे परंतु उसका अर्थ ख्याल में आयेगा? वहां आता है की त्रसपर्याय में रहने का उत्कृष्ट काल है २००० सागर और त्रस के पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों के भव मिलाकर पूर्व कोटि पृथक्त्व अधिक २००० सागर होते हैं। तो ऐसा ही काउंट करते हैं देखो पूर्व कोटि पृथक्त्व लिखा है, ये मनुष्य के इतने भव हैं, तिर्यंच के इतने, बाकी ये देव के इतने और नारकी के – ऐसा नहीं है। उसका अर्थ कैसा ग्रहण करना है यह अलग बात है। उसके लिये थोड़ा अभ्यास चाहिये। यह बहुत कठिन बात नहीं है परंतु केवल वह पुस्तक पढ़ी और पेज निकाला और यहां उंगली रखी और उसका अर्थ ख्याल में नहीं आनेवाला है।

श्रोता : जो भव्य जीव नौवें ग्रैवेयक जानेवाला है उस बिचारे का उसमें क्या दोष है? सब बेचारों का यही दोष है जो ग्रैवेयक में गये हैं या नहीं गये हैं कि यह शरीर ही मैं हूं यह मानकर तो बैठा ही है, शास्त्र पढ़कर शरीर से मैं भिन्न हूं ऐसा कहता तो है परंतु जो राग से भिन्नता है वह उसे ख्याल में नहीं आती। उसने मुनिव्रत ऐसे ही अंगीकार नहीं किये हैं। जिनदेव संबंधी उसको भक्ति है, श्रद्धा है कहो और वह चाहता है कि मैं मोक्ष प्राप्त करूं परंतु केवल पढ़ने से, शब्दज्ञान से वह एहसास नहीं हुआ है कि राग से मैं भिन्न हूं। शुभक्रिया जो कर रहा है, शरीर की जो क्रिया हो रही है उसका स्वामी बनकर बैठा है कि मैं इसको कर सकता हूं, यह मेरे करने योग्य कार्य है। मैं ज्ञानमात्र हूं और मैं ज्ञानमय हूं ऐसी उसको प्रतीति नहीं है। यह जीव कितना ही उपसर्ग सहन करने की, उसको कंट्रोल करने की कोशिश करता है यानी वह कंट्रोलर बनकर बैठा है अपने भावों का और उसको सहन करने की शक्ति का। राग का मैं कर्ता हूं ऐसी उसकी मान्यता बनी हुयी है, राग का अकर्तापना उसका अभी प्रगट नहीं हुआ है। सभी जीवों की यही भूल है भले वे पुण्य करके, व्रत पालकर ग्रैवेयक में जावे या स्वच्छंदी होकर नरक में चले जावे, सबकी यही भूल है। शरीर से तो जुदा हूं ही, परंतु यह जो राग से यानी कि अपने में उठनेवाले मोह-रागद्वेष के परिणाम हैं, उनसे भी मेरा अस्तित्व भिन्न है ऐसी जब तक प्रतीति, अनुभूति नहीं होती तब तक यह भूल चलती ही रहती है। ऐसी प्रतीति, अनुभूति होना यह बहुत ही सरल बात है, और इतनी ही बात है और कुछ नहीं है उसमें...

श्रोता: तत्त्वनिर्णय नहीं है? हां, यह तो तत्त्वनिर्णय से ही भूल टलेगी और उसके लिये

बारंबार अभ्यास जरूरी है। क्यों अभ्यास बारंबार करना है? एक बार सुनने से भी हो सकता है कार्य, उसके लिये अंतर्मुहूर्त से ज्यादा समय नहीं लगता। परंतु यह जो हम बारबार तत्त्वविचार में उपयोग लगाते हैं क्योंकि यह भ्रमणा अभिप्राय में इतनी अधिक पड़ी हुयी है कि कुछ भी यानी शुभभाव करके भी मैं कुछ आगे बढ़ा हूं ऐसा अभिप्राय में चलता है। अभिप्राय की जो भूल है वह अपने को ही ढूंढ़कर निकालनी है। यह तो बारंबार स्वाध्याय का उपदेश इसलिये देते हैं क्योंकि अभ्यासपूर्वक ही तत्त्वनिर्णय होगा, किसी के कहने से तो नहीं होगा। ऐसा जरूरी नहीं कि सभीको इतने सालों का अभ्यास होना जरूरी है, यह मर्म एक बार ग्रहण करे और उसपर विचार करे तो हो जायेगा उसका कार्य। उसके लिये बहुत सारी बातें जरूरी नहीं हैं फिर भी हम कहते हैं, बेचारा इतना भटक रहा है। हम ही बेचारे हैं जो इतने काल से भटक रहे हैं। *श्रोता: ऐसी बातें चलती हैं कि अनंत बार मुनि होते हैं वे अभव्य ही होंगे भव्य नहीं होंगे?* नहीं-नहीं भव्य भी हो सकते हैं, भव्य तो नित्यनिगोद में भी पड़े हैं कि नहीं पड़े? भव्य जीव कितने ही नित्यनिगोद में पड़े हैं। जैसे भव्य जीव जब तक सम्यग्दृष्टि नहीं होते हैं तब तक तो उनका अभव्यों जैसा ही कार्य चल रहा है। उन्होंने भी अनंतकाल बिताया है, अनंत बार पाचों परावर्तन किये हैं। मैं तो कहूं वे एक बार भावलिंगी मुनि भी हो गये और बाय चान्स मिथ्यात्व में गये तो कितने काल तक रहेंगे? अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक और आखिर के भव में निकलेंगे। तो बीच में क्या वे मनुष्य नहीं हुये थे? मनुष्य होंगे बीच में और बाय चान्स वे भावलिंगीपना नहीं धारण करेंगे तो वहां पर भी द्रव्यलिंगी होकर जा सकते हैं कि नहीं जा सकते? क्योंकि वह भी अनंतकाल है। यानी वह एक बार भावलिंगी होनेपर... ऐसा है भावलिंगीपना बत्तीस बार आता है यानी वह छूट भी जाये तो उससे अधिक काल इस संसार में नहीं भटकते। एक बार सम्यग्दर्शन होने के बाद अर्धपुद्गलपरावर्तन काल में वह जीव नियम से मोक्ष प्राप्त करता ही है, तो इस अर्धपुद्गलपरावर्तन काल में कितनी बार सम्यक्त्व होकर छूट सकता है? तो कहते हैं पल्य के असंख्यातवें भाग बार। कितनी बार पांचवां गुणस्थान होकर छूट सकता है? पल्य के असंख्यातवें भाग बार। अनंतानुबंधी की विसंयोजना पल्य के असंख्यातवें भाग बार हो सकती है। उपशम श्रेणी चढ़कर उतरा है, यह चार बार हो सकता है।

हो सकता है कोई जीव प्रथम बार सम्यक्त्व प्राप्त करके, संयम धारण करके उपशम श्रेणी चढ़कर उतरा हो। वह जीव छठे गुणस्थान तक तो नियम से क्रम से आयेगा,

बाद में हो सकता है मिथ्यादृष्टि हुआ और एकेन्द्रियों में जाकर पड़ा है या किसी भी जीवसमास में जाकर पड़ा है मिथ्यात्व अवस्था में और अर्धपुद्गलपरावर्तन के अंत में वह फिर मनुष्य होकर, संयम धारण करके मोक्ष चला गया। प्रत्येक जीव को अर्धपुद्गलपरावर्तन काल बिताना ही पड़ेगा या ३२ बार भावलिंगी मुनि होना पड़े ऐसे कोई बात नहीं है, इसमें बहुत सारी पॉसिबिलिटीज़ हैं। हरेक द्रव्य का, हरेक जीवद्रव्य का अपनी पर्यायों का सुनिश्चित क्रम है वह उसके द्रव्य के अंदर अंतर्भूत है। कोई निमित्त नहीं मिला, इसलिये उसका कार्य अटक गया ऐसा कुछ नहीं है उसमें। इसका तो हमें निर्णय करना है कि प्रत्येक द्रव्य की पर्याय उसकी स्वयं की अपनी योग्यता से स्वसमय पर निश्चितरूप से होनेवाली ही है। तब निमित्त नहीं मिला तो क्या करेंगे? ऐसा उसमें कुछ भी नहीं है। तो कोई अनंत बार मुनिव्रत धारण करके ग्रैवेयक जाता है उसमें क्या नवाई-विशेषता है? कुछ भी नहीं है, यह हो सकता है। यह बात तो हम भवपरावर्तन के आधार से कह सकते हैं।

श्रोता: अभी जो आपने बताया कि भावलिंगपना धारण करके वह नियम से मोक्ष में जायेगा तो वह एक ही भव में ऐसा हो सकता है? जैसे की कोई एक भावलिंगी मुनिराज है वे बत्तीस बार गिरे और बत्तीस बार भावलिंगपना ग्रहण करे और मोक्ष में चले जाये? ऐसा लेना या बत्तीस भव लेना? कुछ भी हो सकता है, अधिक से अधिक बत्तीस की कंडिशन है यानी एक ही भव में बहुत बार हो सकता है।

अभी आगे हम देखेंगे, ये ग्रैवेयक क्या हैं? तो सोलह स्वर्गों के ऊपर नौ ग्रैवेयक हैं, एक-एक लेव्हल पर एक-एक ग्रैवेयक। यहां ऊपर लिखा है ८५ पेज पर **इन सोलह स्वर्गों के ऊपर नौ ग्रैवेयक हैं, उनके तीन-तीन के तीन ग्रुप्स हैं – नीचे के तीन अधस्तन ग्रैवेयक, मध्य के तीन मध्यम ग्रैवेयक और ऊपर के तीन उपरिम ग्रैवेयक कहलाते हैं। इन तीनों के प्रत्येक के तीन-तीन भेद हैं–अधो, मध्य और ऊर्ध्व। अधो अर्थात् अधस्तन-नीचे का और ऊर्ध्व अर्थात् उपरिम-ऊपर का।** अभी नीचे आना, यहां जो बीच में लिखा है न दोहा उसके ऊपर **आपने ग्रैवेयक का नाम बहुत बार सुना होगा, छहढाला में आता है – 'मुनिव्रत धार अनंत बार ग्रैवेयक उपजायो। पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायो।'**

तो ऐसा क्यों कहते हैं? यह तो हमने देखा न अभी, इसीकी तो चर्चा की। मिथ्यात्व

अवस्था में यदि कोई ग्रैवेयक जाता है तो मनुष्य ही जायेगा और वह भी द्रव्यलिंग जिसने यथोचित धारण किया है वही जायेगा। तो देखो यहां लिखा है, तीसरी लाइन में **जिनेन्द्र भगवान के आगम में जैसा मुनि का स्वरूप कहा है, जैसा अंतरंग स्वरूप और बाह्य आचरण कहा है, वैसा बाह्य आचरण तो यथोचित पालन करे किंतु अभी सम्यक्त्व हुआ नहीं है** ख्याल में आती है न बात? द्रव्यलिंगी यानी कोई गाली नहीं है, द्रव्यलिंगी भी उन्हींको कहते हैं, जो आगम के अनुसार अट्ठाईस मूलगुणों का यथोचित पालन करते हैं और श्रावक का यह कर्तव्य है – क्योंकि वह द्रव्यलिंगी है या भावलिंगी यह उसको बाहर से पता नहीं चल रहा है, उनके तो व्रतादि ही दिख रहे हैं। हम क्या देखते हैं? उनका बाहर से व्यवहार कैसा है, आचरण कैसा है; यदि वह आगमोचित है – तो श्रावक का कर्तव्य है कि उनको आहारदान आदि दें तथा उनका मुनि जैसा यथोचित विनय करें। **उनको मिथ्यात्व गुणस्थानवर्ती द्रव्यलिंगी मुनि कहते हैं। ये सच्चे द्रव्यलिंगी हैं। द्रव्यलिंग धारण किये बिना भावलिंगी नहीं हो सकते।**

पहले में पहले जब गृहस्थ अवस्था में से द्रव्यलिंग यानी यथोचित आगम के अनुसार मुनिदीक्षा धारण करेंगे, जब तक ध्यान अवस्था में उनको सातवां गुणस्थान प्राप्त नहीं होता तब तक उनको हम द्रव्यलिंगी ही कहेंगे और वहां से वे डायरेक्ट सातवें गुणस्थान में चले जायेंगे। फिर सातवें से छठे, छठे से सातवें चलेंगे क्योंकि कोई चौथे गुणस्थानवर्ती दीक्षा धारण करेंगे, कोई पांचवें गुणस्थानवर्ती करेंगे तो कोई पहले गुणस्थानवर्ती करेंगे। आगम में तो ऐसा आता है कि पहले गुणस्थान से दीक्षा धारण करके जो उपशम सम्यक्त्व के साथ सातवें में जाते हैं तो उसका अंतर कितना है? अंतर समझते हैं?

नाना जीवों की अपेक्षा अंतर उसका अर्थ है कोई न कोई जीव अधिक से अधिक कितने लंबे काल के बाद नियम से मुनि होगा ही होगा उपशम सम्यक्त्व के साथ? तो कहते हैं पन्द्रह दिन। पन्द्रह दिन में कोई न कोई जीव पहले गुणस्थान से उपशम सम्यक्त्व के साथ मुनि होगा ही होगा। पहले गुणस्थान से सात दिन में कोई न कोई जीव उपशम सम्यक्त्व के साथ चौथे गुणस्थानवर्ती होगा ही होगा। पहले गुणस्थान से पांचवें में उपशम सम्यक्त्व के साथ जानेवाला जीव चौदह दिन में होगा ही होगा, तो ये होते हैं अंतर। इससे क्या सिद्ध होता है? पहले से सातवें में जानेवाले इतने जीव हैं कि अधिक से अधिक अंतर

पड़ेगा तो पन्द्रह दिन में तो कोई जायेगा ही जायेगा। ये हमें पढ़ना आना चाहिये कि अंतर क्या होता है और काल क्या होता है। यदि इसका स्वरूप नहीं समझे तो आपके प्रश्न का उत्तर हम दे भी देंगे, तो भी बात समझ में नहीं आ सकती है। तो इसको जानना आवश्यक है और द्रव्यलिंगी कहने से एकदम कोई ॲलर्जी नहीं आने देना। परंतु अभी उस जीव को सम्यक्त्व नहीं हुआ है, उनको मुनिपना यानी छठा-सातवां गुणस्थान नहीं हुआ है उस अपेक्षा से तब तक हम उनको द्रव्यलिंगी कहेंगे और उनके भी ये छहों लेश्या, कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ललेश्या एक-एक अंतर्मुहूर्त में होती रहती हैं और ग्रैवेयक की आयु बांधनेवाले वे शुक्ललेश्या के काल में मध्यम परिणाम में जब देवायु बांधेंगे और वह भी एक्झॅक्ट उतनी आयु बांधने जैसे परिणाम होने चाहिये तब जाकर वे वहां उत्पन्न होंगे।

श्रोता: अभी कोई सच्चा द्रव्यलिंगी हो और ऊपर जाये तो कहां तक जा सकता है?

अभी तो हीन संहननवाले कहां तक जायेंगे? कापिष्ठ तक जायेंगे हमारे छठे संहननवाले। कौनसे संहननवाले जीव मरकर कौनसे स्वर्ग तक जाते हैं उसकी सारी जानकारी अपने शास्त्रों में है। अभी पंचमकाल के जो मुनिराज हैं, द्रव्यलिंगी की बात छोड़ो, भावलिंगी की ले लो न! कहां तक जायेंगे तो जैसा संहनन होगा वहां तक चले जायेंगे। अभी इस पंचम काल में नीचे के तीन संहनन पाये जाते हैं ऊपर के नहीं। तो कोई भी यहां का जीव द्रव्यलिंगी होकर भी या भावलिंगी होकर भी ग्रैवेयक में जा ही नहीं सकता। *श्रोता: कापिष्ठ तक जायेगा?* लांतव-कापिष्ठ तक जाते हैं छठे संहननवाले जीव। मैं आपको बताती हूं, जैन भूगोल, देखो यहां ११५ पेज पर नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ। यानी कौन जीव मरकर कौनसे देव में उत्पन्न होता है वहां की बात है। देखो, **कोई भी देव मरकर पुन: देवगति में जन्म नहीं लेता** यह बात तो सबको मालूम है। **नारकी भी मरकर देवों में जन्म नहीं लेते। फिर देवों में जन्म लेनेवाले मात्र मनुष्य और तिर्यंच ही शेष रहे।** उसमें भी कोई लब्धिअपर्याप्त मरकर देव नहीं होते, एकेन्द्रिय मरकर देव नहीं होते, द्वीन्द्रिय मरकर देव नहीं होते, त्रीन्द्रिय मरकर देव नहीं होते, चतुरिन्द्रिय मरकर देव नहीं होते तो कौन देव हो सकते हैं? संज्ञी या असंज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य तो संज्ञी पंचेन्द्रिय ही होते हैं, वे मरकर देव हो सकते हैं।

भोगभूमि के सभी तिर्यंच एवं मनुष्य मरकर नियम से देवगति में ही जन्म लेते

हैं। भोगभूमि के मिथ्यादृष्टि और सासादन भवनत्रिक में ही जाते हैं, ही लगाया है **और सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान में ही जाते हैं। उसके ऊपर के स्वर्गों में नहीं जा सकते। कुभोगभूमि के जीव मरकर भवनत्रिक में या कल्पवासिनी देवियों में जन्म लेते हैं। असंयत और देशसंयत मनुष्य यानी चौथे या पांचवें गुणस्थानवर्ती मनुष्य और तिर्यंच ऊपर सोलहवें अच्युत स्वर्ग तक जन्म ले सकते हैं। जो द्रव्य से जिनलिंग धारक हैं अर्थात् दिगंबर मुनिदीक्षा अंगीकार करके जो शास्त्रानुसार मुनि के संपूर्ण आचार पालते हैं उन्हें द्रव्यलिंगी कहते हैं। ऐसे द्रव्यलिंग के धारक जीव पहले, चौथे या पांचवें गुणस्थान में हो सकते हैं। यदि उन्हें मुनियोग्य वीतरागता अर्थात् तीन कषाय चौकड़ी का अभाव होता है तो उनके छठवां-सातवां आदि गुणस्थान होता है, उन्हें तो भावलिंगी मुनि कहते हैं। द्रव्यलिंग के ग्रहणपूर्वक ही भावलिंग प्रकट होता है, अन्यथा नहीं। मिथ्यात्व अवस्था में जिसने द्रव्यलिंग धारण किया है वह पुरुषार्थ से सीधा सातवां गुणस्थान प्राप्त करता है। पश्चात् छठवें में आकर छठवां-सातवां गुणस्थान होता रहता है।** अभी उसकी बात छोड़िये, अब कौनसे संहननवाले कहां तक जायेंगे उसकी बात करेंगे आगे, नीचे से छठी लाइन।

वहां भी कौनसे संहननवाले मनुष्य कौनसे स्वर्ग तक जन्म ले सकते हैं इसके नियम हैं। पहले संहननवाले अनुत्तर तक पहले संहननवाले यानी कि वज्रवृषभनाराच संहननवाले अनुत्तर तक, तक लगाया, तक का मतलब क्या है? वे नीचे जायेंगे कि नहीं जायेंगे? भवनवासी से लेकर अनुत्तर तक कहीं भी जायेंगे। **दूसरेवाले अनुदिश तक** वज्रनाराचवाले अनुदिश तक यानी वे अनुत्तर में नहीं जायेंगे यह उसका अर्थ होता है, पर नीचे के सभी स्वर्गों में जा सकते हैं। **तीसरेवाले नौवें ग्रैवेयक तक** उसके ऊपर नहीं जायेंगे। यानी पहले तीनों ही संहननवाले ग्रैवेयक में जा सकते हैं। **चौथेवाले अच्युत तक** यानी सोलहवें स्वर्ग तक, **पांचवेंवाले सहस्रार तक** सहस्रार यानी बारहवां, और **छठवेंवाले कापिष्ठ तक जन्म ले सकते हैं।** ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लांतव-कापिष्ठ। **इसका यह अर्थ हुआ की तीन उत्तम संहनन के धारी मुनि ही ग्रैवेयकों में जा सकते हैं। नीचे के हीन संहननधारी भावलिंगी मुनि भी वहां जन्म नहीं ले सकते।** अभी अन्यमति मिथ्यादृष्टि भी कहां तक जा सकते हैं उनकी भी सारी बातें यहां लिखी हैं। यहां पर आगे पढ़ते हैं –

श्रोता: कोई सम्यग्दृष्टि अविरत रहे, चौथे गुणस्थानवाला या पांचवें गुणस्थानवाला और वह जिनलिंग धारण करे तो कितने समय बाद सातवें गुणस्थान की प्राप्ति होगी?

मुनिदीक्षा लेने के बाद? दीक्षा लेने के बाद ध्यानमग्न हुआ, उसके अंतर्मुहूर्त में सातवें गुणस्थान की प्राप्ति हो सकती है। *श्रोता: क्या उसको नियम से सातवां गुणस्थान ही प्राप्त होगा?* चौथा गुणस्थान भी रह सकता है। द्रव्यलिंग धारण करने पर इमीजिएट्लि उसको सातवां गुणस्थान प्रगट हो ही जावे यह कोई जरूरी नहीं है। यानी व्रत धारण किये इसलिये हुआ ऐसा नहीं है। जितनी अंतरंग में स्थिरता है उसके अनुसार वह ऊपर चढ़ेगा। ऐसा नहीं है कि बाह्यव्रत धारण किये इसलिये उसको ऊपर के गुणस्थान में ही जाना पड़ेगा। यानी मुनिदीक्षा अंगीकार की है और ऐसा जो द्रव्यलिंगी जो पहले गुणस्थानवाला है, उसका इतना ही पुरुषार्थ हो कि वह चौथे में ही जावे। ऐसा भी हो सके न! व्रत धारण किये उसको सातवें में ही जाना पड़े ऐसी कोई बात नहीं है। यह तो उसका जितना पुरुषार्थ है, जितनी विशुद्धि हो उतनी वह सारी प्रोसेस होगी उसकी जो कोई होती है। यानी पंचलब्धि के प्रकरण में करणलब्धि में जो कोई प्रोसेस होते हैं वे उस जीव की जितनी विशुद्धि होती है उसके अनुसार होते हैं, उन कर्मों में भी वैसे व्हेरिएशन्स होंगे और उनको विशिष्ट गुणस्थान प्राप्त होगा। क्योंकि व्रतों से सातवें गुणस्थान में ही जाता है ऐसा मानेंगे तो फिर तो वही हो गया न कि बाह्यव्रतों के कारण वह सातवें गुणस्थान में गया, तो ऐसा नहीं है। मुनि के गुणस्थान बाह्यव्रतों के बिना नहीं होंगे परंतु जहां गुणस्थानों का ऊपर चढ़ना होगा वहां तो अंतरंग में जो उस जीव की जितनी स्थिरता है, जितनी विशुद्धि है उसके अनुसार ऊपर चढ़ना होता है। यानी कार्य तो सब अंतरंग में स्थिरता से ही होनेवाला है।

श्रोता: उसके ऐसे प्रश्न बना सकते हैं कि चौथे में अगर रहेगा तो कितने काल तक रहेगा? चौथे में अगर रहेगा तो आप मनुष्य की बात कर रहे हैं या किसकी बात कर रहे हैं? *श्रोता: पर्टिक्युलर चौथे गुणस्थान में ही रहेगा तो कितने समय तक रहेगा?* चौथे गुणस्थान में रहने का उत्कृष्ट काल साधिक ३३ सागर है। *श्रोता: ये ऊपर के* संहनन कैसे मिलते हैं? देखो, कोई भी संहनन कैसे मिलते हैं? जिस संहनन के उदय में जन्म से जो संहनन होता है वही संहनन उस भव में कायम रहता है। संहनन यह नामकर्म का एक भेद है, जीव उस कर्म का बंध करता है। जब देवगति बंधेगी तो उसके साथ संहनन नहीं बंधेगा

और मनुष्यगति या तिर्यंचगति बंधती है तो संहनन बंधेगा। तो कौनसा बंधेगा? तो ऑल्टरनेटली कोई ना कोई तो बंधेगा। जब एकेन्द्रिय जाति बांधता है तो संहनन नहीं बांधता है, देवगति बांधता है तो संहनन का बंध नहीं है, नरकगति के साथ संहनन का बंध नहीं है। मनुष्यगति और तिर्यंचगति के बंध के साथ, एकेन्द्रियों के बिना, यानी द्वीन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक का बंध हो रहा है तो उसके साथ उसको संहनन का बंध होगा। द्वीन्द्रियजाति से चतुरिन्द्रियजाति के साथ छठे संहनन का ही बंध होता है। पंचेन्द्रिय जाति के साथ छहों संहनन में से किसी संहनन का बंध होगा। जिस किसी गति का बंध होता है उसके अनुसार बाकी यथायोग्य कर्म भी वहां सहजरूप से बंधते हैं।

श्रोता: चौथे गुणस्थान का काल साधिक ३३ सागर कैसे?

हां, आप कहते हैं कि चौथे गुणस्थान का काल साधिक ३३ सागर कैसे? तो हम देखते हैं। ३३ सागरवाले देवों में कौन उत्पन्न होगा तो भावलिंगी मुनिराज। भावलिंगी मुनिराज ही उस आयु का बंध करते हैं। तो जाने के पहले वे संयमी थे, वहां जाने के बाद उनको चौथा गुणस्थान प्राप्त हुआ, ३३ सागर तक चौथे में रहे। वहां से माता के गर्भ में आ गये, तो चौथे गुणस्थान में आये। आठवें वर्ष तक तो गुणस्थान नहीं पलटेगा, अधिक से अधिक लंबा खेंचना है तो, जब संयम धारण करेंगे तब जाकर चौथे गुणस्थान से वे सातवें में जायेंगे और जो पूरी ३३ सागर की सर्वार्थसिद्धि के देव की आयु भोगकर यहां आये हैं वे नियम से उसी भव में मोक्ष जायेंगे ही जायेंगे। पूरे करोड़ पूर्व तक वे चौथे में रहेंगे ऐसा नहीं बन सकता। परंतु जब तक वे संयम धारण नहीं करेंगे तब तक उनको कहेंगे कि वे चौथे में हैं। उस सारे काल को हम साधिक ३३ सागर में गिनेंगे। आप कहेंगे वेदक सम्यक्त्व के साथ कोई ६६ सागर तक रहता है परंतु ६६ सागर तक कोई मुनि हुये बिना नहीं रह सकता। जो ६६ सागर तक वेदक सम्यग्दृष्टि रहता है वह चौथे, पांचवें, छठे, सातवें का काल मिलकर ६६ सागर होता है। अकेले चौथे, पांचवें में है तो ४२ सागर से ज्यादा नहीं हो सकते। अकेले चौथे में है तो ३३ सागर से थोड़ा ज्यादा यानी साधिक ३३ सागर ही रहेगा। ये सारे नियम अपने ग्रंथों में भरे पड़े हैं। हां उसका अर्थ कैसे लगाना ये थोड़ी हमें मालूमात हो जावे तो समझने में सरल है। *श्रोता: सर्वार्थसिद्धि में क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही जा सकता है ऐसा बोल रहे हैं आप?* अरे नहीं-नहीं! सर्वार्थसिद्धि में क्षायिक सम्यग्दृष्टि

की कंडिशन नहीं है। सर्वार्थसिद्धि में जानेवाले द्वितीयोपशम से जायेंगे कि नहीं जायेंगे? और जाने के बाद वेदक सम्यग्दृष्टि हो ही जायेंगे वे। वेदक सम्यक्त्व के साथ भी कोई सर्वार्थसिद्धि में उत्पन्न हो सकते हैं।

श्रोता: कोई ऐसी प्ररूपणा चल रही है की अनंत बार द्रव्यलिंग धारण करना यह अभव्य के लिये है और जो भव्य होते हैं वे बत्तीस बार में मोक्ष चले ही जाते हैं। तो मेरे भाईसाहब भी चाह रहे हैं कि १८ साल से वे दिक्षा ले तो वह मुनि ने कह दिया कि आप गृहस्थ होकर रहो। देखो, कहां क्या प्ररूपणा चल रही है, कहां क्या चलता है इससे हमें कोई प्रयोजन नहीं है, हमें तो आगमानुसार चलना है। हम आगे कैसे बढ़े इसके बारे में हमें देखना है। क्योंकि बाहर कहां-कहां ठिगडे लगायेंगे, क्या क्या करेंगे? और उन्हें देख देखकर हमें विकल्प करने की, कषायित होने की जरूरत नहीं है, यह तो ऐसा चलने ही वाला है और ऐसा नहीं कि किसी निमित्त के कारण वह होनेवाला है। जिसकी जैसी उपादान योग्यता है उसको वैसे ही निमित्त मिलेंगे।

आपकी योग्यता है तो आपको गुरुदेवश्री का उपदेश मिला है, क्यों? पर वह उपदेश मिला है इसलिये हम उसके कारण ज्ञान पा रहे हैं यह भी नहीं है। ज्ञान हो रहा है अपने कारण से, अपने उपादान से ही कार्य होगा। हमें ऐसा लगता है हमें आज तक कोई निमित्त क्यों नहीं मिला? अरेरे! हमारा इतना काल बेकार गया, हमें यह पहले मिलता तो? कैसे मिलता? पर्याय की योग्यता उसी समय होगी जब वह समझने की योग्यता है। कोई ऐसा भी कहते हैं कि अभी हमारा काल नहीं आया है, जभी आयेगा तभी हम स्वाध्याय करेंगे – वह तो स्वच्छंद है। क्योंकि तब वे क्रमबद्ध की दुहाई देते हैं कि हमारा अभी काल नहीं आया है। तो आपका काल किसमें आया है? समझ में आया? वे तो आगम का कोई वाक्य या शब्द लेकर हमको बताना चाहते हैं कि हमारे क्रमबद्ध में अभी नहीं हैं। यह क्रमबद्ध उन्होंने सही जाना ही नहीं है। अब इसके लिये क्या है आगम भरे पड़े हैं, अभी उसको कुछ बहाने बनाना है और संसार में परिभ्रमण करना है यही हम समझेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

३२. भावपरावर्तन – १

षट्खण्डागम के आधार से कालअनुयोगद्वार की चर्चा करते हुये, हम पांच प्रकार के जो परावर्तन हैं – जो यह जीव अनादि से करते आया है उसकी हम चर्चा कर रहे हैं। द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन और भवपरावर्तन की बात हमने देखी। अब भावपरावर्तन क्या है, उसको भी हम थोड़ी देर में देखेंगे। भवपरावर्तन में हमने एक-एक भव की बात ॲट अ टाइम ली है, एक बार वह नरक भवपरावर्तन यानी कि नरकभव के आयु के सभी विकल्प, सभी विकल्प कहने से १०००० वर्ष की आयुसहित पहली बार उत्पन्न हुआ, फिर १०००० वर्ष के जितने समय हैं उतनी बार १०००० वर्ष की आयुसहित ही वहां उत्पन्न होना चाहिये, बीच में अन्यत्र जितना काल भटकेगा उस सब काल को तो गिनना है और भव तो तभी गिनना जब १०००० वर्ष की आयुसहित उत्पन्न हो तब।

यही पद्धति है। अभी उसके बाद क्रम कौनसा लेना? १०००० वर्ष प्लस एक समय, प्लस दो समय, प्लस तीन समय ऐसे क्रम से करते-करते बीच में अन्यत्र देवों के भव तो कितने होंगे, मनुष्यों के कितने होंगे, तिर्यंचों के कितने – अनंत-अनंत तो हो जायेंगे तब जाकर ३३ सागर की आयुवाला भव धारण करेगा क्रम से, तब उसके पश्चात् तिर्यंचगति के भव गिनना शुरू करना। उसकी भी लब्धिअपर्याप्त की जघन्य से जघन्य आयु से लेकर भोगभूमि की तीन पल्य तक की उत्कृष्ट आयु तक इसी पद्धति से जब-जब क्रम से भव करेंगे तब गिनना। उसके बाद मनुष्यगति में भी ऐसे ही क्रम से जघन्य आयु लब्धिअपर्याप्त की और उत्कृष्ट आयु भोगभूमि की तीन पल्य की, वह जब क्रम से पूरी हो जायेगी तब जाकर देवगति के भव गिनना शुरू करना। वहां पर भी कम से कम आयु १०००० वर्ष की है और यहां तो अधिक से अधिक आयु ३१ सागर की है। यह ३१ सागर की आयु पूरी होने के बाद फिर नरक में जब जन्म धारण करेगा १०००० वर्ष की आयुसहित, क्योंकि फिर पहले पॉइंट पर आना है। इसलिये वह जब वहां जन्म धारण करेगा क्योंकि ३१ सागर के बाद तो मनुष्य होगा, मनुष्य के बाद जहां कहीं भी उत्पन्न होगा; वह जीव फिर जब १०००० वर्ष की आयु सहित नरक में उत्पन्न होगा तब उसका वह पूरा ही, चारों गति संबंधी मिलकर एक भवपरावर्तन समाप्त होता है। जिसके लिये

अनंत-अनंतकाल चला जाता है यानी कालपरावर्तन में जितना काल लगता है उससे भी अनंतगुणा काल भवपरावर्तन पूर्ण करने के लिये लगता है।

इसके बाद भावपरावर्तन की बात आयेगी, भाव यानी यहां जीवों के भावों की बात चल रही है, तो उसमें मुख्यत: चार बातों की चर्चा करेंगे। अब हम पढ़ेंगे जीवकाण्ड पुस्तक २ में पृष्ठ संख्या है ६४६। **आगे भावपरावर्तन कहते हैं**, यहां इनमें किस-किसके कॉम्बिनेशन्स देखने हैं उनकी हम चर्चा करेंगे। जीवों के भाव यानी बंध के योग्य जो भाव हैं उनकी बात यहां चलेगी। कहते हैं **योगस्थान, अनुभागबंधअध्यवसायस्थान** देखो इसको अध्यवसायस्थान भी कहेंगे, अध्यवसानस्थान भी कहेंगे। दोनों ही नाम आते हैं, दोनों का अर्थ एक ही है। योगस्थान – स्थान यानी व्हेरिएशन्स, स्थान यानी भेद, अलग-अलग योग यानी मिनिमम योग, फिर थोड़ा अधिक योग, फिर थोड़ा अधिक योग, फिर थोड़ा अधिक योग एक ही जीव ऐसे अन्य-अन्य समयों में जो हीनाधिक योग होते हैं, तो यहां क्रम से जो आगे-आगेवाले भेद होंगे तो उसको कहेंगे योगस्थान। तो **योगस्थान, अनुभागबंधअध्यवसायस्थान**, पहले हम नाम पढ़ेंगे फिर उनके एक-एक के अर्थ देखेंगे **कषायअध्यवसायस्थान और स्थितिस्थान, इन चारों के परावर्तन से भावपरावर्तन होता है।**

हम अपनी भाषा में पहले समझेंगे फिर पुस्तक में से भी पढ़ेंगे। योग – हमें मालूम है कि योग क्या है, आत्मप्रदेशों के कंपन को योग कहते हैं। योग के कारण क्या होता है? हमने पहले देखा था – कर्म और नोकर्म के परमाणु जीव ग्रहण करता है, यानी योग क्या है? उसमें भी द्रव्ययोग और भावयोग दो प्रकार हैं। हमेशा हम सात तत्त्वों में द्रव्यआस्रव, द्रव्यबंध, या भावआस्रव, भावबंध आदि की चर्चा करते हैं तब भावबंध आदि कहेंगे तो जीव पर घटित करते हैं और द्रव्यबंध आदि कहेंगे तो कर्म पर घटित करते हैं, यहां ऐसा नहीं है। द्रव्ययोग यानी आत्मप्रदेशों का कंपन और भावयोग यानी कर्म और नोकर्म को आकर्षण करने की आत्मा की शक्ति। योग की जो शक्ति है उसको भावयोग कहेंगे और ॲक्चुअलि आत्मप्रदेशों का जो कंपन है उसको द्रव्ययोग कहेंगे।

योग तो आत्मा का विभाव परिणाम है और जहां विभाव होता है वहां किसी कर्म का उदय उसमें निमित्त होता है। तो यह आत्मप्रदेशों का कंपन क्यों होता है, उसमें कौनसा कर्म

निमित्त है? *श्रोता: नामकर्म।* नामकर्म, नामकर्म इसलिये कहा क्योंकि सयोगकेवली गुणस्थान तक तो योग होता है और अयोगकेवली गुणस्थान में योग नहीं है, कंपन नहीं है। है न? यानी ऐसे कोई कर्म होने चाहिये जिसका उदय सयोगी तक था, अयोगी में उसका उदय नहीं है। तो केवल नामकर्म कहने से नहीं चलेगा, क्या कहते हैं आप? *श्रोता: चारों घातिकर्म।* नहीं, अरिहंतों के घातिकर्म तो होते ही नहीं और घातिकर्मों से तो योग होता ही नहीं हैं। *श्रोता: मन, वचन, काय।* जब मन, वचन, काय नहीं है तो भी विग्रहगति में भी योग तो है, कार्माण काययोग भले हो परंतु योग है। *श्रोता: शरीर नामकर्म।* शरीर नामकर्म। अपना बहुत बार विषय हो चुका है न यहां। शरीर नामकर्म के उदय से योग होता है यानी आत्मप्रदेशों का कंपन होता है उसमें वह शक्ति होती है, भावयोग कहेंगे पहले तो और फिर वह शक्ति होती है तो आत्मा मनोवर्गणा का, वचनवर्गणा का, कायवर्गणा का अवलंबन करता है, तो उसको हम कहेंगे मनोयोग हुआ, वचनयोग हुआ, काययोग हुआ।

कौनसे पुराने कर्मों के उदय में यह योग होता है उसको हम देखते हैं, क्योंकि देखो जहां-जहां विभाव है वहां किसी कर्म का उदय पाया जाता है उसको हम निमित्त कहेंगे। कर्मों का उदय जीव को योग उत्पन्न नहीं कराता है, क्योंकि जो कोई कार्य जीव में होता है, जीव की अपनी उपादान की योग्यता से होता है और कर्म की जो अवस्था है वह कर्म में अपनी योग्यता से होती है। जीव की हर पर्याय का कर्ता जीव स्वयं है और पुद्गल की-जड़ की हर पर्याय का कर्ता जड़ है, समयसार में पढ़ा है न हमने? ३०८ से ३११ गाथा का विषय यही है न? तो यहां तो हमें क्या देखना है कि जीव में विभाव परिणाम हो रहा है तो हम निमित्त की तरफ से देखेंगे तो पुराने कर्मों का उदय, कौन से कर्मों का? शरीर नामकर्म का। जैसे औदारिकशरीर नामकर्म के उदय में ऐसा योग उत्पन्न होता है कि जीव औदारिकशरीर संबंधी आहारवर्गणाओं को ग्रहण करता है। वैक्रियिकशरीर नामकर्म के उदय में ऐसा योग होता है कि वह वैक्रियिकशरीर संबंधी आहारवर्गणाओं को ग्रहण करता है। ऐसे ही आहारकशरीर नामकर्म के उदय में आहारकशरीर संबंधी आहारवर्गणाओं को ग्रहण करता है, तेजसशरीर नामकर्म के उदय में तेजसवर्गणाओं को ग्रहण करता है, कार्माणशरीर नामकर्म के उदय में कार्माणवर्गणाओं को ग्रहण करता है। तो इनका उदय कब तक है? तो तेरहवें के अंत तक है। औदारिकशरीर, तेजसशरीर और कार्माणशरीर नामकर्म का उदय तेरहवें गुणस्थान में है तो वहां हम उसको सयोगकेवली कहते हैं।

तो यह नक्की हुआ कि योग होता है उसके कारण कर्म और नोकर्म का आकर्षण होता है, आकर्षण यानी इन कर्म और नोकर्म के परमाणुओं का आना। वे कहीं बाहर से नहीं आते हैं वह तो हमने पहले नक्की किया था। आत्मप्रदेशों में स्थित यानी जहां आत्मप्रदेश हैं उसी क्षेत्र में – आकाशद्रव्य के उन्हीं प्रदेशों में स्थित ऐसे जो पुद्गल हैं, उनमें से जो कर्म या नोकर्म होने के योग्य हैं वे उनरूप हो जाते हैं तो उसको हम कहेंगे कि जीव ने उन्हें ग्रहण किया। तो योग के कारण क्या होता है तो प्रदेशबंध और प्रकृतिबंध होता है। हमने देखा है कि बंध होता है तो उसको चार प्रकार से हम कहेंगे। जो प्रकृति बंधती है उसको कहेंगे प्रकृतिबंध, हर समय में सात मूलप्रकृति तो बंध ही रही हैं, आयु कभी-कभी बंधती है। सात या आठ कर्म जो मूलप्रकृति हैं उनके उत्तरप्रकृतियों के जो अलग-अलग भेद हैं उसके विस्तार में हमें अभी नहीं जाना है, हमें तो केवल यहां क्या बंधता है बस उसको देखना है। तो योग के निमित्त से प्रकृति बंधती है अर्थात् विशिष्ट प्रकृति में वे कार्माणवर्गणायें परिणमित हो जाती हैं।

प्रदेशबंध होता है उसका अर्थ है नंबर ऑफ परमाणु यानी कितनी संख्या में परमाणु बंधते हैं उसको कहेंगे प्रदेशबंध। आत्मप्रदेशों के साथ बंधने को प्रदेशबंध नहीं कहते। आत्मप्रदेशों के साथ बंधने को प्रदेशबंध कहते हैं ऐसी प्ररूपणा हमने कहीं-कहीं सुनी है परंतु वह बराबर नहीं है। प्रदेशबंध का अर्थ क्या है? परमाणुओं की संख्या कितनी बंधती है। हमने पहले देखा था एक समय में एक समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणु बंधते हैं। जहां योग कम है वहां वह समयप्रबद्ध का प्रमाण कम होगा, जहां योग ज्यादा है वहां वह प्रमाण अधिक होगा, फिर भी समयप्रबद्ध तो होगा ही होगा। समयप्रबद्ध का ही प्रमाण उसमें तो अनंत परमाणु हैं, कभी थोड़े होंगे, कभी अधिक होंगे। क्यों हीनाधिक होते हैं? योग वैसा का वैसा अधिक समय नहीं रहता, उसमें भी हीनाधिकता होती रहती है तो परमाणुओं का जो ग्रहण होता है उनमें भी हीनाधिकता होती रहती है। देखो, हम तो देखते हैं न कि श्रेणी चढ़ने में यानी आठवें, नौवें, दसवें आदि गुणस्थानों में कषाय तो बहुत हीन हो रहे हैं और अनुभागबंध यथायोग्य होता है यानी अशुभकर्मों का अनुभाग हीन होता जाता है और शुभकर्मों का अनुभागबंध अधिक होता जाता है। परंतु वहां परमाणुओं की संख्या भी हीनाधिक होती है ग्रहण में – वहां ऐसा नहीं कि ऊपर के गुणस्थानों में जाता है तो योग कम होता है ऐसा बिलकुल नहीं है। योग का गुणस्थानों से कोई संबंध नहीं है। उसमें तो कितनी इन्द्रियोंवाला

जीव है उसके अनुसार योग होगा। एकेन्द्रियादि जीवों की जो अपनी-अपनी योगों की रेंज होगी, उसमें जघन्य से उत्कृष्ट तक योग पाये जायेंगे।

परंतु सम्यग्दृष्टि हुआ इसलिये योग थोड़ा कम हुआ, अब मुनिराज हुये तो योग कम हुआ, अरिहंत भगवान हो गये तो बहुत मंद योग हुआ ऐसा बिलकुल नहीं है। सयोगकेवली के भी पंचेन्द्रिय के योग्य योग के जो सभी व्हेरिएशन्स हैं वे वहां पर भी पाये जायेंगे। हम तो ऊपर-ऊपर के गुणस्थानों में तो कषायों की मंदता देखते हैं, ऐसा योग में नहीं है। तो योग के कारण से क्या होता है? प्रकृतिबंध होता है और प्रदेशबंध होता है। बस, परमाणुओं की संख्या उससे निश्चित होती है। हमने पहले यह भी देखा था कि कषाय के कारण क्या होता है? *श्रोता: स्थितिबंध और अनुभागबंध।* स्थितिबंध और अनुभागबंध होता है। कषाय कहने से हमने देखा था कि जो बंध के पांच कारण हैं – मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। योग को अगर हम कहेंगे प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध का कारण है तो इन सबको यानी मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय को मिलकर कषाय कह देंगे। क्योंकि इनमें से लास्ट में जानेवाला कषाय है इसलिये सबको कषाय कहेंगे। जैसे हम छठे गुणस्थान को प्रमत्त कहेंगे परंतु प्रमत्तदशा कहां से कहां तक है तो पहले गुणस्थान से लेकर छठे गुणस्थान तक है। ऐसे ही कषाय कब तक हैं? तो मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर दसवें गुणस्थान तक कषाय हैं, इसलिये इन सबका नाम है कषाय। यानी हम दो में ही विभाजित करते हैं। कषाय से स्थिति और अनुभाग बंध होता है और योग से प्रकृति और प्रदेश का बंध होता है। यहां तक ख्याल में आयी बात?

तो यहां ये जो योगों के व्हेरिएशन्स होंगे उनको हम देखेंगे, उनके स्थान कैसे-कैसे गिनने, उनमें क्या-क्या व्हेरिएशन्स होते हैं यह देखेंगे। यहां हम पढ़ेंगे पहले **प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध के कारणभूत ऐसे प्रदेश परिस्पंद लक्षण योग** इसका अर्थ है कि आत्मप्रदेशों का जो परिस्पंदन होता है, कंपन होता है उसके कारण प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध होता है। अब उलटा वाक्य पढ़ेंगे – प्रदेशबंध और प्रकृतिबंध के कारणभूत यानी उसका कारण क्या है? तो आत्मप्रदेशों का परिस्पंदन, जिसको हम कहेंगे योग। **उनके जो जघन्यादि स्थान** जघन्यादि यानी जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के स्थान। स्थान यानी उसके अलग-अलग भेद यानी कम से कम कितना योग होगा, उससे अधिक कितना होगा, वह जो

अधिक है वह एक अविभागप्रतिच्छेद से अधिक नहीं होगा, कुछ विशिष्ट वृद्धि होगी तब हम कहेंगे यह दूसरे नंबर का योगस्थान है।

स्थान का अर्थ समझते हैं? व्हेरिएशन्स, जैसे हमने वह पर्यायज्ञान की बात की थी; मिनिमम ज्ञान कितना है तो वह तो निगोद को है, दूसरे किसी निगोद को थोड़ा और अधिक ज्ञान है तो वह कितना अधिक है? क्या एक अविभागप्रतिच्छेद से ज्यादा है? नहीं, तो कहते हैं पर्यायज्ञान के जितने अविभागप्रतिच्छेद हैं उस संख्या का अनंतवां भाग करो और उसमें मिला दो इतना होगा दो नंबर पर। तीन नंबर का जो ज्ञान का अलग भेद होगा वह कितना है? फिर वैसे ही दूसरे नंबर के ज्ञान का अनंतवां भाग उसमें अधिक करो। एक-एक अविभागप्रतिच्छेद से वह स्थान बढ़ता नहीं है, इसलिये उसको कहेंगे यह पहला स्थान, यह दूसरा स्थान यह तीसरा स्थान; योग में भी ऐसे ही समझना। एक योगस्थान यानी एक जो योग है तो उसमें क्या है तो आत्मा के प्रदेश कितने हैं हमने देखे हैं? असंख्यात, इस लोक में जितने आकाशद्रव्य के प्रदेश हैं उतने एक-एक जीव में अपने प्रदेश हैं। तो योगस्थान कहना किसको? तो छोटे में छोटा योगस्थान है उसका अर्थ क्या होता है? तो आत्मप्रदेशों में कुछ योग होता है। तो क्या सभी आत्मप्रदेशों में एक विशिष्ट योग समान होगा? तो कहते हैं नहीं, जैसे हम कहते हैं न कि एक समयप्रबद्ध बंधता है तो क्या सभी परमाणुओं में समान स्थिति बंधती है? नहीं, अलग-अलग बंधती है, तो उसके लिये हम अलग-अलग निषेक दिखाते हैं।

क्या समान अनुभाग बंधता है? तो कहते हैं नहीं, किसीमें थोड़ा अनुभाग है, किसीमें अधिक है, किसीमें और अधिक है, किसीमें और अधिक है; एक समय में बंधनेवाले परमाणुओं की बात है। ऐसे आत्मा में जो एक समय में योग है तो क्या सभी प्रदेशों में समान योग है? तो कहते हैं, नहीं। यहां पर भी जिन-जिन प्रदेशों में समान योग होगा, मिनिमम पॉसिबल, उसको हम कहेंगे यह उसकी पहली वर्गणा है। यहां आत्मप्रदेश को वर्ग कहेंगे और जिन-जिन आत्मप्रदेशों में समान योग है उनके समूह को वर्गणा कहेंगे। देखो, जैसे कर्म के साथ कम्पेअर करेंगे हम, कर्म के एक परमाणु को वर्ग कहते हैं और जिन-जिन परमाणुओं में समान अविभागप्रतिच्छेद हैं यानी फलदान शक्ति है, अनुभाग है उसको हम एक लाइन में लिखेंगे और कहेंगे यह एक वर्गणा हुयी। जिनमें-जिनमें और एक ज्यादा

अविभागप्रतिच्छेद है उसको कहेंगे दूसरी वर्गणा, और एक ज्यादा है वह तीसरी वर्गणा, और एक ज्यादा है वह चौथी वर्गणा, ऐसे अनंत तक जाते हैं और सबको मिलकर कहेंगे एक स्पर्धक हुआ। यह कर्मों में हुआ, योगों में भी ये ही नाम हैं।

जिन जिन आत्मप्रदेशों में समान योग है, मिनिमम योग है - जघन्य योग है उसको हम कहेंगे यह पहली वर्गणा। जिन-जिन प्रदेशों में थोड़ा ज्यादा है उसको कहेंगे यह दूसरी वर्गणा। *श्रोता: समय नहीं लेना है?* समय नहीं लेना है यहां पर, प्रदेश लेना है। एक ही समय में अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग योग हैं। तो जो कॉमन योगवाले प्रदेश हैं उनको हम एक लाइन में दिखायेंगे। ऐसे कोई प्रदेश अपनी जगह छोड़कर इधर उधर नहीं करेंगे कि मैं अभी इस लाइन में चला जाऊंगा, यह तो हम बुद्धि द्वारा उसको एक लाइन में लिख रहे हैं समझने के लिये। कर्मों के निषेक हो या यहां पर योग में भी वर्ग, वर्गणा हो, यह तो बुद्धि द्वारा हम इसको एक लाइन में लिख रहे हैं क्योंकि हमें समझना है। जैसे आपके न्यूजपेपर में आता है न कि शेअर्स के भाव ऊपर गये, नीचे गये तो क्या हुआ, रुपये का भाव गिर गया तो हमारे रुपये भी गिरते होंगे न तिजोरी में ऊपर से नीचे, क्या होता है? यह तो लाइन ऊपर नीचे दिखाते हैं, यहां पर भी यह बस, हम जिसको कहेंगे न कि ग्राफिकल रिप्रेझेन्टेशन है यानी उसका आलेख बना रहे हैं।

तो जिन-जिन आत्मप्रदेशों में समान योग है, वह भी कम से कम योग है उसको हम एक सिंगल लाइन में लिखेंगे, इसको कहेंगे पहली वर्गणा हुयी। जिन आत्मप्रदेशों में और थोड़ा अधिक योग है, समान है, उन प्रदेशों को हम दूसरी सिंगल लाइन में लिखेंगे और कहेंगे यह दूसरी वर्गणा हुयी, फिर तीसरी वर्गणा फिर चौथी वर्गणा। कर्मों में तो हम अनंत वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते थे, यहां योगस्थान में तो असंख्यात वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहेंगे। क्योंकि प्रदेश असंख्यात हैं न! तो उसमें असंख्यात वर्गणाओं का एक स्पर्धक, फिर असंख्यात वर्गणाओं का दूसरा स्पर्धक, तीसरा स्पर्धक। इसके बहुत डिटेल्स हैं हम उसमें नहीं जायेंगे, यह सारा कर्मकाण्ड का विषय है योगस्थानों का। अभी तो हम जीवकाण्ड में हैं न! फिर भी योगस्थान कहना किसको? तो योगस्थान का मतलब होता है यह जो रचना है यानी एक-एक वर्गणा में असंख्यात प्रदेश, ऐसे असंख्यात वर्गणाओं का एक-एक स्पर्धक और ऐसे असंख्यात स्पर्धक एक योगस्थान में होते हैं।

यहां असंख्यात का प्रमाण कितना है पूछेंगे तो कहेंगे कि जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग, उस झंझट में नहीं पड़ेंगे। उसके प्रपोर्शन में कितनी संख्या है उसमें हम नहीं पड़ेंगे केवल वह नाम सुनना है कि कौनसा असंख्यात है। जगत्श्रेणी कहते हैं सात राजू को, उसमें जितनी प्रदेशों की संख्या है उसका जो असंख्यातवां भाग जो कोई पर्टिक्युलर असंख्यात है उतने तो इसमें स्पर्धक होंगे और इन सबको मिलाकर... *श्रोता: डबल... अन्य श्रोता: दूसरा स्पर्धक कहां से?* दूसरा स्पर्धक उस वर्गणा से कहलायेगा जिस वर्गणा में योग की शक्ति प्रथम स्पर्धक के प्रथम वर्गणा से दोगुणी हो जाती हैं यानी योग की शक्ति दोगुणी होगी तभी दूसरा स्पर्धक कहलायेगा। यानी एक-एक योगस्थान में क्या होते हैं तो हम कहेंगे वर्ग यानी आत्मप्रदेश तो हैं ही, आत्मप्रदेश तो हीनाधिक होनेवाले नहीं हैं, लोक में जितने प्रदेश हैं उतने ही प्रत्येक जीव के प्रदेश हैं। अब इन्हीं प्रदेशों की रचना हम इसतरह से बतायेंगे कि जिन-जिन प्रदेशों में मिनिमम योग है उनको हम प्रथम वर्गणा कहेंगे। फिर थोड़ा अधिक योग जिनमें है वह दूसरी वर्गणा है, थोड़ा अधिक, थोड़ा अधिक इसतरह से वह रचना हो जायेगी। यहां प्रतिवर्गणा योगशक्ति थोड़ी अधिक थोड़ी अधिक बढ़ती जाती है परंतु उनमें यानी उन वर्गणाओं में प्रतिवर्गणा में, प्रदेशों की संख्या हीन होती चली जाती है। जहां जाकर प्रदेशों की संख्या आधी होती है उसको कहेंगे एक गुणहानि। दूसरे स्पर्धक की प्रथम वर्गणा में योग प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा से दोगुणा होता है, तीसरे स्पर्धक में तीन गुणा होता है, चौथे स्पर्धक में चार गुणा होता है; इसतरह से इन स्पर्धकों की रचना होती है। अब ऐसे असंख्यात स्पर्धक जाने पर प्रदेशों की संख्या पहली वर्गणा के प्रदेशों से आधी होती है, उसको कहेंगे एक गुणहानि और ऐसी असंख्यात गुणहानि होने पर यह सब मिलकर पूरा जो है उसको एक योगस्थान कहेंगे। यानी किसी जीव में मिनिमम पॉसिबल इतना योग है तो उसको कहेंगे यह जघन्य योगस्थान है। उसके आगेवाला जो है उसमें योग पर्टिक्युलर बढ़ता है अभी उसके डिटेल में नहीं जायेंगे हम, तो यह हो गया दूसरा योगस्थान। उसमें और थोड़ी वृद्धि होती है उसको कहेंगे तीसरा योगस्थान ऐसे योगस्थान भी बहुत सारे हैं, असंख्यात हैं।

उसमें भी यह समझना कि जो एकेन्द्रियों के योग्य योगस्थान हैं यानी एकेन्द्रियों में जो योगस्थान होंगे जघन्य से उत्कृष्ट तक उसकी अपनी कुछ रेंज होगी। उससे असंख्यातगुणे द्वीन्द्रिय के योगस्थान होंगे, उससे असंख्यातगुणे त्रीन्द्रिय के योगस्थान होंगे यानी योग की

शक्ति भी एकेन्द्रियों से द्वीन्द्रियों में असंख्यातगुणा होगी, त्रीन्द्रियों में उससे असंख्यातगुणा होगी, चतुरिन्द्रिय में उससे असंख्यातगुणा होगी और उससे असंख्यातगुणा पंचेन्द्रिय में होगी। सब से मॅक्झिमम योग जो है - योग की शक्ति वह संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव में पायी जायेगी। तो इसमें योगस्थानों के बहुत सारे भेद पाये जाते हैं, इनको कहेंगे योग के स्थान - योगस्थान। अभी इसको पढ़ेंगे। *श्रोता: वृद्धि होगी वह असंख्यात में ही होगी? पहले योगस्थान से दूसरे योगस्थान में...* हां, उसमें असंख्यातवां भाग वृद्धि होगी, जो कुछ है अभी उसका बहुत विस्तार है। सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग, इतने जघन्य स्थान आगे जानेपर दूसरा योगस्थान होता है। यह विस्तार से उसी भाषा में जानने योग्य है... *श्रोता: मतलब एक नहीं बढ़ेगा, असंख्यात ही बढ़ेगा...* हां, वहां एक-एक अविभागप्रतिच्छेद नहीं बढ़ेगा। *श्रोता: असंख्यात का असंख्यातवां भाग भी असंख्यात होता है न?* हां, असंख्यात का असंख्यातवां भाग भी असंख्यात होता है, परंतु उसमें कितने स्पर्धक बढ़ेंगे कि वर्गणायें बढ़ेंगी उसका वहां वर्णन है विस्तार से, कर्मकाण्ड में पढ़ना आप।

देखो **प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध के कारणभूत ऐसे प्रदेश परिस्पंद लक्षण योग यानी आत्मप्रदेशों के परिस्पंदनरूप योग उनके जो जघन्यादि स्थान यानी जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के स्थान वे योगस्थान हैं।** समझ में आयी बात यह? पहले में पहले योगस्थान क्या है यह हमने देखा, फिर कम से कम यानी पहले योगस्थान से लेकर लास्टवाले योगस्थान तक योगस्थानों के बहुत सारे अलग-अलग भेद पाये जाते हैं। यानी इसमें ऐसा समझना कि जीव का परिणाम - कषाय कैसा भी हो, स्थिति कितनी भी क्यों न बंधती हो, अनुभाग कैसा भी क्यों न बंधता हो, समझो हम संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात कर रहे हैं, तो उसके जघन्य योग से उत्कृष्ट योग तक सभी पॉसिबिलिटीज़ हैं। ऐसा नहीं कि इतना योग होगा तो यही कषाय होगा, ऐसा उसमें नहीं है। मंद कषाय हो तो भी सारे योगस्थान हो सकते हैं, तीव्र कषाय हो तो भी सारे योगस्थान हो सकते हैं। अभी तो हम एक-एक के नाम देख रहे हैं फिर वह परावर्तन में कैसे क्या लेना है उसकी बात बाद में आयेगी।

तथा जिन कषाययुक्त परिणामों से कर्मों का अनुभागबंध होता है उनके जघन्यादि स्थान वे अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं। अभी इसको समझेंगे। कषाय के कारण क्या होता है तो स्थिति का भी बंध होता है और अनुभाग का भी बंध होता है। यानी कषाय के

कारण पर्टिक्युलर स्थिति बंधती है ऐसा हम देखेंगे। संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीव कम से कम अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का बंध तो करता ही करता है, उससे कम नहीं करेगा। क्या कहा? संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव हम यहां मिथ्यादृष्टि की बात कर रहे हैं, अभव्य के योग्य कह रहे हैं, यहां सम्यग्दृष्टि की और ऊपर श्रेणी के गुणस्थानों के जघन्य बंध की बात यहां नहीं ले रहे हैं। तो यहां हम देखेंगे कि स्थिति का मिनिमम बंध कितना करता है? अभी आयु को भी इसमें से छोड़ देना, तो कहेंगे अंत:कोड़ाकोड़ी सागर।

यह अंत:कोड़ाकोड़ी सागर क्या होता है? जैसे हमने अंतर्मुहूर्त का अर्थ क्या देखा था? मुहूर्त से कम, मुहूर्त जो दो घड़ी है उससे कम उसको कहेंगे अंतर्मुहूर्त और अंत:कोड़ाकोड़ी सागर किसको कहेंगे? कोड़ाकोड़ी सागर से कम यानी लेस दॅन कोड़ाकोड़ी सागर वह है अंत:कोड़ाकोड़ी सागर। संज्ञी पंचेन्द्रिय अभव्य जीव कम से कम इतनी स्थिति बांधता है, इससे कम नहीं बांधेगा। हम समझने के लिये यहीं से स्थिति के भेदों को देखेंगे। तो यह पहला स्थिति का भेद है। स्थिति का भेद कह रहे हैं। स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम अलग हैं और स्थिति के भेद अलग हैं।

स्थिति का भेद इसका अर्थ क्या है? स्थिति का बंध कितना हुआ? किसी जीव ने थोड़ी स्थिति बांधी है यानी उसका मंद कषाय था और अधिक से अधिक – मिथ्यात्व की बात करनी है तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर का उत्कृष्ट स्थितिबंध हुआ। यानी उसके भेद कितने हो जायेंगे स्थिति के भेद? अभी यह बंधअध्यवसाय की बात छोड़ दो, हम पहले स्थिति के भेदों की चर्चा करेंगे। स्थिति के भेद हम संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि, संज्ञी पंचेन्द्रिय अभव्य की अपेक्षा बात करेंगे क्योंकि हमें कंटिन्युएशन में स्थिति के अलग-अलग एक-एक समय से बढ़ते हुये सभी भेद चाहिये। भावपरावर्तन में क्या करना है वह हम बाद में देखेंगे।

तो यह मिनिमम स्थिति बांधी किसीने, फिर और एक समय अधिक बांधी, फिर और एक समय अधिक बांधी, फिर और एक समय अधिक बांधी। वह कभी-कभी बांधेगा न! अभी यहां एक ही जीव की बात चल रही है। किसी जीव ने कम से कम स्थिति बांधी तो यह स्थिति क्यों बांधी? स्थिति का जो बंध हुआ उसका कारण क्या है? तो हम कहते हैं कषाय है, उसीको क्या कहते हैं? कषायअध्यवसायस्थान कहेंगे, उसीका दूसरा नाम है स्थितिबंधअध्यवसायस्थान। स्थिति का जो बंध हुआ है वह स्थिति कभी कम बंधती है कभी

अधिक बंधती है, कभी बहुत अधिक बंधती है। क्यों बंधती है तो वहां जीव के जैसे परिणाम है वैसी वहां स्थिति बंधती है। तो उन परिणामों का नाम क्या है? स्थिति का बंध हुआ न तो स्थितिबंधअध्यवसायस्थान। अध्यवसायस्थान यानी की जो कोई कषाय के स्थान हुये हैं। स्थितिबंधअध्यवसायस्थान का दूसरा नाम है कषायअध्यवसायस्थान, उसीको कहीं-कहीं कषायउदयस्थान भी कहते हैं, ये उसके अलग-अलग नाम हैं। हम यहां उसको कषायअध्यवसायस्थान कहेंगे या स्थितिबंधअध्यवसायस्थान कहेंगे। स्थिति के भेद जो हैं यानी कर्म की कितनी स्थिति बंधी, उस समयप्रबद्ध में कितनी स्थिति बंधी उसको कहेंगे स्थितिबंध या स्थिति का भेद और जिन परिणामों के कारण वह स्थिति बंधी उनको कहेंगे स्थितिबंधअध्यवसायस्थान या कषायअध्यवसायस्थान। तो कहते हैं एक ही परिणाम एक समय में हुआ है उससे तो कोई पर्टिक्युलर विशिष्ट स्थिति बंधती ही बंधती है परंतु उस परिणाम में, एक परिणाम में, कितने अलग-अलग भेद हो सकते हैं कि जिसके कारण अनुभाग के व्हेरिएशन्स हो सकते हैं? परिणाम एक समय का एक, उसमें स्थिति का भी बंध हो रहा है और अनुभाग का भी बंध हो रहा है। तो एक ही परिणाम के कारण कितने अलग-अलग स्थिति के भेद बन सकते हैं? मालूम है आपको?

परिणाम एक और स्थिति अलग-अलग कितनी बंध सकती हैं? पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण अलग-अलग स्थिति के भेद बन सकते हैं। फिर सुनना, एक परिणाम के द्वारा कौनसी स्थिति बंधेगी ऐसा नहीं, यह परिणाम हुआ तो इतनी स्थिति बंधेगी ऐसा नहीं है। कोई ऐसी विशिष्ट उत्कृष्ट परिणामवाली बात कहेंगे, कोई बहुत संक्लेशवाला परिणाम है तो कितनी स्थिति बांध सकता है तो हम कहेंगे वह ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध कर सकता है। क्या उसी परिणाम के साथ अन्य किसी स्थिति का बंध हो सकता है? हो सकता है। कितना हो सकता है? एक-एक समय से घटते हुये ७० कोड़ाकोड़ी सागर मायनस पल्य का असंख्यातवां भाग इतने व्हेरिएशन्स हो सकते हैं। एक परिणाम के द्वारा स्थिति में इतने व्हेरिएशन्स हो सकते हैं। अभी हम उलटा बतायेंगे, एक ही पर्टिक्युलर स्थिति बांधनेवाले परिणाम कितने हो सकते हैं? असंख्यातलोकप्रमाण। अंत:कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति हो या ७० कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति हो उस एक ही स्थिति को बांधनेवाले अलग-अलग परिणाम कितने हो सकते हैं? असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग परिणामों के द्वारा उतनी ही पर्टिक्युलर स्थिति बंध सकती है।

परिणाम एक समय का है न, पर यहां नाना जीवों की अपेक्षा बात कर रहे हैं हम। परिणामों के जो स्थान कहेंगे और एक जीव एक समय में तो एक ही कोई परिणाम करेगा परंतु जब कभी भी उसने अन्य-अन्य परिणाम किये थे तब भी उतनी स्थिति बंध सकती है। कोई भी विशिष्ट स्थिति बंधने के लिये कषाय के परिणाम अलग-अलग कितने हो सकते हैं तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण। *श्रोता: नाना जीव की अपेक्षा?* एक जीव कहो या नाना जीव कहो, परिणामों की बात कर रहे हैं। एक जीव करेगा तो अलग-अलग समयों में करेगा और नाना जीव ॲट अ टाइम कर सकते हैं। तो हम समझने के लिये नाना जीवों को लेते हैं कि किसीने कोई परिणाम किया, किसीने असंख्यातलोकप्रमाण में से कोई भी एक विशिष्ट परिणाम किया और स्थिति उसकी उतनी ही बंध सकती है। यानी एक-एक स्थितिभेद, जो एक-एक समय के डिफरन्स से जो स्थितिभेद हैं उनके अपने-अपने असंख्यातलोकप्रमाण कषाय के व्हेरिएशन्स होंगे। असंख्यातलोक कहने से वह बहुत बड़ा प्रमाण है उसमें असंख्यातलोक बार तो षट्स्थान वृद्धि के स्थान हैं। उसको अभी हम गौण भी करेंगे तो इसका अर्थ क्या है? असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग परिणामों के द्वारा उतनी ही स्थिति बंध सकती है। अभी यह क्यों जानना? आगे जो परम्युटेशन्स और कॉम्बिनेशन्स हम कहेंगे, तब यह बात ख्याल में आनी चाहिये, बाद में हम उस पर चर्चा करेंगे। स्थिति के कुल यानी टोटल भेद कितने हैं? तो मिनिमम स्थिति से लेकर उसमें एक समय अधिक स्थिति बंध सकती है, दो समय अधिक, तीन समय अधिक, चार समय अधिक इसतरह मॅक्झिमम स्थिति तक के सारे भेद हो सकते हैं। यह किसकी बात हो रही है? अभी हम यहां केवल संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि की बात देख रहे हैं।

जैसे हमने अभी मिथ्यात्व कर्म की बात देखी वैसे यहां पर आठ कर्म हैं तो आठ कर्मों की अपनी-अपनी स्थिति, आठ कर्मों के स्थिति के भेद अपनी अपनी जघन्य स्थिति से लेकर उत्कृष्ट स्थिति तक अलग-अलग होंगे। जैसे हमें आयुकर्म पर लगाना हो तो आयुकर्म की जघन्य स्थिति कितनी है? तो आप कहेंगे कौनसे आयु की बात कर रहे हो? तो तिर्यंचायु की। जघन्य स्थिति लब्धिअपर्याप्त की अंतर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट स्थिति कितनी होगी? तीन पल्य, ये उसके स्थिति के भेद हुये। स्थिति के भेद कितने हुये जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक जितने हो सारे। जघन्य ५ समझते हैं और उत्कृष्ट १०० समझते हैं तो स्थिति के भेद कितने हुये? *श्रोता:* ९६ / ९६ हुये, कारण जघन्य और उत्कृष्ट दोनों

भेदों को गिनना है न। उत्कृष्ट स्थिति मायनस जघन्य स्थिति प्लस १ ये स्थिति के कुल भेद हुये। यह हमने तिर्यंचायु के कहे, मनुष्यायु के ऐसे ही कहेंगे, देवायु के कहेंगे तो ३१ सागर मायनस १०००० वर्ष + १ समय ये जितने समय हैं उतने स्थिति के भेद हुये। आयु में अपनी उत्कृष्ट स्थिति में से जघन्य स्थिति मायनस करो और एक मिलाओ इतने उसके स्थिति के भेद हुये। अब हम कहेंगे ज्ञानावरण के स्थिति के भेद कितने हैं? यहां मात्र संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात कर रहे हैं, इसलिये अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से लेकर ३० कोड़ाकोड़ी सागर इतने एक-एक समय से बढ़ते हुये सारे स्थिति के भेद कहलायेंगे। अब कोई भी एक स्थिति का भेद ले लो, जघन्य या बीचवाला कोई, उसके अपने-अपने असंख्यातलोकप्रमाण तो परिणाम हैं यानी जिसको हम कहेंगे कषायअध्यवसायस्थान हैं, इतने अलग-अलग स्थान उस एक ही स्थिति के बंध के कारणभूत हो सकते हैं।

श्रोता: आपने कहा कि असंख्यातलोकप्रमाण परिणाम होंगे, उसके कारण एक ही स्थिति बंध सकती है? हां, एक ही स्थिति बंध सकती है। *श्रोता: तो असंख्यातलोकप्रमाण में मंदता और तीव्रता भी हुयी, तो मंदता से भी इसप्रकार का बंध और तीव्रता से भी बड़ा बंध?* हां, वह उसकी जो कोई रेंज है उसमें जो मंद-तीव्र, एकदम मिनिमम मंदता और मॅक्झिमम तीव्रता ऐसा नहीं लेना। उसमें जो कोई मंद, तीव्र भेद हैं। *श्रोता: वह मतलब पंचेन्द्रिय की अपेक्षा से, चतुरिन्द्रिय की अपेक्षा से...* यहां तो हम संज्ञी पंचेन्द्रिय की अपेक्षा से बात कर रहे हैं, एकेन्द्रिय के अपने अलग होंगे। एकेन्द्रिय भी कितनी स्थिति बांध सकता है? जैसे पंचेन्द्रिय जीव ज्ञानावरण का ३० कोड़ाकोड़ी सागर बंध कर सकता है, मिथ्यात्व का ७० कोड़ाकोड़ी सागर बंध कर सकता है, ऐसे एकेन्द्रिय जीव मिथ्यात्व का बंध अधिक से अधिक कितना करेगा, तो १ सागर। ज्ञानावरण का कितना करेगा, तो $\frac{३}{७}$ (तीन सप्तमांश) सागर। ७० के लिये ३० तो १ के लिये कितना? ऐसा त्रैराशिक करना। यानी उसी अनुपात में, उसी प्रपोर्शन में उसका बंध होगा। तो इसलिये यहां हम एकेन्द्रिय की बात नहीं देख रहे हैं, भावपरावर्तन में उनको भी गिनेंगे, बाद में गिनेंगे। अभी तो हमें निरंतर स्थान चाहिये, निरंतर यानी बीच में एक समय का भी गॅप नहीं चाहिये।

यदि हम पहले एकेन्द्रिय को लेंगे, बाद में द्वीन्द्रिय को लेंगे तो एकेन्द्रिय की रेंज कितनी है स्थितिबंध की? उत्कृष्ट १ सागर से लेकर जघन्य १ सागर में पल्य का

असंख्यातवां भाग कम इतनी उसकी रेंज है। फिर १ सागर के बाद द्वीन्द्रिय की तो उत्कृष्ट २५ सागर से लेकर जघन्य २५ सागर में पल्य का संख्यातवां भाग कम तक है तो बीच में १ सागर से २५ सागर में कुछ कम तक कोई भेद नहीं हैं जिसका बंध कोई जीव करेगा; बंध की अपेक्षा बात चल रही है। तो इसलिये बीच में गॅप होगा। द्वीन्द्रिय से त्रीन्द्रिय ५० सागर की रेंज में जायेगा तो उसमें २५ सागर से ५० सागर में कुछ कम तक बीच में गॅप है इसलिये हम सबको यहां गौण करेंगे और मात्र संज्ञी पंचेन्द्रियों के एक-एक समय से बढ़ते हुये स्थितिभेदों की हम यहां चर्चा करेंगे। क्योंकि हमें यह सायकल लेनी है, यह कॉम्बिनेशन कैसे करना है उसको देखना है। यह बात ख्याल में आती है?

असंख्यातलोकप्रमाण कषायअध्यवसाय परिणामों द्वारा एक जघन्य स्थिति बांधी है, फिर उससे एक समय अधिक बांधी है, तो उसकी अपनी रेंज कितनी होगी? असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग परिणामों के द्वारा उतनी ही स्थिति बंध सकती है। ऐसी हरेक स्थिति एक-एक समय से बढ़ती जाये तो अंतिम उत्कृष्ट स्थिति के लिये भी कारणभूत परिणाम उसके अपने असंख्यातलोकप्रमाण हैं। अभी तो सामान्य से इतना ही समझ लो। सामान्य से क्यों? उसमें गहराई बहुत है। क्योंकि सभी-समस्त असंख्यातलोकप्रमाण परिणाम उस जघन्य स्थिति को नहीं बांधेंगे। जघन्य स्थिति को बांधनेवाले परिणामों की अपनी रेंज है, उसके ऊपर एक समय अधिक स्थिति बांधनेवाले परिणामों की अपनी रेंज है, परंतु इनमें कुछ ऐसे स्थान हैं वे ओव्हरलॅपिंग होते चले जाते हैं, नहीं समझे? कुछ परिणाम ऐसे हैं जो जघन्य स्थिति का भी बंध कर सकते हैं, एक समय अधिक स्थिति का भी, दो समय अधिक स्थिति का भी, कहां तक? पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण अधिक स्थिति तक का बंध कर सकते हैं। एक-एक परिणाम इतनी अलग-अलग स्थितियों को बांध सकता है। अभी यह तो थोड़ा गहरा विषय है।

श्रोता: मतलब इसको इसप्रकार से भी समझे कि जैसे पंचेन्द्रिय जीव की भी रेंज होगी तो उसके जघन्य से उत्कृष्ट ले लो, चतुरिन्द्रिय की रेंज होगी तो उसके...

नहीं, अभी उसको किसीको लेना नहीं। एक समय यानि कम से कम यह मान लेते हैं न कि हम समझाने के लिये कहेंगे कि १०० समय की स्थिति से हम जघन्य शुरू करेंगे और ५०० समय की हम उत्कृष्ट कहेंगे। अब जरा यह चार्ट देखना।

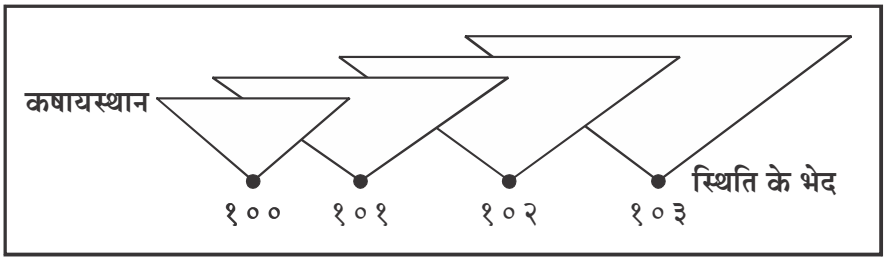

१०० समय की स्थिति बांधनेवाले परिणाम यहां से यहां तक हैं, यह उसकी रेंज है, यह १०० समयवाली बात हुयी। १०१ समय की स्थिति बांधने के जो परिणाम हैं वे यहां से लेकर यहां तक चले गये यानी बीचवाले ओव्हरलॅप हो गये न! १०० समय की स्थिति इतने परिणाम बांध रहे थे, १०१ के लिये हम आगे शिफ्ट हो गये और यह असंख्यातलोक का प्रमाण भी बढ़ गया, १०२ समय के स्थितिबंध के परिणाम और आगे बढ़ गये, यह और आगे बढ़ गया, १०३ वाले और आगे आ गये और यह और आगे बढ़ गया। यानी बीचवाले कितने ओव्हरलॅप-ओव्हरलॅप करते रहते हैं। क्यों? हमने ऐसा देखा था न अलग-अलग परिणाम उस स्थिति को बांध सकते हैं यानी एक ही स्थिति के बांधने के कारणभूत परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हो सकते हैं। या एक ही परिणाम अलग-अलग स्थितियां भी बांध सकता है, कितनी? पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण। इन दोनों का कॉम्बिनेशन ऐसा होता है कि हमने देखा न, पहले समयवाला यानी १०० समयवाला स्थितिबंध इतने परिणाम उसको बांधते हैं। आगेवाले कहते हैं १०१ स्थिति बंधने के लिये परिणाम ऐसे। १०२ के लिये ऐसे यानी वे परिणाम ओव्हरलॅप-ओव्हरलॅप होते चले जाते हैं। परंतु एक-एक स्थितिभेद के कारणभूत अपने-अपने असंख्यातलोकप्रमाण परिणाम होंगे, भले वे ओव्हरलॅप हो या न हो। जब हम आगे उसको काउंट करेंगे तब इसको ख्याल में रखकर आगे हम बात करेंगे क्योंकि जैसे हमने अन्यत्र अनुक्रम देखे हैं न; द्रव्यपरावर्तन में अनुक्रम देखा, क्षेत्रपरावर्तन में अनुक्रम देखा, कालपरावर्तन में अनुक्रम देखा। यहां पर भी जब अनुक्रम की बात आयेगी तब हम इसको फिर याद करेंगे। अभी तो हमारे पास यहां चार बातें हैं उनमें से हमने एक बात क्या देखी? जघन्य स्थितिबंध से उत्कृष्ट स्थितिबंध तक एक-एक समय से बढ़ते हुये जितने स्थान हैं उनको कहेंगे स्थिति के भेद।

श्रोता: १०५ तक के जो परिणाम हैं, १०० से १०५ तक के, बंध हुआ, पांच परिणाम से हुआ तो १०० वाले बंध के लिये भी पांच परिणाम ऐसा कह सकते हैं?

वे पांचों परिणाम १०० समय स्थिति भी बांध सकते हैं, हां परंतु उसमें वे १०१ समय की स्थिति भी बांध सकते हैं यानी इसमें तो दोनों का कॉम्बिनेशन अलग-अलग है थोड़ा। अभी इतना ही देखते हैं, उलटा नहीं देखेंगे। हम तो इतना ही देखेंगे कि स्थिति के एक-एक समय से बढ़ते हुये अलग-अलग भेद होते हैं। तो स्थिति क्यों बांधता है जीव? कषाय के कारण। तो मिनिमम स्थिति बांधनेवाले कषाय कितने अलग-अलग हो सकते हैं? क्या दो-चार-दस कषाय उतनी स्थिति बांध सकते हैं? हां, असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग जो कषाय के स्थान हैं, स्थान क्यों? उसमें भी अविभागप्रतिच्छेद से बढ़ते हुये स्थान होंगे। वे सभी स्थान एक ही मिनिमम स्थिति बांध सकते हैं। उसके आगेवाली १०१ समय की स्थिति बांधनेवाले कषाय के जो स्थान हैं उनकी भी रेंज असंख्यातलोक प्रमाण है अर्थात् असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग कषाय उसी स्थिति को बांध सकते हैं। अभी स्थिति एक समय और बढ़ गयी, स्थिति का तीसरा भेद लिया, उसके कारणभूत परिणाम, उसकी असंख्यातलोकप्रमाण रेंज अलग होगी। इसमें जो स्थान हैं वे ओव्हरलॅप होते चले जाते हैं। देखो हम इसको पढ़ेंगे अब, तो हमने कौन-कौनसी बातें देखी? एक तो स्थितिबंध की बात देखी, उसके बाद स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम जिसको हम कषाय कहेंगे या कषायअध्यवसायस्थान कहेंगे, परंतु हम कहेंगे एक जीव का एक समय में एक ही परिणाम होता है परंतु उस एक ही परिणाम में स्थितिबंध की अपेक्षा तो हमने देखा है एक कोई परिणाम एक पर्टिक्युलर स्थिति को बांध सकता है परंतु उसमें अनुभाग की अपेक्षा अगर हम बात करेंगे तो उसी एक परिणाम में असंख्यातलोकगुणे अलग-अलग अनुभागबंध होते हैं।

परिणाम एक, स्थितिबंध की अपेक्षा उस परिणाम को हम कह रहे हैं परंतु उस एक यानी मिनिमम स्थिति बांधनेवाला उसे हम कहेंगे, १०० समय हमने मान ली है जघन्य स्थिति, तो १०० समय की स्थिति बांधनेवाले जो असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग परिणाम थे उनमें से हमने जघन्य परिणाम की बात की। यानी स्थिति जघन्य, वह कषाय का परिणाम भी जघन्य - पहले नंबर वाला, तो जो वह १ नंबर का कषाय परिणाम है तो उसमें अनुभाग कितने अलग-अलग बंध सकते हैं उसके साथ? तो कहते हैं असंख्यात-लोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसाय स्थान होते हैं यानी अनुभाग की अपेक्षा व्हेरिएशन्स होते हैं। एक परिणाम में, जिसको हम कषाय कहते हैं, जिसके कारण स्थिति बंधती है उसी

एक सिंगल कषाय परिणाम को, हमने स्थितिबंध की अपेक्षा उसको एक परिणाम कहा है उसी एक परिणाम में अनुभागबंध की अपेक्षा से बात करेंगे तो असंख्यातलोकप्रमाण व्हेरिएशन्स यानी स्थान होते हैं, अलग-अलग इतने अनुभाग बंध सकते हैं।

श्रोता: मतलब लोकप्रमाण असंख्यात नहीं है, असंख्यातलोकप्रमाण...। हां, असंख्यातलोकप्रमाण है, लोकप्रमाण असंख्यात नहीं। असंख्यातलोकप्रमाण में केवल असंख्यातलोक नहीं, उसमें भी असंख्यातलोक बार षट्स्थान होते हैं। *श्रोता: स्थिति और अनुभाग दोनों?* स्थिति के देखो – एक पर्टिक्युलर स्थिति यानी जघन्य स्थिति बांधी, अंत:कोड़ाकोड़ी सागर, उसके लिये कषाय के परिणाम कितने? असंख्यातलोकप्रमाण। उस असंख्यातलोक में से एक-एक परिणाम के अपने-अपने असंख्यातलोकप्रमाण अनुभाग के स्थान हैं जिसको हम अनुभागबंधअध्यवसायस्थान कहेंगे, यानी इतने अलग-अलग अनुभागबंध होते हैं उस एक स्थिति के और एक कषाय के साथ। *श्रोता: कषाय का एक परिणाम एक बार हुआ, कभी किसी जीव ने विवक्षित अभी किया, तो उसके जो अनुभाग अभी हुये फिर ऐसे ही परिणाम जब दुबारा होगा तो उसका अनुभाग अलग प्रकार का होगा, ऐसे एक परिणाम...* नहीं, वह तो बाद में देखेंगे, अभी तो हम कितने कारणभूत हो सकते हैं उसकी चर्चा चल रही हैं। *श्रोता: परिणाम एक हो उसके अनुभाग...* अनुभाग इतने हैं। यानी स्थिति की अपेक्षा जिसको हम, स्थिति की अपेक्षा भी असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग उसके कषाय होते हैं और उस एक-एक कषाय में अनुभाग की अपेक्षा स्थान कितने होते हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंध के अध्यवसायस्थान होते हैं। *श्रोता: स्थिति जो है वह उतनी ही रहती है?* नहीं, यह कोई भी अनुभागवाला परिणाम हो या स्थितिबंधवाला परिणाम हो – हो सकता है एक ही समय के लिये हो, अधिक से अधिक किसी को वही परिणाम यानी उतनी ही स्थिति बांधने का परिणाम हो या उतना ही अनुभाग का बंध हो, दो समय हो सकता है, तीन समय हो सकता है; ज्यादा नहीं होता... बहुत रेअर्ली आठ समय भी हो सकता है। तो वैसे का वैसा परिणाम दुबारा चलता रहे ऐसी बात नहीं है और यहां तो सबके कॉम्बिनेशन्स लेने हैं। *श्रोता: बोर्ड पर...* अभी इस बोर्ड पर दिखेगा नहीं न कुछ। देखो यह जो योगस्थान देखते हैं न, हम पहले उसके नाम देख लेते हैं बाद में ये काम आयेंगे कभी। पहले जरा हम इसके तीन नाम देख लेते हैं।

हम इसको देखते हैं स्थितिबंध के परिणाम, अनुभागबंध के परिणाम वगैरह वगैरह। देखो हमने चार नाम कौनसे देखें हैं? एक तो योगस्थान, अभी हम उलटे क्रम से देख रहे हैं। *श्रोता: योगस्थान* योगस्थान, *श्रोता: अनुभागबंधअध्यवसायस्थान* अनुभागबंधअध्यवसायस्थान, *श्रोता: कषायअध्यवसायस्थान* कषायअध्यवसायस्थान और *श्रोता: स्थितिस्थान* स्थितिस्थान यानी स्थिति के भेद। इसतरह से हम उनको देख रहे हैं। अभी जरा हम बोर्ड पर भी देखेंगे। देखो हमारे पास चार बातें हैं, चार अलग-अलग बातें हम बतानेवाले हैं। सबसे नीचे हम स्थिति के भेद लिखेंगे। यह सब से कम से कम स्थिति, एक समय अधिक स्थिति, दो समय अधिक स्थिति, तीन समय अधिक स्थिति, चार समय अधिक स्थिति ऐसे ही स्थिति के भेद हम कहेंगे। एक-एक समय से बढ़ते हुये इसको हम स्थिति के भेद कहेंगे। स्थितिस्थान यानी कितना स्थितिबंध हुआ उसकी अपेक्षा से एक-एक समय से बढ़ते हुये भेद हम यहां दिखायेंगे।

अब इसके साथ दूसरी पंक्ति पर हम क्या दिखायेंगे? उस स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम। यह एक ही स्थिति कितने अलग-अलग परिणामों से बंध सकती है तो हम कहेंगे ये असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग जो परिणाम हैं, इनमें एक-एक परिणाम अलग-अलग है; ये सभी परिणाम इतनी ही स्थिति का बंध कर सकते हैं। अलग-अलग परिणाम, एक ही स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं। अब कहेंगे यह दो नंबर की स्थिति है, एक समय अधिक जो स्थिति बंधी है उसके अपने कारणभूत परिणाम कितने हैं? तो हम कहेंगे उसकी अपनी रेंज यहां से यहां तक होगी। ये सब इसके कारणभूत परिणाम थे, ये इतने परिणाम इस स्थिति को बांध सकते हैं। अब और एक समय आगे बढ़ेंगे, इसके अपने कारणभूत परिणाम? तो कहेंगे वे और आगे बढ़ते चले जायेंगे, तो उसके कारणभूत परिणाम ये हो सकते हैं। ये ओव्हरलॅपिंग हो रहे हैं न आगे, तो यहां का अभी विशिष्ट परिणाम लेते हैं हम, यहां का कोई परिणाम, तो यह इस स्थिति को भी बांध सकता है और इस दूसरी स्थिति को भी बांध सकता है। हमें उसकी बात नहीं लेनी हैं, हमें एक-एक जो स्थिति का भेद है, ये सारे हैं स्थिति के भेद। नीचे की लाइन में हम कहेंगे स्थिति के भेद, दूसरी लाइन में समझाने के लिये मैं एक के ऊपर एक बता रही हूं यह हरेक स्थिति की अपनी अपनी रेंज जो है परिणामों की, जिसको हम कषायस्थान कहेंगे या स्थितिबंधअध्यवसायस्थान कहेंगे यानी हरेक की अपनी रेंज है। टोटल कितने हैं स्थितिबंध

के कारणभूत परिणाम? तो कहते हैं जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के जो होंगे न, सभी मिलकर टोटल होंगे। ये सभी कषायस्थान कितने हैं? तो जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक जो स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम हैं तो यहां से लेकर यहां तक के सारे कहलायेंगे। भले वे असंख्यातलोकप्रमाण हैं परंतु इस स्थिति को कितने परिणाम बांध सकते हैं तो इतने ही यानी वे भी असंख्यातलोकप्रमाण हैं। इस एक समय अधिक स्थिति के कारणभूत परिणाम ये अपने असंख्यातलोकप्रमाण, इस और एक समय अधिक स्थिति के कारणभूत परिणाम ये अपने असंख्यातलोकप्रमाण हैं। तो हरेक की अपनी-अपनी रेंज है और हरेक की रेंज वही है, असंख्यातलोकप्रमाण। फिर भी यह जो असंख्यातलोक का प्रमाण है उससे यह दूसरी स्थितिवाला असंख्यातलोक का प्रमाण और ज्यादा है, उससे यह तीसरी स्थितिवाला असंख्यातलोक का प्रमाण और ज्यादा है। उससे आगेवाली स्थिति का असंख्यातलोक का प्रमाण और ज्यादा है। तो ये ऐसे अधिक अधिक-अधिक-अधिक होते चले जाते हैं। तो इस पहली पंक्ति में हम कहेंगे स्थिति के भेद, दूसरी पंक्ति में ये सबके जो अपने-अपने स्थितिबंधअध्यवसायस्थान हैं, तो यह हो गयी दूसरी पंक्ति। तीसरी पंक्ति में हमें क्या समझना है? अभी बाकी की बात हम छोड़ देते हैं, यह हम एक पर्टिक्युलर जघन्य स्थिति के कारणभूत ये कषायअध्यवसायस्थान नामक परिणाम देखे हमने, उनमें जो अलग-अलग परिणाम हैं उनमें से एक-एक को लेंगे। उस एक-एक के अनुभागबंधअध्यवसायस्थान अलग-अलग असंख्यातलोकप्रमाण हैं।

श्रोता: ऐसा हो सकता है कि एक समय में जो परिणाम हुये हो, उससे जो अनुभाग बंधा, दूसरे समय का परिणाम उससे मंद है, मंदतर है, तो भी उसका असंख्यातलोकप्रमाण अनुभाग का बंध होगा?

उत्तर: वह उसके अलग-अलग अनुभागबंध के कारणभूत परिणाम एक कषाय परिणाम में अंतर्भूत हैं यानी स्थिति उतनी ही बंधी परंतु अनुभाग इतने व्हेरिएशन्सवाले बंध सकते हैं उसके साथ, एक कषाय परिणाम में। परिणाम हम स्थिति की अपेक्षा एक कह रहे हैं, परंतु अनुभाग की अपेक्षा उसी एक परिणाम के असंख्यातलोकप्रमाण भेद होते हैं, उसीको कहेंगे अनुभागबंधअध्यवसायस्थान। इन असंख्यातलोकप्रमाण स्थानों में से एक समय में एक जीव के कोई एक ही अनुभागबंध का स्थान होगा।

पहले हमने इस नीचे की पंक्ति में स्थितिबंध कहा यानी स्थिति के भेद कहेंगे इसको - स्थितिभेद। स्थितिभेद का अर्थ है कितना स्थितिबंध हुआ क्योंकि स्थिति शब्द स्थितिसत्त्व यानी सत्ता की स्थिति को भी बताता है और स्थितिबंध यानी बंधनेवाली स्थिति को भी बताता है। हमारी यहां स्थितिबंध की बात चल रही है, स्थिति के भेद यानी स्थितिबंध के भेद। उस समय में कितना स्थितिबंध हुआ उसको हम कहेंगे इतना हुआ या इतना हुआ या इतना हुआ; एक-एक समय से बढ़ते हुये जितने पॉसिबल हैं उसको कहेंगे स्थिति के भेद। ये जघन्य स्थितिबंध से लेकर उत्कृष्ट स्थितिबंध तक होंगे सारे।

श्रोता: सभी एक परिणाम से बंधेंगे?

सभी नहीं, सभी एक परिणाम से नहीं बंधेंगे, सभी के अपने-अपने असंख्यातलोकप्रमाण परिणाम अलग-अलग हैं। यह जघन्य स्थिति किन परिणामों से बंधती है तो इतने परिणामों से बंधती है, उत्कृष्ट स्थिति किससे बंधती है? तो उसके जो कोई अपने असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग भेद होंगे उसके लिये। ये जघन्य स्थितिबंध के और वे उत्कृष्ट स्थितिबंध के कारणभूत हैं। पर बीचवाले हमने सब ओव्हरलॅपिंग दिखाये उस पद्धति से होंगे। अपनी-अपनी हरेक की जो रेंज है असंख्यातलोकप्रमाण की वह अलग-अलग है। तो ये क्या होंगे? स्थितिबंधअध्यवसायस्थान। एक नंबर पर हमने स्थिति के भेद देखे या स्थिति के स्थान कहे, दूसरे नंबर पर कषायअध्यवसायस्थान कहो या स्थितिबंधअध्यवसायस्थान कहो उन्हें देखा। कषायअध्यवसायस्थान या स्थितिबंधअध्यवसायस्थान एक ही बात है। यहां तक बात ख्याल में आयी? अब उसके आगे बढ़ते हैं। अब एक-एक हमने जो देखा एक पर्टिक्युलर यहां कषाय परिणाम, इतनी स्थिति के कारणभूत बहुत सारे परिणाम हैं, असंख्यातलोकप्रमाण हैं, उसमें से एक ही परिणाम की बात करते हैं। उस एक परिणाम के साथ अनुभाग कितने अलग-अलग बंध सकते हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग अनुभाग का बंध हो सकता है। उसीको कहेंगे अनुभागबंधअध्यवसायस्थान। ये दो भिन्न परिणाम नहीं हैं, एक ही परिणाम के अनुभाग की अपेक्षा इतने व्हेरिएशन्स हैं। यह तो नीचे की पंक्ति में स्थितिबंध के स्थान बताये हैं, इस दूसरी पंक्ति में स्थितिबंधअध्यवसायस्थान यानी कषाय के स्थान बताये हैं और नीचे से तीसरी पंक्ति में अनुभागबंध के स्थान बताये हैं।

श्रोता: परिणाम मंद हो या तीव्र ऐसे ही...

होंगे ही होंगे यानी हरेक जो हमने देखा न, जघन्य स्थिति के बंध के कारणभूत कषाय के परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं। ये असंख्यातलोकप्रमाण परिणामों में से हर परिणाम के साथ असंख्यातलोकप्रमाण अपने-अपने अनुभागबंधअध्यवसायस्थान अलग-अलग होंगे; उनमें भी जघन्य से उत्कृष्ट तक बहुत सारे भेद होंगे। यानी हरेक के साथ लगाना, इसके अपने, फिर इसके अपने, इसके अपने। ये तो जघन्य स्थिति के साथ लगा रहे हैं; आगे की स्थितियों के साथ उनके अपने-अपने और बढ़ते चले जायेंगे। अब यह तो तीसरा हुआ। पहले में हमने देखे स्थिति के भेद यानी कितना स्थितिबंध हुआ, दूसरे पॉइंट पर हमने देखे स्थितिबंधअध्यवसायस्थान जिसको हम कषायस्थान कहेंगे, कषायअध्यवसायस्थान कहेंगे, तीसरे नंबर पर हमने देखे अनुभागबंधअध्यवसायस्थान, जो एक-एक कषाय के साथ असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान होते हैं। हरेक की अपनी-अपनी रेंज अलग और उसके साथ यानी प्रत्येक अनुभागबंधअध्यवसायस्थान के साथ, योगों के व्हेरिएशन्स कितने होते हैं? तो कहते हैं जघन्य से उत्कृष्ट तक के सभी योगस्थान जो जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। उन संज्ञी पंचेन्द्रिय के योग्य सभी योगस्थानों में से एक समय में कोई एक योगस्थान होगा।

यानी कोई जीव जघन्य स्थिति बांध रहा है, असंख्यातलोकप्रमाण में से उसका जघन्य स्थितिबंधअध्यवसायस्थान है, उसमें से अनुभाग भी वह जघन्य बांध रहा है तो उसके योगस्थान कौनसे होंगे? सभी जितने पॉसिबल हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय के योग्य वे सभी, जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक की बात चल रही है अपनी, अभी यहां संज्ञी पंचेन्द्रियों के योग्य योगस्थानों की बात हो रही है। यहां हमें चार अलग-अलग पंक्तियां करनी हैं, कौनसी? स्थितिबंध के स्थान – स्थितिबंध में जघन्य स्थितिबंध से लेकर उत्कृष्ट स्थितिबंध तक लेना, अभी तो हम संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात कर रहे हैं और किसी एक प्रकृति की बात कर रहे हैं। जितनी प्रकृतियां होंगी उन सबमें एक-एक में अलग-अलग लगा लेना। अभी समझने के लिये इतना ही समझेंगे कि किसी पर्टिक्युलर कर्म का जघन्य स्थितिबंध किया है, उसका जघन्य कषायवाला स्थान है और जघन्य अनुभागवाले स्थान पर है, तो उसका योग कौनसा होगा? तो जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण

योगस्थान हो सकते हैं उसके। तो इन सभी के कॉम्बिनेशन्स हमको लेने हैं; फिर हम इसको देखेंगे थोड़ी देर में। देखो हम यहां पढ़ेंगे, थोड़ा ख्याल में आयेगा देखो, भावपरावर्तन कहते हैं, फिर पढ़ेंगे।

योगस्थान – योगों के जो अलग-अलग भेद होंगे उनको योगस्थान कहते हैं जैसे यहां हमने ऊपर की पंक्ति में लिखा था, *अनुभागबंधअध्यवसायस्थान* यानी अनुभागबंध भी अलग-अलग होता है – अनुभाग यानी फलदान शक्ति, जिस समय कर्म का बंध होता है उस एक समयप्रबद्ध में उसकी स्थिति पड़ती है ऐसा कहा, उसी समय उसका अपना-अपना अनुभागबंध भी होता है। जो मॅक्झिमम उस समय का अनुभाग बंधा है उसको हम उस अनुभाग का बंध कहेंगे। जैसे हम स्थिति कितनी बांधी कहते हैं? तो कहते हैं ७० कोड़ाकोड़ी सागर। क्या सभी अनंतानंत परमाणुओं में ७० कोड़ाकोड़ी का बंध हुआ क्या? नहीं, ७००० वर्ष और एक समय अधिक और दो समय अधिक, तीन समय अधिक ऐसे एक-एक समय से बढ़ते हुये ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक जितने निषेक बने हैं उतने वहां स्थिति के भेद हुये हैं, परंतु हम उस समय कितनी स्थिति बंधी कहेंगे? तो जो टॉपमोस्ट निषेक है उतनी स्थिति बंधी ऐसा कहेंगे। ऐसे ही अनुभागबंध कितना हुआ तो अनुभागों में तो अनंत स्पर्धक बंधे जाते हैं, तो अनुभाग कितना बंधा? तो अंतिम जो टॉपमोस्ट स्पर्धक में अनुभाग था उतना बंधा ऐसा हम कहेंगे। जघन्य यानी मिनिमम अनुभागस्थान में भी अनंत स्पर्धक होते हैं और बढ़ते हुये अनुभागस्थानों में स्पर्धक भी बढ़ते चले जाते हैं। यहां तो जो अनुभाग का स्थान है वही अनुभागबंधअध्यवसायस्थान है। देखो यहां स्थिति और स्थितिबंधअध्यवसायस्थान इनमें व्हेरिएशन्स हैं, फिर से एक बार देखते हैं –

स्थिति कितनी बंधी तो हम कहेंगे जघन्य स्थिति अंत:कोड़ाकोड़ी सागर और उस एक विशिष्ट स्थितिबंध के कारणभूत स्थितिबंधअध्यवसायस्थान कितने हैं? तो असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग। परंतु अनुभाग के जितने स्थान हैं न, उतने ही अनुभागबंधअध्यवसायस्थान स्थान हैं। अनुभागस्थान यानी अनुभाग कितना बंधा उसका पहला स्थान, फिर और बढ़कर अनुभाग बंधा वह दूसरा स्थान, और बढ़कर अनुभाग बंधा वह तीसरा स्थान। उसमें तो जो अनुभाग का स्थान है वही अनुभागबंधअध्यवसाय का स्थान है। अनुभागबंध के कारणभूत जो परिणाम हैं उसे अनुभागबंधअध्यवसाय कहते हैं। तो यहां

कौन-कौनसी चार बातें देखी हमने? ऊपर से देखेंगे – योग के स्थान देखें, किसी समय जघन्य योग है, कभी अधिक है–अधिक है–अधिक है। किसीके नहीं कहेंगे हम, एक ही जीव के एक ही समय में कोई एक ही योगस्थान होगा, एक समय में दो योगस्थान तो नहीं हो सकते। उसी समय उसे कोई ना कोई अनुभागबंधअध्यवसायस्थान होगा ही होगा, क्योंकि बंध हो रहा है तो प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध हो रहा है। प्रकृति और प्रदेशबंध तो योग के कारण होता है तो उसका कोई न कोई योगस्थान चल रहा है। उसी समय उसको अनुभाग का भी बंध हो रहा है, तो उसका कोई न कोई अनुभागबंधअध्यवसायस्थान चल रहा है। उसकी स्थिति भी बंध रही है तो उसके कारणभूत कोई न कोई कषायस्थान जिसका दूसरा नाम है स्थितिबंधअध्यवसायस्थान चल रहा है और उसके कारण वहां कुछ न कुछ स्थिति भी बंध रही है। तो एक ही समय में ये चार बातें हमको घटित करनी है, कौन-कौनसी चार बातें हैं? ऊपर से शुरू किया था हमने – **योगस्थान, अनुभागबंधअध्यवसायस्थान, कषायअध्यवसायस्थान** कहो या **स्थितिबंध-अध्यवसायस्थान और स्थितिस्थान।** इनके **परिवर्तन से** लिखा है, परिवर्तन क्या होता है वह तो हम बाद में देखेंगे पहले यह क्या है उसको देखना था तो यहां लिखा है – **प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध के कारणभूत ऐसे प्रदेश परिस्पंद लक्षण योग यानी आत्मप्रदेशों का परिस्पंदन उनके जो जघन्यादि स्थान** यानी योग में भी **जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के जो स्थान** हैं **तथा जिन कषाययुक्त परिणामों से कर्मों का अनुभागबंध होता है उनके जघन्यादि स्थान** कषाय तो एक परिणाम है उसीके कारण स्थिति बंधेगी, उसीके कारण अनुभाग बंधेगा परंतु अनुभाग की अपेक्षा उसके असंख्यातलोकप्रमाण स्थान कहे जायेंगे – एक एक स्थितिबंध के साथ। दूसरा है स्थितिबंधअध्यवसायस्थान और एक है स्थितिस्थान। इसकी विशेष चर्चा हम बाद में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !

३३. भावपरावर्तन – २

षट्खण्डागम के आधार से कालअनुयोगद्वार की चर्चा हम कर रहे हैं, उसीके अंतर्गत पांच परावर्तनों का हम स्वरूप देख रहे हैं। इसमें तो व्यवहारकाल गिनने का यह नाप है, अनादि से आज तक इस जीव ने कितना काल गंवाया है, कहां-कहां कितनी अवगाहना से साथ जन्मा है, कौन-कौनसे परमाणुओं को ग्रहण किया है, किस-किस क्षेत्र में जन्मा है, कौन-कौनसे जन्मक्षण हुये हैं, क्रम से भी, उसकी हमने बात देखी है। अब यहां भावों की बात चलेगी यानी जीव ने अलग-अलग भाव किये हैं, ऐसा कोई एक भाव शेष नहीं रहा कि इस जीव ने अनंतों बार नहीं किया हो। यहां तो क्रम से करने की बात है।

तो भावों में चार प्रकार बताये हैं – पहले में पहले बताया था योगस्थान, पुस्तक निकालना ६४६ पृष्ठ, यहां से शुरू करना है जहां लिखा है न भावपरावर्तन कहते हैं। यहां चार परिणामों की बात है एक तो है योगस्थान, स्थान का अर्थ होता है भेद, व्हेरिएशन्स। ये जो व्हेरिएशन्स होते हैं, वे अनेक जीवों की अपेक्षा ॲट अ टाइम हम कह सकते हैं और यहां तो एक जीव की अपेक्षा बात चल रही है, इसलिये अलग-अलग योग अलग-अलग समयों में होंगे। एक समय में तो कोई एक ही योगस्थान होगा उसको, अन्य समय में जीव अन्य-अन्य योग को प्राप्त होगा। यह जरूरी नहीं कि वह कंटिन्युअस क्रम से ही योगों को प्राप्त होता है। कोई पर्टिक्युलर योग चल रहा हो तो अनंतर समय में असंख्यातगुणा बढ़कर योग हो सकता है, तब समयप्रबद्ध भी असंख्यातगुणा हो जाता है। यानी योग किसी १ नंबर के योगस्थान पर है, तो हो सकता है एकदम १० नंबर के योगस्थान पर चला जाये। असंख्यात योगस्थान होते हैं, तो उसका योग भी असंख्यातगुणा बढ़ सकता है क्योंकि योग के प्रपोर्शन में समयप्रबद्ध के परमाणुओं की संख्या निश्चित होती है। अभी ये योगस्थान भी तीन प्रकार के हैं उनको देखकर फिर हम आगे बढ़ेंगे।

श्रोता: योग के बारे में एक प्रश्न है – आत्मा में असंख्यात प्रदेश हैं, तो सारे प्रदेशों में अलग-अलग योग होता है ऐसा आपने कहा। तो सारे प्रदेशों में अलग-अलग योग होगा तो जो कर्मपरमाणु को ग्रहण करेगा तो अलग-अलग प्रदेशों में जैसे-जैसे व्हेरिएशन्स होंगे उसीप्रकार से ही परमाणुओं को ग्रहण करेगा?

नहीं, सब मिलकर पूरा योगस्थान कहने में आता है। सभी वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक का मिलकर योगस्थान का वर्णन आता है। तो पूरे योगस्थान इतने अनुभागवाला कहेंगे यानी इतना योग उसमें है। तो उसका हम कहेंगे न कि साधारण यानी ॲव्हरेज होगा उसकी बात होगी, उसमें हीनाधिकता तो होगी ही। *श्रोता: योग तो बना, स्पर्धक बनायें तो अलग-अलग स्पर्धक बने?* बने यानी हमने कहने के लिये बताये। *श्रोता: हां, एक समय में हुये न वे अलग-अलग, एक समय में ये अलग-अलग हैं...* हां! *श्रोता: अलग-अलग व्हेरिएशन्सवाले जो योग के हिसाब से प्रदेश हैं, कर्मपरमाणु आयेंगे उसके हिसाब से तो वे भी अलग-अलग होने चाहिये?* नहीं-नहीं... एक समय में तो एक ही लॉट आता है, तो जो ग्रँड टोटल वह योगस्थान की जितनी योग्यता है, भले प्रत्येक प्रदेश में अलग-अलग जो कुछ है, परंतु उस योगस्थान के योग्य परमाणुओं की संख्या होगी। *श्रोता: बराबर।* जितनी जो-जो है वह... आगेवाले योगस्थान जो योग से बढ़कर होंगे, यानी शक्ति से बढ़कर यानी योग की शक्ति अधिक जिसमें होगी, यानी जिसमें कहेंगे न कि भावयोग की बात है, शक्ति को नाप रहे हैं, अविभागप्रतिच्छेदों में नापते हैं, तो वहां पर भी परमाणुओं की संख्या जो ली जायेगी वह अधिक होगी। यहां एक-एक प्रदेश का अलग हिसाब नहीं रहेगा, परंतु उस योगस्थान में कितने परमाणु ग्रहण किये जायेंगे उसकी बात होगी।

अब ये योगस्थान भी तीन प्रकार के बताये हैं। बोर्ड पर देखना आप, एक है उपपाद योगस्थान, एक बार पहले भी उपपाद नाम आया था, याद हैं न! *श्रोता: उपपादकाल।* उपपादकाल, हां, उसमें क्या देखा था हमने? जन्म का पहला समय। यहां पर भी उपपाद योगस्थान है। पहले हम इनके नाम देखते हैं, आप सब लोग रिपीट करना। उपपाद योगस्थान। *सभी श्रोता: उपपाद योगस्थान।* एकान्तवृद्धि योगस्थान। *सभी श्रोता: एकान्तवृद्धि योगस्थान।* और परिणाम योगस्थान। *सभी श्रोता: परिणाम योगस्थान।* अब ये तीन प्रकार क्या हैं उनको हम देखेंगे। उपपाद योगस्थान का अर्थ होता है किसी एक गति से मरकर यानी अन्य किसी एक पर्याय से मरकर जीव अन्य पर्याय धारण करता है यानी अन्य पर्याय में चला जाता है तो वहां पहले समय में उसका जो योग होगा उसको कहेंगे उपपाद योग। यानी विग्रहगति में आया है न, वह तो वहां उसका उपपाद योग होगा, पर्याय धारण करने का पहला समय। आयु की शुरुआत कब होती है? विग्रहगति से ही हो जाती है। ऋजुगति से जायेगा तो उसका वह पहला समय होगा और जो विग्रहगति में मोड़ से जायेगा तो वह मोड़

से पहले यानी जब वह मरण हुआ था उसके नेक्स्ट समय में उसकी जो आयु चालू हो गयी है उस संबंधी का वह योग उपपाद योग कहलायेगा, वह उसका पहला समय है। यानी वहां उसकी पर्याय शुरू हुयी। पर्याय यानी कौनसी पर्याय? वह हमारी एक समयवाली उसकी बात नहीं है। मनुष्यपर्याय, देवपर्याय, नरकपर्याय, तिर्यंचपर्याय उसको यहां पर्याय कहते हैं। हम आप मनुष्यपर्यायवाले हैं, पर्याय शब्द अलग-अलग अर्थ में आता है। जब पर्यायबुद्धि कहेंगे तो यह जो मनुष्यपर्याय चल रही है उसमें यह मैं हूं ऐसी बुद्धि - ऐसी खोटी मान्यता उसको पर्यायबुद्धि कहेंगे और जहां कहेंगे द्रव्य हर समय परिणमित होता है उसकी एक समय में एक-एक पर्याय होती है वह पर्याय यानी उसको हम अर्थपर्याय कहेंगे – एक-एक गुण की एक समय की एक-एक पर्याय। तो पर्याय शब्द अलग-अलग अर्थों में आते हैं, यहां तो पर्याय धारण करने का पहला समय समझना, तो उसमें मोड़वाली गति में योग जघन्य होता है। यह उपपाद योग मोड़वाली गति में जघन्य होता है और ऋजुगति में उत्कृष्ट होता है। *श्रोता: एक समयवाला होता है?* एक समयवाला ही होता है और बस एक समय मात्र ही होता है। यानी किसी जीव के एक भव में एक बार ही, एक समय के लिये ही उपपाद योग होगा यानी उपपाद योग एक जीव की अपेक्षा उस भव में एक बार पहले समय के लिये ही हुआ, तो उसमें जो कुछ योगस्थान होगा वह उसका उपपाद योग होगा।

अब दूसरे नंबर का योग कौनसा है? एकान्तवृद्धि योग। एकान्तवृद्धि का ही अर्थ होता है एकान्त मतलब मात्र, एकांतवृद्धि मतलब स्टीप राइझ हो रही है यानी योग में एकान्तरूप से वृद्धि-वृद्धि-वृद्धि हो रही है। पहले समय में उसका उपपाद योग था, दूसरे समय से उसके योग में प्रति समय असंख्यातगुणा वृद्धि हो रही है सतत-कंटिन्युएशन में – हर समय वृद्धि-वृद्धि-वृद्धि-वृद्धि-वृद्धि, यह कब तक चलेगी? तो कहते हैं कि शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के एक समय पूर्व तक। कब तक होगी? हमने छह पर्याप्ति देखी थी पहले दिन, याद है न! कोन-कौनसी थी? *सभी श्रोता: आहारपर्याप्ति।* आहारपर्याप्ति, *सभी श्रोता: शरीरपर्याप्ति।* शरीरपर्याप्ति, *सभी श्रोता: इन्द्रियपर्याप्ति।* इन्द्रियपर्याप्ति, *सभी श्रोता: श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति।* श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति, *सभी श्रोता: भाषापर्याप्ति।* भाषापर्याप्ति, *सभी श्रोता: मन:पर्याप्ति।* मन:पर्याप्ति।

शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के एक समय कम काल तक, यानी अंतर्मुहूर्त तक, अंतर्मुहूर्त

लगता है उसको – आहारपर्याप्ति पूर्ण होगी एक अंतर्मुहूर्त में, और एक छोटे से अंतर्मुहूर्त में शरीरपर्याप्ति पूरी होगी। इसका अर्थ क्या है? किसी भी जीव का अपनी-अपनी पर्याय में पहले समय में तो उपपाद योग होता है, दूसरे समय से लेकर शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के एक समय पूर्व तक एक अंतर्मुहूर्त काल तक एकान्तवृद्धि योग पाये जाते हैं। यानी उसका योग प्रति समय बढ़ता-बढ़ता-बढ़ता चला जाता है – असंख्यातगुणा-असंख्यातगुणा बढ़ेगा। योग में कभी अनंतगुणा नहीं होगा, इसमें असंख्यातगुणा ही होगा। कर्मों की शक्ति में हम अनंतगुणा कहते हैं, अनुभाग अनंतगुणा बढ़ा वगैरह-वगैरह वह कर्मों में बताते हैं यहां नहीं, कर्मों के अनुभाग में वह शब्द आता है अनंतगुणावाला। योग बढ़ेगा अधिक से अधिक तो भी असंख्यातगुणा बढ़ेगा उससे अधिक नहीं बढ़ेगा।

तो इसको हमने कहा यह जो योगों में प्रति समय अविभागप्रतिच्छेदों की वृद्धि होगी तो यह एकान्तवृद्धि होती है। अब शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के समय से जीवन के अंतिम समय तक उसको कहते हैं अपने आयुर्बल के अंतिम समय तक जो योग होते हैं उनको कहते हैं परिणाम योगस्थान या परिणाम योग। हमने तीन प्रकार देखे, कौनसे? पहले समय में है उपपाद योग, अब दूसरा वह एकान्तवृद्धि को हटा दो, शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के समय से लेकर आयु के अंत तक परिणाम योग है और दोनों योगों के बीच में एकान्तवृद्धि योग है। यहां तक ख्याल में आयी बात? आप कहेंगे लब्धिअपर्याप्त जीवों के तो शरीरपर्याप्ति पूरी ही नहीं होती है, उसकी तो एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होती तो उसमें कैसे ले लेना है? तो कहते हैं जिसके एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होती है तो उसके आयु का अंतिम त्रिभाग लेना; दो तिहाई आयु बीत गयी है, एक तिहाई बाकी है यानी $\frac{१}{३}$ बाकी है जहां आयु के बंध का अवसर आता है न। तो आयु के अंतिम त्रिभाग के पहले समय से अंतिम समय तक परिणाम योगस्थान होते हैं।

फिर से दुबारा, पर्याप्त जीवों में कैसे लेना है? पहले समय में उपपाद योग होता है और फिर दूसरे समय से लेकर शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के एक समय पूर्व तक एकान्तवृद्धि योग होते हैं, वहां उसका योग प्रतिसमय असंख्यातगुणा बढ़ते चला जाता है। शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के समय से लेकर आयु के अंत तक परिणाम योग होते हैं। यह परिणाम योग क्या है उसको भी हम देखेंगे। परंतु प्रश्न हमें ऐसा हुआ कि जिसके शरीरपर्याप्ति क्या आहारपर्याप्ति

भी पूर्ण नहीं होती, जो लब्धिअपर्याप्त हैं उन जीवों में क्या होगा? उनमें पहले समय में उपपाद योग होगा, आयु के दो तृतीयांश यानी दो तिहाई बीत जाने तक उनके एकान्तवृद्धिवाला योग होगा और जब एक तृतीयांश आयु - एक तिहाई आयु शेष रहती है तब उनके परिणाम योग होंगे।

अब यह परिणाम योग समझना है, एकान्तवृद्धि तो समझ सकते हैं, एक समय से दूसरे समय में अधिक, फिर तीसरे समय में अधिक, फिर चौथे समय में अधिक-अधिक-अधिक-अधिक होते रहते हैं। ये परिणाम योग कैसे होते हैं? परिणाम योग यानी परिणाम में कभी वृद्धि भी होती है, कभी हानि भी होती है, कभी योग उतना का उतना भी रह सकता है। परिणाम योग उनको कहते हैं कि एक बार तो एकान्तवृद्धि के अंत तक पहुंच गया तो उसके पश्चात् योगों की वृद्धि भी हो सकती है, योगों की हानि भी हो सकती है और योग उतना का उतना भी रह सकता है, अवस्थित जिसको कहते हैं। परंतु जो अवस्थित है, वह दो समय तक उतना का उतना रह सकता है या अधिक से अधिक आठ समय तक। इससे अधिक यह अवस्थितवाला योग नहीं रह सकता। जब-जब अन्य भी परिणामों की चर्चा आती है तब कोई भी वह परिणाम दो समय से आठ समय रह सकता है उससे अधिक काल तक वही परिणाम रह नहीं सकता।

श्रोता: योगस्थान में जो बताया, शरीरपर्याप्ति हुयी और उसके बाद आयुपर्याप्ति... आयुपर्याप्ति नहीं होती, आयु पूर्ण हुयी यानी मरण तक। *श्रोता: वह ख्याल में नहीं आया...* हमने क्या देखा था? कोई जीव मरकर कहीं जन्म लेता है तो शरीर धारण करने के समय से ही उसकी छह पर्याप्ति चालू होती हैं। तो छहों पर्याप्ति एक साथ चालू होती हैं। पहले में पहले आहारपर्याप्ति पूर्णता को पहुंचती है फिर शरीरपर्याप्ति पूर्ण होती है, बाद में बाकी शेष तीसरी, चौथी, पांचवीं, छठी पूर्ण होगी। शरीरपर्याप्ति पूर्ण होते ही उसके परिणाम योग शुरू होते हैं, बाकी हमें पर्याप्ति से कन्सर्न नहीं है, हमारा तो योग का विषय है। तो आयु के पहले समय में उसका उपपाद योग होता है, शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के एक समय पूर्व तक एकान्तवृद्धिवाला योग होता है, योग बढ़ता चला जाता है, एकान्त से वृद्धि-वृद्धि-वृद्धि होती जाती है, उसके बाद शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के समय से लेकर जितनी आयु शेष है, अभी सातवें नरक का नारकी होगा तो ३३ सागर की आयु शेष है, दूसरा कोई होगा ४ साल

की आयु लेकर आया है तो उसके ४ साल शेष हैं न? एक अंतर्मुहूर्त गया है तो उसमें परिणाम योग होते हैं। उसका अर्थ क्या है योग कभी बढ़ते हैं कभी हीन होते हैं, उसका अर्थ क्या है? एक समय में जितना योग है, दूसरे समय में कैसा होता है तो कभी वृद्धि भी होती है और कैसा होता है पहले समय में जितना होता है उससे हानि भी हो सकती है या और क्या हो सकता है? पहले समय में जितना था दूसरे समय में उतना का उतना रह सकता है, इसको कहेंगे अवस्थित। तो जहां यह हीन होना, अधिक होना या उतना का उतना रहना ये बातें होती है उनको कहेंगे परिणाम योग। तो प्रत्येक जीव में ऐसा चलेगा। तो इसलिये प्रश्न उठा था कि लब्धिअपर्याप्तों में क्या होगा? पहले समय में उपपाद योग होगा, दो तिहाई आयु जब तक नहीं बीतती तब तक उसके एकान्तवृद्धि योग होंगे, उसके बाद एक तिहाई बाकी है तो वहां से लेकर आयु के अंत तक उसके परिणाम योग होंगे, कभी वृद्धि, कभी हानि, कभी उतना का उतना। यह वृद्धि-हानि किससे कम्पेअर करना? एक समय में जितना योग है उसके नेक्स्ट समय में, अनंतर समय में वह योग अधिक है, हीन है कि उतना का उतना है इसको कहेंगे हानि भी होती है, वृद्धि भी होती है या उतना का उतना भी रह सकता है। तो हमने ये तीन प्रकार के योग देखे।

तो अब एकेन्द्रिय के अपने-अपने योग्य ये तीनों जो हैं, हर जीव के ये तीन प्रकार के योग होते हैं। पहले समय में उपपाद योग है। अभी जो एकेन्द्रिय जीव हैं उनकी अपनी कुछ मर्यादा होगी, उनकी अपनी कुछ रेंज होगी। तो एकेन्द्रियों के लिये उपपाद योग में किसी जीव के जघन्य है और किसी जीव के उत्कृष्ट है, वह उपपाद योगों की रेंज होगी। यानी हम ऐसा कहेंगे एकेन्द्रिय जीवों के उपपाद योग का यह जघन्य भेद है और किसीके एकेन्द्रियों में ही उपपाद योग का यह उत्कृष्ट भेद है; उसको स्थान कहेंगे हम। तो जघन्य योगस्थान से उत्कृष्ट योगस्थान तक एकेन्द्रियों के लिये भेद होंगे। इतनी बात ख्याल में आती है?

जो द्वीन्द्रिय हैं, एकेन्द्रियों से द्वीन्द्रियों का योग अधिक होगा, असंख्यातगुणा होगा। तो द्वीन्द्रियों के भी उपपाद योग जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक अलग-अलग होंगे। जघन्य, उत्कृष्ट और दोनों के बीच में जो भेद हैं उनको कहेंगे मध्यम। त्रीन्द्रियों के अपने योग्य जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक अनेक भेद होंगे। चतुरिन्द्रिय के लिये अपने योग्य ये सारे

भेद होंगे। पंचेन्द्रियों में भी संज्ञी-असंज्ञी भेद करो तो भी उनकी भी अलग-अलग अपनी-अपनी रेंज होगी। ये किसके भेद हमने देखे? उपपाद योगों के।

ऐसे ही एकान्तवृद्धि में तो क्या है? एक जीव की अपेक्षा, उपपाद का जो योग था फिर एकान्तवृद्धि हुयी तो वह जघन्य है और वह बढ़ते-बढ़ते-बढ़ते शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के एक समय पूर्व तक वह उत्कृष्ट होगी, यह एक जीव की अपेक्षा है। फिर भी अनेक जीवों की अपेक्षा उनमें भी एकान्तवृद्धि के जो योगस्थान हैं उनमें भी जघन्य और उत्कृष्ट ऐसे सभी भेद होंगे। ऐसे ही परिणाम योगों के बारे में है। यानी ये जो तीन प्रकार के योग हैं उन तीनों ही प्रकारों में एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के, जघन्य उत्कृष्ट-जघन्य उत्कृष्ट-जघन्य उत्कृष्ट ऐसे भेद होंगे। अब कर्मकाण्ड में इसका बहुत विस्तार है, योगस्थान के प्रकरण में उसके ८४ स्थान बताये हैं। एक स्थान से दूसरा स्थान असंख्यातगुणा – पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा वगैरह बहुत लंबी चौड़ी लिस्ट बतायी है, अल्पबहुत्व बताया है – हम उसके विस्तार में नहीं जायेंगे। यह किसको क्या कहना बस इतना ही हमें यहां देखना था। इन चौरासी का विस्तार ऐसा है – चौदह जीवसमासों में उनके प्रत्येक के जो तीन-तीन प्रकार के योग होते हैं उनमें जघन्य और उत्कृष्ट ऐसे कुल चौरासी भेद होते हैं, उनका यहां अल्पबहुत्व बताया है।

अभी तो जो हम भावपरावर्तन देख रहे हैं वह कैसे देखना है, पहले में पहले तो हम एक पंक्ति में स्थिति के भेद लिखेंगे। स्थिति के भेद देखेंगे हम यानी स्थिति के भेद कैसे लिखेंगे? हम तो अभी संज्ञी पंचेन्द्रियों की अपेक्षा बात करेंगे, मिथ्यादृष्टि की अपनी बात चल रही है क्योंकि परावर्तन तो मिथ्यादृष्टि के ही होंगे। तो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव कम से कम स्थितिबंध करता है, अब हम मिथ्यात्व प्रकृति की बात देखते हैं, मिथ्यात्व प्रकृति का जघन्य में जघन्य स्थितिबंध, संज्ञी पंचेन्द्रियों का, कितना होगा? तो कहते हैं अंत:कोड़ाकोड़ी सागर। हमने देखा था न यहां और उत्कृष्ट स्थितिबंध तो हमें मालूम है कितना होता है? ७० कोड़ाकोड़ी सागर। यानी स्थिति के भेद कितने हुये? देखो कोई भी भेद निकालना है तो उत्कृष्ट मायनस जघन्य प्लस १। जैसे हमने आपको बताया था जघन्य ५ होगा, उत्कृष्ट १०० होगा तो तो १०० – ५ + १। क्योंकि हमको ५ को भी गिनना है और १०० को भी गिनना है, हमने केवल ४ नहीं गिने – १, २, ३, ४ तो ९६ भेद हुये न

उसके। ऐसे ही उत्कृष्ट स्थिति कितनी है तो ७० कोड़ाकोड़ी सागर, जघन्य कितनी है तो अंत:कोड़ाकोड़ी सागर, तो उसमें से वह मायनस करना और एक मिला देना, इतने तो स्थिति के भेद हो जायेंगे। ये स्थिति के भेद यहां होते हैं तो उनको देखेंगे थोड़ी देर में। तो हम स्थिति के भेदों को यहां देख रहे हैं यानी एक-एक समय से बढ़ते हुये सारे स्थिति के भेद हो जायेंगे।

फिर हमने दूसरी पंक्ति में क्या देखे थे? कषाय के अध्यवसायस्थान देखे थे। यानी जिन परिणामों से स्थिति का बंध होता है, उन कषायों को - उन परिणामों को क्या कहते हैं? कषायअध्यवसायस्थान। हम शॉर्ट में उनको कषायस्थान कहेंगे तो भी कोई बात नहीं है उनको कषायउदयस्थान भी नाम देते हैं। बार-बार स्थितिबंधअध्यवसायस्थान ऐसा लंबा चौड़ा नाम हम नहीं लेंगे हम उनको कषायस्थान या कषायअध्यवसायस्थान कहेंगे। तो कषायअध्यवसायस्थान हमको समझने हैं। एक तो स्थिति के भेद हम एक पंक्ति में लिख देंगे, दूसरी पंक्ति में क्या लिखेंगे हम? कषायों के स्थान लिखेंगे। तो कषायों के स्थान एक-एक स्थितिभेद के लिये कषायों के स्थान कितने होते हैं उसकी हम चर्चा करेंगे।

तो हमने यह बात देखी थी कोई पर्टिक्युलर स्थिति का बंध है, तो उसके कारणभूत कषाय कितने होते हैं? तो असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग कषाय उस एक स्थिति के बंध के लिये कारणभूत हो सकते हैं। एक समय अधिक स्थिति के कारणभूत परिणाम? उसके अपने जो असंख्यातलोकप्रमाण हैं वे उसको कारणभूत परिणाम हो सकते हैं और एक समय अधिक स्थितिबंध के कारणभूत कषाय परिणाम? वह उनकी असंख्यातलोकप्रमाण रेंज होती है। ऐसे हमने बहुत सारे असंख्यातलोक-असंख्यातलोक ऐसे भेद देखे थे। तीसरी पंक्ति में हमने किसके भेद देखे थे याद है न? अनुभागबंधअध्यवसायस्थान के। देखो, अनुभागबंध किसको कहना? जिस समय कर्मों का बंध होता है तो जैसे उसमें कुछ विशिष्ट स्थिति पडती है वैसे कुछ अनुभाग भी होता है। ये अनुभागों के व्हेरिएशन्स तो बहुत हैं और बहुत सूक्ष्मता से हैं। परिणाम तो हम कहेंगे एक समय में जीव को एक ही परिणाम हो रहा है और स्थिति विशिष्ट बंध रही है, परंतु अनुभाग की अपेक्षा उसी परिणाम को हम देखेंगे तो उसमें असंख्यातलोकप्रमाण उस एक परिणाम में भेद हैं, क्योंकि वह अलग-अलग अनुभागबंध कर सकते हैं।

जहां एक समय में स्थिति का पर्टिक्युलर यानी विशिष्ट बंध हो रहा है, वहां अनुभाग के कितने अलग-अलग भेद हो सकते हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण। यानी उस एक समय का जो परिणाम है उसमें इतने भेद हैं। *श्रोता: एक जीव के?* एक जीव के, एक समय में जो स्थितिबंध के कारणभूत जो एक परिणाम है उसी परिणाम में अनुभाग की अपेक्षा भेद कहेंगे हम, तो कितने अलग-अलग अनुभागबंध हो सकते हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण। इसीका अर्थ यह है कि किसी विशिष्ट स्थितिबंध के साथ कितने अलग-अलग अनुभागबंध हो सकते हैं? तो असंख्यातलोक गुणा असंख्यातलोकप्रमाण। अब हमने योग के स्थान भी देखे थे, अभी हमने योगों की बात की थी। जहां किसी विशिष्ट स्थिति का बंध हो रहा है वहां उसके बंध के कारणभूत परिणाम यानी कषाय भी हो रहे हैं और उन कषायों में ही अनुभाग की अपेक्षा भी अलग-अलग बंध हो रहा है यानी उनके भेद हो रहे हैं और उसके साथ वहां योग तो है ही है, तो योग के भी व्हेरिएशन्स कितने होंगे? अभी हम संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात कर रहे हैं तो संज्ञी पंचेन्द्रिय के योग्य जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के सभी योग होंगे। तो ये चार अलग-अलग कॉलम-पंक्तियां करके इसको समझेंगे; अभी तो यह स्थान क्या है यह समझ रहे हैं। उसके कैसे-कैसे भावपरावर्तन होंगे उसको हम देखेंगे यहां। जैसे हमने सुबह देखे थे न, इसीको यहां देखते हैं।

देखो यहां चार्ट में **S** लिखा है, **S** यानी हम स्थिति के भेद बतायेंगे। **S1** यह जघन्य से जघन्य स्थितिबंध है। **S2** यह एक समय अधिकवाला स्थितिबंध है, **S3** यह और एक समय अधिकवाला है, **S4** यह और एक समय अधिकवाला है, **S5** यह और एक समय अधिकवाला है। यानी जघन्य स्थिति को हम १ नंबर देंगे जो स्थिति का पहला भेद है। पहला भेद यानी एक समयवाली स्थिति कोई नहीं बांधता है, पहला भेद यानी मिनिमम स्थितिबंध जो है। एक समय अधिक, दो समय अधिक, तीन समय अधिक, चार समय अधिक, ऐसी लंबी लाइन चलेगी। हम तो यहां इतने चार-पांच ही भेद दिखायेंगे। *श्रोता: यह ओव्हरलॅप होता है?* हां, स्थितिबंध तो एक-एक समय के अलग-अलग हैं परंतु उनके कारणभूत कषायस्थान जो हैं वे ओव्हरलॅप होते हैं, उसीकी बात तो हमने सुबह की थी, उसको फिर दुबारा समझेंगे।

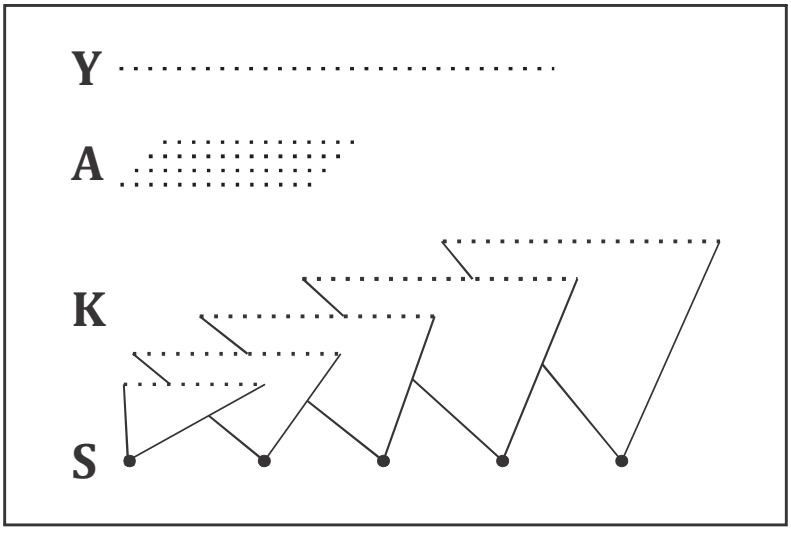

यह जो स्थिति है, किसीको जघन्य स्थितिबंध हो रहा है उसके कारणभूत ये कषाय के परिणाम कितने हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण। कषायस्थानों को हमने K लिखा और देखो ये हमने डॉट-डॉट बताये हैं तो एक ही स्थिति के कारणभूत ये सारे परिणाम हैं। ये अलग-अलग परिणाम वही स्थिति बांध सकते हैं। उतनी ही स्थिति ये अलग-अलग इतने परिणाम बांध सकते हैं। कितने हैं वे? असंख्यातलोकप्रमाण अलग-अलग परिणाम विशिष्ट स्थिति का बंध कर सकते हैं। अब हम एक समय अधिक स्थितिवाले की बात करेंगे, उसके भी अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण परिणाम हैं वे इस स्थिति को बांध सकते हैं, ये बीचवाले जो परिणाम हैं वे सारे ओव्हरलॅपिंग हैं। यानी ये परिणाम जघन्य स्थिति भी बांधेंगे और एक-एक समय से अधिक स्थिति को भी बांध सकते हैं। आगे चल कर देखते हैं, वहां और एक समय स्थिति अधिक है तो उसको बांधनेवाले परिणाम कितने हैं? तो कहते हैं वे भी असंख्यातलोकप्रमाण परिणाम हैं, उनमें भी ओव्हरलॅपिंग होते हैं। स्थिति के भेदों में यह एक समय अधिक, एक समय अधिक ऐसे ही चलेगा आगे तक। जब कहेंगे कषाय के टोटल परिणाम कितने हैं, तो जघन्य स्थितिबंध के कारणभूत जघन्य कषायस्थान से लेकर जो अंतिम उत्कृष्ट स्थितिबंध के कारणभूत उत्कृष्ट कषायस्थान तक असंख्यातलोकप्रमाण सभी स्थान होंगे। परंतु एक-एक पर्टिक्युलर स्थिति के बंध के कारणभूत परिणाम अपने-अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण पाये जाते हैं। यहां तक बात ख्याल में आयी?

अब ये तो हो गये कषाय के स्थान। अब अनुभागबंधअध्यवसायस्थान जिसको कहेंगे उसको यहां हमने A लिखा है, यानी स्थिति के साथ अनुभाग का भी बंध हो रहा है। स्थिति पर्टिक्युलर बंध रही है तो इतने सारे परिणाम उस स्थिति के कारणभूत हैं, उनमें से हम किसी एक परिणाम को लेते हैं, पहलेवाले को। ये कुल स्थितियां हैं न, अगर मिथ्यात्व की बात होगी तो अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक, अगर ज्ञानावरण की होगी तो अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से ३० कोड़ाकोड़ी सागर तक, प्रत्येक कर्म की अलग-अलग कुल स्थितियां हैं। यहां तो हम एक प्रकृति पर घटा रहे हैं, बाद में हम देखेंगे परावर्तन में कहां-कहां क्या, किसको लेना है। यहां क्या-क्या परिणाम होते हैं उसको पहले हम यहां देख रहे हैं। *श्रोता: निषेक?* यहां निषेक नहीं है, यहां स्थिति बस हमने डॉट में बतायी है, इतनी स्थिति बांधी, अंत:कोड़ाकोड़ी सागर बांधी, यह एक समय और बढ़कर बांधी, यह एक समय और बढ़कर बांधी, ये स्थिति के अलग-अलग भेद हैं। कर्मों में जब स्थिति पडती है और निषेक रचना होती है उसको यहां नहीं दिखाया है। परंतु इस स्थिति के कारणभूत जो अलग-अलग कषाय के परिणाम हैं वे कितने होते हैं तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण। ये सभी अलग-अलग परिणाम उस एक ही स्थिति को बांध सकते हैं।

अब इसमें से एक ही कषाय परिणाम हम कन्सिडर करेंगे, असंख्यातलोकप्रमाण हैं उनमें से हमने एक लिया। तो उस एक कषाय परिणाम के साथ यानी वही जो कषाय परिणाम है उसमें अनुभागबंध के व्हेरिएशन्स कितने होते हैं? तो कहते हैं वे भी असंख्यातलोकप्रमाण हैं। इस एक के साथ असंख्यातलोकप्रमाण, इस दूसरे के साथ उसके अपने असंख्यातलोकप्रमाण, तीसरे के साथ उसके अपने असंख्यातलोकप्रमाण, ये एक पंक्ति में बताये हैं न! इसको ऐसे समझना है देखो, स्थिति को हमने फिक्स रखा है, जघन्य स्थिति पर रखा। उसके कारणभूत कषाय परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं उनमें से हमने जघन्य कषाय की बात देखी। तो उसके साथ बंधनेवाले अनुभाग कितने अलग-अलग बंध सकते हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोकप्रमाण। अब उसमें से भी हम जघन्य अनुभागबंधअध्यवसायस्थान को लेंगे, तो उसके साथ योगस्थान कितने हो सकते हैं? तो कहते हैं पंचेन्द्रिय के योग्य जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के सभी योगस्थान उसके हो सकते हैं। *श्रोता: कितने समय में हो सकते हैं?* एक समय में ये चार हो रहे हैं। *श्रोता: नहीं,*

योग कितने हो सकते हैं? योग ॲट अ टाइम एक समय में एक ही होगा, एक समय में कोई एक ही योग होगा, हीनाधिक में कोई तो एक योग होगा। अलग-अलग समय में अलग-अलग योग होंगे, नाना जीवों के ये अलग-अलग योगस्थान पाये जाते हैं। परंतु यहां तो परावर्तन एक जीव कर रहा है न, तो एक जीव को जब जो होगा तब उसको हम देखेंगे। यहां तक बात ख्याल में आयी? *श्रोता: योगस्थान की क्या रेंज बतायी आपने?* योगस्थान जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। देखो उसको कैसे लिखते हैं उसको हम देखेंगे, उसकी संदृष्टि देखेंगे हम।

श्रोता: जैसे आपने स्थितिस्थान जघन्य लिया उसके बाद आगे एक समय अधिक लिया। तो फिर आपने कहा कि ऊपर का जो परिणाम है, जो बीच में जो आता है जो कॉमन है, तो वह जघन्य स्थिति भी बांध सकता है और एक समय अधिक भी बांध सकता है...।

देखो आपका यह प्रश्न है कि इसके ये परिणाम इस स्थिति को बांध सकते हैं, ये तो ओव्हरलॅपिंग परिणाम हैं तो ये परिणाम इस स्थिति को बांध सकते हैं और इस अधिक स्थिति को भी बांध सकते हैं। *श्रोता: ऐसा सेम ऊपर भी है?* ऊपर भी है, अभी इसमें भी ओव्हरलॅपिंग है तो ये परिणाम उसको भी बांधेंगे, उसको भी बांधेंगे, उसको भी बांधेंगे। इन तीनों में ये जो सब इधर भी कॉमन हैं, इधर भी कॉमन हैं, इधर भी कॉमन हैं तो ये और भी स्थितियां बांधते हैं। है न! तो यह ऐसा ओव्हरलॅपिंग कितने काल तक चलेगा, कितनी स्थितियां... *श्रोता: वह तो होगा, बराबर – तो ऐसे ही जैसे जब आप कषाय का एक परिणाम लेते हैं तो इस प्रकार की रचना अनुभाग की भी होगी?* हां, वह अनुभाग में भी वैसा ही है। परंतु हम ऐसा देखते हैं न कषाय में भी ओव्हरलॅपिंग है, अनुभाग में भी ओव्हरलॅपिंग है। *श्रोता: योग में भी ऐसा होगा?* योग में ओव्हरलॅपिंग नहीं होगा क्योंकि एक-एक अनुभागअध्यवसायस्थान के साथ जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के सभी योगस्थान हो सकते हैं। योग में ओव्हरलॅपिंग नहीं है, कोई तो एक योग होगा, केवल स्थितिबंधअध्यवसाय और अनुभागबंधअध्यवसाय के जो स्थान हैं उनमें ओव्हरलॅपिंग होता है।

एक ही समय में स्थिति का बंध हो रहा है, अनुभाग का बंध हो रहा है और उस समय कोई विशिष्ट योग है। उसके कारण तो परमाणु की संख्या निश्चित हो रही है। परंतु

जीव में क्या है? तो जीव में तो योग है। यह जीवों के भावों की चर्चा चल रही है। वैसे स्थितिबंध भी पुद्गलों में, कर्मों में हो रहा है परंतु उसके आधार से हमको जीव के भावों को बताना है। विशिष्ट स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम जो हैं उनकी बात यहां है। यह ओव्हरलॅपिंग की बात है उसके लिये हरेक की अपनी-अपनी जो असंख्यातलोकप्रमाण रेंज है, बाद में जब पलटाने की बात आयेगी तब हम उसके आधार से वह बात बतायेंगे आपको। अभी तो यह क्या पोझिशन है, जीवों के कौन-कौनसे भाव हैं उसको हमने देखा है। उन भावों का परावर्तन किसप्रकार से होता है उसको अभी हमने नहीं देखा है। अभी हम यहां थोड़ा पढ़ेंगे, फिर और समझेंगे, ६४६ पेज **भावपरावर्तन कहते हैं – योगस्थान, अनुभागबंधअध्यवसायस्थान, कषायअध्यवसायस्थान और स्थितिस्थान** स्थितिस्थान यानी स्थिति के भेद, जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक, एक-एक समय से बढ़ते हुये जो स्थिति के भेद हैं, उनको स्थिति के स्थान कहेंगे। स्थान यानी भेद, व्हेरिएशन्स। **इन चारों के परावर्तन से** परावर्तन कैसे करना यानी वह बतायेंगे किस अनुक्रम से **भावपरावर्तन होता है। सो प्रथम इनका स्वरूप कहते हैं**, क्योंकि स्वरूप ही नहीं मालूम है तो आगे की बातें ख्याल में नहीं आयेगी।

प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध के कारणभूत ऐसे प्रदेश परिस्पंद लक्षण योग उसका अर्थ क्या है? आत्मप्रदेशों के परिस्पंदनरूप योग - कंपन कहते हैं उसको, केवल हाथ-पैर हिलना उसको योग नहीं कहते। **उनके जो जघन्यादि स्थान** जघन्यादि यानी जघन्य से लेकर आगे के उत्कृष्ट तक के जो स्थान हैं **वे योगस्थान हैं। तथा जिन कषाययुक्त परिणामों से कर्मों का अनुभागबंध होता है उनके जघन्यादि स्थान वे अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं।** यानी कषाय से अनुभाग भी बंधता है और स्थिति भी बंधती है, परंतु अनुभागबंध की अपेक्षा उसी कषाय को देखेंगे तो उसमें असंख्यातलोकप्रमाण भेद होंगे। **पुनश्च जिन कषाय परिणामों से स्थितिबंध होता है उनके जघन्यादि स्थान उन्हें यहां कषायअध्यवसायस्थान कहे हैं या इन्हीं को स्थितिबंधअध्यवसायस्थान भी कहते हैं। तथा बंधनेरूप कर्मों की जो स्थिति** यह स्थिति तो कर्मों में चली जायेगी, उस समय स्थिति का बंध कितने समयों का हुआ, **उनके जघन्यादि स्थान** यानी जघन्य स्थिति या एक समय अधिक, दो समय अधिक, तीन समय अधिक या उत्कृष्ट स्थिति तक **उन्हें स्थितिस्थान कहते हैं। इनका विशेष स्वरूप आगे कहेंगे सो जानना।**

यानी जब पं.टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड में यह लिखा है कि आगे कहेंगे तो उनके मन में वह कर्मकाण्ड का सारा विषय निश्चित था। आगे कहेंगे यानी कर्मकाण्ड में आगे कहनेवाले हैं और वहां उन्होंने कहा भी है। **पुनश्च यहां एक-एक स्थितिभेद के बंध के कारणभूत** यानी जघन्य स्थितिबंध के कारणभूत, या थोड़ी अधिक स्थिति बांधी, थोड़ी और अधिक स्थिति बांधी उसके कारणभूत **अपने योग्य असंख्यात-लोकप्रमाण स्थितिबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं।** हमने उसीको कषायअध्यवसायस्थान कहा है। **पुनश्च एक-एक स्थितिबंधअध्यवसायस्थान में यथायोग्य असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं।** देखो हमने क्या पढ़ा अभी दूसरे पॅरेग्राफ में? कि यह एक-एक स्थिति के भेद, अलग-अलग, एक-एक समय से बढ़ते हुये इनको स्थिति के भेद कहेंगे। तो ये जो हुये स्थिति के भेद, तो एक-एक स्थितिभेद के बंध के कारणभूत ये क्या है? कषायस्थान हैं। वे कितने होते हैं? अपने योग्य लिखा, यह अपने योग्य शब्द महत्व का है। सभी परिणाम इसके योग्य नहीं हैं, इसके अपने योग्य कौनसे हैं? यहां से यहां तक असंख्यातलोकप्रमाण हैं, यहां पर आगे के अन्य परिणाम भी असंख्यातलोकप्रमाण हैं, परंतु वे परिणाम इस विशिष्ट - पर्टिक्युलर स्थितिबंध के योग्य नहीं हैं। वही स्थिति अनेक परिणामों से बंधी जाती है, असंख्यातलोकप्रमाण परिणामों से बंधती है परंतु यहां पर ये दूसरे जो कषाय हैं उनके कारण वह जघन्य स्थिति नहीं बंधेगी। इसलिये अपने योग्य शब्द डाला! एक-एक शब्द का अर्थ होता है यहां, वह बहुत महत्व का होता है। इसलिये कभी भी हम जो परिभाषायें बनाते हैं - डेफिनेशन्स, उनको जैसी मूल आगम में हैं वैसी ही लिख देना। समझाने के लिये अपनी ओर से डेफिनेशन यानी परिभाषा नहीं बदलना; हां उसको अपने शब्दों में भले ही हम उसके बाद विस्तार से समझाये कोई बात नहीं हैं परंतु मूल परिभाषायें तो आगम की ही होनी चाहिये, उनका एक शब्द भी इधर से उधर करते हैं तो अर्थ का अनर्थ हो सकता है, मूल वस्तु उसमें से छूट सकती है।

तो यह क्या कहा? इस किसी विशिष्ट स्थितिबंध के जो कारणभूत परिणाम हैं, हम यहां देख रहे हैं यह जघन्य स्थिति है, उसके अपने योग्य परिणाम चार्ट में देखो यहां से यहां तक हैं। इनको अपने योग्य कहा, इसके आगेवाले परिणाम इसके योग्य नहीं हैं। भले ये हैं सारे कषाय के अध्यवसायस्थान, टोटल में सबको हम शामिल कर देंगे। टोटल अध्यवसायस्थान कितने हैं? तो जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के सभी हैं। परंतु उसके अपने योग्य हैं, अब

यह जो दूसरी स्थिति है एक समय अधिकवाली, उस स्थिति के अपने योग्य तो यहां पर हैं, यहां देखो इस K वाली पंक्ति में, अभी इसके आगे के जो यहां के कषायस्थान हैं, वह इस स्थिति को नहीं बांध सकते, इसकी रेंज तो यहां से शुरू होती है और आगे तक चलती है। फिर आगेवाले – उसकी वह रेंज अपनी है, यह हरेक की अपनी-अपनी रेंज है। इसको यहां पर इसलिये कहते हैं कि **यहां एक-एक स्थितिभेद के बंध के कारणभूत अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण स्थितिबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं।** इसका अर्थ ख्याल में आया?

एक-एक स्थितिभेद के अपने-अपने जो कारणभूत परिणाम हैं वे अलग-अलग हैं, फिर भी हरेक की संख्या कितनी है? तो असंख्यातलोकप्रमाण है। हां, ये जो असंख्यातलोकप्रमाण हैं तो वह असंख्यातलोक का प्रमाण भी आगे-आगे वाली स्थितियों में बढ़ता चला जायेगा। जघन्य स्थिति के कारणभूत जितने असंख्यातलोकप्रमाण हैं उससे एक समय अधिक स्थिति के कारणभूत ये असंख्यातलोकप्रमाण ज्यादा हैं, उससे एक समय अधिक स्थिति के कारणभूत परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण ज्यादा हैं, उससे ये ज्यादा हैं, उससे ये ज्यादा हैं यानी थोड़ा-थोड़ा अधिक-अधिक हैं। **पुनश्च एक-एक स्थितिबंधअध्यवसायस्थान में यथायोग्य असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं** फिर यथायोग्य शब्द डाला। यह एक-एक स्थितिबंध-अध्यवसायस्थान जिसको हम कषायस्थान कहेंगे उस एक-एक कषायस्थान में, अभी ये इतने हैं न सारे, उसमें से एक लिया हमने। एक कषायस्थान में अनुभागबंध के स्थान कितने हैं? असंख्यातलोकप्रमाण हैं। दूसरे कषायस्थान के असंख्यातलोकप्रमाण अलग। अब इस असंख्यातलोकप्रमाण कषायस्थान में से एक-एक के लिये अपने-अपने, अपने-अपने अलग-अलग असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान होते हैं, एक-एक कषायस्थान के लिये असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान होते हैं। उसका अर्थ क्या है? इस पर्टिक्युलर स्थितिबंध के लिये अगर डायरेक्ट, अभी कषायस्थान को छोड दो, डायरेक्ट अनुभागबंधस्थान के ऊपर चले जायेंगे तो असंख्यातलोक इन टु असंख्यातलोक हो जायेंगे। यहां तक बात ख्याल में आयी? इसलिये अपने-अपने लिखा उन्होंने।

पुनश्च एक-एक अनुभागबंधअध्यवसायस्थान में अभी योगों की बात होगी **जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भाग मात्र योगस्थान पाये जाते हैं।** ये टोटल योगस्थान कितने होंगे? तो जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण, जघन्य योग से उत्कृष्ट योग तक इतने असंख्यात योगस्थान पाये जाते हैं। किसके? एक-एक अनुभाग में। हमने देखा एक जो स्थितिबंध है, स्थिति का भेद है, यह एक स्थिति के भेद के कारणभूत इतने सारे कषाय हैं हम उनको कषाय कहेंगे यहां पर, उस एक-एक कषायअध्यवसायस्थान में अपने-अपने असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान, उस एक-एक अनुभागबंध के अध्यवसायस्थान के साथ योगों के कितने अलग-अलग व्हेरिएशन्स हो सकते हैं? तो वे जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के सभी योगस्थान हो सकते हैं। हम यहां केवल संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात ले रहे हैं। ऐसा ही कथन जो एकेन्द्रियों की बात हैं, द्वीन्द्रियों की बात है, त्रीन्द्रिय की, उनकी अपनी-अपनी जो रेंज होगी उसमें ये सभी बातें घटित होंगी। हर प्रकृति पर अलग, मूलप्रकृति पर तो छोड़ो, हर उत्तरप्रकृति पर ये बातें अलग-अलग होंगी।

श्रोता: योग भी असंख्यातलोकप्रमाण हैं? नहीं, जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। योगों के जो स्थान हैं उनकी संख्या कितनी है? तो जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण और स्थिति के भेद कितने होंगे टोटल? अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक, वे भी असंख्यात होंगे न। अंत:कोड़ाकोड़ी सागर के बदले मान लेते हैं १ कोड़ाकोड़ी सागर, तो ६९ कोड़ाकोड़ी सागर के जितने समय होते हैं उतने स्थिति के भेद होंगे। ख्याल में आती है बात यह? ये स्थिति के भेद हो जायेंगे, उसमें एक-एक के इतने कषाय के भेद होंगे, उसमें एक-एक में इतने अनुभाग के भेद होंगे और एक-एक अनुभागस्थान के साथ योगों के व्हेरिएशन्स कितने होंगे? तो जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण होंगे। *श्रोता: एक अनुभागबंध के लिये...* एक अनुभागबंध के साथ *श्रोता: यह असंख्यातलोकप्रमाण और यह जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग...* जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग का प्रमाण कम है, छोटा है। देखो, लोक किसको कहते हैं? जगत्श्रेणी × जगत्श्रेणी × जगत्श्रेणी = लोक (जगत् घन)। यहां तो जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग है और वहां लोक से असंख्यातगुणा है, असंख्यातलोक है। हमें अगर इसको संदृष्टि में लिखना है, *श्रोता: लेकिन अगर आप एक-एक परिणाम के साथ लगाओगे तो फिर ज्यादा नहीं हो जायेगा?* वे तो बाद में होंगे न ज्यादा? यहां संख्या लिखनी है न? असंख्यात कैसे लिखना और लोक कैसे

लिखना? तो ये स्थिति के भेद होंगे तो वे भी असंख्यात में होंगे, अभी उसको हम कहेंगे उत्कृष्ट मायनस जघन्य +१। अभी हमें ये कषाय के अध्यवसायस्थान देखने हैं, वे एक-एक के हमने जो इतने डॉट बताये हैं वे असंख्यातलोक कैसे लिखना? तो इसकी साइन ऐसे पहले असंख्यात लिखेंगे क्योंकि जब हम अंक पढ़ते हैं तो राइट से लेफ्ट की तरफ पढ़ते हैं। नहीं समझे? जब आपका नाम हम कहेंगे – कोई जैन साहब हैं तो हम कैसे लिखेंगे? जैन साहब जैसा लिखते हैं वैसा ही पढ़ते हैं लेफ्ट टु राइट, परंतु लोक की साइन ऐसी है ≡ (तीन आडी लाइन हैं) और ə यह है असंख्यात के लिये चिन्ह। हम कैसे पढ़ते हैं? असंख्यात लोक ≡ə राइट टु लेफ्ट।

आप यह ८४ कैसे पढ़ते हैं? लिखते तो हैं ८४, ८ और फिर ४ और पढ़ते कैसे हैं? पहले ४ को पढ़ते हैं फिर ८ को – चौरा अस्सी, बयालीस। हां, अंकमार्गी होते हैं हम, राइट से लेफ्ट पढ़ते हैं, अंक सभी ऐसे पढ़े जाते हैं। हम एकम् दशम् कैसे पढ़ते हैं? एकम्, दशम्, शतम्, सहस्र, दशसहस्र,... ऐसा राइट से लेफ्ट पढ़ते हैं न? जब हम एक लाख कहेंगे तो एक के ऊपर कितने झिरो आते हैं? तो हम झिरो से एकम् दशम् कहेंगे या १ से कहेंगे? १ की व्हॅल्यू १ है की १ की व्हॅल्यू लाख है? *श्रोता: लाख है।* तो हम इसकी व्हॅल्यू इधर से देख रहे हैं – अंक हमेशा राइट से लेफ्ट पढ़े जाते हैं। इसको कहते हैं अंकानाम् वामतो गति; इसलिये पहले असंख्यात कहेंगे बाद में लोक कहेंगे। लिखेंगे ऐसा और पढ़ेंगे ऐसा; असंख्यातलोक ≡ə।

केवल लोकप्रमाण असंख्यात कहना है तो हम केवल तीन लाइन लिखेंगे, ≡ इसका अर्थ है लोक। तो एक-एक स्थिति के कारणभूत कषाय परिणाम हैं असंख्यातलोक और उस असंख्यातलोक में से एक-एक कषाय के साथ हैं ये अपने योग्य असंख्यातलोक अनुभाग के स्थान। दूसरी भाषा में, एक-एक स्थितिभेद के कारणभूत परिणाम डायरेक्ट हम अनुभागबंध के ऊपर चले जायेंगे तो वे असंख्यातलोक इन टु असंख्यातलोक ऐसा कहेंगे। ≡ə×≡ə और इसीको ऐसा लिखेंगे ≡ə।≡ə

योगस्थानों को कैसे कहना? जगत्श्रेणी का असंख्यातवां भाग। जगत्श्रेणी के लिये एक आडी लाइन लिखते हैं और यह इसका असंख्यातवां भाग $\bar{ə}$ है।

इसको कहेंगे सिम्बॉल - चिन्ह - सहनानी। अर्थसंदृष्टि में सारे ऐसे ही चिन्ह बताते हैं।

तो इसको कहेंगे एक कोई स्थितिबंध है उसके कारणभूत कषाय के परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं, उसके साथ अनुभागबंधस्थान असंख्यातलोक इन टु असंख्यातलोक प्रमाण हैं और उसके साथ जो योग के स्थान हैं वे जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं।

ये तीन आडी लाइन यानी लोक, एक आडी लाइन यानी जगत्श्रेणी, दो आडी लाइन करेंगे तो जगत्प्रतर; ये उनके सिम्बॉल्स हैं जो निश्चित हैं। ৯ यह है असंख्यातवाली साइन, आगे बढ़ेंगे न अभी। यहां पर हम देख रहे थे देखो, अपने विषय पर आना। *श्रोता: अनुभागस्थान योगस्थान से बहुत ज्यादा हैं?* हां, अनुभागस्थान बहुत ज्यादा हैं, लोक को असंख्यातगुणा करो इतने हैं, जगत्श्रेणी लोक का कितना भाग है? जगत्श्रेणी लोक का असंख्यातवां भाग है न! क्योंकि लोक को जगत्प्रतर से भाग दो, नहीं समझे? जगत्श्रेणी है ७ राजू, जगत्प्रतर यानी जगत्श्रेणी × जगत्श्रेणी यानी ७ राजू × ७ राजू– कितने हुये? ४९ प्रतरराजू (स्क्वेअर राजू)। केवल ४९ राजू कहने से नहीं चलेगा और लोक है ३४३ घनराजू। तो यह जो ७ राजू है वह ३४३ घनराजू का कितना भाग है? तो उसे ४९ प्रतरराजू से भाग देंगे तो उत्तर ७ राजू आयेगा – इसका अर्थ क्या है? लोक का यह असंख्यातवां भाग है, जगत्श्रेणी यह लोक का असंख्यातवां भाग है। यहां तक बात ख्याल में आती है? और अनुभाग के स्थान हैं वे लोक से असंख्यातगुणे हैं।

तो हमने क्या-क्या बातें देखी अभी तक? स्थिति के अलग-अलग भेद देखे, जघन्य स्थिति से लेकर एक-एक समय से बढ़ते हुये स्थिति के सारे भेद, ये हमें निरंतर बढ़ते हुये चाहिये इसलिये हमने संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि को यहां लिया है। वह जघन्य से जघन्य जितनी स्थिति बांधेगा और उत्कृष्ट से उत्कृष्ट जितनी स्थिति बांधेगा उसकी बात करेंगे और यहां मिथ्यात्व और ज्ञानावरण आदि की बात देख रहे हैं। प्रशस्त प्रकृतियों में तो अनुभाग का थोड़ा उलटा-पुलटा होता है उसकी बात अभी नहीं कहेंगे, अभी सामान्य से इतना जान लो। तो यहां हम फिर पढ़ेंगे देखो, हमने तीसरा पॅरेग्राफ देखा था, नीचे से दूसरा **अब इनके परावर्तन का अनुक्रम** जैसे हमने अन्य परावर्तनों में विशिष्ट अनुक्रम से देखा था, जब उस अनुक्रम में होगा तब उसको स्वीकारना। बिना अनुक्रम के होगा यानी वह तो होगा ही, निश्चित है वह होना परंतु उसको अनुक्रम में नहीं लेना, उसमें जितना काल जायेगा उसको तो लेना। यह प्रिन्सिपल - यह नियम तो हरेक के लिये है, हरेक के लिये

लागू है, सभी परावर्तनों में। उन्होंने जो क्रम बताया है उसी क्रम से जब-जब होता है तब उसको स्वीकार करना, जब बिना क्रम से परिणामों का कॉम्बिनेशन होगा उसका काल तो गिनना परंतु वह जो कॉम्बिनेशन होगा उसको नहीं गिनना।

अब ये चारों के कॉम्बिनेशन्स हम देखने जा रहे हैं। क्रम से इनके कॉम्बिनेशन्स होने चाहिये। कोई भी एकसा परिणाम तो रहेगा नहीं और यहां तो चार-चार बातें हमको एकसाथ कन्सिडर करनी हैं और फिर उनमें नंबरिंग करना है। *श्रोता: यहां जो आपने योगस्थान की बात की तो कोई भी स्थिति के इतने...* हां किसी भी स्थिति के साथ, किसी भी कषाय के साथ, किसी भी अनुभाग के साथ इन सभी योगों का पलटना होगा। देखो, बाकी में तो अपने योग्य कहा। कषायों के स्थान इसके अपने योग्य होते हैं, इस दूसरी स्थिति के अपने योग्य अलग होते हैं। कषाय के साथ अनुभाग के स्थान लगायेंगे तो हरेक के अपने-अपने योग्य होंगे, परंतु योग के सभी स्थान पलटेंगे। योगों के लिये अपने-अपने योग्य ऐसा नहीं कहा है। समझ में आती है बात? कषायों के साथ केवल स्थिति और अनुभाग का संबंध है, परंतु उसके साथ योग के तो सारे के सारे स्थान होंगे, योग के तो सभी व्हेरिएशन्स होंगे। *श्रोता: मतलब कोई भी योगस्थान होंगे?* कोई भी योगस्थान होंगे, एक कोई योग होगा। एक समय में कोई एक योग होगा यानी किसी एक समय में कोई एक स्थिति बंध रही है, किसी विशिष्ट परिणाम से बंध रही है, उसके साथ कोई विशिष्ट अनुभाग का बंध हो रहा है और उस समय कोई एक योग चल रहा है। अब इसमें एक-एक को फिक्स रखते हुये एक-एक को पलटाना होगा, जैसे हमने प्रमाद के भेदों में देखा था।

श्रोता: यानी जघन्य योग से उत्कृष्ट योग में कोई भी योग से जघन्य स्थिति बंध सकती है? बंध सकती है यानी जघन्य स्थितिबंध के साथ कोई भी योग हो सकता है। योग से स्थिति नहीं बंधेगी परंतु जब स्थिति जघन्य बंध रही है तो इसमें से कोई भी योग हो सकता है यह कहना है। यह जघन्य स्थिति जब बंध रही है तो कषाय ये आगेवाले नहीं होंगे, अनुभाग ये आगेवाले नहीं होंगे, उसके अपने योग्य रेंज होगी। परंतु सभी योगों का पलटना होगा, पलटना होगा यानी सभी योग पॉसिबल हैं। *श्रोता: यहां फिर एकेन्द्रिय या पंचेन्द्रिय ऐसा...* यहां हमने पंचेन्द्रिय को लिया है, क्योंकि एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक योगस्थान निरंतर नहीं हैं, उनमें बीच-बीच में गॅप हैं। एकेन्द्रिय की अपनी रेंज है फिर असंख्यातगुणावाली

द्वीन्द्रिय की अपनी रेंज है – उसमें भी वे तीनों प्रकार के योग हैं, यहां तो केवल हम परिणाम योगों को लेंगे।

हमने बहुत छोटा विषय लिया है, वह तो लागू होगा सभी के ऊपर। सभी प्रकृतियों के सभी स्थितिभेदों के ऊपर यह बात लागू होती यानी ज्ञानावरण के सभी अलग-अलग भेदों पर यानी सभी उत्तरप्रकृतियों पर, हम तो अभी केवल - मात्र ज्ञानावरण कह रहे हैं तो ज्ञानावरण पर हम स्थिति के भेदों को लगायेंगे। दर्शनावरण पर अलग, मोहनीय पर अलग, मोहनीय में भी दर्शनमोहनीय अलग चारित्रमोहनीय अलग; सभी कर्मों में, वेदनीय में साता, असाता सभी कर्मों के जो अपने-अपने स्थितिबंध हो रहे हैं उन सब पर ये लगाने हैं और ये कॉम्बिनेशन्स लगाने हैं। आयु में भी और अन्य सभी प्रकृतियों में लगाना है। अभी तो हम कॉम्बिनेशन कैसे लगाना उसको देखेंगे। *श्रोता: ये सब लगाया ये सब पंचेन्द्रिय पर लगाया, फिर ऐसा ही हम चतुरिन्द्रिय पर घटित करेंगे?* हां, परंतु हमने अभी पंचेन्द्रिय पर कहां लगाया? अभी लगाया नहीं है, लगाने की बात हो रही है। अभी उत्तरप्रकृतियों में, सभी स्थितिभेदों में, सभी अलग-अलग जीवों में यानी सभी जीवसमासों में हम ये लगायेंगे। हम तो केवल निरंतर स्थानों की बात कर रहे हैं इसलिये हम समझाने के लिये अंत:कोड़ाकोड़ी से उत्कृष्ट स्थितिबंध तक की बात उठायी है। होगा तो सब में। अभी इसमें परावर्तन कैसे करना, क्रम कैसे लगाना यह अभी हमने नहीं देखा है। *श्रोता: एक ही स्थिति पर एक ही योग रहेगा?* योग एक समय में एक ही होगा, यानी वह योग फिक्स नहीं है, किसी विशिष्ट स्थिति के साथ योग जघन्य से उत्कृष्ट तक में से कोई भी हो सकता है परंतु कोई भी एक होगा। यानी उस स्थिति के साथ जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण अलग-अलग योग हो सकते हैं। तो इनको कैसे पलटाना, परावर्तन कैसे करना यानी उसका क्रम कैसे लगाना यह अभी तक हमने शुरू नहीं किया है। परावर्तन कैसे होता है, यह योगस्थान क्या है, अध्यवसायस्थान क्या हैं कषायवाले और अनुभागवाले और स्थिति के भेद यानी क्या बस उसीकी चर्चा चल रही है। हम तो अलग-अलग चार स्टेप्स जो यहां रखे हैं इनमें परावर्तन कैसे करना? जीव क्या करता है भावपरावर्तन में, उसकी बात तो अभी आरंभ करनी है।

देखो यहां हम फिर पढ़ते हैं – नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ। इसको नहीं समझेंगे तो आगेवाला परावर्तन नहीं समझेगा। इसलिये हम इसको बारंबार रिपीट कर रहे हैं। **यहां**

एक-एक स्थितिभेद के, एक-एक स्थितिभेद यानी जघन्य से लेकर एक-एक समय से बढ़ती हुयी स्थिति के अलग-अलग भेद। **उसके बंध के कारणभूत** क्या शब्द डाला? अपने योग्य – हरेक के अपने योग्य जो हैं असंख्यातलोकप्रमाण, असंख्यातलोकप्रमाण वे अलग-अलग हैं। **तो अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण स्थितिबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं**, हमने देखे न अभी ये – कहां पढ़े हमने यहां पर? यह विशिष्ट स्थितिभेद के कारणभूत परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं। फिर आगे क्या कहते हैं? **एक-एक स्थितिबंधअध्यवसायस्थान में** इस एक-एक स्थान में, ऊपर चले जाना अनुभाग की तरफ, **यथायोग्य** वहां पर भी यथायोग्य शब्द डाला, अपने-अपने योग्य – **यथायोग्य असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं।** अभी यहां अनुभाग तक आ गये; फिर एक-एक अनुभागबंधअध्यवसायस्थान में, एक-एक को अलग-अलग लेना क्योंकि किसी एक समय में किसी एक ही अनुभाग का बंध होगा। एक समय में सभी नहीं हो रहे हैं, एक समय में क्या-क्या हो रहा है? कोई एक स्थिति बंध रही है, किसी एक कषाय के कारण बंध रही है, उसी परिणाम में कोई एक अनुभाग का कारणभूत परिणाम है और उसीके साथ कोई एक योग होगा। परंतु कितने अलग-अलग योग हो सकते हैं उसी एक के साथ? तो कहते हैं **एक-एक अनुभागबंधअध्यवसायस्थान में जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागमात्र योगस्थान पाये जाते हैं**, यानी इनकी भी संख्या असंख्यात में है, छोटावाला असंख्यात। ये चार बातें क्या हैं उसको अभी हम समझे, अब आगे बढ़ते हैं।

उनके परावर्तन का अनुक्रम ज्ञानावरण कर्म के उदाहरण द्वारा कहते हैं यह ज्ञानावरण पर घटित करके हमें बता रहे हैं। *श्रोता: अनुभाग में ये दो बार – इसका कैसे है वह जरा बतायें...* हां, कौनसे अनुभाग की बात है? *श्रोता: अभी जो ये कषाय के स्थान हैं उसके ऊपर अनुभाग को लेना है, तो आपने बोला उधर दो-दो हैं न इसका मतलब इसका ये डबल हो गया...* इसके साथ बीचवाला स्टेप अगर हम मिस करेंगे... *श्रोता: नहीं, तीसरा अनुभाग का...* देखो, इस एक कषायस्थान के साथ असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागस्थान होते हैं, तो असंख्यातलोकप्रमाण कषायस्थानों के साथ कितने होंगे? ख्याल में आया? हम देखते हैं कि केवल एक स्थितिभेद के साथ ये कषायस्थान असंख्यातलोकप्रमाण होते हैं और उस एक-एक कषायस्थान के साथ अनुभागस्थान असंख्यातलोकप्रमाण होते हैं। तो अब यहां बीचवाली स्टेप निकाल दो यानी कषायस्थान को मत कहो, तो क्या होगा? एक

स्थितिभेद के साथ अनुभाग के स्थान कितने होते हैं? वे असंख्यातलोक मल्टिप्लाइड बाय असंख्यातलोक इतने प्रमाण होंगे। ख्याल में आयी न बात यह?

यह हमने वह डायरेक्ट रिलेशन बताने के लिये बताया है, एक कोई स्थिति बंधती है तो अनुभाग के स्थान कितने होंगे? असंख्यातलोक मल्टिप्लाइड बाय असंख्यातलोक इतने प्रमाण होंगे। *श्रोता: यह बीच की लाइन क्यों निकाल दी है?* समझाने के लिये आपको। एक कोई स्थिति बांधी तो कितने अलग-अलग कषाय उसके साथ हो सकते हैं, कितने अलग-अलग कषाय उसी स्थिति को बांध सकते हैं तो असंख्यातलोकप्रमाण। उनमें से हमने कोई एक कषायस्थान लिया तो उसके साथ ये अनुभाग के व्हेरिएशन्स यानी अनुभाग के स्थान कितने हो सकते हैं? तो असंख्यातलोकप्रमाण। तो एक कषायस्थान के साथ असंख्यातलोकप्रमाण और उसमें से प्रत्येक के साथ अनुभागस्थान असंख्यातलोकप्रमाण। इसलिये डायरेक्ट अगर एक स्थिति के साथ कितने अलग-अलग अनुभागस्थान होते हैं? तो कहते हैं असंख्यातलोक इन टु असंख्यातलोक इतने होते हैं। *श्रोता: योगों को तो प्रकृति और प्रदेशबंध के साथ लेते हैं, स्थिति और अनुभाग के साथ कषाय लेते हैं तो योगों को इन दोनों के साथ क्यों लिया?* योग यह जीव का परिणाम है, है न! और यह स्थितिबंध के कारणभूत परिणाम बताने थे इसलिये बताये यहां पर और योग के कारण वह तो जैसा वहां योग है वैसा वहां प्रदेशबंध होगा। इसलिये उसको वहां अलग से बताने की जरूरत नहीं थी। अनुभाग के भी बंध के कारणभूत परिणाम लिये, अनुभागबंध को अलग से नहीं लिया क्योंकि जो अनुभागबंध का स्थान है वही अनुभागबंधअध्यवसाय का स्थान है। अब उसमें बहुत विस्तार है, वह अभी नहीं समझोगे। हम अभी-अभी समझे हैं महाबंध (महाधवला) के स्वाध्याय में। वहां तो चौथी और पांचवीं पुस्तक मिलकर करीबन हजार पेजेस होते हैं, वहां मात्र अनुभाग की ही चर्चा है। अभी हमारे लिये बस इतना ही काफी है। अभी हम बाकी चर्चा थोड़ी देर के बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय!

३४. भावपरावर्तन – ३

षट्खण्डागम के आधार से हम यहां कालअनुयोगद्वार की चर्चा कर हैं, उसमें से अनादि से इस जीव ने जो इस संसार में परिभ्रमण किया है, कितना काल उसने अभी तक बिताकर अब वह यहां आया है, इसका थोड़ासा अंदाजा हमें आये इसलिये पांच परावर्तनों का स्वरूप हम देख रहे हैं। उसमें से भावपरावर्तन की बात चल रही थी, पुस्तक के आधार से हम आगे बढ़ेंगे। हमने चार बातें यहां देखी हैं। एक तो स्थिति का बंध होता है उसके अलग-अलग भेद, जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक, एक-एक समय से बढ़ते हुये स्थिति के भेद कहलाते हैं। समझाने के लिये यहां संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव के जघन्य स्थितिबंध से उत्कृष्ट स्थितिबंध तक की बात करेंगे हम। ये सारी बातें मिथ्यादृष्टि की ही चल रही हैं, क्योंकि परावर्तन तो उसीके हो रहे हैं। तो इस मिथ्यात्व अवस्था में संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव जितना जघन्य बंध करेगा, उसमें एक समय अधिक, दो समय अधिक, तीन समय अधिक ये सारे स्थिति के भेद कहलायेंगे। एक-एक स्थितिभेद के साथ कितने अलग-अलग कषायों के कारण यही स्थिति बंध सकती है? उसे कहेंगे कषायअध्यवसायस्थान। एक-एक स्थितिभेद के लिये ऐसे असंख्यातलोकप्रमाण कषायअध्यवसायस्थान होते हैं।

उसी स्थिति को वे बांध सकते हैं, उनमें से एक-एक कषायअध्यवसायस्थान को हम अलग-अलग कन्सिडर करेंगे तो उसके साथ बंधनेवाले जो अनुभाग के स्थान हैं, यानी उसी कषाय के हम अनुभाग की अपेक्षा भेद करेंगे तो कितने अलग-अलग अनुभाग उसके साथ बंध सकते हैं? परिणाम एक है, परिणाम इतने अलग नहीं हैं, परंतु स्थिति विशिष्ट बंध रही है, तो वह जो कषाय का परिणाम है उसमें अनुभागबंध की अपेक्षा असंख्यातलोकप्रमाण इतने भेद पड़ सकते हैं। उसमें से हरेक अनुभागबंधअध्यवसाय के साथ, योगों का कितना-कितना पलटना हो सकता है? तो कहते हैं कि जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण सभी योगस्थान हो सकते हैं। ये चार बातें हमने देखी हैं। अब इसमें परावर्तन यानी किस क्रम से उसको लेना, क्योंकि अनुक्रम से यह होना चाहिये यह बात है और एक समय में चारों को कव्हर करना है, क्योंकि प्रत्येक समय में कोई ना कोई स्थिति तो बंध रही है, उस स्थितिबंध के कारणभूत कोई कषाय परिणाम हो रहा है, वहां अनुभाग का भी बंध हो रहा है और वहां योग भी है। इसलिये इन चारों का कॉम्बिनेशन एक समय में लेंगे तो जो दूसरा

कॉम्बिनेशन बतायेंगे वही होना चाहिये। यदि वह नहीं होगा, अन्यथा होता है तो उतने काल तक भ्रमण करेगा। जब कभी वह दूसरे नंबर का कॉम्बिनेशन होगा तभी हम उसको अनुक्रम में गिनेंगे। तो यह कॉम्बिनेशन कैसे गिनना है, उसको अभी यहां बतानेवाले हैं।

६४६ पृष्ठ पर नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ, **अब इनके परावर्तन का अनुक्रम ज्ञानावरण कर्म के उदाहरण द्वारा कहते हैं। कोई संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि जीव**, ये सभी कंडिशन्स डाली हैं उसमें क्योंकि अपर्याप्तों में इनके प्रमाण अलग होंगे यानी संज्ञी अपर्याप्त जीवों में उनके योग्य स्थिति के भेद, कषायअध्यवसायस्थान, अनुभागअध्यवसायस्थान और योगस्थान अलग-अलग होंगे। इसलिये यहां पर्याप्त की बात ली है, हमें निरंतर स्थान चाहिये इसलिये **अपने योग्य**, अपने योग्य बता दिया। **ज्ञानावरण कर्म की जघन्य स्थिति अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण बांधता है।** अपने योग्य इसलिये कहा क्योंकि एकेन्द्रियों के अपने योग्य स्थितियों का बंध होता है, द्वीन्द्रिय के अपने योग्य, फिर त्रीन्द्रिय के अपने योग्य, हरेक की अपनी-अपनी रेंज अलग-अलग है इसलिये अपने योग्य शब्द डाला है क्योंकि इस जीव के इससे कम स्थितिबंध नहीं होता। क्या कहा? संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव मिथ्यात्व अवस्था में है उसको इससे कम स्थितिबंध नहीं होगा।

ज्ञानावरण का सबसे कम स्थितिबंध किसके होता है? यहां मिथ्यादृष्टि नहीं है, मिथ्यादृष्टि को छोड़कर ज्ञानावरण का सबसे कम स्थितिबंध कौनसे जीव को होता है? *श्रोता: लब्धिअपर्याप्त के।* लब्धिअपर्याप्त के, कितना होगा? तीन बटे सात यानी तीन सप्तमांश सागर होगा और हम पूछ रहे हैं कि यहां मिथ्यादृष्टि की बात छोड़ दो, सम्यग्दृष्टि की बात करेंगे तो कितना होगा? *श्रोता: अंत:कोड़ाकोड़ी सागर।* अंतर्मुहूर्त होगा, दसवें गुणस्थान में। *श्रोता: नहीं नहीं, अंत:कोड़ाकोड़ी सागर।* यह तो मिथ्यात्व की बात है, हमने यह प्रश्न पूछा था कि ज्ञानावरण का कम से कम बंध किसको होगा? दसवें गुणस्थान में हैं न! ज्ञानावरण का और दर्शनावरण का जघन्य स्थितिबंध कितना होता है? तो अंतर्मुहूर्त होता है। कहां होता है? तो दसवें गुणस्थान के अंतिम समय में होता है।

अब हम यहां केवल मिथ्यादृष्टि की बात देखेंगे। इसलिये इससे कम स्थितिबंध उसे नहीं होगा, अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से कम स्थितिबंध उसके नहीं पाया जाता, पंचेन्द्रिय की बात है, संज्ञी पंचेन्द्रिय की। क्योंकि असंज्ञी पंचेन्द्रिय होगा तो हजार सागर में कुछ कम,

चतुरिन्द्रिय के लिये १०० सागर में कुछ कम, त्रीन्द्रिय के लिये ५० सागर में कुछ कम, द्वीन्द्रिय के लिये २५ सागर में कुछ कम, और एकेन्द्रिय में १ सागर में कुछ कम मिथ्यात्व प्रकृति का जघन्य स्थितिबंध होता है। उनकी बात यहां नहीं ले रहे हैं, यहां मात्र संज्ञी पंचेन्द्रियों की बात चल रही है। तो इस जीव का जो अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण बंध है वह जघन्य स्थितिस्थान है। जो हमने देखे थे न, जो हमने अलग-अलग स्थितिबंध के स्थान देखे उसमें से यह एक नंबर का यानी जघन्य स्थितिस्थान है। आगे-आगे एक-एक समय से बढ़ते हुये आगेवाले स्थान कहने में आ जायेंगे। इसीका विशेषार्थ देखते हैं, देखो।

जैसे संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्यादृष्टि के स्थितिस्थान कहे वैसे ही असंज्ञी पंचेन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय आदि एकेन्द्रिय तक के जीवों के अपने-अपने योग्य अपने-अपने योग्य शब्द डाला है **स्थितिबंध के स्थान जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक होते हैं। इसका विस्तारपूर्वक वर्णन पं.टोडरमलजी ने आगे कर्मकाण्ड में किया हुआ है,** वहां स्थितिबंध के प्रकरण में बहुत विस्तार किया हुआ है। यहां कर्मकाण्ड के शिबिर में हमने स्थितिबंध का विषय लिया था। **अन्य भी स्थितिबंधअध्यवसायस्थान, अनुभागबंधअध्यवसायस्थान, योगस्थान – इनका वर्णन कर्मकाण्ड में ही किया हुआ है** इसलिये वहां ऊपर लिखा हुआ था, आगे कहेंगे। अब हम आगे पढ़ेंगे, नेक्स्ट पेज ६४७ – **कोड़ी के ऊपर** यानी करोड़ के ऊपर **और कोड़ाकोड़ी के नीचे जो हो उसे अंत:कोड़ाकोड़ी कहते हैं।** तो इसके बहुत सारे भेद होंगे, इसमें यथायोग्य समझना। **वहां उस जघन्य स्थितिबंध करनेवाले जीव के उस जघन्य स्थितिबंध के योग्य असंख्यातलोकप्रमाण कषायअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं।** अभी हमने देखा था न, एक-एक स्थितिबंध के योग्य असंख्यातलोकप्रमाण कषायअध्यवसायस्थान होते हैं। **वे परिणामों की अपेक्षा अनंतभागादिक षट्स्थानों से युक्त हैं।** यह षट्स्थान क्या होता है वह बहुत अलग विषय है। जैसे थोड़ी-थोड़ी वृद्धि होती है यहां पर कषायों में, तो कषाय कितना है अविभागप्रतिच्छेदों में? तो अनंत में होता है। दूसरे स्थान पर अनंतवां भाग अधिक है, तीसरे में अनंतवां भाग बढ़ते-बढ़ते और कुछ बढ़ गये। तो कभी असंख्यातवां भाग अधिक है, इसका जो षट्स्थान का विषय पूर्ण अलग है वह अभी हम नहीं लेंगे। एक बार षट्स्थान होकर अनंतगुणा वृद्धि तक पहुंचता है तब एक षट्स्थान हुआ और एक षट्स्थान होता है तो उसमें स्थान कितने चले जाते हैं? बहुत – असंख्यात होते हैं। इसको

कहेंगे न कि एक अधिक सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग ५ बार लिखो और आपस में गुणा करो इतने होंगे, बराबर है न? तो इतने असंख्यात स्थान होते हैं तो एक बार षट्स्थान वृद्धि हुयी, फिर दूसरी बार षट्स्थान वृद्धि होगी, तीसरी बार ऐसी षट्स्थान वृद्धियां भी असंख्यातलोक बार होती हैं; यानी इस असंख्यातलोक का प्रमाण बहुत बड़ा है इतना समझ लेना। उन्होंने डिटेल्स बतायें हैं कि अनंत भागादिक षट्स्थानों से युक्त हैं यानी हम उसको असंख्यातलोक ही कहेंगे, परंतु उन्होंने उसमें भी एक डिटेल बात बता दी।

विशेषार्थ – विवक्षित कोई भी स्थिति का बंध होता है, उतनी ही स्थिति अन्य-अन्य असंख्यात परिणामों द्वारा बंध सकती है। हम केवल उसको असंख्यात कहेंगे, परंतु है असंख्यातलोक। **उन परिणामों को संक्लेश-विशुद्धि के स्थान अर्थात् कषायों के स्थान या स्थितिबंधअध्यवसायस्थान कहते हैं। उस विवक्षित स्थिति से एक समय अधिक स्थिति का बंध होता है उसके अपने योग्य** हमने देखा था न कि अपने योग्य का अर्थ क्या होता है? **तो उसके अपने योग्य कषायअध्यवसायस्थान असंख्यातलोकप्रमाण होते हैं। इन प्रत्येक समय के कारणभूत कषायअध्यवसाय के जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक के स्थानों में असंख्यातलोक बार षट्स्थानपतित वृद्धि युक्त स्थान पाये जाते हैं।** यह जो ऊपर लिखा है उसीका अर्थ थोड़ा खोलकर लिखने की कोशिश की है। **पुनश्च उनमें भी जघन्य कषायअध्यवसायस्थान को निमित्तभूत अनुभागबंधअध्यवसायस्थान असंख्यातलोकप्रमाण पाये जाते हैं।** हमने देखा है, एक कषाय के साथ अनुभागबंधअध्यवसायस्थान कितने होते हैं? असंख्यातलोकप्रमाण।

विशेषार्थ – इसीतरह एक-एक कषायअध्यवसायस्थान के अपने-अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान पाये जाते हैं। इसलिये विवक्षित स्थिति का बंध करनेवाले किसी विवक्षित संक्लेश या विशुद्धि के साथ असंख्यातलोकप्रमाण जुदे-जुदे अनुभागबंधअध्यवसायस्थान होते हैं। इनमें भी प्रत्येक में असंख्यातलोक बार षट्स्थानपतित स्थान पाये जाते हैं यानी वह बहुत बड़ा असंख्यातलोक का प्रमाण है। **सो पूर्वोक्त किसी जीव के** अभी यह परावर्तन अनुक्रम से कैसे गिनना उसको बतायेंगे। **अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण जघन्य ही तो स्थितिस्थान है** पहले पढ़ेंगे फिर बाद में समझेंगे। **उसके जघन्य ही कषायअध्यवसायस्थान है और जघन्य ही अनुभागबंधअध्यवसायस्थान है और उस जीव के जैसा योग्य हो वैसा ही**

जघन्य ही योगस्थान पाया जाता है। जैसा योग्य क्यों लिखा? तो ब्रॅकेट में पढ़ना देखो **एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक के जीवों के अपने-अपने योग्य जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान पाये जाते हैं।** एकेन्द्रियों के भी अपने योग्य जो कुछ होंगे और पंचेन्द्रियों के अपने योग्य। **वहां भावपरावर्तन का प्रारंभ हुआ** देखो, भावपरावर्तन को समझाने के लिये हम जरा बोर्ड का आधार लेंगे यहां पर। यहां स्थिति के अलग-अलग भेद बताये हैं वे इस **S** के आगे लिखे हैं। यानी -**S1** यह जघन्य स्थिति है –

Y = योगस्थान, A = अनुभागबंधअध्यवसायस्थान,
K = कषायअध्यवसायस्थान, S = स्थितिस्थान

Y = १ २ ३ ४ ५ ... ४०

A = १ २ ३ ४ ५ ... ५००

K = १ २ ३ ४ ५ ... ५०

S = १ २ ३ ४ ५ ... ५

एक समय अधिक, दो समय अधिक, तीन समय अधिक, चार समय अधिक – बहुत ज्यादा नहीं बताया है परंतु यह अंतर अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से लेकर अभी ज्ञानावरण में तो तीस कोड़ाकोड़ी सागर तक समझ लेना। इसकी ऊपर की पंक्ति में टोटल कषायअध्यवसायस्थान लिखे हैं इसके लिये **K** लिखा है। मान लेते हैं कुल स्थान ५० हो गये हैं। अनुभागबंधअध्यवसायस्थान के लिये **A** लिखा है और उसके कुल भेद हमने मान लिये १ से लेकर ५०० तक हैं। ऊपर अंतिम पंक्ति में **Y** लिखा है यानी योगस्थान, इनके कुल भेद हम मान लेते हैं १ से लेकर ४० तक हैं।

Y यानी योगस्थान ऊपर पहली पंक्ति में बताये हैं, **A** यानी अनुभागबंधअध्यवसायस्थान यहां दूसरी पंक्ति में बताये हैं, **K** यानी कषायअध्यवसायस्थान यहां तीसरी पंक्ति में बताये हैं और **S** यानी स्थिति के स्थान यानी कितनी स्थिति बांधी यह ऊपर से चौथी पंक्ति में बताये हैं। यह जघन्य स्थान - पहला स्थान है। स्थिति का जघन्य स्थान यानी यहां जघन्य स्थिति है **S1**, दूसरे स्थान में एक समय अधिक स्थिति है **S2**, तीसरे स्थान में और एक

समय अधिक है **S3**, इसतरह से आगे-आगे समझना। अब ये टोटल स्थिति के स्थान इतने हो गये मान लेते हैं **S1** से **S5** तक हैं। कषायअध्यवसाय स्थान अपने-अपने योग्य हैं। जैसे हमने पहले देखे थे, मान लेते हैं **K1-K2-K3-K4** ये जघन्य स्थितिस्थान **S1** के योग्य स्थान हैं। **S2** के योग्य स्थान मान लेते हैं **K2** से लेकर आगे होते हैं वे इसके **S2** के योग्य होते हैं; **S3** के लिये **K3** से लेकर आगे के इसतरह वे आगे-आगे बढ़ते चले जायेंगे यानी अपने-अपने योग्य समझना। अब यह जघन्य स्थिति है **S1**, यह जघन्य ही कषायस्थान है **K1**, उसके साथ अनुभाग के व्हेरिएशन्स कितने होंगे? तो कहते हैं यह **K1** के साथ ये **A1** से **A5** तक होंगे। उसके साथ होंगे, **K2** के साथ आगे बढ़कर और होंगे, यानी कहां कषायअध्यवसायस्थान ५० थे तो यहां अनुभागबंधअध्यवसायस्थान ५०० हो गये अलग-अलग, परंतु ये भी अपने अपने योग्य होंगे। हमारी भाषा में जो कोई स्थिति है, उसके साथ असंख्यातलोकप्रमाण अपने योग्य कषायअध्यवसायस्थान हैं, उस एक-एक कषायअध्यवसायस्थान के साथ असंख्यातलोकप्रमाण अपने-अपने योग्य अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं और इस एक-एक अनुभागबंधअध्यवसायस्थान के साथ ये सभी टोटल योगस्थान कितने हैं? जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण इतने योगस्थानों की वहां पॉसिबिलिटी होती है, इतने योगस्थान पाये जाते हैं। अब यहां पलटना कैसे करना है तो स्थिति को तो जघन्य रखना, जो अभी हमने पढ़ा न? देखो, **वहां भावपरावर्तन प्रारंभ हुआ** कहां हुआ? नीचे का पॅरेग्राफ फिर पढ़ेंगे, पहली लाइन से।

किसी जीव के अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण जघन्य ही तो स्थितिस्थान है, जो एक नंबर का **S1** है, उसके जघन्य ही कषायअध्यवसायस्थान है **K1** है और फिर जघन्य ही अनुभागबंधअध्यवसायस्थान है **A1** है। अब इसके साथ उसके योग्य हो वैसा ही जघन्य योगस्थान पाया जाता है और वह **Y1** है – यहां से हम भावपरावर्तन का प्रारंभ बताना शुरू करेंगे। उस जीव के ऐसे परिणाम हैं कि उसने – ज्ञानावरण की बात हमने ली है न! ज्ञानावरण का जघन्य स्थितिबंध अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण किया, उसके वह १ नंबर का वह कषायस्थान था, अनुभागस्थान भी वह १ नंबर का था जिसको हमने **A1** कह दिया है और योगस्थानों में से पंचेन्द्रिय के योग्य वह जघन्य में जघन्य उसका योग था **Y1**।

एक समय में उसके यह कॉम्बिनेशन था, एक समय में तो हो सकता है न कोई भी?

तो उसमें से इसको (**S1K1A1Y1**) हम पहला नंबर देंगे। अब वहां भावपरावर्तन प्रारंभ हुआ, यह भावपरावर्तन का पहला समय गिनेंगे हम; अब आगे क्या करना है? **उसी जीव के**, एक ही जीव पर यह घटित करना है **उसी जीव के स्थितिस्थान** यह **S1**, **कषायअध्यवसायस्थान K1**, **अनुभागबंधअध्यवसायस्थान A1**, ये तीनों जघन्य ही रहे। पहला कॉम्बिनेशन क्या था? **S1K1A1Y1**, अब क्या है? ये तीनों तो वे ही रहे, यह वैसा ही रहना चाहिये यह तो रहना भी मुश्किल है, परंतु जब कभी ये तीनों ही वे ही रहे, यानी **S1K1A1**, और योगस्थान जब २ नंबर का होगा **Y2** यह तो दूसरे नंबर का भाव हुआ, भाव नंबर २ **S1K1A1Y2**, ख्याल में आता है न? ये टोटल भाव कितने होंगे? *श्रोता: जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भाग...* नहीं, ये टोटल भाव, ये सबके कॉम्बिनेशन्स – टोटल भाव – जैसे १८००० शील के भेद कहते हैं, तो सबको आपस में गुणा करते हैं न, तो यहां कैसे गुणा करेंगे? प्रमाद के भेद कैसे निकालते हैं? ४ विकथा हैं, ४ कषाय हैं और ५ इन्द्रियों की लोलुपता हैं और फिर १ स्नेह और १ निद्रा है तो कितने होते हैं? ८०। क्या किया आपने? ४×४×५×१×१ बराबर है? तो कितने भेद हुये? ८०, यह तो हम स्थूलरूप से कहते हैं। ऐसे यहां कितने भेद होंगे?

स्थिति के भेद हैं असंख्यात, क्योंकि हम ज्ञानावरण की बात देख रहे हैं इसलिये अंत:कोड़ाकोड़ी सागर से लेकर ३० कोड़ाकोड़ी सागर तक स्थिति के भेद असंख्यात हैं उनमें से जघन्य स्थिति के अपने-अपने योग्य, कषाय के असंख्यातलोकप्रमाण स्थान मल्टिप्लाइड बाय अपने-अपने योग्य हरेक के असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान मल्टिप्लाइड बाय सभी जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण योगस्थान, इनकी जो कोई संख्या आयेगी उतने अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स जघन्य स्थिति संबंधी होगे। ऐसे ही एक-एक समय से बढ़ती हुयी सभी स्थितियों के जो कॉम्बिनेशन्स होंगे उनकी टोटल करनी है हमें और वे क्रम से लेने हैं। *श्रोता: तभी एक कर्म का होगा? ज्ञानावरण का?* हां, तभी तो वह ज्ञानावरण का होगा और वह भी संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त के होगा। *श्रोता: इसमें मतिज्ञान, श्रुतज्ञान ऐसे...* वह उसके भी आवरण के भेद अलग गिनेंगे, मतिज्ञानावरण वगैरह के। यानी हरेक उत्तरप्रकृति पर भी घटित करेंगे। तो अभी हम पहला नंबर देखेंगे, अभी तो आसान है न समझना? पहला भाव कौनसा है तो **S1K1A1Y1**, दूसरे नंबर का भाव **S1K1A1Y2**, फिर तीनों को वही रखना और योगस्थान **Y3, Y4, Y5, Y6** आदि पर

पलटाना, कितने होने चाहिये? सभी जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भाग। परंतु ये सब यानी स्थिति, कषाय, अनुभागबंध तब उतने ही यानी जघन्य स्थान पर रहने चाहिये न? अरे, एक समय में यह उलटा पुलटा हो जायेगा। *श्रोता: दूसरे समय में...* एक समय में – दो समय तक नहीं रहेगा वह भाव, तो इसमें कितने व्हेरिएशन्स हो जायेंगे! यह भले स्थिति उतनी ही रहेगी, परंतु असंख्यातलोकप्रमाण अनुभाग में से कोई भी एक हो सकता है, असंख्यातलोकप्रमाण कषाय में से कोई भी एक हो सकता है, क्योंकि भाव इतने जल्दी-जल्दी पलटते हैं कि भले ही स्थिति उतनी ही रही तो क्या हुआ इन भावों में इतने सारे व्हेरिएशन्स हो सकते हैं।

यहां तो हमने दो-चार संख्या देखी है, वहां तो असंख्यातलोक में उसका डिफरन्स हो सकता है। ये स्थिति, कषाय, अनुभागबंध सब वे ही के वे ही रहने चाहिये और योग दूसरे नंबर पर ले जाना चाहिये। हो सकता है योगस्थान यहां १ नंबर पर था, वह एकदम डायरेक्ट असंख्यातगुणा होकर आगे चला गया, वह काउंट नहीं करना, उसमें कितना सारा समय चला जायेगा – भाव के १ नंबर के कॉम्बिनेशन से भाव के दूसरे नंबर के कॉम्बिनेशन तक जाते-जाते अनंतकाल जा सकता है परंतु वही कॉम्बिनेशन नहीं हुआ यानी ये सभी पॉसिबिलिटीज़ तो हैं न! हां, उसका वह भाव वैसा ही रहा परंतु स्थिति अलग बंधी हो, अनुभाग में अलग स्थान हो जाये ऐसा, योग में अलग व्हेरिएशन हो तो, नहीं चलेगा। वही एक्झॅक्टली स्थितिबंध होना चाहिये, वही कषायवाला परिणाम चाहिये, वही अनुभागवाला परिणाम चाहिये और इन तीनों को फिक्स रखते हुये इन सभी योगस्थानों में से एक-एक योगस्थान को क्रमसे प्राप्त होना चाहिये क्योंकि अक्रम से तो होगा ही होगा, योगस्थानों के तो कितने व्हेरिएशन्स होंगे। योगों की तो हीनाधिकता होती रहती है, परंतु वह क्रम से जब होगा तब उसको गिनना, अक्रम से होगा तो उसको गिनना नहीं। यह तो जब एक... समझो, मान लो योग का दूसरे नंबर पर आ गया बाय द टाइम इनमें से क्या चला गया? स्थिति कोई अन्य बांधी, अनुभाग कुछ अन्य था और कषाय कुछ अन्य था तो ये भावों के वे ही कॉम्बिनेशन्स होना अत्यंत मुश्किल बात है।

तो यह दो नंबर का भाव हुआ तीसरे नंबर पर क्या लेंगे हम? **S1K1A1Y3** – ऐसे ये तीनों – **S**, **K**, **A** को सेम रखते हुये, १ नंबर पर रखते हुये, **Y** के हम क्रम से पूरे ही

स्थान, कितने? जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण, इतने जब योगस्थान क्रम से हो जायेंगे तब किसको पलटाना अभी? **A1** था फिर **A2** को लेंगे, अभी यहां पढ़ेंगे। देखो-देखो, **वहां भावपरावर्तन प्रारंभ हुआ। उसी जीव के** नीचे से चौथी पंक्ति, पृष्ठ ६४७ पर **उसी जीव के स्थितिस्थान, कषायअध्यवसायस्थान, अनुभागबंधअध्यवसायस्थान** हमने उसको **S1 K1 A1** ऐसे नाम दिये थे, **ये तीनों तो जघन्य ही रहे** यह समझने के लिये हम उसकी संदृष्टि बना रहे हैं; ऐसे समझेंगे तो आसान होगा समझना **और योगस्थान दूसरा हुआ**, जिसको हमने **Y2** नाम दिया था, **जो जघन्य स्थान से असंख्यातभाग वृद्धिवाला है** क्योंकि योगों में तो असंख्यातवां भाग बढ़कर ही दूसरा योगस्थान होता है। **पश्चात् स्थितिस्थानादिक तीनों तो जघन्य ही रहे** यानी **S1** रहा, **K1** रहा, **A1** रहा **और योगस्थान तीसरा हुआ। जब-जब अनुक्रम से आगे-आगेवाला योगस्थान हो उसीको गिनना बीच में अन्य योगों सहित काल तो गिनना मगर अन्य क्रम रहित योग नहीं गिनना।** यानी यह क्रम जभी होगा तभी उसको ॲक्सेप्ट करना। आपने कहा सबको सेम रखा हमने, अरे हमने कहां रखा, सेम रहेंगे नहीं वैसे के वैसे। हम यहां कह रहे हैं कि इसको सेम रखना और इसको पलटाना परंतु वे तो चेंज हो जायेंगे। *श्रोता: प्रवचन सुनते समय भी?* हां, प्रवचन सुनते समय भी चेंज होते हैं न! तो जब कभी ये तीनों सेम रहेंगे और बाय चान्स योग दो नंबर का आयेगा तब जाकर हम उसको टिक मार्क करेंगे, तब उसको अनुक्रम में लेंगे। बाकी तो सबके कॉम्बिनेशन्स कितने उलट पुलट होते रहेंगे। उसके सब काल गिनेंगे, परंतु उसके सब अक्रमवाले कॉम्बिनेशन्स नहीं गिनने यहां पर। ६४८ पेज पर **इस अनुक्रम से योगों के अविभागप्रतिच्छेदों की अपेक्षा** अविभागप्रतिच्छेदों की अपेक्षा लगा रहे हैं; **असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धिरूप चतु:स्थानपतित वृद्धियुक्त श्रेणी के यानी जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागमात्र योगस्थान होते हैं।** इसका अर्थ समझ में आता है? जैसे हमने यहां कहा कि ये असंख्यातलोकप्रमाण कषाय के स्थान हैं, ये अनुभाग के स्थान हैं वहां अविभागप्रतिच्छेदों की अपेक्षा षट्स्थान कहे थे क्योंकि वहां अविभागप्रतिच्छेद अनंत होते हैं और योग होता है वह असंख्यात में होता है इसलिये उसके चतु:स्थान ही होते हैं, अनंतभागवृद्धि और अनंतगुणवृद्धि नहीं होती।

अभी षट्स्थान क्या है, चतु:स्थान क्या है उसको अभी भूल जाओ जिसको भूलना है,

उसको छोड़कर हम आगे बढ़ेंगे। इन सभी योगस्थानों का क्रम से पलटना होना चाहिये, कितने हैं वे? जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। वह बहुत बड़ा असंख्यात का प्रमाण है। यहां कंडिशन क्या है? योगों को तो पलटाना है परंतु बाकी तीनों सेम रहने चाहिये, ये तीनों जब सेम रहेंगे और जब क्रम से योग का पलटना होगा तभी हम उसको क्रम में गिनेंगे अन्यथा क्रम में नहीं गिनेंगे, कितना ही काल चला जायेगा उसका वह पर्टिक्युलर कॉम्बिनेशन नहीं होगा; जब कभी होगा तब हम उसको क्रम में लेंगे। अब आगे बढ़ते हैं –

ब्रॅकेट मिल गया? **(सभी योगस्थानों को क्रम से प्राप्त होकर) उसके पश्चात् स्थितिस्थान और कषायअध्यवसायस्थान तो जघन्य ही रहे** हमने क्या किया था अभी? ये तीनों को जघन्य रखकर सभी योगों को पलटाकर हमने देखा था इसको कहते हैं वह अक्षसंचार। अक्षसंचार यानी हमारा यह जो क्रम है आगे-आगे-आगे एक-एक स्थान पर चला जायेगा जब अंत तक पहुंचे तब क्या करना? इन दो को यानी स्थिति, कषाय को जघन्य रखना और अनुभागबंध के दूसरे नंबर के स्थान पर जाना। अभी कॉम्बिनेशन क्या होगा? **S1K1A2** फिर **Y1** से लेकर सभी क्रम से होने चाहिये। **Y1** पर थे न, अभी **Y2** पर आ गये, स्थिति का वही भेद रहा जघन्य, कषाय वही रहा, अनुभाग के दूसरे स्थान पर आ गये क्योंकि अनुभाग में तो असंख्यातलोकप्रमाण स्थान देखे थे, इसके दूसरे स्थान पर आ गये हैं अब इसमें भी यानी पहला इसमें कॉम्बिनेशन क्या था **S1K1A2Y1** फिर इनको यानी **S1K1A2** को इतना ही रखकर क्रम से **Y2**,**Y3**,**Y4**,**Y5**... इसतरह से जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण सभी योगस्थान क्रम से पूरे हो जायेंगे, सभी क्रम से होने चाहिये तब जाकर क्या लेंगे हम? **S1K1A3Y1**। **Y** में सभी स्थान क्रम से लेना है, **Y** में तो सभी को पलटाना है, **Y** को जब-जब एक बार पलटना होता है तब हम **A** के दूसरे स्थान पर आते हैं, बाकी ये दोनों यानी स्थिति, कषाय तो फिक्स रखे हैं। दूसरे अनुभागस्थान **A2** के साथ **Y** के सभी स्थान पलटे फिर ये दोनों यानी स्थिति और कषाय सेम रखते हुये **A3** पर आयेंगे। **A3** के साथ **Y** के सभी स्थान पलटे तब जाकर ये दोनों यानी स्थिति और कषाय ऐसे ही रखना और **A4** लेना; ऐसे कितने हैं? जघन्य स्थिति के कारणभूत ऐसे जघन्य कषाय के साथ जितने असंख्यातलोक अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं क्योंकि इन दोनों स्थिति, कषाय को सेम रखना है न और अनुभाग में कितने स्थान होते हैं? इसके जघन्य स्थिति के साथ ये कषाय के स्थान असंख्यातलोकप्रमाण हैं और एक-एक कषाय के साथ

ये अनुभागबंध के स्थान असंख्यातलोकप्रमाण हैं तो जब तक ये अनुभागबंध के असंख्यातलोकप्रमाण स्थान पूरे नहीं होते, तब **S1** और **K1** को कायम रखना। उसको कॉन्स्टन्ट रखना और अनुभागबंधअध्यवसायस्थानों में से एक-एक के साथ ये **Y** के जो जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण स्थान हैं उनको सबको क्रम से पलटाना। *श्रोता: करेंगे...* करेंगे या कर चुके हैं? इस विशिष्ट स्थिति के कारणभूत कषायस्थान जितने पॉसिबल हैं इतने ही क्रम से लेना है इसमें, सब पूरे टोटल कषायस्थान नहीं लेना इसमें। जघन्य स्थिति के साथ जितने कषाय और जितने अनुभाग हो सकते हैं उनको लेने हैं तो इसको लेकर यह बात हम क्रम से देखेंगे।

देखो आगे पढ़ेंगे **पश्चात् स्थितिस्थान** यह दूसरा पॅरेग्राफ, **स्थितिस्थान और कषायअध्यवसायस्थान तो जघन्य ही रहे और अनुभागबंधअध्यवसाय का तीसरा स्थान हुआ। वहां भी योगस्थान पूर्वोक्त प्रकार हुये** यानी योगस्थानों में तो सभी योगस्थानों का पलटना क्रम से लेना है। **इसी क्रम से अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हुये** अपने योग्य का अर्थ इस जघन्य स्थिति और जघन्य कषायस्थान के योग्य जितने हैं उतने, सभी के सभी नहीं होंगे यहां पर; जघन्य स्थिति के साथ जितने हो सकते हैं, उतने अपने योग्य में ले लेना। **उसके पश्चात् स्थितिस्थान तो जघन्य ही रहा**, यानी मान लेते हैं कि अनुभागबंधअध्यवसाय स्थानों में से यहां १ से लेकर ८ स्थान हुये, वे इसके अपने योग्य थे, उसके पश्चात् क्या? अभी स्थिति को जघन्य रखना – **S1** को रखना और **कषायअध्यवसायस्थान दूसरा हुआ** यानी **K2** पर पहुंचा। **वहां पूर्वोक्त प्रकार से योगस्थानों से युक्त अनुभागबंधअध्यवसायस्थान जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक हुये।** ये उन्होंने शॉर्ट में बता दिया। इसका अर्थ हम देखते है क्या है – पहले में पहले हमने क्या क्या किया था? **S1K1A1** तीनों को ऐसे ही रखा, **Y** को पलटा। पूरे पलटने के बाद **S1K1** फिर **A2** लिया उसके साथ इन सभी योगस्थानों को लिया। फिर **S1K1A3** को लिया, इन सब योगस्थानों को लिया ऐसे इसके योग्य जितने भी थे उन सबको लिया मान लेते हैं **A1** से **A8** तक। यहां तक आ पहुंचे, अभी क्या करना है? अभी **K1** के बदले **K2** पर चले जाना है।

श्रोता: अध्यवसायस्थान तो कषाय के असंख्यातलोक थे लेकिन यहां तो अपने योग्य

है वही लेना है? अपने योग्य हैं वे भी असंख्यातलोकप्रमाण हैं। *श्रोता: मतलब असंख्यातलोक मल्टिप्लाइड बाय असंख्यातलोक नहीं लेना?* हां, उसके अपने योग्य लेना, वहां पर एक कषायस्थान के योग्य लिये थे हमने। अभी हम जब **K1** के बाद **K2** पर गये तो उसके अपने योग्य, हो सकता है वह पहले एक दो नहीं थे पर उसकी जो अपनी रेंज होगी वह असंख्यातलोकप्रमाण है। उसमें से वह पहला स्थान यानी उसमें हो सकता है यहां **A3** से लेकर आगे **A10** तक हो सकते हैं। इसके अपने योग्य जो हैं उसमें से जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक। तो यहां हम **S1** लेंगे, **K2** लेंगे, अपने योग्य में से जो जघन्य होगा उसको लेंगे मान लेते हैं **A3** और उसके ऊपर सभी योगस्थानों को पलटायेंगे। फिर **S1K2** उसमें भी यह क्रम से एक-एक अनुभागस्थान पर सभी योगस्थानों को पलटाना है। अभी हमने स्थिति तो जघन्य ही ली थी और कषाय का दूसरा स्थान लिया था। कषाय के ऐसे असंख्यातलोकप्रमाण स्थान हैं जो इतनी ही स्थिति का बंध करने के लिये कारणभूत हैं।

अभी कषाय के दूसरे स्थान पर गये **K2** पर, तो उसके अपने योग्य जो अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं उनको काउंट करना वहां पर। *श्रोता: माने **A** और **K** में अपने योग्य लेना और **Y** में पूरे लेना?* **Y** में तो पूरे लेना हर बार और इनमें अपने योग्य लेना यानी अकेले जघन्य ही स्थिति के कारणभूत परिणाम हम देखते रहेंगे तो उसमें यह पलटना कितना होगा, अभी उसमें एक समय भी आगे नहीं बढ़े और केवल एक प्रकृति पर देख रहे हैं; ऐसे हरेक प्रकृति को एक के बाद एक लेना है। ॲट अ टाइम सभी प्रकृतियों में चलता रहे ऐसा नहीं हैं... *श्रोता: यह तो सरसों से भी प्रॉब्लेम हो गया...* आप कहते हैं पहले सरसों तो ठीक थे, इसके सामने वह अच्छा था। हमारे यहां ऐसा ही होता है। धवला, जयधवला, महाधवला के स्वाध्याय में किसी दिन बहुत कठिन विषय आता है तो लोग कहते हैं बस अभी बहुत हो गया-बहुत हो गया। फिर दूसरा दिन आता है तो पहली बात आसान लगती है, क्यों? दूसरे दिन उससे भी अधिक कठिन बात आती है। इन कठिन बातों से छुटकारा पाना है, यह करते समय कभी कठिन नहीं लगा था। यह एक दो बार नहीं, अनंतों बार करके आये हैं हम, तभी पता ही नहीं था कि हम क्या कर रहे हैं। वे तो सहजरूप से कितने-कितने परिभ्रमण-कितने परिभ्रमण-कितने परिभ्रमण ऐसे अनंत हो गये। अभी तो हमने शुरूआत भी नहीं की है देखने को। *श्रोता: एक घंटा प्रवचन में यह कॉम्बिनेशन कितनी बार देखा...* तो उसके वही कॉम्बिनेशन होना कितना मुश्किल है

क्योंकि स्थिति तो जघन्य नहीं बंधती रहेगी, स्थिति तो कितनी अलग-अलग बंधती रहेगी। अभी-अभी तो शांति से बैठा था और फिर अभी एकदम ज्ञानावरण का तीस कोड़ाकोड़ी हो जाये कोई संक्लेश परिणाम हो तो, कैसे भी हो सकते हैं। परिणाम तो यथायोग्य जो होते रहते हैं, स्थिति भी अपने आप बंधती रहती है, हम उसके कंट्रोलर नहीं है। इसको समझकर कैसा हम परिणाम करे? कैसा परिणाम करे तो हमारे स्थितिबंध कम हो? उसकी बात क्यों करते हैं? परिणाम करना चाहते हो न? लोग कहते हैं कैसे करे तो राग-द्वेष कम होगा? अगर राग-द्वेष कम करना आपके हाथ में हो तो करो ही मत न! कम करने की बात क्यों उठाते हो? हमें तो राग-द्वेष से भेदज्ञान करना है और जब भेदज्ञान से अपना अनुभव होगा तो ये सभी बातें अपने आप छूट जायेगी।

यह तो इन परावर्तनों से छूटने का मार्ग तो बहुत आसान है। वह आसान मार्ग आप हम नहीं समझेंगे तो यह कठिन-कठिन पढ़ना पड़ेगा, है न! आगे देखते हैं देखो, *श्रोता: यह संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात है न?* यह अभी केवल संज्ञी पंचेन्द्रिय की बात चल रही है, हां वह भी एक कर्म संबंधी, उसमें भी मूलप्रकृति ली हमने, उत्तरप्रकृति को भी नहीं लिया है और उत्तरप्रकृतियों को लेना है तो १४८ में से १४३ हो जायेंगी और उसके और भेद करेंगे तो असंख्यातलोकप्रमाण उन्हींके भेद हो जायेंगे। आपके चेहरे पर प्रश्नचिन्ह दिख रहा है, १४८ कर्मप्रकृतियों में से किसको छोड़ा? अरे भैय्या, तीर्थंकर प्रकृति का बंध तो सम्यग्दृष्टि के ही होता है और आहारकचतुष्क यानी आहारकशरीर संबंधी नामकर्म का बंध तो भावलिंगी मुनियों के ही होता है। *श्रोता: यहां ऐसा है क्या कि ये जो परिणाम हैं संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याय में ही, बाकी कोई पर्याय में नहीं होंगे ऐसा है?* नहीं-नहीं... ये जो योग ऐसे हैं न, हरेक की अपनी-अपनी रेंज अलग-अलग है; यह संज्ञी पंचेन्द्रियों की बात चल रही है। अंत:कोड़ाकोड़ीवाला जो बंध है स्थिति का बंध, वह असंज्ञी को नहीं होगा। असंज्ञी को तो अभी ज्ञानावरण की बात चल रही है तो उत्कृष्ट हजार सागर का तीन सप्तमांश होगा और जघन्य उसमें पल्य का संख्यातवां भाग कम होगा। यह उसकी रेंज होगी, तो यहां तो हम केवल संज्ञी पंचेन्द्रियों की रेंज देख रहे हैं और वह भी केवल एक पर्टिक्युलर प्रकृति में घटित करके देख रहे हैं। *श्रोता: क्या ऐसा होता है काउंटिंग कि जैसे अभी हम पंचेन्द्रिय में घटित करते हैं विगत से और वह जीव दो इन्द्रिय में चला गया...* बिलकुल होगा। *श्रोता: तो वहां से टिक चालू हो जायेगी?* टिक नहीं होगी, अभी नहीं, अभी हम पंचेन्द्रियों में क्रम

देख रहे हैं। पंचेन्द्रियों की कायस्थिति कितनी है यानी लगातार पंचेन्द्रिय पर्याय में रहने का उत्कृष्ट काल कितना है? एक हजार सागर। संज्ञी पंचेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्ट काल है पृथक्त्व सौ सागर। भले वह मनुष्य हो, तिर्यंच हो, देव हो, नारकी हो, पृथक्त्व सौ सागर से अधिक काल तक वह संज्ञी पंचेन्द्रिय में नहीं रह सकता, एकेन्द्रिय और द्वीन्द्रियादि में जायेगा। द्वीन्द्रियादि में भी गया तो इतने काल तक उसका संज्ञी पंचेन्द्रिय के योग्य यह सब सायकल स्टॉप हुआ है। फिर जायेगा एकेन्द्रिय में तो असंख्यात पुद्गलपरावर्तन काल तक तो एकेन्द्रिय के योग्य करता रहेगा। हमें ते संज्ञी पंचेन्द्रिय के योग्य करना है तो जब जाकर वह यहां संज्ञी पंचेन्द्रिय में आयेगा तब इसमें से हो सकता है कि वही कॉम्बिनेशन फिर से हो, वह कॉम्बिनेशन होना ही बहुत दुर्लभ बात है।

श्रोता: पंचेन्द्रिय के परिणाम कहीं और टिक नहीं करेंगे? वह अलग-अलग बात है क्योंकि वह स्थितिबंध और अनुभाग की अपेक्षा हम बात कर रहे हैं – टॅली की बात। *श्रोता: संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य हो और बाद में पंचेन्द्रिय तिर्यंच हो तो काउंट होगा?* तो उसके समान हो सकते हैं भाव। जैसे देव हो या नारकी हो ज्ञानावरणादि की जो कुछ बातें हैं यानी स्थिति के, कषाय के, अनुभाग के जो अलग-अलग स्थान हैं वे समान हो सकते हैं, उसके टॅली हो सकते हैं। अब वह हरेक प्रकृति में अलग नियम है। प्रशस्त प्रकृतियों में अलग नियम है, अप्रशस्त में अलग है, बहुत उसमें विस्तार है। हम तो यह सामान्यरूप से इसका स्वरूप देख रहे हैं। इतना भी भासित हो जाये तो बहुत है। *श्रोता: पंचेन्द्रिय की सभी पर्यायों का उसका काउंटिग चलेगा।* हां, *श्रोता: और उसके अनुक्रम के बाद उसके...* बाद में असंज्ञी के, चतुरिन्द्रिय के वगैरह अलग-अलग हम बाद में देखेंगे। कैसे काउंट करना यह इसका तरीका बताया है। *श्रोता: और ऐसे ही पंचेन्द्रिय में जैसे ज्ञानावरण का लिया उसके बाद दर्शनावरण का लिया... क्रम से लेना?* हां, ऐसे अलग-अलग प्रकृतियों में क्रम से लेना, एक के बाद एक लेना। आप कहेंगे सबके एक साथ बांध रहे हैं न सबको ले लो ऐसा नहीं चलता। सभी कर्म एक से नहीं बंधते हैं, उसमें भी एक का उत्कृष्ट बंध है तो दूसरे का उत्कृष्ट बंध होगा ही ऐसा नहीं है, उसमें भी व्हेरिएशन्स हैं, उसको बंधसन्निकर्ष कहते हैं। एक का बंध है तो दूसरे का कैसा होगा, उसमें अनुभाग में व्हेरिएशन्स हैं, स्थिति में व्हेरिएशन्स हैं, क्या-क्या नहीं है। यानी एक प्रकृति बंधती है तो उसके साथ अन्य कौनसी प्रकृति बंध सकती है और यदि बंधती है तो वह उत्कृष्ट या अनुत्कृष्ट या कैसी

बंधती हैं ये सारे इनके डिटेल्स आते हैं; हमें पता ही नहीं है न कि कितना विस्तार है! हमको यह तो महाबंध के सात पुस्तकों में लिखितरूप से आज इतना ॲव्हेलेबल है हमारे पास। हमको समय नहीं है न, फुर्सत नहीं है पढ़ने को। देखो हम जरा यहां पढ़ लेते हैं, भावपरावर्तन पूरा कर लेते हैं।

यह नीचे से एक, दो, तीन, चौथा पॅरेग्राफ, ६४८ पेज **उसके पश्चात् स्थितिस्थान तो जघन्य ही रहा और कषायअध्यवसायस्थान तीसरा हुआ वहां भी पूर्वोक्त प्रकार से योगस्थानों से युक्त क्रम से अनुभागअध्यवसायस्थान हुये,** अनुभागअध्यवसायस्थान हुये, पर एक-एक अनुभागअध्यवसायस्थान के साथ सभी योगस्थान हुये, यह इस वाक्य का अर्थ है। क्योंकि कषायस्थान आगे-आगे बढ़ता गया उनके योग्य जितने अनुभागअध्यवसायस्थान हैं उन सभी पर योगों का पलटना क्रम से होगा तब हम उसको गिनेंगे। **इसी क्रम से अपने योग्य** अपने योग्य यानी इस जघन्य स्थिति के योग्य **कषायअध्यवसायस्थान भी असंख्यातलोकप्रमाण हुये,** यह मात्र जघन्य स्थिति के लिये यह बात देखी है, कितना क्या-क्या पलटना होता है। **पुनश्च जिसप्रकार अंत:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण इस जघन्य स्थितिस्थान में अनुक्रम कहा, उसीप्रकार जघन्य से एक समय अधिक ऐसे दूसरे स्थितिस्थान में अपने योग्य** उसके अपने योग्य कहा। इस स्थान में **S2** को लिया, उसके अपने योग्य जितने असंख्यातलोकप्रमाण कषाय के स्थान हैं, उनमें से एक-एक स्थान के अपने-अपने योग्य असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं, उन सबमें योगस्थान तो सभी होंगे उन सबको पलटाना हैं।

इनके परावर्तन के साथ पूर्वोक्त प्रकार क्रम से अपने योग्य सभी कषायअध्यवसायस्थान हुये। पुनश्च इसी प्रकार जघन्य स्थिति से दो समय अधिक तीसरे स्थितिस्थान में हुये। देखो एक-एक स्थितिस्थान में कितना-कितना-कितना पलटना होगा। कषाय को एक ही रखते हुये अनुभाग के असंख्यातलोकप्रमाण स्थान पलटेंगे और हरेक के साथ जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण योगस्थानों को पलटाना है क्रम से, तो यही कॉम्बिनेशन रहे यह तो कोई बात संभव नहीं है न? यह हम कहने के लिये इसको फिक्स रख रहे हैं और ऊपर को पलटा रहे हैं परंतु यह फिक्स रहे तब की बात है। ये फिक्स थोड़े ही रहनेवाले हैं? ये तो कितने ही पलट जायेंगे। जब कभी उसी क्रम से यानी उन तीनों का कॉम्बिनेशन होगा तब जाकर ऊपर के योगस्थानों को पलटाना है। **ऐसे एक-**

एक समय से बढ़ते हुये स्थितिस्थानों के अनुक्रम से तीस कोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण उत्कृष्ट स्थिति तक जानना। पुनश्च जैसे यह ज्ञानावरण कर्म की अपेक्षा कथन किया वैसे ही कर्मों की सभी मूलप्रकृति आठों ही **और सभी उत्तरप्रकृतियों में परावर्तन का अनुक्रम जानना।** एक के बाद एक उसमें लगाते जाना।

श्रोता: जैसे अभी ज्ञानावरण हुआ फिर मतिज्ञानावरण ऐसे? ज्ञानावरण में पांचों ज्ञानावरण में लगाना। पहले ज्ञानावरण में लगा लो, यहां लिखा है न मूलप्रकृतियों और उत्तरप्रकृतियों में परावर्तन का अनुक्रम जानना, सभी प्रकृतियों में अलग-अलग से लगाना। *श्रोता: ज्ञानावरण मूलप्रकृति है उसके पांच भेद हो गये तो पहले ज्ञानावरण में लगाना फिर मतिज्ञानावरण में लगाना?* अकेले मूलप्रकृतियों में अलग-अलग लगा सकते हैं हम, वह मूलप्रकृतियों की बात होगी और फिर एक-एक उत्तरप्रकृति को लेकर लगाना। यहां लिखा न **सभी मूलप्रकृतियों और उत्तरप्रकृतियों में परावर्तन का अनुक्रम जानना,** मूलप्रकृति की अपेक्षा हम कहेंगे, फिर उत्तरप्रकृतियों पर एक-एक करके लगाना। *श्रोता: मूलप्रकृति प्लस?* हां, प्लस-प्लस-प्लस। **ऐसे ये सब मिलकर** सब मिलकर लिखा न **एक भावपरावर्तन हुआ।** यानी ये परिणामों की बात की, वह का वह परिणाम तो रहता ही नहीं – दो समय, तीन समय, चार समय, पांच समय – बहुत हो गया तो मॅक्झिमम आठ समय तक ही ऐसा परिणाम रह सकता है। उससे अधिक कोई परिणाम वैसा का वैसा रहता नहीं है। यह तो मध्यम परिणामों की बात है, उत्कृष्ट में उत्कृष्ट परिणाम दो समय से अधिक नहीं रह सकता और जघन्य परिणाम भी दो, तीन या चार समय ही रहेंगे। *श्रोता: लेकिन यहां तो सिर्फ पंचेन्द्रिय की ही चर्चा की है, तो बाकी की...?* बाकी तो बाद में लगाना पड़ेगा सब में; यहां तो कंटिन्युएशन में हमने एक-एक समय से बढ़ते हुये स्थितिबंध के भेद क्रम से लिये हैं।

यहां जघन्य स्थिति आदि में सभी कषायअध्यवसायस्थान आदि का पलटना नहीं होता। क्या कहा? यह जघन्य स्थिति में, आदि में यानी, यह हमारी जघन्य स्थिति है और यह सभी कषायअध्यवसायस्थान मान लेते हैं ५० हैं तो सभी का पलटना नहीं होगा, इसके योग्य जितने हैं उन्हींमें पलटना होगा यह बात कहना चाहते हैं और उनमें से एक-एक कषायस्थान में अपने योग्य जितने अनुभागअध्यवसायस्थान होते हैं उसमें पलटना होगा। *श्रोता: वे भी असंख्यातलोकप्रमाण?* असंख्यातलोकप्रमाण, वे भी असंख्यातलोकप्रमाण

होते हैं। फिर भी वह अपने योग्य उसकी हरेक की अपनी-अपनी रेंज अलग है, यही कहते हैं, **यहां जघन्य स्थिति आदि में सभी कषायअध्यवसायस्थान आदि का पलटना नहीं होता अपितु जघन्य स्थिति आदि में विवक्षित स्थिति में जितने कषायअध्यवसायस्थान आदि,** आदि में **अनुभागअध्यवसायस्थान और योगस्थान संभव हो उन्हीं का पलटना होता है ऐसा जानना। उक्तं च – कहा ही है**

सर्वप्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशबंधयोग्यानि।
स्थानान्यनुभूतानि भ्रमता भुवि भावसंसारे।।

इस भावसंसार में भ्रमण करते हुये जीव ने इन सभी स्थानों को **अनुभूतानि** यानी अनुभूत किया है; क्या-क्या लिखते हैं इसमें देखो **लोक में भावसंसार में भ्रमण करनेवाले जीव ने प्रकृति, प्रदेश, स्थिति और अनुभागबंध के योग्य जो योगों के** प्रकृति और प्रदेश के योग्य योगों के, **कषायों के और स्थिति के स्थान हैं वे सभी भोगे हैं।** यह सभी उसके हुये हैं, भोगे हैं यानी ? वे परिणाम, कषाय उसके हुये हैं। **यहां परावर्तन के अनुक्रम में जघन्य स्थितिस्थान संबंधी स्थितिबंधअध्यवसायस्थान** जिसको हमने **K** कहा था, **अनुभागबंधअध्यवसायस्थान** जिसको हमने **A** कहा था और **योगस्थान** जिसको हमने **Y** कहा था – **जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक होते हैं, उनको आदि में रखकर सर्वोत्कृष्ट स्थिति तक अपने-अपने संबंधी** यह अपने-अपने संबंधी बात है क्योंकि अपने-अपने योग्य की बात है यह **जघन्य से उत्कृष्ट तक स्थितिबंधअध्यवसाय आदि को** यानी स्थितिबंधअध्यवसायस्थानों को यानी कषायअध्यवसायस्थानों को, अनुभागों को यानी अनुभागस्थानों **को स्थापित करके** ये हमने स्थापित करे न, हरेक के अपने-अपने योग्य ये सब स्थिति के भेद स्थापित किये, हरेक के अपने-अपने योग्य जो हमने जो कुछ अनुकृष्टि जैसा बताया था उसको स्थापित करेंगे, एक-एक कषाय के साथ जो अनुभागबंधअध्यवसायस्थान हैं उनको स्थापित करेंगे और सभी योगस्थानों को स्थापित करेंगे।

जैसे गुणस्थान प्ररूपणा में प्रमाद के भेदों के निमित्त अक्षसंचार द्वारा परावर्तन का विधान कहा था, यह जो हमने देखा था न अभी **S1**, **K1**, **A1** को कायम रखकर **Y** के सभी स्थानों को पलटाना; फिर **A** को दूसरे स्थान **A2** पर ले जाना, इसको **Y** के सभी स्थानों पर लगाना; फिर **A** को पलटाना; **A** के सभी स्थान पूरे होने पर क्रम से **K** के सभी

स्थानों पर ले जाना; और उसके साथ ऊपर के सभी स्थान पलटाते रहना; उसके बाद स्थिति के एक-एक समय से बढ़ते हुये स्थान पर उसी क्रम के ऊपर की तीन पंक्तियों के स्थान पलटाना – इसको कहते हैं अक्षसंचार। वहां पर भी प्रमाद के प्रकरण में उनके भेदों को गिनना था तब मूल में तो हमने ८० भेद गिने थे। तो १ नंबर का कौनसा प्रमाद, २ नंबर का कौनसा है, ३ नंबर का कौनसा है इसकी बात हमने वहां सीखी थी। उसके और डिटेल में भेद किये थे तो कितने हुये थे? २५ तो कषाय हैं, २५ विकथा हैं वगैरह-वगैरह, उनके भेद करके हमने देखा था तो ३७,५०० हुये थे। फिर उसका हम आपको पूछेंगे कि ६००० वें नंबरवाला प्रमाद कौनसा है? या ३०००० वाला प्रमाद कौनसा है? तो आप आधे मिनट में उसका उत्तर दे पायेंगे, उसके लिये यंत्र कैसे तैयार करना, टेबल्स कैसे तैयार करना, वह उसकी संख्या कैसे निकालना? ये सभी बातें हमने देखी थी। यह सब बहुत आसान है, अत्यंत आसान बात है परंतु वह अभी का विषय नहीं है, अभी का विषय तो... *श्रोता: यह सब लिखा है पुस्तक में?* हां जीवकाण्ड की पहली पुस्तक में है, वह गुणस्थान के प्रकरण में प्रमाद के जो भेद हैं, उसमें वह बात बतायी है।

तो यहां पुस्तक में कहते हैं **जैसे गुणस्थान प्ररूपणा में प्रमाद के भेदों के निमित्त अक्षसंचार द्वारा परावर्तन का विधान कहा था वैसे यहां भी अक्षसंचार द्वारा परावर्तन का विधान जानना।** इसको कहते हैं अक्षसंचार यानी जो-जो यहां पर **S, K, A, Y** पर लगाना है; वहां पर प्रमाद में हमने क्या-क्या देखा था? पहले विकथा लिखी ४, फिर कषाय लिखे ४, फिर उसके ऊपर हम पांच इन्द्रियों की लोलुपता के नाम लिखे, स्नेह और निद्रा तो एक-एक होता है तो उसको तो नहीं लिखे तो भी चले, फिर कैसे पलटाया हमने? पहली विकथा को कायम रखा, पहली कषाय को कायम रखा और पांचों इन्द्रियों में क्रम से हमने अक्षसंचार किया यानी उसको घुमाया। फिर क्या किया? विकथा वही रखेंगे, कषाय के दूसरे नंबर पर जायेंगे फिर सभी पांचों इन्द्रियों के ऊपर वह अक्षसंचार करेंगे। इसतरह से हमने वहां प्रमाद के ८० भेद गिने और ऐसे ही विस्तार में जाकर ३७,५०० भी गिने; अब हम यहां विशेषार्थ पढ़ेंगे। ६४९ पेज पर नीचे का पॅरेग्राफ विशेषार्थवाला **विवक्षित एक कर्म प्रकृति के** विवक्षित एक कर्म प्रकृति पर पहले घटा रहे हैं **जघन्य स्थितिबंधस्थान संबंधी इन भावों के पलटने से जितने भंग होते हैं वे इसप्रकार हैं – जगत्श्रेणी के असंख्यातवें भागप्रमाण योगस्थान**, उसको **गुणा** करना

है **असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधअध्यवसायस्थान** जघन्य स्थितिबंध संबंधी है न? उसके अपने योग्य लेना। **और मल्टिप्लाइड बाय असंख्यातलोकप्रमाण कषायअध्यवसायस्थान।** वे भी जघन्य स्थितिबंध के लिये अपने योग्य होंगे।

स्थिति के एक-एक समय बढ़ाने पर उनके अपने योग्य इन स्थानों को आपस में गुणा करनेपर उतने स्थान होंगे। यानी उनके क्रम भी निश्चित होंगे क्योंकि इसी क्रम से उनको पलटाना है – **इसप्रकार जघन्य से उत्कृष्ट तक के स्थिति संबंधी सभी स्थितिस्थानों के सभी भंगों को जोड़ने पर एक कर्म प्रकृति के भंग हुये। इसीप्रकार सभी प्रकृतियों के सभी स्थितिस्थानों पर घटित करके सभी को मिलाने पर जो भंगों की संख्या उत्पन्न होती है,** भंग यानी अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स, **उसमें किसी जीव ने प्रथम भंग से लेकर अंतिम भंग तक** यानी हमने जो कॉम्बिनेशन्स बताये, उनको जिस क्रम से पलटाना है उसको देखा था उसको हम कहेंगे क्रम से यह भंग है। **जब-जब अनुक्रम से इन भावों को प्राप्त किया तब उस भंग को गिनना बीच में क्रमभंग से अन्य भावों को प्राप्त करके अनंतकाल भी घूमे तो उन भावों को गिनती में नहीं लेना परंतु उस काल को अवश्य गिनना।**

ये पांचों ही परावर्तन मिथ्यात्व अवस्था में जीव कैसे-कैसे अनंतकाल से भ्रमण करता आया है उस काल को बताता है। इस काल की अनंतता की कल्पना करने पर जीव भय से कांप उठता है, संसार से भयभीत होगा तो ही उससे छूटने का विचार इस जीव को आयेगा क्योंकि लोग कहते हैं कि डर लगा, तो अच्छा हुआ डर लगा। क्योंकि हम निर्भय होकर यह अपना काल गुमा रहे हैं। रोज सुबह होती है और हमारा रूटीन कार्य करते हैं और रात होते होते हमारे कुछ कार्य होते हैं, कुछ नहीं होते फिर हम सो जाते हैं। ऐसे कितने, एक दिन के बाद दूसरा, दूसरा फिर तीसरा ऐसे कितने साल बीत गये यही बात हमारी चल रही है। **सम्यक्त्व होने पर इस जीव के संसार का किनारा नजदीक आता है** – नजदीक यानी कितना नजदीक आता है? यह जो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल है जो कि अनंतकाल है उसको भी नजदीक कहा है, उसको कहा उसका संसार का किनारा नजदीक आया है। अधिक से अधिक, अब उसका संसार में भटकने का इससे अधिक काल नहीं रहा। यह जरूरी नहीं कि सम्यक्त्व होने पर सबको

इतना काल रहना पड़े। यह तो हो सकता है उसी भव में मोक्ष भी चला जाये, हो सकता है दो-चार भव बाद भी मोक्ष चला जाये, परंतु अभी उसको अधिक भटकना नहीं होगा।

कोई उसी भव में सिद्ध अवस्था प्राप्त करेगा या कोई मिथ्यात्व में गिरकर अधिक से अधिक अर्धपुद्गलपरावर्तन काल तक परिभ्रमण करके अंत में सिद्ध अवस्था प्रगट करेगा ही। उससे अधिक उसका संसार में भटकना नहीं हो सकता। हमने तो ऐसे परावर्तन अनंत-अनंत-अनंत-अनंत-अनंत किये। इस जीव ने भावपरावर्तन भी अनंत बार किये। लोग कहते हैं पांच परावर्तन में से एक परावर्तन के बाद दूसरा चालू करना, दूसरे के बाद तीसरा चालू करना ऐसा होता है क्या? अरे जैसे वह आपकी घड़ी में घंटे की, मिनट की और सेकंड की सूइयां होती हैं और जैसे सभी सूइयां एकसाथ घूम रही हैं, किसीके परावर्तन को लंबा काल लगता है, किसीके परावर्तन को छोटा काल लगता है वैसे ही यहां समझना। भावपरावर्तन हो रहा है न? वह तो सब से बड़ा अनंत-अनंत-अनंतकाल भावपरावर्तन के पूरे होनेमें लगता है; उतने काल में अन्य चारों परावर्तन दो चार नहीं, अनंत होंगे। एक भावपरावर्तन के काल में भवपरावर्तन अनंत बार होते हैं, एक-एक भवपरावर्तन के काल में कालपरावर्तन अनंत बार होते हैं, एक-एक कालपरावर्तन के काल में क्षेत्रपरावर्तन अनंत बार होते हैं और एक क्षेत्रपरावर्तन के काल में पुद्गलपरावर्तन अनंत बार होते हैं। *श्रोता: डू वन भावपरावर्तन ॲण्ड गेट अन्य चार फ्री।* ये कहते हैं डू वन भावपरावर्तन ॲण्ड गेट अन्य चार फ्री।

यहां लिखा है देखो ६५१ पेज पर। हमने देखे न पांचों परावर्तनों का हमने स्वरूप देखा है, बहुत विस्तार से देख लिया। अब यहां कहते हैं यह आर्या छन्द है न...

पंचविधे संसारे कर्मवशाज्जैनदर्शितं मुक्तेः।
मार्गमपश्यन् प्राणी नानादुःखाकुले भ्रमति।।

पंचविधे संसारे यानी पांच प्रकार के संसार में यानी पांच प्रकार के परावर्तन करते-करते, क्यों? **कर्मवशात्** कर्म के वश से यानी जीव स्वयं कर्म को वश हो रहा है, कर्म इसको नहीं घुमा रहा है हो; यह स्वयं अपने अपराध से घूम रहा है, तो कहते हैं क्यों? **जैनदर्शितं** नीचे अर्थ पढ़ते हैं **जिनमत द्वारा दिखाया गया जो मुक्ति का मार्ग**, क्या कहते हैं? **जैनदर्शितं मुक्तेः मार्गम् अपश्यन्** यानी **जिनमत के द्वारा दिखाया गया जो**

मुक्ति का मार्ग उसको नहीं देखनेवाला यानी उसका श्रद्धान न करनेवाला प्राणी यानी जीव, क्या करता है वह प्राणी? नाना दु:खाकुले पंचविधे संसारे भ्रमति। **नाना प्रकार के दु:खों से आकुलित जो पांच प्रकार का संसार उसमें भ्रमण करता है।** यानी उसके यह द्रव्यपरावर्तन, क्षेत्रपरावर्तन, कालपरावर्तन, भवपरावर्तन और भावपरावर्तन चलते ही रहते हैं, जो अत्यंत दु:खों से भरे हुये हैं। जन्म-मरण, जन्म-मरण, जन्म-मरण करता रहता है और कुछ थोड़े अनुकूल संयोग हैं तो उसमें सुख मानता रहता है और बस संयोगों के ही पीछे लगा रहता है। ये संयोग कैसे सुधारूं, ये संयोग कैसे सुधारूं उसके पीछे ही उसकी पूरी बुद्धि, उसका पूरा उपयोग उसीमें लगता है, उसीमें उसके विचार चलते हैं। आज मुझे क्या करना है? आज मुझे यह करना है, आज मुझे वह करना है परंतु जो करने जैसा कार्य है, इस मनुष्यपर्याय में जो हो सकता है, दुर्लभ में दुर्लभ जो आज हमें मनुष्यपर्याय मिली है और यहां यह कार्य होना ही चाहिये ऐसा हम निश्चित करेंगे तो ही हमने इन पांच परावर्तनों को जानने का कुछ फल पाया ऐसा कहेंगे।

केवल इसको जानने से कुछ लाभ नहीं है क्योंकि ये पांच परावर्तन तो हम कर ही रहे हैं, अनादि से करते आये थे तो इसको जानने से और क्या नयी बात होनेवाली है? इसको जानकर इसकी गंभीरता, गहराई ख्याल में आती है और हमारा कल्याण इसी भव में करना ही है यह बात यदि हम निश्चित करेंगे तो मार्ग न मिले ऐसा कभी नहीं हो सकता। हां, यह सब कार्य उपादान से ही होगा, उपादान जागृत होता है तब निमित्त स्वयमेव सहज मिल ही जाता है। *श्रोता: ऐसा पर्टिक्युलर गतिपरावर्तन भी है?* गति यानी? *श्रोता: मनुष्यगति परावर्तन, तिर्यंचगति परावर्तन...* भवपरावर्तन में आ गया वह, भवपरावर्तन में आ गया। इसतरह से हमने पांचों परावर्तन की बात देखी, यहां तो काल कैसे गिनना इसका तरीका हमें बताया है, अलग-अलग प्रकारों से कालों की गिनती कैसे होती है इसका हमने यहां विस्तार से स्वरूप देखा है। अब सबकी शिबिर की स्थिति पूरी हुयी है और अपने-अपने घर जाने की धुन चढ़ी है सबको, इसलिये अब यहीं हम विराम लेते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय !